श्रीमन् नारायणीयम्

वेब साइट के विषय में

यहां, इस कृति के संस्कृत श्लोकों के शब्दों के अर्थ, श्लोकों में आए क्रम में ही दिये गये है, न कि अन्वय के क्रम में। इस प्रयास में, श्री नारायणीयम - प्रकाशक - मोतीलाल जालान, गीताप्रेस, गोरखपुर, की पुस्तक से साहायता ली गई है। एतदर्थ उनका आभार व्यक्त करती हूं।

इस प्रकार के उद्यम के लिए एक महिला स्वाध्याय समिति में आवश्यकता प्रतीत हुई थी। उस समिति में स्वर्गीय सी. एस. नायर यह स्तोत्र पढा रहे थे। उन्होंने अत्यन्त विश्वास पूर्वक यह कार्य मुझे सौंपा। जिसे कर के मैं कृतार्थ हुई। इसके लिए मै उनकी कृतज्ञ हूं। अत्यन्त दीनता से आभार से यह प्रयास स्वर्गीय एन. एस. वैङ्कटकृष्णन जी को समर्पित करती हूं जिन्होंने मुझे इस महान ग्रन्थ से परिचित करवाया। दोनों को और अपने माता पिता को सादर नमन करती हूं।

इसमें कोई त्रुटि हो अथवा कोई सुझाव हो तो पाठकगण अवश्य देवें।

2 नवम्बर 2019 में मेरी मुलाकात श्रीमति वी. मीनाक्षी से हुई। उन्होंने मुझे इस ग्रन्थ का अपनी वाणी में रिकॉर्ड किया हुआ ऑडियो दिया। उनकी अनुमति से वह ऑडियो भी अब हर दशक के श्लोकों के पहले उपलब्ध है।

- आशा मुरारका (ashamurarka@gmail.com)

प्रस्तावना

श्रीमन् नारायणीयम् एक उच्चकोटी का भक्ति प्रधान स्तोत्र है। इसके रचनाकार श्रीनारायण मेपात्तुर भट्टथिरि ने गुरुवायुर मन्दिर में श्री कृष्ण के विग्रह के समक्ष इसकी रचना की,फलस्वरूप उन्होंने अपने वात रोग का निदान तो पाया ही, भगवद् दर्शन के भी पात्र हुए।

भारतीय शास्त्रों में १८ मुख्य पुराण है। इनमें श्रीमद् भागवत् सर्वश्रेष्ठ है। इसमें १८००० श्लोक हैं। नारायणीयम इसका संक्षिप्त रूप है, और इसमें १०३६ श्लोक हैं। किन्तु फिर भी इसका भक्तिमय और दार्शनिक स्वरूप अक्षुण्ण है।

नारायण भट्टथिरि का जन्म १५६० ईस्वी में हुआ था। इन्होंने १६ वर्ष की आयु में ही समस्त शास्त्रों का ज्ञान अर्जन् कर लिया था। किन्तु उस समय वे भक्ति पथ पर अग्रसर नहीं हुए थे। एक समय उनके गुरु अच्युत पिशारोदी ने उनकी बहुत भर्त्सना की। उसके बाद वे अपने गुरू के प्रति अत्यन्त समर्पित हो गए।

प्राय: १० वर्षों के बाद उनके गुरू वात रोग से पीडित हो गए। भट्टथिरि यह सहन न कर सके और उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना की कि उनके गुरू का रोग उन पर आ जाये। उनकी प्रार्थना स्वीकृत हुई। गुरू को सुस्वास्थ प्राप्त हुआ और भट्टथिरि को वात रोग। भट्टथिरि को अटूट विश्वास् था कि गुरुवायुर के श्री कृष्ण उनको अवश्य रोग से मुक्त करेंगे। इसी विश्वास के साथ, भगवान की कृपा पाने के लिए उन्होंने गुरुवायुर मन्दिर में जा कर ईश्वर के चरणों में शरण ली।

भट्टथिरि ने उस समय के विद्वान दार्शनिक भक्त थ्युचान्त रामानुज (एजुथाचन्) से मार्गदर्शन के लिए आग्रह किया। उन्हें संकेत मिला कि 'मत्स्य से आरम्भ करो।' भट्टथिरि सहज ही समझ गए कि यह संकेत मत्स्यावतार से ले कर दशावतार की महिमा का वर्णन करने का संकेत है। इस प्रकार भागवत् में आए विष्णु के स्वरूप का संक्षेप में वर्णन करने की प्रेरणा मिली।

वात रोग से पीडित भट्टथिरि ने येन केन प्रकारेण गुरुवायुर मन्दिर में पहुंच कर, स्वयं को पूर्णत: श्री कृष्ण के चरणों में समर्पित कर दिया। वे प्रतिदिन शाष्टाङ्ग दण्डवत करके भक्ति भाव से भगवान का गुणगान करने लगे और प्रार्थना करने लगे। वे प्रतिदिन एक दशक की रचना कर के भगवान के अर्पण कर देते थे। इस प्रकार १०० दिनों में भक्ति से ओतप्रोत १०० दशकों की रचना हुई।

प्रत्येक दशक के अन्त में लेखक ने पीडा से मुक्ति पाने के लिए करुण प्रार्थना की है। तीव्र पीडा में रचित इन दशकों ने ईश्वर की कृपा और करुणा को आकर्षित किया। शीघ्र ही भगवान की कृपा वर्षा हुई, और सौवे दिन भट्टथिरि को रोग मुक्त करके भगवान ने दर्शन दे कर अनुग्रह किया। भट्टथिरि आनन्द विभोर हो गए और सौवें दशक में वे रोते हुए गा उठे - 'अग्रे पष्यामि..' - सम्मुख देखता हूं.. और वे भगवान के मन- मोहक स्वरूप का, सिर से चरण तक, 'केशादिपादं' वर्णन करते हैं।

यह रचना नारायण भट्टथिरि ने २७ वर्ष की आयु में की थी। भगवत्कृपा से उन सम्मानित दार्शनिक

भक्त कवि ने ९६ वर्ष की आयु प्राप्त की। उनके द्वारा लिखी हुई कविताओं की पुस्तकें, दर्शन व संस्कृत व्याकरण पर लिखे हुए लेखों के संग्रह उपलब्ध हैं।

जन जन में नारायणीयम के सुप्रचलित होने का कारण उसकी असामान्य और अद्वितीय विशेषताएं हैं। प्रथमत: यह अत्यन्त वेदना और व्यथा में रचित है। इसलिए इसमें कवि की हार्दिक भक्तिपूर्ण प्रार्थना मुखरित हुई है। दूसरे, इसकी रचना प्रथम पुरुष में हुई है, अर्थात भगवान से सम्मुख वार्तालाप के तौर पर। इसलिए जो कोई भी इसका पाठ करता है, वह मानो स्वयं ही भगवान को सम्बोधित करता है। यह भगवान और भक्त में एक चुम्बकीय आकर्षण पैदा करता है। तीसरे, यह स्तोत्र सिद्ध करता है कि जो भी इसका पारायण पूर्ण भक्ति और शरणागति से करता है, उसे - आयु, आरोग्य और सौख्य' निश्चित रूप से प्राप्त होते है।

दशक १

सान्द्रानन्दावबोधात्मकमनुपमितं कालदेशावधिभ्यां
निर्मुक्तं नित्यमुक्तं निगमशतसहस्रेण निर्भास्यमानम् ।
अस्पष्टं दृष्टमात्रे पुनरुरुपुरुषार्थात्मकं ब्रह्म तत्वं
तत्तावद्भाति साक्षाद् गुरुपवनपुरे हन्त भाग्यं जनानाम् ॥ १ ॥

सान्द्र-आनन्द-अवबोधात्मकं	घनीभूत आनन्द ज्ञान स्वरूप
अनुपमितं	उपमारहित
काल-देश-अवधिभ्यां निर्मुक्तं	काल (एवं) स्थान की अवधि से पूर्ण रूप से मुक्त
नित्यमुक्तं	(एवं) सदा सर्वदा मुक्त (माया से)
निगम-शतसहस्रेण	वेदों के सैंकडों एवं सहस्रों (वाक्यों) द्वारा
निर्भास्यमानं	खुलासा किये जाने पर भी
अस्पष्टं	(जो) स्पष्ट नहीं हैं (किन्तु फिर)
दृष्टमात्रे पुन:	दर्शन करने मात्र से (उसी समय)
उरु-पुरुषार्थात्मकं	महान पुरुषार्थ (मोक्ष) रूप (हो जाता है)
ब्रह्म तत्वं	(ऐसा जो) ब्रह्म तत्त्व है
तत् तावत्	वही निश्चित रूप से
भाति साक्षात् गुरुपवनपुरे	प्रकाशित हो रहा है साक्षात रूप में, गुरुवायुर में
हन्त भाग्यं जनानाम्	अहो! यह सौभाग्य है जनसमुदाय का

वह महा सत्य, वह ब्रह्म तत्त्व, जो घनीभूत आनन्दमय है, जो ज्ञान स्वरूप है, जो काल और स्थान की सीमा से पूर्ण रूप से और सदा मुक्त है, जिसे सैंकडों सहस्रों वाक्य प्रकाशित करने की चेष्टा करते हैं, फिर भी जो अस्पष्ट है, किन्तु फिर दर्शन करने मात्र से जो महान पुरुषार्थ (मोक्ष) रूप हो जाता है, ऐसा जो ब्रह्म तत्त्व है, वही यहां गुरूवायुर में साक्षात कृश्ण प्रतिमा रूप से प्रकाशित हो रहा है। अहो! यह जन समुदाय के लिये कितने बडे सौभाग्य की बात है।

एवंदुर्लभ्यवस्तुन्यपि सुलभतया हस्तलब्धे यदन्यत्
तन्वा वाचा धिया वा भजति बत जन: क्षुद्रतैव स्फुटेयम् ।

एते तावद्वयं तु स्थिरतरमनसा विश्वपीड़ापहत्यै
निश्शेषात्मानमेनं गुरुपवनपुराधीशमेवाश्रयाम: ॥ २ ॥

एवं	ऐसी
दुर्लभ्य-वस्तुनि अपि	दुर्लभ वस्तुएं भी
सुलभतया	सुलभता से
हस्त-लब्धे	हाथ में आ जाने पर
यत्-अन्यत्	भी, जो अन्य (सांसारिक) वस्तुओं का
तन्वा वाचा धिया वा	(अपने) शरीर, वाणी और बुद्धिसे
भजति बत जन:	सेवन करता है, हाय जो जन
क्षुद्रता-एव स्फुट-इयं	(उसकी) यह क्षुद्रता ही है, निश्चित रूप से
एते तावत्-वयं तु	फिर भी हम (भक्त) तो
स्थिर-तर-मनसा	निश्चल मन से
विश्व-पीड़ा-अपहत्यै	समस्त पीडाओं के समूल नाश के लिये
निश्शेष-आत्मानम्-एनं	सर्वस्व आत्म स्वरूप इन
गुरुपवनपुराधीशम्-	गुरूपवनपुर के स्वामी का
एव-आश्रयाम:	ही आश्रय लेते हैं

ऐसी दुर्लभ वस्तु भी जब इतनी सरलता से हाथ मे आ गई हो, फिर भी यदि व्यक्ति अपने शरीर वाणी अथवा बुद्धि से अन्य सांसारिक वस्तुओं का सेवन करता है तो, यह स्पष्ट रूप से निश्चय ही उसकी क्षुद्रता है। किन्तु हम यहां समस्त भक्त जन, निश्चल मन से, स्मस्त पीडाओं के नाश के लिये, इन गुरूपवनपुर के स्वामी, भगवान गुरुवायुर का ही आश्रय लेते हैं।

सत्त्वं यत्तत् पराभ्यामपरिकलनतो निर्मलं तेन तावत्
भूतैर्भूतेन्द्रियैस्ते वपुरिति बहुश: श्रूयते व्यासवाक्यम्।
तत् स्वच्छत्वाद्यदाच्छादितपरसुखचिद्गर्भनिर्भासरूपं
तस्मिन् धन्या रमन्ते श्रुतिमतिमधुरे सुग्रहे विग्रहे ते ॥ ३ ॥

सत्त्वं यत्- तत्	वह शुद्ध सत्व गुण जो
पराभ्याम्-	अन्य दोनो (रजो गुण एवं तमो गुण) की अपेक्षा (शुद्ध है)
अपरिकलनतः	और उन दोनों के मिश्रण से रहित
निर्मलं	(अतएव) पूर्ण शुद्ध
तेन तावत् भूतैः -	इसी (परम शुद्ध सत्व) से, निर्मित हुआ
भूतेन्द्रियैः - ते वपुः -	पञ्च भूतों और इन्द्रियों सहित आपका विग्रह (लीला शरीर)
इति बहुशः श्रूयते	यह (तथ्य) बहुधा सुनने में आता है
व्यासवाक्यं	जो श्री व्यास जी के द्वारा कहा गया है
तत् स्वच्छत्वात्-	वह आपका स्वरूप शुद्धता के कारण,
यत्-आच्छादित-परसुखचित्-गर्भ-निर्भासरूपं	जिसमें निरावृत परमानन्द चिन्मय ब्रह्म समाविष्ट है, सदा भासित होता है
तस्मिन् धन्या रमन्ते	उस स्वरूप मे, सौभाग्यशाली जन (पुण्यवान जन) रमण करते हैं
श्रुति-मति-मधुरे	उस स्वरूप के बारे मे सुनने और मनन करने का सुख
सुग्रहे विग्रहे ते	(भक्त जन सुगमता से पाजाते हैं) आपके उस श्री विग्रह में

वह सत्व गुण, अन्य दो गुणों- रजो गुण एवं तमो गुण की अपेक्षा परम शुद्ध है एवं उन दोनों के मिश्रण से रहित है। उसी सत्व के उपादन द्वारा सात्विक भूतों एवं इन्द्रियों सहित आपका स्वेच्छामय लीला शरीर निर्मित हुआ है। यह तथ्य बारंबार व्यास जी ने पुराणो में कहा है और वही सुनने में आता है। आपके उस सदाभासित निर्मल विग्रह में परमानन्द चिन्मय ब्रह्म समाविष्ट है। सौभाग्यशाली पुण्यवान भक्त जन, मर भाव से श्रवण एवं मनन करने योग्य, सकल इन्द्रियाह्लादक आपके श्रीविग्रह में सुगमता से रमण करते हैं।

निष्कम्पे नित्यपूर्णे निरवधिपरमानन्दपीयूषरूपे
निर्लीनानेकमुक्तावलिसुभगतमे निर्मलब्रह्मसिन्धौ ।
कल्लोलोल्लासतुल्यं खलु विमलतरं सत्त्वमाहुस्तदात्मा
कस्मान्नो निष्कलस्त्वं सकल इति वचस्त्वत्कलास्वेव भूमन् ॥ ४ ॥

निष्कम्पे	प्रशान्त (अपरिवर्तनशील) में
नित्य-पूर्णे	तथा सदा परिपूर्ण (में)

निरवधि-परमानन्द-पीयूष-रूपे	निस्सीम परमानन्द सुधा स्वरूप (में)
निर्लीन-अनेक-मुक्तावलि-सुभगतमे	समाहित अनेक (मुक्त आत्माओं) मोतियों की मालाओं (के कारण) अत्यन्त सौभाग्यशाली
निर्मल-ब्रह्म-सिन्धौ	निर्मल ब्रह्म आनन्द सिन्धु में
कल्लोल-उल्लास-तुल्यं	उठती हुई तरङ्गों के समान
खलु विमलतरं सत्त्वम्-आहुः -	निश्चय ही परम शुद्ध सात्विक कहा गया है वह (आपका) स्वरूप।
तत्-आत्मा	आपका वह
कस्मात्-न निष्कलः - त्वं	स्वरूप निश्कल (कला रहित अथवा पूर्णावतार)) क्यों न कहा जाय
सकल इति वचः -	क्योंकि सकल (कला युक्त) यह कथन
त्वत्-कलासु-एव	आपके अन्य अंशावतारों के लिये ही संगत होता है
भूमन्	हे भूमन !

हे भूमन ! आप परम शुद्ध ब्रह्म महान समुद्र के समान अपरिवर्तनशील, सदा परिपूर्ण एवं असीम परमानन्द स्वरूप हैं। अनेक मोतियों कि मालाएं जिस प्रकार समुद्र की शोभा बढाती हैं उसी प्रकार अनेक मुक्त आत्माएं ब्राह्मिक आनन्द सागर मे रमती हैं और उसकी शोभा बढाती हैं। जिस प्रकार समुद्र में उत्ताल तरङ्गे उठ्ती हैं, उसी प्रकार निर्मल सत्त्व का उद्रेक भी आपसे ही है। आप को निश्कल (कला रहित, पूर्णावतार) क्यों न कहा जाय, क्योंकि आपको सकल (कला युक्त) यह कहना तो आपकी कलाओं (अंशावतारों) के लिये संगत होता है।

निर्व्यापारोऽपि निष्कारणमज भजसे यत्क्रियामीक्षणाख्यां
तेनैवोदेति लीना प्रकृतिरसतिकल्पाऽपि कल्पादिकाले।
तस्याः संशुद्धमंशं कमपि तमतिरोधायकं सत्त्वरूपं
स त्वं धृत्वा दधासि स्वमहिमविभवाकुण्ठ वैकुण्ठ रूपं॥५॥

निर्व्यापारः - अपि	कर्मों से अबाधित
निष्कारणम्-	एवं निष्प्रयोजन होने पर भी
अज भजसे	हे अज ! (आप) स्वीकारते हैं जिस क्रिया को,
यत्-क्रियाम्-ईक्षणा-आख्यां	वह ईक्षणा (प्रक्रिया की इच्छा) कहलाती है

तेन-एव-उदेति लीना प्रकृतिः-	उसी के द्वारा प्रकट होती है लुप्त 'प्रकृति'
असति-कल्पा-अपि कल्पादि-काले	जो (आप में समाहित रहती है) अविद्यमान के समान कल्प के प्रारम्भ में
तस्याः संशुद्धम्-अंशं	उसी (प्रकृति, माया) के संशुद्ध अंश,
कमपि तम्-अतिरोधायकं सत्वरूपं	जो आपके सात्विक विग्रह को अवरुद्ध नहीं करता है
स त्वं धृत्वा दधासि	उसी को धारण करके आप
स्व-महिम-विभव-अकुण्ठ वैकुण्ठ रूपं	अपनी महिमा के वैभव से, किसी भी प्रकार से कुण्ठित न होने वाला वैकुण्ठ रूप धारण करते हैं

हे अज ! कर्मों से अबाधित और निष्प्रयोजन होते हुए भी आप ईक्षणा (प्रक्रिया की इच्छा) नाम वाली क्रिया को स्वीकारते हैं। उसी के कारण उस 'प्रकृति' का प्रादुर्भाव होता है, जो कल्प के प्रारम्भ में, आप में समाहित् प्रकृति अविद्यमान हो कर भी समाहित रहती है। उसी के परम संशुद्ध, तिरोधान रहित अंश को धारण करके आप अपने महिमापूर्ण वैभव से अकुण्ठित वैकुण्ठ रूप को धारण करते हैं।

तत्ते प्रत्यग्रधाराधरललितकलायावलीकेलिकारं
लावण्यस्यैकसारं सुकृतिजनदृशां पूर्णपुण्यावतारम्।
लक्ष्मीनिश्शङ्कलीलानिलयनममृतस्यन्दसन्दोहमन्तः
सिञ्चत् सञ्चिन्तकानां वपुरनुकलये मारुतागारनाथ ॥६॥

तत् ते	वह आपका (स्वरूप)
प्रत्यग्र-धारा-धर-	परम सुन्दर नूतन सजल जलधर
ललित-कलाय-अवली-केलिकारं	एवं कोमल श्याम कलाय पुष्पों के समूह के समान
लावणस्य-ऐकसारं	(आप) सुन्दरता के एकमात्र सार स्वरूप (हैं)
सुकृति-जन-दृशां	सुकृति जनों के नेत्रों के लिये
पूर्ण-पुण्य-अवतारं	उनके पुण्यों के पूर्ण अवतार स्वरूप हैं
लक्ष्मी-निश्शङ्क-लीला-निलयनम्-	लक्ष्मी की निःशंक लीला स्थली हैं
अमृत-स्यन्द-सन्दोहम्-	अमृत के निर्झर के समूह
अन्तः सिञ्च्त्	अन्तःस्थल को सिञ्चित (करने वाला)

सञ्चिन्तकानां	ध्यानावस्थित जनों के
वपुः - अनुकलये	आपके उस स्वरूप का (मै) निरन्तर ध्यान करता हूं
मारुतागारनाथ	हे गुरुवायुर के स्वामी !

आपका वह स्वरूप जो नवीन सजल जलधर के समान श्याम वर्ण का है, और जो कोमल कलायपुष्पों के समूह के समान सौन्दर्य का एक मात्र सार स्वरूप है, सुकृति जनो के पुण्यों का मानो पूर्ण अवतार है। आपका वह स्वरूप लक्ष्मी की नि:शंक लीला स्थली है, अमृत के निर्झर का उद्गम है एवं ध्यानावस्थित जनों के अन्त:स्थल को आनन्द रस से सिञ्चित करने वाला है। हे गुरुवायुर के स्वामी! ऐसे आपके श्रीविग्रह का मैं सतत ध्यान करता हूं।

कष्टा ते सृष्टिचेष्टा बहुतरभवखेदावहा जीवभाजा-
मित्येवं पूर्वमालोचितमजित मया नैवमद्याभिजाने।
नोचेज्जीवा: कथं वा मधुरतरमिदं त्वद्वपुश्चिद्रसार्द्रं
नेत्रै: श्रोत्रैश्च पीत्वा परमरससुधाम्भोधिपूरे रमेरन्॥७॥

कष्टा	कष्टदायिनी है
ते सृष्टि-चेष्टा	आपकी सृजन चेष्टा
बहुतर-भव-खेद-आवहा	(क्योंकि) अनेक प्रकार के दु:खों को देने वाली है
जीवभाजाम्-	शरीर धारी जीवों को
इति-एवं	इसी प्रकार
पूर्वम्-आलोचितम्-	तर्क किया गया था
अजित	हे अजित !
मया	मेरे द्वारा
न-एवम्-अद्य-अभिजाने	इस तरह अब (मै) नहीं सोचता हूं
नो-चेत्-जीवा: कथं वा	(क्योंकि) यदि ऐसा न होता तो शरीरधारी जीव कैसे
मधुरतरम्-इदं	अत्यन्त मधुर इस
त्वत्-वपुः -	आपके स्वरूप

चित्-रस-आर्द्रं	जो चिदानन्दामृत रस से परिपूर्ण है
नेत्रैः श्रोत्रैः - च पीत्वा	अपने नेत्रों और कानों से पान करके
परम-रस-सुधा-अम्भोधिपूरे	परमानन्दामृत रस के सागर मे
रमेरन्	रमण करते

हे अजित! आपकी सृजनात्मक चेष्टा शरीर धारी जीवों के लिये कष्टदायिनी है। पहले मेरा यही तर्क था। किन्तु अब मैं ऐसा नहीं सोचता। क्योंकि यदि आप जीवों की और इस प्रपञ्चमय संसार की रचना नहीं करते, तो शरीरधारी जीव आपके इस अत्यन्त मधुर् चिदानन्द रस से परिपूर्ण श्रीविग्रह का नेत्रों (दर्शन) एवं कानों से (कथा श्रवण) पान करके परमानन्दामृत रस सागर में कैसे रमण करते।

नम्राणां सन्निधत्ते सततमपि पुरस्तैरनभ्यर्थितान -
प्यर्थान् कामानजस्रं वितरति परमानन्दसान्द्रां गतिं च।
इत्थं निश्शेषलभ्यो निरवधिकफल: पारिजातो हरे त्वं
क्षुद्रं तं शक्रवाटीद्रुममभिलषति व्यर्थमर्थिव्रजोऽयम्॥८॥

नम्राणां	प्रणत भक्त जनों (के समक्ष)
सन्निधत्ते	आप प्रकट होते हैं
सततम्-अपि	निरन्तर
पुरः - तैः - अनभ्यर्थितान्-अपि-	के समक्ष , उनके द्वारा न मांगे जाने पर भी
अर्थान् कामान्-अजस्रं वितरति	अनेक अर्थों एवं कामनाओं का वितरण करते हैं
परमानन्द-सान्द्रां गतिं च	(एवं) परमानन्दघन मुक्ति भी (प्रदान करते हैं)
इत्थं	इस प्रकार
निश्शेषलभ्यः	आप जीव जन के द्वारा प्राप्य हैं
निरवधिकफलः	(एवं) असामान्य रूप से असीम वरों के दाता हैं
पारिजातः हरे त्वं	हे हरि ! आप पारिजात वृक्ष हैं
क्षुद्रं तं शक्रवाटीद्रुमम्-अभिलषति	(किन्तु, वे याचकजन) इन्द्र के उद्यान के उस क्षुद्र वृक्ष की कामना करते हैं

व्यर्थम्-अर्थिव्रजः - अयं	निरर्थक, यह तुच्छ काम प्रेरित याचक गण

हे हरि ! आपको भक्तिपूर्वक नमन करने वालों के समक्ष आप सदा प्रकट रहते हैं। उनके द्वारा अप्रार्थित अनेक अर्थो एवं कामनाओं को भी आप प्रदान करते हैं। यहां तक कि परमानन्दघन मुक्ति भी प्रदान कर देते हैं। इस प्रकार आप जीवमात्र के लिये लभ्य हैं और अनन्त वरो के दाता भी हैं। आप साक्षात पारिजात तरु हैं। फिर भी यह याचक गण इन्द्र के उद्यान के उस क्षुद्र कल्पक वृक्ष की निरर्थक कामना करते हैं, जो मात्र तुच्छ इच्छाओं का पूरक है।

कारुण्यात्काममन्यं ददति खलु परे स्वात्मदस्त्वं विशेषा-
दैश्वर्यादीशतेऽन्ये जगति परजने स्वात्मनोऽपीश्वरस्त्वम्।
त्वय्युच्चैरारमन्ति प्रतिपदमधुरे चेतनाः स्फीतभाग्या-
स्त्वं चात्माराम एवेत्यतुलगुणगणाधार शौरे नमस्ते॥९॥

कारुण्यात्-कामम्-अन्यं	करुणा से, विभिन्न इच्छाएं
ददति खलु परे	दे देते हैं निश्चय ही अन्य देवता
स्व आत्मदः - त्वं	(किन्तु) आप स्वयं (मोक्ष) को दे देते हैं
विशेषात्-	विशेष करुणा वश हो कर
ऐश्वर्यात्-ईशते-अन्ये	अपने दैवी ऐश्वर्य से, अन्य देवता अनुग्रह करते हैं
जगति परजने	संसार में अन्य जीवों पर
स्व-आत्मनः - अपि-ईश्वरः - त्वं	परन्तु आप तो स्वयं के भी ईश्वर हैं और अन्य सभी के भी ईश्वर हैं
त्वयि-उच्चैः - आरमन्ति	आप में अतिशय आनन्द का अनुभव करते हैं
प्रतिपदमधुरे	पद पद पर मधुरता से परिपूर्ण (आप में)
चेतनाः स्फीतभाग्याः -	ज्ञानी अत्यन्त भग्यशाली (जन)
त्वं च आत्मारामः एव-	और आप तो अपनी ही आत्मा में रमते हैं
इति-अतुलगुणगणाधार	इस प्रकार, हे अतुलनीय गुणों के आधारभूत!
शौरे	हे शौरि! (हे कृष्ण)
नमः ते	नमस्कार है आप को

ब्रह्मा आदि अन्य देवता करुणावश अपने भक्तों को इच्छित वर देते हैं. किन्तु आप तो, अपने भक्तों को, करुणा से अभिभूत हो कर स्वयं को ही दे देते हैं, अर्थात मोक्ष तक दे देते हैं। जगत मैं ब्रह्मा आदि देव अपने ऐश्वर्य से जीवों पर अनुग्रह करने मैं समर्थ हैं। जबकी आप तो स्वयं के भी और अन्य सभी देवों के भी ईश्वर हैं। अत्यन्त भाग्यशाली ज्ञानी जन आप ही में रमण करते हैं। आप पग पग पर मधुरता से परिपूर्ण है। आप स्वयं तो अपने आप में ही रमण करते हैं। हे अतुलनीय गुणों के आधार! आपको नमस्कार है।

ऐश्वर्यं शङ्करादीश्वरविनियमनं विश्वतेजोहराणां
तेजस्संहारि वीर्यं विमलमपि यशो निस्पृहैश्चोपगीतम्।
अङ्गासङ्गा सदा श्रीरखिलविदसि न क्वापि ते सङ्गवार्ता
तद्वातागारवासिन् मुरहर भगवच्छब्दमुख्याश्रयोऽसि॥१०॥

ऐश्वर्यं	(आपका) ऐश्वर्य
शङ्करादि-ईश्वर-विनियमनं	शंकर आदि ईश्वरों का भी नियामक है
विश्व-तेजोहराणां	विश्व के तेजस्वी जनों
तेजः - संहारि वीर्यं	के तेज का संहार करने वाला पराक्रम है
विमलम्-अपि यशः	निर्मल यश भी
निस्पृहैः - च-उपगीतं	निस्पृहजनो द्वारा गाया गया है
अङ्गासङ्गा सदा श्रीः -	अङ्ग में सङ्ग सदा रहती है लक्ष्मी
अखिल-विदसि	(आप) सर्वज्ञ हैं
न क्वापि ते सङ्गवार्ता	कहीं भी आपकी आसक्ति की बात नहीं सुनी जाती
तत्-वातागारवासिन्	इसीलिये, हे गुरुवायुर् के अधिष्ठाता!
मुरहर	हे मुरारि!
भगवत्-शब्दमुख्य-	इस शब्द 'भगवत्' के मुख्य
आश्रयः - असि	आश्रय (आप ही) हैं

हे गुरुवायुर् के अधिष्ठाता! हे मुरारि! आपका ऐश्वर्य शंकरादि देवों के अधिकारों का नियामक है। विश्व के तेजस्वियों के तेज का संहार करने में समर्थ आपका पराक्रम है। आपका यश निर्मल है और निस्पृह जनों के द्वारा वर्णित है। लक्ष्मी सदा

आपके सङ्ग विराजती हैं, फ़िर भी हे सर्वज्ञ ! कहीं भी आपकी आसक्ति की बात सुनने में नहीं आती। इसीलिये 'भगवत्' शब्द के एकमात्र आश्रय आप ही हैं।

दशक २

सूर्यस्पर्धिकिरीटमूर्ध्वतिलकप्रोद्भासिफालान्तरं
कारुण्याकुलनेत्रमार्द्रहसितोल्लासं सुनासापुटम्।
गण्डोद्यन्मकराभकुण्डलयुगं कण्ठोज्वलत्कौस्तुभं
त्वद्रूपं वनमाल्यहारपटलश्रीवत्सदीप्रं भजे॥१॥

सूर्य-स्पर्धि-किरीटम्-	सूर्य से स्पर्धा करने वाला मुकुट
ऊर्ध्वतिलक-प्रोद्भासि-फालान्तरम्	ऊंचे सीधे तिलक से भालप्रदेश देदीप्यमान हो रहा है
कारुण्य-आकुलनेत्रम्-	करुणा से परिपूर्ण नेत्र हैं
आर्द्र-हसित-उल्लासम्	प्रेमार्द्र मन्द मुस्कान से उल्लसित मुख हैं
सुनासापुटम्	नासिका अत्यन्त मनोहर है
गण्डोद्यन्-मकर-आभ-कुण्डल-युगम्	गण्डस्थल पर लटकते हुए मकर कुण्डल युगल प्रतिबिम्बित हैं
कण्ठोज्ज्वलत्-कौस्तुभम्	कण्ठ प्रदेश कौस्तुभ मणि से चमक रहा है
त्वत्-रूपम्	आपका ऐसा रूप
वनमाल्य-हार-पटल-श्रीवत्सदीप्रम्	(जो) वनमाला, हार समूह एवं श्रीवत्स से उद्दीप्त हो रहा है
भजे	(उस रूप का) मैं ध्यान करता हूं

हे भगवन्! मैं आपके उस रूप का ध्यान करता हूं जिसके मुकुट की प्रभा सूर्य से स्पर्धा करती है। भालप्रदेश ऊंचे लम्बे तिलक से उद्भासित है। करुणा से परिपूरित नेत्र हैं एवं मुख मधुर मन्द मुस्कान से उल्लसित हैं। नासिका अत्यन्त सुन्दर है। गण्डस्थल पर मकरकुण्डल युगल लटक रहे हैं और प्रतिबिम्बित हो रहे हैं। कण्ठप्रदेश कौस्तुभ मणि की कान्ति से चमक रहा है। वनमालाओं, हार समूहों एवं श्री वत्स से विभूषित आपके इस स्वरूप का मैं ध्यान करता हूं।

केयूराङ्गदकङ्कणोत्तममहारत्नाङ्गुलीयाङ्कित-
श्रीमद्बाहुचतुष्कसङ्गतगदाशङ्खारिपङ्केरुहाम् ।
काञ्चित् काञ्चनकाञ्चिलाञ्छितलसत्पीताम्बरालम्बिनी-
मालम्बे विमलाम्बुजद्युतिपदां मूर्तिं तवार्तिच्छिदम् ॥२॥

केयूराङ्गद-कङ्कणोत्तम-महारत्न-आङ्गुलीय-अङ्कित-	केयूर अङ्गद और कङ्गन एवं उत्तम महारत्नो से जडित हैं ऐसी अङ्गूठियों से सुशोभित अङ्गुलियां
श्रीमद्बाहु-चतुष्कसङ्गत-गदा-शङ्ख-अरि-पङ्केरुहां	(ऐसी) पावन चार भुजाएं (जो) धारण करती हैं गदा शङ्ख चक्र एवं कमल को
काञ्चित्	(ऐसा) अवर्णनीय (रूप)
काञ्चन-काञ्चि-लाञ्छित-लसत्-पीताम्बर-आलम्बिनीम्-	(जो) सुवर्ण की करधनी से युक्त सुन्दर पीताम्बर धारण किये हुए है
आलम्बे	आश्रय लेता हूं
विमल-अम्बुज-द्युति-पदां	निर्मल कमल की शोभा के समान चरणो (वाले)
मूर्तिं तव-	आपके विग्रह (का)
आर्तिच्छिदं	(जो) पीडाओं का छेदन करने वाले हैं

हे ईश! आपकी पावन चार भुजाएं बहुमूल्य रत्नो से युक्त केयूर, अङ्गद, कङ्गन आदि से अलंकृत हैं, एवं अङ्गुलियां भी बहुमूल्य रत्नों से जडित अंगूठियों से सुशोभित हैं तथा गदा, शङ्ख, चक्र एवं कमल धारण किये हुए हैं। आपका अवर्णनीय विग्रह सुवर्ण की करधनी से युक्त सुन्दर पीताम्बर धारण किये हुए है। आपके चरण निर्मल कमल की द्युति के समान उज्ज्वल हैं एवं पीडाओं का छेदन करने वाले हैं। ऐसे आपके श्रीविग्रह का मैं आश्रय लेता हूं।

यत्त्रैलोक्यमहीयसोऽपि महितं सम्मोहनं मोहनात्
कान्तं कान्तिनिधानतोऽपि मधुरं माधुर्यधुर्यादपि ।
सौन्दर्योत्तरतोऽपि सुन्दरतरं त्वद्रूपमाश्चर्यतोऽ-
प्याश्चर्यं भुवने न कस्य कुतुकं पुष्णाति विष्णो विभो ॥३॥

यत्-त्रैलोक्य-महीयसः - अपि महितं	जो त्रिलोक में महान है, उससे भी महान
सम्मोहनं मोहनात्	मोहक से भी अत्यन्त मोहक
कान्तं कान्ति-निधानतः - अपि	कान्ति की निधि से भी कान्तिपूर्ण
मधुरम् माधुर्य-धुर्यात्-अपि	माधुर्य की धुरि से भी मधुरतम
सौन्दर्य-उत्तरतः - अपि सुन्दरतरं	अलौकिक सुन्दरता से भी सौन्दर्यशाली
त्वत्-रूपम्-	आपका विग्रह
आश्चर्यतः - अपि-आश्चर्यं	अद्‌भुत लोकोत्तर आश्चर्य से भी आश्चर्यजनक
भुवने	संसार में
न कस्य कुतुकं पुष्णाति	किसके कुतूहल को नहीं बढाता
विष्णो विभो	हे सर्वव्यापी विष्णु!

हे सर्वव्यापी विष्णु! त्रिलोक में जो महान है, उससे भी महनीय, मोहक से भी अत्यन्त मोहक, कान्ति की निधि से भी अधिक कान्तिमय, माधुर्य की धुरि से भी मधुरतम, अलौकिक सुन्दरता से भी सौन्दर्यशाली, अद्‌भुत लोकोत्तर आश्चर्य से भी आश्चर्यजनक आपका श्रीविग्रह, संसार में किसके कौतूहल को नहीं बढाता? अर्थात् सभी आपके रूप से अभिभूत हो जाते हैं।

तत्तादृङ्मधुरात्मकं तव वपुः सम्प्राप्य सम्पन्मयी
सा देवी परमोत्सुका चिरतरं नास्ते स्वभक्तेष्वपि ।
तेनास्या बत कष्टमच्युत विभो त्वद्रूपमानोज्ञक -
प्रेमस्थैर्यमयादचापलबलाच्चापल्यवार्तोदभूत् ॥४॥

तत्-तादृक्-मधुर-आत्मकं	ऐसे उस मधुरात्मक

तव वपुः	आपके श्रीविग्रह
सम्प्राप्य	को पा कर
सम्पन्मयी	सम्पन्नतापूर्ण
सा देवी	वह देवी (लक्ष्मी)
परम-उत्सुका	अति उत्सुकतावश
चिरतरं न-आस्ते	बहुत समय तक नहीं रहती हैं
स्व-भक्तेषु-अपि	निज भक्तों के पास भी
तेन-अस्या	इसी कारण इनका
बत कष्टम्-	कष्ट की बात है
अच्युत विभो	हे अच्युत विभो!
त्वत्-रूप-मानोज्ञक-प्रेम-स्थैर्यमयात्-	आपके मनोहारी रूप में सुस्थिर प्रेम के कारण
अचापल-बलात्-	अचपलता के बल के कारण
चापल्य-वार्ता-	चपला' की दुष्कीर्ति
उदभूत्	उद्भूत हुई है

हे अच्युत! हे विभो! आपके ऐसे अनुपम मधुर्यपूर्ण श्रीविग्रह को पा कर , सम्पन्नता की देवी लक्ष्मी परम उत्सुकतावश अपने भक्तों के पास भी चिरकाल तक नहीं रहतीं। बडे कष्ट की बात है कि आपके इस अतिशय मनोहर रूप मे द्दढ एवं स्थिर

प्रेम से उत्पन्न अचापल्य के बल के कारण ही 'चपला' नाम की दुष्कीर्ति प्राप्त हुई है।

लक्ष्मीस्तावकरामणीयकहृतैवेयं परेष्वस्थिरे-
त्यस्मिन्नन्यदपि प्रमाणमधुना वक्ष्यामि लक्ष्मीपते ।
ये त्वद्ध्यानगुणानुकीर्तनरसासक्ता हि भक्ता जना-
स्तेष्वेषा वसति स्थिरैव दयितप्रस्तावदत्तादरा ॥५॥

लक्ष्मी: -	लक्ष्मी
तावक-रामणीयकहृता-एव-इयं	आपकी रमणीयता से अभिभूत हो कर ही यह
परेषु-अस्थिर-इति-	दूसरों में स्थिर नही रह्ती इस प्रकार
अस्मिन्-अन्यत्-अपि प्रमाणम्-अधुना	इसका दूसरा प्रमाण आज
वक्ष्यामि	बतलाता हूं
लक्ष्मीपते	हे लक्ष्मीपते!
ये त्वत्-ध्यान-गुण-अनुकीर्तन-रस-आस्क्ता	जो आपके ध्यान एवं गुणों के कीर्तन के रस मे आसक्त हैं
हि भक्ता जना: -	ऐसे ही भक्त जनों
तेषु-एषा वसति स्थिरैव	उनमें ये (लक्ष्मी) रहती है स्थिर हो कर ही
दयित-प्रस्ताव-दत्त-आदरा	(आपके) प्रेमी जनो के प्रस्ताव (गुणगान) को आदर देती हुई

लक्ष्मी आपके रमणीय रूप से अभिभूत हो कर औरों के यहां स्थिरता से नहीं रहती हैं। इस बात का एक और प्रमाण मैं बतलाता हूं। हे लक्ष्मीपते! जो जन आपके ध्यान में रहते हैं एवं आपके ही गुणगान के आनन्द में विभोर रहते हैं, ऐसे ही प्रेमी भक्तजनों के प्रस्ताव को आदर देती हुई, लक्ष्मी उनके यहां ही स्थिरता से रहती है।

एवंभूतमनोज्ञतानवसुधानिष्यन्दसन्दोहनं
त्वद्रूपं परचिद्रसायनमयं चेतोहरं शृण्वताम् ।

सद्य: प्रेरयते मतिं मदयते रोमाञ्चयत्यङ्गकं
व्यासिञ्चत्यपि शीतवाष्पविसरैरानन्दमूर्छोद्भवै: ॥६॥

एवं-भूत-मनोज्ञता-	मन से जाना जाने वाला आपका ऐसा रूप
नव-सुधा-	निर्मल मधु
निष्यन्द-सन्दोहनं	निरन्तर प्रवाहित करता है
त्वत् रूपं	आपका विग्रह
पर-चित्-रसायनमयं	परम चित् आनन्द का सम्मिश्रण है
चेतोहरं	चित्त को चुराने वाला है
शृण्वताम्	(आपके कथानकों का प्रेम से) श्रवण करने वालों
सद्य: प्रेरयते	को तत्काल प्रेरित करता है
मतिं मदयते	बुद्धि को उन्मादित करता है
रोमाञ्चयति-अङ्गकं	रोमाञ्चित करता है शरीर को
व्यासिञ्चति-अपि	और सींच भी देता है
शीत वाष्प-विसरै: -	शीतल अश्रु प्रवाह से
आनन्द-मूर्च्छा-उद्भवै:	आनन्द के व्यतिरेक से मूर्च्छा के कारण

मन से जाने जाने वाले आपके इस रूपसे निर्मल मधु निरन्तर प्रवाहित होता है। आपका स्वरूप परम चित् आनन्द का सम्मिश्रण है और चित्त को चुराने वाला है। आपकी कथाओं को प्रेम से सुनने वालों की बुद्धि को तत्काल प्रेरणा दे कर

आनन्दातिरेक से उन्मत्त बनाने वाला है। यह शरीर को पुलकित कर देता है और आनन्द के अतिरेक से मूर्च्छा के कारण उद्भूत शीतल अश्रुओं के प्रवाह से शरीर को सिञ्चित करने वाला है।

एवंभूततया हि भक्त्यभिहितो योगस्स योगद्वयात्
कर्मज्ञानमयात् भृशोत्तमतरो योगीश्वरैर्गीयते ।
सौन्दर्यैकरसात्मके त्वयि खलु प्रेमप्रकर्षात्मिका
भक्तिर्निश्रममेव विश्वपुरुषैर्लभ्या रमावल्लभ ॥७॥

एवं भूततया हि	इन्हीं कारणों से ही
भक्ति-अभिहित: योग: -स	भक्ति नामक योग, वह
योगद्वयात् कर्म-ज्ञानमयात्	योग द्वय से (अर्थात्) कर्म एवं ज्ञान से
भृशोत्तमतर:	अत्यधिक उत्कृष्ट है
योगीश्वरै: - गीयते	योगीश्वरों के द्वारा कहा गया है
सौन्दर्यैक-रस-आत्मके त्वयि खलु	एकमात्र सौन्दर्य रस के स्वरूपात्मक आपमें ही निश्चय रूप से
प्रेमप्रकर्ष-आत्मिका भक्ति: -	प्रेम स्वरूपात्मिका भक्ति
निश्रमम्-एव	अनायास ही
विश्वपुरुषै: -	संसार में लोगों को
लभ्या	उपलब्ध है
रमावल्लभ्	हे रमावल्लभ!

हे रमावल्लभ! इन्ही कारणो से वह भक्ति नामक योग अन्य योग द्वय - कर्म योग एवं ज्ञान योग से अत्यधिक उत्कृष्ट है। व्यास नारदादि योगीश्वरों द्वारा भी ऐसा कहा गया है। निश्चय ही मूर्तिमान सौन्दर्य स्वरूप आप में प्रेम लक्षणा भक्ति, संसार में

लोगों को सहज ही उपलब्ध हो जाती है।

निष्कामं नियतस्वधर्मचरणं यत् कर्मयोगाभिधं
तद्दूरेत्यफलं यदौपनिषदज्ञानोपलभ्यं पुन: ।
तत्त्वव्यक्ततया सुदुर्गमतरं चित्तस्य तस्माद्विभो
त्वत्प्रेमात्मकभक्तिरेव सततं स्वादीयसी श्रेयसी ॥८॥

निष्कामं	निषकामता
नियत-स्वधर्म-चरणं	से विहित स्वधर्म का अनुगमन (युक्त)
यत् कर्मयोग-अभिधं	जो कर्म योग कहलाता है
तत्-दूरेत्य-फलं	वह सुदूर समय मे देता है फल
यत्-उपनिषद्-ज्ञान-उपलभ्यं पुन:	(एवं) वह जो उपनिषद (में निहित) ज्ञान से प्राप्त होता है, फिर
तत्-तु-अव्यक्ततया	वह भी निश्चय ही अस्पष्टता के कारण
सुदुर्गमतरं चित्तस्य	अत्यन्त ही कठिन है चित्त के लिये प्राप्त करना
तस्मात्-विभो	इसी कारण से, हे विभो!
त्वत्-प्रेमात्मक-भक्ति:एव	आपकी प्रेम परिपूर्ण भक्ति ही
सततं	सदा
स्वादीयसी	स्वादिष्टतर (एवं)
श्रेयसी	श्रेष्ठतर है

निष्कामता से युक्त स्वधर्म का अनुगमन किये जाने वाला कर्मयोग नामक जो विधान है वह सुदूर भविष्य में फल प्रदान करने वाला है। फिर जो उपनिषदों में निहित ज्ञान के द्वारा प्राप्य है, उसे भी अस्पष्टता के कारण चित्त के लिये प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। हे विभो! इसी कारण से आपके प्रेम से परिपूर्ण भक्ति ही सदैव स्वादिष्टतर तथा श्रेष्ठ है।

अत्यायासकराणि कर्मपटलान्याचर्य निर्यन्मला
बोधे भक्तिपथेऽथवाऽप्युचिततामायान्ति किं तावता ।
क्लिष्ट्वा तर्कपथे परं तव वपुर्ब्रह्माख्यमन्ये पुन-
श्चित्तार्द्रत्वमृते विचिन्त्य बहुभिस्सिद्ध्यन्ति जन्मान्तरैः ॥९॥

अति-आयास-कराणि	कठोर परिश्रम से साध्य
कर्मपटलानि-	कर्म समूहों का
आचर्य	आचरण करके
निर्यन्मला	निर्मल हुए मन (वाले लोग)
बोधे	ज्ञान में
भक्तिपथे-अथवा-अपि-	भक्ति पथ में ,अथवा भी
उचितताम्-आयान्ति	अधिकार प्राप्त करते हैं
किं तावता	क्या उनका
क्लिष्ट्वा तर्कपथे	अत्यन्त क्लेष उठा कर ज्ञान मार्ग में
परं तव वपुः - ब्रह्म-आख्यम्-	ब्रह्ममय आपके स्वरूप जो ब्रह्म कहलाता है
अन्ये पुनः -	अन्य जन फिर भी

चित्त-आर्द्रत्वम्-ऋते	चित्त की द्रवीभूतता के बिना
विचिन्त्य	चिन्तन करते हुए
बहुभि: -	अनेक (जन्मों में)
सिद्ध्यन्ति	सिद्ध होते है
जन्मान्तरै:	जन्मान्तरों के द्वारा

कठोर परिश्रम से कर्मो के समूहों का आचरण करके निर्मल हुए मन वाले लोग ज्ञान अथवा भक्ति मार्ग में अधिकार पाते हैं। उनका क्या? कुछ जन वेदान्त मार्ग में अत्यन्त कष्ट से ब्रह्ममय आपके स्वरूप को, जो ब्रह्म ही कहलाता है, सिद्ध कर पाते हैं। तथा अन्य जन चित्त की निर्मलता के बिना बहुत चिन्तन करके, जन्मान्तरों में सिद्धि को प्राप्त करते हैं।

त्वद्भक्तिस्तु कथारसामृतझरीनिर्मज्जनेन स्वयं
सिद्ध्यन्ती विमलप्रबोधपदवीमक्लेशतस्तन्वती ।
सद्यस्सिद्धिकरी जयत्ययि विभो सैवास्तु मे त्वत्पद-
प्रेमप्रौढिरसार्द्रता द्रुततरं वातालयाधीश्वर ॥१०॥

त्वत्-भक्ति: - तु	आपकी भक्ति निश्चय ही
कथारस-अमृतझरी-	कथारस के अमृत के निर्झर में
निर्मज्जनेन	निमज्जन करने से
स्वयं सिद्ध्यन्ती	स्वयं ही सिद्ध होती है
विमल-प्रबोध-पदवीम्-	निर्मल ज्ञान के पद को
अक्लेशत: -	बिना कष्ट के

तन्वती	प्रदान करती है
सद्यः - सिद्धिकरी	अनायास सिद्धि देती है
जयति-	श्रेष्ठतर है
अयि विभो	हे विभो
सा-एव-अस्तु मे	वह ही प्राप्त हो मुझे
त्वत्-पद-प्रेम-प्रौढि-रस-आर्द्रता	आपके चरणों में प्रेम से उत्कृष्ट रस से द्रवीभूत
द्रुततरं	अति शीघ्रता से
वातालयाधीश्वर	हे वातालय अधीश्वर!

हे विभो! आपके कथारस के अमृत निर्झर में निमज्जन करने से आपकी भक्ति स्वयं ही सिद्ध होती है। निर्मल ज्ञान के पद को अनायास ही सिद्ध करके प्रदान करती है। इसीलिये कर्मयोग एवं ज्ञानयोग से श्रेष्ठतर है। हे वातालय के अधीश्वर! आपके चरणो मे प्रेम के द्वारा उत्कृष्ट रस से द्रवीभूत करने वाली वह भक्ति ही मुझे अति शीघ्रता से प्राप्त हो।

दशक ३

पठन्तो नामानि प्रमदभरसिन्धौ निपतिता:
स्मरन्तो रूपं ते वरद कथयन्तो गुणकथा: ।
चरन्तो ये भक्तास्त्वयि खलु रमन्ते परममू-
नहं धन्यान् मन्ये समधिगतसर्वाभिलषितान् ॥१॥

पठन्त:	कीर्तन करते हुए
नामानि	आपके नामों का
प्रमदभर सिन्धौ	आनन्दपूर्ण सिन्धु में
निपतिता:	डूबे हुए
स्मरन्त:	स्मरण करते हुए
रूपं ते	आपके स्वरूप को
वरद	हे वरद!
कथयन्त:	(परस्पर) कहते हुए
गुणकथा:	आपके गुणों की कथाएं
चरन्त:	विचरण करते हैं
ये भक्ता:	जो भक्त गण
त्वयि खलु रमन्ते परं	आप ही में रमण करते है

अमून् अहं	इस प्रकार के (भक्तों) को मैं
धन्यान् मन्ये	परम भाग्यशाली मानता हूं
समधिगत-सर्व-अभिलषितान्	(क्योंकि उन्हे) प्राप्त हो गई हैं सभी अभिलाषाएं

हे वरद! जो भक्त आपके नामों का कीर्तन करते हुए आनन्द के सिन्धु में डूब जाते हैं, आपके स्वरूप का निरन्तर स्मरण करते हैं, आपके गुणगणों की कथाएं परस्पर कहते हुए विचरण करते रहते हैं, और आप ही में रमण करते हैं, ऐसे उन भक्तों को मैं अत्यन्त धन्य मानता हूं, क्योंकि उन्हे सभी अभिलाषाएं प्राप्त हो गई हैं ।

गदक्लिष्टं कष्टं तव चरणसेवारसभरेऽ-
प्यनासक्तं चित्तं भवति बत विष्णो कुरु दयाम् ।
भवत्पादाम्भोजस्मरणरसिको नामनिवहा-
नहं गायं गायं कुहचन विवत्स्यामि विजने ॥२॥

गद क्लिष्टं	व्याधियों से संतप्त
कष्टं	खेद है
तव चरण	आपके चरणों
सेवा-रस-भरे अपि	की सेवा के रस में भी
अनासक्तं चित्तं भवति	अनासक्त यह चित्त हो जाता है
बत	हा !
विष्णो	हे विष्णु
कुरु दयां	करिए दया

भवत्-पाद-अम्भोज-स्मरण-रसिक:	आपके चरण कमलों का स्मरण करने में रसिक हुआ (मैं)
नाम-निवहान्-अहं गायं गायं	नाम समूहों का मैं गान करता हुआ
कुहचन विवत्स्यामि विजने	किसी निवास करुंगा (किसी) निर्जन स्थान में

खेद है कि व्याधियों से संतप्त यह चित्त, आपके चरण कमलों की सेवा के रस आनन्द में अनासक्त है। यह बडे दु:ख की बात है। हे विष्णु! अब आप ही दया कीजिए ताकि, आपके चरण कमलो के स्मरण का रसिक हो कर, मैं आपके अगणित नामों का संकीर्तन करता हुआ किसी निर्जन स्थान में निवास कर सकूं।

कृपा ते जाता चेत्किमिव न हि लभ्यं तनुभृतां
मदीयक्लेशौघप्रशमनदशा नाम कियती ।
न के के लोकेऽस्मिन्ननिशमयि शोकाभिरहिता
भवद्भक्ता मुक्ता: सुखगतिमसक्ता विदधते ॥३॥

कृपा ते जाता चेत्-	कृपा आपकी हो गई अगर
किम्-इव न हि लभ्यं	क्या ही नहीं लभ्य है
तनुभृतां	देहधारियों के लिये
मदीय क्लेश-औघ-प्रशमन-दशा	मेरे कष्टों के समूह के उन्मूलन की स्थिति
नाम कियती	नाम मात्र है
न के के लोके-अस्मिन्-	नहीं कौन कौन इस लोक में
अनिशम्-अयि शोक-अभिरहिता:	निरन्तर, हे प्रभो! शोक से रहित
भवत् भक्ता:	आपके भक्त

मुक्ता:	मुक्त हैं
सुख-गतिम्-असक्ता	सुख भोगते हैं और अनासक्त (भाव से)
विदधते	विचरण करते हैं

अहो! यदि आपकी कृपा हो जाये, तो कौन सी वस्तु देहधारियों के लिये अलभ्य है? फिर मेरे कष्टों के समूह के उन्मूलन की स्थिति तो नाम मात्र है । इस लोक में, आपके कौन से भक्त हैं जो शोक से रहित हो कर मुक्त भाव से सुख नहीं भोगते और असक्त भाव से विचरण नहीं करते?

मुनिप्रौढा रूढा जगति खलु गूढात्मगतयो
भवत्पादाम्भोजस्मरणविरुजो नारदमुखा: ।
चरन्तीश स्वैरं सततपरिनिर्भातपरचि -
त्सदानन्दाद्वैतप्रसरपरिमग्ना: किमपरम् ॥४॥

मुनि प्रौढा	श्रेष्ठ मुनिवर
रूढा: जगति खलु	प्रसिद्धि पाते हैं जगत में निश्चय ही
गूढात्मगतय:	जिनकी गति गूढ है
भवत्-पाद-अम्भोज-स्मरणविरुज:	आपके चरण कमलो का निरन्तर ध्यान करते हुए
नारद-मुखा:	नारदादि नेता
चरन्ति-ईश स्वैरं	विचरण करते हैं हे ईश! स्वेच्छा पूर्वक
सतत-परिनिर्भात-	सदा सर्वदा निम्मजित रह कर
परचित्-आनन्द्-अद्वैत-प्रसर-परिमग्ना:	परम सच्चिदानन्द अद्वैत रस मे निमग्न

किम् अपरम्	इससे क्या बढकर है

हे ईश ! नारद आदि मुनिवर नेता आपके चरण कमलो का निरन्तर ध्यान करते हुए जग मे प्रसिद्धि पाते हैं और स्वयं गूढ गति को प्राप्त करते हैं। वे परम सच्चिदानन्द अद्वैत के रस में सदा निमग्न रहते हैं और स्वेच्छा से विचरण करते हैं । इससे उच्चतर स्थिति और क्या हो सकती है?

भवद्भक्तिः स्फीता भवतु मम सैव प्रशमये-
दशेषक्लेशौघं न खलु हृदि सन्देहकणिका ।
न चेद्व्यासस्योक्तिस्तव च वचनं नैगमवचो
भवेन्मिथ्या रथ्यापुरुषवचनप्रायमखिलम् ॥५॥

भवत् भक्तिः	आपकी भक्ति
स्फीता भवतु	बढती रहे
मम	मेरी
सा एव प्रशमयेत्	वह ही विनाश करेगी
अशेष-क्लेश-औघं	अनन्त व्याधियों के समूह का
न खलु हृदि	नहीं है निश्चय ही (मुझे) हृदय में
सन्देह कणिका	सन्देह अणुमात्र भी
न चेत्	अन्यथा
व्यासस्य-उक्ति	व्यास जी का कथन
तव च वचनं	आपके वचन

नैगम-वचः	(और) वेदों के वाक्य
भवेत्-मिथ्या	हो जाएंगे मिथ्या
रथ्या-पुरुष-वचन-प्रायम्	रास्ते के पुरुषों के प्रलाप के समान
अखिलम्	सारे

आपकी भक्ति मुझमें बढती रहे। वही मेरे समस्त क्लेशों का विनाश कर सकती है। मेरे हृदय मे अणुमात्र भी सन्देह नहीं है, अन्यथा व्यास जी का कथन, आपके वचन एवं वेद वाक्य, सब के सब मिथ्या सिद्ध हो जाएंगे, रास्ते के पुरुषों के प्रलाप के समान।

भवद्भक्तिस्तावत् प्रमुखमधुरा त्वत् गुणरसात्
किमप्यारूढा चेदखिलपरितापप्रशमनी ।
पुनश्चान्ते स्वान्ते विमलपरिबोधोदयमिल-
न्महानन्दाद्वैतं दिशति किमतः प्रार्थ्यमपरम् ॥६॥

भवत्-भक्तिः - तावत्	आपकी भक्ति निश्चय ही
प्रमुख-मधुरा	प्रारम्भ से ही मधुरा है
त्वत्-गुण-रसात्	आपके गुणों के रस से
किम्-अपि-आरूढा चेत्-	और भी बढ जाए
अखिल-परिताप-प्रशमनी	(तो) सम्पूर्ण कष्टों का समूल नाश करने वाली है
पुनः-च-अन्ते	और फिर अन्त में
स्व-अन्ते	अपने अन्तः:करण में

विमल-परिबोध-उदय-मिलत्	विमल ज्ञान के जागने से
महा-आनन्द-अद्वैतं	महा आनन्द अद्वैत
दिशति	प्रदान करती है
किम्-अत: प्रार्थ्यम्-अपरम्	क्या इसके बाद प्रार्थनीय है

हे ईश! आपकी भक्ति प्रारम्भ से ही मधुर है। आपके असंख्य गुणों के गान से यदि और बढ जाए तो सम्पूर्ण कष्टों का समूल नाश करने वाली है। और जब अन्त:करण में निर्मल ज्ञान के जागता है तब अद्वैत का महान आनन्द आपकी भक्ति ही प्रदान करती है। इससे बढ कर और क्या प्रार्थनीय है?

विधूय क्लेशान्मे कुरु चरणयुग्मं धृतरसं
भवत्क्षेत्रप्राप्तौ करमपि च ते पूजनविधौ ।
भवन्मूर्त्यालोके नयनमथ ते पादतुलसी-
परिघ्राणे घ्राणं श्रवणमपि ते चारुचरिते ॥७॥

विधूय क्लेशान्-मे	समाप्त करके मेरे क्लेषों को
कुरु	(कुछ ऐसा) कर दें
चरण-युग्मम्	(कि मेरे) पग युगल
धृत-रसम्	पाएं रस
भवत्-क्षेत्र-प्राप्तौ	आपके क्षेत्रों में पहुंचने में
करम्-अपि च	और (मेरे) हाथ भी
ते पूजन-विधौ	आपके पूजन के विधान में

भवत्-मूर्ति-आलोके	आपकी मूर्ति देखने में
नयनम्-	नेत्र
अथ ते पादतुलसी-परिघ्राणे	और फिर आपके चरणों में (समर्पित) तुलसी का घ्राण करने में
घ्राणम्	नाक
श्रवणम्-अपि	कान भी
ते चारु-चरिते	आपके सुन्दर चरित के श्रवण में

हे ईश! मेरे समस्त क्लेषों को समाप्त कर के, ऐसी कृपा कीजिये कि मेरे दो पग आपके तीर्थ क्षेत्रों में पहुंचने के रस में आसक्त हों। मेरे हाथ आपकी पूजा करने की विधि में, नेत्र आपकी प्रतिमा के दर्शन में, नासिका आपके चरणों मे अर्पित तुलसिका को सूंघने में, और कान भी आपके सुन्दर चरित को सुनने का रसास्वादन करें।

प्रभूताधिव्याधिप्रसभचलिते मामकहृदि
त्वदीयं तद्रूपं परमसुखचिद्रूपमुदियात् ।
उदञ्चद्रोमाञ्चो गलितबहुहर्षाश्रुनिवहो
यथा विस्मर्यासं दुरुपशमपीडापरिभवान् ॥८॥

प्रभूत-आधि-व्याधि-प्रसभ-चलिते	असीम आधि व्याधि के कारण क्लान्त
मामक-हृदि	मेरे हृदय में
त्वदीयं तत्-रूपं परम-सुख-चित्-रूपम्-	आपका वह रूप (जो) परमानन्द एवं ज्ञान स्वरूप है
उदियात्	जागृत हो
उदञ्च्त-रोमाञ्चः	(जिससे) उदित हो रोमाञ्च

गलित-बहु-हर्ष-अश्रु-निवहः	बह जायें अतिहर्ष पूर्ण अश्रुओं का झरना
यथा विस्मर्यासं	जिससे भूल जाऊं अनायास ही
दुरुपशम-पीडा-परिभवान्	दुर्दमनीय पीडा के आतंक को

हे ईश! मेरा चित्त असंख्य आधि और व्याधियों से अत्यन्त विचलित है। मेरे ऐसे क्लान्त हृदय में आपका परमानन्द मय ज्ञानस्वरूप रूप उदित हो जाये, जिससे शरीर पुलकित और रोमाञ्चित हो, और अत्यधिक हर्षातिरेक से अश्रुओं का झरना बह निकले, और मैं अनायास ही दुर्दमनीय पीडाओं के आतंक को भूल जाऊं।

मरुद्गेहाधीश त्वयि खलु पराञ्चोऽपि सुखिनो
भवत्स्नेही सोऽहं सुबहु परितप्ये च किमिदम् ।
अकीर्तिस्ते मा भूद्वरद गदभारं प्रशमयन्
भवत् भक्तोत्तंसं झटिति कुरु मां कंसदमन ॥९॥

मरुत्-गेह-अधीश	हे मरुद्गेहाधिपति
त्वयि खलु पराञ्चः-अपि सुखिनः	आपमें, निश्चय ही, नास्तिक भी सुखी हैं
भवत्-स्नेही सः-अहं	आपमें स्नेह रखने वाला वह मैं
सुबहु परितप्ये च	बहुत परितप्त हूं
किम-इदम्	यह क्या
अकीर्तिः-ते मा भूत्	आपकी अकीर्ति न हो
वरद	हे वरद्!
गदभारं प्रशमयन्	कष्टों के भार का प्रशमन कर के

भवत्-भक्त-उत्तंसं	आपके भक्तों में श्रेष्ठ
झटिति कुरु मां	शीघ्र ही कीजिए मुझको
कंसदमन	हे कंस विनाशक!

हे मरुद्गेहाधिपति! आपमे अनासक्त नास्तिक लोग भी सुखी हैं, किन्तु आपमें स्नेह रखने वाला मैं बहुत ही परितप्त हूं। यह क्या? हे वरद! आपकी अकीर्ति न हो। हे! कंसदमन! मेरे कष्टों के भार का प्रशमन करके मुझे शीघ्र ही अपने भक्तों में श्रेष्ठतम स्थान प्रदान कीजिए।

किमुक्तैर्भूयोभिस्तव हि करुणा यावदुदिया-
दहं तावद्देव प्रहितविविधार्तप्रलपितः ।
पुरः क्लृप्ते पादे वरद तव नेष्यामि दिवसा-
न्यथाशक्ति व्यक्तं नतिनुतिनिषेवा विरचयन् ॥१०॥

किम्-उक्तैः - भूयोभिः-	क्या लाभ बोलने से बार बार
तव हि करुणा	आपकी ही करुणा
यावत्-उदियात्-	जब तक उदित होती है
अहं तावत्-	मैं तब तक
देव	हे देव!
प्रहित-विविध-आर्त-प्रलपितः	त्याग करके नाना प्रकार के दुखमय प्रलापों का
पुरः क्लृप्ते पादे	पहले संकल्प किये हुए (आपके) चरणों में
वरद तव	वरद! आपके

नेष्यामि दिवसान्-	बिताऊंगा दिनों को
यथाशक्ति	यथा सम्भव
व्यक्तं	निश्चय ही
नति-नुति-निषेवा	नमस्कार स्तुति एवं सेवा
विरचयन्	करते हुए

हे ईश! बार बार बोलने से क्या लाभ? जब तक आपकी करुणा का उदय नहीं होता, तब तक, मैं, हे देव! नाना प्रकार के आर्त प्रलापों का परित्याग करके, पहले संकल्प किये हुए के अनुसार आपके चरणो में नमस्कार स्तुति एवं सेवा करता हुआ दिनों को व्यतीत करुंगा।

दशक ४

कल्यतां मम कुरुष्व तावतीं कल्यते भवदुपासनं यया ।
स्पष्टमष्टविधयोगचर्यया पुष्टयाशु तव तुष्टिमाप्नुयाम् ॥१॥

कल्यतां	स्वास्थ्य
मम	मेरा
कुरुष्व	कृपा करें
तावतीं	उतना हो
कल्यते	(जिससे) कर सकूं
भवत्-उपासनं	आपकी उपासना
यया	जिससे
स्पष्टम्-	निश्चयही
अष्ट-विध-योग-चर्यया	अष्टविधि यॊग का आचरण करके
पुष्टय-आशु	स्वस्थ हो कर शीघ्र ही
तव तुष्टिम्	आपकी तुष्टि
आप्नुयाम्	प्राप्त कर सकूं

हे ईश! मुझको कम से कम इतना स्वास्थ्य प्रदान कीजिये जिससे मैं आपकी उपासना कर सकूं। फिर निश्चय ही अष्टाङ्ग योग का पालन करके, शीघ्र ही पुष्टि लाभ करके, आपकी प्रसन्नता प्राप्त कर लूंगा।

ब्रह्मचर्यदृढतादिभिर्यमैराप्लवादिनियमैश्च पाविता: ।
कुर्महे दृढममी सुखासनं पङ्कजाद्यमपि वा भवत्परा: ॥२॥

ब्रह्मचर्य-दृढता-आदिभि:-यमै:-	ब्रह्मचर्य आदि यमों के द्वार दृढता
आप्लव-आदि-नियमै:-च	और स्नानादि नियमॊं से
पाविता:	पवित्र
कुर्महे	हम करेंगे
दृढम्-अमी	दृढता से वे सब
सुखासनम्	सुखासन
पङ्कज-आद्यम्-अपि वा	पद्मासन आदि भी
भवत्-परा:	आपके उन्मुख हो कर

हे ईश! हम, आपके भक्त, ब्रह्मचर्य आदि यमों के द्वारा दृढ हो कर एवं स्नान आदि नियमों से पवित्र हो कर, आपके सम्मुख हो कर पद्मासन या सुखासन आदि को भी दृढता से अभ्यास करेंगे।

तारमन्तरनुचिन्त्य सन्ततं प्राणवायुमभियम्य निर्मला: ।
इन्द्रियाणि विषयादथापहृत्यास्महे भवदुपासनोन्मुखा: ॥३॥

तारम्-अन्तरम्-अनुचिन्त्य	प्रणव का अन्तर में ध्यान करके
सन्ततं	निरन्तर
प्राण-वायुम्-अभियम्य	प्राण वायु का सुसंचार कर के

निर्मला:	पवित्र हो कर
इन्द्रियाणि विषयात्-	इन्द्रियों को विषयों से
अथ-अपहृत्य	तत्पश्चात हटाकर
आस्महे	हो जायेंगे
भवत् उपासन-उन्मुखा:	आपकी उपासना में तत्पर

हे ईश! अन्तरमन में निरन्तर प्रणव का ध्यान धारण करके प्राण वायु का सुसंचार करके फिर इन्द्रियों को विषयों से हटा कर हम आपकी उपासना के लिए प्रस्तुत हो जायेंगे।

अस्फुटे वपुषि ते प्रयत्नतो धारयेम धिषणां मुहुर्मुहु: ।
तेन भक्तिरसमन्तरार्द्रतामुद्वहेम भवदङ्घ्रिचिन्तका ॥४॥

अस्फुटे वपुषि ते	अस्पष्ट विग्रह आपके
प्रयत्नत:	में प्रयत्न पूर्वक
धारयेम	लगायेंगे
धिषणां	बुद्धि को
मुहुः मुहुः	बार बार
तेन	इस प्रकार
भक्तिरसम्-अन्त: - आर्द्रताम्-	भक्ति रस और हृदय की कोमलता

उद्वहेम	प्राप्त कर लेंगे
भवत्-अङ्घ्रिचिन्तकाः	एवं आपके चरणों के पुजारी हो जायेंगे।

हे ईश! आपके अस्पष्ट विग्रह पर यत्नतः बुद्धि को बार बार लगायेंगे। इस प्रकार सतत अभ्यास से भक्ति रस एवं चित्त की कोमलता प्राप्त कर के आपके चरण कमलों के पुजारी हो जायेंगे।

विस्फुटावयवभेदसुन्दरं त्वद्वपुः सुचिरशीलनावशात् ।
अश्रमं मनसि चिन्तयामहे ध्यानयोगनिरतास्त्वदाश्रयाः ॥५॥

विस्फुट-अवयव-भेद-सुन्दरं	स्पष्ट हो रहे पाद से शिखर तक के सुंदर अवयव भेद
त्वत्-वपुः	वाले आपके श्री विग्रह (में)
सुचिर-शीलनावशात्	चिरकाल तक ध्यानावस्थित रहने के कारण
अश्रमं मनसि	अनायास ही चित्त में
चिन्तयामहे	ध्यान करने लगेंगे
ध्यान-योग-निरताः-	ध्यान योग में लगे हुए
त्वत्-आश्रयाः	आपके आश्रित हो जायेंगे

हे ईश! चिरकाल तक ध्यानावस्थित रहने के कारण स्पष्ट हो रहे आपके श्रीविग्रह के पादादिकेशान्त (चरणों से केशों तक) अवयव भेद में अनायास ही ध्यान लग जायेगा। ध्यान योग में लगे हुए हम, आपके भक्त, आपके आश्रित हो जायेंगे।

ध्यायतां सकलमूर्तिमीदृशीमुन्मिषन्मधुरताहृतात्मनाम् ।
सान्द्रमोदरसरूपमान्तरं ब्रह्म रूपमयि तेऽवभासते ॥६॥

ध्यायतां	ध्यान करने वालों के

सकल-मूर्तिम्-ईदृशीम्-	आपकी ऐसी कलामयी मूर्ति
उन्मिषन्-मधुरता-हृत्-आत्मनाम्	(से) उत्पन्न हुई मधुरता से सम्मोहित हुए मन वालों के
सान्द्र-मोद-रस-रूपम्-	घनीभूत आनन्द के रस स्वरूप
अन्तरम्	हृदय में
ब्रह्म रूपम्-अयि ते-	ब्रह्म रूप हे ईश! आपका
अवभासते	आभासित होता है

हे ईश! आपकी ऐसी कलामयी (सगुण) मूर्ति का ध्यान करने से मन में उत्पन्न हुई मधुरता वालों के हृदय में, घनीभूत आनन्द स्वरूप आपका ब्रह्म (निर्गुण) रूप उद्भासित हो जाता है।

तत्समास्वदनरूपिणीं स्थितिं त्वत्समाधिमयि विश्वनायक ।
आश्रिता: पुनरत: परिच्युतावारभेमहि च धारणादिकम् ॥७॥

तत्-समास्वदन-रूपिणीम् स्थितिं	उस (अनुभव) के समास्वादन की स्थिति
त्वत्-समाधिम्-	आपकी समाधि के
अयि विश्वनायक	हे विश्वविनायक!
आश्रिता:	आश्रित (हम)
पुन:-अत:	पुन: वहां से (उस् स्थिति से)
परिच्युतौ	च्युत होने पर

आरभेमहि च	और फिर से आरम्भ करेंगे
धारणा-आदिकम्	धारणा आदि का

हे विश्वनायक! उस अनुभव के रसास्वादन की स्थिति से प्राप्त आपकी समाधि के आश्रित हुए हम, यदि पुन: वहां से च्युत हो जाएं, तो फिर से धारणा आदि योग के अभ्यास का आरम्भ करेंगे।

इत्थमभ्यसननिर्भरोल्लसत्त्वत्परात्मसुखकल्पितोत्सवा: ।
मुक्तभक्तकुलमौलितां गता: सञ्चरेम शुकनारदादिवत् ॥८॥

इत्थम्-अभ्यसन्-	इस प्रकार से अभ्यास करते हुए
अनिर्भर-उल्लसन्-	स्वतन्त्रता से अभिभूत
त्वत्-परात्म-सुख-	आपके परमात्म सुख से
कल्पित्-उत्सवा:	उत्पन्न उत्साह वाले
मुक्त-भक्त-कुल	जीवन्मुक्त भक्तों के कुल के
मौलितां गता:	शिरोमणि हो कर
सञ्चरेम	विचरण करेंगे
शुक-नारद-आदि-वत्	शुक नारद आदि के समान

हे ईश! इस प्रकार से अभ्यास करते हुए स्वतन्त्रता से अभिभूत होते हुए, आपके परात्म सुख से उत्पन्न उत्साह वाले हम जीवन्मुक्त भक्तों के कुल के शिरोमणि शुक नारद आदि के समान विचरण करेंगे।

त्वत्समाधिविजये तु य: पुनर्मङ्क्षु मोक्षरसिक: क्रमेण वा ।
योगवश्यमनिलं षडाश्रयैरुन्नयत्यज सुषुम्नया शनै: ॥९॥

त्वत्-समाधि-विजये	आपकी समाधि पाकर
तु यः पुनः-	निश्चय ही जो फिर
मङ्क्षु मोक्ष-रसिकः	सद्य मोक्ष चाहने वाला
क्रमेण वा	या क्रममुक्ति चाहने वाला
योगवश्यम्-	योग के प्रभाव से
अनिलं	वायु को
षड्-आश्रयैः-	षट् चक्रों के मध्य से
उन्नयति-	ऊपर को ले जाता है
अज	हे अज!
सुषुम्नया	सुषुम्ना नाडी के द्वारा
शनैः	धीरे धीरे

हे अज! आपकी समाधि पा कर जो जन सद्य मुक्ति चाहता है अथवा जो जन क्रममुक्ति चाहता है, वह योग के प्रभाव से प्राण वायु को षट् चक्रों के सहारे सुषुम्ना नाडी के द्वारा, धीरे धीरे ऊपर को ले जाता है।

लिङ्गदेहमपि सन्त्यजन्नथो लीयते त्वयि परे निराग्रहः ।
ऊर्ध्वलोककुतुकी तु मूर्धतः सार्धमेव करणैर्निरीयते ॥१०॥

लिङ्ग-देहम्-अपि	लिङ्ग देह को भी

सन्त्यजन्-अथ:	त्याग कर फिर
लीयते	विलीन हो जाता है
त्वयि परे	आप के ब्रह्म स्वरूप में
निराग्रह:	अनाग्रही
ऊर्ध्व-लोक-कुतुकी तु	ऊर्ध्व लोक का चाहने वाला किन्तु
मूर्धत:	ब्रह्मरन्ध्र से
सार्धम्-एव करणै:-	सङ्ग इन्द्रियों के
निरीयते	(ऊपर को) निकल जाता है

निराग्रही जन लिङ्ग देह का भी त्याग कर के आपके ब्रह्म स्वरूप में विलीन हो जाता है। किन्तु ऊर्ध्व लोकों का अभिलाषी ब्रह्मरन्ध्र को भेद कर इन्द्रियों के सहित ही ऊपर चला जाता है।

अग्निवासरवलर्क्षपक्षगैरुत्तरायणजुषा च दैवतै: ।
प्रापितो रविपदं भवत्परो मोदवान् ध्रुवपदान्तमीयते ॥११॥

अग्नि-वासर-वलर्क्ष-पक्षगै: -	अग्नि, वासर, शुक्ल पक्ष एवं
उत्तरायणजुषा	उत्तरायण के अधिष्ठाता
दैवतै:	देवताओं के द्वारा
प्रापितो रविपदं	पहुंचाये जाने पर सूर्य की सतह पर

भवत्-परः	आपके अभिमुख (भक्त)
मोदवान्	आनन्दपूर्वक
ध्रुवपदान्तम् ईयते	ध्रुवपद को प्राप्त कर लेते हैं

हे ईश! आपके परायण भक्त जन अग्नि वासर शुक्लपक्ष एवं उत्तरायण के अधिष्ठाता देवताओं के द्वारा सूर्य लोक तक पहुंचाए जाने पर आनन्द पूर्वक ध्रुव लोक को प्राप्त करते हैं।

आस्थितोऽथ महरालये यदा शेषवक्त्रदहनोष्मणार्द्यते ।
ईयते भवदुपाश्रयस्तदा वेधसः पदमतः पुरैव वा ॥१२॥

आस्थितः अथ महरालये	रहता हुआ तब महर्लोक में
यदा शेषवक्त्र-दहन-ऊष्मणा-	जब आदि शेष के मुख की अग्नि की ऊष्मा से
आर्द्यते	संतप्त हो जाता है
ईयते	(तब वह) पहुंचता है
भवत्-उपाश्रयः -	आपके शरणागत हो कर
तदा	तब
वेधसः पदम्-	ब्रह्मलोक को
अतः पुरा-एव वा	इसके पहले ही अथवा

तदन्तर महर्लोक में वास करता हुआ जब जीव आदिशेष के मुख से निकली हुई अग्नि की ऊष्मा से संतप्त होता है, तब आपके शरणागत हो कर, ब्रह्मलोक को पहुंच जाता है। अथवा वह चाहे तो ऊष्मा से संतप्त होने से पहले ही वह ब्रह्मलोक जा सकता है।

तत्र वा तव पदेऽथवा वसन् प्राकृतप्रलय एति मुक्तताम् ।
स्वेच्छया खलु पुरा विमुच्यते संविभिद्य जगदण्डमोजसा ॥१३॥

तत्र वा	वहां (ब्रह्मलोक में)
तव पदे-अथवा	आपके लोक (विष्णुलोक) में अथवा
वसन्	रहते हुए
प्राकृतप्रलये	प्राकृत प्रलय के समय
एति मुक्तताम्	पहुंचता है मुक्ति को
स्वेच्छया खलु पुरा	स्वेच्छा से निश्चय ही पहले भी
विमुच्यते	मुक्त हो जाता है
संविभिद्य	भेद कर
जगत्-अण्डम्	जगत् ब्रह्माण्ड को
ओजसा	(अपने योग) बल से

ब्रह्मलोक में अथवा आपके लोक - वैकुण्ठलोक में रहते हुए, प्राकृत प्रलय के समय मुक्त हो जाता है। अथवा निश्चय ही पहले ही, स्वेच्छा से अपनी यौगिक शक्ति से जगत् ब्रह्माण्ड को भेदता हुआ मुक्त हो जाता है।

तस्य च क्षितिपयोमहोऽनिलद्योमहत्प्रकृतिसप्तकावृती: ।
तत्तदात्मकतया विशन् सुखी याति ते पदमनावृतं विभो ॥१४॥

तस्य च	और उस

क्षिति-पयो-महः-अनिल-द्यो-महत्-प्रकृति-	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश महत् तत्त्व और् प्रकृति
सप्तक-आवृतीः	सात आवरण
तत्-तत्-आत्मकतया विशन्	उस उस (अनुरूप) स्वरूप (के द्वारा) प्रवेश करता हुआ
सुखी	सुखानुभूति से
याति	जाता है
ते पदम्-अनावृतं	आपके पद (जो) अनावृत है
विभो	हे विभो!

हे विभो! उस जगत् ब्रह्माण्ड के सात आवरण पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, महत तत्त्व एवं प्रकृति को उनके अनुकूल स्वरूप को धारण कर के उनमें प्रवेश करता हुआ सुखानुभूति के साथ आपके अनावृत पद-ब्रह्म पद को चला जाता है।

अर्चिरादिगतिमीदृशीं व्रजन् विच्युतिं न भजते जगत्पते ।
सच्चिदात्मक भवत् गुणोदयानुच्चरन्तमनिलेश पाहि माम् ॥१५॥

अर्चिः - आदि-गतिम्-	ज्योति आदि गतियों को
ईदृशीं	इस प्रकार
व्रजन्	पा कर
विच्युतिं	विच्युति को
न भजते	नहीं प्राप्त होता

जगत्पते	हे जगत्पति
सच्चिदात्मक	हे सच्चितानन्दस्वरूप
भवत्-गुण-उदयान्	आपके गुणों की महत्ता
उच्चरन्तम्	का संकीर्तन करता हुआ
अनिलेश	हे वायुपुरनाथ!
पाहि माम्	रक्षा करें मेरी

हे जगत्पति! इस प्रकार ज्योति आदि गतियों को प्राप्त करके, भक्त, विच्युत हो कर फिर संसार में नहीं आता। हे सच्चिदानन्दस्वरूप! आपके गुणों की महत्ता का गान करने वाले मुझ पर कृपा करें। हे अनिलेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ५

व्यक्ताव्यक्तमिदं न किञ्चिदभवत्प्राक्प्राकृतप्रक्षये
मायायाम् गुणसाम्यरुद्धविकृतौ त्वय्यागतायां लयम् ।
नो मृत्युश्च तदाऽमृतं च समभून्नाह्नो न रात्रेः स्थिति-
स्तत्रैकस्त्वमशिष्यथाः किल परानन्दप्रकाशात्मना ॥१॥

व्यक्त-अव्यक्तम्-इदं	व्यक्त, अव्यक्त यह
न किञ्चित्-अभवत्-	नहीं कुछ भी था (वर्तमान)
प्राक्-प्राकृत-प्रक्षये	पहले प्रकृत प्रलय के
मायायाम्	माया में ही
गुण-साम्य-रुद्ध-विकृतौ	(तीनों) गुणों के सम हो जाने से रुक गई थी विकृतियां
त्वयि आगतायां लयम्	आपमें ही आकर् लीन हो गई थी
नो मृत्युः च	न मृत्यु और
तदा-अमृतं च	और उस समय अमरता (मोक्ष)
समभूत-	नहीं थे
न-अह्नः	न दिअन
न रात्रेः	न रात्रि
स्थितिः	स्थित थे

तत्र-एक: - त्वम्-	वहां एकमात्र आप ही
अशिष्यथा: किल	शेष थे निश्चय ही
परानन्द-प्रकाश-आत्मना	परमानन्द के प्रकाश स्वरूप स्वयं

यह व्यक्त अथवा अव्यक्त जगत्, उस समय प्राकृत प्रलय के पहले कुछ भी नहीं था। माया में तीनों गुणों के समान हो जाने से कार्य कारण की विकृतियां सब आप ही में विलीन हो गईं थीं। उस समय मृत्यु और मोक्ष तथा दिन और रात्रि की भी स्थिति नहीं थी। निश्चय ही केवल आप ही स्वयं परमानन्द के प्रकाश स्वरूप से स्थित थे।

काल: कर्म गुणाश्च जीवनिवहा विश्वं च कार्यं विभो
चिल्लीलारतिमेयुषि त्वयि तदा निर्लीनतामाययु: ।
तेषां नैव वदन्त्यसत्त्वमयि भो: शक्त्यात्मना तिष्ठतां
नो चेत् किं गगनप्रसूनसदृशां भूयो भवेत्संभव: ॥२॥

काल:	काल (समय)
कर्म	कर्म
गुणा: - च	और गुण
जीवनिवहा:	जीवमात्र
विश्वं च कार्यं	और यह जगत् (माया के) कार्य
विभो	हे विभो
चित्-लीलारतिम्-एयुषि त्वयि	चित्त की लीला में इच्छा (के समय) लीन हो जाती है आप ही में
तदा	तब, (उस समय)

निर्लीनताम्-आययु:	पूर्णरूप से विलीन हो जाती हैं
तेषां न-एव वदन्ति-	उनके लिये भी नहीं बोलती हैं (श्रुतियां)
असत्त्वम्-	(कि) ये मिथ्या हैं
अयि भो:	हे भगवन्
शक्त्यात्मना तिष्ठतां	(वे) कारण स्वरूप से रहती हैं (आपमें)
नो चेत् किं	नहीं तो क्या
गगन-प्रसून-सदृशां	आकाश कुसुम के समान
भूय: भवेत्-संभव:	फिर से (इनका) उत्पन्न होना सम्भव है

हे विभो! जिस समय आपकी स्व स्वरूपानुसंधान स्वरूपा लीला में इच्छा उत्पन्न होती है, उस समय काल, तीनों गुण, जीव समूह, अखिल विश्व - ये सब माया के कार्य आपके चित्त स्वरूप में विलीन हो जाते हैं। आपमें कारणरूप से स्थित हुए इनको - काल कर्मादि को, श्रुतियां मिथ्या नहीं बताती हैं। वर्ना, आकाश कुसुम के समान क्या इनका फिर से उत्पन्न होना सम्भव है?

एवं च द्विपरार्धकालविगतावीक्षां सिसृक्षात्मिकां
बिभ्राणे त्वयि चुक्षुभे त्रिभुवनीभावाय माया स्वयम् ।
मायात: खलु कालशक्तिरखिलादृष्टं स्वभावोऽपि च
प्रादुर्भूय गुणान्विकास्य विदधुस्तस्यास्सहायक्रियाम् ॥३॥

एवं च	और इस प्रकार
द्वि-परार्ध-काल-विगतौ-	द्वि परार्ध काल के समाप्त हो जाने पर
ईक्षां सिसृक्षात्मिकां	दृष्टि सृजनस्वरूपा (इच्छा वाली)

बिभ्राणे त्वयि	विकसित करने पर आपके
चुक्षुभे	विकम्पित हुई
त्रिभुवनी-भावाय	त्रिभुवन की सृष्टि के लिये
माया स्वयम्	माया स्वयं
मायात: खलु	माया से ही निश्चय ही
काल-शक्ति: -	काल शक्ति
अखिल-अदृष्टं	समस्त अदृष्ट (जीवों के कर्म)
स्वभाव: -अपि च	स्वभाव भी और
प्रादुर्भूय	प्रकट हो कर
गुणान्-विकास्य	गुणों को विकसित करके
विदधु: -	प्रवर्तित होते हैं
तस्या: -सहायक्रियाम्	उस माया की सहायता की क्रिया में

इस प्रकार द्विपरार्ध काल के समाप्त हो जाने पर आपकी सृष्टि सृजन इच्छा के जागृत होने पर, आपकी दृष्टि पाकर माया स्वयं त्रिलोक की सृष्टि करने के लिये विकम्पित होती है। माया से ही निश्चित रूप से काल शक्ति, समस्त कर्म और कर्म फल और स्वभाव भी प्रकट हो कर गुणों को विकसित करते हैं, और इस प्रकार माया की सहायता करने की क्रिया में प्रवृत होते हैं।

मायासन्निहितोऽप्रविष्टवपुषा साक्षीति गीतो भवान्
भेदैस्तां प्रतिबिंबतो विविशिवान् जीवोऽपि नैवापर: ।

कालादिप्रतिबोधिताऽथ भवता संचोदिता च स्वयं
माया सा खलु बुद्धितत्त्वमसृजद्योऽसौ महानुच्यते ॥४॥

माया-सन्निहित: -	माया से सन्निहित
अप्रविष्ट-वपुषा	(फिर भी माया से) अनाच्छादित स्वरूप से
साक्षी-इति गीत: भवान्	(मात्र) साक्षी इस प्रकार बताया है (वेदान्त ने) आपको
भेदै: -तां	(विभिन्न) भेदों के द्वारा उसको (मायाको)
प्रतिबिंबत:	प्रतिबिम्बित रूपसे
विविशिवान् जीव: -अपि	(माया में) प्रविष्ट हुए हैं, जीव भी
न-एव-अपर:	नहीं ही है अन्य कुछ
काल-आदि-प्रतिबोधिता-	(तदन्तर) कालादि से संक्षुब्ध हुई
अथ भवता संचोदिता च	और फिर आपकी प्रेरणा से
स्वयं माया सा खलु	स्वयं उस माया ने ही निश्चित रूप से
बुद्धि-तत्त्वम्-असृजत्-	बुद्धि तत्व की रचना की
य: -असौ	जो यह
महान्-उच्यते	महत् तत्त्व कहा जाता है

मायासे संन्निहित फिर भी असंन्निहित रहकर, केवल साक्षी रूप से आप नाना प्रकार के भेदों के द्वारा उसमें (माया में) प्रतिबिम्बित होते हैं। जीव भी अन्य कुछ नहीं है, आप ही हैं। तदन्तर, कालादि से संक्षुब्ध हो कर एवं आपसे प्रेरित हो कर

निश्चय ही माया ने ही बुद्धि की रचना की, जो महत् तत्व के नाम से जानी जाती है।

तत्रासौ त्रिगुणात्मकोऽपि च महान् सत्त्वप्रधानः स्वयं
जीवेऽस्मिन् खलु निर्विकल्पमहमित्युद्बोधनिष्पादकः ।
चक्रेऽस्मिन् सविकल्पबोधकमहन्तत्त्वं महान् खल्वसौ
सम्पुष्टं त्रिगुणैस्तमोऽतिबहुलं विष्णो भवत्प्रेरणात् ॥५॥

तत्र-	वहां (माया में)
असौ त्रिगुणात्मकः - अपि च	वह (महत्) त्रिगुणात्मक हो कर भी और
महान्	महत्
सत्त्वप्रधानः स्वयं	सत्त्वप्रधान है स्वयं
जीवे-अस्मिन् खलु	जीवों में यह निश्चय ही
निर्विकल्पम्-अहम्-इति-	मैं निर्विकल्प हूं' इस प्रकार
उद्बोध-निष्पादकः	ज्ञान का देने वाला है
चक्रे - अस्मिन्	निर्माण किया है उसी (जीव) मे
सविकल्प-बोधक-	सविकल्प बोधक
महत्-तत्वं	अहंकार तत्व का
महान् खलु-असौ	यही महत् तत्व निश्चय ही
सम्पुष्टं त्रिगुणैः -	त्रिगुणों से परिपोषित हो कर

तम: - अतिबहुलं	तमोगुण की प्रधानता से
विष्णो	हे विष्णु!
भवत् प्रेरणात्	आपकी ही प्रेरणा से

हे विष्णु! इस प्रकार माया के प्रभावों में, महत् तत्व त्रिगुणात्मक होते हुए भी सत्व प्रधान है और जीवो में "मैं निर्विकल्प हूं" इस प्रकार का ज्ञान जगाता है। उसी जीव में सविकल्प बोधक अहंकार तत्व का भी बोध कराता है, क्योंकि यह महत् तत्व, आपकी प्रेरणा से ही तमोप्रधान हो जाता है।

सोऽहं च त्रिगुणक्रमात् त्रिविधतामासाद्य वैकारिको
भूयस्तैजसतामसाविति भवन्नाद्येन सत्त्वात्मना
देवानिन्द्रियमानिनोऽकृत दिशावातार्कपाश्यश्विनो
वह्नीन्द्राच्युतमित्रकान् विधुविधिश्रीरुद्रशारीरकान् ॥६॥

स: - अहं च	और वह अहंकार
त्रिगुण-क्रमात्	त्रिगुणों के क्रम से
त्रिविधताम्-आसाद्य	तीन भावों को प्राप्त करके
वैकारिक:	सात्विक
भूय: तैजस-तामसौ-	और फिर तैजसिक और तामसिक
इति भवन्-	इस प्रकार हो कर
आद्येन सत्त्व-आत्मना	प्रारम्भिक सात्विकता के द्वारा
देवान्-इन्द्रियमानिन: -अकृत	देवताओं को, जो इन इन्द्रियों के अधिष्ठातृ हैं, बनाया

दिशा-वात-अर्क-पाशि-अश्विन:	दिशा, वायु, सूर्य, वरुण और अश्विनि कुमार
वह्नी-इन्द्र-अच्युत-मित्रकान्	अग्नि, इन्द्र, भगवान विष्णु,, मित्र और प्रजापति
विधु-विधि-श्रीरुद्र-शारीरकान्	चन्द्र, ब्रह्मा, श्रीरुद्र, और क्षेत्रज्ञ

उस अहंकार तत्व के तीनों गुणों पर अधारित तीन विभाग हुए - सात्विक, राजसिक एवं तामसिक। सात्विक अहंकार से दिक्, वायु, सूर्य, वरुण और अश्विनि कुमारों का प्रादुर्भाव हुआ जो श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा और घ्राण - इन ज्ञानेन्द्रियों के अधिष्ठातृ देवता हैं। राजसिक अहंकार के द्वारा अग्नि, इन्द्र, भगवान विष्णु, मित्र और प्रजापति का प्रादुर्भाव हुआ जो वाक्, हस्थ, पाद, पायु, और उपस्थ -इन कर्मेन्द्रियों के अधिष्ठातृ देवता हैं। एवं तामसिक अहंकार से चन्द्र, ब्रह्मा, श्रीरुद्र और क्षेत्रज्ञ का प्रादुर्भाव हुआ जो मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त - इन अन्त:करण चतुष्टय के अधिष्ठातृ देवता हैं।

भूमन् मानसबुद्ध्यहंकृतिमिलच्चित्ताख्यवृत्त्यन्वितं
तच्चान्त:करणं विभो तव बलात् सत्त्वांश एवासृजत् ।
जातस्तैजसतो दशेन्द्रियगणस्तत्तामसांशात्पुन-
स्तन्मात्रं नभसो मरुत्पुरपते शब्दोऽजनि त्वद्बलात् ॥७॥

भूमन्	हे भूमन!
मानस-बुद्धि-अहंकृति-मिलत्-	मन बुद्धि अहंकार से संयुक्त
चित्ताख्य-वृत्ति-अन्वितं	चित्त नामक वृत्ति से संयुक्त
तत्-च-अन्त: - करणं	और उस अन्त:करण की
विभो	हे विभो
तव बलात्	आपके ही बल से
सत्त्वांश: एव-	सात्विक अंश से ही

असृजत्	रचना की
जात: - तैजसत:	पैदा हुआ तैजस से
दश-इन्द्रिय-गण:	दश इन्द्रियों का समूह
तत्-तामस-अंशात्-	उसके (अहंकार तत्त्व के) तामसिक अंश से
पुन:	फिर
तन्मात्रं नभस:	तन्मात्र आकाश का
मरुत्पुरपते	हे मरुत्पुरपति!
शब्द: -अजनि	शब्द पैदा हुआ
त्वत्-बलात्	आपके ही बल से

हे भूमन! आपकी इच्छा शक्ति ने ही अहंकार के सत्वांश से मन बुद्धि और अहंकार से युक्त चित्त नामक वृत्ति सहित अन्त:करण की रचना की। हे विभो! अहंकार तत्व के तैजसिक अंश से दश इन्द्रियों का समूह पैदा हुआ। हे मरुत्पुरपति! आपके ही बल से फिर उसके तामसिक अंश से आकाश का तन्मात्र स्वरूप शब्द पैदा हुआ।

शब्दाद्व्योम तत: ससर्जिथ विभो स्पर्शं ततो मारुतं
तस्माद्रूपमतो महोऽथ च रसं तोयं च गन्धं महीम् ।
एवं माधव पूर्वपूर्वकलनादाद्याद्यधर्मान्वितं
भूतग्राममिमं त्वमेव भगवन् प्राकाशयस्तामसात् ॥८॥

श्ब्दात्-व्योम	शब्द से आकाश
तत: ससर्जिथ	तब रचना की

विभो	हे विभो!
स्पर्शं	स्पर्श
ततः मारुतं	उससे वायु
तस्मात्-रूपम्-	उससे रूप
अतः महः -	फिर तेज
अथ च रसं	और फिर रस
तोयं च गन्धं महीम्	जल गन्ध और पृथ्वी
एवं माधव	इस प्रकार हे माधव!
पूर्व-पूर्व-कलनात्-	पहले वाले के पहले अंश से
आद्य-आद्य-धर्म-अन्वितं	उन पहले वालों के लक्षणो सहित
भूत-ग्रामम्-इममं	इस भूत समूह का
त्वमेव भगवन्	आप ही ने भगवन
प्राकाशयः	प्रकाशित किया
तामसात्	तामसिक अंश से

हे विभो! शब्द से आकाश की, उससे स्पर्श की, उससे फिर वायु की, उससे रूप, उससे तेज और फिर रस, उससे जल, गन्ध और पृथ्वी की रचना की। इस प्रकार हे माधव! पहले पहले की रचना से उन्हीं उन्हीं के लक्षणों से युक्त इस भूत समूह

को आपने तामस अहंकार से प्रकट किया।

एते भूतगणास्तथेन्द्रियगणा देवाश्च जाताः पृथङ्-
नो शेकुर्भुवनाण्डनिर्मितिविधौ देवैरमीभिस्तदा ।
त्वं नानाविधसूक्तिभिर्नुतगुणस्तत्त्वान्यमून्याविशं-
श्चेष्टाशक्तिमुदीर्य तानि घटयन् हैरण्यमण्डं व्यधाः ॥९॥

एते भूतगणाः -	ये सब भूतगण
तथा-इन्द्रियगणाः	और इन्द्रियगण
देवाः च	और देवगण
जाताः	जो पैदा हुए थे
पृथक् नो शेकुः -	अलग से (स्वयंसे) नहीं सके
भुवन-अण्ड-निर्मिति-विधौ	जगत अण्ड के निर्माण करने की विधि में
देवैः अमीभिः तदा	इन देवों के द्वारा तब
त्वं नाना-विध-सूक्तिभिः-नुत-गुणः-	आप नाना प्रकार की स्तुतियों के द्वारा पूजे गये
तत्त्वानि-अमूनि-आविशन्-	(तब) इन्हीं तत्वों में प्रवेश करके
चेष्टा-शक्तिम्-उदीर्य	(आपने) चेष्टा शक्ति को कार्यान्वित करके
तानि घटयन्	उन सब को परस्पर मिलाजुला कर
हैरण्यम्-अण्डम्	हिरण्यमय ब्रह्माण्ड की

व्यधा:	रचना की

जब यह सब भूतगण, इन्द्रिय समुदाय और उनके अधिष्टातृ देवता गण स्वयं जगत अण्ड के निर्माण की विधि को नहीं जान पाए, तब उन देवताओं ने नाना प्रकार की स्तुतियों से आपकी स्तुति की। तब आपने उन विभिन्न तत्वों में प्रवेश कर के, उनकी क्रिया शक्ति को कार्यान्वित किया और फिर उन तत्वों को परस्पर संयुक्त कर के इस हिरण्यमय ब्रह्माण्ड की रचना की।

अण्डं तत्खलु पूर्वसृष्टसलिलेऽतिष्ठत् सहस्रं समा:
निर्भिन्दन्नकृथाश्चतुर्दशजगद्रूपं विराडाह्वयम् ।
साहस्रै: करपादमूर्धनिवहैर्निश्शेषजीवात्मको
निर्भातोऽसि मरुत्पुराधिप स मां त्रायस्व सर्वामयात् ॥१०॥

अण्डं तत्-खलु	वह अण्ड निश्चय ही
पुर्व-सृष्ट-सलिले-	पूर्व रचित जल में
अतिष्ठत्	पडा रहा
सहस्त्रं समा:	हजारों वर्षों तक
निर्भिन्दन्-	(उसे) भेद कर
अकृथा: -	(आपने) बनाया
चतुर्दश-जगत्-रूपं	चौदह रूपी जगत
विराट-अह्वयम्	विराट स्वरूप कहलाता है जो
साहस्त्रै: करपादमूर्धनिवहै: -	हजार हाथ पैर और सिरों सहित
निश्शेष जीवात्मक:	सम्पूर्ण जीवात्मा के रूप में

निर्भात: असि	भासमान हो रहे हैं
मरुत्पुराधिप	हे मरुत्पुराधिप!
स मां त्रायस्व	वह (आप) मेरी रक्षा करें
सर्व-आमयात्	सभी रोगों से

वह हिरण्यमय अण्ड पूर्व रचित जल में हजारों वर्षों तक पडा रहा। आपने उसको भेद कर चौदह भुवन रूपी विराट नाम से जाना जाने वाला जगत बनाया । सम्पूर्ण जीवात्मा के रूप में हजारों हाथ पैर एवं सिर सहित आप ही भासमान हो रहे हैं। हे ऐसे मरुत्पुराधिप! आप सभी रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ६

एवं चतुर्दशजगन्मयतां गतस्य
पातालमीश तव पादतलं वदन्ति ।
पादोर्ध्वदेशमपि देव रसातलं ते
गुल्फद्वयं खलु महातलमद्भुतात्मन् ॥१॥

एवं	इस प्रकार
चतुर्दश-जगत्-मयतां गतस्य	चौदह जगत रूपता को प्राप्त हुए (आपके)
पातालम्-	पाताल
ईश	हे ईश्वर!
तव पादतलं	आपका पांव का तलवा
वदन्ति	कहलाता है
पाद-ऊर्ध्व-देशम्-अपि	पांव के ऊपर के भाग को भी
देव	हे देव!
रसातलं	रसातल (कहते हैं)
ते गुल्फद्वयं खलु	आपके दोनों टखने निश्चय ही
महातलम्-	महातल हैं
अद्भुत्-आत्मन्	हे अद्भुत आत्मन!

हे अद्भुत आत्मन देवेश्वर! इस प्रकार चौदह भुवन रूपता को प्राप्त हुए आपके चरणों के तलवे को इस जगत का पाताल , पांव के ऊपर के हिस्से को रसातल, और आपके दोनों टखनों को महातल कहा गया हैं।

जङ्घे तलातलमथो सुतलं च जानू
किञ्चोरुभागयुगलं वितलातले द्वे ।
क्षोणीतलं जघनमम्बरमङ्ग नाभि-
र्वक्षश्च शक्रनिलयस्तव चक्रपाणे ॥२॥

जङ्घे तलातलम्-	पिंडलियां तलातल
अथ: सुतलं च जानू	फिर सुतल घुटने
किञ्च-उरु-भाग-युगलं	और भी, जङ्घाओंके दोनों भाग (नीचे का और ऊपर का)
वितल-अतले द्वे	वितल और अतल दोनों
क्षोणीतलं जघनम्-	पृथ्वी जघन भाग
अम्बरम्-अङ्ग नाभि: -	आकाश, हे ईश्वर! नाभि
वक्ष: - च	वक्ष और
शक्र-निलय: तव	इन्द्र का निवास आपका
चक्रपाणे	हे चक्रपाणि!

आपकी दोनों पिंडलियां तलातल हैं। और फिर दोनों घुटने सुतल हैं। और भी, जङ्घा के ऊपरी औरै निचले भाग दोनों वितल और अतल हैं। आपका जघन भाग पृथ्वी है। हे ईश्वर! आकाश आपकी नाभि है। और हे चक्रपाणि! आपका वक्षस्थल इन्द्र का निवास स्थान (स्वर्ग) है।

ग्रीवा महस्तव मुखं च जनस्तपस्तु
फालं शिरस्तव समस्तमयस्य सत्यम् ।

एवं जगन्मयतनो जगदाश्रितैर-
प्यन्यैर्निबद्धवपुषे भगवन्नमस्ते ॥३॥

ग्रीवा महः - तव	कण्ठ , महर्लोक अपका
मुखं च जनः -	मुख जनलोक
तपः - तु फालं	ललाट तपलोक
शिरः -	(और) सिर
तव समस्तमयस्य	आप सर्वस्वमय का
सत्यम्	सत्यलोक
एवं	और
जगन्मयतनो	हे विश्वात्मक!
जगदाश्रितैः-अपि-अन्यैः	जगत से सम्बन्धित और भी (जितनी वस्तुएं हैं)
निबद्धवपुषे	सब से संयुक्त शरीर वाले
भगवन् नमः - ते	हे भगवान! आपको नमस्कार है

हे विश्वात्मक! आपका कण्ठ महर्लोक है, मुख जन लोक है, ललाट तप लोक है और सर्वस्वमय आपका सिर सत्यलोक है। हे भगवन! जगत से सम्बन्धित जितनी भी वस्तुएं या अवयव हैं, सभी आपमें समाहित है, ऐसे शरीर वाले आपको नमस्कार है।

त्वद्ब्रह्मरन्ध्रपदमीश्वर विश्वकन्द
छन्दांसि केशव घनास्तव केशपाशाः ।
उल्लासिचिल्लियुगलं द्रुहिणस्य गेहं

पक्ष्माणि रात्रिदिवसौ सविता च नेत्रै ॥४॥

त्वत्-ब्रह्मरन्ध्रपदम्-	आपका ब्रह्मरन्ध्र
ईश्वर विश्वकन्द	हे विश्व के कारणभूत ईश्वर!
छन्दांसि	वेद हैं
केशव	हे केशव!
घना: तव केशपाशा:	मेघ आपके केशसमूह हैं
उल्लासि-चिल्लि-युगलं	शोभाशाली भ्रू युगल
द्रुहिणस्य गेहं	ब्रह्मा का गृह है
पक्ष्माणि	आपकी (दोनों) पलकें
रात्रि-दिबिसौ	रात और दिन हैं
सविता च नेत्रे	सूर्य आपके दोनो नेत्र हैं

विश्व के कारणभूत हे ईश्वर! आपका ब्रह्मरन्ध्र वेद हैं। हे केशव! आपके केशसमूह मेघ हैं, शोभाशाली भ्रू युगल ब्रह्मा का घर है, आपकी दोनों पलकें रात और दिन हैं, और आपके दोनों नेत्र सूर्य है।

निश्शेषविश्वरचना च कटाक्षमोक्ष:
कर्णौ दिशोऽश्वियुगलं तव नासिके द्वे ।
लोभत्रपे च भगवन्नधरोत्तरोष्ठौ
तारागणाश्च दशना: शमनश्च दंष्ट्रा ॥५॥

निश्शेष-विश्व-रचना च	असीमित विश्व की रचना और

कटाक्ष-मोक्ष:	(आपका) दृष्टिपात है
कर्णौ दिश: -	कान दिशाएं हैं
अश्वियुगलम्	अश्विनि कुमार
तव नासिके द्वे	दोनों नासिकाएं हैं
लोभत्रपे च	लोभ और लज्जा
भगवन्	हे भगवन!
अधर-उत्तर-ओष्ठौ	अधर और उत्तर ओष्ठ हैं
तारा-गणा: - च	तारा गण और
दशना:	दांत हैं
शमन: च दंष्ट्रा	यमराज दाढें हैं

हे भगवन! असीमित विश्व की रचना आपका दृष्टिपात है, कान दिशाएं हैं, अश्विनि कुमार दोनों नासिकाएं हैं, लोभ और लज्जा अधर और उत्तर ओष्ट हैं। तारा गण आपके दांत और यमराज आपकी दाढें हैं।

माया विलासहसितं श्वसितं समीरो
जिह्वा जलं वचनमीश शकुन्तपङ्क्ति: ।
सिद्धादय: स्वरगणा मुखरन्ध्रमग्नि-
र्देवा भुजा: स्तनयुगं तव धर्मदेव: ॥६॥

माया	माया

विलास-हसितं	लीलापूर्ण हंसी है
श्वसितं समीरः	श्वास वायु है
जिह्वा जलं	जिह्वा जल है
वचनम्-	वचन
ईश	हे ईश्वर
शकुन्त-पङ्क्ति	पक्षि समूह है
सिद्ध-आदयः स्वरगणाः	स्वर समूदाय सिद्धगण हैं
मुख-रन्ध्रम्-अग्निः-	मुख छिद्र अग्नि है
देवा भुजाः	भुजाएं देव गण हैं
स्तनयुगं तव धर्मदेवः	स्तन युगल आपके धर्म देव हैं

हे ईश्वर! आपकी लीलापूर्ण हंसी माया है, श्वास वायु है, जिह्वा जल है, वचन पक्षि समूह है, स्वर समुदाय सिद्धगण हैं, मुख छिद्र अग्नि है, भुजाएं देवगण हैं, और आपके स्तन युगल धर्म देव हैं।

पृष्ठं त्वधर्म इह देव मन: सुधांशु -
रव्यक्तमेव हृदयंबुजमम्बुजाक्ष ।
कुक्षि: समुद्रनिवहा वसनं तु सन्ध्ये
शेफ: प्रजापतिरसौ वृषणौ च मित्र: ॥७॥

पृष्ठं तु-अधर्म	पीठ तो अधर्म है

इह	यहां (इस संसार में)
देव	हे देव!
मनः सुधांशुः -	मन चन्द्रमा है
अव्यक्तम्-एव	अव्यक्त
हृदय-अम्बुजम्	हृदय कमल है
अम्बुजाक्ष	हे कमल नयन!
कुक्षिः समुद्रनिवहाः	आपकी कुक्षी समुद्र समुदाय है
वसनं तु सन्ध्ये	आपके वस्त्र (दोनों) सन्ध्याएं हैं
शेफः प्रजापतिः-	लिङ्ग प्रजापति हैं
असौ वृषणौ च मित्रः	और ये अण्डकोश मित्र देवता हैं

हे देव इस संसार में आपकी पीठ अधर्म है, मन चन्द्रमा है, अव्यक्त हृदय कमल है। हे कमलनयन! आपकी कुक्षी समुद्र समुदाय है, वस्त्र दोनों सन्ध्यायें है, लिङ्ग प्रजापति हैं और ये अण्डकोश मित्र देवता हैं।

श्रोणीस्थलं मृगगणाः पदयोर्नखास्ते
हस्त्युष्ट्रसैन्धवमुखा गमनं तु कालः ।
विप्रादिवर्णभवनं वदनाब्जबाहु-
चारूरुयुग्मचरणं करुणांबुधे ते ॥८॥

श्रोणीः -स्थलं	कटिभाग

मृगगणाः	मृगसमूह
पदयोः - नखाः - ते	चरणों के नख आपके
हस्ति-उष्ट्र-सैन्धव-मुखाः	हाथी ऊंट घोडे आदि हैं
गमनं तु कालः	आपकी गति समय है
विप्र-आदि-वर्ण-भवनं	ब्राह्मण आदि वर्ण की उत्पत्ति
वदन-आब्ज-बाहु-चारु-उरु-युग्म-चरणं	मुख कमल, भुजाएं, सुन्दर जङ्घा युगल एवं चरण हैं
करुणा-अम्बुधे ते	हे करुणासागर आपके

हे करुणासागर! आपका कटिभाग मृगसमूह है, आपके चरणों के नख हाथी ऊंट घोडे आदि हैं, आपकी चाल समय है, आपके मुखकमल, भुजाएं, दोनों सुन्दर जङ्घा एवं चरण, क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य एवं शूद्र के उत्पत्ति स्थल हैं।

संसारचक्रमयि चक्रधर क्रियास्ते
वीर्यं महासुरगणोऽस्थिकुलानि शैलाः ।
नाड्यस्सरित्समुदयस्तरवश्च रोम
जीयादिदं वपुरनिर्वचनीयमीश ॥९॥

संसार-चक्रम्-	यह संसार चक्र
अयि चक्रधर	हे चक्रधर
क्रियाः -ते	क्रियाएं हैं आपकी
वीर्यं महा-असुर-गणः -	(आपका) वीर्य महान असुरों का समुदाय है

अस्थि-कुलानि शैला:	अस्थि समूह पर्वत हैं
नाड्य: -सरित्-समुदय: -	नाडियां नदियों का समूह है
तरव: -च रोम	पेड आपके रोम हैं
जीयात्-	जय हो
इदं वपु: -अनिर्वचनीयम्-	यह शरीर (आपका) जो अवर्णनीय है
ईश	हे ईश्वर!

हे चक्रधर! यह संसार चक्र आपकी क्रियाएं हैं, महान असुरों का समुदाय आपका वीर्य है, पर्वत अस्थि समूह हैं, नदियों का समूह नाडियां है, पेड आपके रोम हैं। हे ईश्वर! आपके ऐसे इस अवर्णनीय शरीर की जय हो।

ईदृग्जगन्मयवपुस्तव कर्मभाजां
कर्मावसानसमये स्मरणीयमाहु: ।
तस्यान्तरात्मवपुषे विमलात्मने ते
वातालयाधिप नमोऽस्तु निरुन्धि रोगान् ॥१०॥

ईदृक्-जगन्मय-वपु: - तव	इस प्रकार के जगत मय स्वरूप शरीर वाले आप
कर्मभाजां	जीव मात्र के
कर्म-अवसान-समये	कर्मों के समाप्ति के समय
स्मरणीयम्-आहु:	स्मरणीय कहे जाते हैं
तस्य-अन्तर-आत्म-वपुषे	उस (जगत स्वरूप) शरीर के अन्तरयामी

विमलात्मने ते	जो सत्वमय स्वरूप है, आपको
वातालयाधिप	हे वातालयाधिप
नम: -अस्तु	नमस्कार हो
निरुन्धि रोगान्	नष्ट करें रोगों को

हे गुरुवायुरीश्वर! इस प्रकार के जगत मय विराट स्वरूप आप जीवमात्र के लिये , उनके कर्मावसान के समय स्मरणीय हैं, ऐसा कहा जाता है। उस विराट स्वरूप में निर्मल सात्विक अन्तरयामी रूपवाले आपको नमस्कार है। मेर रोगों का नाश करें।

दशक ७

एवं देव चतुर्दशात्मकजगद्रूपेण जात: पुन-
स्तस्योर्ध्वं खलु सत्यलोकनिलये जातोऽसि धाता स्वयम् ।
यं शंसन्ति हिरण्यगर्भमखिलत्रैलोक्यजीवात्मकं
योऽभूत् स्फीतरजोविकारविकसन्नानासिसृक्षारस: ॥१॥

एवं देव	इस प्रकार हे देव!
चतुर्दश-आत्मक-जगत्-रूपेण	चौदह तरह से जगत रूप में
जात: पुन: -	पैदा हो कर फिर
तस्य-ऊर्ध्वं खलु	उसके ऊपर निश्चय
सत्य-लोक-निलये	सत्यलोक के घर में
जात: -असि धाता स्वयं	पैदा हुए (आप) ब्रह्मा के रूप में स्वयं
यं शंसन्ति	जिसे कहते हैं
हिरण्यगर्भम्-	हिरण्यगर्भ
अखिल-त्रैलोक्य-जीवात्मकं	अशेष त्रैलोक्य के जीवात्मक
य: -अभूत्	जो बने
स्फीत-रज:-विकार-विकसन्-	उद्भूत रजोगुण से बढी हुई
नाना-सिसृक्षा-रस:	नाना प्रकार की सृष्टि में रस लेने वाले

हे देव! इस प्रकार से चौदह प्रकार के जगदात्मक स्वरूप से पैदा हो कर फिर आप उसके ऊपर सत्यलोक के निवास में स्वयं ब्रह्मा रूप से आविर्भूत हुए, जिसे हिरण्यगर्भ कहते हैं। अशेष त्रैलोक्य के जीवात्मक स्वरूप, उद्‌भूत रजोगुण से बढी हुई नाना प्रकार की सृष्टि की रचना करने की इच्छा वाले बने।

सोऽयं विश्वविसर्गदत्तहृदय: सम्पश्यमान: स्वयं
बोधं खल्वनवाप्य विश्वविषयं चिन्ताकुलस्तस्थिवान् ।
तावत्त्वं जगतां पते तप तपेत्येवं हि वैहायसीं
वाणीमेनमशिश्रव: श्रुतिसुखां कुर्वंस्तप:प्रेरणाम् ॥२॥

स: -अयं	वह यह (ब्रह्मा)
विश्व-विसर्ग-दत्त-हृदय:	विश्व के उत्सर्ग में चित्त देकर
सम्पश्यमान: स्वयं	स्वयं विचार करने की चेष्टा करते हुए
बोधं खलु-अनवाप्य	ज्ञान न पा सके निश्चय ही
विश्वविषयं	जगत की (सृष्टि) विषय में
चिन्ता-आकुल: -तस्थिवान्	चिन्ता में निमग्न हो कर बैठ गये
तावत्-त्वं जगतां पते	तब आप हे जगतों के पति!
तप तप-इति-एवं हि	तप तप' इस प्रकार ही
वैहायसीं वाणीं-	आकाश वाणी को
एनम्-अशिश्रव:	इसको (ब्रह्मा) को सुनाया
श्रुति-सुखां	सुनने में सुख देने वाली

कुर्वन्-तप: प्रेरणाम्	करती हुई तप की प्रेरणा

हे जगदीश्वर! वही ब्रह्मा विश्व की सृष्टि रचना में दत्त चित्त हो कर स्वयं ही विचार करने की चेष्टा करने लगे, किन्तु रचना के विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं प्राप्त कर पाए, अतएव चिन्ताकुल हो कर निश्चेष्ट हो कर बैठ गये। तब आपने उनको 'तप तप' इस प्रकार आकाशवाणी सुनाई, जो सुनने में सुख देने वाली थी और तप करने की प्रेरणा दे रही थी।

कोऽसौ मामवदत् पुमानिति जलापूर्णे जगन्मण्डले
दिक्षूद्वीक्ष्य किमप्यनीक्षितवता वाक्यार्थमुत्पश्यता ।
दिव्यं वर्षसहस्रमात्ततपसा तेन त्वमाराधित -
स्तस्मै दर्शितवानसि स्वनिलयं वैकुण्ठमेकाद्भुतम् ॥३॥

क: -असौ	कौन है यह
माम्-अवदत् पुमान्-	मुझे (जिसने) कहा (वह) पुरुष
इति	इस प्रकार
जल-आपूर्णे जगन्मण्डले	जल से परिपूर्ण जगत मण्डल (जिस समय) था
दिक्षु-उद्वीक्ष्य	(चारों) दिशाओं में देख कर
किम्-अपि-अनीक्षितवता	कुछ भी नहीं देख सके
वाक्य-अर्थम्-उत्पश्यता	(तब) वाक्य के अर्थ (गूढता) को देखते हुए (समझते हुए)
दिव्यं वर्ष-सहस्रम्-	दिव्य वर्ष सहस्र तक
आत्त-तपसा	प्राप्त की हुई तपस्या से
तेन त्वम्-आराधित: -	जिसके द्वारा आपकी आराधना की गई थी

तस्मै दर्शितवान्-असि	उनको (ब्रह्मा जी को) दिखाया आपने
स्व-निलयं	अपना निवास स्थान
वैकुण्ठम्-एक-अद्भुतं	वैकुण्ठ (जो) एकमेव है और परम अद्भुत है

ब्रह्मा जी ने चारों ओर देखा यह जानने के लिये कि कहां से और किस पुरुष की आवाज आई है। किन्तु जल प्लावित जगत मण्डल के अतिरिक्त कुछ भी नहीं देख पाए। फिर उन्होंने वाक्य की गम्भीरता पर विचार करके एक सहस्र दिव्य वर्षों तक तपस्या की। उस तपस्या से आपकी ही आराधना की गई थी। तब आपने ब्रह्मा जी को अपना अद्वितीय अद्भुत निवास स्थान वैकुण्ठ दिखाया।

माया यत्र कदापि नो विकुरुते भाते जगद्भ्यो बहि:
शोकक्रोधविमोहसाध्वसमुखा भावास्तु दूरं गता: ।
सान्द्रानन्दझरी च यत्र परमज्योति:प्रकाशात्मके
तत्ते धाम विभावितं विजयते वैकुण्ठरूपं विभो ॥४॥

माया यत्र	माया जहां
कदापि नो विकुरुते	कदापि नहीं विकृत करती है
भाते जगद्भ्य: बहि:	देदीप्यमान होता है जो (चौदह) भुवनों के परे
शोक-क्रोध-विमोह-साध्वसमुखा:	शोक, क्रोध मोह, और भय आदि
भावा:-तु दूरं गता:	भाव तो दूर हो गये हैं
सान्द्रानन्दझरी च	घनीभूत आनन्द का निर्झर है और
यत्र परम-ज्योति:-प्रकाशात्मके	जहां परम ज्योति - अत्मानुभूति की (विद्यमान है)
तत्-ते धाम	उस आपके निवास

विभावितं	को दिखाया
विजयते	जो विद्यमान है
वैकुण्ठरूपं	वैकुण्ठ नाम से
विभो	हे विभो

हे विभो! वह वैकुण्ठ धाम माया के विकारों से अप्रभावित है और चौदह भुवनो से परे देदीप्यमान है। शोक, क्रोध, मोह भय आदि वहां नहीं व्यापते। वहां घनीभूत आनन्द का निर्झर वहां सदा बहता रहता है और आत्मानुभूति की परम ज्योति वहां सदा विद्यमान रहती है। ऐसा आपका निवास स्थान जो वैकुण्ठ नाम से जाना जाता है, आपने ब्रह्मा जी को दिखाया।

यस्मिन्नाम चतुर्भुजा हरिमणिश्यामावदातत्विषो
नानाभूषणरत्नदीपितदिशो राजद्विमानालया: ।
भक्तिप्राप्ततथाविधोन्नतपदा दीव्यन्ति दिव्या जना-
तत्ते धाम निरस्तसर्वशमलं वैकुण्ठरूपं जयेत् ॥५॥

यस्मिन्-नाम	जिसमें (वैकुण्ठ में) निश्चय ही
चतुर्भुजा:	चार भुजा वाले
हरि-मणि-श्यामा-अवदातत्विष:	नीलम मणि के समान श्याम वर्ण वाले
नाना-भूषण-रत्न-दीपित-दिश:	नाना भूषण जो रत्न जडित हैं (उनसे विभूषित) आलोकित करती हैं दिशाओं को
राजत्-विमान-आलया:	रह्ते हैं विमान रूपी घरों में
भक्ति-प्राप्त-तथा-विध-उन्नत-पदा:	भक्ति से प्राप्त इस प्रकार के उन्नत पद वाले
दीव्यन्ति	प्रकाशित हो रहे हैं

दिव्या: जना:	दिव्य जन
तत्-ते धाम	(जहां) वैसा आपका धाम
निरस्त-सर्व-शमलं	जो रहित है हर प्रकार के पापों से
वैकुण्ठ-रूपं	वैकुण्ठ स्वरूप
जयेत्	की जय हो

जिन दिव्य जनों ने भक्ति से प्राप्त उन्नत पद प्राप्त किया है, वे निश्चय ही चार भुजाओं वाले हैं, नील मणि के समान श्याम वर्ण वाले हैं, नाना प्रकार के रत्न जडित आभूषणों से सुसज्जित वे चारों दिशाओं को आलोकित करते हैं। वे शोभायमान बिमानों के समान घरों में रहते हैं। ऐसे दिव्य जन, सब पापों से रहित आपके वैकुण्ठधाम में वास करते हैं। हे वैकुण्ठ स्वरूप! आपकी जय हो!

नानादिव्यवधूजनैरभिवृता विद्युल्लतातुल्यया
विश्वोन्मादनहृद्यगात्रलतया विद्योतिताशान्तरा ।
त्वत्पादांबुजसौरभैककुतुकाल्लक्ष्मी: स्वयं लक्ष्यते
यस्मिन् विस्मयनीयदिव्यविभवं तत्ते पदं देहि मे ॥६॥

नाना-दिव्य-वधू-जनै: -	नानाविध दिव्याङ्गनाओं से
अभिवृता	घिरी हुई
विद्युत्-लता-तुल्यया	विद्युत लता के समान
विश्व-उन्मादन-हृद्य-गात्र-लतया	विश्व को उन्मादित करने वाली देह लता के द्वारा
विद्योतित-आशान्तरा	प्रकाशमान हैं दिशाएं
त्वत्-पाद-अम्बुज-सौरभैक-कुतुकात्-	(ऐसी) आपके चरणकमलों के सौरभ की कामना वाली

लक्ष्मी: स्वयं लक्ष्यते	लक्ष्मी स्वयं देखी जाती है
यस्मिन्	जिसमें (जिस बैकुण्ठ में)
विस्मयनीय-दिव्य-विभवं	आश्चर्यजनक वैभव से जो सम्पन्न है
तत्-ते पदं देहि मे	वह आपका (परम) पद दीजिये मुझको

उस वैकुण्ठ में, जिसमें नानाविध दिव्याङ्गनाओं से घिरी हुई, विद्युत लता के समान विश्व को उन्मादित करने वाली देह लता से दिशाओं को प्रदीप्त करने वाली, सदा आपके चरणो के सौरभपान के लिये लालायित लक्ष्मी स्वयं देखी जाती है। वह वैकुण्ठ आश्चर्यजनक वैभव से सम्पन्न है, एवं समस्त पापों से रहित है, ऐसा आपका परम पद मुझे दीजिये।

तत्रैवं प्रतिदर्शिते निजपदे रत्नासनाध्यासितं
भास्वत्कोटिलसत्किरीटकटकाद्याकल्पदीप्राकृति ।
श्रीवत्साङ्कितमात्तकौस्तुभमणिच्छायारुणं कारणं
विश्वेषां तव रूपमैक्षत विधिस्तत्ते विभो भातु मे ॥७॥

तत्र एवं	वहां, इस प्रकार
प्रतिदर्शिते निजपदे	दिखाये गये आपके पद में
रत्न-आसन-आध्यासितं	रत्नों के आसन पर विराजमान
भास्वत्-कोटि-लसत्-किरीट-	करोडों सूर्यों के समान चमकते हुए मुकुट
कटक-आदि-आकल्प-दीप्र-आकृति	कङ्गन आदि से शोभायमान, नाना प्रकार की आकृति वाले
श्रीवत्स-अङ्कितम्-	श्रीवत्स से अङ्कित
आत्त-कौस्तुभ-मणि-छाया-अरुणं	धारण किये हुए कौस्तुभ मणि की अरुण छाया (से सुसज्जित)

कारणं विश्वेषां	कारण स्वरूप विश्व के,
तव रूपम्-	आपके रूप को
ऐक्षत विधिः	देखा ब्रह्मा ने
तत्-ते विभो भातु मे	वह (रूप) आपका, हे विभो! मुझे स्पष्ट हो

हे विभो! वहां, इस प्रकार दिखाये गये आपके पद वैकुण्ठ में ब्रह्मा ने नाना प्रकार के रत्नो से जडे हुए सिंहासन पर विराजमान, करोडों सूर्य के समान चमकते हुए मुकुट और नाना प्रकार की आकृति वाले कङ्गन आदि से शोभित, श्रीवत्स से अङ्कित, तथा कण्ठ में धारण की हुई कौस्तुभ मणि की अरुण छाया से सुसज्जित, विश्व के कारण स्वरूप, आपके रूप को देखा। वह दिव्य रूप मुझे भी स्पष्ट हो।

कालांभोदकलायकोमलरुचीचक्रेण चक्रं दिशा -
मावृण्वानमुदारमन्दहसितस्यन्दप्रसन्नाननम् ।
राजत्कम्बुगदारिपङ्कजधरश्रीमद्भुजामण्डलं
स्रष्टुस्तुष्टिकरं वपुस्तव विभो मद्रोगमुद्वासयेत् ॥८॥

काल-अम्भोद-	काले बादलों (और)
कलाय-कोमल-रुची-चक्रेण	कलाय फूलों के समान कोमल चक्र के द्वारा
चक्रं दिशाम्-आवृण्वानम्-	सम्पूर्ण दिशाओं को घेरे हुए
उदार-मन्द-हसित	उदार और मन्द हंसी
स्यन्द्-प्रसन्न-आननम्	के निर्झर से प्रसन्न मुखमण्डल
राजत्-कम्बु-गदा-अरि-पङ्कज-धर-	शोभायमान शङ्ख, गदा, चक्र, और कमल लिये हुए
श्रीमद्-भुजामण्डलं	दिव्य भुजाएं

स्रष्टुः - तुष्टिकरं	ब्रह्मा को तुष्टि प्रदान करने वाला
वपुः - तव विभो	स्वरूप आपका हे विभो!
मत्-रोगम्-उद्वासयेत्	मेरे रोगों का विनाश करे

हे विभो! काले बादलों और कोमल कलाय फूलों के समान सुन्दर चक्र से सम्पूर्ण दिशाओं को आलोकित करने वाला, उदार मन्द हंसी के निर्झर से प्रसन्न मुखमण्डल वाला, शोभायमान शङ्ख, गदा, चक्र और कमल धारण किये हुए दिव्य भुजाओं वाला, ब्रह्मा को तुष्टि प्रदान करने वाला आपका वह स्वरूप मेरे रोगों का विनाश करे।

दृष्ट्वा सम्भृतसम्भ्रम: कमलभूस्त्वत्पादपाथोरुहे
हर्षावेशवशंवदो निपतित: प्रीत्या कृतार्थीभवन् ।
जानास्येव मनीषितं मम विभो ज्ञानं तदापादय
द्वैताद्वैतभवत्स्वरूपपरमित्याचष्ट तं त्वां भजे ॥९॥

दृष्ट्वा	दर्शन करके
सम्भृत-सम्भ्रमः कमलभूः -	विस्मित और चकित हो कर ब्रह्मा
त्वत्-पाद-पाथोरुहे	आपके चरण कमलों पर
हर्ष-आवेश-वशंवदः	हर्ष के आवेश से वशीभूत हो कर
निपतितः	गिर पडे
प्रीत्या कृतार्थी-भवन्	प्रसनातापूर्वक कृतार्थ भाव से (बोले)
जानासि-एव	जानते ही हैं
मनीषितं मम	मनोरथ मेरा

विभो	हे बिभो!
ज्ञानं तत्-आपादय	ज्ञान वह दीजिये
द्वैत-अद्वैत्-भवत्-स्वरूप-परम्-	द्वैत एवं अद्वैत, आपके स्वरूप परम (को जानने वाला)
इति आचष्ट	इस प्रकार कहा
तम् त्वां भजे	उन आपको मैं भजता हूं

इस अद्भुत रूप के दर्शन करके ब्रह्मा विस्मित और चकित हो कर और हर्ष के आवेश में आपके चरण कमलों पर गिर पडे। प्रसन्नता से परिपूरित कृतार्थ भाव से बोले -'हे विभो! आप मेरा मनोरथ जानते ही हैं। द्वैत एवं अद्वैत, आपके परम स्वरूप का बोध कराने वाला ज्ञान दीजिये' - ब्रह्मा ने इस प्रकार कहा जिनसे, उन आपका मैं भजन करता हूं।

आताम्रे चरणे विनम्रमथ तं हस्तेन हस्ते स्पृशन्
बोधस्ते भविता न सर्गविधिभिर्बन्धोऽपि सञ्जायते ।
इत्याभाष्य गिरं प्रतोष्य नितरां तच्चित्तगूढः स्वयं
सृष्टौ तं समुदैरयः स भगवन्नुल्लासयोल्लाघताम् ॥१०॥

आताम्रे चरणे	(आपके) अरुणाभ चरणो पर
विनम्रम्-अथ तं	विनम्र तब उन (ब्रह्मा को)
हस्तेन हस्ते स्पृशन्	हाथ से हाथ को छू कर
बोधः -ते भविता	ज्ञान तुम को होगा
न सर्ग-विधिभिः-	(और) नहीं सृष्टि की विधियों से
बन्धः -अपि-सञ्जायते	बन्धन भी होगा'

इति-आभाष्य गिरं	इस प्रकार कह कर वाणी
प्रतोष्य नितरां	सन्तुष्ट कर के भलि प्रकार
तत्-चित्त-गूढः स्वयं	उनके (ब्रह्मा के) चित्त में गूढ (रूप से) स्वयं (प्रविष्ट हो कर)
सृष्टौ तं समुदैरयः	सृष्टि की रचना के लिये प्रेरणा दी
स भगवन्-	वही भगवन!
उल्लासय	सम्पादन कीजिये
उल्लाघताम्	(मेरी) निरोगिता

अपने अरुणाभ चरणों पर पडे हुए विनम्र ब्रह्मा के हाथ को अपने हाथ से स्पर्श करके आपने कहा कि - 'तुमको सृष्टि की रचना करने का ज्ञान होगा और रचना की विधियों से कोई बन्धन भी नहीं होगा।' इस प्रकार वाणी कह कर ब्रह्मा को भलीभांति सन्तुष्ट कर के उनके चित्त में आप गूढ रूप से प्रवेश कर गये और उन्हे सृष्टि की रचना करने की प्रेरणा दी। वही हे भगवन! आप मेरी निरोगिता का सम्पादन कीजिये।

दशक ८

एवं तावत् प्राकृतप्रक्षयान्ते
ब्राह्मे कल्पे ह्यादिमे लब्धजन्मा ।
ब्रह्मा भूयस्त्वत्त एवाप्य वेदान्
सृष्टिं चक्रे पूर्वकल्पोपमानाम् ॥१॥

एवं तावत्	इस प्रकार तब
प्राकृत-प्रक्षय-अन्ते	प्राकृत प्रलय के अन्त में
ब्राह्मे कल्पे हि आदिमे	ब्राह्म कल्प में जो प्रथम था
लब्ध-जन्मा ब्रह्मा	पा कर जन्म ब्रह्मा ने
भूयः - त्वत्तः	फिर से आप से
एव-आप्य वेदान्	ही पा कर वेदों को
सृष्टिं चक्रे	सृष्टि की रचना की
पूर्व-कल्प-उपमानाम्	पहले के कल्पों के समान

तब, इस प्रकार, प्राकृत प्रलय के अन्त में जो प्रथम ब्राह्म कल्प था, ब्रह्मा ने जन्म पाकर, आप ही से फिर से वेदों का ज्ञान पा कर, पहले के कल्प के ही समान सृष्टि की रचना की।

सोऽयं चतुर्युगसहस्रमितान्यहानि
तावन्मिताश्च रजनीर्बहुशो निनाय ।
निद्रात्यसौ त्वयि निलीय समं स्वसृष्टै-
र्नैमित्तिकप्रलयमाहुरतोऽस्य रात्रिम् ॥२॥

सः -अयं	वह यह (ब्रह्मा)

चतुः -युग-सह्स्र-मितानि-	चतुर्युग सहस्र अवधि
अहानि	(जो उनके) दिन हैं
तावत्-मिताः-	उतनी अवधि
च रजनीः	और रातें हैं
बहुशः निनाय	बहुत बार व्यतीत कर के
निद्रति-असौ	सो जाते हैं यह
त्वयि निलीय	आपमें ही विलीन कर के
समं स्वसृष्टैः-	साथ में अपनी सृष्टि को
नैमित्तिक-प्रलयम्-आहुः -	नैमित्तिक प्रलय कहा जाता है
अतः -अस्य रात्रिम्	इसलिये उनकी (यह) रात्रि है

उन ब्रह्मा का एक दिन एक चतुर्युग की अवधी वाला और एक रात्रि उतनी ही अवधी वाली होती है। इस प्रकार बहुत से दिन और रात्रियां व्यतीत कर के , वे निद्रा के वशीभूत हो कर, स्व रचित सृष्टि के साथ आप में ही विलीन हो जाते हैं। ब्रह्मा की यह रात्रि नैमित्तिक प्रलय कहलाती है।

अस्मादृशां पुनरहर्मुखकृत्यतुल्यां
सृष्टिं करोत्यनुदिनं स भवत्प्रसादात् ।
प्राग्ब्राह्मकल्पजनुषां च परायुषां तु
सुप्तप्रबोधनसमास्ति तदाऽपि सृष्टिः ॥३॥

अस्मादृशां पुनः -	हम लोगों के समान फिर

अहः -मुख-कृत्य-तुल्यां	प्रात:कालीन क्रियाओं के समान
सृष्टिं करोति-अनुदिनं स	सृष्टि को करते हैं हर दिन वह
भवत्-प्रसादात्	आपकी कृपा से
प्राक्-ब्राह्मकल्प-जनुषां	पहले ब्राह्म कल्प के उत्पन्न
च पर-आयुषां तु	और अनन्त आयु वालों के लिये तो
सुप्त-प्रबोधन-समा-अस्ति	सो कर उठने के समान है
तदा-अपि सृष्टिः	फिर भी सृष्टि

जिस प्रकार हम लोग हर दिन की प्रात:कालीन क्रियायें करते हैं आपकी कृपा से, उसी प्रकार ब्रह्मा हर दिन सृष्टि की रचना करते हैं। ब्राह्म कल्प के पहले उत्पन्न हुए जन अथवा अनन्त आयु वाले जनों के लिये तो फिर भी यह सृष्टि सो कर जागने के समान ही है।

पञ्चाशदब्दमधुना स्ववयोर्धरूप-
मेकं परार्धमतिवृत्य हि वर्ततेऽसौ ।
तत्रान्त्यरात्रिजनितान् कथयामि भूमन्
पश्चाद्दिनावतरणे च भवद्विलासान् ॥४॥

पञ्चाशत्-अब्दम्-अधुना	पचास वर्ष, इस समय
स्व-वयः -अर्ध-रूपम्-	अपनी आयु के आधे भाग को
एकं परार्धम्-	(जो) एक परार्ध है
अतिवृत्य हि वर्तते-असौ	व्यतीत करके वर्तमान हैं वे

तत्र-अन्त्य-रात्रि-जनितान्	वहां रात्रि के अन्त में उत्पन्न हुए (उनके बारे में)
कथयामि	कहूंगा
भूमन्	हे भगवन!
पश्चात्-दिन-अवतरणे च	बाद में दिन के बीत जाने (पर) और
भवत्-विलासान्	आपकी लीलाओं को (कहूंगा)

इस समय वे ब्रह्मा अपनी आयु के आधे भाग, अर्थात पचास वर्ष जो एक परार्ध कहलाता है, व्यतीत करके स्थित हैं। हे भूमन! उस परार्ध की अन्तिम रात्रि और दूसरे परार्ध के आरम्भ के दिन में घटित होने वाली आपकी लीलाओं का अब मैं वर्णन करूंगा।

दिनावसानेऽथ सरोजयोनि:
सुषुप्तिकामस्त्वयि सन्निलिल्ये ।
जगन्ति च त्वज्जठरं समीयु-
स्तदेदमेकार्णवमास विश्वम् ॥५॥

दिन-अवसाने-अथ	दिन के बीत जाने पर तब
सरोजयोनि:	ब्रह्मा
सुषुप्ति-काम: -	सोने के इच्छुक
त्वयि सन्निलिल्ये	आप ही में विलीन हो गये
जगन्ति च	और जगत भी
त्वत्-जठरं समीयु: -	आपके उदर में समा गया

तत्-इदम्-एक-अर्णवम्-आस विश्वम्	तब यह एक समुद्र के समान हो गया सब कुछ

दिन के बीत जाने पर ब्रह्मा , सोने की इच्छा से आप ही में विलीन हो गये और यह जगत भी आप के ही उदर में समा गया। तब यह सब कुछ एक समुद्र के समान ही हो कर रह गया।

तवैव वेषे फणिराजि शेषे
जलैकशेषे भुवने स्म शेषे ।
आनन्दसान्द्रानुभवस्वरूप:
स्वयोगनिद्रापरिमुद्रितात्मा ॥६॥

तव-एव वेषे	आप ही के प्रतिरूप में
फणिराजि शेषे	नागराज शेष पर
जल-एक-शेषे भुवने	जल एकमात्र शेष रह जाने पर जगत में
स्म शेषे	थे सो रहे
आनन्द-सान्द्र-अनुभव-स्वरूप:	आनन्द घन अनुभव स्वरूप (आप)
स्व-योग-निद्रा-परिमुद्रित-आत्मा	स्वयं की योग निद्रा के द्वारा आवृत करके स्वयं को

समस्त भुवनों के जल मग्न हो जाने पर अपने ही प्रतिरूप शेष नाग पर, स्वयं को योगनिद्रा से आवृत्त कर के, आनन्द घन अनुभव स्वरूप आप शयन करने लगे।

कालाख्यशक्तिं प्रलयावसाने
प्रबोधयेत्यादिशता किलादौ ।
त्वया प्रसुप्तं परिसुप्तशक्ति-
व्रजेन तत्राखिलजीवधाम्ना ॥७॥

काल-आख्य-शक्तिं	समय नामक शक्ति को

प्रलय-अवसाने प्रबोधय-	प्रलय के अन्त में जगा देना'
इति-आदिशता	इस प्रकार आदेश दे कर
किल-आदौ	निश्चय ही (प्रलय) के आरम्भ में
त्वया प्रसुप्तं	आप के सो जाने पर
परिसुप्त-शक्ति-व्रजेन तत्र	(आप जिनमें) विलीन हो गया था शक्तियों का समूह, वहां (उस समय)
अखिल जीवधाम्ना	(और आप जो) सब जीवों के विश्राम हैं

इस प्रकार प्रलय के आरम्भ में, आपमें शक्तियों के समूह विलीन हो गये थे। समस्त जीवों के विश्राम स्वरूप आप तब, समय नामक शक्ति को यह आदेश दे कर कि - 'प्रलय के अन्त में जगा देना", सो गये।

चतुर्युगाणां च सहस्रमेवं
त्वयि प्रसुप्ते पुनरद्वितीये ।
कालाख्यशक्तिः प्रथमप्रबुद्धा
प्राबोधयत्त्वां किल विश्वनाथ ॥८॥

चतुर्युगाणां च सहस्रम्-	चतुर्युग के एक सहस्र
एवं त्वयि प्रसुप्ते	इस प्रकार आपके सो जाने पर
पुनः -अद्वितीये	फिर से, हे अद्वितीय आप!
काल-आख्य-शक्तिः	समय नामक शक्ति
प्रथम-प्रबुद्धा	पहले जागृत हुई

प्रबोधयत्-त्वां किल	जगाया आपको निश्चय ही
विश्वनाथ	हे विश्वनाथ!

हे अद्वितीय विश्वनाथ! इस प्रकार एक सहस्र चतुर्युगों तक आपके सो जाने पर, समय नामक शक्ति ने पहले जागृत हो कर, फिर निश्चय ही आपको जगाया।

विबुध्य च त्वं जलगर्भशायिन्
विलोक्य लोकानखिलान् प्रलीनान् ।
तेष्वेव सूक्ष्मात्मतया निजान्त: -
स्थितेषु विश्वेषु ददाथ दृष्टिम् ॥९॥

विबुध्य च त्वं	जाग कर और (फिर) आपने
जल-गर्भ-शायिन्	जलों के मध्य में शयन करने वाले (आपने)
विलोक्य	देख कर
लोकान्-अखिलान् प्रलीनान्	समस्त लोकों को विलीन हुए
तेषु-एव सूक्ष्म-आत्मतया	उन्ही में सूक्ष्म रूप से
निजान्त: - स्थितेषु	स्वयं के अन्दर स्थित
विश्वेषु	(सारे) विश्व पर
ददाथ दृष्टिं	डाली दृष्टि

एकार्णव हुए जगत के मध्य में शयन करने वाले हे भगवन! जाग कर फिर आपने समस्त लोकों को विलीन हुए देखा। आप ही में सूक्ष्म रूप से स्थित उन समस्त विश्वों पर आपने दृष्टि डाली।

ततस्त्वदीयादयि नाभिरन्ध्रा-

दुदञ्चितं किंचन दिव्यपद्मम् ।
निलीननिश्शेषपदार्थमाला-
संक्षेपरूपं मुकुलायमानम् ॥१०॥

ततः त्वदीयात्-	फिर आप ही से
अयि	हे (भगवन!)
नाभिरन्ध्रात्-	नाभि छिद्र से
उदञ्चितं	उद्भूत हुआ
किञ्चन दिव्य-पद्मम्	कोई दिव्य कमल
निलीन-निश्शेष-पदार्थ-माला-	(जिसमें) समाया हुआ था समस्त पदार्थ समूह
संक्षेप-रूपं	संक्षेप (बीज) रूप में
मुकुलायमानम्	(वह) कली के रूप में ही था

फिर हे भगवन! आप ही के नाभि छिद्र से एक दिव्य कमल उद्भूत हुआ, जो अभी कली की अवस्था ही में था। उसमें समस्त पदार्थ समूह संक्षिप्त बीज रूप में समाया हुआ था।

तदेतदंभोरुहकुड्मलं ते
कलेवरात् तोयपथे प्ररूढम् ।
बहिर्निरीतं परितः स्फुरद्भिः
स्वधामभिर्ध्वान्तमलं न्यकृन्तत् ॥११॥

तत्-एतद्-अम्भोरुह-कुड्मलं	वह यह कमल की कली ने
ते कलेवरात्	आपके शरीर से (निकल कर)

तोय-पथे प्ररूढम्	जल के रास्ते से बढ कर
बहि: - निरीतं	बाहर निकल कर
परित: स्फुरद्भि: स्वधामभि:-	चारों ओर स्फुरित होते हुए अपने तेज से
ध्वान्तम्-अलं न्यकृन्तत्	अन्धकार को पूर्णतया नष्ट कर दिया

आपके शरीर से अंकुरित वह कमल कली जल के मध्य से निकल कर बाहर आ गई। उसके तेज से जो प्रकाश चारों ओर स्फुरित हो रहा था, उस तेजोमय प्रकाश से समस्त अन्धकार पूर्णतया नष्ट हो गया।

संफुल्लपत्रे नितरां विचित्रे
तस्मिन् भवद्वीर्यधृते सरोजे ।
स पद्मजन्मा विधिराविरासीत्
स्वयंप्रबुद्धाखिलवेदराशि: ॥१२॥

संफुल्ल-पत्रे	सुविकसित दल वाले
नितरां विचित्रे	अत्यन्त विचित्र
तस्मिन्	उस
भवत्-वीर्यधृते	आपकी शक्ति से धारित
सरोजे	कमल पर
स पद्मजन्मा विधि: -	वह कमल भू ब्रह्मा
आविरासीत्	आविर्भूत हुआ

स्वयं-प्रबुद्ध-अखिल-वेद-राशि:	(जिन्हे) स्वयं ज्ञात थी सम्पूर्ण वेदों की राशि

आपकी शक्ति से धारित सुविकसित दल वाले उस अत्यन्त विचित्र कमल के ऊपर पद्मजन्मा ब्रह्मा आविर्भूत हुए, जिन्हें पहले से ही समस्त वेद राशि का ज्ञान था।

अस्मिन् परात्मन् ननु पाद्मकल्पे
त्वमित्थमुत्थापितपद्मयोनि: ।
अनन्तभूमा मम रोगराशिं
निरुन्धि वातालयवास विष्णो ॥१३॥

अस्मिन्	इस (में)
परात्मन्	हे परमात्मन!
ननु पाद्मकल्पे	निश्चय ही पाद्मकल्प में
त्वम्-इत्थम्-	आपने इस प्रकार
उत्थापित-पद्मयोनि:	आविर्भूत किया था ब्रह्मा को
अनन्तभूमा	अनन्त वीर्यान्वित
मम रोगराशिं निरुन्धि	मेरी रोगों की राशि को नष्ट करें
वातालयवास विष्णो	हे गुरुवायुर विष्णु!

अनन्त वीर्यान्वित भूमन! इस प्रकार पाद्मकल्प में निश्चय ही आपने ब्रह्मा को आविर्भूत किया। हे गुरुवायुरवासिन परमात्मन! मेरी रोगों की राशि को नष्ट करें।

दशक ९

स्थितस्स कमलोद्भवस्तव हि नाभिपङ्केरुहे
कुत: स्विदिदमम्बुधावुदितमित्यनालोकयन् ।
तदीक्षणकुतूहलात् प्रतिदिशं विवृत्तानन-
श्चतुर्वदनतामगाद्विकसदष्टदृष्ट्यम्बुजाम् ॥१॥

स्थित: -	स्थित हुए
स कमलोद्भव: -	वह कमलयोनि (ब्रह्मा)
तव हि नाभिपङ्केरुहे	आपके ही नाभि कमल के ऊपर
कुत: स्वित्-	कहां से यह
इदम्-अम्बुधौ-उदितम्-	यह एकार्णव में पैदा हुआ
इति-अनालोकयन्	इस प्रकार न जानते हुए
तत्-ईक्षण-कुतूहलात्	वह देखने (समझने) की जिज्ञासा से
प्रतिदिशं विवृत्त-आनन: -	हर दिशा में फैलाए मुख से
चतु:-वदनताम्-अगात्-	चार मुख वाले हो गये
विकसत्-अष्ट-दृष्टि-अम्बुजाम्	(जिनमें) विकसित हो रहे थे आठ नेत्र कमल

वह कमलभू ब्रह्मा आप ही के नाभि कमल पर स्थित, सोचने लगे कि यह कमल इस एकार्णव में कहां से उत्पन्न हुआ? यह जानने की जिज्ञासा से उन्होने चारो दिशाओं में मुंह घुमाया। इससे वे चार मुख वाले हो गये जिनमें आठ नेत्र कमल विकसित हो रहे थे।

महार्णवविघूर्णितं कमलमेव तत्केवलं

विलोक्य तदुपाश्रयं तव तनुं तु नालोकयन् ।
क एष कमलोदरे महति निस्सहायो ह्यहं
कुत: स्विदिदम्बुजं समजनीति चिन्तामगात् ॥२॥

महार्णव-विघूर्णितं	महार्णव में लहराता हुआ
कमलम्-एव तत्-केवलं	कमल ही वही केवल
विलोक्य तत्-उपाश्रयं	देख कर, उसका आधारभूत
तव तनुं तु न-आलोकयन्	आपका शरीर तो नहीं देख कर
क: एष	कौन यह
कमल-उदरे महति	(इस) महान कमल के उदर में
निस्सहाय: हि-अहं	अकेला ही मैं
कुत: स्वित्-	कहां से निश्चय ही
इदम्-अम्बुजम् समजनि-	यह कमल पैदा हुआ
इति चिन्ताम्-अगात्	इस प्रकार चिन्ता करने लगे

उस महार्णव में उस कमल को ही लहराते हुए देख कर और उसके आधारभूत आपके शरीर को न देख कर, ब्रह्मा चिन्ता में पड गये कि इस महान कमल के उदर में वे अकेले थे और वह कमल कहां से आया तथा किसने उसे पैदा किया।

अमुष्य हि सरोरुह: किमपि कारणं सम्भवे-
दिति स्म कृतनिश्चयस्स खलु नालरन्ध्राध्वना ।
स्वयोगबलविद्यया समवरूढवान् प्रौढधी -
स्त्वदीयमतिमोहनं न तु कलेवरं दृष्टवान् ॥३॥

अमुष्य हि सरोरुह:	अवश्य ही इस कमल के
किम्-अपि कारणम् सम्भवेत्-	(प्रकट होने का) कोई तो कारण होगा
इति स्म कृतनिश्चय: -	इस प्रकार निश्चय करके
स खलु	वे फिर
नाल-रन्ध्र-अध्वना	कमलनाल के छिद्र से उतरते हुए
स्व-योग-बल-विध्यया	अपनी योग विद्या के बल से
स्मवरूढवान्	उतर गये
प्रौढधी: -	परिपक्व बुद्धि वाले
त्वदीयम्-अति-मोहनं	आपके अति मोहनीय
न तु कलेवरं दृष्टवान्	नहीं ही शरीर को देख पाये

अवश्य ही इस कमल के प्रकट होने का कोई तो कारण होगा' -इस प्रकार निश्चय करके वे परिपक्व बुद्धि वाले ब्रह्मा अपनी योग विद्या के बल से उस कमल के नाल के छिद्र से नीचे उतर आये। किन्तु वे आपके अति मनोहर कलेवर को नहीं देख पाये।

तत: सकलनालिकाविवरमार्गगो मार्गयन्
प्रयस्य शतवत्सरं किमपि नैव संदृष्टवान् ।
निवृत्य कमलोदरे सुखनिषण्ण एकाग्रधी:
समाधिबलमादधे भवदनुग्रहैकाग्रही ॥४॥

तत:	तब

सकल-नालिका-विवर-मार्गग:	नाल सारे के छिद्रों के रास्ते से जाते हुए
मार्गयन्	(और) ढूंढते हुए
प्रयस्य शतवत्सरं	प्रयत्न करते रहे एक सौ दिव्य वषों तक
किम्-अपि न-एव संदृष्टवान्	कुछ भी नहीं ही दिखा
निवृत्य कमल-उदरे	वापस लौट कर (वे) कमल के अन्दर
सुखनिषण्ण एकाग्रधी:	सुख से बैठ गये एकाग्र चित्त हो कर
समाधि-बलम्-आदधे	(फिर, उन्होंने) समाधि बल का आश्रय लिया
भवत्-अनुग्रह-एक-आग्रही	आपकी अनुकम्पा मात्र की इच्छा ले कर

तब ब्रह्मा जी ने एक सौ दिव्य वर्ष तक कमल नाल के सभी छिद्रों का प्रयत्न पूर्वक अन्वेषण किया। किन्तु वे कहीं भी कुछ भी नहीं देख पाये। वे क्मलनाल के रास्ते से फिर कमल के अन्दर आ कर सुखपूर्वक बैठ गये। फिर उन्होंने एकाग्र चित्त से एकमात्र आपकी अनुकम्पा के आग्रही हो कर समाधि बल का आश्रय लिया।

शतेन परिवत्सरैर्दृढसमाधिबन्धोल्लसत्-
प्रबोधविशदीकृत: स खलु पद्मिनीसम्भव: ।
अदृष्टचरमद्भुतं तव हि रूपमन्तर्दृशा
व्यचष्ट परितुष्टधीर्भुजगभोगभागाश्रयम् ॥५॥

शतेन परिवत्सरै: -	सैकडों दिव्य वर्षों तक
दृढ-समाधि-बन्ध-उल्लसत्-	अटल समाधिके तेज से प्रफुल्ल
प्रबोध-विशदीकृत:	ज्ञान प्रकाशित हुआ

स खलु पद्मिनीसम्भव:	वे ही कमलजन्मा
अदृष्टचरम्-अद्‌भुतं	अदृश्य (सामान्य) जनों द्वारा, अद्‌भुत
तव हि रूपम्-	आप ही का रूप
अन्तर्दृशा व्यचष्ट	अन्तर्दृष्टि के द्वारा देखा
परितुष्टधी:-	सन्तुष्ट मन वाले (उन्होंने)
भुजग-भोगभाग-आश्रयं	भुजङ्ग के शरीर के भाग को आश्रय बनाने वाले को

कमलजन्मा ब्रह्मा सैकडों दिव्य वर्षों तक दृढ समाधि में स्थित रहे। उस समाधि के तेज से उनमें ज्ञान का प्रकाश प्रफुल्लित हुआ। तब, सामान्य जनों के लिये अदृश्य, आपका अद्‌भुत रूप उन्होंने अन्तर्दृष्टि द्वारा देखा, जो शेषनाग के शरीर के भाग का आश्रय लिये हुए थे। वह रूप देख कर ब्रह्मा अत्यन्त सन्तुष्ट हो गए।

किरीटमुकुटोल्लसत्कटकहारकेयूरयुङ्-
मणिस्फुरितमेखलं सुपरिवीतपीताम्बरम् ।
कलायकुसुमप्रभं गलतलोल्लसत्कौस्तुभं
वपुस्तदयि भावये कमलजन्मे दर्शितम् ॥६॥

किरीट-मुकुट-उल्लसत्-	किरीट और मुकुट से सुशोभित
कटक-हार-केयूर-युक्-	कङ्गन, हार और बाजूबन्द से युक्त
मणि-स्फुरित-मेखलं	मणियों से शोभायमान करधनी
सुपरिवीत-पीताम्बरम्	सुन्दरता से पहना हुआ पीताम्बर
कलाय-कुसुम-प्रभं	कलाय फूलों के समान कोमल

गल-तल-उल्लसत्-कौस्तुभं	गले में पहना हुआ कौस्तुभ (वाला)
वपु: -तत्-अयि भावये	विग्रह वह, हे भगवन, ध्यान करता हूं
कमलजन्मने दर्शितं	(जो) कमलयोनि (ब्रह्मा) को दिखाया

हे भगवन! किरीट और मुकुट से सुशोभित, कङ्गन हार और बाजूबन्द से युक्त, मणियों से शोभायमान करधनी एवं सुचारु रूप से पहना हुआ पीताम्बर वाला, कलाय पुष्पों के समान कोमल, गले में कौस्तुभ पहने हुए, आपके उस सुन्दर विग्रह का मैं ध्यान करता हूं जो आपने ब्रह्मा जी को दिखाया।

श्रुतिप्रकरदर्शितप्रचुरवैभव श्रीपते
हरे जय जय प्रभो पदमुपैषि दिष्ट्या दृशो: ।
कुरुष्व धियमाशु मे भुवननिर्मितौ कर्मठा-
मिति द्रुहिणवर्णितस्वगुणबृंहिमा पाहि माम् ॥७॥

श्रुति-प्रकर-	शास्त्रों के वाक्यों में
दर्शित-प्रचुर-वैभव	दिखाए गए अनन्त वैभव वाले
श्रीपते	हे लक्ष्मीपति!
हरे	हे हरि!
जय जय प्रभो	आपकी जय हो!
पदम्-उपैषि दिष्ट्या दृशो:	हे प्रभो! सौभाग्य से मुझे दृष्टि गोचर हुए हैं
कुरुष्व	कृपा करिये
धियम्-आशु मे	मेरे मन में शीघ्र ही

भुवन-निर्मितौ कर्मठाम्-	संसार के निर्माण में समर्थता हो
इति द्रुहिण-वर्णित-	इस प्रकार ब्रह्मा द्वारा वर्णित
स्वगुण-बृंहिमा	आपके गुणो के समूहों
पाहि माम्	रक्षा करें मेरी

"हे लक्ष्मीपते! शास्त्रों के विभिन्न वाक्यों में आपका अनन्त वैभव प्रतिपादित है। हे हरे! आपकी जय हो। हे प्रभू! सौभाग्य से आप मुझे दृष्टिगोचर हुए हैं। कृपा करिये कि शीघ्र ही मेरे मन में सृष्टि रचना की क्षमता उत्पन्न हो।" इस प्रकार ब्रह्मा ने आपके गुणों के समूहों का वर्णन किया। ऐसे आप मेरी रक्षा करें।

लभस्व भुवनत्रयीरचनदक्षतामक्षतां
गृहाण मदनुग्रहं कुरु तपश्च भूयो विधे ।
भवत्वखिलसाधनी मयि च भक्तिरत्युत्कटे-
त्युदीर्य गिरमादधा मुदितचेतसं वेधसम् ॥८॥

लभस्व	प्राप्त करें
भुवनत्रयी-रचन-दक्षताम्-अक्षतां	तीनों भुवनों की रचना की दक्षता (जो) अमिट हो
गृहाण मत्-अनुग्रहं	(और) प्राप्त करें मेरी कृपा
कुरु तप: -च भूय: -विधे	करें तप फिर से और हे ब्रह्मा
भवतु-अखिल-साधनी	हो अनन्त साधन वाली
मयि च भक्ति: -अति-उत्कटा-	मुझमें भक्ति अति तीव्र
इति-उदीर्य गिरम्-	यह कह कर वचन

आदधा मुदित-चेतसं विधसम्	प्रदान किया उल्लासपूर्ण चित्त ब्रह्मा को

हे ब्रह्मन! आप फिर से तप करें और आपको तीनों भुवनों की रचना की अमिट दक्षता प्राप्त हो। और मेरी कृपा से आपको मुझमें अनन्त सिद्धियों वाली तीव्रतम भक्ति प्राप्त हो"। यह वचन कह कर (आपने) ब्रह्मा का चित्त उल्लासपूर्ण कर दिया।

शतं कृततपास्तत: स खलु दिव्यसंवत्सरा-
नवाप्य च तपोबलं मतिबलं च पूर्वाधिकम् ।
उदीक्ष्य किल कम्पितं पयसि पङ्कजं वायुना
भवद्बलविजृम्भित: पवनपाथसी पीतवान् ॥९॥

शतं कृत-तपा:-तत:	(एक) सौ (वर्षों तक) किया तप तब
स खलु दिव्य-संवत्सरान्-	उसने फिर दिव्य (सौ) वर्षों तक
अवाप्य च तपोबलं मतिबलं	पा कर तपोबल और मतिबल
च पूर्व-अधिकम्	और पहले से अधिक
उदीक्ष्य किल	देख कर निश्चय ही
कम्पितं पयसि पङ्कजं	लहराते हुए जल में कमल को
वायुना	वायु के द्वारा
भवत्-बल विजृम्भित:	आपके बल से पुष्टित (ब्रह्मा ने)
पवनपाथसी पीतवान्	वायु और जल को पी लिया

ब्रह्मा ने एक सौ दिव्य वर्षों तक तप किया। जिससे उन्हे पहले से अधिक तपोबल और बुद्धिबल प्राप्त हुआ, और उन्होंने (एकार्णव के) जल में वायु से लहराता हुआ एक कमल देखा। आपके बल से परिपूरित ब्रह्मा ने वायु और जल को पी लिया।

तवैव कृपया पुनस्सरसिजेन तेनैव स:

प्रकल्प्य भुवनत्रयीं प्रववृते प्रजानिर्मितौ ।
तथाविधकृपाभरो गुरुमरुत्पुराधीश्वर
त्वमाशु परिपाहि मां गुरुदयोक्षितैरीक्षितैः ॥१०॥

तव-एव कृपया	आप ही की कृपा से
पुनः -	फिर
सरसिजेन तेन-एव	उस कमल के द्वारा ही
सः	वह (ब्रह्मा)
प्रकल्प्य भुवनत्रयीं	कल्पना कर के त्रिभुवन की
प्रववृते प्रजानिर्मितौ	प्रेरित हुए प्रजा के निर्माण में
तथा-विध-कृपाभरः	उस प्रकार की कृपा से परिपूर्ण
गुरुमरुत्पुराधीश्वर	गुरुवायुरधीश्वर!
त्वम्-आशु परिपाहि मां	आप शीघ्र रक्षा करें मेरी
गुरु-दया-उक्षितः ईक्षतैः	महती दया से आर्द्र (पातों से) दृष्टिपातों से

आपकी ही कृपा से ब्रह्मा ने उसी कमल के द्वारा त्रिभुवन की कल्पना की और प्रजा के निर्माण में प्रवृत्त हुए। ऐसी कृपा से परिपूर्ण हे गुरुवायुरधीश्वर! महती दया से आर्द्र अपने दृष्टिपातों से शीघ्र ही मेरी रक्षा करें।

दशक १०

वैकुण्ठ वर्धितबलोऽथ भवत्प्रसादा-
दम्भोजयोनिरसृजत् किल जीवदेहान् ।
स्थास्नूनि भूरुहमयानि तथा तिरश्चां
जातिं मनुष्यनिवहानपि देवभेदान् ॥१॥

वैकुण्ठ	हे वैकुण्ठी!
वर्धित-बल: -अथ	उन्नत बल वाले फिर
भवत्-प्रसादात्-	आपकी कृपा से
अम्भोज्योनि: -	ब्रह्मा
असृजत् किल	ने रचना की निश्चय ही
जीवदेहान्	जीवों के शरीरों की
स्थानूनि	स्थावर (वस्तुओं की)
भूरुहमयानि	पृथ्वी पर उगने वाली (वस्तुओं की)
तथा तिरश्चां जातिं	और तिर्यक जातिकी
मनुष्य-निवहान्-अपि	मनुष्य समूहों की भी
देवभेदान्	(और) विभिन्न देवों की

हे वैकुण्ठ अधिष्ठाता! फिर वर्धित बल वाले ब्रह्मा ने आपकी ही कृपा से जीवों के शरीरों की रचना की। उन्होने स्थावर (भूमि आदि), भूमि पर पैदा होने वाले (वृक्षादि) की, तिर्यक जाति (पशु पक्षि आदि) की, मनुष्य समूहों की भी और विभिन्न देवों की भी रचना की।

मिथ्याग्रहास्मिमतिरागविकोपभीति-
रज्ञानवृत्तिमिति पञ्चविधां स सृष्ट्वा ।
उद्दामतामसपदार्थविधानदून -
स्तेने त्वदीयचरणस्मरणं विशुद्ध्यै ॥२॥

मिथ्या-आग्रह-	झूठा अभिमान
अस्मिमति-राग-	अहं भाव, आसक्ति
विकोप-भीतिः-	क्रोध, डर
अज्ञानवृत्तिम्-इति	अज्ञान की वृत्तियां इस प्रकार
पञ्चविधां	पांच प्रकार् की
स सृष्ट्वा	उसने बना कर
उद्दाम-तामस-पदार्थ-विधान्-अदूनः-	अत्यन्त तामसिक पदार्थो को बना कर खिन्न हो कर
तेने	प्रवृत्त हुए
त्वदीय-चरण-स्मरणं	आपके चरणों के ध्यान में
विशुद्ध्यै	शुद्धि के लिये

तत्पश्चात् ब्रह्मा ने झूठा अभिमान, अहं भाव, आसक्ति, क्रोध और डर ऐसी पांच प्रकार की अज्ञान की वृत्तियों का निर्माण किया। इन अत्यन्त तामसिक पदार्थों की रचना करके उनका मन खिन्न हो गया। तदन्तर विशुद्धि के लिये वे आपके चरणों के ध्यान में प्रवृत्त हुए।

तावत् ससर्ज मनसा सनकं सनन्दं
भूयः सनातनमुनिं च सनत्कुमारम् ।
ते सृष्टिकर्मणि तु तेन नियुज्यमाना-

स्त्वत्पादभक्तिरसिका जगृहुर्न वाणीम् ॥३॥

तावत् ससर्ज मनसा	तब सृजन किया मन से
सनकं सनन्दं	सनक और सनन्द का
भूयः सनातनमुनिं च सनत्कुमारं	और फिर सनातन मुनि और सनत्कुमार का
ते सृष्टिकर्मणि तु	वे लोग सृष्टि के कार्य में तो
तेन नियुज्यमानाः -	उसके लिये (सृष्टि के लिये) नियुक्त किये हुए भी
त्वत्-पाद-भक्ति-रसिका	आपके चरण कमलों में आसक्त
जगृहुः -न वाणीम्	ग्रहण नहीं किया आज्ञा को

तब ब्रह्मा ने मनसे सनक और सनन्द का सृजन किया, और फिर सनातन मुनि और सनत्कुमार का सृजन किया। ब्रह्मा के द्वारा सृष्टि के कार्य में नियुक्त किये जाने पर भी उन्होने आज्ञा का पालन नहीं किया क्योंकि वे आपके चरणों की भक्ति के रसिक थे।

तावत् प्रकोपमुदितं प्रतिरुन्धतोऽस्य
भ्रूमध्यतोऽजनि मृडो भवदेकदेशः ।
नामानि मे कुरु पदानि च हा विरिञ्चे-
त्यादौ रुरोद किल तेन स रुद्रनामा ॥४॥

तावत्	तब
प्रकोपम्-उदितं	क्रोध के उत्पन्न होने से
प्रतिरुन्धतः -	(उसे) रोकते हुए

अस्य भ्रूमध्यत: -	इनके (ब्रह्मा के) भ्रूमध्य से
अजनि मृड:	पैदा हुए मृड
भवत्-एक-देश:	आपके ही अंश
नामानि मे कुरु	नाम करो मेरा
पदानि च	और घर
हा विरिञ्च-	हे ब्रह्मा
इति-आदौ रुरोद	इस प्रकार प्रारम्भ में ही रोये
किल तेन स रुद्रनामा	निश्चय ही इसी लिये वह रुद्र नाम का है

अपने क्रोध का संवरण करने के कारण ब्रह्मा के भ्रूमध्य से मृड ने जन्म लिया जो आपके ही अंश हैं। उन्होंने प्रारम्भ में ही रो कर कहा कि "मुझे नाम दो और मेरे निवास निर्धारित करो", इसी कारण उनका नाम रुद्र हुआ।

एकादशाह्वयतया च विभिन्नरूपं
रुद्रं विधाय दयिता वनिताश्च दत्वा ।
तावन्त्यदत्त च पदानि भवत्प्रणुन्न:
प्राह प्रजाविरचनाय च सादरं तम् ॥५॥

एकादश-आह्वयतया	ग्यारह नामों से
च विभिन्न-रूपं	और विभिन्न रूपों से
रुद्रं विधाय	रुद्र को दे कर

दयिता: वनिता: -च दत्वा	प्रिय पत्नियां भी दे कर
तावन्ति-अदत्त च पदानि	और उतने ही दिये स्थान
भवत्-प्रणुन्न:	आपके द्वारा प्रेरित हो कर
प्राह प्रजा-विरचनाय	और (उनको) कहा प्रजा रचने के लिये
च सादरं तम्	आदर सहित उनको

तब ब्रह्मा ने रुद्र को विभिन्न रूपों से ग्यारह नाम दिये और ग्यारह प्रिय पत्नियां भी दीं और उतने ही निवास स्थान दिये। आपके द्वारा प्रेरित हो कर ब्रह्मा ने आदर सहित उनसे निवेदन किया कि वे प्रजा की रचना करें।

रुद्राभिसृष्टभयदाकृतिरुद्रसंघ-
सम्पूर्यमाणभुवनत्रयभीतचेता: ।
मा मा प्रजा: सृज तपश्चर मङ्गलाये-
त्याचष्ट तं कमलभूर्भवदीरितात्मा ॥६॥

रुद्र-अभिसृष्ट-	रुद्र ने सृष्टि की
भयद-आकृति-रुद्रसंघ-	भयानक आकृति वाले रुद्र समूहों की
सम्पूर्यमाण-भुवनत्रय-	(जिससे) व्याप्त होने लगे त्रिभुवन
भीत-चेता:	डरे हुए मन से
मा मा प्रजा: सृज	नहीं नहीं प्रजा की सृष्टि (मत) करो
तप: -चर	तपस्या करो

मङ्गलाय-	मङ्गल के लिये
इति-आचष्ट तं कमलभूः -	ऐसा कहा उसको (रुद्र को) ब्रह्मा ने
भवत-ईरितात्मा	आपने कहा उनको

रुद्र भयानक आकृति वाले रुद्रो की रचना करने लगे जो त्रिभुवन में व्याप्त होने लगे। भयभीत ब्रह्मा ने आपसे प्रेरित हो कर रुद्र से कहा कि वे और सृष्टि न करें बल्कि लोक कल्याण के लिये तप करें।

तस्याथ सर्गरसिकस्य मरीचिरत्रि-
स्तत्राङिगराः क्रतुमुनिः पुलहः पुलस्त्यः ।
अङ्गादजायत भृगुश्च वसिष्ठदक्षौ
श्रीनारदश्च भगवन् भवदंघ्रिदासः ॥७॥

तस्य-अथ	उनके, तब
सर्ग-रसिकस्य	रचना करने के इच्छुक (ब्रह्मा के)
मरीचिः -अत्रिः -	मरीचि, अत्रि
तत्र-अङिगराः	फिर अङ्गिरा,
क्रतुमुनिः पुलहः पुलस्त्यः	क्रतुमुनि, पुलह, पुलस्त्य
अङ्गात्-अजायत	अङ्ग से पैदा हुए
भृगुः-च वसिष्ठ-दक्षौ	भृगु और वसिष्ठ और दक्ष
श्री-नारदः -च	और श्री नारद (भी)

भगवन्	हे भगवन!
भवत्-अंघ्रि-दास:	(जो) आपके चरणो के दास हैं

सृष्टि रचना के इच्छुक ब्रह्मा के अङ्गों से तब मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, क्रतुमुनि, पुलह, पुलस्त्य, भृगु, वसिष्ट, दक्ष और नारद उत्पन्न हुए। हे भगवन! ये सब आपके चरणों के दास हैं।

धर्मादिकानभिसृजन्नथ कर्दमं च
वाणीं विधाय विधिरङ्गजसंकुलोऽभूत् ।
त्वद्बोधितैः सनकदक्षमुखैस्तनूजै-
रुद्बोधितश्च विरराम तमो विमुञ्चन् ॥८॥

धर्म-आदिकान्-अभिसृजन्-	धर्म आदि (देवों) की रचना कर के
अथ कर्दमं च	तब कर्दम और
वाणीं विधाय	सरस्वती को रच कर
विधि: -	ब्रह्मा
अङ्गज-संकुल: -अभूत्	काम के वशीभूत हो गए
त्वत्-बोधितै: -	आप से प्रेरित
सनक-दक्ष-मुखै: -	सनक दक्ष और सब
तनूजै:-उद्बोधित: -च	पुत्रों के द्वारा समझाए जाने पर
विरराम	रुक गये

तम: विमुञ्चन्	तमोगुण छोड कर

ब्रह्मा ने फिर धर्मादि देवों की और कर्दम प्रजापति की रचना की। तदन्तर सरस्वती की रचना करके वे काम के वशीभूत हो गये। आपके द्वारा प्रेरित सनक दक्ष और सब पुत्रों के समझाने पर वे रुक गये और तामसिक विचार छोड दिए।

वेदान् पुराणनिवहानपि सर्वविद्या:
कुर्वन् निजाननगणाच्चतुराननोऽसौ ।
पुत्रेषु तेषु विनिधाय स सर्गवृद्धि-
मप्राप्नुवंस्तव पदाम्बुजमाश्रितोभूत् ॥९॥

वेदान् पुराण-निवहान्-	वेद पुराण समूह
अपि सर्व-विद्या:	और भी सब विद्या
कुर्वन् निज-आनन-गणात्-	(की रचना) करके अपने मुखों से
चतु:-आनन-असौ	चतुर्मुखी वे
पुत्रेषु तेषु विनिधाय	उन पुत्रों में स्थापित कर के
स सर्ग-वृद्धिम्-अप्राप्नुवन्-	उस सर्ग की वृद्धि को, प्राप्त किया
तव पदाम्बुजम्-आश्रित: - अभूत्	आपके चरण कमलों के आश्रित हो गये

उन चतुर्मुख ब्रह्मा ने अपने चारो मुखों से वेदों, पुराण समूहों तथा समस्त विद्याओं को प्रकट कर के अपने उन पुत्रों में स्थापित कर दिया। फिर प्रजा की और अधिक वृद्धि न देख कर, उन्होने आपके चरण कमलों का आश्रय लिया।

जानन्नुपायमथ देहमजो विभज्य
स्त्रीपुंसभावमभजन्मनुतद्वधूभ्याम् ।
ताभ्यां च मानुषकुलानि विवर्धयंस्त्वं
गोविन्द मारुतपुरेश निरुन्धि रोगान् ॥१०॥

जानन्-उपायम्-अथ	जानते हुए उपाय को फिर
देहम्-अज: विभज्य	शरीर को ब्रह्मा ने विभक्त कर के
स्त्री-पुंस-भावम्-अभजत्-	स्त्री और पुरुष के भाव को प्राप्त हुए
मनु-तत्-वधूभ्याम्	मनु और उनकी पत्नी
ताभ्यां च	और उन दोनो से
मानुष-कुलानि विवर्धयन्-	मनुष्य कुल की वृद्धि करते हुए
त्वं गोविन्द् मारुतपुरेश	आप हे गोविन्द! मारुतपुरेश!
निरुन्धि रोगान्	(मेरे) रोगों का विनाश करिये

प्रजावृद्धि के उपाय को जानते हुए फिर, ब्रह्मा ने अपने शरीर को दो भागों में विभक्त किया और स्त्री और पुरुष के भाव को प्राप्त हो गए। वे भाग मनु और उनकी पत्नी शतरूपा थे। उन दोनों से मनुष्य कुल की वृद्धि करते हुए, हे गोविन्द! हे मरुतपुरेश! मेरे रोगों का विनाश कीजिये।

दशक ११

क्रमेण सर्गे परिवर्धमाने
कदापि दिव्या: सनकादयस्ते ।
भवद्विलोकाय विकुण्ठलोकं
प्रपेदिरे मारुतमन्दिरेश ॥१॥

क्रमेण सर्गे	क्रम से प्रजनन की
परिवर्धमाने	वृद्धि होने पर
कदापि	एक समय
दिव्या: सनकादय: ते	दिव्य सनकादि वे लोग
भवत्-विलोकाय	आपके दर्शन के लिये
विकुण्ठलोकं प्रपेदिरे	वैकुण्ठलोक पहुंचे
मारुतमन्दिरेश	हे मारुतमन्दिरेश!

हे मारुतमन्दिरेश! क्रम से प्रजनन की वृद्धि होने पर, वे दिव्य सनकादि किसी समय आपके दर्शन के लिये वैकुण्ठ लोक पहुंचे।

मनोज्ञनैश्रेयसकाननाद्यै-
रनेकवापीमणिमन्दिरैश्च ।
अनोपमं तं भवतो निकेतं
मुनीश्वरा: प्रापुरतीतकक्ष्या: ॥२॥

मनोज्ञ-	मनोहर
नैश्रेयस-कानन-आद्यै: -	नैश्रेयस कानन आदि,
अनेक-वापी	अनेक बावलियों
मणिमन्दिरै: - च	(और) मणि (जडित) मन्दिरों और
अनोपमं तं	अनुपम उस

भवत: निकेतं	आपके निवास को
मुनीश्वरा: प्रापु: -	मुनीश्वर पहुंचे
अतीत-कक्ष्या:	पार करके (छ:) कक्षों को

नैश्रेयस कानन आदि काननो, अनेक बावलियों और मणि जडित मन्दिरों से मनोहर, छ: कक्षों को पार करके वे मुनिगण आपके उस अनुपम निवास स्थान को पहुंचे।

भवद्दिदृक्षून्भवनं विविक्षून्
द्वा:स्थौ जयस्तान् विजयोऽप्यरुन्धाम् ।
तेषां च चित्ते पदमाप कोप:
सर्वं भवत्प्रेरणयैव भूमन् ॥३॥

भवत्-दिदृक्षून्-	आपके दर्शन के इच्छुक,
भवनं विविक्षून्	(इसलिये) भवन में प्रवेश करने के इच्छुक,
द्वा:स्थौ	द्वार पर स्थित
जय: - तान्	जय (ने) उनको
विजय: -अपि-अरुन्धाम्	विजय (ने) भी रोक लिया
तेषां च चित्ते	और उनके चित्त में
पदम्-आप कोप:	पैर रक्खा क्रोध ने
सर्वं भवत्-प्रेरणया-एव	सब कुछ आप की प्रेरणा से ही
भूमन्	हे भूमन!

हे भूमन! वे सनकादि आपके दर्शन के इच्छुक थे इसीलिये आपके भवन में प्रवेश करना चाहते थे। किन्तु द्वार पर जय और विजय ने उन्हे रोक लिया। तब उनके मन में क्रोध उत्पन्न हो गया। यह सब आपकी ही प्रेरणा से हुआ।

वैकुण्ठलोकानुचितप्रचेष्टौ
कष्टौ युवां दैत्यगतिं भजेतम् ।
इति प्रशप्तौ भवदाश्रयौ तौ
हरिस्मृतिर्नोऽस्त्विति नेमतुस्तान् ॥४॥

वैकुण्ठलोक-अनुचित-प्रचेष्टौ	वैकुण्ठ लोक के अनुचित व्यवहार (वाले)
कष्टौ युवां	दुष्ट (तुम) दोनों
दैत्य-गतिं भजेतम्	दैत्य की गति को प्राप्त होगे
इति प्रशप्तौ	इस प्रकार शापित
भवत्-आश्रयौ तौ	आपके आश्रित वे दोनों
हरिः -स्मृतिः -नः -अस्तु-	भगवत स्मृति हमको रहे
इति नेमतुः-तान्	ऐसी प्रार्थना की उनको

सनकादि ने उनको कहा कि उनका व्यवहार वैकुण्ठ लोक के अनुचित था। अतएव उन्होने शाप दिया कि वे दोनों दुष्ट दैत्य की गति को प्राप्त करें। आपके आश्रित उन दोनों ने प्रार्थना की कि उन्हे सदा भगवत स्मृति बनी रहे।

तदेतदाज्ञाय भवानवाप्तः
सहैव लक्ष्म्या बहिरम्बुजाक्ष ।
खगेश्वरांसार्पितचारुबाहु-
रानन्दयंस्तानभिराममूर्त्या ॥५॥

तत्-एतत्-आज्ञाय	वह यह जान कर
भवान्-अवाप्तः	आप पहुंचे
सह-एव लक्ष्म्या	साथ ही लक्ष्मी के
बहिः -अम्बुजाक्ष	बाहर, हे कमलनयन!
खगेश्वर-अंस-	गरुड के कन्धे पर
अर्पित-चारु-बाहुः -	रखे हुये सुन्दर भुजा
आनन्दयन्-तान्-	आनन्द देते हुए उनको (सनकादि को)
अभिराम-मूर्त्या	(अपनी) सुन्दर छबि के द्वारा

यह सब जान कर आप लक्ष्मी के साथ बाहर पहुंचे। हे कमलनयन! आपने गरुड के कन्धे पर अपनी सुन्दर भुजा रखी हुई थी। अपनी मनोहर छबि दिखा कर आपने सनकादि को बहुत आनन्दित किया।

प्रसाद्य गीर्भि: स्तुवतो मुनीन्द्रा-
ननन्यनाथावथ पार्षदौ तौ ।
संरम्भयोगेन भवैस्त्रिभिर्मा-
मुपेतमित्यात्तकृपं न्यगादी: ॥६॥

प्रसाद्य गीर्भि:	प्रसन्न करके (अपनी) वाणी द्वारा
स्तुवत: मुनीन्द्रान्-	स्तुति करते हुए मुनीन्द्रों को
अनन्य-नाथौ-	अन्य नहीं थे नाथ जिनके (उन दोनों)
अथ पार्षदौ तौ	तब उन दोनों पार्षदों (सेवकों) को
संरम्भयोगेन भवै:-त्रिभि:-	क्रोध से कठोर होने के कारण जन्म तीन के द्वारा (के बाद)
माम्-उपेतम्-	मुझको प्राप्त होगे
इति-आत्त-कृपम्	इस प्रकार कृपा परिपूर्ण (आप) ने
न्यगादी:	कहा

उन स्तुति करते हुए मुनीन्द्रों को आपने अपनी वाणी के द्वारा प्रसन्न किया। उन दोनों सेवकों को, जिनके और कोई आश्रय नहीं थे, कृपा से पूर्ण होकर आपने कहा कि उन्हे तीन जन्मों तक क्रोध से कठोर उस श्राप को सहना होगा, तत्पश्चात वे लोग आपको प्राप्त कर लेंगे।

त्वदीयभृत्यावथ काश्यपात्तौ
सुरारिवीरावुदितौ दितौ द्वौ ।
सन्ध्यासमुत्पादनकष्टचेष्टौ
यमौ च लोकस्य यमाविवान्यौ ॥७॥

त्वदीय-भृत्यौ-	आपके ही सेवक (वे दोनों)
अथ काश्यपात्-तौ	फिर कश्यप से, वे दोनों
सुरारि-वीरौ-	असुर वीर
उदितौ दितौ द्वौ	पैदा हुए दिति (के गर्भ) से दोनों
सन्ध्या-समुत्पादन-	सन्ध्या काल में (गर्भ में) आने के कारण

कष्ट-चेष्टौ	(वे) क्रूर कर्मों वाले थे
यमौ च	वे दोनों जुडवां
लोकस्य यमौ-इव-अन्यौ	लोक के लिये दूसरे यम (काल) के समान थे

तदनन्तर आपके उन दोनों सेवकों ने कश्यप और दिति के दो असुर वीर पुत्रों के रूप में जन्म लिया। सन्ध्या के समय गर्भ में आने के कारण वे अति क्रूर स्वभाव के थे। वे दोनों जुडवां भाई लोकों के लिये मानों दूसरे यम-काल ही थे।

हिरण्यपूर्व: कशिपु: किलैक:
परो हिरण्याक्ष इति प्रतीत: ।
उभौ भवन्नाथमशेषलोकं
रुषा न्यरुन्धां निजवासनान्धौ ॥८॥

हिरण्य-पूर्व: कशिपु: किल-एक:	हिरण्य पहले कशिपु के, निश्चय ही एक
पर: हिरण्याक्ष इति प्रतीत:	दूसरा हिरण्याक्ष इस प्रकार जाना जाता था
उभौ	दोनों
भवत्-नाथम्-अशेष-लोकं	आपही नाथ हैं समस्त लोकों के
रुषा	(उन लोकों को) क्रोध में
न्यरुन्धां	पीडित करते थे
निज-वासना-अन्धौ	स्वयं की वासनाओं से अन्धे हो कर

एक का नाम हिरण्यकशिपु था और दूसरा हिरण्याक्ष के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस सम्पूर्ण लोक को जिसके आप ही स्वामी हैं, वे दोनों अपनी वासनाओं से अन्धे हो कर पीडित करते रहते थे।

तयोर्हिरण्याक्षमहासुरेन्द्रो
रणाय धावन्ननवाप्तवैरी ।
भवत्प्रियां क्ष्मां सलिले निमज्य
चचार गर्वाद्विनदन् गदावान् ॥९॥

तयो: -	उन में से

हिरण्याक्ष-महासुरेन्द्र:	हिरण्याक्ष्य महा असुर
रणाय धावन्-	युद्ध के लिये ललकारता हुआ
अनवाप्त-वैरी	न पा कर किसी वैरी को
भवत्-प्रियां क्ष्मां	आपकी प्रिया पृथ्वी को
सलिले निमज्य	जल में डुबो कर
चचार गर्वात्-विनदन्	घूमता फिरा गर्व से दहाडता हुआ
गदावान्	गदा लेकर

उनमें से महा असुर हिरण्याक्ष युद्ध के लिये लालायित होकर ललकारता हुआ घूमता फिरा। कोई योग्य शत्रु को न पा कर उसने आपकी प्रिया पृथ्वी को जल में डुबो दिया, और गदा ले कर गर्व से दहाडता हुआ घूमने लगा।

ततो जलेशात् सदृशं भवन्तं
निशम्य बभ्राम गवेषयंस्त्वाम् ।
भक्तैकदृश्य: स कृपानिधे त्वं
निरुन्धि रोगान् मरुदालयेश ॥१०॥

तत:	तब
जलेशात्	वरुण (समुद्र) के भीतर से
सदृशं भवन्तं	समान आपको (जान कर)
निशम्य	सुन कर
बभ्राम	घूमने लगा
गवेषयन् त्वाम्	खोजते हुए आपको
भक्तैक-दृश्य:	भक्तों को ही दिखने वाले
स कृपानिधे त्वं	वह कृपानिधि आप
निरुन्धि रोगान्	विनाश करिये रोगों का

मरुदालयेश	हे मरुदालयेश

तब जलों के देवता वरुण से यह जान कर कि आप ही उसके सदृश हैं, वह रुक गया, और आपको खोजता हुआ घूमने लगा। केवल भक्तों को दृश्यमान, हे करुणानिधि, हे मरुदालयेश! ऐसे आप मेरे रोगों का विनाश करें।

दशक १२

स्वायम्भुवो मनुरथो जनसर्गशीलो
दृष्ट्वा महीमसमये सलिले निमग्नाम् ।
स्रष्टारमाप शरणं भवदङ्घ्रिसेवा-
तुष्टाशयं मुनिजनैः सह सत्यलोके ॥१॥

स्वायम्भुवः मनुः	स्वयम्भुव मनु
अथः जनसर्गशीलः	तब प्रजा उत्पादन में संलग्न थे
दृष्ट्वा महीम्-	(उन्होने) देख कर पृथ्वी को
असमये सलिले निमग्नाम्	असमय में जल में डूबे हुए
स्रष्टारम्-आप शरणं	ब्रह्मा के पास पहुंचे (उनकी) शरण में
भवत्-अङ्घ्रि-सेवा	आपके चरण कमलों की सेवा से
तुष्ट-आशयं	(वे) संतुष्ट मन वाले (थे)
मुनिजनैः सह	मुनिजनों के साथ
सत्यलोके	सत्यलोक में

स्वयंभुव मनु ने जो प्रजा प्रजनन में व्यस्त थे, देखा कि पृथ्वी असमय में जल में निमग्न है। वे अन्य मुनिजनों के साथ ब्रह्माकी शरण में सत्यलोक पहुंचे। उस समय ब्रह्मा का मन आपके चरण कमलों की सेवा करने से सन्तुष्ट था।

कष्टं प्रजाः सृजति मय्यवनिर्निमग्ना
स्थानं सरोजभव कल्पय तत् प्रजानाम् ।
इत्येवमेष कथितो मनुना स्वयंभू-
रम्भोरुहाक्ष तव पादयुगं व्यचिन्तीत् ॥ २ ॥

कष्टं	कष्ट (की बात) है
प्रजाः सृजति मयि-	प्रजा का सृजन करते हुए मैने
अवनिः -निमग्ना	पृथ्वी को निमग्न (देखा)

स्थानं	स्थान
सरोजभव	हे ब्रह्मा
कल्पय तत्-प्रजानाम्	रचिये तब प्रजा के लिये
इति-एवम्-एष	इस प्रकार यह
कथित: मनुना स्वयंभू: -	कहा जाने पर मनु के द्वारा ब्रह्मा
अम्भोरुहाक्ष	हे कमलनयन!
तव पादयुगं	आपके चरण युगलों (का)
व्यचिन्तीत्	ध्यान करने लगे

स्वायम्भुव मनु ने कहा कि " कष्ट की बात है कि जब मै प्रजा का सृजन कर रहा था, मैने पृथ्वी को जल मग्न देखा। अतएव हे ब्रह्मा! आप प्रजा के लिये स्थान की रचना कीजिये।' हे कमलनयन! मनु के ऐसा कहने पर ब्रह्मा आपके चरण युगल का ध्यान करने लगे।

हा हा विभो जलमहं न्यपिबं पुरस्ता-
दद्यापि मज्जति मही किमहं करोमि ।
इत्थं त्वदङ्घ्रियुगलं शरणं यतोऽस्य
नासापुटात् समभव: शिशुकोलरूपी ।३॥

हा हा विभो	हाय हाय भगवन
जलम्-अहं न्यपिबं	जल को मैने पीया था
पुरस्तात्-	पहले भी
अद्य-अपि मज्जति मही	आज भी डूबी जाती है पृथ्वी
किम्-अहं करोमि	क्या मैं करुं
इत्थं	इस प्रकार
त्वत्-अङ्घ्रि-युगलं	आपके चरण द्वयके
शरणं यत: -	शरण हुए

अस्य नासापुटात्	इसके (ब्रह्मा के) नासापुट से
समभव:	प्रकट हुए (आप)
शिशु-कोल-रूपी	वराह शिशु के रूप में

'हे भगवन! आश्चर्य और दुख की बात है कि मैने पहले भी समस्त जल पी लिया था फिर भी धरा जल मग्न ही है। मैं क्या करूं।' तब आपके चरण द्वय की शरण गये हुए ब्रह्मा के नासापुट से आप वराह शिशु के रूप में प्रकट हुए।

अङ्गुष्ठमात्रवपुरुत्पतित: पुरस्तात्
भोयोऽथ कुम्भिसदृश: समजृम्भथास्त्वम् ।
अभ्रे तथाविधमुदीक्ष्य भवन्तमुच्चै -
र्विस्मेरतां विधिरगात् सह सूनुभि: स्वै: ॥४॥

अङ्गुष्ठ-मात्र-वपु:-	अङ्गुष्ठ मात्र शरीर
उत्पतित:	(से) उत्पन्न हुए
पुरस्तात्	पहले
भूय: -अथ	फिर तब
कुम्भि-सदृश:	हाथी के समान
समजृम्भथा: - त्वम्	बढ गये आप
अभ्रे	आकाश में
तथा-विधम्-उदीक्ष्य	उस प्रकार का देख कर
भवन्तम्-उच्चै:	आपको, अत्यन्त
विस्मेरतां विधि: -अगात्	विस्मित हुए ब्रह्मा
सह सूनुभि: स्वै:	साथ ही पुत्रों के अपने

पहले आप अङ्गुष्ठ मात्र परिमाण में उत्पन्न हुए, फिर हाथी के समान बढ गये। आपको इस प्रकार देख कर आकाश में स्थित ब्रह्मा अपने पुत्रों (मरीचि आदि) के सङ्ग अत्यन्त विस्मित हो गये।

कोऽसावचिन्त्यमहिमा किटिरुत्थितो मे

नासापुटात् किमु भवेदजितस्य माया ।
इत्थं विचिन्तयति धातरि शैलमात्र:
सद्यो भवन् किल जगर्जिथ घोरघोरम् ॥५॥

क: -असौ-	कौन यह
अचिन्त्य-महिमा	अवर्णनीय महिमा (वाला)
किटि: -उत्थित:-	सूकर निकल आया है
मे नासापुटात्	मेरे नासिका पुट से
किमु भवेत्-	क्या ऐसा है
अजितस्य माया	(कि यह है) भगवान की माया
इत्थं विचिन्तयति	इस प्रकार सोचते हुए
धातरि	ब्रह्मा के
शैलमात्र:	पर्वत के समान
सद्य: भवन्	तुरन्त हो गये
किल जगर्जिथ	और निश्चय ही गर्जन करने लगे
घोरघोरं	घोर और भयंकर

ब्रह्मा आश्चर्य चकित हो कर विचार करने लगे कि वह अवर्णनीय महिमा वाला सूकर कौन था जो उनके नासिका पुट से निकल आया था, और क्या यह भगवान की माया थी। उसी समय तुरन्त आप पर्वताकार हो कर भयंकर गर्जना करने लगे।

तं ते निनादमुपकर्ण्य जनस्तप:स्था:
सत्यस्थिताश्च मुनयो नुनुवुर्भवन्तम् ।
तत्स्तोत्रहर्षुलमना: परिणद्य भूय-
स्तोयाशयं विपुलमूर्तिरवातरस्त्वम् ॥६॥

तं ते निनादम्-	उस आपके गर्जन
उपकर्ण्य	को सुन कर

जन:-तप:-स्था:	जन (लोक) तप: (लोक) में स्थित
सत्य-स्थिता: -च	और सत्य लोक में स्थित
मुनय:	मुनिजन
नुनुवु: -भवन्तम्	स्तवन करने लगे आपका
तत्-स्तोत्र-हर्षुल-मना:	उस स्तवन से हर्षित हुए मन वाले (आप)
परिणद्य भूय:	गर्जन करके फिर से
तोयाशयं	(उस प्रलय) जलाब्धि में
विपुल-मूर्ति: -	विशाल मूर्ति रूप
अवातर: -त्वम्	उतर गये आप

आपके उस भयंकर गर्जन को सुन कर जनलोक, तप:लोक एवं सत्य लोक में स्थित मुनिजन आपका स्तवन करने लगे। स्तवन से प्रसन्न हो कर आप फिर भीषण गर्जना करते हुए विशाल रूप हो कर प्रलय जलाब्धि में उतर गये।

ऊर्ध्वप्रसारिपरिधूम्रविधूतरोमा
प्रोत्क्षिप्तवालधिरवाङ्मुखघोरघोण: ।
तूर्णप्रदीर्णजलद: परिघूर्णदक्ष्णा
स्तोतृन् मुनीन् शिशिरयन्नवतेरिथ त्वम् ॥७॥

ऊर्ध्व-प्रसारि-	ऊपर को उठे हुए
परिधूम्र-विधूत-रोमा	काले और लोहित (रंग वाले) रोम
प्रोत्क्षिप्त-वालधि:	ऊंची उठी हुई पूंछ
अवाङ्-मुख-घोर-घोण:	नीचे की ओर (झुके हुए) भयंकर नथुने
तूर्ण-प्रदीर्ण-जलद:	अनायास तोड देने वाले बादलों को
परिघूर्णत्-अक्ष्णा	(चारों ओर) घूमते हुए नेत्रों से
स्तोतृन् मुनीन्	स्तुति करते हुए मुनियों को

शिशिरयन्-	रोमाञ्चित करते हुए
अवतेरिथ त्वम्	कूद गये आप

उस समय आपका स्वरूप इस प्रकार था - काले और लोहित रोम ऊपर की ओर उठे हुए थे, और पूंछ भी ऊपर की ओर उठी हुई थी, भयंकर नथुने नीचे की ओर झुके हुए थे और अनायास ही बादलों को छिन्न भिन्न कर देने वाले नेत्र चारो ओर घूम रहे थे। आपके इस स्वरूप को देख कर स्तुति करते हुए मुनिजन को रोमञ्चित करते हुए आप कूद पडे।

अन्तर्जलं तदनुसंकुलनक्रचक्रं
भ्राम्यत्तिमिङ्गिलकुलं कलुषोर्मिमालम् ।
आविश्य भीषणरवेण रसातलस्था -
नाकम्पयन् वसुमतीमगवेषयस्त्वम् ॥८॥

अन्तर्जलं	अन्त:स्थ जल के
तदनु-	तब फिर
संकुल-नक्र-चक्रं	व्याप्त ग्राह समूहों से
भ्राम्यत्-तिमिङ्गिल-कुलं	घूमते हुए तिमिङ्गल मत्स्य कुलों के
कलुष-उर्मि-मालम्	धूमिल तरंगों सहित
आविश्य	में प्रवेश कर के
भीषण-रवेण	भयंकर शब्द के द्वारा
रसातलस्थान्-	रसातल में स्थित (जीवों) को
आकम्पयन्	कम्पायमान करते हुए
वसुमतीम्-	पृथ्वी को
अगवेषय: -	खोजा
त्वम्	आपने

तब फिर उस जल में जिसके भीतर ग्राह के समूह स्थित थे और तिमिङ्गल मत्स्य के कुल इधर उधर घूम रहे थे, आप भयंकर शब्द करते हुए प्रवेश कर गये। इससे वह जल धूमिल हो गया, और आप रसातल में स्थित जन्तुओं को कम्पायमान करते हुए पृथ्वी को खोजने लगे।

दृष्ट्वाऽथ दैत्यहतकेन रसातलान्ते
संवेशितां झटिति कूटकिटिर्विभो त्वम् ।
आपातुकानविगणय्य सुरारिखेटान्
दंष्ट्राङ्कुरेण वसुधामदधा: सलीलम् ॥९॥

दृष्ट्वा-अथ	देख कर तब
दैत्य-हतकेन	असुर दुष्ट के द्वारा
रसातल-अन्ते	रसातल के अन्त में
संवेशितां	छुपाई हुई
झटिति	शीघ्र ही
कूट-किटि: -	मायावी सूकर
विभो त्वम्	हे भगवन! आप
आपातुकान्-	आक्रमक (असुर) को
अविगणय्य	अवहेलना करते ह्ये
सुरारि-खेटान्	असुर नीचों को
दंष्ट्र-अङ्कुरेण	दांत की चोंच के द्वारा
वसुधाम्-अदधा:	पृथ्वी को उठा लिया
सलीलम्	लीलापूर्वक

तब आपने देखा कि दुष्ट असुरों के द्वारा पृथ्वी रसातल के अन्त में छुपाई हुई है। हे भगवन! मायावी सूकर स्वरूप आपने शीघ्र ही आक्रमक नीच असुरों की अवहेलना करते हुए, पृथ्वी को दांत की नोक पर उठा लिया।

अभ्युद्धरन्नथ धरां दशनाग्रलग्न
मुस्ताङ्कुराङ्कित इवाधिकपीवरात्मा ।
उद्धूतघोरसलिलाज्जलधेरुदञ्चन्
क्रीडावराहवपुरीश्वर पाहि रोगात् ॥१०॥

अभ्युद्धरन्-अथ	उद्धार करते हुए तब

धरां	पृथ्वी का
दशन-अग्र-लग्नं	दांत के सामने के भाग में लगे हुए
मुस्त-अङ्कुर-अङ्कित इव	मुस्त (नामक दूर्वा) के अङ्कुर से अङ्कित के समान
अधिक-पीवर-आत्मा	और भी ज्यादा स्थूल शरीर वाले
उद्धूत-घोर-सलिलात्-जलधेः-	भीतर से (उन) घोर (प्रलय) जलों के समुद्र से
उदञ्चन्	निकलते हुए
क्रीडा-वराह-वपुः -ईश्वर	लीला सूकर शरीर हे ईश्वर!
पाहि रोगात्	रक्षा कीजिये रोगों से

हे ईश्वर! आप फिर उस समुद्र के घोर जलों से पृथ्वी का उद्धार करते हुए बाहर निकले। पृथ्वी आपके दंष्टाग्र पर वैसे ही शोभायमान हो रही थी जैसे सामान्य सूकर के दंष्टाग्र पर मुस्त नामक दूर्वा शोभायमान होती है। हे लीला सूकर शरीर धारी ईश्वर! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक १३

हिरण्याक्षं तावद्वरद भवदन्वेषणपरं
चरन्तं सांवर्ते पयसि निजजङ्घापरिमिते ।
भवद्भक्तो गत्वा कपटपटुधीर्नारदमुनि:
शनैरूचे नन्दन् दनुजमपि निन्दंस्तव बलम् ॥१॥

हिरण्याक्षम् तावत्-	हिरण्याक्ष को तब
वरद	हे वरद!
भवत्-अण्वेषणपरम्	आपको खोजने में लगे हुए को
चरन्तम् सांवर्ते पयसि	विचरते हुए प्रलय जल में
निज-जङ्घा-परिमिते	स्वयं की (उसकी) जङ्घा के बराबर (जल में)
भवत्-भक्त: गत्वा	आपके भक्त (नारद) जा कर
कपटपटुधी:-नारदमुनि:	चालाक बुद्धि वाले नारद मुनि
शनै:-ऊचे	धीरे धीरे बोले
नन्दन् दनुजम्-अपि	प्रशंसा करते हुए असुर की भी
निन्दन्-तव बलम्	(और) निन्दा करते हुए आपके बल की

असुर हिरण्याक्ष स्वयं की जङ्घा के बराबर प्रलय जल में विचरते हुए आपको खोजने में संलग्न था। आपके भक्त, चतुर बुद्धि नारद मुनि ने जाकर उसको नम्रता पूर्वक आपके बल की निन्दा करते हुए और उसकी प्रशंसा करते हुए कहा -

स मायावी विष्णुर्हरति भवदीयां वसुमतीं
प्रभो कष्टं कष्टं किमिदमिति तेनाभिगदित: ।
नदन् क्वासौ क्वासविति स मुनिना दर्शितपथो
भवन्तं सम्प्रापद्धरणिधरमुद्यन्तमुदकात् ॥२॥

स: मायावी विष्णु:-	वह मायावी विष्णु
हरति भवदीयां वसुमतीं	चुरा रहा है आपकी पृथ्वी

प्रभो	हे आदरणीय! (दैत्य)
कष्टं कष्टं किम्-इदम्-इति	खेद है, खेद है यह क्या, इस प्रकार
तेन-अभिगदित:	उनके (नारद) द्वारा कहे जाने पर
नदन् क्व-असौ	चिल्लाते हुए कहां है यह
क्व-असौ-इति	कहां है यह (विष्णु) इस प्रकार
स मुनिना	वह मुनि के द्वारा
दर्शित-पथ:	दिखाए जाने पर रास्ता
भवन्तं सम्प्रापत्-	आपके पास पहुंचा
धरणि-धरम्-	पृथ्वी को सम्भाले हुए
उद्यन्तम्-उदकात्	निकलते हुए जल में से

हे वन्दनीय दैत्य! खेद है, खेद है, वह वराह रूपी मायावी विष्णु आपकी पृथ्वी को चुरा रहा है।' इस प्रकार नारद के द्वारा कहे जाने पर वह 'कहां है कहां है वह (विष्णु)' इस प्रकार चिल्लाने लगा। फिर नारद मुनि के रास्ता दिखाए जाने पर वह, पृथ्वी को सम्भाले हुए जल से निकलते हुए आपके पास पहुंचा।

अहो आरण्योऽयं मृग इति हसन्तं बहुतरै-
र्दुरुक्तैर्विध्यन्तं दितिसुतमवज्ञाय भगवन् ।
महीं दृष्ट्वा दंष्ट्राशिरसि चकितां स्वेन महसा
पयोधावाधाय प्रसभमुदयुङ्क्था मृधविधौ ॥३॥

अहो आरण्य:-अयं मृग	अहो जङ्गली यह जानवर'
इति हसन्तं	इस प्रकार हंसते हुए
बहुतरै:-दुरुक्तै:-विध्यन्तं	बहुत प्रकार की दिरुक्तियों के द्वारा बेधता हुआ
दितिसुतम्-	असुर की
अवज्ञाय भगवन्	अवहेलना करते हुए, हे भगवन!
महीं दृष्ट्वा	पृथ्वी को देख कर

दंष्ट्राशिरसि	दातों के नोंकों के ऊपर
चकितां	कम्पित होती हुई
स्वेन महसा	अपनी महिमा से
पयोधौ-आधाय	समुद्र पर रख कर
प्रसभम्-	तुरन्त
उदयुङ्क्था	प्रस्तुत हो गये
मृधविधौ	युद्ध के लिये

हे भगवन! वह असुर हंसते हुए बोला ' अरे यह तो मात्र एक जङ्गली जानवर है" ऐसे और अनेक प्रकार के कटु शब्द बोल कर वह दैत्य आपकी भर्त्सना करने लगा। आपने देखा कि पृथ्वी दांतों की नोंकों पर रखी हुई कम्पायमान हो रही है, तब दैत्य की अवहेलना कर के आपने अपनी महिमा से पृथ्वी को समुद्र के ऊपर रख दिया और तुरन्त बलपूर्वक युद्ध करने के लिये प्रस्तुत हो गये।

गदापाणौ दैत्ये त्वमपि हि गृहीतोन्नतगदो
नियुद्धेन क्रीडन् घटघटरवोद्घुष्टवियता ।
रणालोकौत्सुक्यान्मिलति सुरसङ्घे द्रुतममुं
निरुन्ध्या: सन्ध्यात: प्रथममिति धात्रा जगदिषे ॥४॥

गदापाणौ दैत्ये	गदा हाथ में लिये दैत्य के
त्वम्-अपि हि	आप भी फिर
गृहीत-उन्नत-गद:	ले कर और ऊंची करके गदा को
नियुद्धेन क्रीडन्	युद्ध की लीला करते हुए
घट-घट-रव-उद्घुष्ट-वियता	घड घड शब्द से गुंजित हो जाने पर आकाश के
रण-आलोक-औत्सुक्यात्-	युद्ध को देखने की उत्सुकता से
मिलति सुरसङ्घे	सम्मिलित होने पर देवताओं के
द्रुतम्-अमुम् निरुन्ध्या:	'शीघ्र ही इसको रोकिये

सन्ध्यात: प्रथमम्-	सन्ध्या से पहले ही'
इति धात्रा जगदिषे	इस प्रकार ब्रह्मा के द्वारा कहा गया

दैत्य के हाथ में गदा थी इसलिये आपने भी गदा ले कर उसे ऊपर उठा लिया और युद्ध लीला करने लगे। गदाओं के टकराने से होने वाले घटघटाहट रव से आकाश के गुंजायमान होने पर देव गण युद्ध देखने की उत्सुकता से एकत्रित हो गये। तब ब्रह्मा ने आपसे कहा कि 'सन्ध्या होने से पहले ही आप उस दैत्य को रोक कर काबू में कर लें'।

गदोन्मर्दे तस्मिंस्तव खलु गदायां दितिभुवो
गदाघाताद्भूमौ झटिति पतितायामहह! भो: ।
मृदुस्मेरास्यस्त्वं दनुजकुलनिर्मूलनचणं
महाचक्रं स्मृत्वा करभुवि दधानो रुरुचिषे ॥५॥

गदोन्मर्दे तस्मिन्-	गदाओं के युद्ध उसमें
तव खलु गदायां	आपके निश्चय ही गदा के
दितिभुव:	असुर के (किये हुए)
गदा-घातात्-	गदा के प्रहार से
भूमौ झटिति पतितायाम्-	भूमि पर अनायास ही गिर जाने पर
अहह भो:	आश्चर्य हे!
मृदुस्मेर-आस्य:-त्वम्	मधुर मुस्कान मुख वाले आप
दनुजकुल-निर्मूलनचणम्	असुर कुल का विनाश करने में पटु
महाचक्रम् स्मृत्वा	महा (सुदर्शन) चक्र को याद करके
करभुवि दधानो	हथेली में ले कर
रुरुचिषे	शोभायमान हुए

गदाओं के उस युद्ध में, असुर के द्वारा किये हुए प्रहार से आपकी गदा धरती पर गिर गई। आश्चर्य है कि आपका मुख मधुर मुस्कान से खिल गया। तब आपने असुरों के कुल का संहार करने में पटु महान सुदर्शन चक्र का स्मरण किया और उसे हथेली में ले कर सुशोभित हुए।

तत: शूलं कालप्रतिमरुषि दैत्ये विसृजति

त्वयि छिन्दत्येनत् करकलितचक्रप्रहरणात् ।
समारुष्टो मुष्ट्या स खलु वितुदंस्त्वां समतनोत्
गलन्माये मायास्त्वयि किल जगन्मोहनकरी: ॥६॥

तत: शूलम्	फिर त्रिशूल को
कालप्रतिम्-अरुषि दैत्ये	कालाग्नि (के समान) कुपित (हो जाने पर) असुर के
विसृजति	(और) फैंका जाने पर
त्वयि छिन्दति-	(और) आपके (उस त्रिशूल को) काट देने पर
एनत्	उस को (त्रिशूल को)
कर-कलित-चक्र-प्रहरणात्	हाथ में लिये हुए चक्र की चोट से
समारुष्ट:	और अधिक क्रोधित हुए (दैत्य ने)
मुष्ट्या स खलु	मुक्कों से उसने निश्चय ही
वितुदन्-त्वाम्	प्रहार करते हुए आपके ऊपर
समतनोत् गलन्माये	भली प्रकार फैलाई वे अस्थिरमयी
माया: त्वयि किल	माया (जो) आप पर (अस्थिर हो जाती हैं)
जगत्-मोहनकरी:	(किन्तु) जगत को मोह में डाल देती है

कालाग्नि के समान कुपित असुर ने आपके ऊपर त्रिशूल फेंका जिसे आपने अपने हाथ में लिये हुए चक्र से काट दिया। इस पर अत्यन्त क्रोधित हुए दैत्य ने आप पर मुक्कों का प्रहार करना आरम्भ कर दिया और मायाओं का प्रयोग करने लगा जो मायायें जगत को तो मोहित कर देती हैं किन्तु माया से परे आप पर कोई प्रभाव नहीं डालतीं।

भवच्चक्रज्योतिष्कणलवनिपातेन विधुते
ततो मायाचक्रे विततघनरोषान्धमनसम् ।
गरिष्ठाभिर्मुष्टिप्रहृतिभिरभिघ्नन्तमसुरं
स्वपादाङ्गुष्ठेन श्रवणपदमूले निरवधी: ॥७॥

भवत्-चक्र-ज्योतिष्-कण-लव-निपातेन	आपके चक्र की ज्योति के अणु कण के पडने से
विधुते	नष्ट हो जाने पर

ततः माया-चक्रे	तब माया के चक्र के
वितत-घन-रोष-अन्ध-मनसम्	अत्यधिक घनघोर क्रोध से अन्धे हुए मन वाले
गरिष्ठाभिः-मुष्टि-प्रहृतिभिः-	घोर मुक्कों के प्रहारों से
अभिघ्नन्तम्-असुरम्	मारते हुए उस असुर को
स्व-पाद-अङ्गुष्ठेन	अपने पैर के अङ्गुठे से
श्रवण-पद-मूले	कर्णमूल पर
निरवधीः	प्रहार किया

आपके सुदर्शन चक्र की ज्योति के अणुकण के पडने से माया का चक्र विनष्ट हो गया। अत्यधिक क्रोध से अन्धे हुए मन वाला वह असुर आपके ऊपर घोर मुक्कों का प्रहार कर रहा था। आपने अपने पैर के अङ्गूठे से उसके कर्णमूल पर प्रहार किया।

महाकायः सोंऽयं तव चरणपातप्रमथितो
गलद्रक्तो वक्त्रादपतदृषिभिः श्लाघितहतिः ।
तदा त्वामुद्दामप्रमदभरविद्योतिहृदया
मुनीन्द्राः सान्द्राभिः स्तुतिभिरनुवन्नध्वरतनुम् ॥८॥

महाकायः सः-अयम्	विराट शरीर वाला वह यह
तव चरण-पात-प्रमथितः	आपके चरण प्रहार से मथित हुआ
गलत्-रक्तः वक्त्रात्-	बहते हुए रक्त के मुंह से
अपतत्-	गिर पडा
ऋषिभिः श्लाघित-हतिः	ऋषियों के द्वारा प्रशंसित वध
तदा त्वाम्-	तब आपका
उद्दाम-प्रमदभर-विद्योति-हृदया	असीम हर्ष से उत्फुल्ल हृदय वाले
मुनीन्द्राः	मुनीन्द्र गण
सान्द्राभिः स्तुतिभिः-	गहरी स्तुतियों से

अनुवन्-	स्तवन करने लगे
अध्वर-तनुम्	हे यज्ञपुरुष! आपका

विराट शरीर वाला वह दैत्य मुख से रक्त वमन करता हुआ गिर पडा। ऋषियों ने इस वध की प्रशंसा की। हे यज्ञपुरुष! अत्यन्त हर्ष से प्रफुल्लित हृदयवाले मुनिगण गम्भीर स्तुतियों के द्वारा आपका स्तवन करने लगे।

त्वचि छन्दो रोमस्वपि कुशगणश्चक्षुषि घृतं
चतुर्होतारोऽङ्घ्रौ स्रुगपि वदने चोदर इडा ।
ग्रहा जिह्वायां ते परपुरुष कर्णे च चमसा
विभो सोमो वीर्यं वरद गलदेशेऽप्युपसद: ॥९॥

त्वचि छन्द:	(आपकी) त्वचा में छन्द हैं
रोमसु-अपि कुशगण:-	रोमों में भी कुशागण हैं
चक्षुषि घृतम्	नेत्रों में घी है
चतुर्होतार:-अङ्घ्रौ	चारों होता आपके चरणों में हैं
स्रुग्-अपि वदने	स्रुक भी है मुख में
च-उदर इडा	और पेट में इडा है
ग्रहा जिह्वायां ते	आपकी जिह्वा में ग्रह (सोमरस का पात्र) है
परपुरुष	हे परम पुरुष!
कर्णे च चमसा	और कानों में चमस (भोजन सामग्री रखने के पात्र) हैं
विभो	हे विभो!
सोमो वीर्यम्	सोमरस आपका वीर्य है
वरद	हे वरद!
गलदेशे-अपि-उपसद:	और आपके कण्ठ में उपसद (इष्टियां) हैं

हे परम पुरुष! आपकी त्वचा में छन्द स्थित हैं। रोमों में कुशा समूह हैं, और नेत्रों में घी है। चारों होता आपके चरणों में हैं। मुख में स्रुक और उदर में इडा (पुरोडाश रखने का पात्र) का स्थान है। आपकी जिह्वा में ग्रह (सोमरस रखने का पात्र) और

कानों में चमस (भोजन सामग्री के पात्र) स्थित हैं। हे विभो! सोमरस आपका वीर्य है। हे वरद! उपसद (इष्टियां) आपके कण्ठ में स्थित हैं।

मुनीन्द्रैरित्यादिस्तवनमुखरैर्मोदितमना
महीयस्या मूर्त्या विमलतरकीर्त्या च विलसन् ।
स्वधिष्ण्यं सम्प्राप्त: सुखरसविहारी मधुरिपो
निरुन्ध्या रोगं मे सकलमपि वातालयपते ॥१०॥

मुनीन्द्रैः-इत्यादि-	मुनीन्द्रों के द्वारा इस प्रकार अनेक
स्तवन-मुखरैः-मोदित-मना	स्तुतियों के उच्चारण से प्रसन्न करने वाली मन को
मोदित-मना	प्रसन्न चित्त
महीयस्या मूर्त्या	महनीय मूर्ति
विमलतर-कीर्त्या च	और बिमल कीर्ति
विलसन्	से शोभायमान
स्वधिष्ण्यं सम्प्राप्तः	अपने धाम को चले गये
सुख-रस-विहारी	हे स्वानन्द विहारी!
मधुरिपो	हे मधुरिपू!
निरुन्ध्या रोगम् मे	नष्ट करिये मेरे रोगों को
सकलम्-अपि	समस्त भी
वातालयपते	हे वातालयपति!

हे स्वानन्द विहारी! इस प्रकार मुनियों के द्वारा गाई गई मन को प्रसन्न करने वाली अनेक स्तुतियों के उच्चारण से प्रसन्न चित्त आप अपने निवास स्थान वैकुण्ठ को चले गये। हे मधुरिपु! हे वातालयपति! मेरे भी समस्त रोगों का विनाश कीजिये।

दशक १४

समनुस्मृततावकाङ्घ्रियुग्म:
स मनु: पङ्कजसम्भवाङ्गजन्मा ।
निजमन्तरमन्तरायहीनं
चरितं ते कथयन् सुखं निनाय ॥१॥

समनुस्मृत-तावक-अङ्घ्रि-युग्म:	भलीभांति स्मरण करते हुए आपके दोनों चरण कमलों को
स: मनु:	वह मनु
पङ्कजसम्भव-अङ्ग-जन्मा	कमल योनि (ब्रह्मा) के अङ्ग से जन्मा
निजम्-अन्तरम्-	अपने मन्वन्तर को
अन्तराय-हीनम्	(जो) सब प्रकार के विकारों से हीन था
चरितम् ते कथयन्	आपकी कथाओं को कहते हुए
सुखं निनाय	सुख से व्यतीत किया

उन मनु ने, जो कमलयोनि ब्रह्मा के अङ्ग से पैदा हुए थे, और आपके दोनों चरण कमलों का ध्यान करते रहते थे, आपकी लीला कथाओं को कहते हुए, अपने विकारहीन मन्वन्तर का सुख से वहन किया।

समये खलु तत्र कर्दमाख्यो
द्रुहिणच्छायभवस्तदीयवाचा ।
धृतसर्गरसो निसर्गरम्यं
भगवंस्त्वामयुतं समा: सिषेवे ॥२॥

समये खलु तत्र	उस समय निश्चय ही वहां पर
कर्दम-आख्य:	कर्दम नाम के
द्रुहिण-च्छाय-भव:-	(जो) ब्रह्मा की छाया से उत्पन्न हुए थे,
तदीय-वाचा	उनके (ब्रह्मा के) आदेश से
धृत-सर्ग-रस:	ले कर सृजन की इच्छा

निसर्ग-रम्यं भगवन्-त्वाम्-	स्वभावत: सुन्दर भगवन आपको
अयुतम् समा:	दस हजार वर्ष तक
सिषेवे	सेवा करते रहे (तपस्या करते रहे)

हे भगवन! उसी समय ब्रह्मा की छाया से उत्पन्न कर्दम नाम के ऋषि ब्रह्मा के ही आदेश से, सृजन करने की इच्छा से, दस हजार वर्षों तक, स्वभावत: सुन्दर आपकी ही तपस्या करते रहे।

गरुडोपरि कालमेघक्रमं
विलसत्केलिसरोजपाणिपद्मम् ।
हसितोल्लसिताननं विभो त्वं
वपुराविष्कुरुषे स्म कर्दमाय ॥३॥

गरुड-उपरि	गरुड के ऊपर
काल-मेघ-क्रमम्	काले मेघों के समान
विलसत्-केलि-सरोज-पाणि-पद्मम्	शोभायमान कोमल कमल हस्तकमल में
हसित-उल्लासित-आननम्	मुस्कुराते हुए प्रफुल्ल मुख वाले
विभो त्वं	हे विभो! आप ने
वपु:-आविष्कुरुषे स्म	(अपने) विग्रह को प्रकट किया
कर्दमाय	कर्दम के लिये

हे विभो! गरुड पर सवार, काले मेघों के समान श्याम, हस्तकमल में कोमल कमल लिये हुए, मुस्कुराते हुए प्रफुल्ल मुख वाले आपने अपना अति शोभनीय विग्रह कर्दम के लिये प्रकट किया।

स्तुवते पुलकावृताय तस्मै
मनुपुत्रीं दयितां नवापि पुत्री: ।
कपिलं च सुतं स्वमेव पश्चात्
स्वगतिं चाप्यनुगृह्य निर्गतोऽभू: ॥४॥

स्तुवते पुलक-आवृताय तस्मै	स्तुति करते हुए, रोमाञ्चित हुए उसको

मनुपुत्रीम्	मनु की पुत्री
दयिताम्	पत्नी के रूप में
नव-अपि पुत्रीः	और नौ पुत्रियां भी
कपिलं च सुतम्	और कपिल पुत्र को
स्वम्-एव पश्चात्	स्वयं को भी अन्त में
स्वगतिं च-अपि-अनुगृह्य	और मोक्ष भी प्रदान कर के
निर्गतः-अभूः	(आप) चले गये

रोमाञ्चित हुए स्तुति करते हुए हर्ष और रोमाञ्च से परिपूर्ण कर्दम को आपने पत्नी रूप में मनु की पुत्री को दिया, नौ पुत्रियां और कपिल नामक पुत्र को भी दिया। अन्त में आपने स्वयं को दे दिया और मोक्ष भी प्रदान कर के चले गये।

स मनुः शतरूपया महिष्या
गुणवत्या सुतया च देवहूत्या ।
भवदीरितनारदोपदिष्टः
समगात् कर्दममागतिप्रतीक्षम् ॥५॥

सः मनुः	वह मनु
शतरूपया महिष्या	शतरूपा रानी
गुणवत्या सुतया देवहूत्या च	और गुणवती पुत्री देवहुत्ति के साथ
भवत्-ईरित-नारद-उपदिष्टः	अपके द्वारा प्रेरित नारद के कहने पर
समगात् कर्दमम्-	गये कर्दम के पास
आगति-प्रतीक्षं	(जो उनके) आने की प्रतीक्षा कर रहे थे

वह मनु, अपनी रानी शतरूपा और गुणवती पुत्री देवहूति के साथ कर्दम के पास गये जो उन्ही के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। आपकी प्रेरणा से नारद ने उन्हे यह आदेश दिया था।

मनुनोपहृतां च देवहूतिं
तरुणीरत्नमवाप्य कर्दमोऽसौ ।
भवदर्चननिवृतोऽपि तस्यां

दृढशुश्रूषणया दधौ प्रसादम् ॥६॥

मनुना-उपहृताम् च	और मनु के द्वारा उपहार स्वरूप दी हुई
देवहूतिं तरुणी-रत्नम्-	देवहुति तरुणीरत्न को
अवाप्य कर्दमः-असौ	पा कर इन कर्दम ने
भवत्-अर्चन-निर्वृतः-अपि	आपकी अर्चना में लगे रहने पर भी
तस्यां दृढ-शुश्रूषणया	उसकी दृढ सेवा से
दधौ प्रसादम्	धारण किया प्रसन्नता को

मनु ने तरुणी रत्न देवहूति को कर्दम को उपहार में दे दिया। कर्दम निरन्तर आपकी अर्चना में सन्लग्न रहते थे, फिर भी देवहुति की दृढ सेवा से वे प्रसन्न हो गये।

स पुनस्त्वदुपासनप्रभावा-
द्दयिताकामकृते कृते विमाने ।
वनिताकुलसङ्कुलो नवात्मा
व्यहरद्देवपथेषु देवहूत्या ॥७॥

सः पुन;-	वह (कर्दम) फिर
त्वत्-उपासन-प्रभावात्-	आपकी उपासना के प्रभाव से
दयिता-काम-कृते	(और) अपनी पत्नी की इच्छा के कारण
कृते विमाने	निर्मित विमान में
वनिता-कुल-सङ्कुलः	वनिताओं के समूहों के साथ
नव-आत्मा	नये स्वरूप से
व्यहरत्-देवपथेषु	विचरने लगे देव उद्यानों में
देवहूत्या	देवहुति के संग

तब उसने आपकी अर्चना के प्रभाव से और अपनी पत्नी की कामना की पूर्ति के लिये एक विमान की रचना की। उस विमान में वनिताओं के समूह थे। कर्दम नया स्वरूप धारण कर के उस विमान में देवहुति के संग देव उद्यानों में विचरने

लगे।

शतवर्षमथ व्यतीत्य सोऽयं
नव कन्या: समवाप्य धन्यरूपा: ।
वनयानसमुद्यतोऽपि कान्ता-
हितकृत्त्वज्जननोत्सुको न्यवात्सीत् ॥८॥

शत-वर्षम्-अथ व्यतीत्य	सौ वर्षों को तब ब्यतीत कर के
स:-अयम्	वह यह (कर्दम)
नव कन्या: समवाप्य	नौ कन्याओं को प्राप्त कर
धन्य-रूपा:	(जो) अत्यन्त रूपवती थी
वन-यान-समुद्यत:-अपि	वन को जाने के लिये तत्पर होते हुए भी
कान्ता-हित-कृत्-	पत्नी के हित के लिये
त्वत्-जनन-उत्सुक:	आपके उत्पन्न होने की उत्सुकता में
न्यवात्सीत्	रुके रहे (वन को नहीं गये)

इस प्रकार कर्दम ने सौ वर्ष व्यतीत कर दिये और उन्हे नौ रूपवती कन्याओं की प्राप्ति हुई। फिर वन को जाने के लिये तत्पर होते हुए भी, पत्नी के हित के लिये और आपके जन्म की उत्सुकता में वे घर में हीरुके रहे और वन नहीं गये।

निजभर्तृगिरा भवन्निषेवा-
निरतायामथ देव देवहूत्याम् ।
कपिलस्त्वमजायथा जनानां
प्रथयिष्यन् परमात्मतत्त्वविद्याम् ॥९॥

निज-भर्तृ-गिरा	अपने पति के कहने से
भवत्-निषेवा-निरतायाम्-	आपकी सेवा में लगी हुई
अथ देव	तत्पश्चात हे देव
देवहूत्याम्	देवहुति में
कपिल-त्वम्-अजायथा	कपिल (के रूप मे) आप पैदा हुए

जनानाम्	लोगों में
प्रथयिष्यन्	प्रकट करने के लिये
परम-आत्म-तत्व-विद्याम्	परम आत्म तत्व की विद्या को

अपने पति के कहने से देवहुति आपकी सेवा में संलग्न हो गई। तत्पश्चात हे देव! आपने उसके गर्भ से कपिल के रूप में जन्म लिया। आपके इस अवतार का उद्येश्य था कि लोगों में परम तत्व की विद्या प्रकट हो।

वनमेयुषि कर्दमे प्रसन्ने
मतसर्वस्वमुपादिशन् जनन्यै ।
कपिलात्मक वायुमन्दिरेश
त्वरितं त्वं परिपाहि मां गदौघात् ॥१०॥

वनम्-एयुषि कर्दमे प्रसन्ने	वन को आये हुए कर्दम के प्रसन्न हुए
मत-सर्वस्वम्-	सिद्धान्तो को सम्पूर्ण
उपादिशन् जनन्यै	उपदेश करते हुए जननी को
कपिल-आत्मक	कपिलात्मक
वायु-मन्दिर-ईश	हे वायु मन्दिर के ईश्वर!
त्वरितम्	शीघ्रता से
त्वं परिपाहि	आप रक्षा करें
माम् गद-औघात्	मेरी रोग समूहों से

प्रसन्न चित्त कर्दम वन को चले गये। तब आपने अपनी माता को सम्पूर्ण सिद्धान्तो का उपदेश दिया। हे कपिलात्मक वायु मन्दिर के ईश्वर! समस्त रोग समूहों से मेरी शीघ्रता से रक्षा करें।

दशक १५

मतिरिह गुणसक्ता बन्धकृत्तेष्वसक्ता
महदनुगमलभ्या भक्तिरेवात्र साध्या
त्वमृतकृदुपरुन्धे भक्तियोगस्तु सक्तिम् ।
कपिलतनुरिति त्वं देवहूत्यै न्यगादी: ॥१॥

मति: इह	बुद्धि यहां (इस जगत में)
गुण-सक्ता	(तीनों) गुणों (विषयों) में लगी हुई (आसक्त)
बन्धकृत्-	बन्धन करती है
तेषु-असक्ता तु-	उनमें (विषयों में) न लगी हुई (अनासक्त बुद्धि) निश्चय ही
अमृत-कृत्-	मोक्ष (प्रदान) करती है
उपरुन्धे	(किन्तु) रोक देती है
भक्तियोग:-तु	भक्ति योग भी
सक्तिम्	आसक्ति को
महत्-अनुगम-लभ्या भक्ति:-	महान लोगों के अनुगमन से प्राप्त होने वाली भक्ति
एव-अत्र साध्या	ही यहां साधन करने योग्य है
कपिल-तनु:-इति त्वं	कपिल के शरीरी आपने
देवहूत्यै न्यगादी:	देवहुति को कहा

इस संसार में, विषयों में आसक्त बुद्धि बन्धनकारक होती है और अनासक्त बुद्धि मोक्ष दिलाने वाली होती है। किन्तु भक्ति योग तो आसक्ति को भी रोक देता है। वह भक्ति महान लोगो का अनुगमन करने से प्राप्त होती है। भक्ति ही यहां, इस संसार में, साधना कर के प्राप्त करने योग्य है। इस प्रकार कपिल के रूप में प्रकट हुए आपने देवहुति को कहा।

प्रकृतिमहदहङ्काराश्च मात्राश्च भूता-
न्यपि हृदपि दशाक्षी पूरुष: पञ्चविंश: ।
इति विदितविभागो मुच्यतेऽसौ प्रकृत्या
कपिलतनुरिति त्वं देवहूत्यै न्यगादी: ॥२॥

प्रकृति-महत्-अहङ्कारा:-च	प्रकृति, महत तत्व, और अहंकार
मात्रा:-च	और (पांच) तन्मात्राएं
भूतानि-अपि	(पञ्च) भूत भी
हृत्-अपि	मन भी
दश-आक्षी	दस इन्द्रियां
पूरुष: पञ्चविंश	पुरुष पचीसवां
इति विदित-विभाग:	यह जाना हुआ है विभाग
मुच्यते-असौ प्रकृत्या	(जिसका) मुक्त हो जाता है यह (वह) प्रकृति से
कपिल-तनु:-इति त्वं	कपिल शरीरी इस प्रकार आपने
देवहूत्यै न्यगादी:	देवहुति को कहा

मूल प्रकृति, महत तत्व, अहंकार, पांच तन्मात्राएं (शब्द, स्पर्श, गन्ध, रूप और रस), पञ्च महाभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल, और पृथ्वी), मन (अन्त:करण), दस इन्द्रियां, (पांच ज्ञानेन्द्रियां - सुनना, देखना, स्पर्श करना, और स्वाद लेना), (पांच कर्मेन्द्रियां - जिह्वा, हाथ, पांव, जननेन्द्रिय और बाह्येन्द्रिय), और पचीसवां स्वयं पुरुष (आत्मन), इस प्रकार इन पचीस विभागों को जिसने जान लिया है, वह प्रकृति (माया) से मुक्त हो जाता है। कपिल शरीरी आपने इस प्रकार देवहुति को कहा।

प्रकृतिगतगुणौघैर्नाज्यते पूरुषोऽयं
यदि तु सजति तस्यां तत् गुणास्तं भजेरन् ।
मदनुभजनतत्त्वालोचनै: साऽप्यपेयात्
कपिलतनुरिति त्वं देवहूत्यै न्यगादी: ॥३॥

प्रकृति-गत-गुण-औघै:-	प्रकृति के गुण समूहों से
न-आज्यते पूरुष:-अयं	नहीं प्रभावित होता है यह पुरुष
यदि तु सजति तस्यां	किन्तु यदि आसक्त हो जाता है उसमें (प्रकृति के गुणों में)
तत् गुणा:-तं भजेरन्	(तब) वे गुण उसको (पुरुष को) वशीभूत कर लेती हैं
मत्-अनुभजन-	मुझे निरन्तर भजते हुए

तत्-तु-आलोचनैः	और फिर (मेरे तत्व के) आलोचन से
सा-अपि-अपेयात्	वह (प्रकृति) भी हट जाती है
कपिलतनुः-इति त्वं	कपिल शरीरी आपने
देवहूत्यै न्यगादीः	देवहुति को इस प्रकार बताया

प्रकृति के गुण समूह पुरुष को प्रभावित नहीं करते, किन्तु यदि वह स्वयं उन गुणों में आसक्त हो जाता है तब वे गुण उस पुरुष को वशीभूत कर लेते हैं। निरन्तर मेरा भजन करते हुए और सतत मेरे तत्व की जिज्ञासा में लगे हुए पुरुष से प्रकृति हट जाती है। इस प्रकार कपिल शरीरी आपने देवहुति को कहा।

विमलमतिरुपात्तैरासनाद्यैर्मदङ्गं
गरुडसमधिरूढं दिव्यभूषायुधाङ्कम् ।
रुचितुलिततमालं शीलयेतानुवेलं
कपिलतनुरिति त्वं देवहूत्यै न्यगादीः ॥४॥

विमल-मतिः-	निर्मल बुद्धि वाले
उपात्तैः-आसन-आद्यैः-	प्राप्त किया है जिसे (बुद्धि को) आसनादि (के अभ्यास के द्वारा)
मत्-अङ्गम् गरुड-समधिरूढम्	(फिर) मेरे विग्रह (को, जो) गरुड पर आरूढ
दिव्य-भूषा-आयुध-अङ्कम्	दिव्य भूषणों तथा आयुधों से विभूषित अङ्गों वाले
रुचि-तुलित-तमालम्	सुन्दर तमाल से तुल्य
शीलयेत-अनुवेलं	अनुशीलन करे निरन्तर
कपिल-तनुः इति त्वं	कपिल शरीरी इस प्रकार आपने
देवहूत्यै न्यगादीः	देवहुति को कहा

जिस मनुष्य ने आसन आदि सिद्धान्तों का अभ्यास कर के निर्मल बुद्धि को पाया है, उसे चाहिये कि फिर वह मेरे उस विग्रह का निरन्तर ध्यान करे, जो गरूड पर आरूढ है, जिसके अङ्ग दिव्य आभूषणों और आयुधों से विभूषित है, और जो तमाल के समान अतुलनीय कान्तिमान है। इस प्रकार कपिल तनु धारी आपने देव्हुति को कह।

मम गुणगणलीलाकर्णनैः कीर्तनाद्यै-
र्मयि सुरसरिदोघप्रख्यचित्तानुवृत्तिः ।

भवति परमभक्तिः सा हि मृत्योर्विजेत्री
कपिलतनुरिति त्वं देवहूत्यै न्यगादीः ॥५॥

मम-गुण-गण-लीला-आकर्णनैः	मेरे गुणों के समूहों और लीलाओं के सुनने से
कीर्तन-आद्यैः	(और) कीर्तन आदि से
मयि	मुझमें
सुर-सरित्-ओघ-प्रख्य-चित्त-अनुवृत्तिः	गङ्गा के प्रवाह के समान चित्त वृत्ति
भवति परम-भक्तिः	हो जाती है, (जो) परम भक्ति (है)
सा हि	वह ही
मृत्योः-विजेत्री	मृत्यु को जीतने वाली (होती है)
कपिल-तनुः-इति त्वं	कपिल शरीरी इस प्रकार आपने
देवहूत्यै न्यगादीः	देवहुति को कहा

मेरे गुणो के समूहॊ के बारे में, और मेरी लीलाओं के विषय में अविरल सुनते रहने से, चित्तवृत्ति गङ्गा के प्रवाह के समान निर्मल हो जाती है। यही परम भक्ति है और यही मृत्यु पर विजय प्राप्त करवाने वाली है। इस प्रकार कपिल रूप में अवतरित आपने देवहुति को उपदेश दिया।

अहह बहुलहिंसासञ्चितार्थैः कुटुम्बं
प्रतिदिनमनुपुष्णन् स्त्रीजितो बाललाली ।
विशति हि गृहसक्तो यातनां मय्यभक्तः
कपिलतनुरितित्वं देवहूत्यै न्यगादीः ॥६॥

अहह	खेद है
बहुल-हिंसा-सञ्चित-अर्थैः	बहुत हिंसा से सञ्चित किये हुए धन से
कुटुम्बं	परिवार का
प्रतिदिनम्-अनुपुष्णन्	प्रतिदिन भरण पोषण करते हुए
स्त्रीजितः	स्त्री से जीता हुआ

बाललाली	बालको का लालन पालन (करता हुआ)
विशति हि	पैठ जाता ही है
गृहसक्त:	गृहासक्ति में
यातनां	(और) यातनाए झेलता है
मयि-अभक्त:	मुझमें अभक्त हो कर
कपिल-तनु:-इति त्वं	कपिल शरीरी इस प्रकार आपने
देवहूत्यै न्यगादी:	देवहुति को कहा

कपिल के रूप में आपने देवहुति को उपदेश दिया कि यह कितने दुख की बात है कि नाना प्रकार की हिंसाओं से अर्जित धन के द्वारा अपने परिवार का भरण पोषण करता हुआ, स्त्री के वशीभूत हो कर बालकों का लालन पालन करता हुआ, गृहासक्ति में पूर्णतया लिप्त हो जाता है। इस प्रकार मेरा अभक्त होकर मनुष्य (नरकादि) यातनाएं झेलता है।

युवतिजठरखिन्नो जातबोधोऽप्यकाण्डे
प्रसवगलितबोध: पीडयोल्लङ्घ्य बाल्यम् ।
पुनरपि बत मुह्यत्येव तारुण्यकाले
कपिलतनुरिति त्वं देवहूत्यै न्यगादी: ॥७॥

युवति-जठर-खिन्न:	युवती (माता) के गर्भ में दुखी
जात-बोध:-अपि-अकाण्डे	उदय होने पर भी ज्ञान के, अकस्मात ही
प्रसव-गलित-बोध:	उत्पन्न होने के समय भूल जाने से उस ज्ञान को
पीडया-उल्लङ्घ्य बाल्यं	अत्यन्त कठिनाइयों से पार करके बालपन को
पुन:-अपि बत मुह्यति-एव	फिर से भी हा! मोहित हो जाता है
तारुण्य-काले	युवावस्था के समय में
कपिल-तनु:-इति त्वं	कपिल शरीरी इस प्रकार आपने
देवहूत्यै न्यगादी:	देवहुति को कहा

युवती माता के गर्भ मे पडकर, उस दुख से खिन्न जीव को, यद्यपि ज्ञान का बोध हो जाता है, अकस्मात जन्म लेने के समय

वह ज्ञान विलुप्त हो जाता है। फिर अत्यन्त कठिनाइयॊ से बाल्यकाल को पार कर के वह युवावस्था मे पहुंचता है तब भी वह विषयों में सम्मोहित हो जाता है। इस प्रकार कपिल रूप में अवतरित आपने देवहुति को उपदेश दिया।

पितृसुरगणयाजी धार्मिको यो गृहस्थ:
स च निपतति काले दक्षिणाध्वोपगामी ।
मयि निहितमकामं कर्म तूदक्पथार्थं
कपिलतनुरिति त्वं देवहूत्यै न्यगादी: ॥८॥

पितृ-सुर-गण-याजी	पूर्वजों और सुरगण की पूजा करने वाला
धार्मिक: य: गृहस्थ:	धार्मिक जो गृहस्थ है
स च निपतति काले	वह गिर आ जाता है समयानुसार
दक्षिण-अध्व-उपगामी	दक्षिण पथ की ओर जाता हुआ
मयि निहितम्-	(किन्तु) मुझ में लगा दिया है
अकामं कर्म तु-	निष्काम कर्म निश्चय ही
उदक्-पथार्थं	उत्तर पथ से जाने वाला होता है
कपिल-तनु:-इति त्वं	कपिल शरीरी इस प्रकार आपने
देवहूत्यै न्यगादी:	देवहुति को कहा

जो मनुष्य पितृगण और देव गण की पूजा अर्चना करता है और धार्मिक प्रवृत्ति का है, वह समयानुसार दक्षिण पथ से जाता है। किन्तु जिसने अपने निष्काम कर्मों को मुझ में अर्पण किया है वह उत्तर पथ से जाने वाला होता है। इस प्रकार कपिल के रूप में आपने देवहुति को उपदेश दिया।

इति सुविदितवेद्यां देव हे देवहूतिं
कृतनुतिमनुगृह्य त्वं गतो योगिसङ्घै: ।
विमलमतिरथाऽसौ भक्तियोगेन मुक्ता
त्वमपि जनहितार्थं वर्तसे प्रागुदीच्याम् ॥९॥

इति सुविदित-वेद्यां	इस प्रकार जो जान गई थी भली प्रकार विद्या को
देव हे	हे देव!

देवहूतिं कृतनुतिम्-	देवहुति जो आपकी वन्दना कर रही थी
अनुगृह्य त्वं गत:	उसको अनुगृहीत कर के आप चले गये
योगि-सङ्घै:	योगियों के समूह के साथ
विमल-मति:-अथ-असौ	निर्मल बुद्धि वाली यह
भक्ति-योगेन मुक्ता	भक्ति योग से मुक्त हो गई
त्वम्-अपि जन-हित-अर्थम्	आप भी जन हितार्थ
वर्तसे	रहते हैं
प्राक्-उदीच्याम्	पूर्वोत्तर दिशा में

हे देव! इस प्रकार जानने योग्य ब्रह्मतत्त्व का ज्ञान हो जाने पर देवहुति आपका स्तवन करने लगी। उस पर अनुग्रह कर के आप योगिजनों के साथ चले गये। वह भी भक्ति योग से मुक्त हो गई। जन हित के लिये आप पूर्वोत्तर दिशा में स्थित हो गये।

परम किमु बहूक्त्या त्वत्पदाम्भोजभक्तिं
सकलभयविनेत्रीं सर्वकामोपनेत्रीम् ।
वदसि खलु दृढं त्वं तद्विधूयामयान् मे
गुरुपवनपुरेश त्वय्युपाधत्स्व भक्तिम् ॥१०॥

परम	हे परम!
किमु बहूक्त्या	क्या होगा अधिक कह कर
त्वत्-पद्-अम्भोज-भक्तिं	आपके चरण कमलों की भक्ति
सकल-भय-विनेत्रीम्	समस्त भयॊ को नष्ट करने वाली
सर्व-काम-उपनेत्रीम्	समस्त अभीष्टों को सिद्ध करने वाली
वदसि खलु दृढं त्वं	कहते हैं निश्चय रूप से दृढतापूर्वक आप
तत्-विधूय-आमयान् मे	इसलिये विनष्ट करके कष्टों को मेरे
गुरुपवनपुरेश	हे गुरुपवनपुरेश!

त्वयि-उपाधत्स्व भक्तिम्	आपमें लगाइये भक्ति

हे परम! अधिक कहने से क्या लाभ? आपके चरण कमलों की भक्ति सभी भयों का नाश करने वाली है और सभी अभीष्टों को प्रदान करने वाली है, ऐसा आप निश्चय ही दृढता पूर्वक कहते है। हे गुरुपवनपुरेश! मेरे सभी रोगों कष्टों का विनाश कर के मुझ में अपनी भक्ति का सञ्चार कीजिये।

दशक १६

दक्षो विरिञ्चतनयोऽथ मनोस्तनूजां
लब्ध्वा प्रसूतिमिह षोडश चाप कन्या: ।
धर्मे त्रयोदश ददौ पितृषु स्वधां च
स्वाहां हविर्भुजि सतीं गिरिशे त्वदंशे ॥१॥

दक्ष: विरिञ्च-तनय: अथ	दक्ष, ब्रह्मा के पुत्र ने, तब
मनो:-तनूजाम् लब्ध्वा प्रसूतिम्-	मनु की पुत्री को पा कर, प्रसूति (नाम की)
इह	उसके द्वारा
षोडश च-आप कन्या:	और सोलह को पाया कन्याओं को
धर्मे त्रयोदश ददौ	धर्म को तेरह (कन्याएं) दे दी
पितृषु स्वधां च	और पितरों को स्वधा (नाम की कन्या दे दी)
स्वाहां हविर्भुजि	स्वाहा (नाम की कन्या को) अग्नि को (दे दी)
सतीं गिरिशे त्वत्-अंशे	सती (नाम की कन्या को) शंकर को (दे दी) (जो) आपके अंश हैं

तब, ब्रह्मा के पुत्र दक्ष ने मनु की पुत्री प्रसुति को पत्नी के रूप में पा कर, उससे सोलह कन्याएं प्राप्त कीं। उनमें से तेरह कन्याओं को धर्म को दे दिया, पितरों को स्वधा को दे दिया, स्वाहा को अग्नि को और सती को आपके ही अंश शंकर को दे दिया।

मूर्तिर्हि धर्मगृहिणी सुषुवे भवन्तं
नारायणं नरसखं महितानुभावम् ।
यज्जन्मनि प्रमुदिता: कृततूर्यघोषा:
पुष्पोत्करान् प्रववृषुर्नुनुवु: सुरौघा: ॥२॥

मूर्ति:-हि धर्म-गृहिणी	मूर्ति ने ही जो धर्म की पत्नी थी,
सुषुवे भवन्तं नारायणं	जन्म दिया आपको नारायण को
नरसखं महित-अनुभावं	नर सहित (जो) महान महिमाशाली है
यत्-जन्मनि	जिसके जन्म से (के समय)

प्रमुदिताः	अत्यन्त प्रसन्न हो गये
कृत-तूर्य-घोषाः	(और) करने लगे दुन्दुभियों का घोष
पुष्प-उत्करान् प्रववृषुः-	(और) फूलों के समूहों की वर्षा करने लगे
नुनुवुः सुरौघाः	(और) स्तुति करने लगे देवगण

धर्म की पत्नी मूर्ति ने ही अत्यन्त महिमाशाली आप नारायण को नर के साथ जन्म दिया। आपके उस जन्म के समय देव गण हर्षोल्लास सहित दुन्दुभियों का घोष करने लगे, और फूलों के समूहों की वर्षा करते हुए आपका स्तवन करने लगे।

दैत्यं सहस्रकवचं कवचैः परीतं
साहस्रवत्सरतपस्समराभिलव्यैः ।
पर्यायनिर्मिततपस्समरौ भवन्तौ
शिष्टैककङ्कटममुं न्यहतां सलीलम् ॥३॥

दैत्यम्	दैत्य को
सहस्र-कवचम् कवचैः परीतम्	सहस्रकवच (नामक) कवचों से सन्नद्ध
साहस्र-वत्सर-तपः-समर-अभिलव्यैः	सहस्र वर्षों तक तपस्या (और) युद्ध से (ही) भेद्य
पर्याय-निर्मित-तपः-समरौ	बारी बारे से किये हुए तप और युद्ध से
भवन्तौ	आप दोनों (नर नारायण) के द्वारा
शिष्ट-ऐक-कङ्कटम्-अमुम्	बच गया था एक कवच जब उसका
न्यहताम्	(आप दोनों ने) मार डाला
सलीलम्	बिना श्रम के

सहस्र कवचमक दैत्य हजारों कवचों से सन्नद्ध था। वे कवच हजारों वर्षों की तपस्या और युद्ध से ही भेदे जा सकते थे। आप दोनों, नर और नारायण ने, बारी बारे से युद्ध और तपस्या कर के उनका भेदन किया। जब मात्र एक कवच बच गया तब आप दोनों ने उसे बिना श्रम के मार डाला।

अन्वाचरन्नुपदिशन्नपि मोक्षधर्मं
त्वं भ्रातृमान् बदरिकाश्रममध्यवात्सीः ।
शक्रोऽथ ते शमतपोबलनिस्सहात्मा

दिव्याङ्गनापरिवृतं प्रजिघाय मारम् ॥४॥

अन्वाचरन्-	अभ्यास करते हुए
उपदिशन्-अपि	और आचरण करते हुए भी
मोक्ष-धर्मम्	मोक्ष धर्म का
त्वं भ्रातृमान्	आप भाई के सहित
बदरिकाश्रमम्-अध्यवात्सीः	बदरिकाश्रम में निवास करने लगे
शक्रः-अथ	इन्द्र ने तब
ते शम-तपः-बल-निस्सह-आत्मा	आपके (इन्द्रिय) निग्रह और तप के बल से ईर्ष्यालु हो कर
दिव्याङ्गना-परिवृतम्	दिव्याङ्गनाओं से घिरे हुए
प्रजिघाय	भेजा
मारम्	कामदेव को

आप मोक्ष धर्म का अभ्यास करने के साथ साथ उसका उपदेश और प्रचार भी करते हुए अपने भाई नर के साथ बदरिकाश्रम में निवास करने लगे। आपके इन्द्रिय निग्रह और तपोबल को देख कर ईर्ष्यालु इन्द्र ने दिव्याङ्गनाओं से घिरे हुए कामदेव को आपके पास भेजा।

कामो वसन्तमलयानिलबन्धुशाली
कान्ताकटाक्षविशिखैर्विकसद्विलासैः ।
विध्यन्मुहुर्मुहुरकम्पमुदीक्ष्य च त्वां
भीरुस्त्वयाऽथ जगदे मृदुहासभाजा ॥५॥

कामः	कामदेव
वसन्त-मलय-अनिल	वसन्त और मलय वायु
बन्धुशाली	बन्धुओं के साथ
कान्ता-कटाक्ष-विशिखैः-	कामिनियों के कटाक्षो के बाणों से
विकसत्-विलासैः	बढाते हुए विलास को

विध्यन्-मुहुः-मुहुः-	भेदते हुए बार बार
अकम्पम्-उदीक्ष्य च त्वाम्	और अविचलित देख कर आपको
भीरुः-	डरपोक
त्वया-अथ जगदे	आपके द्वारा तब कहा गया
मृदु-हास-भाजा	मन्द हंसी के साथ

कामदेव अपने बन्धुओं वसन्त और मलय वायु के साथ वहां गये। विलास को बढाने वाले कामिनियों के कटाक्षों से उसने आपको बार बार भेदना चाहा। किन्तु आपको अविचलित देख कर वह डर गया। उस डरपोक को आपने मन्द मुस्कान से कहा-

भीत्याऽलमङ्गज वसन्त सुराङ्गना वो
मन्मानसं त्विह जुषध्वमिति ब्रुवाणः ।
त्वं विस्मयेन परितः स्तुवतामथैषां
प्रादर्शयः स्वपरिचारककातराक्षीः ॥६॥

भीत्या-अलम्-	डरो मत
अङ्गज वसन्त सुराङ्गना वः	कामदेव, वसन्त और देवाङ्गनाओं तुम लोग
मत्-मानसम् तु-इह	मेरी इच्छा का ही यहां
जुषध्वम्-	अनुशीलन करो
इति ब्रुवाणः	इस प्रकार कह कर
त्वं	आप
विस्मयेन परितः	विस्मय से घिरे (वे)
स्तुवताम्-अथ-ऐषाम्	(जो) आपकी स्तुति कर रहे थे, तब उनको
प्रादर्शयः	दिखाया
स्वपरिचारक-कातराक्षीः	अपनी सेविकाओं को जो अत्यन्त सुन्दर नेत्रों वाली थी

कामदेव, वसन्त और देवाङ्गनाओं! तुम लोग डरो मत। मेरे पास यहां आकर मेरे मानस का अनुशीलन करो।' आपके इस

प्रकार कहने पर वे अत्यन्त विस्मित हो कर आपके निकट जा कर आपकी स्तुति करने लगे। स्तुति करते हुए उनको आपने अपनी सुन्दर नेत्रों वाली परिचारिकाओं को दिखलाया।

सम्मोहनाय मिलिता मदनादयस्ते
त्वद्दासिकापरिमलै: किल मोहमापु: ।
दत्तां त्वया च जगृहुस्त्रपयैव सर्व-
स्वर्वासिगर्वशमनीं पुनरुर्वशीं ताम् ॥७॥

सम्मोहनाय	सम्मोहित करने के लिये
मिलिता मदन-आदयः-	मिल कर मदन आदि ने
ते	आपको
त्वत्-दासिका-परिमलैः	आपकी दासियों की सुगन्ध से
किल मोहम्-आपुः	निश्चय ही मोहित हो गये
दत्तां त्वया च	और दी गई आपके द्वारा
जगृहुः-त्रपया-एव	ग्रहण किया लज्जा सहित ही
सर्व-स्वर्वासि-गर्व-शमनीं	सब स्वर्गवासियों के गर्व का शमन करने वाली
पुनः-उर्वशीं ताम्	फिर उस उर्वशी को

कामदेव अदि जो मिलकर आपको सम्मोहित करने के लिये आये थे, आपकी परिचारिकाओं की गन्ध से स्वयं ही मुग्ध हो गये। जब आपने स्वर्गवासी सुराङ्गनाओं के गर्व का शमन करने वाली उर्वशी उन्हे प्रदान की तब उन्होंने उसे अत्यन्त लज्जा सहित ग्रहण किया।

दृष्ट्वोर्वशीं तव कथां च निशम्य शक्र:
पर्याकुलोऽजनि भवन्महिमावमर्शात् ।
एवं प्रशान्तरमणीयतरावतारा-
त्त्वत्तोऽधिको वरद कृष्णतनुस्त्वमेव ॥८॥

दृष्ट्वा-उर्वशीं	देख कर उर्वशी को
तव कथां च निशम्य	और आपकी वार्ता को सुन कर

शक्रः	इन्द्र
पर्याकुलः-अजनि	व्याकुल हो गया
भवत्-महिमा-अवमर्शात्	आपकी महिमा न जानने से
एवं	और
प्रशान्त-रमणीयतर-अवतारात्	परम शान्त और अत्यन्त रमणीय अवतारों से
त्वत्तः-	आपसे
अधिकः	अधिक
वरद	हे वरद!
कृष्णतनुः-त्वम्-एव	कृष्ण स्वरूप आप ही हैं

उर्वशी को देख कर और आपकी वार्ताएं सुन कर, आपकी महिमा से अज्ञात होने के कारण इन्द्र व्याकुल हो गया। हे वरद! आपके इस अत्यन्त शान्त और रमणीय नर नारायण के अवतार से आपका कृष्ण स्वरूप अवतार ही अधिक महान है।

दक्षस्तु धातुरतिलालनया रजोऽन्धो
नात्यादृतस्त्वयि च कष्टमशान्तिरासीत् ।
येन व्यरुन्ध स भवत्तनुमेव शर्वं
यज्ञे च वैरपिशुने स्वसुतां व्यमानीत् ॥९॥

दक्षः-तु	दक्ष तो
धातुः-अति-लालनया	ब्रह्मा के अधिक स्नेह से
रजः-अन्धः	रजोगुण से (विशय राग से) अंधे हो गये
न-अति-आदृतः-त्वयि	न ही आदर करते थे आपका
च कष्टम्-	और खेद है
अशान्तिः-आसीत्	अशान्त रह्ते थे
येन व्यरुन्ध स	जिसके प्रभाव से उसने

भवत्-तनुम्-एव शर्वं	आपके स्वरूपभूत शंकर के (प्रति)
यज्ञे च वैर-पिशुने	और यज्ञ में वैर सूचित (करने वाला व्यवहार) किया
स्व-सुताम् व्यमानीत्	(और) अपनी कन्या का भी निरादर किया

ब्रह्मा के अत्यधिक स्नेह से लालित दक्ष रजोगुण जनित राग से अंधे हो गये। वे आपका भी आदर नहीं करते थे। इसी कारण वे अशान्त रहते थे। खेद है कि उन्होंने आपके ही अंश स्वरूप शंकर से यज्ञ में वैर सूचक व्यवहार किया और अपनी ही कन्या का निरादर किया।

क्रुद्धेशमर्दितमखः स तु कृत्तशीर्षो
देवप्रसादितहरादथ लब्धजीवः ।
त्वत्पूरितक्रतुवरः पुनराप शान्तिं
स त्वं प्रशान्तिकर पाहि मरुत्पुरेश ॥१०॥

क्रुद्ध-ईश-मर्दित-मखः	क्रोधित शंकर ने नष्ट कर दिया यज्ञ को
स तु कृत्त-शीर्षः	और उन्होंने काट दिया सिर
देव-प्रसादित-हरात्-अथ	देवों के द्वारा प्रसन्न किये जाने पर शंकर के द्वारा फिर
लब्ध-जीवः	पा कर जीवन
त्वत्-पूरित-क्रतुवरः	आपके द्वारा पूर्ण किया गया यज्ञ
पुनः-आप शान्तिं	फिर से (उसने) पाई शान्ति
स त्वं प्रशान्तिकर	वह आप प्रशान्तिकर!
पाहि मरुत्पुरेश	रक्षा कीजिये हे मरुत्पुरेश!

शंकर ने क्रोधित हो कर वह यज्ञ नष्ट भ्रष्ट कर दिया और दक्ष का सिर काट दिया। देवों के द्वारा शान्त और प्रसन्न किये जाने पर फिर शंकर ने दक्ष को जीवन दान दिया। आपने फिर उस महान यज्ञ को पूर्ण करवाया। तब कहीं दक्ष को शान्ति मिली। हे प्रशान्तिकर मरुत्पुरेश! वह आप मेरी रक्षा करें।

दशक १७

उत्तानपादनृपतेर्मनुनन्दनस्य
जाया बभूव सुरुचिर्नितरामभीष्टा ।
अन्या सुनीतिरिति भर्तुरनादृता सा
त्वामेव नित्यमगति: शरणं गताऽभूत् ॥१॥

उत्तानपाद-नृपते:-	उत्तानपाद राजा की
मनु-नन्दनस्य	मनु के पुत्र की
जाया बभूव सुरुचि:-	पत्नी थीं सुरुचि
नितराम्-अभीष्टा	अत्यन्त प्रिया
अन्या सुनीति:-इति	दूसरी सुनीति इस प्रकार (नाम की)
भर्तु:-अनादृता सा	पति से अवहेलित वह
त्वाम्-एव नित्यम्-	आपके ही प्रतिदिन
अगति:-शरणं	(जो) अशरणों के शरण हैं
गता-अभूत्	(शरण में) जाने वाली हुई

मनु पुत्र उत्तानपाद की पत्नी सुरुचि उनकी अत्यन्त प्रिया थी। दूसरी पत्नी सुनीति पति से अवहेलित और शरणहीन थी। वह नित्य प्रति आपकी ही शरण में जाती थी, आप जो अशरणों के शरण हैं।

अङ्के पितु: सुरुचिपुत्रकमुत्तमं तं
दृष्ट्वा ध्रुव: किल सुनीतिसुतोऽधिरोक्ष्यन् ।
आचिक्षिपे किल शिशु: सुतरां सुरुच्या
दुस्सन्त्यजा खलु भवद्विमुखैरसूया ॥२॥

अङ्के पितु:	गोद में पिता के
सुरुचि-पुत्रकम्-उत्तमं तं	सुरुचि के पुत्र उत्तम को उसको
दृष्ट्वा ध्रुव: किल	देख कर ध्रुव निश्चय ही

सुनीति-सुतः-अधिरोक्ष्यन्	सुनीति का पुत्र चढने लगा
आचिक्षिपे किल शिशुः	कठोरता से डांटा गया निश्चय ही वह बालक
सुतरां सुरुच्या	उस कारण से सुरुचि के द्वारा
दुस्सन्त्यजा खलु	कठिनाई से छोडी जाती है निश्चय ही
भवत्-विमुखैः-	आपसे विमुख (लोगों के द्वारा)
असूया	ईर्ष्या

पिता की गोद में सुरुचि के पुत्र उत्तम को देख कर सुनीति के पुत्र ध्रुव ने भी पिता की गोद में चढने का उपक्रम किया। फलस्वरूप उस बालक को सुरुचि ने अत्यधिक कठोरता से डांटा। निश्चय ही, आप से विमुख लोग ईर्ष्या और द्वेष को आसानी से नहीं छोड पाते।

त्वन्मोहिते पितरि पश्यति दारवश्ये
दूरं दुरुक्तिनिहतः स गतो निजाम्बाम् ।
साऽपि स्वकर्मगतिसन्तरणाय पुंसां
त्वत्पादमेव शरणं शिशवे शशंस ॥३॥

त्वत्-मोहिते पितरि	आपाकी (माया से) मोहित पिता के होने पर
पश्यति दार्-वश्ये	(जो) देखने लगे पत्नी के वशीभूत
दूरं दुरुक्ति-निहतः सः	हट गया कटुवचनों से आहत हुआ वह
गतः निज-अम्बाम्	गया अपनी माता के पास
सा-अपि	उसने भी
स्व-कर्म-गति-सन्तरणाय	स्वयं के कर्मों की गति को पार करने के लिये
पुंसां	मनुष्यों को
त्वत्-पादम्-एव शरणं	आपके चरण ही शरण हैं
शिशवे शशंस	बालक को बतलाया

आपकी माया से मोहित होने पर पत्नी के वशीभूत हुए पिता के चुपचाप देखते रह जाने पर कटुवचनों से आहत ध्रुव वहां से

हट गया और अपनी माता के पास गया। माता ने भी उस बालक को यही बतलाया कि मनुष्य मात्र को अपने कर्मों की गति को पार करने के लिये, एकमात्र आप ही की शरण में जाना होता है।

आकर्ण्य सोऽपि भवदर्चननिश्चितात्मा
मानी निरेत्य नगरात् किल पञ्चवर्ष: ।
सन्दृष्टनारदनिवेदितमन्त्रमार्ग-
स्त्वामारराध तपसा मधुकाननान्ते ॥४॥

आकर्ण्य स:-अपि	सुन कर वह भी
भवत्-अर्चन-निश्चित-आत्मा	आपकी अर्चना करने के लिये मन में निश्चित कर के
मानी निरेत्य नगरात्	स्वाभिमानी (वह) निकल कर नगर से
किल पञ्च-वर्ष:	मात्र पांच वर्षीय
सन्दृष्ट-नारद	देखा नारद को
निवेदित-मन्त्र-मार्ग:-	उपदेश पा कर मन्त्र मार्ग का
त्वाम्-आरराध तपसा	आपकी आराधना की तपस्या से
मधु-कानन-अन्ते	मधुवन के अन्दर जा कर

यह सुन कर वह पांच वर्षीय स्वाभिमानी बालक आपकी आराधना का मन में दृढ निश्चय कर के नगर से निकल गया। मार्ग में उसकी नारद जी से भेंट हुई और उनसे मन्त्र मार्ग की दीक्षा मिली। फिर वह मधुवन में जा कर आपकी आराधना और तपस्या करने लगा।

ताते विषण्णहृदये नगरीं गतेन
श्रीनारदेन परिसान्त्वितचित्तवृत्तौ ।
बालस्त्वदर्पितमना: क्रमवर्धितेन
निन्ये कठोरतपसा किल पञ्चमासान् ॥५॥

ताते विषण्ण-हृदये	पिता के दु:खी हृदय हो जाने पर
नगरीं गतेन श्रीनारदेन	(और) नगरी को जाने से श्री नारद के
परिसान्त्वित-चित्त-वृतौ	परिश्रान्त हो जाने पर चित्त के

बालः-त्वत्-अर्पित-मना:	बालक के आप पर केन्द्रित कर देने पर मन को
क्रम-वर्धितेन	शनै शनै बढते हुए
निन्ये कठोर-तपसा	पालन करते हुए कठिन तप के द्वारा
किल पञ्च-मासान्	निश्चय ही पांच महीने बिताए

ध्रुव के पिता उत्तानपाद का हृदय अत्यन्त दुखित हो गया। उसी समय नारद जी उनके नगर को गये और उनको सान्त्वना देते हुए शान्त किया। ध्रुव भी एकाग्र चित्त से आपकी आराधना करते रहा और क्रमश: उसकी तपस्या बढती गई। इस प्रकार उसने पांच महीने बिताए।

तावत्तपोबलनिरुच्छ्-वसिते दिगन्ते
देवार्थितस्त्वमुदयत्करुणार्द्रचेता: ।
त्वद्रूपचिद्रसनिलीनमते: पुरस्ता-
दाविर्बभूविथ विभो गरुडाधिरूढ: ॥६॥

तावत्-तपो-बल-निरुच्छ्-वसिते	तब (ध्रुव के) तप के बल से श्वासावरोध होने से
दिगन्ते	सभी दिशाओं में
देव-अर्थितः-त्वम्-	देवों के द्वारा प्रार्थना किये गये आप
उदयत्-करुणा-आर्द्र-चेता:	उदय होने से करुणा के पिघले हुए मन वाले
त्वत्-रूप-चित्-रस-निलीन-मते:	आपके स्वरूपभूत चिदानन्द रस में निमग्न मन वाले
पुरस्तात्-	के सामने
आविर्बभूविथ	प्रकट हो गये
विभो	हे प्रभू
गरुड-अधिरूढ:	गरुड पर सवार हो कर

ध्रुव के तप के बल से सभी दिशांओं में श्वासावरोध हो गया। तब देवताओं ने आपसे प्रार्थना की। ध्रुव के तप और देवों की प्रार्थना से करुणा के उदित होने से आपका मन पिघल गया। आपके स्वरूपभूत चिदानन्द रस में निमग्न उस बालक ध्रुव के समक्ष फिर आप गरुड के ऊपर आरूढ हो कर प्रकट हुए।

त्वद्दर्शनप्रमदभारतरङ्गितं तं

दृग्भ्यां निमग्नमिव रूपरसायने ते ।
तुष्टूषमाणमवगम्य कपोलदेशे
संस्पृष्टवानसि दरेण तथाऽऽदरेण ॥७॥

त्वत्-दर्शन	आपके दर्शन से
प्रमद-भार-तरङ्गितं तं	हर्षातिरेक से तरङ्गित वह
दृग्भ्याम् निमग्नम्-इव	नेत्रों से (आपकी छबि में) डूबे हुए के समान
रूप-रसायने ते	आपके रूपामृत में
तुष्टूषमाणम्-	स्तुति करने के इच्छुक उसको
अवगम्य	समझते हुए
कपोल-देशे	गाल पर
संस्पृष्टवान्-असि	छू दिया आपने
दरेण	शंख से
तथा-आदरेण	और प्यार से

आपके दर्शन जनित हर्ष के अतिरेक से ध्रुव का तरङ्गित मन आपके स्वरूप के अमृत में डूब गया। वह स्तुति करने का इच्छुक है यह समझ कर आपने उसके गाल पर प्यार से अपना शंख छुआ दिया।

तावद्विबोधविमलं प्रणुवन्तमेन-
माभाषथास्त्वमवगम्य तदीयभावम् ।
राज्यं चिरं समनुभूय भजस्व भूय:
सर्वोत्तरं ध्रुव पदं विनिवृत्तिहीनम् ॥८॥

तावत्-	तब तक
विबोध-विमलं	तत्व बोध से निर्मल हुए
प्रणुवन्तम्-एनम्-	स्तुति करते हुए उसको
अभाषथा:-त्वम्-	कहा आपने

अवगम्य तदीय-भावम्	जान कर उसके मनोभाव को
राज्यं चिरं समनुभूय	राज्य का अनन्त काल तक उपभोग कर के
भजस्व भूय:	पा जाओ फिर
सर्वोत्तरं ध्रुव पदं	सब से ऊपर (स्थित) ध्रुव पद को
विनिवृत्ति-हीनं	जो पुनरावृत्ति विहीन (स्थान) है

तब तक तत्त्व बोध से विमल हुआ ध्रुव आपकी स्तुति करने लगा। उसके मनोभाव को जानते हुए आपने कहा - ' चिरकाल तक राज्य का उपभोग कर लेने के पश्चात तुम सब से ऊपर स्थित ध्रुव पद को प्राप्त करो, जो पुनरावृत्ति रहित लोक है।'

इत्यूचिषि त्वयि गते नृपनन्दनोऽसा-
वानन्दिताखिलजनो नगरीमुपेत: ।
रेमे चिरं भवदनुग्रहपूर्णकाम-
स्ताते गते च वनमादृतराज्यभार: ॥९॥

इति-ऊचिषि	इस प्रकार कहे जाने पर
त्वयि गते	आपके चले जाने पर
नृपनन्दन:-असौ-	राजकुमार यह
आनन्दित-अखिल-जन:	आनन्द देता हुआ अखिल जनों को
नगरीम्-उपेत:	नगरी को पहुंचा
रेमे चिरं	उपभोग किया चिरकाल तक
भवत्-अनुग्रह-पूर्ण-काम:-	आपके अनुग्रह से पूर्ण काम हुआ वह
ताते गते च वनम्-	पिता के वन को चले जाने पर
आदृत-राज्य-भार:	सौंप दिया था (जिसने) राज्य भार

सभी लोगों को आनन्दित करता हुआ यह राजकुमार ध्रुव नगर को लौट गया। उसके पिता उसके ऊपर राज्य भार सौंप कर वन को चले गये। आपकी कृपा से पूर्ण काम हुए ध्रुव ने चिरकाल तक राज्य का उपभोग किया।

यक्षेण देव निहते पुनरुत्तमेऽस्मिन्

यक्षैः स युद्धनिरतो विरतो मनूक्त्या ।
शान्त्या प्रसन्नहृदयाद्धनदादुपेता-
त्वद्भक्तिमेव सुदृढामवृणोन्महात्मा ॥१०॥

यक्षेण	यक्ष के द्वारा
देव	हे ईश्वर!
निहते पुनः-	मार दिये जाने पर फिर
उत्तमे-अस्मिन्	उस उत्तम के
यक्षैः स युद्ध-निरतः	यक्ष के साथ वह युद्ध में लगा हुआ
विरतः मनु-उक्त्या	रुक जाने पर मनु के कहने से
शान्त्या प्रसन्न-हृदयात्-	(ध्रुव के) शान्त हृदय से प्रसन्न हो कर
धनदात्-उपेतात्	कुबेर के आगमन से
त्वत्-भक्तिम्-एव सुदृढाम्-	आपकी भक्ति ही सुदृढ
अवृणोत्-	वरण की
महात्मा	महात्मा (ध्रुव) ने

यक्ष के द्वारा उत्तम के मारे जाने पर ध्रुव उस यक्ष के साथ युद्ध करने लगे किन्तु फिर मनु के कहने पर युद्ध को रोक भी दिया। ध्रुव के शान्त स्वभाव से प्रसन्न हो कर कुबेर उसके पास पहुंचे। महात्मा ध्रुव ने कुबेर से भी आपमें दृढ भक्ति का ही वरदान मांगा।

अन्ते भवत्पुरुषनीतविमानयातो
मात्रा समं ध्रुवपदे मुदितोऽयमास्ते ।
एवं स्वभृत्यजनपालनलोलधीस्त्वं
वातालयाधिप निरुन्धि ममामयौघान् ॥११॥

अन्ते	अन्त में
भवत्-पुरुष-नीत-विमान-यातः	आपके पार्षदो के द्वारा लाये हुए विमान में जाते हुए
मात्रा समं	माता के संग

ध्रुवपदे मुदितः-अयम्-आस्ते	ध्रुव पद पर प्रसन्नता पूर्वक यह विराजमान हैं
एवं	और
स्व-भृत्य-जन-पालन-लोल-धीः-त्वं	अपने सेवकों के पालन में उद्यत मन वाले आप
वातालयाधिप	हे वातालयाधिप!
निरुन्धि	नष्ट करें
मम-आमय-औघान्	मेरे कष्ट समूहों का

आपके पार्षदों के द्वारा लाये गये विमान पर ध्रुव अपनी माता के संग चले गये। वे ध्रुव पद पर प्रसन्नता पूर्वक विराजमान हैं। इस प्रकार अपने सेवको के पालन में उद्यत हे वातालयाधिप! मेरे कष्ट समूहों का नाश करें।

दशक १८

जातस्य ध्रुवकुल एव तुङ्गकीर्ते-
रङ्गस्य व्यजनि सुत: स वेननामा ।
यद्दोषव्यथितमति: स राजवर्य-
स्त्वत्पादे निहितमना वनं गतोऽभूत् ॥१॥

जातस्य ध्रुवकुले-एव	पैदा हुए ध्रुव के कुल में ही
तुङ्ग-कीर्ते:-अङ्गस्य	उच्च कीर्ति वाले अङ्ग के
व्यजनि सुत: स वेन-नामा	पैदा हुआ एक पुत्र जिसका नाम वेन था
यत्-दोष-व्यथित-मति:	उस के कुचरित्र होने से दु;खी मन वाले
स: राजवर्य:-	वे राज श्रेष्ठ
त्वत्-पादे निहित-मना	आपके चरणों में मन को निहित कर के
वनं गत:-अभूत्	वन को चले गये

ध्रुव के ही कुल में बहुत विख्यात कीर्ति वाले राजा अङ्ग हुए। उनके पुत्र उत्पन्न हुए जिनका नाम वेन था। वेन के कुचरित्र से दु:खी राजश्रेष्ठ अङ्ग ने आपके चरणो मे मन को लगा लिया और वन को चले गये।

पापोऽपि क्षितितलपालनाय वेन:
पौराद्यैरुपनिहित: कठोरवीर्य: ।
सर्वेभ्यो निजबलमेव सम्प्रशंसन्
भूचक्रे तव यजनान्ययं न्यरौत्सीत् ॥२॥

पाप:-अपि	पापी होने पर भी
क्षिति-तल-पालनाय	पृथ्वी के पालन के लिये
वेन: पौराद्यै:-उपनिहित:	वेन पुरवासियों के द्वारा अभिषिक्त कर दिया गया
कठोर-वीर्य:	क्रूर वीरता वाले उसने
सर्वेभ्य: निज-बलम्-एव	सभी से अपनी वीरता की ही

सम्प्रशंसन्	प्रशंसा करते हुए
भूचक्रे	भूतल पर
तव यजनानि-	आपके पूजन आदि को
अयं न्यरौत्सीत्	इसने बन्द कर दिया

पृथ्वी के शासक की कमी होने के कारण, वेन के पापी होने पर भी पुरवासियों ने उसका राजतिलक कर दिया। क्रूर वीरता वाले उसने लोगों से अपनी ही वीरता की प्रशंसा करवाते हुए भूतल पर आपके पूजन अर्चनादि पर प्रतिबन्ध लगवा दिया।

सम्प्राप्ते हितकथनाय तापसौघे
मत्तोऽन्यो भुवनपतिर्न कश्चनेति ।
त्वन्निन्दावचनपरो मुनीश्वरैस्तै:
शापाग्नौ शलभदशामनायि वेन: ॥३॥

सम्प्राप्ते	उसके पास जा कर
हितकथनाय	हितार्थक वचन कहने के लिये
तापस-औघे	(जब) तपस्वियों का समूह (गया)
मत्त:-अन्य: भुवनपति:-न कश्चन्-इति	मुझ जैसा भुवनपति दूसरा कोई नहीं है' इस प्रकार
त्वत्-निन्दा-वचन-पर:	आपकी निन्दा करने में प्रवृत्त
मुनीश्वरै:-तै:	उन मुनीश्वरों के द्वारा
शाप-अग्नौ	शाप की अग्नि में
शलभ-दशाम्-अनायि	शलभ की दशा को ले गये
वेन:	वेन को

मुनि समुदाय वेन के हितार्थ वचन कहने के लिये उसके पास गये, किन्तु उसने कहा कि सम्पूर्ण भुवन मण्डल में उसके समान प्रतापी कोई है ही नहीं और आपकी निन्दा करने में प्रवृत्त हो गया। तब उन मुनीश्वरों ने शापाग्नि में जला कर उसे शलभ समान कर दिया।

तन्नाशात् खलजनभीरुकैर्मुनीन्द्रै-
स्तन्मात्रा चिरपरिरक्षिते तदङ्गे ।

त्यक्ताघे परिमथितादथोरुदण्डा-
द्दोर्दण्डे परिमथिते त्वमाविरासी: ॥४॥

तत्-नाशात्	उसके नाश से
खलजन-भीरुकैः- मुनीन्द्रैः-	दुष्ट जनों से डरे हुए मुनियों के द्वारा
तत्-मात्रा चिरपरिरक्षिते तत्-अङ्गे	उसकी (वेन की) माता द्वाराके दीर्घ काल से संरक्षित अङ्ग से
त्यक्त-अघे	(जिनसे) पाप निकल गया था
परिमथितात्-अथ-उरुदण्डात्-	तब परिमथित किये जाने पर जङ्घाओं से
दोर्दण्डे परिमथिते	(फिर) बाहू दण्डो के परिमथन करने से
त्वम्-आविरासीत्	आप प्रकट हुए

वेन के नाश होने से दुष्टों की अराजकता के भय से मुनिजन भयभीत हो गये । तब वेन की माता के द्वारा दीर्घकाल तक सुरक्षित रखे गये उसके शरीर में से जङ्घाओं के मथे जाने पर वेन के पाप निकल गये। फिर उसके बाहु दण्डों को मथा गया। तब स्वयं आप प्रकट हो गये।

विख्यात: पृथुरिति तापसोपदिष्टै:
सूताद्यै: परिणुतभाविभूरिवीर्य: ।
वेनार्त्या कबलितसम्पदं धरित्री-
माक्रान्तां निजधनुषा समामकार्षी: ॥५॥

विख्यातः पृथु-इति	प्रसिद्ध हुए पृथु इस प्रकार
तापस-उपदिष्टैः	तपस्वियों के द्वारा उपदिष्ट
सूत-आद्यैः	सूत आदि के द्वारा
परिणुत-भावि-भूरि-वीर्यः	स्तुति और प्रशंसा की गई आपके भावी पराक्रम की
वेन-आर्त्या	वेन के द्वारा सताई गई
कबलित-सम्पदं धरित्रीम्-	अन्तःस्थ कर लेने पर धरती के
आक्रान्ताम् निज-धनुषा	आक्रमण किये जाने पर अपने धनुष के द्वारा

समाम्-अकार्षी	समानता को खींच लाये

इस अवतार में आप पृथु नाम से विख्यात हुए। तपस्वियों के उपदेश से सूत आदि ने आपके भावी पराक्रम की स्तुति और प्रशंसा की। वेन के सताये जाने पर पृथ्वी ने अपनी सम्पदाएं आत्मसात कर ली थी। अप धनुष से आक्रमण कर के आपने उन्हे समान तल पर खींच कर ले आए।

भूयस्तां निजकुलमुख्यवत्सयुक्त्यै-
र्देवाद्यै: समुचितचारुभाजनेषु ।
अन्नादीन्यभिलषितानि यानि तानि
स्वच्छन्दं सुरभितनूमदूदुहस्त्वम् ॥६॥

भूय:-तां	फिर से उसको (भूमि को)
निज-कुल-मुख्य-वत्स-युक्तै:-	अपने अपने कुलों के प्रधान (पुरुषों) को साथ ले कर
देव-आद्यै:	देवादि ने
समुचित-चारु-भाजनेषु	अत्यन्त सुन्दर पात्रों में
अन्नादीनि-अभिलषितानि	अन्नादि अभिलषित वस्तुओं का
यानि तानि	जो कुछ भी
स्वच्छन्दं	स्वच्छन्दता पूर्वक
सुरभि-तनूम्	सुरभि शरीर धारी का
अदूदुह: त्वम्	दोहन किया आपने

तब फिर से आपने देवादि के द्वारा अपने अपने कुल के प्रधान पुरुषों के साथ अत्यन्त सुन्दर पात्रों में अन्न औषधि आदि जो कुछ भी अभिलषित था, उन वस्तुओं का सुरभि रूपी पृथ्वी से दोहन करवाया।

आत्मानं यजति मखैस्त्वयि त्रिधाम-
न्नारब्धे शततमवाजिमेधयागे ।
स्पर्धालु: शतमख एत्य नीचवेषो
हृत्वाऽश्वं तव तनयात् पराजितोऽभूत् ॥७॥

आत्मानं यजति मखै:-त्वयि	स्वयं को यजन करते हुए यज्ञों के द्वारा स्वयं ही

त्रिधामन्-	हे त्रिधामन!
आरब्धे शततम-वाजि-मेध-यागे	प्रारम्भ होने पर सौवें अश्वमेध यज्ञ के
स्पर्धालु शतमखः	ईर्ष्यावान इन्द्र ने
एत्य नीचवेषः	आ कर कपटवेष में
हृत्वा-अश्वं	हरण कर के (यज्ञ) अश्व का
तव तनयात्	आपके पुत्र के द्वारा
पराजितः-अभूत्	हरा दिया गया

हे त्रिधामन! यज्ञों के द्वारा आप स्वयं का स्वयं ही यजन कर रहे थे। सौवें अश्वमेध यज्ञ के प्रारम्भ होने के समय ईर्ष्यालू इन्द्र ने कपट वेष में यज्ञ अश्व चुराने का प्रयत्न किया, तब वह आपके पुत्र के द्वारा हरा दिया गया।

देवेन्द्रं मुहुरिति वाजिनं हरन्तं
वह्नौ तं मुनिवरमण्डले जुहूषौ ।
रुन्धाने कमलभवे क्रतो: समाप्तौ
साक्षात्त्वं मधुरिपुमैक्षथा: स्वयं स्वम् ॥८॥

देवेन्द्रं मुहुः-इति	इन्द्र बार बार इस प्रकार
वाजिनं हरन्तं	घोडे को चुराता हुआ
वह्नौ तं	अग्नि में उसको
मुनिवर-मण्डले जुहूषौ	मुनि मण्डली के द्वारा आहुति देने के इच्छुक को
रुन्धाने कमलभवे	रोक दिया ब्रह्मा ने
क्रतोः समाप्तौ	यज्ञ के समाप्त हो जाने पर
साक्षात्-त्वं	साक्षात आपने
मधुरिपुम्-ऐक्षथाः	मधुसूदन को देखा
स्वयं स्वम्	स्वयं ने स्वयं को

इन्द्र के इस प्रकार बार बार घोडे को चुरा लेने से खिन्न मुनिमण्डल उसे ही अग्नि में होम देना चाहते थे, किन्तु ब्रह्मा जी ने उन्हें रोक दिया। यज्ञ के समाप्त होने पर आपने (पृथु ने) स्वयं ही स्वयं को साक्षात मधुसूदन रूप में देखा।

तद्दत्तं वरमुपलभ्य भक्तिमेकां
गङ्गान्ते विहितपद: कदापि देव ।
सत्रस्थं मुनिनिवहं हितानि शंस-
न्नैक्षिष्ठा: सनकमुखान् मुनीन् पुरस्तात् ॥९॥

तत्-दत्तं वरम्-उपलभ्य	उनके (मधुसूदन के) द्वारा वर को पा कर
भक्तिम्-एकां	एकनिष्ठ भक्ति को (पा कर)
गङ्गा-अन्ते विहित-पदः कदापि	गङ्गा के तट पर निहित कर के स्थान एकबार
देव	हे देव!
सत्रस्थं मुनि-निवहं	यज्ञ में उपस्थित मुनि समूह को
हितानि शंसन्-	धर्मों का उपदेश देते हुए
ऐक्षिष्ठाः	आपने (पृथु ने) देखा
सनक-मुखान् मुनीन् पुरस्तात्	सनकादि मुनियों को सामने

मधुसूदन से आपने (पृथु ने) एकनिष्ठ भक्ति का वरदान पाया। हे देव! एक बार गङ्गा के तट पर चुने हुए स्थान पर यज्ञ मे उपस्थित मुनिवृन्द को आप धर्म का उपदेश दे रहे थे। उसी समय आपने अपने समक्ष सनकादि मुनियों को देखा।

विज्ञानं सनकमुखोदितं दधान:
स्वात्मानं स्वयमगमो वनान्तसेवी ।
तत्तादृक्पृथुवपुरीश सत्वरं मे
रोगौघं प्रशमय वातगेहवासिन् ॥१०॥

विज्ञानं	ब्रह्म ज्ञान को
सनक-मुख-उदितं	सनकादि मुनियों के मुख से कहे गये
दधानः	धारण करते हुए

स्व-आत्मानं स्वयम्-अगमः	स्वम अपनी आत्मा को स्वयं प्राप्त हुए
वन-अन्त-सेवी	वन के भीतर रहते हुए
तत्-तादृक्-पृथु-वपुः-ईश	वअही उस प्रकार के पृथु शरीरी हे ईश!
सत्वरं मे	शीघ्र ही मेरे
रोगौघं	रोग समूहों का
प्रशमय	नाश करें
वातगेहवासिन्	हे वातगेहवासिन!

फिर आप वन में रहने लगे। सनकादि मुनियों के द्वारा दिये गये ब्रह्म ज्ञान के उपदेश को भली भांति धारण करते हुए आपने स्वयं अपनी आत्मा को स्वयं के भीतर प्राप्त किया। ऐसे पृथुवपुधारी ईश! हे वातगेहवासिन! शीघ्र ही मेरे रोग समूहों को नष्ट कीजिये।

दशक १९

पृथोस्तु नप्ता पृथुधर्मकर्मठः
प्राचीनबर्हिर्युवतौ शतद्रुतौ ।
प्रचेतसो नाम सुचेतसः सुता-
नजीजनत्त्वत्करुणाङ्कुरानिव ॥१॥

पृथोः-तु नप्ता	पृथु के ही प्रपौत्र
पृथु-धर्म-कर्मठः	कठोर धर्म कर्मों मे प्रवृत्त
प्राचीनबर्हिः-	प्राचीनबर्ही (नाम वाले) ने
युवतौ शतद्रुतौ	युवती शतद्रुति से
प्रचेतसः नाम	प्रचेतस नाम के
सुचेतसः सुतान्-	सुधीः सुतों को
अजीजनत्-	जन्म दिया
त्वत्-करुणा-अङ्कुरान्-इव	आपकी करुणा के अंकुरों के समान

पृथु के प्रपौत्र प्राचीनबर्ही ने जो कठोर धर्म के कर्मों में निष्णात थे, युवती शतद्रुति से प्रचेतस नाम के शुद्ध बुद्धि वाले दस पुत्रों को जन्म दिया। वे इतने कोमल हृदय के थे मानो आपकी करुणाके ही अंकुर हों।

पितुः सिसृक्षानिरतस्य शासनाद्-
भवत्तपस्याभिरता दशापि ते
पयोनिधिं पश्चिममेत्य तत्तटे
सरोवरं सन्ददृशुर्मनोहरम् ॥२॥

पितुः सिसृक्षा-निरतस्य	पिता, जो सृष्टि में निरत थे
शासनात्-	(उनके) आदेश से
भवत्-तपस्या-अभिरता दश-अपि ते	आपकी तपस्या में संलग्न हुए भी वे दस
पयोनिधिं पश्चिमम्-एत्य	समुद्र के पश्चिम (तट पर) जा कर

तत्-तटे सरोवरं सन्ददृशुः-	उस तट पर एक सरोवर को देखा
मनोहरं	(जो अत्यन्त) मनोहर था

सृष्टि करने में निरत पिता के द्वारा आदेश दिये जाने पर, आपकी ही तपस्या मे लगे हुए ये दस समुद्र के पश्चिम तट पर चले गये। वहां उन्होने एक अत्यन्त मनोहर सरोवर देखा।

तदा भवत्तीर्थमिदं समागतो
भवो भवत्सेवकदर्शनादृत: ।
प्रकाशमासाद्य पुर: प्रचेतसा-
मुपादिशत् भक्ततमस्तव स्तवम् ॥३॥

तदा भवत्-तीर्थम्-इदम्	तब आपके तीर्थ स्थान इस (सरोवर)
समागतः भवः	के पास आये हुए शकंर (जो)
भवत्-सेवक-दर्शन-आदृतः	आपके भक्तो के दर्शन के उत्सुक हैं
प्रकाशम्-आसाद्य	प्रकट हो कर
पुरः प्रचेतसाम्-	सामने प्रचेतसों के
उपादिशत्	(उन्हें) उपदेश दिया
भक्ततमः-	भक्त श्रेष्ठ (उन्होंने)
तव स्तवं	आपके स्तोत्र का

तब भक्तश्रेष्ठ शंकर जो आपके भक्तों के दर्शन के लिये उत्सुक थे, आपके उस तीर्थ सरोवर के पास जा कर प्रचेतसों के सामने प्रकट हुए और उन्हें आपके स्तोत्र का उपदेश दिया।

स्तवं जपन्तस्तममी जलान्तरे
भवन्तमासेविषतायुतं समा: ।
भवत्सुखास्वादरसादमीष्वियान्
बभूव कालो ध्रुववन्न शीघ्रता ॥४॥

स्तवं जपन्तः-तम्-अमी	(उस) स्तोत्र का जप करते हुए वे सब

जल-अन्तरे	जल के अन्दर
भवन्तम्-आसेविषत-	आपका स्तवन करते रहे
अयुतं समा:	दस हजार वर्ष तक
भवत्-सुख-आस्वाद्-रसात्-	आपके सुख के रस के आस्वादन से
अमीषु-	इनका (प्रचेतसों का)
इयान् बभूव काल:	इस प्रकार समय हो गया
ध्रुववत्-न शीघ्रता	ध्रुव के समान शीघ्रता से नहीं

जल के अन्दर जा कर उस स्तोत्र का जप करते हुए उन्हें दस हजार वर्ष व्यतीत हो गये। आपके ब्रह्म सुख के आनन्द के रसास्वादन से उन्हें इतना समय लग गया। ध्रुव के समान शीघ्रता से यह नहीं घटा।

तपोभिरेषामतिमात्रवर्धिभि:
स यज्ञहिंसानिरतोऽपि पावित: ।
पिताऽपि तेषां गृहयातनारद-
प्रदर्शितात्मा भवदात्मतां ययौ ॥५॥

तपोभि:-एषाम्-	तप से इनके (प्रचेतसों के)
अति-मात्र-वर्धिभि:	अधिक मात्रा में बढ जाने से
स यज्ञ-हिंसा-निरत:-अपि	वह (जो) यज्ञ में हिंसा करने में लगा रहता था (वेन) वह भी
पावित:	पवित्र हो गया
पिता-अपि तेषां	पिता भी उनके
गृहयात-नारद-	घर आये नारद के द्वारा
प्रदर्शित-आत्मा	दिखाये गये आत्मज्ञान से
भवत्-आत्मतां ययौ	आपके आत्मरूप को प्राप्त हुए

प्रचेतसों की अत्यधिक मात्रा में बढती हुई तपस्या से वेन, जो यज्ञॊ में हिंसा में निरत रहता था, पवित्र हो गया। प्रचेतसों के पिता प्राचीनबर्ही भी, घर आये नारद के द्वारा दिखाये गये आत्मज्ञान के द्वारा आप में आत्मसात हो गये।

कृपाबलेनैव पुरः प्रचेतसां
प्रकाशमागाः पतगेन्द्रवाहनः ।
विराजि चक्रादिवरायुधांशुभि-
र्भुजाभिरष्टाभिरुदञ्चितद्युतिः ॥६॥

कृपा-बलेन-एव	आपकी कृपा के बल से ही
पुरः प्रचेतसां	सामने प्रचेतसों के
प्रकाशम्-आगाः	प्रकट हुए आप
पतगेन्द्र-वाहनः	गरुड वाहन पर
विराजि चक्र-आदि-वर-आयुध-अंशुभिः-	विराजित चक्र आदि श्रेष्ठ आयुध युक्त
भुजाभिः-अष्टाभिः-	अष्ट भुजाओं के द्वारा
उदञ्चित-द्युतिः	फैलाते हुए कान्ति

अपनी कृपा के बल से आप प्रचेतसों के समक्ष प्रकट हुए। उस समय आपकी अष्ट भुजायें चक्र आदि श्रेष्ठ आयुधों से युक्त थीं और गरुड के वाहन पर विराजे हुए आपकी कान्ति देदीप्यमान हो रही थी।

प्रचेतसां तावदयाचतामपि
त्वमेव कारुण्यभराद्वरानदाः ।
भवद्विचिन्ताऽपि शिवाय देहिनां
भवत्वसौ रुद्रनुतिश्च कामदा ॥७॥

प्रचेतसां तावत्-	प्रचेतसों को, तब
अयाचताम्-अपि	याचना न करने पर भी
त्वम्-एव कारुण्य-भरात्-	आपने ही करुणा से पूर्ण हो कर
वरान्-अदाः	वरों को प्रदान किया
भवत्-विचिन्ता-अपि	आपलोगों का स्मरण मात्र
शिवाय देहिनां भवतु-	कल्याणकारी हो शरीरधारियों के लिये
असौ रुद्रनुतिः-च	और यह रुद्र के द्वारा गायी गई

कामदा (भवतु)	(स्तुति) अभीष्ट दायिनी होगी

प्रचेतसों के याचना न करने पर भी आपने करुणा के वशीभूत हो कर उन्हें वर प्रदान किया कि उनके स्मरण मात्र से शरीरधारियों का कल्याण होगा और रुद्र के द्वारा गाई गई यह स्तुति समस्त अभीष्टों को प्रदान करने वाली होगी।

अवाप्य कान्तां तनयां महीरुहां
तया रमध्वं दशलक्षवत्सरीम् ।
सुतोऽस्तु दक्षो ननु तत्क्षणाच्च मां
प्रयास्यथेति न्यगदो मुदैव तान् ॥८॥

अवाप्य कान्तां	पा कर पत्नी के रूप में
तनयां महीरुहां	पुत्री वृक्षों की
तया रमध्वं	उसके संग सुखोपभोग करें
दशलक्ष-वत्सरीम्	दस लाख वर्षों तक
सुत:-अस्तु दक्ष:	(आपके) दक्ष (नाम के) पुत्र हों
ननु तत्-क्षणात्-	निश्चय ही उसी क्षण ही
च मां प्रयास्यथ-इति	और मुझे प्राप्त करें इस प्रकार
न्यगद:	कहा आपने
मुदा-एव तान्	प्रसन्नतापूर्वक उनको

वृक्षों की कन्या को पत्नी के रूप में प्राप्त करके आप उसके संग दस लाख वर्षों तक रमण करें। आपको दक्ष नाम के पुत्र की प्राप्ति होगी। तत्पश्चात उसी क्षण, निश्चय ही मुझे प्राप्त करें' इस प्रकार प्रसन्नतापूर्वक आपने उनको कहा।

ततश्च ते भूतलरोधिनस्तरून्
क्रुधा दहन्तो द्रुहिणेन वारिता: ।
द्रुमैश्च दत्तां तनयामवाप्य तां
त्वदुक्तकालं सुखिनोऽभिरेमिरे ॥९॥

तत:-च ते	और तब वे

भू-तल-रोधिनः-तरून्	भूतल को आच्छादित करने वाले वृक्षों को
क्रुधा दहन्तः	क्रोधित हो कर जलाने लगे
द्रुहिणेन वारिताः	(और) ब्रह्मा के द्वारा रोके गये
द्रुमैः-च दत्तां तनयाम्-	वृक्षों के द्वारा दी गई कन्या को
अवाप्य तां	पा कर उसको
त्वत्-उक्त-कालं	आपके द्वारा कहे गये समय तक
सुखिनः-अभिरेमिरे	सुख से रमण किया

और तब वे कुपित हो कर, भूतल को अवरोधित करते हुए तरुओ को जलाने लगे। तब ब्रह्मा जी ने उन्हे रोका। फिर तरुओं के द्वारा दी गई कन्या को पत्नी रूप में पा कर उन्होंने आपके द्वारा कहे गये समय तक उसके संग सुख पूर्वक रमण किया।

अवाप्य दक्षं च सुतं कृताध्वराः
प्रचेतसो नारदलब्धया धिया ।
अवापुरानन्दपदं तथाविध-
स्त्वमीश वातालयनाथ पाहि माम् ॥१०॥

अवाप्य दक्षं च सुतं	और पुत्र दक्ष को पा कर
कृत-अध्वराः	(और) ब्रह्म सत्र करके
प्रचेतसः	प्रचेतस
नारद-लब्धया धिया	नारद से प्राप्त ज्ञान वाली बुद्धि से
अवापुः-आनन्द-पदं	प्राप्त कर गये आनन्द पद को
तथा-बिधः-त्वम्-	उस प्रकार के आप
ईश	हे ईश्वर!
वातालयनाथ	वातालयनाथ
पाहि माम्	मेरी रक्षा करें

दक्ष नामक पुत्र को पा कर प्रचेतस ने ब्रह्म सत्र किया। नारद से प्राप्त ज्ञान वाली बुद्धि वाले वे लोग आनन्द पद (आपको) को प्राप्त हुए। इस प्रकार के हे ईश्वर! वातालयनाथ! आप मेरी रक्षा करें।

दशक २०

प्रियव्रतस्य प्रियपुत्रभूता-
दाग्नीध्रराजादुदितो हि नाभि: ।
त्वां दृष्टवानिष्टदमिष्टिमध्ये
तवैव तुष्ट्यै कृतयज्ञकर्मा ॥१॥

प्रियव्रतस्य	प्रियव्रत के
प्रियपुत्रभूतात्-आग्नीध्र-राजात्-	प्रिय पुत्र आग्नीध्र राजा से
उदित: हि नाभि:	जन्मे नाभि
त्वां दृष्टवान्-इष्टदम्-	आपको देखा (जो) अभीष्टों के दाता हैं
इष्टि-मध्ये	यज्ञ के मध्य में
तव-एव तुष्ट्यै	आप ही की प्रसन्नता के लिये
कृत-यज्ञ-कर्मा	(जो नाभि) यज्ञ कर्म कर रहे थे

प्रियव्रत के प्रिय पुत्र राजा आग्नीध्र से नाभि का जन्म हुआ। नाभि आप ही की तुष्टि के लिये यज्ञ कर्म कर रहे थे। उसी यज्ञ में उन्हें सभी अभीष्टों के दाता आपके दर्शन हुए।

अभिष्टुतस्तत्र मुनीश्वरैस्त्वं
राज्ञ: स्वतुल्यं सुतमर्थ्यमान: ।
स्वयं जनिष्येऽहमिति ब्रुवाण-
स्तिरोदधा बर्हिषि विश्वमूर्ते ॥२॥

अभिष्टुत:-तत्र	स्तुति की गई वहां पर
मुनीश्वरै:-त्वं	मुनिश्वरों के द्वारा आपकी
राज्ञ: स्वतुल्यं सुतम्-	राजा (नाभि) के लिये स्वयं (आपके) जैसे पुत्र
अर्थ्यमान:	याचना किये जाने पर
स्वयं जनिष्ये-अहम्-	स्वयं जन्म लूंगा मैं

इति ब्रुवाण:-	इस प्रकार कहते हुए
तिरोदधा बर्हिषि	अन्तर्धान हो गये अग्नि में
विश्वमूर्ते	हे विश्वमूर्ति!

मुनीश्वरों ने उस यज्ञ में प्रकट हुए आपकी स्तुति की और राजा नाभि के लिये आपके समान ही पुत्र की याचना की। हे विश्वमूर्ति! तब आपने कहा कि ' मै स्वयं ही जन्म लूंगा'। इस प्रकार कह कर उस यज्ञाग्नि में आप अन्तर्धान हो गये।

नाभिप्रियायामथ मेरुदेव्यां
त्वमंशतोऽभू: ऋषभाभिधान: ।
अलोकसामान्यगुणप्रभाव-
प्रभाविताशेषजनप्रमोद: ॥३॥

नाभि-प्रियायाम्-अथ	नाभि की प्रिया (पत्नी) से तब
मेरुदेव्यां	मेरुदेवी से
त्वम्-अंशत:-अभू:	आप अंश रूप से प्रकट हुए
ऋषभ-अभिधान:	ऋषभ नाम से
अलोक-सामान्य-गुण-प्रभाव	अलौकिक गुणों के प्रभाव से
प्रभावित-अशेष-जन-प्रमोद:	प्रभावित किया सभी लोगों के आनन्द को

नाभि की प्रिय पत्नी मेरुदेवी से फिर अंश रूप से ऋषभ नाम वाले आप प्रकट हुए। आपके असामान्य अलौकिक गुणों के प्रभाव से सभी आनन्द के भर गये।

त्वयि त्रिलोकीभृति राज्यभारं
निधाय नाभि: सह मेरुदेव्या ।
तपोवनं प्राप्य भवन्निषेवी
गत: किलानन्दपदं पदं ते ॥४॥

त्वयि त्रिलोकीभृति	आप के ऊपर, जो त्रिलोकी का भार वहन करते है
राज्य-भारं निधाय	राज्य के भार को डाल कर

नाभिः सह मेरुदेव्या	नाभि, मेरुदेवी के संग
तपोवनं प्राप्य	तपोवन को जाकर
भवत्-निषेवी	आपकी अर्चना करते हुए
गतः किल-आनन्दपदं	प्राप्त कर गये निश्चय ही आनन्द पद को
पदं ते	आपके धाम को

आप स्वयं ही त्रिलोक का भार वहन करने वाले हैं। आपके ऊपर राज्य का भार डाल कर नाभि, मेरुदेवी के संग तपोवन को चले गये। वहां आपकी ही सेवा अर्चना करते हुए वे परम आनन्द दायक आपके ही धाम वैकुण्ठ को प्राप्त हो गये।

इन्द्रस्त्वदुत्कर्षकृतादमर्षा-
द्ववर्ष नास्मिन्नजनाभवर्षे ।
यदा तदा त्वं निजयोगशक्त्या
स्ववर्षमेनव्द्यदधाः सुवर्षम् ॥५॥

इन्द्रः-त्वत्-उत्कर्षकृतात्-	इन्द्र ने आपके उत्कर्ष से
अमर्षात्	ईर्ष्या से
ववर्ष न-अस्मिन्-	वर्षा नहीं की इस
अजनाभवर्षे	अजनाभवर्ष पर
यदा तदा त्वं	जब तब आपने
निज-योग-शक्त्या	अपनी योग शक्ति से
स्व-वर्षम्-एनत्-	अपने (अजनाभ) वर्ष पर लाये
व्यदधाः सुवर्षम्	व्यवधान से सुन्दर वृष्टि

आपके उत्कर्ष से ईर्ष्या के वशीभूत हुए इन्द्र ने इस अजनाभ वर्ष के ऊपर वर्षा नहीं की। तब आप अपनी योग शक्ति के व्यवधान से अपने अजनाभवर्ष पर सुन्दर वृष्टि लाये।

जितेन्द्रदत्तां कमनीं जयन्ती-
मथोद्वहन्नात्मरताशयोऽपि ।
अजीजनस्तत्र शतं तनूजा-

नेषां क्षितीशो भरतोऽग्रजन्मा ॥६॥

जितेन्द्र-दत्तां	इन्द्र के द्वारा दी गई
कमनीं जयन्तीम्-	सुन्दरी जयन्ती को
अथ-उद्वहन्-	तब विवाह कर के
आत्मरत-आशय:-अपि	आत्मा में ही रंमण करने के आशय वाले भी (आपने)
अजीजन:-तत्र शतं तनूजान्-	जन्म दिया वहां सौ पुत्रों को
एषां क्षितीश: भरत:-	इनमें से राजा भरत
अग्र-जन्मा	सब से बडे थे

विजित इन्द्र ने तब आपको सुन्दरी जयन्ती प्रदान की। स्वयं अपनी आत्मा में रमण करने के आशय वाले आपने उससे विवाह कर के सौ पुत्रों को जन्म दिया जिनमें से राजा भरत सब से बडे थे।

नवाभवन् योगिवरा नवान्ये
त्वपालयन् भारतवर्षखण्डान् ।
सैका त्वशीतिस्तव शेषपुत्र-
स्तपोबलात् भूसुरभूयमीयु: ॥७॥

नव-अभवन् योगिवरा:	नौ हो गये योगिराज
नव-अन्ये-तु-	नौ दूसरे तो
अपालयन् भारतवर्षखण्डान्	पालन करने लगे भारत वर्ष के खन्डों का
सैका तु-अशीति:-	इक्यासी तो
तव शेष पुत्र:-	आपके बाकी पुत्र
तपोबलात्	तपोबल से
भूसुरभूयम्-ईयु:	ब्राह्मणत्व को प्राप्त हुए

उन पुत्रों में से नौ तो योगिराज हो गये और दूसरे नौ भारत वर्ष के विभिन्न खन्डों पर राज्य करने लगे। बाकी इक्यासी पुत्र अपने तपोबल से ब्राह्मणत्व को प्राप्त हुए।

उक्त्वा सुतेभ्योऽथ मुनीन्द्रमध्ये
विरक्तिभक्त्यन्वितमुक्तिमार्गम् ।
स्वयं गतः पारमहंस्यवृत्ति-
मधा जडोन्मत्तपिशाचचर्याम् ॥८॥

उक्त्वा सुतेभ्यः-अथ	तब पुत्रों को बता कर
मुनीन्द्र-मध्ये	मुनीश्वरों के बीच में
विरक्ति-भक्ति-अन्वित-	विरक्ति भक्ति सहित
मुक्ति-मार्गम्	मुक्ति मार्ग को
स्वयं गतः	स्वयं चले गये
पारमहंस्यवृत्तिम्-	परमहंस वृत्ति को
अधाः	धारण कर लिया
जड-उन्मत्त-पिशाच-चर्याम्	जड उन्मत्त तथा पिशाच के आचरण को

तब आप (ऋषभ देव) मुनीश्वरों के सम्मुख अपने पुत्रों को विरक्ति भक्ति सहित मुक्ति मार्ग का उपदेश दे कर स्वयं परमहंस वृत्ति को प्राप्त हुए और आपने जड उन्मत्त और पिशाचों के आचरण को अपना लिया।

परात्मभूतोऽपि परोपदेशं
कुर्वन् भवान् सर्वनिरस्यमानः ।
विकारहीनो विचचार कृत्स्नां
महीमहीनात्मरसाभिलीनः ॥९॥

परात्मभूतः-अपि	परम आत्मस्वरूप (होने पर) भी
पर-उपदेशं कुर्वन्	औरों को उपदेश देते हुए
भवान् सर्व-निरस्य-मानः	आप सभी से तिरस्कृत होते हुए
विकार-हीनः	विकारहीन
विचचार	विचरते रहे
कृत्स्नां महीम्-	पूरी पृथ्वी पर

अहीन-आत्मरस-अभिलीनः	परम आत्मानन्द में अभिलीन

परम आत्मस्वरूप होते हुए भी आप अन्य लोगों को उपदेश देते रहे। सभी से तिरस्कृत होते हुए भी विकारहीन, परमानन्द रस में अभिलीन हुए आप पूरी पृथ्वी पर विचरते रहे।

शयुव्रतं गोमृगकाकचर्यां
चिरं चरन्नाप्य परं स्वरूपं ।
दवाहृताङ्गः कुटकाचले त्वं
तापान् ममापाकुरु वातनाथ ॥१०॥

शयु-व्रतम्	सर्प के व्रत
गो-मृग-काक-चर्याम्	(और) गौ मृग और काक की (जीवन) चर्या को
चिरं चरन्-	चिर काल तक निभाते हुए
आप्य परं स्वरूपं	प्राप्त हो गये स्वयं के परम स्वरूप को
दवा-हृत-अङ्गः	अग्नि के द्वारा ले लिया गया शरीर (जिसका)
कुटकाचले त्वं	कुटकाचल पर (वे) आप
तापान् मम-अपाकुरु	तापों को मेरे दूर करें
वातनाथ	हे वातनाथ!

सर्प की वृत्ति और गौ मृग एवं काक की जीवन चर्या को चिर काल तक निभाते हुए आप स्वयं के परम स्वरूप को प्राप्त हो गये। फिर कुटकाचल पर दावाग्नि के द्वारा आपने अपने शरीर को भस्म कर दिया। हे वातनाथ! मेरे तापों को दूर करें।

दशक २१

मध्योद्भवे भुव इलावृतनाम्नि वर्षे
गौरीप्रधानवनिताजनमात्रभाजि ।
शर्वेण मन्त्रनुतिभि: समुपास्यमानं
सङ्कर्षणात्मकमधीश्वर संश्रये त्वाम् ॥१॥

मध्य-उद्भवे भुव:	पृथ्वी के मध्य भाग में
इलावृत-नाम्नि वर्षे	इलावृत नाम का स्थान है
गौरी-प्रधान-वनिताजन-मात्र-भाजि	गौरी प्रधान हैं जिनमें, वनिताएं मात्र ही वहां निवास करती हैं
शर्वेण	शिवजी
मन्त्र-नुतिभि:	मन्त्रों और स्तुतियों द्वारा
समुपास्यमानं	उपासना करते हैं
सङ्कर्षण-आत्मकम्-	संकर्षण स्वरूप आपकी
अधीश्वर	हे अधीश्वर!
संश्रये	शरण लेता हूं
त्वाम्	आपकी

पृथ्वी के मध्य भाग में स्थित इलावृत नाम का स्थान है। वहां, केवल वनिताएं निवास करती हैं जिनमें गौरी प्रधान हैं। वहां शिवजी, अर्धनारीश्वर रूप से मन्त्रों और स्तुतियों के द्वारा आपके संकर्षण स्वरूप की उपासना करते हैं। हे अधीश्वर! मैं आपकी शरण लेता हूं।

भद्राश्वनामक इलावृतपूर्ववर्षे
भद्रश्रवोभि: ऋषिभि: परिणूयमानम् ।
कल्पान्तगूढनिगमोद्धरणप्रवीणं
ध्यायामि देव हयशीर्षतनुं भवन्तम् ॥२॥

भद्राश्व-नामक	भद्राश्व नामक
इलावृत-पूर्व-वर्षे	इलावृत के पूर्व भाग में

भद्रश्रवोभि: ऋषिभि:	भद्रश्रवा ऋषियों के द्वारा
परिणूयमानम्	संस्तुति किये जाने वाले (आप)
कल्पान्त-गूढ-निगम-उद्धरण-प्रवीणं	(जो) कल्पान्त में लुप्त हुए वेदों का उद्धार करने में पटु हैं
ध्यायामि	(उनका) मैं ध्यान करता हूं
देव	हे देव!
हयशीर्ष-तनुं भवन्तम्	हयग्रीव स्वरूप आपका

इलावृत के पूर्व भाग में स्थित भद्राश्व नामक स्थान में भद्रश्रवा ऋषिगण आपकी संस्तुति करते हैं। कल्पान्त में लुप्त हुए वेदों का उद्धार करने में प्रवीण, आप वहां हयग्रीव स्वरूप में स्थित हैं। मैं आपके उस स्वरूप का ध्यान करता हूं।

ध्यायामि दक्षिणगते हरिवर्षवर्षे
प्रह्लादमुख्यपुरुषै: परिषेव्यमाणम् ।
उत्तुङ्गशान्तधवलाकृतिमेकशुद्ध-
ज्ञानप्रदं नरहरिं भगवन् भवन्तम् ॥३॥

ध्यायामि	ध्यान करता हूं
दक्षिणगते हरिवर्षवर्षे	दक्षिण दिशा में हरिवर्ष स्थान में
प्रह्लाद-मुख्य-पुरुषै:	प्रह्लाद आदि मुख्य पुरुषों के द्वारा
परिषेव्यमाणम्	आराधना किये जाने वाले
उत्तुङ्ग-धवल-आकृतिम्-	उन्नत श्वेत स्वरूप
एकशुद्ध-ज्ञान-प्रदम्	एक मात्र शुद्ध ज्ञान के प्रदाता
नरहरिं	नरहरि रूप
भगवन्	हे भगवन।
भवन्तं	आपका

इलावृत की दक्षिण दिशा में हरिवर्ष नामक स्थान है। वहां प्रह्लाद आदि मुख्य पुरुषों के द्वारा आपकी आराधना की जाती है। एक मात्र शुद्ध ज्ञान के प्रदाता, हे भगवन! आप वहां उन्नत श्वेत नरहरि के रूप में विराजमान हैं । मैं आपके उस स्वरूप

का ध्यान करता हूं।

वर्षे प्रतीचि ललितात्मनि केतुमाले
लीलाविशेषललितस्मितशोभनाङ्गम् ।
लक्ष्म्या प्रजापतिसुतैश्च निषेव्यमाणं
तस्याः प्रियाय धृतकामतनुं भजे त्वाम् ॥४॥

वर्षे प्रतीचि	(इलावृत के) पश्चिम भाग में
ललित-आत्मनि	सुन्दरता से युक्त
केतुमाले	केतुमाल में
लीला-विशेष-ललित-स्मित-शोभन-अङ्गम्	विशेष लीला से मनोरम और मन्द मुस्कान से सुशोभित (आपके) स्वरूप की
लक्ष्म्या	लक्ष्मी के द्वारा
प्रजापतिसुतैः च	और प्रजापति के पुत्रों के द्वारा
निषेव्यमाणम्	सेवा की जाती है
तस्याः प्रियाय	उनकी (लक्ष्मी की) प्रसन्नता के लिये
धृत-काम-तनुम्	धारण किया कामदेव के स्वरूप को
भजे त्वाम्	भजन करता हूं आपका

इलावृत के पश्चिम भाग में सुन्दरता से युक्त केतुमाल नामक स्थान है। वहां लक्ष्मी और प्रजापति के पुत्र, विशेष लीला से मनोहारी और मन्द मुस्कान से सुशोभित आपके स्वरूप की सेवा करते हैं। लक्ष्मी की प्रसन्नता के लिये आपने कामदेव के स्वरूप को धारण कियाहौ। आपके उस स्वरूप का मैं भजन करता हं।

रम्ये ह्युदीचि खलु रम्यकनाम्नि वर्षे
तद्वर्षनाथमनुवर्यसपर्यमाणम् ।
भक्तैकवत्सलममत्सरहृत्सु भान्तं
मत्स्याकृतिं भुवननाथ भजे भवन्तम् ॥५॥

रम्ये हि उदीचि खलु	इलावृत के उत्तर में रमणीय
रम्यक-नाम्नि वर्षे	रम्यक नाम के स्थान में

तत्-वर्ष-नाथ-मनुवर्य-	उस स्थान के स्वामी मनु श्रेष्ठ
सपर्यमाणम्	पूजन करते रहते हैं (आपकी)
भक्त-एक-वत्सलम्-	(जो) एकमात्र भक्तवत्सल
अमत्सर-हृत्सु भान्तं	मत्सर विहीन हृदयों में प्रकाशित होने वाले
मत्स्य-आकृतिं	मत्स्य मूर्ति
भुवननाथ	हे भुवननाथ!
भजे भवन्तं	पूजा करता हूं आपकी

इलावृत के उत्तर में अति रमणीय रम्यक नाम का स्थान है। वहां के स्वामीमनु श्रेष्ठ निरन्तर आपका पूजन करते रहते हैं। हे भुवननाथ! केवल भक्तवत्सल और मात्सर्य रहित हृदयों मे प्रकाशित होने वाले आप वहां मत्स्य रूप में विराजमान हैं। मैं आपकी पूजा करता हूं।

वर्षं हिरण्मयसमाह्वयमौत्तराह-
मासीनमद्रिधृतिकर्मठकामठाङ्गम् ।
संसेवते पितृगणप्रवरोऽर्यमा यं
तं त्वां भजामि भगवन् परचिन्मयात्मन् ॥६॥

वर्षं	(वह) भाग
हिरण्मय-समाह्वयम्-	(जो) हिरण्मय नाम से जाना जाता है
औत्तराहम्-	और (रम्यक के) उत्तर की ओर है
आसीनम्-	(वहां) स्थित
अद्रि-धृति-कर्मठ-कामठ-अङ्गम्	वह पर्वत (जो) धारण करने में सक्षम है (आपके) कच्छप स्वरूप को
संसेवते	उसकी उपासना करते हैं
पितृगण-प्रवर:-अर्यमा	पितृ गणों में श्रेष्ठ अर्यमा
यं तं त्वां	जिन उन आपको
भजामि भगवन्	भजता हूं हे भगवन!

परचिन्मय-आत्मन्	परम चिन्मयात्मक

जो भू भाग हिरण्मय नाम से जाना जाता है, वह रम्यक के उत्तर की ओर है। वहां वह पर्वत (मन्दार) स्थित है, जो आपके कच्छप स्वरूप को वहन करने में सक्षम है, स्थित है। हे परम चिन्मयात्मक भगवन! पितृगणों में श्रेष्ठ अर्यमा कच्छप स्वरूप आपकी उपासना करते हैं। आपके उसी स्वरूप को मैं भजता हं।

किञ्चोत्तरेषु कुरुषु प्रियया धरण्या
संसेवितो महितमन्त्रनुतिप्रभेदैः ।
दंष्ट्राग्रघृष्टघनपृष्ठगरिष्ठवर्ष्मा
त्वं पाहि बिज्ञनुत यज्ञवराहमूर्ते ॥७॥

किम्-च	और भी
उत्तरेषु	(हिरण्मय के) उत्तर में
कुरुषु	कुरु भागों में
प्रियया धरण्या	प्रियतमा पृथ्वी के द्वारा
संसेवितः	उपासना किये जाते हुए
महित-मन्त्र-नुति-प्रभेदैः	विभिन्न महा मन्त्र और स्तुतियों से
दंष्ट्र-अग्र-घृष्ट-घन-पृष्ठ-गरिष्ठ-वर्ष्मा	दांत के अगले भाग से बादलों के पृष्ठ को रगडने वाले दीर्घ आकार वाले
त्वं पाहि	आप रक्षा करें
विज्ञ-नुत यज्ञ-वराह-मूर्ते	हे ज्ञानियों से संस्तुत यज्ञ वराह स्वरूप

और भी, हिरण्मय के उत्तर भाग में, आपकी प्रियतमा पृथ्वी विभिन्न महा मन्त्रों और स्तुतियों से आपकी उपासना करती हैं। हे ज्ञानियों के द्वारा संस्तुत यज्ञ वराह स्वरूप ईश्वर! आप दांतों के अग्र भाग से बादलो के पृष्ठ को रगडने वाले विशाल आकृति के है। आप मेरी रक्षा करें।

याम्यां दिशं भजति किंपुरुषाख्यवर्षे
संसेवितो हनुमता दृढभक्तिभाजा ।
सीताभिरामपरमाद्भुतरूपशाली
रामात्मकः परिलसन् परिपाहि विष्णो ॥८॥

याम्यां दिशं भजति	दक्षिण दिशा में स्थित
किंपुरुष-आख्य-वर्षे	किंपुरुष नामक भाग में
संसेवित:	पूजे जाते हैं
हनुमता	हनुमान के द्वारा
दृढ-भक्तिभाजा	(जो) दृढ भक्तिमान हैं
सीता-अभिराम-परम-अद्भुत-रूप-शाली	सुन्दरी सीता के संग अद्भुत सौन्दर्यली
रामात्मक: परिलसन्	राम स्वरूप से सुशोभित
परिपाहि	रक्षा करें
विष्णो	हे विष्णो!

दक्षिण दिशा में किंपुरुष नामक भाग में दृढ भक्तिमान हनुमान के द्वारा आप पूजे जाते हैं। हे विष्णो! परम सुन्दरी सीता के संग अद्भुत सौन्दर्य से युक्त राम रूप से सुशो्भित आप, मेरी रक्षा करें।

श्रीनारदेन सह भारतखण्डमुख्यै-
स्त्वं साङ्ख्ययोगनुतिभि: समुपास्यमान: ।
आकल्पकालमिह साधुजनाभिरक्षी
नारायणो नरसख: परिपाहि भूमन् ॥९॥

श्री-नारदेन सह	श्री नारद जी के साथ
भारत-खण्ड-मुख्यै:-	भारतवर्ष के प्रमुख जनों के द्वारा
त्वं	आप
सांख्य-योग-नुतिभि:	सांख्य योग की स्तुतियों के द्वारा
समुपास्यमान:	सम्यक उपासित होते हैं
आकल्प-कालम्-इह	यहां कल्पान्त तक
साधुजन-अभिरक्षी	साधु जनों के रक्षक

नारायण: नरसख:	नारायण नरसखा (के रूप में)
परिपाहि	रक्षा करें
भूमन्	हे भूमन

भारतवर्ष में आप नरसखा नारायण रूप से विराजमान हैं। नारद मुनि के साथ साथ भारतवर्ष के प्रमुख जन, सांख्य योग की स्तुतियो के द्वारा आपकी सम्यक उपासना करते हैं। हे भूमन! मेरी रक्षा करें।

प्लाक्षेऽर्करूपमयि शाल्मल इन्दुरूपं
द्वीपे भजन्ति कुशनामनि वह्निरूपम् ।
क्रौञ्चेऽम्बुरूपमथ वायुमयं च शाके
त्वां ब्रह्मरूपमपि पुष्करनाम्नि लोका: ॥१०॥

प्लाक्षे-अर्क-रूपम्-	प्लाक्ष में (आपके) सूर्य रूप को
अयि	हे आप
शाल्मले इन्दुरूपं	शाल्मलि में चन्द्र रूप को
द्वीपे भजन्ति कुश-नामनि	कुश नाम के द्वीप में
वह्नि-रूपम्	अग्नि रूप को
क्रौञ्चे-अम्बु-रूपम्-	क्रौञ्च में जल रूप को
अथ वायु-मयं च शाके	और फिर वायु रूप को शाक में
त्वां ब्रह्म-रूपम्-अपि	आप के ब्रह्म रूप को भी
पुष्कर-नाम्नि लोका:	पुष्कर नाम में लोग (भजते हैं)

हे प्रभु! प्लाक्ष में सूर्य के रूप में, शाल्मलि में चन्द्र रूप में, कुश नामक द्वीप में अग्नि रूप में, और फिर क्रौञ्च में जल रूप में, शाक में वायु मय, और पुष्कर में ब्रह्म रूप में लोग आपकी पूजा करते हैं।

सर्वैर्ध्रुवादिभिरुडुप्रकरैर्ग्रहैश्च
पुच्छादिकेष्ववयवेष्वभिकल्प्यमानै: ।
त्वं शिंशुमारवपुषा महतामुपास्य:
सन्ध्यासु रुन्धि नरकं मम सिन्धुशायिन् ॥११॥

सर्बै:-ध्रुव-आदिभि:-उडुप्रकरै:-	समस्त ध्रुव आदि नक्षत्रो द्वारा
ग्रहै:-च	और ग्रहों के द्वारा
पुच्छ-आदिकेषु अवयवेषु-	पूंछ आदि अवयवों में
अभिकल्प्यमानै:	कल्पना किये जाने से
त्वं शिंशुमार-वपुषा	आप शिशुमार स्वरूप से
महताम्-उपास्य:	ज्ञानीजनों के द्वारा उपासित हैं
सन्ध्यासु	(तीनों) सन्ध्याओं में
रुन्धि नरकं मम	रोकिये नरक को मेरे
सिन्धुशायिन्	हे! सिन्धुशायिन!

ज्ञानि जन तीनों सन्ध्या के समय आपके शिंशुमार स्वरूप की आराधना करते हैं। आपके उस स्वरूप के पूंछ आदि अवयवों में ध्रुव आदि समस्त नक्षत्र और सूर्य आदि ग्रहों की कल्पना की गई है। हे सिन्धुशायिन! मेरे नरक पात को रोकिये।

पातालमूलभुवि शेषतनुं भवन्तं
लोलैककुण्डलविराजिसहस्रशीर्षम् ।
नीलाम्बरं धृतहलं भुजगाङ्गनाभि-
र्जुष्टं भजे हर गदान् गुरुगेहनाथ ॥१२॥

पाताल-मूल-भुवि	पाताल के मूल में भूतल में
शेष-तनुं भवन्तं	शेष स्वरूप आपको
लोल-ऐक-कुण्डल-विराजि-सहस्र-शीर्षम्	झूमते हुए एकमात्र कुण्डल से सुशोभित एक हजार फण
नीलाम्बरं	नीलाम्बर युक्त
धृत-हलं	हल आयुध धारी
भुजग-अङ्गनाभि:-जुष्टं	भुजंगाङ्गनाओं के द्वारा सेवित
भजे	(मैं) भजता हूं

(शेषतनुं भवन्तं)	शेष स्वरूप आपको
हर गदान्	हरिये रोगों को
गुरुगेहनाथ	हे गुरुगेहनाथ!

मूल पाताल के भूतल पर आप शेष स्वरूप में विद्यमान हैं। झूमता हुआ एकमात्र कुण्डल आपके हजार फणो को सुशोभित करता है। आपने नीलाम्बर धारण किया है और हल आपका आयुध है। भुजंगाङ्गनाएं आपकी सेवा में रत हैं। आपके इस स्वरूप का मैं भजन करता हं। हे गुरुगेहनाथ! मेरे रोगों को हर लीजिये।

दशक २२

अजामिलो नाम महीसुर: पुरा
चरन् विभो धर्मपथान् गृहाश्रमी ।
गुरोर्गिरा काननमेत्य दृष्टवान्
सुधृष्टशीलां कुलटां मदाकुलाम् ॥१॥

अजामिल: नाम महीसुर:	अजामिल नाम का ब्राह्मण
पुरा	बहुत पहले
चरन् विभो धर्मपथान्	पालन करते हुए, हे प्रभो! धर्ममार्ग का
गृहाश्रमी	(उस) गृहस्थ ने
गुरो:-गिरा	पिता की आज्ञा से
काननम्-एत्य	वन में जा कर
दृष्टवान्	देखा
सुधृष्टशीलाम्	अत्यन्त जिद्दी
कुलटाम्	व्यभिचारिणी (स्त्री को)
मदाकुलाम्	(जो) मदोन्मत्त थी

हे प्रभु! बहुत पहले धर्म मार्ग का पालन करने वाला अजामिल नाम का गृहस्थ ब्राह्मण अपने पिता की आज्ञा से वन गया। वहां पहुंच कर उसने एक जिद्दी व्यभिचारिणी मदोन्मत्त स्त्री देखी।

स्वत: प्रशान्तोऽपि तदाहृताशय:
स्वधर्ममुत्सृज्य तया समारमन् ।
अधर्मकारी दशमी भवन् पुन-
र्दधौ भवन्नामयुते सुते रतिम् ॥२॥

स्वत: प्रशान्त:-अपि	स्वयं अत्यन्त शान्त होते हुए भी
तत्-आहृत-आशय:	उसके द्वारा आकृष्ट मन वाला

स्व-धर्मम्-उत्सृज्य	वह अपने धर्म को छोड कर
तया समारमन्	उसके संग रमण करने लगा
अधर्मकारी	अधार्मिक वह
दशमी भवन् पुनः-	दशमी स्थिति प्राप्त कर के (मरणासन्न हो कर)
दधौ	दिया
भवत्-नाम-युते सुते	आपके नाम वाले पुत्र मे
रतिम्	प्रेम

स्वयं अजामिल अत्यन्त शान्त स्वभाव का था। किन्तु उसमें मन आकृष्ट हो जाने पर वह उसके साथ रमण करने लगा और अधार्मिक हो गया। मरणासन्न अवस्था को प्राप्त हो कर उसका अपने उस पुत्र पर प्रेम होगया जिसको उसने आपका नाम 'नारायण' दिया था।

स मृत्युकाले यमराजकिङ्करान्
भयङ्करांस्त्रीनभिलक्षयन् भिया ।
पुरा मनाक् त्वत्स्मृतिवासनाबलात्
जुहाव नारायणनामकं सुतम् ॥३॥

स मृत्युकाले	वह मृत्य के समय
यमराज-किङ्करान्	यमराज के दूतों को
भयङ्करान्-त्रीन्-	अत्यन्त भयङ्कर तीनों को
अभिलक्षयन्	देख कर
भिया	डर से
पुरा मनाक्	पूर्व काल में
त्वत्-स्मृति-वासना-बलात्	आपकी स्मृति के संस्कार के बल से
जुहाव	पुकारा
नारायण-नामकं सुतम्	नारायण नाम के पुत्र को

यमराज के तीन भयङ्कर दूतों को देख कर वह भयभीत हो गया। पूर्वकाल में आपकी आराधना की स्मृति के संस्कार के बल से उसने अपने नारायण नाम के पुत्र को पुकारा।

दुराशयस्यापि तदात्वनिर्गत-
त्वदीयनामाक्षरमात्रवैभवात् ।
पुरोऽभिपेतुर्भवदीयपार्षदा:
चतुर्भुजा: पीतपटा मनोरमा: ॥४॥

दुराशयस्य-अपि तदा-तु	दुराचारी होते हुए भी तब भी
अनिर्गत त्वदीय-	निकल गया आपके
नाम-अक्षर-मात्र-वैभवात्	नाम का अक्षर मात्र (उसके) प्रभाव से
पुरः-अभिपेतुः-	उसके सामने प्रकट हो गये
भवदीय पार्षदाः	आपके पार्षद
चतुर्भुजाः पीतपटाः मनोरमाः	चार भुजा वाले, पीताम्बरधारी और अत्यन्त मनोहर

अत्यन्त दुराचारी होने पर भी आपके नामाक्षर मात्र के उच्चारण से उसके सामने आपके पार्षद प्रकट हो गये वे चतुर्भुज थे पीताम्बरधारी थे और अति मनोहर थे।

अमुं च संपाश्य विकर्षतो भटान्
विमुञ्चतेत्यारुरुधुर्बलादमी ।
निवारितास्ते च भवज्जनैस्तदा
तदीयपापं निखिलं न्यवेदयन् ॥५॥

अमुं च संपाश्य	और इसको (अजामिल को) बांध कर
विकर्षतः भटान्	खींचते हुए दूतों को
विमुञ्चत-इति-	छोड दो, इस प्रकार
आरुरुधुः-बलात्-अमी	क्रोध से बलपूर्वक वे
निवारिताः-ते च भवत्-जनैः-	रोक दिये गये वे आपके लोगों के द्वारा

तदा तदीय-पापं निखिलं	तब उसके सब पापों का
न्यवेदयन्	निवेदन किया

आपके पार्षदों ने अजामिल को बांध कर और खींच कर ले जाते हुए यमदूतों को रोका और क्रोधित हो कर कहा कि उसे छोड दें। तब उन दूतों ने उसके समस्त पापों का वर्णन किया।

भवन्तु पापानि कथं तु निष्कृते
कृतेऽपि भो दण्डनमस्ति पण्डिता: ।
न निष्कृति: किं विदिता भवादृशा-
मिति प्रभो त्वत्पुरुषा बभाषिरे ॥६॥

भवन्तु पापानि	भले ही पाप हों
कथं तु	कैसे फिर
निष्कृते कृते-अपि	प्रायश्चित कर लेने पर भी
भो दण्डनम्-अस्ति पण्डिता:	दण्ड होता है ओ पण्डितों
न निष्कृति किं विदिता	नहीं प्रायश्चित पता है क्या
भवदृशाम्-इति	आप जैसों को इस प्रकार
प्रभो	हे प्रभो!
त्वत्-पुरुषा बभाषिरे	आपके पार्षदों ने कहा

हे प्रभॊ! आपके पार्षदों ने कहा -'भले ही कितने भी पाप क्यों न हों, प्रायश्चित कर लेने पर भी क्या दण्ड होता है? हे पण्डितों! आप जैसों को क्या प्रायश्चित के बारे में भी कुछ ज्ञान है?

श्रुतिस्मृतिभ्यां विहिता व्रतादय:
पुनन्ति पापं न लुनन्ति वासनाम् ।
अनन्तसेवा तु निकृन्तति द्वयी-
मिति प्रभो त्वत्पुरुषा बभाषिरे ॥७॥

श्रुति-स्मृतिभ्यां	श्रुतियों और स्मृतियों में

विहिता: व्रतादय:	निर्देशित व्रत आदि से
पुनन्ति पापं	परिष्कृत होते हैं पाप
न लुनन्ति वासनां	नाश नहीं करते (पाप) वासना का,
अनन्त-सेवा तु	ईश्वर की सेवा तो
निकृन्तति द्वयीम्-इति	काट देती है दोनों को इस प्रकार
प्रभो	हे प्रभो!
त्वत्-पुरुषा बभाषिरे	आपके पार्षदों ने कहा

हे प्रभो! आपके पार्षदों ने कहा कि 'श्रुतियों और स्मृतियों में निर्देशित व्रत पापों को तो परिमार्जित कर देते हैं किन्तु तत जनित वासनाओं का नाश नहीं करते। परन्तु ईश्वर की सेवा दोनों को काट देती है।'

अनेन भो जन्मसहस्रकोटिभि:
कृतेषु पापेष्वपि निष्कृति: कृता ।
यदग्रहीन्नाम भयाकुलो हरे-
रिति प्रभो त्वत्पुरुषा बभाषिरे ॥८॥

अनेन भो	इसके (अजामिल) द्वारा, हे आप लोग!
जन्म-सहस्र-कोटिभि:	सहस्र करोड जन्मों से
कृतेषु पापेषु-अपि	किये जाने वाले पापों में भी
निष्कृति: कृता	प्रायश्चित कर लिया गया है
यत्-अग्रहीत्-नाम	क्योंकि ले लिया था नाम
भय-आकुल: हरे:-इति	भय से त्रस्त हरि का इस प्रकार
प्रभो	हे प्रभो!
त्वत्-पुरुषा बभाषिरे	आपके पार्षदों ने कहा

हे प्रभो! आपके पार्षदों ने कहा कि 'अजामिल ने सहस्र करोड जन्मों में किये गये पापों का भी प्रायश्चित कर लिया, क्योंकि भय से त्रस्त इसने हरि के नाम का उच्चारण कर लिया।'

नृणामबुद्ध्यापि मुकुन्दकीर्तनं
दहत्यघौघान् महिमास्य तादृश: ।
यथाग्निरेधांसि यथौषधं गदा -
निति प्रभो त्वत्पुरुषा बभाषिरे ॥९॥

नृणाम्-अबुद्ध्या-अपि	मनुष्यों के द्वारा अनजाने में भी
मुकुन्द्-कीर्तनं	मुकुन्द का कीर्तन
दहति-अघ-औघान्	जला देता है पापों के समूह को
महिमा-अस्य तादृश:	महिमा इसकी वैसी है
यथा-अग्नि:-एधांसि	जिस प्रकार अग्नि ईन्धन को
यथा-औषधं गदान् इति	जिस प्रकार औषधि रोगों को इस प्रकार
प्रभो	हे प्रभो!
त्वत्-पुरुषा बभाषिरे	आपके पार्षदों ने कहा

हे प्रभो! आपके पार्षदों ने फिर कहा कि 'मुकुन्द के कीर्तन की महिमा ऐसी है कि यह पापों के समूहों को उसी प्रकार जला डालती है, जिस प्रकार अग्नि ईन्धन को और औषधि रोगों को जला डालती है।'

इतीरितैर्याम्यभटैरपासृते
भवद्भटानां च गणे तिरोहिते ।
भवत्स्मृतिं कंचन कालमाचरन्
भवत्पदं प्रापि भवद्भटैरसौ ॥१०॥

इति-ईरितै:-	इस प्रकार कहे जाने पर
याम्य-भटै:-	यमदूतों के
अपासृते	चले जाने पर
भवत्-भटानां च	और आपके पार्षद
गणे तिरोहिते	समूदाय के तिरोहित हो जाने पर
भवत्-स्मृतिं	आपकी स्मृति को

कंचन कालम्-	कुछ काल तक
आचरन्	आचरण करते हुए
भवत्-पदं प्रापि	आपके पद को प्राप्त किया
भवत्-भटै:-असौ	आपके पार्षदों के द्वारा यह (अजामिल)

इस प्रकार समझाये जाने पर, यमदूतों के चले जाने पर और आपके पार्षद समूह के तिरोहित हो जाने पर, अजामिल कुछ समय तक आपकी स्मृति का आचरण करता रहा। फिर आपके पार्षदों के द्वारा उसने आपके पद को प्राप्त कर लिया।

स्वकिङ्करावेदनशङ्कितो यम-
स्त्वदंघ्रिभक्तेषु न गम्यतामिति ।
स्वकीयभृत्यानशिशिक्षदुच्चकै:
स देव वातालयनाथ पाहि माम् ॥११॥

स्व-किङ्कर-आवेदन-	अ्पने सेवकों के निवेदन करने पर
शङ्कित: यम:-	अचम्भित यम ने
त्वत्-अंघ्रि-भक्तेषु	आपके चरणो के भक्तों मे
न गम्यताम्-इति	नहीं जाना चाहिये इस प्रकार
स्वकीय-भृत्यान्-	अपने सेवकों को
अशिशिक्षत्-उच्चकै:	आदेश दिया कडे हो कर
स देव वातालयनाथ	वही हे देव! वातालयनाथ!
पाहि माम्	रक्षा करें मेरी

यमराज के सेवकों द्वारा सम्पूर्ण वृतान्त निवेदित किए जाने पर, तब विस्मित यमराज ने अत्यन्त कडे हो कर आदेश दिया कि आपके चरणो में भक्ति करने वालों के समीप कदापि न जायें। वही हे देव! हे वातालयनाथ ! मेरी रक्षा करें।

दशक २३

प्राचेतसस्तु भगवन्नपरो हि दक्ष-
स्त्वत्सेवनं व्यधित सर्गविवृद्धिकाम: ।
आविर्बभूविथ तदा लसदष्टबाहु-
स्तस्मै वरं ददिथ तां च वधूमसिक्नीम् ॥१॥

प्राचेतस:-तु	प्रचेताओं के पुत्र, निश्चय ही
भगवन्-	हे भगवन!
अपरो हि दक्ष:-	अन्य ही दक्ष
त्वत्-सेवनं व्यधित	आपकी सेवा करने लगा
सर्ग-विवृद्धि-काम:	सर्ग की वृद्धि की कामना से
आविर्बभूविथ तदा	प्रकट हुए तब
लसत्-अष्ट-बाहु:-	शोभायमान आठ बाहुओं से
तस्मै वरं ददिथ	उसके लिये वर दिया
तां च वधूम्-	और उस बधू को
असिक्नीम्	असिक्नी को

ब्रह्म पुत्र दक्ष से भिन्न, प्रचेताओं के पुत्र दक्ष ने सर्ग की वृद्धि की कामना से आपकी सेवा की और पूजन किया। तब अष्ट भुजाओं से सुशोभित आप उसके समक्ष प्रकट हुए। आपने उसको वरदान दिया और असिक्नी नाम की पत्नी भी दी।

तस्यात्मजास्त्वयुतमीश पुनस्सहस्रं
श्रीनारदस्य वचसा तव मार्गमापु: ।
नैकत्रवासमृषये स मुमोच शापं
भक्तोत्तमस्त्वृषिरनुग्रहमेव मेने ॥२॥

तस्य-आत्मजा:-	उसके पुत्र
तु-अयुतम्-	निश्चय ही दस हजार

ईश	हे भगवन!
पुनः-सहस्रं	और फिर हजार
श्रीनारदस्य वचसा	श्री नारद के वचन से
तव मार्गम्-आपुः	आपके मार्ग को प्राप्त हुए
न-ऐकत्र-वासम्-	नहीं एक स्थान पर वास हो
ऋषये	ऋषि को
स मुमोच शापं	उसने देदिया शाप
भक्त-उत्तमः-तु-ऋषिः-	भक्त श्रेष्ठ ऋषि (नारद ने)
अनुग्रहम्-एव मेने	अनुग्रह ही माना

दक्ष के दस हजार और एक हजार, अर्थात ग्यारह हजार पुत्र हुए। श्री नारद के उपदेश से वे सब आपके मार्ग में प्रवृत्त हो गये। इस पर दक्ष ने नारद जी को एक स्थान पर टिक कर न रहने का शाप दिया। भक्त श्रेष्ठ नारद ने इसे शाप न मान कर अनुग्रह ही माना।

षष्ट्या ततो दुहितृभिः सृजतः कुलौघान्
दौहित्रसूनुरथ तस्य स विश्वरूपः ।
त्वत्स्तोत्रवर्मितमजापयदिन्द्रमाजौ
देव त्वदीयमहिमा खलु सर्वजैत्रः ॥३॥

षष्ट्या ततः दुहितृभिः	साठ, तब, पुत्रियों से
सृजतः कुल-औघान्	उत्पन्न किया (विभिन्न) कुल समूहों का
दौहित्र-सूनुः-अथ तस्य	दौहित्र पुत्र तब उसके
स विश्वरूपः	वह विश्वरूप
त्वत्-स्तोत्र-वर्मितम्-	आपके (नारायण) स्तोत्र कवच का
अजापयत्-इन्द्रम्-	जप करवाया इन्द्र को
आजौ	युद्ध में

देव	हे देव!
त्वदीय-महिमा	आपकी महिमा
खलु सर्वजैत्र:	निश्चय ही सर्व जयी है

तब दक्ष ने अपनी साठ कन्याओं के द्वारा विभिन्न चराचर कुल समूहों को उत्पन्न किया। उसके दौहित्र के पुत्र विश्वरूप ने इन्द्र से नारायण कवच का जप करवाया और युद्ध में विजय प्राप्त करवाई। हे भगवन! निश्चय ही आपकी महिमा सर्व जयी है।

प्राक्शूरसेनविषये किल चित्रकेतु:
पुत्राग्रही नृपतिरङ्गिरस: प्रभावात् ।
लब्ध्वैकपुत्रमथ तत्र हते सपत्नी-
सङ्घैरमुह्यदवशस्तव माययासौ ॥४॥

प्राक्-	पूर्वकाल में
शूरसेन-विषये	शूरसेन के राज्य में
किल चित्रकेतु:	निश्चय ही, चित्रकेतु
पुत्र-आग्रही नृपति:	पुत्र के इच्छुक राजा ने
अंगिरस: प्रभावात्	अङ्गिरस के प्रभाव से
लब्ध्वा-एक-पुत्रम्-	प्राप्त किया एक पुत्र
अथ तत्र हते सपत्नीसङ्घै:-	तब वहां (उस पुत्र के) मारे जाने पर सौतों के द्वारा
अमुह्यत्-अवश:-	(वह राजा) सम्मोहित हो कर विवश हो गया
तव मायया असौ	आपकी माया से यह (राजा)

पूर्वकाल में शूरसेन के राज्य में चित्रकेतु नाम के राजा हुए। पुत्र के इच्छुक राजाने ऋषि अङ्गिरस के प्रभाव से पुत्र प्राप्त किया। लेकिन रानी की सौतों ने उसे मार दिया। दु:ख से कातर राजा आपकी माया से सम्मोहित हो कर अचेतन हो गये।

तं नारदस्तु सममङ्गिरसा दयालु:
सम्प्राप्य तावदुपदर्श्य सुतस्य जीवम् ।
कस्यास्मि पुत्र इति तस्य गिरा विमोहं

त्यक्त्वा त्वदर्चनविधौ नृपतिं न्ययुङ्क्त ॥५॥

तं नारदः-तु	उसको नारद ने निश्चय ही
समम्-अङ्गिरसा	साथ में अङ्गिरस के
दयालुः	दयालु (नारद ने)
सम्प्राप्य	(निकट) जा कर
तावत्-उपदर्श्य	फिर (उसको) दिखाया
सुतस्य जीवम्	पुत्र के जीव को
कस्य-अस्मि पुत्र(:) इति	किस का हूं मैं पुत्र इस प्रकार
तस्य गिरा	उसकी (पुत्र की) वाणी से
विमोहं त्यक्त्वा	मोह को त्याग कर
त्वत्-अर्चन-विधौ	आपकी अर्चना के विधान में
नृपतिं न्ययुङ्क्त	राजा प्रवृत्त हो गया

तब निश्चय ही दयालु नारद अङ्गिरस के संग उस राजा चित्रकेतु के पास गये। वहां उसे उसके पुत्र का जीव दिखाया। पुत्र ने पूछा कि वह किसका पुत्र है? उसकी वाणी से राजा का मोह दूर हो गया और वह आपकी अर्चना के विधान में प्रवृत्त हो गये।

स्तोत्रं च मन्त्रमपि नारदतोऽथ लब्ध्वा
तोषाय शेषवपुषो ननु ते तपस्यन् ।
विद्याधराधिपतितां स हि सप्तरात्रे
लब्ध्वाप्यकुण्ठमतिरन्वभजद्भवन्तम् ॥६॥

स्तोत्रं च मन्त्रम्-अपि	स्तोत्र और मन्त्र भी
नारदतः-अथ लब्ध्वा	नारद से तब पा कर
तोषाय शेष-वपुषः	प्रसन्नता के लिये शेष स्वरूप
ननु ते तपस्यन्	निश्चय ही आपकी तपस्या करते हुए

विद्याधर-अधिपतितां	विद्याधर के अधिपत्य को
स हि सप्त-रात्रे लब्ध्वा-	वह ही सात रात्रियों में प्राप्त कर के
अपि-अकुण्ठमतिः-	(और) भी अकुण्ठित बुद्धि वाले
अन्वभजत्-भवन्तम्	भजन करने लगे आपका

राजा चित्रकेतु ने नारद ही से स्तोत्र और मन्त्र पाया और आपके शेष स्वरूप की प्रसन्नता के लिये आपकी तपस्या करने लगे। सात रात्रियों में ही उन्होने विद्याधर के अधिपत्य को प्राप्त कर लिया। इस प्रकार और भी अकुण्ठित और निर्मल बुद्धि वाले हो कर वे आपका भजन करने लगे।

तस्मै मृणालधवलेन सहस्रशीर्ष्णा
रूपेण बद्धनुतिसिद्धगणावृतेन ।
प्रादुर्भवन्नचिरतो नुतिभिः प्रसन्नो
दत्वाऽऽत्मतत्त्वमनुगृह्य तिरोदधाथ ॥७॥

तस्मै	उसके लिये (चित्रकेतु के लिये)
मृणाल-धवलेन	कमल नाल के समान श्वेत
सहस्र-शीर्ष्णा	हजार फणो वाले
रूपेण	रूप के द्वारा
बद्धनुति-सिद्धगण-आवृतेन	सतत स्तुति करते हुए सिद्धगणों से घिरे हुए
प्रादुर्भवन्-अचिरतः	प्रकट हो कर तुरन्त
नुतिभिः प्रसन्नः	स्तुतियों से प्रसन्न हो कर
दत्वा-आत्म-तत्त्वम्-	दे कर आत्म तत्व (ज्ञान) को
अनुगृह्य	और अनुग्रह कर के
तिरोदधाथ	अन्तर्धान हो गये

तदन्तर चित्रकेतु की स्तुतियों से प्रसन्न हो कर आप कमल नाल के समान श्वेत सहस्र फणो वाले स्वरूप से उनके लिये प्रकट हो गये। उस समय आप सतत स्तुति करते हुए सिद्धगणों से घिरे हुए थे। आपने राजापर अनुग्रह कर के उन्हें तुरन्त आत्म तत्व का ज्ञान दिया और अन्तर्धान हो गये।

त्वद्भक्तमौलिरथ सोऽपि च लक्षलक्षं
वर्षाणि हर्षुलमना भुवनेषु कामम् ।
सङ्गापयन् गुणगणं तव सुन्दरीभि:
सङ्गातिरेकरहितो ललितं चचार ॥८॥

त्वत्-भक्त-मौलि:-अथ स-	आपके भक्त शिरोमणि फिर वे
अपि च	और भी
लक्ष-लक्षं वर्षाणि	लाख लाख वर्षों तक
हर्षुल-मना	हर्षित मन से
भुवनेषु	समस्त भुवनों में
कामम् सङ्गापयन्	स्वेच्छा से गान करवाते हुए
गुणगणं तव	आपके गुणगणों का
सुन्दरीभि:	सुन्दरी विद्याधरियों के द्वारा
सङ्ग-अतिरेक-रहित:	अत्यन्त अनासक्ति के साथ
ललितं चचार	प्रसन्नता से विचरण करते रहे

आपके भक्त शिरोमणि राजा चित्रकेतु, प्रसन्न चित्त हो कर, लाख लाख वर्षों तक समस्त भुवनों में, सुन्दरी विद्याधरियों के द्वारा आपके गुण गणों का गान कराते रहे। वे स्वयं अत्यन्त अनासक्ति के सङ्ग स्वेच्छा पूर्वक विचरण करते रहे।

अत्यन्तसङ्गविलयाय भवत्प्रणुन्नो
नूनं स रूप्यगिरिमाप्य महत्समाजे ।
निश्शङ्कमङ्कृतवल्लभमङ्गजारिं
तं शङ्करं परिहसन्नुमयाभिशेपे ॥९॥

अत्यन्त-सङ्ग-विलयाय	पूर्ण रूप से आसक्ति त्यागने के लिये
भवत्-प्रणुन्न: नूनं	आपसे प्रेरित निश्चय ही
स रूप्यगिरिम्-आप्य	वह रूप्य गिरि (कैलाश) पर पहुंच कर
महत्-समाजे	साधु समाज में

निश्शङ्कम्-	निश्शङ्क भाव से
अङ्क-कृत-वल्लभम्-	अङ्क मे लिये हुए पत्नी को (पार्वती को)
अङ्गजारिं तं शङ्करं	काम देव के शत्रु शंकर का
परिहसन्-	परिहास किया
उमया-अभिशेपे	उमा ने (उसे) शाप दे दिया

अपनी आसक्तियों को पूर्ण रूप से त्यागने के लिये, आप से प्रेरित हो कर, वे रूप्य गिरि - कैलाश पर पहुंचे। वहां साधु समाज में, न्श्शिङ्क भाव से अपनी पत्नि पार्वती को अङ्क में बैठाये हुए शंकर को देख कर, उनका परिहास किया। इस पर उमा ने चित्रकेतु को शापित किया।

निस्सम्भ्रमस्त्वयमयाचितशापमोक्षो
वृत्रासुरत्वमुपगम्य सुरेन्द्रयोधी ।
भक्त्यात्मतत्त्वकथनै: समरे विचित्रं
शत्रोरपि भ्रममपास्य गत: पदं ते ॥१०॥

निस्सम्भ्रम:-	अचिन्तित
तु-अयम्-	ही इसने (चित्रकेतु ने)
अयाचित-शाप-मोक्ष:	नहीं मांगते हुए शाप से मुक्ति
वृत्रासुरत्वम्-उपगम्य	वृत्रासुरत्व को प्राप्त कर के
सुरेन्द्र-योधी	इन्द्र से युद्ध करते हुए
भक्त्या-	भक्ति से
आत्मतत्त्व-कथनै:	आत्मतत्व के वर्णन के द्वारा
समरे	युद्ध में
विचित्रं	आश्चर्य है
शत्रो:-अपि भ्रमम्-	शत्रु के भी भ्रम को
अपास्य	दूर करके

गतः पदं ते	चला गया आपके पद को

चित्रकेतु ने अविचिलित रहते हुए शाप से मुक्ति की भी याचना नहीं की, और वृत्रासुरत्व को प्राप्त कर के इन्द्र से युद्ध किया। युद्ध में ही अत्यन्त भक्ति पूर्वक उन्होंने आत्मतत्व का निरूपण किया। और आश्चर्य है कि उससे शत्रु का भी मोह भ्रम दूर हो गया। फिर वे आप के निवास स्थान को चले गये।

त्वत्सेवनेन दितिरिन्द्रवधोद्यताऽपि
तान्प्रत्युतेन्द्रसुहृदो मरुतोऽभिलेभे ।
दुष्टाशयेऽपि शुभदैव भवन्निषेवा
तत्तादृशस्त्वमव मां पवनालयेश ॥११॥

त्वत्-सेवनेन	आपकी सेवा करने से
दितिः-	दिति
इन्द्र-वध-उद्यता-अपि	इन्द्र के वध के लिये उद्यत होते हुए भी
तान्-प्रत्युत-	उनको, बदले में
इन्द्र-सुहृदः मरुतः-	इन्द्र के सुहृद मरुत गण
अभिलेभे	प्राप्त हुए
दुष्ट-आशये-अपि	दूषित इच्छाओं वालों के लिये भी
शुभदा-एव	शुभदायिनी होती हैं
भवत्-निषेवा	आपकी अर्चना
तत्-तादृशः-त्वम्-	वही इस प्रकार के
अव मां	बचाइये मुझ को
पवन-आलय-ईश	हे पवन आलय ईश्वर!

दिति इन्द्र का वध करने की इच्छुक थी। किन्तु आपकी अर्चना करने से उसे इन्द्र के मित्र मरुत्गणो की प्राप्ति हुई। आपकी अर्चना के प्रभाव से दूषित संकल्पों वालों के भी संकल्प शुभ दायी हो जाते हैं। वही इस प्रकार के आप मेरी रक्षा करें, हे पवनालय के ईश्वर!

दशक २४

हिरण्याक्षे पोत्रिप्रवरवपुषा देव भवता
हते शोकक्रोधग्लपितधृतिरेतस्य सहज: ।
हिरण्यप्रारम्भ: कशिपुरमरारातिसदसि
प्रतिज्ञमातेने तव किल वधार्थं मधुरिपो ॥१॥

हिरण्याक्षे (हते)	हिरण्याक्ष के
पोत्रि-प्रवर-वपुषा	वराह की उत्तम मूर्ति के द्वारा
देव भवता	हे देव! आपके द्वारा
हते	मारे जाने पर
शोक-क्रोध-ग्लपित-धृति:-	शोक और क्रोध से आच्छादित बुद्धि वाले
एतस्य सहज:	इसके भाई
हिरण्य-प्रारम्भ: कशिपु:-	हिरण्य से आरम्भ कशिपु:ने
अमर-अराति-सदसि	देवों के शत्रु (असुरों) की सभा में
प्रतिज्ञाम्-आतेने	प्रतिज्ञा को किया
तव किल वधार्थं	आपके निश्चय ही वध के लिये
मधुरिपो	हे मधुरिपू!

अति उत्तम वराह स्वरूप धारण कर के जब आपने हिरण्याक्ष को मार डाला तब उसका भाई हिरण्यकशिपु: शोक और क्रोध से विह्वल हो कर मति खो बैठा। हे मधुरिपु! तब राक्षसों की सभा में, उसने आपको मार डालने की प्रतिज्ञा की।

विधातारं घोरं स खलु तपसित्वा नचिरत:
पुर: साक्षात्कुर्वन् सुरनरमृगाद्यैरनिधनम् ।
वरं लब्ध्वा दृप्तो जगदिह भवन्नायकमिदं
परिक्षुन्दन्निन्द्रादहरत दिवं त्वामगणयन् ॥२॥

विधातारं घोरं	ब्रह्मा जी को, घोर

स खलु तपसित्वा	उसने निश्चय ही तपस्या करके
न-चिरतः पुरः साक्षात्-कुर्वन्	शीघ्र ही सामने साक्षात कर के
सुर-नर-मृग-आद्यैः-	देव, नर और पशुओं आदि के द्वारा
अनिधनं वरं लब्ध्वा	न मारे जाने का वर ले कर
दृप्तः	गर्वित
जगत्-इह	जगत यह
भवन्-नायकम्-इदं	आप जिसके नायक हैं
परिक्षुन्दन्-	पीडित करते हुए
इन्द्रात्-अहरत् दिवं	इन्द्र से छीन लिया स्वर्ग को
त्वाम्-अगण्यन्	आपकी अवहेलना करते हुए

उसने निश्चय ही घोर तपस्या कर के शीघ्र ही ब्रह्मा जी को अपने सामने उपस्थित कर लिया। देव मनुष्य अथवा पशु किसी के भी द्वारा न मारे जाने का वर प्राप्त कर के वह गर्वित हो उठा। इस जगत के नियन्ता आप की अवहेलना करते हुए उसने इस जगत को पीडित कर दिया और इन्द्र से उसका देवलोक छीन लिया।

निहन्तुं त्वां भूयस्तव पदमवाप्तस्य च रिपो-
र्बहिर्दृष्टेरन्तर्दधिथ हृदये सूक्ष्मवपुषा ।
नदन्नुच्चैस्तत्राप्यखिलभुवनान्ते च मृगयन्
भिया यातं मत्वा स खलु जितकाशी निववृते ॥३॥

निहन्तुं त्वां भूयः-	मारने के लिये आप को, फिर
तव पदम्-अवाप्तस्य	आपके निवास पर पहुंचे हुए उसके
च रिपोः-बहिर्दृष्टेः-	और उस शत्रु के देह्चक्षुओं से
अन्तर्दधिथ	(आप) अन्तर्धान हो गये
हृदये सूक्ष्म-वपुषा	हृदय में सूक्ष्म शरीर के द्वारा
नन्दन्-उच्चैः-तत्र-अपि-	ऊंचे स्वर मे चीत्कार करते हुए, वहां भी

अखिल-भुवन्-अन्ते च	और समस्त भुवनों के अन्त तक
मृगयन्	खोजते हुए
भिया यातं मत्वा	डर से भाग गया जान कर (आपको)
स खलु जितकाशी	वह निश्चय ही विजयी मान कर (स्वयं को)
निववृते	लौट गया

आपको मारने के लिये वह आपके निवास स्थान वैकुण्ठ को पहुंच गया। आप अपने शत्रु के देह चक्षुओं से ओझल हो कर सूक्ष्म रूप से उसके हृदय में प्रवेश कर गये। तीव्र चीत्कार के साथ वह आपको भुवनों के अन्त तक खोजता रहा। फिर आपको डर से भागा हुआ और स्वयं को विजयी मान कर वह लौट गया।

ततोऽस्य प्रह्लाद: समजनि सुतो गर्भवसतौ
मुनेर्वीणापाणेरधिगतभवद्भक्तिमहिमा ।
स वै जात्या दैत्य: शिशुरपि समेत्य त्वयि रतिं
गतस्त्वद्भक्तानां वरद परमोदाहरणताम् ॥४॥

तत:-अस्य	तब उसके
प्रह्लाद: समजनि सुत:	प्रह्लाद पैदा हुआ पुत्र
गर्भवसतौ	(जो) गर्भ में रहते हुए ही
मुने:-वीणा-पाणे:-	मुनि नारद से
अधिगत-	सीख गया था
भवत्-भक्ति-महिमा	आपकी भक्ति की महिमा को
स वै जात्या दैत्य:	वह जाति से दैत्य होते हुए भी
शिशु:-अपि	बालक होते हुए भी
समेत्य त्वयि रतिं	ग्रहण करते हुए आपमें प्रेम को
गत: त्वत् भक्तानाम्	पा गया आपके भक्तों में
वरद	हे वरद!

परम-उदाहरणताम् (गत:)	परम उदाहरणता को

तदनन्तर, उसके प्रह्लाद नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने गर्भ में रहते हुए ही वीणा पाणि नारद जी से आपकी भक्ति की महिमा का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। हे वरद! दैत्य वंश का होते हुए भी, बाल काल में ही आपका प्रेमी हो कर, वह आपके भक्तों में परम भक्त का उदाहरण बन गया।

सुरारीणां हास्यं तव चरणदास्यं निजसुते
स दृष्ट्वा दुष्टात्मा गुरुभिरशिशिक्षच्चिरममुम् ।
गुरुप्रोक्तं चासाविदमिदमभद्राय दृढमि-
त्यपाकुर्वन् सर्वं तव चरणभक्त्यैव ववृधे ॥ ५ ॥

सुरारीणां हास्यं	असुरों के लिये हास्यास्पद
तव चरण-दास्यं	आपके चरणों की दासता
निज-सुते स दृष्ट्वा	अपने पुत्र में उसने देख कर
दुष्टात्मा	दुष्टात्मा उसने
गुरुभि:-अशिशिक्षत्-	गुरुओं के द्वारा सिखाया
चिरम्-अमुम्	बहुत समय तक इसको
गुरु-प्रोक्तं च-असौ-	और गुरु के द्वारा कहा गया यह
इदम्-इदम्-अभद्राय दृढम्-इति	यह, यह सब अशुभ है निश्चित ऐसा (करके)
अपाकुर्वन् सर्वं	त्याग कर सब को
तव चरण भक्त्या-एव	आपके चरणो की भक्ति से ही
ववृधे	बढता गया

असुरों के लिये हास्यास्पद आपके चरणो की दासता को अपने पुत्र में देख कर, उस दुष्टात्मा हिरण्यकशिपु ने गुरुओं के द्वारा प्रह्लाद को बहुत समय तक शिक्षा दिलवाई। गुरुओं के द्वारा दिया गया सारा ज्ञान अकल्याण्कारी है, ऐसा निश्चय करके उन सब का त्याग कर के वह आपके चरणों की भक्ति के साथ बढता रहा।

अधीतेषु श्रेष्ठं किमिति परिपृष्टेऽथ तनये
भवद्भक्तिं वर्यामभिगदति पर्याकुलधृति: ।

गुरुभ्यो रोषित्वा सहजमतिरस्येत्यभिविदन्
वधोपायानस्मिन् व्यतनुत भवत्पादशरणे ॥६॥

अधीतेषु श्रेष्ठं किम्-	पढे हुए में श्रेष्ठ क्या है
इति परिपृष्टे-	यह पूछे जाने पर
अथ तनये	तब पुत्र के
भवत्-भक्तिं वर्याम्-	आपकी भक्ति की श्रेष्ठता को
अभिगदति	कहे जाने पर
पर्याकुल-धृतिः	विचलित बुद्धि
गुरुभ्यः रोषित्वा	गुरुओं पर क्रोध करके
सहज-मतिः-अस्य-	सहज स्वभाव है इसका
इति-अभिविदन्	ऐसा जान कर
वधोपायान्-	वध करने के उपायों को
अस्मिन् व्यतनुत	इस के ऊपर प्रयोग करने लगा
भवत्-पाद-शरणे	आपके चरणों के शरणागत पर

'पढे हुए पाठ में श्रेष्ठ क्या है' ऐसा पूछे जाने पर प्रह्लाद ने आपकी भक्ति को ही सर्वोत्तम बताया। इससे विचलित बुद्धि हिरण्यकशिपु गुरुओं पर बहुत क्रोधित हुआ। गुरुओं से यह जान कर कि यह प्रह्लाद का सहज स्वभाव है, वह आपके चरणों की शरण में आए प्रह्लाद पर उसके वध के उपायों का, प्रयोग करने लगा।

स शूलैराविद्धः सुबहु मथितो दिग्गजगणै-
र्महासर्पैर्दष्टोऽप्यनशनगराहारविधुतः ।
गिरीन्द्रवक्षिप्तोऽप्यहह! परमात्मन्नयि विभो
त्वयि न्यस्तात्मत्वात् किमपि न निपीडामभजत ॥७॥

सः	वह
शूलैः-आविद्धः सुबहु	त्रिशूलों से बिंधवाया गय अनेक बार

मथित: दिग्गज-गणै:-	मर्दित करवाया गया दिग्गज हाथियों के द्वारा
महा-सर्पै:-दष्ट:-	बडे सर्पों के द्वारा दंशित करवाया गया
अपि-अनशन-	(और) भी निराहार रखा गया
गर-आहार-विधुत:	विषाक्त भोजन करवाया गया
गिरीन्द्र-अवक्षिप्त:-	गिरीन्द्रों के ऊपर से फिंकवाया गया
अपि-अहह	और भी ओहोहो!
परमात्मन्-अयि विभो	हे विश्वव्यापक प्रभु!
त्वयि न्यस्त-आत्मत्वात्	आपमे स्थिर कर लिया था मन, इस कारण से
किम्-अपि न निपीडाम्-	कुछ भी पीडा को नहीं
अभजत्	अनुभव किया

प्रह्लाद को अनेक बार शूलों से बिंधवाया गया, विशाल हाथियों से मर्दित करवाया गया, बडे बडे सर्पों से दंशित करवाया गया, निराहा रखा गया, विषाक्त भोजन करवाया गया, गिरीन्द्रों के ऊपर से गिरवाया गया। हे विश्वव्यापक प्रभु! आश्चर्य है कि आपमें मन को स्थिर कर लेने के कारण उसने थोडी सी भी पीडा का अनुभव नहीं किया।

ततः शङ्काविष्टः स पुनरतिदुष्टोऽस्य जनको
गुरूक्त्या तद्गेहे किल वरुणपाशैस्तमरुणत् ।
गुरोश्चासान्निध्ये स पुनरनुगान् दैत्यतनयान्
भवद्भक्तेस्तत्त्वं परममपि विज्ञानमशिषत् ॥८॥

ततः शङ्का-आविष्टः सः पुनः-	तब शंका से वशीभूत उसने फिर से
अति-दुष्टः-अस्य जनकः	अत्यन्त दुष्ट इसके पिता ने
गुरु-उक्त्या	गुरु के कहने पर
तत्-गेहे किल	उसके गृह में ही
वरुण पाशैः	वरुण पाशों से
तम्-अरुणत्	उसको बांध दिया

गुरो:-च-असान्निध्ये	और गुरु के समीप न होने पर
स: पुन:-	वह (प्रह्लाद) फिर से
अनुगान् दैत्य-तनयान्	संग थे जो दैत्य पुत्र, (उनको)
भवत्-भक्ते:-तत्त्वम्	आपकी भक्ति के तत्व को
परमम्-अपि विज्ञानम्-	और उत्तम ज्ञान (ब्रह्म ज्ञान) की
अशिषत्	शिक्षा देता था

तब, उसके सशंक और अति दुष्ट पिता ने, गुरु के कहने पर, गुरु के ही घर पर, उसे वरुण पाशों से बंधवा दिया। वहां, जब भी गुरु समीप नहीं होते थे, तब प्रह्लाद अपने संगी दैत्य पुत्रों को आपकी भक्ति की महिमा और उत्तम ब्रह्म ज्ञान की शिक्षा देता था।

पिता श‍ृण्वन् बालप्रकरमखिलं त्वत्स्तुतिपरं
रुषान्ध: प्राहैनं कुलहतक कस्ते बलमिति ।
बलं मे वैकुण्ठस्तव च जगतां चापि स बलं
स एव त्रैलोक्यं सकलमिति धीरोऽयमगदीत् ॥९॥

पिता श‍ृण्वन्	पिता ने सुन कर
बाल-प्रकरम्-अखिलं	समस्त बालक गण को
त्वत्-स्तुति-परं	(जो) आपकी स्तुति कर रहे थे
रुषान्ध:	क्रोध से अन्धे हो कर,
प्राह-एनं	कहा इसको
कुलहतक क:-ते बलम्-इति	कुल द्रोही! तेरा बल क्या है! इस प्रकार
बलं मे वैकुण्ठ:-	बल मेरे विष्णु हैं
तव च	आपके भी
जगतां च-अपि स बलं	और समस्त जगत के भी बल हैं
स एव त्रैलोक्यं सकलम्-	वह ही सारा त्रैलोक्य हैं

इति धीरः-अयम्-अगदीत्	इस प्रकार इस धीर ने कहा

पिता ने जब सुना कि पूरा बाल समूह आपकी स्तुति करने में लीन है, तब क्रोध से अन्धे हो कर उसने प्रह्लाद को कहा, 'कुल द्रोही! तेरा बल क्या है?' इस पर धीर और निडर प्रह्लाद ने कहा, 'मेरे बल विष्णु है, और आपके भी, और सारे जगत के भी। वे ही त्रिलोक स्वरूप हैं।'

अरे क्वासौ क्वासौ सकलजगदात्मा हरिरिति
प्रभिन्ते स्म स्तंभं चलितकरवालो दितिसुत: ।
अत: पश्चाद्विष्णो न हि वदितुमीशोऽस्मि सहसा
कृपात्मन् विश्वात्मन् पवनपुरवासिन् मृडय माम् ॥१०॥

अरे क्व-असौ क्व-असौ	अरे कहां है यह, कहां है यह
सकल-जगत-आत्मा हरिः-	सारे जगत के आत्मा भगवान
इति	ऐसे
प्रभिन्ते स्म स्तंभं	प्रहार किया जब स्तम्भ पर
चलित-करवालः	चला कर तलवार
दिति-सुतः	दिति पुत्र (हिरण्यकशिपु ने)
अतः पश्चात्-	उसके पश्चात
विष्णो	हे विष्णु!
न हि वदितुम्-ईशः-अस्मि सहसा	नहीं बोलने में हे ईश्वर! समर्थ हूं मैं सहसा
कृपात्मन्	हे कृपात्मन!
विश्वात्मन्	हे विश्वात्मन!
पवनपुरवासिन्	हे पवनपुरवासिन!
मृडय माम्	मुझे परिपूरित कीजिये

'अरे कहां है, कहां है यह सारे जगत का आत्म स्वरूप" इस प्रकार कहते हुए जब दिति के पुत्र हिरण्यकशिपु ने तलवार चला कर स्तम्भ पर प्रहार किया, तब इसके पश्चात जो हुआ, हे विष्णु! हे ईश्वर! मैं सहसा बोल सकने में समर्थ नहीं हूं। हे कृपात्मन! हे विश्वात्मन! हे पवनपुरवासिन! मुझे परिपूरित कीजिये।

दशक २५

स्तंभे घट्टयतो हिरण्यकशिपो: कर्णौ समाचूर्णय-
न्नाघूर्णज्जगदण्डकुण्डकुहरो घोरस्तवाभूद्रव: ।
श्रुत्वा यं किल दैत्यराजहृदये पूर्वं कदाप्यश्रुतं
कम्प: कश्चन संपपात चलितोऽप्यम्भोजभूर्विष्टरात् ॥१॥

स्तम्भे घट्टयत:	स्तंभ पर प्रहार करते हुए
हिरण्यकशिपो:	हिरण्यकशिपु के
कर्णौ समाचूर्णयन्-	कान फट गये
आघूर्णत्-जगत्-अण्ड-कुण्ड-कुहर:	(और) चक्कर खाने लगे ब्रह्माण्ड के भीतर समस्त चराचर
घोर:-तव-अभूत्-रव:	(इस प्रकार का) अत्यन्त घोर शब्द हुआ आपका
श्रुत्वा यं किल	सुन कर जिसको निश्चय ही
दैत्यराज हृदये	दैत्यराज के हृदय में
पूर्वं कदापि-अश्रुतं	पहले कभी भी न सुना था
कम्प: कश्चन संपपात	(ऐसा) अवर्णनीय प्रकम्प उठ गया
चलित:-अपि-अम्भोजभू:-	विचलित हो गये ब्रह्मा जी भी
विष्टरात्	अपने आसन से

हिरण्यकशिपु के स्तम्भ पर प्रहार करते ही उसमें से आपका घोर गर्जन भरा ऐसा शब्द हुआ कि उसके कान फट गये और ब्रह्माण्ड के भीतर के समस्त चराचर चक्कर खाने लगे। दैत्यराज ने ऐसा भीषण गर्जन पहले कभी नही सुना था। इसे सुन कर उसके हृदय में अवर्णनीय प्रकम्प जाग उठा। सत्यलोक में कमल जन्मा ब्रह्मा भी अपने आसन से विचलित हो गये।

दैत्ये दिक्षु विसृष्टचक्षुषि महासंरम्भिणि स्तम्भत:
सम्भूतं न मृगात्मकं न मनुजाकारं वपुस्ते विभो ।
किं किं भीषणमेतदद्भुतमिति व्युद्भ्रान्तचित्तेऽसुरे
विस्फूर्ज्जद्धवलोग्ररोमविकसद्वर्ष्मा समाजृम्भथा: ॥२॥

दैत्ये दिक्षु विसृष्ट-चक्षुषि	दैत्य के चारों ओर दृष्टि डालते हुए

महासंरम्भिणि	विशेष कोलाहल के बीच
स्तम्भत: सम्भूतं	स्तम्भ से प्रकट हुए
न मृगात्मकं	न तो पशु रूप को
न मनुजाकारं	न ही मनुष्य रूप को
वपु:-ते विभो	शरीर आपका हे विभो! (देख कर)
किं किं भीषणम्-एतत्-	क्या! क्या! भयंकर (है) यह!
अद्भुतम्-इति	अद्भुत है यह, इस प्रकार
व्युद्भ्रान्त-चित्ते-असुरे	अति विचलित बुद्धि हो जाने पर असुर के
विस्फूर्जत्-	विस्फुरित होते हुए
धवल-उग्र-रोम-	श्वेत उग्र रोम वाले
विकसत्-वर्ष्मा	उज्ज्वल प्रकाश वाले
समाजृम्भथा:	(विशाल आकृति में) बढने लगे (आप नृसिंह रूप में)

महान कोलाहल के बीच, जब चकित और विम्भ्रान्त हो कर दैत्य चारों ओर दृष्टि डालने लगा तब, स्तम्भ में से आपका स्वरूप न तो पशु रूप में, न ही मनुष्य रूप में, प्रकट हो गया। अत्यन्त विचलित बुद्धि वाला असुर 'यह भयंकर और अद्भुत क्या है, क्या है', इस प्रकार चीत्कार कर उठा। विस्फुरित होते हुए श्वेत उग्र रोम वाले तथा उज्ज्वल प्रकाश वाले आप नृसिंह रूप में प्रकट हो कर, विशाल आकृति में विकसित होने लगे।

तप्तस्वर्णसवर्णघूर्णदतिरूक्षाक्षं सटाकेसर-
प्रोत्कम्पप्रनिकुम्बितांबरमहो जीयात्तवेदं वपु: ।
व्यात्तव्याप्तमहादरीसखमुखं खड्गोग्रवल्गन्महा-
जिह्वानिर्गमदृश्यमानसुमहादंष्ट्रायुगोड्डामरम् ॥३॥

तप्त-स्वर्ण-सवर्ण-	तप्त स्वर्ण के समान वर्ण वाले
घूर्णत्-	घूमते हुए
अति-रुक्ष-आक्षं	अत्यन्त भयंकर नेत्र वाले

सटाकेसर प्रोत्कम्प-	गर्दन के बाल कांपते हुए ऊपर को उठते हुए
प्रनिकुम्बित्-अम्बरम्-	आच्छादित करते हुए आकाश मण्डल को
अहो जीयत्-	अहो! जय हो!
तव-इदं वपुः	आपका यह स्वरूप
व्यात्त-व्याप्त-महादरी-सख-मुखं	चौडी बडी गहरी गुफा के समा्न मुख
खड्ग-उग्र-वल्गन्-महा-जिह्वा-निर्गम	खड्ग के समान उग्र लपलपाती हुई विशाल जिह्वा लटकती हुई
दृश्यमान-सुमहा-दंष्ट्रायुग-उड्डामरम्	दृश्यमान अत्यन्त बडे दो दन्तों से अतीव भयंकर

अहो! जय हो! आपके उस स्वरूप की जो तप्त स्वर्ण के समान पीला है, और घूमते हुए भयंकर नेत्रों वाला है। गर्दन के बाल कांपते हुए ऊपर की ओर उठते हुए आकाश मण्डल को आच्छादित कर रहे हैं, बडी चौडी और गहरी गुफा के समान मुख है। खड्ग के समान लपलपाती हुई बडी जिह्वा दृष्यमान दो विशाल दांतों के बीच से लटकती हुई अत्यधिक भयंकर लग रही है।

उत्सर्पद्वलिभङ्गभीषणहनु ह्रस्वस्थवीयस्तर-
ग्रीवं पीवरदोश्शतोद्गतनखक्रूरांशुदूरोल्बणम् ।
व्योमोल्लङ्घि घनाघनोपमघनप्रध्वाननिर्धावित-
स्पर्धालुप्रकरं नमामि भवतस्तन्नारसिंहं वपुः ॥४॥

उत्सर्पत्-वलिभङ्ग-	ऊपर की ओर उठे हुए त्वचा के सल
भीषण-हनु	भयंकर ठोडी
ह्रस्व-स्थवीयः-तर-ग्रीवं	छोटी और बहुत पुष्ट गर्दन
पीवर-दोश्शत-उद्गत-नख-	मोटे सैकडों हाथों के नखों से उठ्ती हुई
क्रूरांशु-दूरोल्बणं	क्रूर किरणों से अत्यन्त भयावने लग रहे थे
व्योम-उल्लङ्घि	आकाश का उल्लङ्घन करता हुआ
घनाघन-उपम-घन-प्रध्वान-	घने बादलों के समान घोर गर्जन जो
निर्धावित-स्पर्धालु-प्रकरं	प्रताडित कर देने वाला था शत्रु समूहों को

नमामि	नमन करता हूं
भवतः-तत्-नारसिंहं वपुः	आपके उस नृसिंह स्वरूप को

आपके उस अद्वीतीय नृसिंह स्वरूप को मैं नमन करता हूं, जिसकी उपर उठी हुई त्वचा के सलोंहटो से ठुड्डी और भी भयंकर लग रही थी, जिसकी गर्दन मोटी और पुष्ट थी, जिसके सैंकडों मोटे हाथों के नखों से निकलती हुई किरणों से हाथ और भी भयानक लग रहे थे, और जिसका आकाश का उल्लङ्घन करते हुए घने बादलों के गर्जन के समान घोर गर्जन जो शत्रु समूहों को प्रताडित करने में सक्षम था।

नूनं विष्णुरयं निहन्म्यमुमिति भ्राम्यद्गदाभीषणं
दैत्येन्द्रं समुपाद्रवन्तमधृथा दोर्भ्यां पृथुभ्याममुम् ।
वीरो निर्गलितोऽथ खड्गफलकौ गृह्णन्विचित्रश्रमान्
व्यावृण्वन् पुनरापपात भुवनग्रासोद्यतं त्वामहो ॥५॥

नूनं विष्णुः-अयं	निश्चय ही विष्णु है यह
निहन्मि-अमुम्-इति	मारूंगा इसको इस प्रकार
भ्राम्यत्-गदा-भीषणं	घूमाते हुए गदा को भयंकर
दैत्येन्द्रं समुपाद्रवन्तम्-	दैत्यराज (हिरण्यकशिपु) को (आपकी ओर) भागते हुए को
अधृथा दोर्भ्यां पृथुभ्यां-अमुम्	(आपने) पकड लिया दो बलशाली भुजाओं से उसको
वीरः निर्गलितः-अथ	वह वीर निकल कर (आपकी पकड से) तब
खड्ग-फलकौ गृह्णन्-	तलवार और ढाल ले कर
विचित्र-श्रमान् व्यावृण्वन्	विचित्र करतब करता हुआ
पुनः-आपपात	फिर से आ पडा
भुवन-ग्रास-उद्यतं त्वाम्-	विश्व को ग्रसित करने को उद्यत, आप पर
अहो	अहो

"यह निश्चय ही विष्णु है, इसे मारूंगा' इस प्रकार निश्चय कर के आपकी ओर भागते हुए उस दैत्यराज हिरण्यकशिपु को आपने दो बलिष्ठ भुजाओं से पकड लिया। अहो! फिर वह वीर आपकी पकड से निकल कर तलवार और ढाल ले कर विचित्र करतब करता हुआ, विश्व को ग्रसित करने को उद्यत आप के ऊपर टूट पडा।

भ्राम्यन्तं दितिजाधमं पुनरपि प्रोद्‌गृह्य दोर्भ्यां जवात्
द्वारेऽथोरुयुगे निपात्य नखरान् व्युत्खाय वक्षोभुवि ।
निर्भिन्दन्नधिगर्भनिर्भरगलद्रक्ताम्बु बद्धोत्सवं
पायं पायमुदैरयो बहु जगत्संहारिसिंहारवान् ॥६॥

भ्राम्यन्तम् दितिज-अधमम्	घूमते हुए दैत्य अधम को
पुन:-अपि	फिर से
प्रोद्‌गृह्य दोर्भ्यां जवात्	दोनों हाथों से पकडते हुए शीघ्र ही
द्वारे-अथ-उरुयुगे निपात्य	द्वार (के बीच) में और दोनों जङ्घाओं पर डाल कर
नखरान् व्युत्खाय वक्षोभुवि	नखों को गडाते हुए वक्षस्थल में
निर्भिन्दन्-	चीरते हुए
अधि-गर्भ-निर्भर-गलत्-रक्त-अम्बु	भीतर से निकलते हुए रक्त जल को
बद्धोत्सवं पायं पायम्-	उल्लास पूर्वक पी पी कर
उदैरय: बहु	उच्चारित किया अनेक बार
जगत्-संहारि-सिंह-आरवान्	जगत का संहारकारी सिंह नाद को

घूमते हुए उस दैत्य अधम को आपने दोनों हाथों से स्फूर्ति से पकड लिया और शीघ्र ही उसे द्वार के बीच में ले जा कर अपनी दोनों जङ्घाओं के ऊपर डाल लिया। उसके वक्षस्थल में अपने नखों को गडा कर आपने उसे चीर डाला और उसके भीतर से निकलते हुए रक्त रूपी जल को उल्लास पूर्वक पी पी कर, अनेक बार जगत संहारकारी सिंहनाद किया।

त्यक्त्वा तं हतमाशु रक्तलहरीसिक्तोन्नमद्वर्ष्मणि
प्रत्युत्पत्य समस्तदैत्यपटलीं चाखाद्यमाने त्वयि ।
भ्राम्यद्भूमि विकम्पिताम्बुधिकुलं व्यालोलशैलोत्करं
प्रोत्सर्पत्खचरं चराचरमहो दु:स्थामवस्थां दधौ ॥७॥

त्यक्त्वा तं हतम्-	छोड कर उसको जो मारा गया था
आशु	शीघ्रता से
रक्त-लहरी-सिक्त-उन्नमत्-वर्ष्मणि	रक्त के फुहांरों से सींचे गये विशाल शरीर वाले

प्रत्युत्पत्य	(आप) उछल कर
समस्त-दैत्य-पटलीम्	समस्त दैत्यों के समूह को
च-आखाद्यमाने त्वयि	और खाये जाने पर आपके (द्वारा)
भ्राम्यद्-भूमि	घूमने लगी भूमि
विकम्पित-अम्बुधिकुलम्	कंपित हो उठे सागर समूह
व्यालोल-शैल-उत्करम्	डोलने लगी पर्वत मालायें
प्रोत्सर्पत्-खचरम्	अस्थिर हो गये ग्रह नक्षत्र
चराचरम्-	और चल और अचल समुदाय में
अहो	अहो
दु:स्थाम्-अवस्थां दधौ	दुरवस्था फैल गई

हिरण्यकशिपु, जो आपके द्वारा मारा गया था, उसको छोड कर, रक्त की फुहारों से सींचे गये विशाल शरीर वाले आप वेग से समस्त दैत्य समूह को खाने लगे। पृथ्वी घूमने लगी, सागर समूह विकम्पित हो गया, पर्वत मण्डल डोलने लगे, आकाश गामी ग्रह नक्षत्र और चराचर विचलित हो उठे। अहो! कैसी दुर्व्यवस्थित दशा छा गई!

तावन्मांसवपाकरालवपुषं घोरान्त्रमालाधरं
त्वां मध्येसभमिद्धकोपमुषितं दुर्वारगुर्वारवम् ।
अभ्येतुं न शशाक कोपि भुवने दूरे स्थिता भीरव:
सर्वे शर्वविरिञ्चवासवमुखा: प्रत्येकमस्तोषत ॥८॥

तावत्-	तब तक
मांस-वपा-कराल-वपुषम्	मांस मज्जा से (सने) वीभत्स शरीर वाले (आपको)
घोर-अन्त्र-माला-धरम्	भयानक आंतों की माला को धारण किये हुए
त्वां मध्ये-सभम्-	आपको मध्य में सभा के
इद्ध-कोपम्-उषितम्	महान क्रोध में बैठे हुए
दुर्वार-गुर्वा-रवम्	लगातार सिंहनाद करते हुए

अभ्येतुम् न शशाक	के निकट जा न सके
कः-अपि भुवने	कोई भी संसार में
दूरे स्थिता भीरवः सर्वे	दूर खडे हुए डरे हुए सभी
शर्व-विरिञ्च-वसवमुखाः	शंकर, ब्रह्मा इन्द्र आदि प्रमुख
प्रत्येकम्-अस्तोषत	प्रत्येक ने आपकी स्तुति की

तत्पश्चात, मांस मज्जा से सने हुए वीभत्स शरीर वाले, भयानक आंतों को गल-हार की तरह धारण किये हुए, महान क्रोध में भरे हुए तथा मध्य सभा में बैठे हुए निरन्तर सिंहनाद-सम गर्जन करते हुए आपके निकट संसार में कोई भी नहीं जा सका। दूर खडे हुए और डरे हुए शंकर, ब्रह्मा, इन्द्र आदि प्रत्येक प्रमुख ने आपको शान्त करने के लिए आपकी स्तुति की।

भूयोऽप्यक्षतरोषधाम्नि भवति ब्रह्माज्ञया बालके
प्रह्लादे पदयोर्नमत्यपभये कारुण्यभाराकुलः ।
शान्तस्त्वं करमस्य मूर्ध्नि समधाः स्तोत्रैरथोद्गायत-
स्तस्याकामधियोऽपि तेनिथ वरं लोकाय चानुग्रहम् ॥९॥

भूयः-अपि-	और फिर भी
अक्षत-रोष-धाम्नि	अटूट रोष में स्थित
भवति	आपके
ब्रह्मा-आज्ञया	ब्रह्मा की आज्ञा से
बालके प्रह्लादे पदयोः-नमति	(जब) बालक प्रह्लाद ने(आपके) चरणों में नमन किया
अपभये	भयरहित हो कर
कारुण्य-भार-आकुलः	(तब) करुणा से अत्यन्त विचलित हो कर
शान्तः-त्वं	शान्त हुए आपने
करम-अस्य मूर्ध्नि समधाः	हाथ को उसके सर पर रख दिया
स्तोत्रैः-अथ-उद्गायतः-तस्य	स्तोत्रों का गान करते हुए उसके
अकामम्-धियः-अपि	निष्काम हृदय होने पर भी

तेनिथ वरं	प्रदान किया वर
लोकाय च-अनुग्रहम्	लोको के अनुग्रह के लिये

इस पर भी, जब आपका क्रोध लेशमात्र भी कम नहीं हुआ, तब ब्रह्मा की आज्ञा से निर्भय बालक प्रह्लाद ने आपके चरणों में नमन किया। करुणा के वेग से अत्यन्त विचलित हुए शान्त हो कर आपने उसके सर पर अपना हाथ रख दिया। स्तोत्रों का गान करते हुए निष्काम हृदय प्रह्लाद को आपने लोक कल्याण के लिए वर प्रदान किया।

एवं नाटितरौद्रचेष्टित विभो श्रीतापनीयाभिध-
श्रुत्यन्तस्फ़ुटगीतसर्वमहिमन्नत्यन्तशुद्धाकृते ।
तत्तादृङ्निखिलोत्तरं पुनरहो कस्त्वां परो लङ्घयेत्
प्रह्लादप्रिय हे मरुत्पुरपते सर्वामयात्पाहि माम् ॥१०॥

एवं	इस प्रकार
नाटित-रौद्र-चेष्टित	नाट्य स्वरूप रौद्र अभिनय (करने वाले)
विभो	प्रभु!
श्रीतापनीय-अभिध-श्रुति-अन्तस्फ़ुट-	श्री तापनीय नामक उपनिषद के अन्तर्गत
गीत-सर्व-महिमन्-	गान है (आपकी) सब महिमा का
अत्यन्त-शुद्ध-आकृते	अत्यन्त शुद्ध आकृति वाले
तत्-तादृक्-निखिल-उत्तरम्	आप जैसे सर्वोत्कृष्ट
पुनः-अहो	फिर अहो!
कः-त्वां परः लङ्घयेत्	कौन आपसे श्रेष्ठ हो सकता है
प्रह्लादप्रिये	हे प्रह्लादप्रिय!
हे मरुत्पुरपते	हे मरुत्पुरपते!
सर्व-आमयात्-पाहि माम्	सभी तापों से मुक्त कीजिये मुझे

इस प्रकार नाट्यस्वरूप आपने रौद्र रस का अभिनय किया। श्री तापनीय नामक उपनिषद में वर्णित स्तुतियों में आपकी सभी महिमाओं का गान किया गया है।आप अत्यन्त शुद्ध आकृति वाले हैं आपकी महिमा का उल्लङ्घन कौन कर सकता है? हे प्रह्लादप्रिय! हे मरुत्पुरपते! मुझे सभी तापों से मुक्त कीजिये।

दशक २६

इन्द्रद्युम्नः पाण्ड्यखण्डाधिराज-
स्त्वद्भक्तात्मा चन्दनाद्रौ कदाचित् ।
त्वत् सेवायां मग्नधीरालुलोके
नैवागस्त्यं प्राप्तमातिथ्यकामम् ॥१॥

इन्द्रद्युम्नः	इन्द्रद्युम्न
पाण्ड्य-खण्ड-अधिराजः-	पाण्ड्य देश के अधिराज
त्वत्-भक्त-आत्मा	आपके भक्तात्मा
चन्दन-आद्रौ	चन्दन गिरि पर
कदाचित्	एक समय
त्वत् सेवायां मग्न-धीः	आपकी सेवा में मग्न बुद्धि वाले
आलुलोके न-एव-	नही देख पाये
अगस्त्यं प्राप्तम्-	(मुनि) अगस्त्य को आते हुए
आतिथ्यकामम्	(जो) आतिथि सत्कार पाने के इच्छुक थे

पाण्ड्य देश के अधिराज आपके परम भक्त थे। एक समय वे चन्दन गिरि पर आपके ध्यान में इतने मग्न थे कि आतिथ्य पाने के इच्छुक मुनि अगस्त्य को आते हुए भी नहीं देख पाए।

कुम्भोद्भूतिः संभृतक्रोधभारः
स्तब्धात्मा त्वं हस्तिभूयं भजेति ।
शप्त्वाऽथैनं प्रत्यगात् सोऽपि लेभे
हस्तीन्द्रत्वं त्वत्स्मृतिव्यक्तिधन्यम् ॥२॥

कुम्भोद्भूतिः	कुम्भ से उत्पन्न (अगस्त्य)
संभृत-क्रोध-भारः	भरे हुए क्रोध के वेग से
स्तब्ध-आत्मा त्वं	'जड बुद्धि तुम

हस्तिभूयं भज-इति	हाथी की योनी को पाओ' इस प्रकार
शप्त्वा-अथ-एनं	शापित कर के तब उसको
प्रत्यगात्	लौट गये
स्:-अपि लेभे	वह भी पा गया
हस्ति-इन्द्रत्वं	गजेन्द्रभाव को
त्वत्-स्मृति-व्यक्ति-धन्यम्	आपकी स्मृति बनी रहने से धन्य हुआ

क्रोध से भरे हुए, अगस्त्य मुनि 'जड बुद्धि, तुम हाथी की योनि को प्राप्त हो,' इस प्रकार उसको शाप दे कर लौट गये। इन्द्रद्युम्न भी गजेन्द्रभाव को प्राप्त हुए, किन्तु आपकी स्मृति बनी रहने से वे धन्य हुए।

दग्धाम्भोधेर्मध्यभाजि त्रिकूटे
क्रीडञ्छैले यूथपोऽयं वशाभि: ।
सर्वान् जन्तूनत्यवर्तिष्ट शक्त्या
त्वद्भक्तानां कुत्र नोत्कर्षलाभ: ॥३॥

दुग्ध-अम्भोधे:-मध्य-भाजि	क्षीर सागर के मध्य में स्थित
त्रिकूटे क्रीडन्-शैले	त्रिकूट पर्वत पर क्रीडा करते हुए
यूथप:-अयं वशाभि:	यूथपति यह हथिनियों के संग
सर्वान् जन्तून्-अत्यवर्तिष्ट	समस्त जन्तुओं में सर्वोत्कृष्ट
शक्त्या	शक्ति में
त्वत्-भक्तानां	आपके भक्त
कुत्र न-	कहां (कहां) नहीं
उत्कर्ष-लाभ:	महानता प्राप्त करते

वह यूथपति गजराज, क्षीरसागर के मध्य स्थित त्रिकूट पर्वत पर हथिनियों के संग क्रीडा कर रहा था। वह शक्ति में समस्त जन्तुओं में उत्कृष्ट था। आपके भक्त कहां कहां महानता लाभ नहीं करते।

स्वेन स्थेम्ना दिव्यदेशत्वशक्त्या

सोऽयं खेदानप्रजानन् कदाचित् ।
शैलप्रान्ते घर्मतान्तः सरस्यां
यूथैस्सार्धं त्वत्प्रणुन्नोऽभिरेमे ॥४॥

स्वेन स्थेम्ना	स्वयं के ओज से
दिव्य-देशत्व-शक्त्या	(और उस) दिव्य प्रदेश की शक्ति से
सः-अयं	वह यह (गजराज)
खेदान्-अप्रजानन्	कष्टों को न जानते हुए
कदाचित्	एक बार
शैल-प्रान्ते	पर्वत प्रान्त में
घर्म-तान्तः	ग्रीष्म से संतप्त
सरस्यां यूथैः-सार्धम्	सरोवर में यूथ के संग
त्वत्-प्रणुन्नः-	आपकी प्रेरणा से
अभिरेमे	विहार कर रहा था

स्वयं के ओज से और उस दिव्य प्रदेश की शक्ति से उस गजराज ने कभी कष्टों का अनुभव नहीं किया। एक बार,आपकी प्रेरणा से, पर्वत प्रान्त में , ग्रीष्म से संतप्त हो कर वह अपने यूथ के संग सरोवर में विहार कर रहा था।

हूहूस्तावद्देवलस्यापि शापात्
ग्राहीभूतस्तज्जले बर्तमानः ।
जग्राहैनं हस्तिनं पाददेशे
शान्त्यर्थं हि श्रान्तिदोऽसि स्वकानाम् ॥५॥

हूहूः-तावत्-	हूहू (गन्धर्व) तब
देवलस्य-अपि शापात्	देवल (ऋषि) के श्राप से भी
ग्राहीभूतः-	ग्राह बन कर
तत्-जले वर्तमानः	उस (सरोवर के) जल मे वर्तमान था

जग्राह-एनं हस्तिनम्	(उसने) पकड लिया इस गजराज को
पाद्-देशे	पांव की जगह
शान्ति-अर्थं हि	शान्ति के लिये ही
श्रान्तिद:-असि	कष्ट देने वाले हैं (आप)
स्वकानाम्	अपने भक्तों के

तब, उस सरोवर के जल मैं हूहू नाम का गन्धर्व देवल ऋषि के श्राप से ग्राह बन कर वर्तमान था। उसने गजराज के पांव को पकड लिया। अपने भक्तों को अन्तत: शान्ति देने के लिये ही आप उन्हें कष्ट देते हैं।

त्वत्सेवाया वैभवात् दुर्निरोधं
युध्यन्तं तं वत्सराणां सहस्रम् ।
प्राप्ते काले त्वत्पदैकाग्र्यसिध्यै
नक्राक्रान्तं हस्तिवर्यं व्यधास्त्वम् ॥६॥

त्वत्-सेवाया: वैभवात्	आपकी सेवा के वैभव से
दुर्निरोधं युध्यन्तं तं	लगातार युद्ध करते हुए उससे
वत्सराणां सहस्रम्	वर्ष हजारों तक
प्राप्ते काले	आ जाने पर समय के
त्वत्-पद-एकाग्र्य-सिध्यै	आपके चरणो में एकाग्रता की सिद्धि के लिये
नक्र-आक्रान्तं हस्तिवर्यं	ग्राह से आक्रान्त गजराज को
व्यधा:-त्वम्	इस प्रकार रचना की आपने

आपकी सेवा के वैभव से गजराज ग्राह से हजारों वर्षो तक युद्ध करता रहा। समय आने पर, अपने चरणों मे एकाग्रता की सिद्धि करवाने के लिये आपने गजराज को ग्राह से आक्रान्त करवाने की घटना रची।

आर्तिव्यक्तप्राक्तनज्ञानभक्ति:
शुण्डोत्क्षिप्तै: पुण्डरीकै: समर्चन् ।
पूर्वाभ्यस्तं निर्विशेषात्मनिष्ठं
स्तोत्रं श्रेष्ठं सोऽन्वगादीत् परात्मन् ॥७॥

आर्ति-व्यक्त-	कष्टों से उभरे हुए
प्राक्तन-ज्ञान-भक्तिः	पूर्वजन्म के ज्ञान और भक्ति (से प्रेरित)
शुण्ड-उत्क्षिप्तैः	सूंड से तोडे हुए
पुण्डरीकैः समर्चन्	कमलों द्वारा अर्चना करते हुए
पूर्व-अभ्यस्तं	जन्मान्तर में अभ्यास किये हुए
निर्विशेष-आत्म-निष्ठं	निर्गुण आत्मन विषयक
स्तोत्रं श्रेष्ठं	स्तोत्र श्रेष्ठ को
सः-अन्वगादीत्	वह गाने लगा
परात्मन्	हे परमात्मन!

ग्राह से युद्ध के कष्ट से उभरे हुए, पूर्व जन्म के ज्ञान और भक्ति से प्रेरित हो कर उस गजराज ने अपनी सूंड से कमलों को तोड कर आपकी अर्चना की। हे परमात्मन! फिर वह जन्मान्तर मे अभ्यास किये हुए श्रेष्ठ स्तोत्र का पाठ करने लगा।

श्रुत्वा स्तोत्रं निर्गुणस्थं समस्तं
ब्रह्मेशाद्यैर्नाहमित्यप्रयाते ।
सर्वात्मा त्वं भूरिकारुण्यवेगात्
तार्क्ष्यारूढः प्रेक्षितोऽभूः पुरस्तात् ॥८॥

श्रुत्वा स्तोत्रं	सुन कर स्तोत्र को
निर्गुणस्थं समस्तं	(जो) पूरा निर्गुणविषयक था
ब्रह्म-ईश-आद्यैः	ब्रह्मा शिव आदि ने
न-अहम्-इति-अप्रयाते	(यह) मैं नही हूं ऐसा (जान कर) न जाते हुए
सर्व-आत्मा त्वं	सर्वात्मा स्वरूप आप
भूरि-कारुण्य-वेगात्	अतिशय करुणा के वेग से
तार्क्ष्य-आरूढः	गरुड पर आरूढ हो कर

प्रेक्षित:-अभू: पुरस्तात्	प्रकट हुए (उसके) सामने

पूर्ण रूप से निर्गुणविषयक उस स्तोत्र को सुन कर, ब्रह्मा शिव आदि यह जान कर कि वह उनके निमित्त नहीं है, नहीं गये। सर्वव्यापक सर्वात्म-स्वरूप आप अतिशय करुणा के वेग से तुरन्त गरुड पर आरूढ हो कर गजराज के समक्ष प्रकट हो गये।

हस्तीन्द्रं तं हस्तपद्मेन धृत्वा
चक्रेण त्वं नक्रवर्यं व्यदारी: ।
गन्धर्वेऽस्मिन् मुक्तशापे स हस्ती
त्वत्सारूप्यं प्राप्य देदीप्यते स्म ॥९॥

हस्ती-इन्द्रं तं	उस गजराज को
हस्त-पद्मेन धृत्वा	(अपने) कर कमल से पकड कर
चक्रेण त्वं नक्रवर्यं व्यदारी:	चक्र के द्वारा आपने ग्राह महान को चीर दिया
गन्धर्वे-अस्मिन् मुक्त-शापे	गन्धर्व इसमें मुक्त हुआ शाप से
स हस्ती	वह हाथी
त्वत्-सारूप्यं प्राप्य	आपका सारूप्य प्राप्त करके
देदीप्यते स्म	उद्दीप्त हो उठा

आपने अपने कर कमल से गजराज को पकड लिया और चक्र के द्वारा ग्राह श्रेष्ठ को चीर डाला। उसमें स्थित गन्धर्व शाप से मुक्त हो गया। हाथी आपका सारूप्य पा कर दीप्तिमय हो उठा।

एतद्वृत्तं त्वां च मां च प्रगे यो
गायेत्सोऽयं भूयसे श्रेयसे स्यात् ।
इत्युक्त्वैनं तेन सार्धं गतस्त्वं
धिष्ण्यं विष्णो पाहि वातालयेश ॥१०॥

एतत्-वृत्तं	यह घटना
त्वां च मां च	और तुम्हारा और मेरा
प्रगे य: गायेत्	प्रात:काल जो गान करेगा

सः-अयं भूयसे श्रेयसे स्यात्	वह यह महान कल्याण में हो
इति-उक्त्वा-एनं	ऐसा कह कर उसको
तेन सार्धं गतः-त्वं धिष्ण्यं	उसके साथ चले गये आप वैकुण्ठ को
विष्णो पाहि	हे विष्णु! रक्षा करें
वातालयेश	हे वातालयेश!

'जो पुरुष प्रात:काल इस घटना का और मेरा और तुम्हारा गान करेगा, वह पुरुष महा कल्याण (मुक्ति) को प्राप्त करेगा', ऐसा कह कर हे वातालयेश! आप उसको साथ ले कर वैकुण्ठ को चले गये। हे विष्णु! मेरी भी रक्षा करें।

दशक २७

दर्वासास्सुरवनिताप्तदिव्यमाल्यं
शक्राय स्वयमुपदाय तत्र भूय: ।
नागेन्द्रप्रतिमृदिते शशाप शक्रं
का क्षान्तिस्त्वदितरदेवतांशजानाम् ॥१॥

दुर्वासा:-	दुर्वासा ने
सुर-वनिता-आप्त-दिव्य-माल्यं	देवाङ्गनाओं से प्राप्त दिव्य माला को
शुक्राय स्वयम्-उपदाय तत्र भूयः	इन्द्र को स्वयं दे कर, वहां तब
नागेन्द्र-प्रतिमृदिते	ऐरावत के द्वारा कुचल दी जाने पर
शशाप शक्रं	शाप दे दिया इन्द्र को
का क्षान्तिः-	कहां है क्षमा
त्वत्-इतर-	आपसे अन्य
देवता-अंशजानाम्	देवताओं के अंशजों में

देवाङनाओं से प्राप्त दिव्य माला को दुर्वासा ऋषि ने एकबार स्वयं इन्द्र को प्रदान की। ऐरावत हाथी ने उसे कुचल दिया। अवहेलना से पीडित दुर्वासा ने इन्द्र को शाप दे दिया। आपसे इतर देवताओं के अंशजों में क्षमा भावना कहां है?

शापेन प्रथितजरेऽथ निर्जरेन्द्रे
देवेष्वप्यसुरजितेषु निष्प्रभेषु ।
शर्वाद्या: कमलजमेत्य सर्वदेवा
निर्वाणप्रभव समं भवन्तमापु: ॥२॥

शापेन प्रथित-जरे-अथ	शाप से प्रभावित जरा से तब
निर्जर-इन्द्रे	जराहीन इन्द्र (के हो जाने पर)
देवेषु-अपि-असुर-जितेषु	(और) देवों के भी दानवों के द्वारा जीत लिये जाने पर
निष्प्रभेषु	निस्तेज हो गये

शर्व-आद्या:	शंकर आदि
कमलजम्-एत्य	ब्रह्मा के पास जा कर
सर्व-देवा:	सभी देवता
निर्वाण-प्रभव	हे निर्वाण दाता!
समं	के संग
भवन्तम्-आपु:	आपके पास पहुंचे

हे निर्वाण दाता! शाप के प्रभाव से वृद्धावस्था रहित इन्द्र भी बुढापे से आक्रान्त हो गये, और देवगण भी दानवों के द्वारा पराजित हो कर निस्तेज हो गये। तब शंकर आदि सभी देवता ब्रह्माजी के पास गये और उनके साथ आपके पास पहुंचे।

ब्रह्माद्यै: स्तुतमहिमा चिरं तदानीं
प्रादुष्षन् वरद पुर: परेण धाम्ना ।
हे देवा दितिजकुलैर्विधाय सन्धिं
पीयूषं परिमथतेति पर्यशास्त्वम् ॥३॥

ब्रह्मा-आद्यै:	ब्रह्मा आदि के द्वारा
स्तुत-महिमा चिरं	गाई गयी महिमा चिरकाल तक
तदानीं	उस समय
प्रादुष्षन्	प्रकट हो कर
वरद	हे वरदायी!
पुर:	सामने
परेण धाम्ना	अपूर्व तेजस्वी
हे देवा	हे देव!
दितिज-कुलै:-	असुर कुल के साथ
विधाय सन्धिं	रचा कर संधि

पीयूषं परिमथत-	अमृत का मन्थन करो
इति पर्यशा:-त्वम्	इस प्रकार परामर्श दिया आपने

हे वरदायी! उस समय ब्रह्मा आदि ने बहुत समय तक आपकी महिमा का स्तवन किया। हे देव! आप अपने अपूर्व तेजस्वी स्वरूप से उनके सामने प्रकट हो गये और उन्हे असुरों के साथ संधि करके, अमृत प्राप्ति के लिए समुद्र मन्थन का परामर्श दिया।

सन्धानं कृतवति दानवै: सुरौघे
मन्थानं नयति मदेन मन्दराद्रिम् ।
भ्रष्टेऽस्मिन् बदरमिवोद्वहन् खगेन्द्रे
सद्यस्त्वं विनिहितवान् पय:पयोधौ ॥४॥

सन्धानं कृतवति	संधि कर लेने पर
दानवै: सुरौघे	दानवों के साथ देवताओं के
मन्थानं नयति	मथनी को ले जाते हुए
मदेन मन्दर-अद्रिम्	अभिमान से, मन्दार पर्वत को
भ्रष्टे-अस्मिन्	गिर जाने पर उसके
बदरम्-इव-उद्वहन्	बेर के समान उठाते हुए
खगेन्द्रे सद्य:-त्वम्	गरुड पर शीघ्र ही आपने
विनिहितवान्	रख दिया
पय:पयोधौ	समुद्र जल के अन्दर

देवताओं ने असुरों के साथ संधि कर ली और मन्थन करने के लिये मथनी स्वरूप मन्दार पर्वत को अभिमान के साथ उठा कर ले चले। उसके गिर जाने पर आपने उसे बेर के समान उठा कर गरुड पर रख लिया और शीघ्र ही उसे समुद्र जल में डाल दिया।

आधाय द्रुतमथ वासुकिं वरत्रां
पाथोधौ विनिहितसर्वबीजजाले ।
प्रारब्धे मथनविधौ सुरासुरैस्तै-
र्व्याजात्त्वं भुजगमुखेऽकरोस्सुरारीन् ॥५॥

आधाय द्रुतम्-अथ	डाल कर जल्दी ही तब
वासुकिं वरत्रां	वासुकि नेती को
पाथोधौ	क्षीर सागर में
विनिहित-सर्व-बीज-जाले	विद्यमान थे जिसमें सभी बीज समूह
प्रारब्धे मथन-विधौ	आरम्भ कर के मन्थन की क्रिया
सुर्-असुरैः-तैः-	उन सुर और असुरों के द्वारा
व्याजात्-त्वं	व्याज से आपने
भुजग-मुखे-अकरोः-	नाग के मुख की ओर कर दिया
सुरारीन्	असुरों को

वासुकि सर्प रूपी नेती को तब शीघ्र ही क्षीर सागर में डाल दिया गया जिसमें सभी बीज समूह विद्यमान थे। और उन देवताओं और दानवों ने मन्थन की क्रिया आरम्भ कर दी। आपने चतुरता से असुरों को नाग के मुख की ओर कर दिया।

क्षुब्धाद्रौ क्षुभितजलोदरे तदानीं
दुग्धाब्धौ गुरुतरभारतो निमग्ने ।
देवेषु व्यथिततमेषु तत्प्रियैषी
प्राणैषीः कमठतनुं कठोरपृष्ठाम् ॥६॥

क्षुब्ध-आद्रौ	घूमने पर पर्वत के
क्षुभित-जल-उदरे	क्षुब्ध हो गये जल के भीतरी भाग
तदानीं	तब
दुग्ध-अब्धौ	क्षीर सागर में
गुरुतर-भारतः	अत्यधिक भार के कारण
निमग्ने	डूब जाने से
देवेषु व्यथिततमेषु	देवगण के अतिशय चिन्तित हो जाने से

तत्-प्रियैषी	उनके हितैषी (आप)
प्राणैषी:	दधारण कर लिया
कमठ-तनुं	कच्छप शरीर
कठोर-पृष्ठाम्	कठोर पीठ वाला

मथे जाते हुए पर्वत से जल के भीतरी भाग क्षुब्ध हो उठे, और तब अत्यधिक भार के कारण वह क्षीर सागर में डूब गया। इससे देवगण अतिशय चिन्ता में पड गये। उनके हितैषी आपने तब अत्यन्त कठोर पीठ वाले कच्छप का शरीर धारण किया।

वज्रातिस्थिरतरकर्परेण विष्णो
विस्तारात्परिगतलक्षयोजनेन ।
अम्भोधे: कुहरगतेन वर्ष्मणा त्वं
निर्मग्नं क्षितिधरनाथमुन्निनेथ ॥७॥

वज्र-अति-स्थिर-कर्परेण	वज्र से भी अधिक कठोर पीठ से
विष्णो	हे विष्णो!
विस्तारात्-	विस्तार में
परिगत-लक्ष-योजनेन	उल्लङ्घन करती हुई लाख योजनों को
अम्भोधे: कुहर-गतेन	समुद्र के अन्तस्थल में गये हुए
वर्ष्मणा त्वं	(इस प्रकार के) शरीर से आपने
निर्मग्नं क्षितिधरनाथम्-	डूबे हुए पर्वतराज को
उन्निनेथ	ऊपर उठा लिया

हे विष्णो! वज्र से भी कठोर पीठ वाले और विस्तार में लाख योजन की सीमाओं का उल्लङ्घन करने वाले उस शरीर से आपने समुद्र के अन्तस्थल में जा कर डूबे हुए पर्वतराज को ऊपर उठा लिया।

उन्मग्ने झटिति तदा धराधरेन्द्रे
निर्मेथुर्दृढमिह सम्मदेन सर्वे ।
आविश्य द्वितयगणेऽपि सर्पराजे

वैवश्यं परिशमयन्नवीवृधस्तान् ॥८॥

उन्मग्ने	(मन्दराचल के) ऊपर आ जाने पर
झटिति तदा	शीघ्र ही तब
धराधरेन्द्रे	पर्वत के
निर्मेथुः-दृढम्-इह	मन्थन किया जोर से यहां
सम्मदेन सर्वे	उत्साह सहित सब ने
आविश्य	पैठ कर
द्वितयगणे-	दोनो पक्षों में
अपि सर्पराजे	और सर्प राज में भी
वैवश्यं	क्लान्ति को
परिशमयन्	दूर हटाते हुए
अवीवृधः तान्	उत्साहित किया उन लोगों को

मन्दराचल के ऊपर आ जाने पर सब ने अति उत्साह पूर्वक जोर से मन्थन किया। आपने दोनों पक्षों और सर्पराज वासुकि में भी प्रवेश कर के सब की क्लान्ति को मिटाते हुए उनके बल को पुष्ट किया।

उद्दामभ्रमणजवोन्नमद्गिरीन्द्र-
न्यस्तैकस्थिरतरहस्तपङ्कजं त्वाम् ।
अभ्रान्ते विधिगिरिशादयः प्रमोदा-
दुद्भ्रान्ता नुनुवुरुपात्तपुष्पवर्षाः ॥९॥

उद्दाम-भ्रमण-जव-	अत्यन्त वेग पूर्वक घूमते हुए
उन्नमत्-गिरीन्द्र-	ऊपर उठ आये गिरीन्द्र को
न्यस्त-एक-स्थिरतर-हस्त-पङ्कजम्	डाल रखा था एक स्थिर हस्त कमल
त्वाम्	उन आपको

अभ्रान्ते	मेघमार्ग में
विधि-गिरिश-आदय:	ब्रह्मा शंकर आदि
प्रमोदात्-उद्भ्रान्ता	हर्ष से विमूढ हो कर
नुनुवुः-	नमन किया
उपात्त-पुष्प-वर्षा:	(और) डाल रहे थे पुष्प वृष्टि

अत्यन्त वेग पूर्वक घूमते हुए ऊपर उठ आये गिरीन्द्र पर आपने एक स्थिर हस्त-कमल स्थित कर रखा था। मेघमार्ग में ब्रह्मा शंकर आदि हर्ष से अभिभूत हो गये और आपको नमन करके आपका स्तवन करते हुए पुष्पों की वर्षा करने लगे।

दैत्यौघे भुजगमुखानिलेन तप्ते
तेनैव त्रिदशकुलेऽपि किञ्चिदार्ते ।
कारुण्यात्तव किल देव वारिवाहा:
प्रावर्षन्नमरगणान्न दैत्यसङ्घान् ॥१०॥

दैत्यौघे	दैत्य समूहों के
भुजग-मुख-अनिलेन	सर्पराज के मुख से निकले हुए अग्नि से
तप्ते	संतप्त
तेन-एव	उसी से
त्रिदशकुले-अपि	देवों के भी
किञ्चित्-आर्ते	कुछ पीडित हो जाने पर
कारुण्यात्-तव	करुणा से आपकी
किल देव	निश्चय ही हे देव!
वारिवाह: प्रावर्षन्-	बादलों ने वर्षा की
अमरगणान्-	देवों पर
न दैत्य-सङ्घान्	न की दैत्य समुदाय पर

वासुकि सर्प के मुख से निकलती हुई अग्नि से दैत्यगण संतप्त हो उठे। उसी अग्नि से देवों को भी कुछ पीडा हुई। तब आपकी करुणा से प्रेरित हो कर मेघों ने देवों पर वर्षा की, दैत्यों पर नहीं।

उद्भ्राम्यद्बहुतिमिनक्रचक्रवाले
तत्राब्धौ चिरमथितेऽपि निर्विकारे ।
एकस्त्वं करयुगकृष्टसर्पराज:
संराजन् पवनपुरेश पाहि रोगात् ॥११॥

उद्भ्राम्यत्	उद्वेलित होते हुए
बहु-तिमि-नक्र-चक्रवाले	बहुत से तिमि नामक ग्राह समूहों के
तत्र-अब्धौ	वहां उस सागर में
चिर-मथिते-अपि	बहुत समय तक मथे जाने पर भी
निर्विकारे	विकार रहित
एक:-त्वं	एकमात्र आप
कर-युग-कृष्ट-सर्पराज:	हस्त द्वय से खींचते हुए सर्पराज को
संराजन्	देदीप्यमान हुए
पवनपुरेश	हे पवनपुरेश!
पाहि रोगात्	रक्षा करें रोगों से

वह सागर बहुत समय तक मथित होने पर उसमें स्थित बहुत से तिमि नामक ग्राह समूह और चक्रवाल आदि तो उद्वेलित हुए किन्तु सागर में कोई विकार नहीं आया। तब एकमात्र आप अपने दोनों हस्त-कमलों से सर्पराज को खींचते हुए देदीप्यमान हुए। हे पवनपुरेश! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक २८

गरलं तरलानलं पुरस्ता-
ज्जलधेरुद्विजगाल कालकूटम् ।
अमरस्तुतिवादमोदनिघ्नो
गिरिशस्तन्निपपौ भवत्प्रियार्थम् ॥१॥

गरलं	विष
तरल-अनलं	तरल अग्नि
पुरस्तात्-	सब के सामने
जलधे:-	समुद्र में से
उद्विजगाल	बाहर निकला
कालकूटम्	(जो) कालकूट था
अमर-स्तुतिवाद्-मोदनिघ्न:	देवों की स्तुति से प्रसन्न हुए
गिरिश:-	शंकर
तत्-निपपौ	उसको पी गये
भवत्-प्रियार्थम्	आपकी प्रसन्नता के लिये

सब के सामने सब से पहले तरल अग्नि के समान कालकूट विष समुद्र में से बाहर निकला। देवों के द्वारा की गई स्तुति से प्रसन्न हो कर शंकर जी आपकी प्रसन्नता के लिये उसे पी गये।

विमथत्सु सुरासुरेषु जाता
सुरभिस्तामृषिषु न्यधास्त्रिधामन् ।
हयरत्नमभूदथेभरत्नं
द्युतरुश्चाप्सरस: सुरेषु तानि ॥२॥

विमथत्सु सुर-असुरेषु	मन्थन करते हुए देवों और दानवों के
जाता सुरभि:-	पैदा हुई सुरभि

ताम्-ऋषिषु न्यधा:-	उसको ऋषियों को देदिया (आपने)
त्रिधामन्	हे त्रिधामन!
हय-रत्नम्-अभूत्-	अश्वरत्न (उच्चैश्रवा) हुआ (निकला)
अथ-इभ-रत्नम्	फिर गजरत्न (ऐरावत)
द्यु-तरु:-	देवलोक वृक्ष (कल्प तरु)
च-अप्सरस:	और अप्सरायें
सुरेषु तानि	देवों को उनको (दे दिया)

देवों और दानवों के द्वारा मन्थन करते हुए सुरभि, कामधेनु गाय प्रकट हुई, जिसको आपने ऋषियों को दे दिया। हे त्रिधामन! फिर अश्वरत्न उच्चैश्रवा और गजरत्न ऐरावत और अप्सरायें निकलीं, जिन्हें आपने देवों को दे दिया।

जगदीश भवत्परा तदानीं
कमनीया कमला बभूव देवी ।
अमलामवलोक्य यां विलोल:
सकलोऽपि स्पृहयाम्बभूव लोक: ॥३॥

जगदीश	हे जगदीश!
भवत्परा	आपसे उन्मुख
तदानीं	तब
कमनीया	सुशोभित
कमला बभूव देवी	लक्ष्मी देवी हुईं
अमलाम्-अवलोक्य यां	निर्मला जिनको देख कर
विलोल: सकल:-अपि	अभिभूत समस्त (लोक) भी
स्पृहयाम्-बभूव लोक:	इच्छुक हो उठा लोक

उसी समय आपसे उन्मुख सुशोभित लक्ष्मी देवी प्रकट हुईं। उन निर्मल कमला को देख कर सारे लोक अभिभूत हो गये और सभी उनको पाने के इच्छुक हो उठे।

त्वयि दत्तहृदे तदैव देव्यै
त्रिदशेन्द्रो मणिपीठिकां व्यतारीत् ।
सकलोपहृताभिषेचनीयैः
ऋषयस्तां श्रुतिगीर्भिरभ्यषिञ्चन् ॥४॥

त्वयि दत्तहृदये	आपमें ही दत्त चित्त
तदा-एव देव्यै	उसी समय देवी के लिये
त्रिदशेन्द्रः	इन्द्र ने
मणिपीठिकां	मणि पीठिका
व्यतारीत्	समर्पित की
सकल-उपहृत-अभिषेचनीयैः	सबजगह से लाये हुए अभिषेक जलों से
ऋषयः-	ऋषियों ने
तां श्रुति-गीर्भिः-अभ्यषिञ्चन्	उनका श्रुतियों के वचनों से अभिषेक किया

उन देवी को, जो आपमें ही दत्तचित्त थीं, इन्द्र ने मणिपीठिका प्रदान की। सभी स्थानों से लाये हुए अभिषेक जलों से एवं वेद मन्त्रों से ऋषियों ने उनका अभिषेक किया।

अभिषेकजलानुपातिमुग्ध-
त्वदपाङ्गैरवभूषिताङ्गवल्लीम् ।
मणिकुण्डलपीतचेलहार-
प्रमुखैस्ताममरादयोऽन्वभूषन् ॥५॥

अभिषेक-जल-अनुपाति-	अभिषेक जल के गिरते हुए
मुग्ध-त्वत्-अपाङ्गैः-	(और) आपके अनुराग पूर्ण कटाक्षों से
अवभूषिता-अङ्ग-वल्लीम्	सुसज्जित देहलता वाली (लक्ष्मी को)
मणि-कुण्डल-पीत-चेल-हार-प्रमुखैः-	मणिकुण्डल, पीताम्बरऔर हार आदि प्रमुख (आभूषणों से)
ताम्-अमर-आदयः-अन्वभूषन्	उनको (लक्ष्मी को) देवताओं आदि ने अलंकृत किया

अभिषेक जलों से संसिञ्चित होते हुए तथा आपके अनुराग पूर्ण कटाक्षों से लक्ष्मी देवी विषेश रूप से सुसज्जित हुईं। देवताओं

आदि ने तब उन्हें मणिकुण्डल, पीताम्बर हार आदि से अलंकृत किया।

वरणस्रजमात्तभृङ्गनादां
दधती सा कुचकुम्भमन्दयाना ।
पदशिञ्जितमञ्जुनूपुरा त्वां
कलितव्रीलविलासमाससाद ॥६॥

वरण-स्रजम्-	वरण माला को
आत्त-भृङ्ग-नादाम्	(जो) व्याप्त थी भंवरों के गुञ्जार से
दधती सा	उठाए हुए वह (लक्ष्मी)
कुच-कुम्भ-मन्द-याना	कुच कलशों (के भार से) मन्द गति वाली
पद-शिञ्जित-मञ्जु-नूपुरा	पैरों में सुशोभित नूपुरों की झंकार वाली
त्वाम्	आपके
कलित-व्रील-विलासम्-	दिखाते हुए किञ्चित लज्जा विलास को
आससाद	पास में आईं

कुच रूपी कलशों के भार से मन्द गति वाली, पैरों में सुशोभित नूपुरों की झंकार वाली, किञ्चित लज्जा के भाव के साथ, भंवरों के गुञ्जार से व्याप्त वरण माल को उठाए हुए लक्ष्मी देवी आपके समीप आईं।

गिरिशद्रुहिणादिसर्वदेवान्
गुणभाजोऽप्यविमुक्तदोषलेशान् ।
अवमृश्य सदैव सर्वरम्ये
निहिता त्वय्यनयाऽपि दिव्यमाला ॥७॥

गिरिश-द्रुहिण-आदि-सर्व-देवान्	शंकर, ब्रह्मा आदि सभी देवों को
गुण-भाजः-अपि-	गुणयुक्त होते हुए भी
अविमुक्त-दोष-लेशान्	(जो) विमुक्त नहीं थे दोषो के लेशमात्र से भी
अवमृश्य सदा-एव	समझ कर कि सदा ही
सर्व-रम्ये	सर्वरमणीय

निहिता त्वयि-	डाल दी हैं आप में ही
अनया-अपि	उनके (लक्ष्मी के) द्वारा भी
दिव्य-माला	दिव्य (वरण) माला

लक्ष्मी देवी ने यह समझ कर कि शंकर ब्रह्मा आदि सभी देव गुणयुक्त होते हुए भी किसी न किसी दोष के लेश से सर्वथा मुक्त नहीं हैं, सदैव ही सर्व रमणीय आपके गले में दिव्य वरण माला डाल दी।

उरसा तरसा ममानिथैनां
भुवनानां जननीमनन्यभावाम् ।
त्वदुरोविलसत्तदीक्षणश्री-
परिवृष्ट्या परिपुष्टमास विश्वम् ॥८॥

उरसा तरसा	वक्षस्थल से लगा कर शीघ्र ही
ममानिथ-ऐनाम्	सम्मान दिया इनको
भुवनानां जननीम्	जगतों की जननी को
अनन्य भावाम्	(जो) अनन्यभावा हैं
त्वत्-उरो-विलसत्-	आपके वक्षस्थल पर सुशोभित
त्वत्-ईक्षण-श्री-परिवृष्ट्या	आपकी दृष्टि के वैभव से
परिपुष्टम्-आस विश्वम्	परिपुष्ट हो गया संसार

आपने अनन्यभावा जगत जननी को शीघ्र ही वक्षस्थल से लगा कर सम्मान दिया। आपके वक्षस्थल पर सुशोभित हुई उनकी दृष्टि के वैभव से विश्व परिपुष्ट हो गया।

अतिमोहनविभ्रमा तदानीं
मदयन्ती खलु वारुणी निरागात् ।
तमस: पदवीमदास्त्वमेना-
मतिसम्माननया महासुरेभ्य: ॥९॥

अति-मोहन-विभ्रमा	अति मनोहर और विभ्रामक

तदानीं	तब
मदयन्ती खलु	मदोन्मत्त निश्चय ही
वारुणी निरागात्	वारुणी निकली
तमस: पदवीम्-	तामसिक प्रवृत्तियों की अधिष्टाता
अदा:- त्वम्-एनाम्-	दिया आपने इसको
अति-सम्माननया	अत्यन्त सम्मान के साथ
महा-असुरेभ्य:	महा असुरों को

तब अति मनोहर और विभ्रामक और निश्चित रूप से मदोन्मत्त करने वाली वारुणी निकली जो सभी तामसिक प्रवृत्तियों की अधिष्ठाता है। आपने अत्यन्त सम्मान के साथ उसको महा असुरों को दे दिया।

तरुणाम्बुदसुन्दरस्तदा त्वं
ननु धन्वन्तरिरुत्थितोऽम्बुराशे: ।
अमृतं कलशे वहन् कराभ्या-
मखिलार्तिं हर मारुतालयेश ॥१०॥

तरुण-अम्बुद-सुन्दर:-	तरुण मेघों के समान सुन्दर
तदा त्वं ननु	तब आप ही
धन्वन्तरि:-उत्थित:-	धन्वन्तरि रूप में प्रकट हुए
अम्बुराशे:	समुद्र में से
अमृतं कलशे वहन्	अमृत को कलश में लिये हुए
कराभ्याम्-	दोनों हाथों से
अखिल-आर्तिम् हर	सभी क्लेशों का हरण कीजिये
मारुतालयेश	हे मारुतालयेश

तब आप ही तरुण मेघों के समान सुन्दर धन्वन्तरि के रूप में समुद्र में से प्रकट हुए। आपके दोनों हाथों में अमृत का कलश था। हे मारुतालयेश! मेरे सभी क्लेशों का हरण कीजिये।

दशक २९

उद्गच्छतस्तव करादमृतं हरत्सु
दैत्येषु तानशरणाननुनीय देवान् ।
सद्यस्तिरोदधिथ देव भवत्प्रभावा-
दुद्यत्स्वयूथ्यकलहा दितिजा बभूवु: ॥१॥

उद्गच्छत:-तव	उद्धृत होते हुए आपके
करात्-अमृतं हरत्सु	हाथों से अमृत का हरण करते हुए
दैत्येषु	दैत्यों के
तान्-अशरणान्-अनुनीय देवान्	उन शरण हीन देवों को सान्त्वना देते हुए
सद्य:-तिरोदधिथ देव	तुरन्त ही अदृश्य हो गये (आप) हे देव
भवत्-प्रभावात्-	आपके प्रभाव से
उद्यत्-स्व-यूथ्य-कलहा	आरम्भ हो गई निज जाति में विवाद
दितिजा बभूवु:	दैत्य ऐसे हो गये

जैसे ही आप कलश ले कर उद्धृत हो रहे थे, दैत्यों ने आपके हाथों से अमृत का हरण करने की चेष्टा की। उन शरणहीन देवों को सान्त्वना देते हुए आप अदृश्य हो गये। आपके ही प्रभाव से तब असुरों में आपस में विवाद आरम्भ हो गया।

श्यामां रुचाऽपि वयसाऽपि तनुं तदानीं
प्राप्तोऽसि तुङ्गकुचमण्डलभंगुरां त्वम् ।
पीयूषकुम्भकलहं परिमुच्य सर्वे
तृष्णाकुला: प्रतिययुस्त्वदुरोजकुम्भे ॥२॥

श्यामां	सुन्दर और युवा
रुचा-अपि वयसा-अपि	कान्ति से भी और वयस से भी
तनुं तदानीं प्राप्त:-असि	शरीर् को तब प्राप्त किया (आपने)
तुङ्ग-कुच-मण्डल-भंगुरां	उन्नत स्तन मण्डलों से झुकी हुई

त्वम्	आप
पीयूष-कुम्भ-कलहम्	अमृत कलश के कलह को
परिमुच्य सर्वे	त्याग कर सभी
तृष्णा-आकुलाः	तृष्णा से व्यथित
प्रतिययुः-	पीछे चले गये
त्वत्-उरोज-कुम्भे	आपके स्तन कलशों के

तब आपने सुन्दर कान्ति और युवावस्था वाले शरीर को धारण किया। उन्नत स्तनों के भार से किञ्चित झुके हुए आपके उस रूप को देख कर, तृष्णा से आकुल-व्याकुल हुए सभी, अमृत कलश के कलह को त्याग कर आपके स्तन कलशों के पीछे भागे।

का त्वं मृगाक्षि विभजस्व सुधामिमामि-
त्यारूढरागविवशानभियाचतोऽमून् ।
विश्वस्यते मयि कथं कुलटाऽस्मि दैत्या
इत्यालपन्नपि सुविश्वसितानतानीः ॥३॥

का त्वं मृगाक्षि	कौन हो तुम मृगनयनी
विभजस्व सुधाम्-इमाम्-	भाग कर दो इस अमृत का
इति-आरूढ-राग-विवशान्-	अत्यन्त मोह के वश में विवश हुए उनलोगों ने
अभियाचितः-अमून्	इस प्रकार याचना की उन लोगों ने
विश्वस्यते मयि कथं	(उनको) विश्वास करते हो मुझ में कैसे
कुलटा-अस्मि दैत्या	कुलटा हूं, हे असुर!
इति-आलपन्-अपि	इस प्रकार कहते हुए भी
सुविश्वसितान्-अतानीः	(आपने) अच्छी तरह (उनका) विश्वास जीत लिया

'हे मृगनयनी तुम कौन हो? यह अमृत हम लोगों में बांट कर दो', अत्यन्त मोह के वशिभूत हुए उन लोगों ने इस प्रकार याचना की। 'हे असुर! मैं कुलटा हूं, मुझ पर कैसे विश्वास करते हो', इस प्रकार कहते हुए भी आपने उन लोगों का विश्वास जीत लिया।

मोदात् सुधाकलशमेषु ददत्सु सा त्वं
दुश्चेष्टितं मम सहध्वमिति ब्रुवाणा ।
पङ्क्तिप्रभेदविनिवेशितदेवदैत्या
लीलाविलासगतिभि: समदा: सुधां ताम् ॥४॥

मोदात् सुधा-कलशम्-	हर्ष से अमृत कलश को
एषु ददत्सु	इन लोगों के देते हुए
सा त्वं	वह आप
दुश्चेष्टितं मम सहध्वम्-	’दुष्चेष्टाओं को मेरी सहन करिये’
इति ब्रुवाणा	इस प्रकार कहती हुई
पङ्क्ति-प्रभेद-	पङ्क्तियां भिन्न भिन्न
विनिवेशित-देव-दैत्या	में कर दिया देवों और दैत्यों को
लीला-विलास-गतिभि:	और लीलापूर्ण विलास की गतियों से
समदा: सुधा ताम्	ले लिया उस अमृत को

आपको हर्ष पूर्वक अमृत-कलश देते हुए उन लोगों से आपने कहा ’मेरी दुष्चेष्टाओं को आप लोगों को सहन करना पडेगा।’ इस प्रकार कहते हुए आपने देवों और दैत्यों को भिन्न भिन्न पङ्क्तियों मे विभाजित कर दिया। फिर लीला सहित विलास पूर्ण गति से जा कर उनसे अमृत कलश ले लिया।

अस्मास्वियं प्रणयिणीत्यसुरेषु तेषु
जोषं स्थितेष्वथ समाप्य सुधां सुरेषु ।
त्वं भक्तलोकवशगो निजरूपमेत्य
स्वर्भानुमर्धपरिपीतसुधं व्यलावी: ॥५॥

अस्मासु-इयं प्रणयिनी-	हम लोगों में यह अनुरक्त है
इति-असुरेषु तेषु	इस प्रकार उन असुरों के
जोषं स्थितेषु-अथ	शान्ति से बैठे हुए होने पर तब
समाप्य सुधां सुरेषु	समाप्त करके अमृत को देवों में

त्वं भक्तलोक-वशग:	आप भक्त लोगों के वशीभूत
निज-रूपम्-एत्य	अपने निजी रूप में प्रकट हो कर
स्वर्भानुम्-अर्धपीत-सुधं	असुर राहु का (जिसने) आधा पीया था अमृत को
व्यलावी:	शिर:च्छेद कर दिया

'यह हम लोगों में अनुरक्त है', ऐसा सोच कर जब असुर शान्ति से बैठे थे, आपने अमृत सारा देवों में बांट कर समाप्त कर दिया और अपने असली स्वरूप में आ गये। अपने भक्त जनों के वशीभूत आपने आधा अमृत पीये हुए असुर राहु का शिर:च्छेद कर दिया।

त्वत्त: सुधाहरणयोग्यफलं परेषु
दत्वा गते त्वयि सुरै: खलु ते व्यगृह्णन् ।
घोरेऽथ मूर्छति रणे बलिदैत्यमाया-
व्यामोहिते सुरगणे त्वमिहाविरासी: ॥६॥

त्वत्त: सुधा-हरण-	आपसे अमृत छीनने
योग्य-फलं परेषु दत्वा	के योग्य फल उनको (असुरों) को दे कर
गते त्वयि	चले जाने पर आपके
सुरै: खलु ते व्यगृह्णन्	देवों के साथ फिर उन लोगों ने युद्ध आरम्भ कर दिया
घोरे-अथ मूर्छति रणे	तब घोर युद्ध में मुर्छित हो जाने पर
बलि-दैत्य-माया-व्यामोहिते	असुर बलि की माया से विमोहित हो जाने पर
सुरगणे	देवों के
त्वम्-इह-आविरासी:	आप यहां फिर से प्रकट हो गये

आपके हाथों से अमृत अपहरण का उचित फल असुरों को दे कर आपके चले जाने के बाद, दैत्यों ने देवों के साथ फिर युद्ध आरम्भ कर दिया। जब देव गण असुर बालि की माया से विमोहित हो कर मूर्छित हो गये तब आप फिर से युद्ध के बीच में प्रकट हो गये।

त्वं कालनेमिमथ मालिमुखाञ्जघन्थ
शक्रो जघान बलिजम्भवलान् सपाकान् ।

शुष्कार्द्रदुष्करवधे नमुचौ च लूने
फेनेन नारदगिरा न्यरुणो रणं त्वं ॥७॥

त्वं कालनेमिम्-	आपने कालनेमि
अथ मालिमुखान्-जघन्थ	फिर माली और औरों का संहार किया
शक्रो जघान	इन्द्र ने मारा
बलि-जम्भ-वलान् सपाकान्	बलि, जम्भ, बल और पाक के साथ औरों को
शुष्क-आर्द्र-दुष्कर-वधे	सूखे या गीले (पदार्थ) से कठिन था वध जिसका
नमुचौ च	और ऐसे नमुचि को
लूने फेनेन	समुद्र फिन से (मार दिया)
नारद-गिरा	नारद के कहने पर
न्यरुण: रणं त्वम्	रोक दिया रण को आपने

आपने कालनेमि, माली, सुमाली और माल्यवान आदि का संहार किया। इन्द्र ने बलि, जम्भ, बल और पाक आदि को मार डाला। ऐसे नमुचि को जिसका सूखे या गीले पदार्थ से वध दुष्कर था, आपने समुद्र के फेन से मार गिराया। फिर नारद के कहने पर आपने युद्ध रोक दिया।

योषावपुर्दनुजमोहनमाहितं ते
श्रुत्वा विलोकनकुतूहलवान् महेश: ।
भूतैस्समं गिरिजया च गत: पदं ते
स्तुत्वाऽब्रवीदभिमतं त्वमथो तिरोधा: ॥८॥

योषा-वपु:-	युवती का वेश
दनुज-मोहनम्-	दैत्यो को मोहित करने के लिये
आहितं ते	(जो) धारण किया था आपने
श्रुत्वा	सुन कर
विलोकन-कुतूहलवान् महेश:	देखने को उत्सुक हो गये शंकर

भूतैः-समं	भूतों के साथ
गिरिजया च	और गिरिजा (के साथ)
गतः पदं ते	गये आपके वास स्थान को
स्तुत्वा-अब्रवीत्	स्तुति कर के बोले
अभिमतं	अपने अभिप्राय को
त्वम्-अथ तिरोधाः	तब आप अन्तर्धान हो गये

दैत्यों को मोहित करने के लिये आपने जो युवती स्त्री का वेश धारण किया था, उसके बारे में सुन कर उस रूप को देखने के लिये शंकर उत्सुक हो गये। वे पार्वती और भूतों के साथ आपके वास स्थान को गये और स्तुति कर के अपने अभिप्राय को व्यक्त किया। तब आप अन्तर्धान हो गये।

आरामसीमनि च कन्दुकघातलीला-
लोलायमाननयनां कमनीं मनोज्ञाम् ।
त्वामेष वीक्ष्य विगलद्वसनां मनोभू-
वेगादनङ्गरिपुरङ्ग समालिलिङ्ग ॥९॥

आराम-सीमनि	उपवन के प्रान्त भाग में
च कन्दुक-घात-लीला-	और गैंद को मारने की लीला से
लोलायमान-नयनां	चञ्चल हुए नेत्रों वाली को
कमनीं मनोज्ञाम्	सुन्दरी मनमोहिनी को
त्वाम्-एष वीक्ष्य	आपको यह (शंकर) देख कर
विगलत्-वसनाम्	सरकते हुए वस्त्रों वाली को
मनोभू-वेगात्-	मनोज की तीव्रता से
अन्ङ्गरिपुः-	मनोजरिपु (शंकर) ने
अङ्ग	हे अङ्ग!
समालिलिङ्ग	आलिङ्गन कर लिया

हे अङ्ग! उपवन के प्रान्त भाग में गेंन्द को मारने की लीला करती हुई चञ्चल नेत्रों वाली सुन्दर और मनमोहिनी रूप वाली जिसके वस्त्र सरक रहे थे, ऐसी युवती रूप में आपको देख कर, मनोजरिपु शंकर ने मनोज के अतिरेक से आपका आलिङ्गन कर लिया।

भूयोऽपि विद्रुतवतीमुपधाव्य देवो
वीर्यप्रमोक्षविकसत्परमार्थबोधः ।
त्वन्मानितस्तव महत्त्वमुवाच देव्यै
तत्तादृशस्त्वमव वातनिकेतनाथ ॥१०॥

भूयः-अपि	फिर से भी
विद्रुतवतीम्-उपधाव्य	भागती हुई का पीछा करते हुए
देवः	शंकर के
वीर्य-प्रमोक्ष-	वीर्य स्खलित होने से
विकसत्-परम्-अर्थ-बोधः	प्रकाशित हो गया परम अर्थ का ज्ञान
त्वत्-मानितः-	आपसे सम्मानित
तव महत्त्वम्-	आपकी महिमा को
उवाच देव्यै	कहा पार्वती को
तत्-तादृशः-त्वम्-	वैसे उस प्रकार के आप
अव	प्रसन्न हों
वातनिकेतनाथ	हे वातनिकेतनाथ

फिर भी भागती हुई उस रमणी का पीछा करते हुए शंकर को, वीर्य के स्खलित हो जाने से, परमार्थ के ज्ञान का प्रबोध हो गया। आपसे सम्मानित हो कर तब शंकर ने आपकी महिमा पार्वती को बताई। ऐसे इस प्रकार के हे वातनिकेतनाथ! आप प्रसन्न हों।

दशक ३०

शक्रेण संयति हतोऽपि बलिर्महात्मा
शुक्रेण जीविततनु: क्रतुवर्धितोष्मा ।
विक्रान्तिमान् भयनिलीनसुरां त्रिलोकीं
चक्रे वशे स तव चक्रमुखादभीत: ॥१॥

शक्रेण संयति हत:-अपि	इन्द्र के द्वारा युद्ध में मारे जाने पर भी
बलि:-महात्मा	महात्मा बलि
शुक्रेण जीवित-तनु:	शुक्राचार्य के द्वारा जीवित कर दिये गये शरीर वाले
क्रतु-वर्धित-उष्मा	विश्वजित यज्ञ करने से वर्धित बल वाले
विक्रान्तिमान्	पराक्रमी
भय-निलीन-सुरां	भय से छुप जाने पर देवों के
त्रिलोकीं	त्रिलोक को
चक्रे वशे स	कर लिया वश में उसने
तव चक्र-मुखात्-अभीत:	आपके चक्र के मुख से निर्भय

इन्द्र के द्वारा महात्मा बलि के युद्ध में मारे जाने पर भी शुक्राचार्य ने उनका शरीर जीवित कर दिया। विश्वजित यज्ञ करने से बलि का बल वर्धित हो गया। भय से सभी देवगण छुप गये। आपके सुदर्शन चक्र के आक्रमण से निर्भय पराक्रमी बलि ने तीनों लोकों को वश में कर लिया।

पुत्रार्तिदर्शनवशाददितिर्विषण्णा
तं काश्यपं निजपतिं शरणं प्रपन्ना ।
त्वत्पूजनं तदुदितं हि पयोव्रताख्यं
सा द्वादशाहमचरत्त्वयि भक्तिपूर्णा ॥२॥

पुत्र-आर्ति-दर्शन-वशात्-	पुत्रों के कष्ट को देखने से विवश
अदिति-विषण्णा	अदिति कातर हो कर
तं काश्यपं निज-पतिं	उन कश्यप के निज पति के

शरणं प्रपन्ना	शरण में गई
त्वत्-पूजनं तत्-उदितं	आपके पूजन को उनके द्वारा कहे गये
हि पयोव्रत-आख्यं	हि पयोव्रत नामक (अनुष्ठान को)
सा द्वादश-आहम्-अचरत्-	उसने (अदिति ने) बारह दिनों तक आचरण किया
त्वयि भक्ति-पूर्णा	आपकी भक्ति से परिपूर्ण हो कर

अपने पुत्रों के कष्ट देख कर विवश और कातर अदिति अपने पति कश्यप मुनि की शरण में गई। उनके द्वारा बताई हुई आपके पूजन की विधि पयोव्रत का अदिति ने आपकी भक्ति से परिपूर्ण हो कर बारह दिनों तक आचरण किया।

तस्यावधौ त्वयि निलीनमतेरमुष्या:
श्यामश्चतुर्भुजवपु: स्वयमाविरासी: ।
नम्रां च तामिह भवत्तनयो भवेयं
गोप्यं मदीक्षणमिति प्रलपन्नयासी: ॥३॥

तस्य-अवधौ	उस अवधि में
त्वयि निलीन-मते:-अमुष्या:	आपमें निलीन बुद्धि वाली उसके (अदिति के) (सामने)
श्याम:-चतुर्भुज-वपु:	श्याम वर्ण और चतुर्भुज रूप में
स्वयम्-आविरासी:	(आप) स्वयं प्रकट हुए
नम्रां च ताम्-इह	और नत मस्तक हुई हुई उसको यहां
भवत्-तनय: भवेयं	आपका पुत्र होऊंगा
गोप्यं मत्-ईक्षणम्-इति	गोपनीय मेरा दर्शन है इस प्रकार
प्रलपन्	कह कर
अयासी:	अन्तर्धान हो गये

पयोव्रत के आचरण की अवधि में अदिति की बुद्धि आपमें निलीन हो गई। अपने सम्मुख नतमस्तक शरणागत हुई उसके सामने आप अपने श्यामवर्ण और चतुर्भुज स्वरूप में प्रकट हुए। "मैं आपका पुत्र होऊंगा। मेरा यह दर्शन गोपनीय है।" इस प्रकार कह कर आप अन्तर्धान हो गये।

त्वं काश्यपे तपसि सन्निदधत्तदानीं
प्राप्तोऽसि गर्भमदिते: प्रणुतो विधात्रा ।
प्रासूत च प्रकटवैष्णवदिव्यरूपं
सा द्वादशीश्रवणपुण्यदिने भवन्तं ॥४॥

त्वं	आपने
काश्यपे तपसि	कश्यप मुनि में
सन्निदधत्-	प्रविष्ट हो कर
तदानीं	उस समय
प्राप्तः-असि	प्राप्त किया
गर्भम्-अदितेः	गर्भ को अदिति के
प्रणुतः विधात्रा	स्तुति किये गये ब्रह्मा के द्वारा
प्रासूत च	और जन्म दिया
प्रकट-वैष्णव-दिव्य-रूपं	प्रकट हुए विष्णुयुक्त दिव्य रूप में
सा	उसने (अदिति ने)
द्वादशी-श्रवण-पुण्य-दिने	द्वादशी और श्रवण के शुभ दिन में
भवन्तम्	आपको

उस समय कश्यप मुनि के वीर्य में प्रवेश कर के आप अदिति के गर्भ में प्रविष्ट हुए। ब्रह्मा ने आपकी स्तुति की। द्वादशी और श्रावण के शुभ दिन में अदिति ने विष्णु के समस्त लक्षणों से युक्त दिव्य रूप में आपको जन्म दिया।

पुण्याश्रमं तमभिवर्षति पुष्पवर्षै-
र्हर्षाकुले सुरगणे कृततूर्यघोषे ।
बध्वाऽञ्जलिं जय जयेति नुत: पितृभ्यां
त्वं तत्क्षणे पटुतमं वटुरूपमाधा: ॥५॥

पुण्य-आश्रमं तम्-	पुण्य आश्रम उस पर
अभिवर्षति पुष्प-वर्षैः-	वर्षा करते हुए फूलों की वर्षा के द्वारा

हर्ष-आकुले सुरगणे	हर्ष से विभोर होने पर देवगणों के
कृत-तूर्य-घोषे	किया गया दुन्दुभियों का नाद
बध्वा-अञ्जलिं	बांध के अञ्जलि
जय जय इति	जय जय इस प्रकार
नुतः पितृभ्यां	स्तुति किये जाने पर माता पिता के द्वारा
त्वं तत्-क्षणे	आपने उसी क्षण
पटुतमं वटु-रूपम्-	अत्यन्त पटु ब्रह्मचारी के रूप को
आधाः	धारण कर लिया

हर्ष से विभोर देवगण उस पुण्याश्रम पर पुष्प वृष्टि करने लगे और दुन्दुभियों का नाद करने लगे। अञ्जलि बांध कर देवगण और आपके माता पिता भी 'जय हो जय हो' इस प्रकार आपकी स्तुति करने लगे। तब उसी समय आप ने एक अत्यन्त पटु ब्रह्मचारी का रूप धारण कर लिया।

तावत्प्रजापतिमुखैरुपनीय मौञ्जी-
दण्डाजिनाक्षवलयादिभिरर्च्यमानः ।
देदीप्यमानवपुरीश कृताग्निकार्य-
स्त्वं प्रास्थिथा बलिगृहं प्रकृताश्वमेधम् ॥६॥

तावत्-	तब
प्रजापतिमुखैः-	प्रजापति (कश्यप आदि) प्रमुखों के द्वारा
उपनीय	उपनयन होने पर
मौञ्जी-दण्ड-अजिन-अक्ष-वलय-आदिभिः-	मौञ्जी, दण्ड, कृष्ण मृग चर्म और अक्षमाला आदि से
अर्च्यमानः	आपकी पूजा करने पर
देदीप्यमान-वपुः-	प्रकाशमान शरीर वाले आप
ईश	हे ईश
कृत-अग्नि-कार्यः-	करके अग्नि होत्रादि कार्य

त्वं	आप
प्रास्थिथा	प्रस्तुत हो गये
बलि-गृहं	बलि के घर की ओर
प्रकृत-अश्व-मेधम्	(जहां) हो रहा था अश्वमेध यज्ञ

हे ईश! तब कश्यप प्रजापति ने आपका उपनयन किया और मौञ्जी, दण्ड कृष्ण मृग चर्म, और अक्षमाला आदि से आपको सुसज्जित करके अर्चना की। आप अग्निहोत्र आदि कर्म सम्पन्न कर के बलि के घर की ओर प्रस्तुत हुए जहां अश्वमेध यज्ञ हो रहा था।

गात्रेण भाविमहिमोचितगौरवं प्रा-
ग्व्यावृण्वतेव धरणीं चलयन्नायासीः ।
छत्रं परोष्मतिरणार्थमिवादधानो
दण्डं च दानवजनेष्विव सन्निधातुम् ॥७॥

गात्रेण	शरीर से
भावि-महिमा-उचित-गौरवं	आगामी महिमा के लिये उचित गौरव को
प्राक्-	पहले ही
व्यावृण्वता-इव	दर्शाते हुए मानो
धरणीं चलयन्-	पृथ्वी को कंपायमान करते हुए
आयासीः	चलते गये
छत्रं	छत्र को
पर-उष्मति-रण-अर्थम्-इव	शत्रुओं की गर्मी के विरोध के लिये मानो
आदधानः	उठाए हुए
दण्डं च	और दण्ड को
दानव-जनेषु-इव	दानव लोगों के ऊपर मानो
सन्निधातुम्	मारने के लिये

आप अपनी आगामी महिमा के अनुरूप गौरव को मानो पहले ही दर्शाते हुए, धरती को कंपायमान करते हुए चलते गये। शत्रुओं के क्रोध की गर्मी का रण में विरोध करने के लिये मानो आपने छत्र उठा रखा था। दानवों पर प्रहार करने के लिए ही मानो दण्ड भी धारण कर रखा था।

तां नर्मदोत्तरतटे हयमेधशाला-
मासेदुषि त्वयि रुचा तव रुद्धनेत्रैः ।
भास्वान् किमेष दहनो नु सनत्कुमारो
योगी नु कोऽयमिति शुक्रमुखैश्शशङ्के ॥८॥

तां	उस
नर्मदा-उत्तरतटे	नर्मदा के उत्तरी तट पर
हयमेध-शालाम्-	अश्व मेध की यज्ञशाला में
आसेदुषि त्वयि	पहुंचने पर आपके
रुचा तव	तेज से आपके
रुद्ध-नेत्रैः	बन्द हुए नेत्रों वाले
भास्वान् किम्-एष	यह सूर्य है क्या
दहनः नु	या अग्नि है
सनत्कुमारः योगी नु	या सनत्कुमार योगी तो नहीं
कः-अयम्-इति	कौन है यह इस प्रकार
शुक्रमुखैः-	शुक्र आदि मुख्यों के द्वारा
शशङ्के	शङ्का की गई

नर्मदा के उत्तरी तट पर उस अश्वमेध यज्ञशाला में आपके पहुंचने पर, आपके तेज से शुक्र आदि प्रमुखों के नेत्रबन्द से हो गये। यह सूर्य है क्या, या अग्नि है, या सनत्कुमार योगी जन तो नहीं है, यह कौन है, इस प्रकार सब शङ्का सहित विचार करने लगे।

आनीतमाशु भृगुभिर्महसाऽभिभूतै-
स्त्वां रम्यरूपमसुरः पुलकावृताङ्गः ।

भक्त्या समेत्य सुकृती परिणिज्य पादौ
तत्तोयमन्वधृत मूर्धनि तीर्थतीर्थम् ॥९॥

आनीतम्-आशु	लाये गये शीघ्र ही
भृगुभिः-	शुक्राचार्य आदि के द्वारा
महसा-अभिभूतैः-	(आपके) तेज से अभिभूत हुए
त्वां रम्यरूपम्-	आपको मनोहर रूप धारी
असुरः पुलक-आवृत-अङ्गः	(बालि) असुर का अङ्ग पुलकित हो गया
भक्त्या समेत्य	भक्ति से पास में जा कर
सुकृती	पुण्यात्मा ने
परिणिज्य पादौ	धो कर चरणों को
तत्-तोयम्-अन्वधृत	उस जल को रख लिया
मूर्धनि	सर पर
तीर्थ-तीर्थम्	पवित्र से भी पवित्र (जल) को

आपके तेज से अभिभूत शुक्राचार्य आदि आपको शीघ्र ही बलि असुर के पास ले गये। मनोहर रूप धारी आपको देख कर असुर बलि के अङ्ग पुलकित हो उठे। तब उस पुण्यात्मा ने आपके पास जा कर आपके चरणों को धोया और उस पवित्र से भी पवित्र जल को अपने सर पर रख लिया।

प्रह्लादवंशजतया क्रतुभिर्द्विजेषु
विश्वासतो नु तदिदं दितिजोऽपि लेभे ।
यत्ते पदाम्बु गिरिशस्य शिरोभिलाल्यं
स त्वं विभो गुरुपुरालय पालयेथाः ॥१०॥

प्रह्लाद-वंशजतया	प्रह्लाद के वंशज होने के कारण
क्रतुभिः-	(या) यज्ञानुष्ठानों से
द्विजेषु विश्वासतः नु	या ब्राह्मणों में विश्वास के कारण

तत्-इदं	वह यह
दितिजः-अपि लेभे	दिति पुत्र (असुर) होने पर भी प्राप्त कर लिया
यत्-ते पद-अम्बु	जो आपके चरण जल (को)
गिरिशस्य शिरः-अभिलाल्यं	(जो) शंकर के सिर पर धारण करने के योग्य है
स त्वं विभो	वैसे आप हे विभो!
गुरुपुर-आलय	गुरुपुर के निवासी
पालयेथा	पालन करें (मेरा)

बलि ने प्रह्लाद का वंशज होने के कारण, या अपने यज्ञानुष्ठानों के बल के कारण, या ब्राह्मणों की महिमा में विश्वास के कारण दिति पुत्र असुर होने पर भी आपकावह पादोदक प्राप्त कर लिया, जो शंकर के मस्तक पर धारण करने योग्य है। वैसे आप हे विभो! हे गुरुपुर के निवासी! आप मेरा पालन करें।

दशक ३१

प्रीत्या दैत्यस्तव तनुमह:प्रेक्षणात् सर्वथाऽपि
त्वामाराध्यन्नजित रचयन्नञ्जलिं सञ्जगाद ।
मत्त: किं ते समभिलषितं विप्रसूनो वद त्वं
वित्तं भक्तं भवनमवनीं वाऽपि सर्वं प्रदास्ये ॥१॥

प्रीत्या	प्रसन्न हो कर
दैत्य:-तव	असुर आपका
तनुम्-अह:-	स्वरूप अहो!
प्रेक्षणात्	देखने से
सर्वथा-अपि	सब प्रकार से भी
त्वाम्-आराध्यन्	आपकी आराधना करते हुए
अजित	हे अजित!
रचयन्-अञ्जलिं	बना कर अञ्जलि
सञ्जगाद्	भली प्रकार से कहा
मत्त:	मुझसे
किं ते समभिलषितं	क्या आपकी अभिलाषा है
विप्रसूनो वद त्वं	हे ब्राह्मण पुत्र कहें आप
वित्तं भक्तं भवनम्-अवनीम्	धन, भोजन भवन अथवा भूमि
वा-अपि सर्वं	या भी ये सब
प्रदास्ये	दूंगा

अहो! आपका स्वरूप देख कर प्रसन्न हुए दैत्य ने सब प्रकार से (षोडशोपचार से) आपकी आराधना की। हे अजित! तब अञ्जलि बना कर उसने भलि प्रकार से कहा 'हे ब्राह्मण पुत्र! आपको मुझसे क्या अभिलाषा है ? धन भोजन भवन भूमि या ये सभी, कहें, मैं दूंगा।

तामीक्षणां बलिगिरमुपाकर्ण्य कारुण्यपूर्णोऽ-
प्यस्योत्सेकं शमयितुमना दैत्यवंशं प्रशंसन् ।
भूमिं पादत्रयपरिमितां प्रार्थयामासिथ त्वं
सर्वं देहीति तु निगदिते कस्य हास्यं न वा स्यात् ॥२॥

ताम्-अक्षीणां बलि-गिरम्-	उस निर्भीक बलि की वाणी को
उपाकर्ण्य	सुन कर
कारुण्य-पूर्णः-अपि	करुणा से परिपूर्ण होते हुए भी
अस्य-उत्सेकं	उसके (बलि के) गर्व का
शमयितुमना	शमन करने के लिये
दैत्य-वंशं प्रशंसन्	दैत्य वंश की प्रशंसा करते हुए
भूमिं पाद-त्रय-परिमितां	भूमि, पैर तीन की परिमिति की
प्रार्थयामासिथ त्वं	के लिये याचना की आपने
सर्वं देहि-इति	सभी दे दो इस प्रकार
तु निगदिते	भी कह देने से
कस्य हास्यं	किसकी हंसी
न वा स्यात्	नही ही होती

बलि की उस निर्भीक वाणी को सुन कर करुणा से परिपूर्ण होने पर भी आपने दैत्य वंश की प्रशंसा करते हुए तीन पगों की परिमिति की भूमि की याचना की। यदि यह भी कह देते कि सब दे दो, तब भी किसकी हंसी का पात्र नहीं होते?

विश्वेशं मां त्रिपदमिह किं याचसे बालिशस्त्वं
सर्वां भूमिं वृणु किममुनेत्यालपत्त्वां स दृप्यन् ।
यस्माद्दर्पात् त्रिपदपरिपूर्त्यक्षमः क्षेपवादान्
बन्धं चासावगमदतदर्होऽपि गाढोपशान्त्यै ॥३॥

विश्वेशं मां	विश्व के ईश मुझसे
त्रिपदम्-इह किं याचसे	तीन पग यहां क्या मांगते हो

बालिशः-त्वं	बालक बुद्धि तुम
सर्वां भूमिं वृणु	सारी पृथ्वी का वरण करो
किम्-अमुना-	क्या होगा इससे
इति-आलपत्-त्वां	इस प्रकार कहते हुए आपको
स दृप्यन्	उसने गर्वित हो कर
यस्मात्-दर्पात्	जिस गर्व के द्वारा
त्रिपद-परिपूर्ति-अक्षमः	तीन पगों की पूर्ति में अयोग्य
क्षेपवादान्	(उसको) आक्षेप पूर्ण वचनों और
बन्धं च-	बन्धन को
असौ-अगमत्-	इसने प्राप्त किया
अतदर्हः-अपि	इसके अयोग्य होते हुए भी
गाढोपशान्त्यै	आत्यन्तिक उपशान्ति के लिये

"मैं विश्व का ईश्वर हूं। मुझसे यहां तीन पगों की परिमिति की भूमि क्या मांगते हो, सारी पृथ्वी का वरण करो' उसने इस प्रकार गर्व से कहा। इसी गर्व के कारण वह तीन पगों की भूमि देने में तो असमर्थ रहा ही, इसका पात्र न होने पर भी आक्षेपों और बन्धन का भी भागी हुआ। यह सब उसकी आत्यन्तिक उपशान्ति के लिये ही था।

पादत्रय्या यदि न मुदितो विष्टपैर्नापि तुष्ये-
दित्युक्तेऽस्मिन् वरद भवते दातुकामेऽथ तोयम् ।
दैत्याचार्यस्तव खलु परीक्षार्थिनः प्रेरणात्तं
मा मा देयं हरिरयमिति व्यक्तमेवाबभाषे ॥४॥

पादत्रय्या	तीन पगों से
यदि न मुदितः	यदि नहीं है सन्तोष
विष्टपैः-न-अपि	विश्व त्रयी से भी नहीं
तुष्येत्-	सन्तोष होगा

इति-उक्ते-अस्मिन्	इस प्रकार कहे जाने पर उसके
वरद	हे वरद!
भवते दातुकामे-अथ	आपके लिये दान करने के इच्छुक (बलि के)
तोयम्	जल को (ले लेने पर)
दैत्य-आचार्य:-	दैत्यों के आचार्य (शुक्राचार्य ने) ने
तव खलु परीक्षार्थिन:	आपकी निश्चय ही बलि की परीक्षा लेने के लिये
प्रेरणात्-	(और आपकी ही) प्रेरणा से
तं मा मा देयं	उसको नहीं नहीं देना चाहिये
हरि:-अयम्-इति	हरि है यह इस प्रकार
व्यक्तम्-एव-आबभाषे	स्पष्ट ही कहा

''यदि पादत्रयी से सन्तोष नहीं है तो यह विश्व त्रयी से भी सन्तुष्ट नहीं होगा', इस प्रकार जब उसने कहा और दान देने की इच्छा से जल हाथ में ले लिया, तब दैत्यों के आचार्य शुक्राचार्य ने बलि की परीक्षा लेने की इच्छा से, आपकी ही प्रेरणा से बलि को स्पष्ट रूप से कहा कि 'यह हरि है, मत दो मत दो।'

याचत्येवं यदि स भगवान् पूर्णकामोऽस्मि सोऽहं
दास्याम्येव स्थिरमिति वदन् काव्यशप्तोऽपि दैत्य: ।
विन्ध्यावल्या निजदयितया दत्तपाद्याय तुभ्यं
चित्रं चित्रं सकलमपि स प्रार्पयत्तोयपूर्वम् ॥५॥

याचति-एवं यदि	याचना करता है इस प्रकार यदि
स भगवान्	वह भगवान
पूर्णकाम:-अस्मि	पूर्णकाम हूं
स:-अहं	वह मैं
दास्यामि-एव स्थिरम्-इति वदन्	दूंगा ही (यह) निश्चित है इस प्रकार कह कर
काव्य-शप्त:-अपि दैत्य:	काव्य (शुक्राचार्य से) से शापित हुआ भी असुर

विन्ध्यावल्या	विन्ध्यावली के द्वारा
निज-दयितया	अपनी पत्नी के द्वारा
दत्त-पाद्याय तुभ्यं	दिया जाने पर पाद्य जल आपके लिये
चित्रं चित्रं	विचित्र है विचित्र है
सकलम्-अपि स	सर्वस्व भी उसने
प्रार्पयत्-तोय-पूर्वम्	अर्पण कर दिया जल के पूर्व ही

बलि ने कहा कि ' यदि स्वयं भगवान इस प्रकार याचना करते हैं तो मैं पूर्ण काम हो गया और मैं अवश्य ही दूंगा।' इस पर शुक्राचार्य के द्वारा शपित हो जाने पर भी बलि ने अपनी पत्नी विन्ध्यावली के द्वारा पाद्य जल अर्पित करते हुए ही आपके लिये सर्वस्व समर्पित कर दिया। आश्चर्यजनक है यह!

निस्सन्देहं दितिकुलपतौ त्वय्यशेषार्पणं तद्-
व्यातन्वाने मुमुचु:-ऋषय: सामरा: पुष्पवर्षम् ।
दिव्यं रूपं तव च तदिदं पश्यतां विश्वभाजा-
मुच्चैरुच्चैरवृधदवधीकृत्य विश्वाण्डभाण्डम् ॥६॥

निस्सन्देहं	निस्संदेह ही
दितिकुलपतौ	(जब) असुर राज ने
त्वयि-अशेष-अर्पणं	आप पर सर्वस्व समर्पित कर दिया
तत् व्यातन्वाने	वह दे दिया गया
मुमुचुः ऋषयः	छोडे ऋषियों ने
सामराः	देवों सहित
पुष्पवर्षम्	पुष्प वृष्टि
दिव्यं रूपं तव च	दिव्य रूप आपका और
तत्-इदं पश्यतां	वह जो दिखाई दे रहा था
विश्वभाजाम्-	विश्व के जनों को

उच्चैः-उच्चैः-अवृधत्-	ऊंचा ऊंचा बढने लगा
अवधीकृत्य	सीमाओं को पार कर
विश्व-अण्ड-भाण्डम्	विश्व के अण्ड भाण्ड के बाहर

निस्संदेह रूप से, जब दैत्यराज ने आपको सर्वस्व समर्पित कर दिया, तब ऋषियों ने देवों के सहित आप पर पुष्प वृष्टि की। विश्व जनों को आपका जो दिव्य स्वरूप दिखाई दे रहा था वह, विश्व के अण्ड भाण्ड की सीमाओं को पार कर ऊंचा और ऊंचा बढने लगा।

त्वत्पादाग्रं निजपदगतं पुण्डरीकोद्भवोऽसौ
कुण्डीतोयैरसिचदपुनाद्यज्जलं विश्वलोकान् ।
हर्षोत्कर्षात् सुबहु ननृते खेचरैरुत्सवेऽस्मिन्
भेरीं निघ्नन् भुवनमचरज्जाम्बवान् भक्तिशाली ॥७॥

त्वत्-पाद्-अग्रं	(जब) आपके पैर का अग्रभाग
निज-पद-गतं	अपने लोक (सत्य लोक) को पहुंचा
पुण्डरीकोद्भवः-असौ	यह ब्रह्मा ने
कुण्डी-तोयैः-असिचत्	कमण्डलु के जल से सिञ्चन किया
अपुनात्-यत्-जलं	पवित्र कर गया वह जल
विश्वलोकान्	विश्व के सभी लोकों को
हर्षोत्कर्षात्	हर्ष के अतिरेक से
सुबहु ननृते	खूब नाचे
खेचरैः-	आकाश में रहने वाले जीव (गन्धर्व और विद्याधर)
उत्सवे-अस्मिन्	इस उत्सव में
भेरीं निघ्नन्	भेरी को बजाते हुए
भुवनम्-अचरत्-	भुवनों में घूमता रहा
जाम्बवान् भक्तिशाली	भक्तिमान जाम्बवान

आपके विशाल स्वरूप के बढते बढते, जब आपके चरण सत्यलोक में पहुंचे, तब कमलजन्मा ब्रह्मा ने आपके चरणाग्र को अपने कमण्डलु के जल से धोया। उस जल से, गंगा के रूप में, विश्व के सभी लोक पवित्र हो गये । हर्षविभोर हो कर गगनचारी गन्धर्व विद्याधर आदि खूब नाचे और इस उत्सव में नगाडे बजाते हुए भक्तिमान जाम्बवान सारे भुवनों में घूमते रहे।

तावद्दैत्यास्त्वनुमतिमृते भर्तुरारब्धयुद्धा
देवोपेतैर्भवदनुचरैस्सङ्गता भङ्गमापन् ।
कालात्माऽयं वसति पुरतो यद्वशात् प्राग्जिता: स्म:
किं वो युद्धैरिति बलिगिरा तेऽथ पातालमापु: ॥८॥

तावत्-	तब तक
दैत्या:-तु-	असुर तो
अनुमतिम्-ऋते भर्तु:-	अनुमति के बिना स्वामी के
आरब्ध-युद्धा:	आरम्भ कर दिया युद्ध
देव-	हे भगवन
उपेतै-भवत्-अनुचरै:-	आये हुए आपके अनुचरों के संग
सङ्गता:	विरोध किये जाने पर
भङ्गम्-आपन्	पराजय पाकर
कालात्मा-अयं वसति पुरत:	कालस्वरूप यह (विष्णु) ठहरा है सामने
यत्-वशात् प्राक्-जिता: स्म:	जिसके कारण पहले हम जीत चुके हैं
किं व: युद्धै:-	क्या होगा युद्ध कर के
इति बलि-गिरा	इस प्रकार बलि के कहने पर
ते-अथ पातालम्-आपु:	तब वे पाताल को चले गये

हे भगवन! तब तक अपने स्वामी की आज्ञा के बिना असुरों ने युद्ध प्रारम्भ कर दिया। उस समय आपके साथ आये भट्टों द्वारा वे असुर पराजित कर दिये गये। तब बलि ने उनसे कहा कि "कालस्वरूप साक्षात विष्णु सामने खडे हैं जिनकी कृपा से हम लोग पहले जीत चुके हैं। युद्ध करने से कोई लाभ नहीं है।" यह सुन कर असुर-गण पाताल में चले गये।

पाशैर्बद्धं पतगपतिना दैत्यमुच्चैरवादी-
स्तार्त्तीयीकं दिश मम पदं किं न विश्वेश्वरोऽसि ।
पादं मूर्ध्नि प्रणय भगवन्नित्यकम्पं वदन्तं
प्रह्लादस्तं स्वयमुपगतो मानयन्नस्तवीत्त्वाम् ॥९॥

पाशैः-बद्धं	पाशों के द्वारा बांधा गया
पतगपतिना	गरुड के द्वारा
दैत्यम्-उच्चैः-अवादीः-	असुर को (आपने) ऊंचे स्वर में कहा
तार्त्तीयीकं दिश मम पदं	तीसरा दे दो मेरे पद को (स्थान)
किं न विश्वेश्वरः-असि	क्यों नहीं जगदीश्वर हो ना
पादं मूर्ध्नि प्रणय भगवन्-	पग को सिर पर रखो हे भगवन
इति-अकम्पं वदन्तं	इस प्रकार अविचलित भाव से बोलते हुए (उसके)
प्रह्लादः-तं स्वयम्-उपगतः	प्रह्लाद स्वयं उसके पास आ गये
मानयन्-अस्तवीत-त्वाम्	सम्मान करते हुए स्तुति गाने लगे आपकी

गरुड ने बलि को पाशों से बांध दिया। तब आपने ऊंचे स्वर में बलि से कहा कि 'मेरे तीसरे पग के लिये स्थान दो। क्यों नहीं? तुम तो जगदीश्वर हो न?' बलि ने अविचलित भाव से कहा कि 'भगवन तीसरा पग मेरे सिर पर रखिये'। तब स्वयं प्रह्लाद बलि के समीप आ कर उसकी प्रशंसा करते हुए आपकी स्तुति गाने लगे।

दर्पोच्छित्त्यै विहितमखिलं दैत्य सिद्धोऽसि पुण्यै-
र्लोकस्तेऽस्तु त्रिदिवविजयी वासवत्वं च पश्चात् ।
मत्सायुज्यं भज च पुनरित्यन्वगृह्णा बलिं तं
विप्रैस्सन्तानितमखवरः पाहि वातालयेश ॥१०॥

दर्प-उच्छित्त्यै	(तुम्हारे) दर्प का उच्छेदन करने के लिये
विहितम्-अखिलं	रचा गया था यह सब कुछ
दैत्य सिद्धः-असि पुण्यैः-	हे असुर तुम अपने पुण्य कर्मों से सिद्ध हो गये हो
लोकः-ते-अस्तु	(अब) तुम्हारा लोक होगा (सुतल)

त्रिदिव-विजयी	स्वर्ग से श्रेष्ठ
वासव-त्वं	इन्द्रत्व को तुम
च पश्चात्	और फिर (प्राप्त करोगे)
मत्-सायुज्यं भज च पुनः-	और मेरा सायुज्य फिर से
इति-अन्वगृह्णाः बलिं तं	इस प्रकार अनुगृहीत करके उस बलि को
विप्रैः-सन्तानित-मखवरः	विप्रों के द्वारा पूर्ण करवा कर श्रेष्ठ यज्ञ को
पाहि वातालयेश	रक्षा करें हे वातालयेश

'हे असुर तुम्हारे दर्प का उच्छेदन करने के लिये यह सब रचा गया था। तुम अपने पुण्य कर्मों से सिद्ध हो गये हो। अब तुम सुतल लोक मे राज्य करोगे जो स्वर्ग लोक से भी उत्तम है। तत्पश्चात तुम इन्द्रत्व प्राप्त करोगे और फिर मेरे सायुज्य का भोग करोगे'। इस प्रकार बलि पर अनुग्रह करने के बाद आपने विप्रों के द्वारा उस श्रेष्ठ विश्वजित यज्ञ को पूर्ण करवाया। हे वातालयेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ३२

पुरा हयग्रीवमहासुरेण षष्ठान्तरान्तोद्यदकाण्डकल्पे ।
निद्रोन्मुखब्रह्ममुखात् हृतेषु वेदेष्वधित्स: किल मत्स्यरूपम् ॥१॥

पुरा	प्राचीन काल में
हयग्रीव-महा-असुरेण	हयग्रीव महा असुर के द्वारा
षष्ठ-अन्तरान्त-उद्यत्-	छठे मन्वन्तर के अन्त में उदित
अकाण्ड-कल्पे	नैमित्तिक प्रलय के समय
निद्रा-उन्मुख-ब्रह्म-मुखात्-	निद्रा के लिये उन्मुख ब्रह्मा जी के मुख से
हृतेषु वेदेषु-	हरण कर लिये जाने पर वेदों के
अधित्स: किल	धारण करने के इच्छुक निश्चय ही
मत्स्य-रूपम्	मत्स्य के रूप को (आपने)

प्राचीन काल में, छठे मन्वन्तर के अन्त में नैमित्तिक प्रलय के उदित होने के समय, हयग्रीव नामक महासुर ने निद्रोन्मुख ब्रह्मा के मुख से वेदों को चुरा लिया। निश्चय ही तब आपने मत्स्य रूप धारण करने की इच्छा की।

सत्यव्रतस्य द्रमिलाधिभर्तुर्नदीजले तर्पयतस्तदानीम् ।
कराञ्जलौ सञ्ज्वलिताकृतिस्त्वमदृश्यथा: कश्चन बालमीन: ॥२॥

सत्यव्रतस्य	सत्यव्रत (मुनि) के
द्रमिल-अधिभर्तु:-	द्रमिल के राजा
नदीजले	नदी के जल में
तर्पयत:-तदानीम्	तर्पण करते हुए उस समय
कर-अञ्जलौ	हाथों की अञ्जलि में
सञ्ज्वलित-आकृति:-	प्रकाशमान आकृति वाले
त्वम्-अदृश्यथा:	आप दिखाई दिये

कश्चन बालमीन	कोई छोटी मछली (के रूप में)

द्रमिल देश के राजा सत्यव्रत कृतमाला नदी में तर्पण कर रहे थे। तब उनके हाथों की अञ्जलि में प्रकाशमान आप किसी छोटी मछली के रूप में दिखाई दिये।

क्षिप्तं जले त्वां चकितं विलोक्य निन्येऽम्बुपात्रेण मुनि: स्वगेहम् ।
स्वल्पैरहोभि: कलशीं च कूपं वापीं सरश्चानशिषे विभो त्वम् ॥३॥

क्षिप्तं जले	फेंक दिये जाने पर जल में
त्वां चकितं विलोक्य	आपको चकित देख कर
निन्ये-अम्बु-पात्रेण	ले लिया जल पात्र के द्वारा
मुनि: स्वगेहम्	मुनि ने अपने घर को
स्वल्पै:-अहोभि:	थोडे दिनॊ में ही
कलशीं च कूपं	कलश और कूप को
वापीं सर:-च-	वापी और तालाब को
आनशिषे	अतिक्रम कर दिया
विभो त्वम्	हे विभो! आपने

जब मुनि ने आपको जल में फेक दिया तब आप अचंभित दिखाई दिये। तब मुनि आपको अपने जल के पात्र में डाल कर अपने घर ले गये। हे विभो! थोडे ही दिनों में आपकी आकृति कलश और कूप, वापी और तालाब की सीमाओं का अतिक्रमण करके बढने लगी।

योगप्रभावाद्भवदाज्ञयैव नीतस्ततस्त्वं मुनिना पयोधिम् ।
पृष्टोऽमुना कल्पदिदृक्षुमेनं सप्ताहमास्वेति वदन्नयासी: ॥४॥

योग-प्रभावात्-	योग के प्रभाव से
भवत्-आज्ञया-एव	आपकी आज्ञा से ही
नीत:-तत:-त्वम्	ले जाये गये आप

मुनिना पयोधिम्	मुनि के द्वारा सागर को
पृष्टः-अमुना	पूछा जाने पर इनके (मुनि के) द्वारा
कल्प-दिदृक्षुम्-एनम्	कल्प देखने के इच्छुक इनको (मुनि को)
सप्त-आहम्-आस्व-इति	सात दिनों के लिये अपेक्षा करो इस प्रकार
वदन्-अयासीः	कहते हुए अन्तर्धान हो गये (आप)

योग के प्रभाव से और आपकी ही आज्ञा से मुनि आपके मत्स्य स्वरूप को सागर में ले गये। मुनि के द्वारा पूछे जाने पर और प्रलय देखने की इच्छा व्यक्त करने पर आप उन्हे सात दिनों तक प्रतीक्षा करने के लिए कह कर अन्तर्धान हो गये।

प्राप्ते त्वदुक्तेऽहनि वारिधारापरिप्लुते भूमितले मुनीन्द्रः ।
सप्तर्षिभिः सार्धमपारवारिण्युद्घूर्णमानः शरणं ययौ त्वाम् ॥५॥

प्राप्ते त्वत्-उक्ते-अहनि	प्राप्त हो जाने पर आपके कहे हुए दिन के
वारि-धारा-परिप्लुते भूमितले	वर्षा की धारा से आच्छादित हो जाने पर भूमि के तल के
मुनीन्द्रः सप्तर्षिभिः सार्धम्-	वह मुनीन्द्र सप्त ऋषियों के साथ
अपार्-वारिणि-उद्घूर्णमानः	असीम जलों में गोते लगाते हुए
शरणं ययौ त्वाम्	शरण गये आपकी

आपका कहा हुआ दिन आ पहुंचा, और सारी पृथ्वी का तल वर्षा के जल से परिप्लावित हो गया। तब मुनीन्द्र सप्त ऋषियों के संग उस असीम जल में गोते लगाते हुए आपकी शरण में गये।

धरां त्वदादेशकरीमवाप्तां नौरूपिणीमारुरुहुस्तदा ते
तत्कम्पकम्प्रेषु च तेषु भूयस्त्वमम्बुधेराविरभूर्महीयान् ॥६॥

धरां त्वत्-आदेशकरीम्-	पृथ्वी आपके आदेशों का पालन करने वाली
अवाप्तां नौ-रूपिणीम्-	पहुंच गई थी नौका के रूप में
आरुरुहुः-तदा ते	चढ गये तब वे
तत्-कम्प-कम्प्रेषु	उसके डगमगाने से भयभीत होने से

च तेषु	और उनके
भूयः-त्वम्-	फिर से आप
अम्बुधेः-आविर्भूः-	(उस) जल राशि में प्रकट हुए
महीयन्	ऐश्वर्यशाली (आप)

आपके आदेशों का पालन करने वाली पृथ्वी नौका के रूप में पहुंच गई, और वे सब उस पर आरूढ हो गए। नौका के डगमगाने से सब भयभीत हो गए, तब आप फिर से ऐश्वर्यशाली मत्स्य के रूप में जल राशि में प्रकट हुए।

झषाकृतिं योजनलक्षदीर्घां दधानमुच्चैस्तरतेजसं त्वाम् ।
निरीक्ष्य तुष्टा मुनयस्त्वदुक्त्या त्वत्तुङ्गशृङ्गे तरणिं बबन्धुः ॥७॥

झष-आकृतिं	मत्स्य की आकृति में
योजन-लक्ष-दीर्घां	एक लाख योजन बडी
दधानम्-उच्चैः-तर-तेजसम्	धारण किये हुए अत्यन्त उत्कृष्ट तेज
त्वाम् निरीक्ष्य तुष्टाः मुनयः-	आपको देख कर सन्तुष्ट हुए मुनिगण
त्वत्-उक्त्या	आपके कहने से
त्वत्-तुङ्गशृङ्गे	आपके ऊंचे सींग पर
तरणिं बबन्धुः	नौका को बांध दिया

एक लाख योजन वाले मत्स्य की आकृति में अति उत्कृष्ट तेज युक्त आपको देख कर मुनिगण अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। फिर आपके कहने पर उन्होंने आपके उत्तुङ्ग सींग से नौका को बांध दिया।

आकृष्टनौको मुनिमण्डलाय प्रदर्शयन् विश्वजगद्विभागान् ।
संस्तूयमानो नृवरेण तेन ज्ञानं परं चोपदिशन्नचारीः ॥८॥

आकृष्ट-नौकः	खींचते हुए नौका को (और)
मुनि-मण्डलाय प्रदर्शयन्	मुनिमण्डल को दिखाते हुए
विश्व-जगत्-विभागान्	विश्व और उसके विभिन्न विभागों को

संस्तूयमान:	आप की स्तुति होते हुए
नृवरेण तेन	नरश्रेष्ठ उन (सत्यव्रत के द्वारा)
ज्ञानं परं	परम ज्ञान (ब्रह्म ज्ञान) का
च-उपदिशन्-	और उपदेश देते हुए
अचारी:	विचरने लगे (आप)

उस नौका को खींचते हुए आप, मुनिमण्डल को विश्व के विभिन्न विभागों को दिखाने लगे। उन नर श्रेष्ठ मुनि सत्यव्रत के द्वारा आपकी स्तुति किये जाने पर, आप उनको परम ज्ञान, ब्रह्मज्ञान का उपदेश देते हुए विचरने लगे।

कल्पावधौ सप्तमुनीन् पुरोवत् प्रस्थाप्य सत्यव्रतभूमिपं तम् ।
वैवस्वताख्यं मनुमादधान: क्रोधाद् हयग्रीवमभिद्रुतोऽभू: ॥९॥

कल्प-अवधौ	कल्प के अन्त में
सप्तमुनीन्	सप्त मुनियों को
पुरोवत् प्रस्थाप्य	पहले के समान स्थापित कर के
सत्यव्रत-भूमिपं तं	सत्यव्रत राजा उसको
वैवस्वत-आख्यं	वैवस्वत नाम के
मनुम्-आदधान:	मनु बना दिया
क्रोधात्-हयग्रीवम्-अभिद्रुत:-अभू:	क्रोध से हयग्रीव के पीछे भागने लगे

कल्प के अन्त में आपने सप्तर्षियों को पूर्ववत उनके स्थान पर स्थापित कर दिया और राजा सत्यव्रत को वैवस्वत नाम का मनु बना दिया। फिर आप क्रोध में हयग्रीव का पीछा करते हुए भागने लगे।

स्वतुङ्गशृङ्गक्षतवक्षसं तं निपात्य दैत्यं निगमान् गृहीत्वा ।
विरिञ्चये प्रीतहृदे ददान: प्रभञ्जनागारपते प्रपाया: ॥१०॥

स्व-तुङ्ग-शृङ्ग-क्षत-वक्षसं	अपने ऊंचे सींग से चीर कर छाती को
तं निपात्य दैत्यं	उस को मार कर, दैत्य को

निगमान् गृहीत्वा	वेदों को ले कर
विरिञ्चये प्रीतहृदे ददान:	ब्रह्मा को प्रसन्न चित्तवाले को दे दिया
प्रभञ्जन-आगारपते	हे गुरुवायुर के स्वामी
प्रपाया:	मेरी रक्षा करें

आपने अपने ऊंचे सींग से उस दैत्य की छाती को चीर कर उसे मार डाला, और प्रसन्नचित्त ब्रह्मा को वेदों को ला कर दे दिया। हे गुरुवायुर के स्वामी! आप मेरी रक्षा करें।

दशक ३३

वैवस्वताख्यमनुपुत्रनभागजात-
नाभागनामकनरेन्द्रसुतोऽम्बरीषः ।
सप्तार्णवावृतमहीदयितोऽपि रेमे
त्वत्सङ्गिषु त्वयि च मग्नमनास्सदैव ॥१॥

वैवस्वत-आख्य-मनु-	वैवस्वत नाम के मनु (के)
पुत्र-नभाग-	पुत्र नभाग (के)
जात-नाभाग-नामक-	पैदा हुए नाभाग नाम (के पुत्र)
नरेन्द्र-सुतः-अम्बरीषः	(उन) राजा के पुत्र अम्बरीष
सप्त-अर्णव-आवृत-	सातों समुद्रों से घिरी हुई
मही-दयितः-अपि	पृथ्वी के स्वामी होते हुए भी
रेमे त्वत्-सङ्गिषु	आनन्द पाते थे आपके भक्तों के साथ
त्वयि च	और आप में
मग्न-मनाः-सदैव	मग्न मन वाले (रहते थे) सदा ही

वैवस्वत मनु के पुत्र नभाग के नाभाग नामक पुत्र हुए। नाभाग के पुत्र अम्बरीष सातों समुद्रों से घिरी हुई पृथ्वी के स्वामी होते हुए भी आपके भक्तों के सङ्ग में आनन्द पाते थे और उनका मन सदा आपमें मग्न रहता था।

त्वत्प्रीतये सकलमेव वितन्वतोऽस्य
भक्त्यैव देव नचिरादभृथाः प्रसादम् ।
येनास्य याचनमृतेऽप्यभिरक्षणार्थं
चक्रं भवान् प्रविततार सहस्रधारम् ॥२॥

त्वत्-प्रीतये	आपकी प्रसन्नता के लिये
सकलम्-एव वितन्वतः-	सभी कुछ भी करते हुए
अस्य भक्त्या-एव	इनकी भक्ति के द्वारा ही

देव	हे देव!
नचिरात्-अभृथा: प्रसादम्	शीघ्र ही पा गये (आपकी) कृपा
येन-	जिसके द्वारा
अस्य याचनम्-ऋते-अपि-	इनके याचना के बिना भी
अभिरक्षण-अर्थम्	रक्षा के लिये
चक्रं भवान् प्रविततार	सुदर्शन चक्र को आपने नियुक्त किया
सहस्रधारम्	(जो) सहस्र धाराओं वाला है

आपकी प्रसन्नता के लिये लौकिक वैदिक सभी कर्मों को करते हुए, अपनी भक्ति के द्वारा इन्हें शीघ्र ही आपकी कृपा प्राप्त हो गई। उनके याचना न करने पर भी आपने अपने सहस्र धाराओं वाले सुदर्शन चक्र को उनकी रक्षा के लिये नियुक्त किया।

स द्वादशीव्रतमथो भवदर्चनार्थं
वर्षं दधौ मधुवने यमुनोपकण्ठे ।
पत्न्या समं सुमनसा महतीं वितन्वन्
पूजां द्विजेषु विसृजन् पशुषष्टिकोटिम् ॥३॥

स द्वादशी-व्रतम्-अथ:	उन्होंने (अम्बरीष ने) द्वादशी व्रत का तब
भवत्-अर्चन-अर्थम्	आपकी अर्चना के लिये
वर्षं दधौ मधुवने	एक वर्ष तक संकल्प किया, मधुवन में
यमुना-उपकण्ठे	यमुना के तट पर
पत्न्या समं सुमनसा	पत्नी के साथ भक्तिमती
महतीं वितन्वन् पूजां	भव्य अनुष्ठान किया पूजा का
द्विजेषु विसृजन्	ब्राह्मणो को दिया
पशु-षष्टि-कोटिम्	गौएं साठ करोड

तब अम्बरीष ने आपकी अर्चना के लिये एक वर्ष के द्वादशी व्रत का संकल्प किया। उन्होंने अपनी भक्तिमति पत्नी के साथ

यमुना के तट पर मधुवन में भव्य पूजा का अनुष्ठान किया और ब्राह्मणों को साठ करोड गौएं दान में दीं।

तत्राथ पारणदिने भवदर्चनान्ते
दुर्वाससाऽस्य मुनिना भवनं प्रपेदे ।
भोक्तुं वृतश्चस नृपेण परार्तिशीलो
मन्दं जगाम यमुनां नियमान्विधास्यन् ॥४॥

तत्र-अथ पारण-दिने	वहां तब, भोजन प्राप्ति के दिन
भवत्-अर्चन-अन्ते	आपकी पूजा के अन्त में
दुर्वाससा-अस्य मुनिना	दुर्वासा उन मुनि का
भवनं प्रपेदे	भवन में आगमन हुआ
भोक्तुं वृत:-च स नृपेण	और भोजन पर आमन्त्रित हुए राजा के द्वारा
परार्तिशील:	पर पीडा में लगे
मन्दं जगाम यमुनां	(वह) मन्द गति से गये यमुना को
नियमान्-विधास्यन्	नियमों का पालन करने के लिये

वहां, तब, भोजन पाने के दिन, आपकी पूजा के बाद, भवन में दुर्वासा मुनि का आगमन हुआ। राजा ने उनको भोजन के लिये आमन्त्रित किया। वे मुनि, पर पीडा में पटु, अपने नियमों का पालन करने के लिये यमुना नदी की ओर मन्द गति से गये।

राज्ञाऽथ पारणमुहूर्तसमाप्तिखेदा-
द्वारैव पारणमकारि भवत्परेण ।
प्राप्तो मुनिस्तदथ दिव्यदृशा विजानन्
क्षिप्यन् क्रुधोद्धृतजटो वितातान कृत्याम् ॥५॥

राज्ञा-अथ	राजा ने तब
पारण-मुहुर्त-समाप्ति-खेदात्	भोजन के मुहुर्त की समाप्ति के दुख से
वारा-एव पारणम्-अकारि	जल से ही पारण कर लिया
भवत्-परेण	आपके भक्त ने

प्राप्तः मुनिः-तत्-अथ	आने पर उन मुनि के तब
दिव्य-दृशा विजानन्	दिव्य दृष्टि से जान लेने पर
क्षिप्यन्	झिडकते हुए
क्रुधा-उद्धृत-जटः	क्रोध से उखाड कर जटा को
विततान कृत्याम्	उत्पन्न की कृत्या को

भोजन ग्रहण करने के मुहुर्त के समाप्त हो जाने के कारण दुख आपके भक्त राजा ने जल से ही पारण कर के व्रत को समाप्त किया। लौटने पर दुर्वासा मुनि अपनी दिव्य दृष्टि से जान गये कि पारण हो गया है। तब राजा को झिडकते हुए मुनि ने क्रोध से अपनी जटा को खोल कर कृत्या को उत्पन्न किया।

कृत्यां च तामसिधरां भुवनं दहन्ती-
मग्रेऽभिवीक्ष्यनृपतिर्न पदाच्चकम्पे ।
त्वद्भक्तबाधमभिवीक्ष्य सुदर्शनं ते
कृत्यानलं शलभयन् मुनिमन्वधावीत् ॥६॥

कृत्यां च ताम्-असि-धरां	कृत्या उसको खड्ग लिये हुए
भुवनं दहन्तीम्-	तीनों लोकों को जलाती हुई
अग्रे-अभिवीक्ष्य-	(को) सामने देख कर (भी)
नृपतिः-न पदात्-चकम्पे	राजा नहीं जरा भी विचलित हुए
त्वत्-भक्त-बाधम्-	आपके भक्त के संकट को
अभिवीक्ष्य सुदर्शनं ते	देख कर सुदर्शन आपका
कृत्या-अनलं शलभयन्	कृत्या को अग्नि में पतङ्ग (की भांति जला दिया)
मुनिम्-अन्वधावीत्	और मुनि का पीछा किया

हाथ में खड्ग लिये हुए तीनों लोकों को जलाते हुए, कृत्या को सामने देख कर भी राजा अम्बरीष जरा भी विचलित नहीं हुए। आपके भक्त को संकट में देख कर आपके सुदर्शन चक्र ने अग्नि में पतङ्ग के समान कृत्या को भस्म कर दिया और दुर्वासा मुनि का पीछा करने लगा।

धावन्नशेषभुवनेषु भिया स पश्यन्

विश्वत्र चक्रमपि ते गतवान् विरिञ्चम् ।
कः कालचक्रमतिलङ्घयतीत्यपास्तः
शर्वं ययौ स च भवन्तमवन्दतैव ॥७॥

धावन्-अशेष-भुवनेषु	भागते हुए समस्त भुवनों में
भिया स पश्यन् विश्वत्र	भय से उन (मुनि) ने देखा सर्वत्र
चक्रम्-अपि ते	चक्र को ही आपके
गतवान् विरिञ्चम्	(वे) गये ब्रह्मा के पास
कः-काल-चक्रम्-अतिलङ्घयति-	कौन काल के चक्र को लांघ सकता है
इति-अपास्तः	इस प्रकार लौटाये जाने पर
शर्वं ययौ स च	और शंकर के पास गये वे
भवन्तं अवन्दत एव	(शंकर ने) आपकी वन्दना ही की

समस्त भुवनों में भागते हुए दुर्वासा को सर्वत्र आपका सुदर्शन चक्र ही पीछा करता हुआ दिखाई दिया। भयभीत हो कर वे ब्रह्मा जी के पास गये, किन्तु ब्रह्मा जी ने यह कह कर लौटा दिया कि 'काल के चक्र को कौन लांघ सकता है'। फिर वे शंकर जी के पास गये। शंकर जी ने आप ही की वन्दना की।

भूयो भवन्निलयमेत्य मुनिं नमन्तं
प्रोचे भवानहमृषे ननु भक्तदासः ।
ज्ञानं तपश्च विनयान्वितमेव मान्यं
याह्यम्बरीषपदमेव भजेति भूमन् ॥८॥

भूयः भवत्-निलयम्-एत्य	वापस आपके निवास पहुंच कर
मुनिं नमन्तं प्रोचे	नमन करते हुए मुनि को बोले
भवान-अहम्-ऋषे	आप 'मैं हे ऋषि
ननु भक्त-दासः	तो भक्तों का दास हूं'
ज्ञानं तपः-च	ज्ञान और तप
विनय-आन्वितम्-एव मान्यम्	विनय युक्त होने पर ही आदरणीय हैं

याहि	जाइये
अम्बरीष-पदम्-एव भज-	अम्बरीष के चरणों ही में नमन कीजिये
इति भूमन्	इस प्रकार, हे भूमन!

हे भूमन! अन्त में दुर्वासा आपके निवास वैकुण्ठ पहुंचे। तब आपको नमन करते हुए उन मुनि से आपने कहा - 'हे ऋषि! मैं तो अपने भक्तों का दास हूं। ज्ञान और तप, विनययुक्त हो कर ही आदर पाते हैं। जाइये, आप अम्बरीष के ही चरणों में नमन कीजिये।'

तावत्समेत्य मुनिना स गृहीतपादो
राजाऽपसृत्य भवदस्त्रमसावनौषीत् ।
चक्रे गते मुनिरदादखिलाशिषोऽस्मै
त्वद्भक्तिमागसि कृतेऽपि कृपां च शंसन् ॥९॥

तावत्-समेत्य	तब पास जा कर (अम्बरीष के)
मुनिना स गृहीत-पाद:	मुनि के द्वारा उनके चरण पकड लिये गये
राजा-अपसृत्य	राजा हट गये
भवत्-अस्त्रम्-असौ-अनौषीत्	आपके अस्त्र की उन्होंने स्तुति की
चक्रे गते	चक्र के चले जाने पर
मुनि:-अदात्-	मुनि ने दिये
अखिल-आशिष:-अस्मै	अनन्त आशीष उनको
त्वत्-भक्तिम्-	आपकी भक्ति
अगासि कृते-अपि	अपराध किये जाने पर भी
कृपां च शंसन्	और कृपा की प्रशंसा की

तब अम्बरीष के पास जा कर मुनि ने उनके चरण पकड लिये। अम्बरीष पीछे हट गये और सुदर्शन चक्र की स्तुति की। चक्र के चले जाने पर मुनि ने आपके भक्त अम्बरीष का अपराधी होने के बावहूद उनके द्वारा प्राप्त कृपा की प्रशंसा करते हुए उन्हें अनन्त आशीष दिए।

राजा प्रतीक्ष्य मुनिमेकसमामनाश्वान्

सम्भोज्य साधु तमृषिं विसृजन् प्रसन्नम् ।
भुक्त्वा स्वयं त्वयि ततोऽपि दृढं रतोऽभू-
त्सायुज्यमाप च स मां पवनेश पाया: ॥१०॥

राजा प्रतीक्ष्य मुनिम्-	राजा प्रतीक्षा कर के मुनि की
एकसमाम्-अनाश्वान्	एक वर्ष के लिये नहीं खा कर
सम्भोज्य साधु	भलि प्रकार खिला कर ठीक से
तम्-ऋषिम्	उन ऋषि को
विसृजन् प्रसन्नम्	प्रसन्नता पूर्वक भेज कर
भुक्त्वा स्वयं	खा कर स्वयं
त्वयि तत:-अपि	आपमें तब से और भी
दृढं रत:-अभूत्-	दृढ प्रेमी हो गये
सायुज्यम्-आप च स	और उन्होने सायुज्य प्राप्त कर लिया
मां पवनेश पाया:	मेरी, हे पवनेश! रक्षा करें

राजा ने एक वर्ष तक निराहार रह मुनि की प्रतीक्षा की, फिर उन्हे भली भांति भोजन करा कर प्रसन्नता पूर्वक विदा करने के पश्चात स्वयं ने भोजन किया। अम्बरीष आपमें पहले से भी अधिक अनुरक्त हो गये और आपका सायुज्य प्राप्त किया। हे पवनेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ३४

गीर्वाणैरर्थ्यमानो दशमुखनिधनं कोसलेष्वृश्यशृङ्गे
पुत्रीयामिष्टिमिष्ट्वा ददुषि दशरथक्ष्माभृते पायसाग्र्यम् ।
तद्भुक्त्या तत्पुरन्ध्रीष्वपि तिसृषु समं जातगर्भासु जातो
रामस्त्वं लक्ष्मणेन स्वयमथ भरतेनापि शत्रुघ्ननाम्ना ॥१॥

गीर्वाणै:-अर्थ्यमान:	देवताओं के द्वारा (आपकी) प्रार्थना किये जाने पर
दशमुख-निधनं	रावण के वध के लिये
कोसलेषु-ऋश्यशृङ्गे	कोशल देश में ऋश्यशृङ्ग (ऋषि) के
पुत्रीयाम्-इष्टिम्-इष्ट्वा	पुत्रकामेष्टि यज्ञ के करा लेने पर
ददुषि दशरथ-क्ष्माभृते	दिया (आपने) दशरथ राजा को
पायस-अग्र्यम्	पायस दिव्य
तत्-भुक्त्या	जिसे खाने से
तत्-पुरन्ध्रीषु-अपि तिसृषु	उनकी पत्नियों में भी तीनों में
समं जातगर्भासु	एक साथ गर्भ धारण हो गया
जात: राम:-त्वं	उत्पन्न हुए राम (रूप में) आप
लक्ष्मणेन स्वयम्-अथ	लक्ष्मण (रूप में) आप ही फिर
भरतेन-अपि	भरत (रूप में) भी
शत्रुघ्न-नाम्ना	(और) शत्रुघ्न नाम से भी

देवताओं ने रावण के वध के लिये आपकी प्रार्थना की। कोशल देश में ऋश्यशृङ्ग ऋषि के द्वारा पुत्रकामेष्टि यज्ञ का अनुष्ठान करवा लेने पर आपने राजा दशरथ को दिव्य पायस दिया। राजा दशरथ की तीनों पत्नियां उस पायस को खा कर एक साथ गर्भवती हो गईं। तब आपने राम रूप में जन्म लिया। लक्ष्मण भी आप हे थे और भरत और शत्रुघ्न नाम्ना भी आप ही थे।

कोदण्डी कौशिकस्य क्रतुवरमवितुं लक्ष्मणेनानुयातो
यातोऽभूस्तातवाचा मुनिकथितमनुद्वन्द्वशान्ताध्वखेद: ।
नृणां त्राणाय बाणैर्मुनिवचनबलात्ताटकां पाटयित्वा

लब्ध्वास्मादस्त्रजालं मुनिवनमगमो देव सिद्धाश्रमाख्यम् ॥२॥

कोदण्डी	कोदण्ड (नामक धनुष) धारी
कौशिकस्य क्रतुवरम्-अवितुं	कौशिक के यज्ञ श्रेष्ठ की रक्षा के लिये
लक्ष्मणेन-अनुयात:	लक्ष्मण के साथ
यात:-अभू:-तात-वाचा	चले गये पिता की आज्ञा से
मुनि-कथित-मनु-द्वन्द्व-	मुनि के द्वारा उपदिष्ट दो मन्त्रों
शान्त-अध्व-खेद:	शान्त करने के लिये मार्ग की थकान को
नृणां त्राणाय बाणै:-	लोगों की रक्षा के लिये बाणों के द्वारा
मुनि-वचन-बलात्-	मुनि की आज्ञा से प्रेरित हो कर
ताटकां पाटयित्वा	ताडका को चीर कर
लब्ध्वा-अस्मात्-	पा कर उनसे (मुनि से)
अस्त्र-जालं	अस्त्र बहुत से
मुनि-वनम्-अगम:	मुनि के साथ वन को गये
देव	हे देव!
सिद्धाश्रम-आख्यम्	सिद्धाश्रम नाम के

पिता की आज्ञा से कोदण्ड नामक धनुष को धारण किये हुए आप, लक्ष्मण के साथ कौशिक मुनि के श्रेष्ठ यज्ञ की रखवाली के लिये गये। मार्ग की क्लान्ति को दूर करने के लिये मुनि ने आपको दो मन्त्रों का उपदेश दिया। लोगों की रक्षा के लिये मुनि की आज्ञा से आपने ताडका को चीर डाला। हे देव! मुनि से बहुत प्रकार के अस्त्र प्राप्त कर के आप उन के साथ वन में सिद्धाश्रम गये।

मारीचं द्रावयित्वा मखशिरसि शरैरन्यरक्षांसि निघ्नन्
कल्यां कुर्वन्नहल्यां पथि पदरजसा प्राप्य वैदेहगेहम् ।
भिन्दानश्चान्द्रचूडं धनुरवनिसुतामिन्दिरामेव लब्ध्वा
राज्यं प्रातिष्ठथास्त्वं त्रिभिरपि च समं भ्रातृवीरैस्सदारै: ॥३॥

मारीचं द्रावयित्वा	मारीच को खदेड कर
मख-शिरसि शरैः-	यज्ञ के प्रारम्भ में बाणों के द्वारा
अन्य-रक्षांसि निघ्नन्	अन्य राक्षसों को मार कर
कल्यां कुर्वन्-अहल्यां	पवित्र करके अहिल्या को
पथि पदरजसा	मार्ग में पग धूलि से
प्राप्य वैदेह-गेहम्	पहुंच कर जनक पुरी को
भिन्दानः-चान्द्रचूडं धनुः-	तोड दिया शंकर जी के धनुष को
अवनि-सुताम्-	भूमि पुत्री को
इन्दिराम्-एव लब्ध्वा	लक्ष्मी स्वरूप ही को (पत्नी रूप में) पा कर
राज्यं प्रातिष्ठथाः-त्वं	राज्य की ओर प्रस्थान किया आपने
त्रिभिः-अपि च समं	तीनों के भी संग
भ्रातृवीरैः-सदारैः	वीर भ्राताओं के और उनकी पत्नियों के

यज्ञ के प्रारम्भ में आपने मारीच को खदेड कर अन्य राक्षसों को बाणों से मार दिया। मार्ग में अपनी पगधूलि से अहिल्या को पवित्र करके श्राप मुक्त किया। जनकपुरी पहुंच कर शंकर जी के धनुष को तोड दिया और लक्ष्मी स्वरूपा भूमि पुत्री सीता का पत्नी रूप में वरण किया। तत्पश्चात आपने अपने तीनों वीर भ्राताओं और उनकी पत्नियों के साथ अपने राज्य अयोध्या को प्रस्थान किया।

आरुन्धाने रुषान्धे भृगुकुल तिलके संक्रमय्य स्वतेजो
याते यातोऽस्ययोध्यां सुखमिह निवसन् कान्तया कान्तमूर्ते ।
शत्रुघ्नेनैकदाथो गतवति भरते मातुलस्याधिवासं
तातारब्धोऽभिषेकस्तव किल विहतः केकयाधीशपुत्र्या ॥४॥

आरुन्धाने रुषान्धे	(मार्ग में) सामना किया क्रोधान्ध हो कर
भृगुकुल तिलके	भृगुकुल तिलक (परशुरामजी) ने
संक्रमय्य स्वतेजः याते	न्यौछावर कर के अपना सारा तेज,चले जाने पर

यातः-असि-अयोध्यां	चले गये आप अयोध्या को
सुखम्-इह निवसन् कान्तया	सुख से यहां पर रहते हुए पत्नी के साथ
कान्तमूर्ते	हे कान्तमूर्ते!
शत्रुघ्नेन-एकदा-अथः	शत्रुघ्न के साथ एक दिन तब
गतवति भरते	चले जाने पर भरत के
मातुलस्य-अधिवासं	मामा के निवास स्थान को
तात-आरब्धः-	पिता के द्वारा आरम्भ किया गया
अभिषेकः-तव किल विहतः	अभिषेक आपका परन्तु रोक दिया गया
केकय-अधीश-पुत्र्या	कैकेय राजा की पुत्री (कैकेयी)के द्वारा

मार्ग में भृगुकुलतिलक परशुरामजी ने आपके मार्ग में बाधा डाली, फिर आपको ब्रह्मस्वरूप जान कर अपना समस्त तेज आप ही में न्यौछावर कर के चले गये। हे कान्तमूर्ते! आप अयोध्या को चले गये और अपनी पत्नी के साथ सुखपूर्वक रहने लगे। फिर एक दिन शत्रुघ्न के संग भरत जी अपने मामा के निवास स्थान को चले जाने के बाद आपके पिता ने आपके अभिषेक की तैयारी शुरू की। किन्तु उसमें कैकेय नरेश की पुत्री कैकेयी ने विघ्न डाल दिया।

तातोक्त्या यातुकामो वनमनुजवधूसंयुतश्चापधारः
पौरानारुध्य मार्गे गुहनिलयगतस्त्वं जटाचीरधारी।
नावा सन्तीर्य गङ्गामधिपदवि पुनस्तं भरद्वाजमारा-
न्नत्वा तद्वाक्यहेतोरतिसुखमवसश्चित्रकूटे गिरीन्द्रे ॥५॥

तात-उक्त्या	पिता की आज्ञा से
यातुकामः वनम्-	जाने के इच्छुक वन को
अनुज-वधू-संयुतः-	छोटे भाई और पत्नी के संग
चाप-धारः	धनुष ले कर
पौरान्-आरुध्य मार्गे	नगरवासियों को रोक कर मार्ग में
गुह-निलय-गतः-त्वं	गुह के घर को चले गये आप

जटा-चीर-धारी	जटा और वल्कल धारण कर के
नावा सन्तीर्य गङ्गाम्-	नौका के द्वारा पार कर के गङ्गा को
अधिपदवि पुनः-तं	मार्ग में फिर उन
भरद्वाजम्-आरात्-नत्वा	भरद्वाज के निकट जा कर और प्रणाम कर के
तत्-वाक्य-हेतोः-	उनके कहने के अनुसार
अति-सुखम्-अवसः-	अत्यन्त सुख से रहे
चित्रकूटे गिरीन्द्रे	चित्रकूट पर्वत के ऊपर

पिता के आदेश से छोटे भाई लक्ष्मण और पत्नि सीता के साथ आपने धनुष ले कर वन को प्रस्थान किया। नगरवासियों को मार्ग में ही रोक कर गुह के घर गये और जटा और वल्कल धारण कर के नौका के द्वारा गङ्गा को पार किया। मार्ग मे, निकट ही में भरद्वाज मुनि से मिल कर उनको प्रणाम किया और उनके बताए हुए चित्रकूट पर्वत पर सुख से रहे।

श्रुत्वा पुत्रार्तिखिन्नं खलु भरतमुखात् स्वर्गयातं स्वतातं
तप्तो दत्वाऽम्बु तस्मै निदधिथ भरते पादुकां मेदिनीं च
अत्रिं नत्वाऽथ गत्वा वनमतिविपुलं दण्डकं चण्डकायं
हत्वा दैत्यं विराधं सुगतिमकलयश्चारु भोः शारभङ्गीम् ॥६॥

श्रुत्वा पुत्र-आर्ति-खिन्नं	सुन कर कि पुत्र के दुख से दुखी हो कर
खलु भरत-मुखात्	निश्चय ही भरत के मुख से
स्वर्ग-यातं स्व-तातं	स्वर्ग गामी हो गये अपने पिता
तप्तः दत्वा-अम्बु तस्मै	अत्यन्त दुखी हो कर दे कर जलाञ्जलि उनको
निदधिथ भरते	सौंप दी भरत को
पादुकां मेदिनीं च	पादुका और पृथ्वी
अत्रिं नत्वा-अथ	अत्री (मुनि) को प्रणाम कर के तब
गत्वा वनम्-	जा कर वन को
अति-विपुलं दण्डकं	अत्यन्त विस्तृत दण्डक (वन को)

चण्डकायं	भयानक शरीर वाले
हत्वा दैत्यं विराधं	मार कर असुर विराध को
सुगतिम्-अकलय:-	सुगति प्रदान कर के
चारु भो: शारभङ्गीम्	सुन्दर हे! शरभङ्ग (मुनि) को

भरत के मुख से सुन कर कि पुत्र के शोक में दुखी हो कर पिता स्वर्ग गामी हो गये, आपने उनको जलाञ्जलि दी, और भरत को पादुका और राज्य सौंप दिया। फिर आपने अत्री मुनि को प्रणाम किया और अत्यन्त गहन दण्डक वन में प्रवेश किया। वहां भयंकर और विशाल काया वाले असुर विराध को मारा। हे सुन्दर! आपने शरभङ्ग मुनि को सुगति प्रदान की।

नत्वाऽगस्त्यं समस्ताशरनिकरसपत्राकृतिं तापसेभ्य:
प्रत्यश्रौषी: प्रियैषी तदनु च मुनिना वैष्णवे दिव्यचापे ।
ब्रह्मास्त्रे चापि दत्ते पथि पितृसुहृदं वीक्ष्य भूयो जटायुं
मोदात् गोदातटान्ते परिरमसि पुरा पञ्चवट्यां वधूट्या ॥७॥

नत्वा-अगस्त्यं	प्रणाम करके अगस्त्य (मुनि) को
समस्त-आशर-निकर-सपत्राकृतिं	समस्त असुर समूह का आमूल विनाश (करने की)
तापसेभ्य: प्रत्यश्रौषी:	तपस्वियों को प्रतिज्ञा कर के
प्रियैषी तदनु च	और प्रिय करने के इच्छुक (आप) तब
मुनिना वैष्णवे दिव्य-चापे	मुनि के द्वारा दिव्य वैष्णव धनुष
ब्रह्मास्त्रे च-अपि	और ब्रह्मास्त्र भी
दत्ते पथि	देने पर मार्ग में
पितृ-सुहृदं वीक्ष्य	पिता के मित्र को देख कर
भूय: जटायुं मोदात्	फिर जटायु को प्रसन्नता से
गोदा-तटान्ते	गोदा नदी के तट के किनारे
परिरमसि पुरा	रहने लगे पहले
पञ्चवट्यां वधूट्या	पञ्चवटी में पत्नी के साथ

तपस्वियों का प्रिय करने के इच्छुक आपने अगस्त्य मुनि को प्रणाम कर के तपस्वियों के सामने समस्त राक्षस समुदाय का वध करने की प्रतिज्ञा की। मुनि ने आपको दिव्य वैष्णव धनुष और ब्रह्मास्त्र भी प्रदान किया। मार्ग में पिता के मित्र जटायु को देख करप्रसन्न हुए। फिर आप गोदावरी नदी के तट पर पञ्चवटी में पत्नि के साथ आनन्दपूर्वक रहने लगे।

प्राप्ताया: शूर्पणख्या मदनचलधृतेरर्थनैर्निस्सहात्मा
तां सौमित्रौ विसृज्य प्रबलतमरुषा तेन निर्लूननासाम् ।
दृष्ट्वैनां रुष्टचित्तं खरमभिपतितं दूषणं च त्रिमूर्धं
व्याहिंसीराशरानप्ययुतसमधिकांस्तत्क्षणादक्षतोष्मा ॥८॥

प्राप्ताया: शूर्पणख्या	पहुंचने पर शूर्पणखा के
मदन-चल-धृते:-	(जो) काम के वश में पडी हुई थी
अर्थनै:-निस्सहात्मा	(उसकी) (काम) प्रार्थनाओं से क्षुब्ध हो कर
तां सौमित्रौ विसृज्य	उसको लक्ष्मण के पास भेज कर
प्रबलतम-रुषा तेन	अत्यधिक क्रोध से उसके (लक्ष्मण) द्वारा
निर्लून-नासाम्	कटी हुई नासिका वाली (उसको)
दृष्ट्वा-ऐनां रुष्ट-चित्तं	देख कर उसको क्रोधित हुए
खरम्-अभिपतितं	खर को आक्रमणकारी
दूषणं च त्रिमूर्धं	दूषण और त्रिशिरा को
व्याहिंसी:-आशरान्-अपि-	मार डाला और भी असुरों को
अयुतसम-अधिकान्-	(जो) दस हजार से ज्यादा थे
तत्-क्षणात्-	उसी क्षण
अक्षत-ऊष्मा	अनन्त तेजस्वी (आपने)

काम के वशीभूत शूर्पणखा वहां आ पहुंची। उसकी कामुक प्रार्थनाओं से क्षुब्ध हो कर आपने उसे लक्ष्मण के पास भेज दिया। लक्ष्मण ने अत्यधिक क्रोधित हो कर उसकी नाक काट डाली। उसको नासिका रहित देख कर क्रोध में भर कर आक्रमण करने आए खर दूषण और त्रिशिरा को आपने मार डाला और हे अनन्त तेजस्वी! साथ ही क्षण भर में ही आपने और भी राक्षसों को मार डाला जो दस हजार से भी अधिक थे।

सोदर्या प्रोक्तवार्ताविवशदशमुखादिष्टमारीचमाया-
सारङ्गं सारसाक्ष्या स्पृहितमनुगत: प्रावधीर्बाणघातम् ।
तन्मायाक्रन्दनिर्यापितभवदनुजां रावणस्तामहार्षी-
त्तेनार्तोऽपि त्वमन्त: किमपि मुदमधास्तद्वधोपायलाभात् ॥९॥

सोदर्या-प्रोक्त-वार्ता-	बहन (शूर्पणखा) के द्वारा कही गई वार्ता
विवश-दशमुख-	(से) विवश हुए रावण ने
आदिष्ट-मारीच-	आदेश दिया मारीच को
माया-सारङ्ग	मायावी हिरण बनने का
सारसाक्ष्या	सारस के समान नेत्रों वाली (सीता) के द्वारा
स्पृहितम्-अनुगत:	(वह) इच्छित, (उसका) पीछा किया (आपने)
प्रावधी:-बाण-घातम्	वध कर दिया बाण के आघात से
तत्-माया-क्रन्द-	उसके (हिरण के) मायावी क्रन्दन
निर्यापित-भवत्-अनुजां	(ने) भेज दिया आपके अनुज को उसके (सीता) के द्वारा
रावण:-ताम्-अहार्षीत्-	रावण ने उसका (सीता का) अपहरण कर लिया
तेन-आर्त:-अपि	इस (घटना) से दुखी (होते हुए) भी
त्वम्-अन्त:	आप मन मे
किम्-अपि-मुदम्-अधा:-	कुछ प्रसन्न भी हुए
तत्-वध-उपाय-लाभात्	उसके बध के बहाने के लाभ से

अपनी बहन शूर्पणखा से सारे वृत्तान्त को सुन कर, रावण सीता के मोह से विवश हो गया। उसने मारीच को मायावी हिरण बनने का आदेश दिया। हिरण को देख कर सीता द्वारा उसकी कामना की जाने पर आपने उसका पीछा किया और धनुष के आघात से उसे मार दिया। मरते समय उस मायावी हिरण का मायावी क्रन्दन सुन कर सीता ने लक्ष्मण को जाने पर विवश कर दिया। रावण ने सीता का अपहरण कर लिया। इस घटना से दुखी होते हुए भी आप उसके वध के बहाने के लाभ से कुछ प्रसन्न भी हुए।

भूयस्तन्वीं विचिन्वन्नहृत दशमुखस्त्वद्वधूं मद्वधेने-

त्युक्त्वा याते जटायौ दिवमथ सुहृद: प्रातनो: प्रेतकार्यम् ।
गृह्णानं तं कबन्धं जघनिथ शबरीं प्रेक्ष्य पम्पातटे त्वं
सम्प्राप्तो वातसूनुं भृशमुदितमना: पाहि वातालयेश ॥१०॥

भूय:-तन्वीं विचिन्वन्-	तदनन्तर कोमल (सीता) को खोजते हुए
अहृत: दशमुख:-	"हर ले गया है रावण
त्वत्-वधूं मत्-वधेन-	आपकी वधू को, मुझे मार कर'
इति-उक्त्वा याते जटायौ	इस प्रकार कह कर चले जाने पर जटायू के
दिवम्-अथ सुहृद:	स्वर्ग को, तब मित्र का
प्रातनो: प्रेतकार्यम्	सम्पन्न किया प्रेतकार्य
गृह्णानं तं कबन्धं	(आपको) पकडते हुए उस कबन्ध को
जघनिथ शबरीं प्रेक्ष्य	मार दिया, शबरी से मिल कर,
पम्पातटे त्वं सम्प्राप्त: वातसूनुं	पम्पा तट पर मिले हनुमान से
भृशमुदितमना:	अत्यन्त हर्षित मन से
पाहि वातालयेश	रक्षा करें हे वातालयेश!

तदनन्तर कोमलाङ्गी सीता को खोजते हुए आप जटायु से मिले। 'आपकी वधू को रावण हर कर ले गया है, मुझे मार कर' ऐसा कह कर वह स्वर्ग चला गया। तब आपने अपने मित्र की प्रेत-क्रिया सम्पन्न की। आपको पकडने वाले कबन्ध का आपने वध किया और शबरी से मिले। फिर पम्पा तट पर अत्यन्त हर्षित चित्त से हनुमान से मिले। हे वातालयेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ३५

नीतस्सुग्रीवमैत्रीं तदनु हनुमता दुन्दुभेः कायमुच्चैः
क्षिप्त्वाङ्गुष्ठेन भूयो लुलुविथ युगपत् पत्रिणा सप्त सालान् ।
हत्वा सुग्रीवघातोद्यतमतुलबलं बालिनं व्याजवृत्त्या
वर्षावेलामनैषीर्विरहतरलितस्त्वं मतङ्गाश्रमान्ते ॥१॥

नीतः-सुग्रीव-मैत्रीं	ले कर सुग्रीव की मैत्री
तत्-अनु हनुमता	उसके बाद हनुमान से
दुन्दुभेः कायम्-	दुन्दुभि के शरीर को
उच्चैः क्षिप्त्वा-अङ्गुष्ठेन	दूर फैंक कर (पांव के) अंगूठे से
भूयः लुलुविथ युगपत्	फिर काट डाला
पत्रिणा सप्त सालान्	तीर से सात साल वृक्षों को
हत्वा सुग्रीव-घात-उद्यतम्-	मार कर सुग्रीव को मारने के उद्यमी
अतुल-बलं बालिनं	अत्यन्त बलशाली बालि को
व्याजवृत्या	चतुरता से
वर्षा-वेलाम्-अनैषीः-	वर्षा ऋतु को बिताया
विरह-तरलितः-त्वं	विरह से कातर आपने
मतङ्ग-आश्रम-अन्ते	मतङ्ग आश्रम के पास

उसके बाद हनुमान ने सुग्रीव से मैत्री करवाई। दुन्दुभि के शव को आपने पांव के अङ्गूठे से दूर फेंक दिया और एक ही बाण से सात साल वृक्षों को काट डाला। फिर आपने सुग्रीव को मारने में उद्यमी अत्यन्त वीर बालि को चतुराई से मार डाला। विरह से कातर आपने वर्षा ऋतु मतङ्ग मुनि के आश्रम के पास बिताई।

सुग्रीवेणानुजोक्त्या सभयमभियता व्यूहितां वाहिनीं ता-
मृक्षाणां वीक्ष्य दिक्षु द्रुतमथ दयितामार्गणायावनम्राम् ।
सन्देशं चाङ्गुलीयं पवनसुतकरे प्रादिशो मोदशाली
मार्गे मार्गे ममार्गे कपिभिरपि तदा त्वत्प्रिया सप्रयासैः ॥२॥

सुग्रीवेण-अनुज-उक्त्या	सुग्रीव के द्वारा भाई (लक्ष्मण) के कहने पर
सभयम्-अभियता	भयपूर्वक आये हुए के द्वारा
व्यूहितां वाहिनीं ताम्-	इकट्ठी की सेना उस
ऋक्षाणां वीक्ष्य	भालूओं की देख कर
दिक्षु द्रुतम्-अथ	सब दिशाओं में शीघ्रता से फिर
दयिता-मार्गणाय-अवनम्राम्	पत्नी की खोज के लिये प्रस्तुत
संदेशं च-अङ्गुलीयं	सन्देश और अङ्गूठी
पवनसुत-करे प्रादिशः	हनुमान के हाथ में दी
मोदशाली	प्रसन्नचित्त आपने
मार्गे मार्गे ममार्गे	प्रत्येक मार्ग में खोजा
कपिभिः-अपि तदा	बन्दरों ने भी तब
त्वत्-प्रिया सप्रयासैः	आपकी प्रिया को प्रयास सहित

भाई लक्ष्मण के द्वारा शासित किए जाने पर भयभीत सुग्रीव आये और उन्होंने तब भालूओं और वानरों की सेना इकट्ठी करके सब दिशाओं में शीघ्रता से आपकी पत्नि को खोजने के लिये प्रस्तुत किया। उस सेना को देख कर प्रसन्नचित्त होकर हनुमान के हाथ में सीता के लिय अङ्गूठी और सन्देश दिया। वानरों ने भी मार्ग मार्ग में आपकी प्रिया को सप्रयास खोजा।

त्वद्वार्ताकर्णनोद्यद्गरुदुरुजवसम्पातिसम्पातिवाक्य-
प्रोत्तीर्णार्णोधिरन्तर्नगरि जनकजां वीक्ष्य दत्वाङ्गुलीयम् ।
प्रक्षुद्योद्यानमक्षक्षपणचणरणः सोढबन्धो दशास्यं
दृष्ट्वा प्लुष्ट्वा च लङ्कां झटिति स हनुमान् मौलिरत्नं ददौ ते ॥३॥

त्वत्-वार्ता-आकर्णन्-	आपकी वार्ता सुनने से
उद्यत्-गरुत्-उरु-जव-	निकल आए पंख अत्यन्त वेग से
सम्पाति-सम्पाति-वाक्य-	सम्पाति के, उसके कहने से
प्रोतीर्ण-अर्णोधिः-अन्तर्नगरि	लांघ कर समुद्र नगरी के अन्दर

जनकजां वीक्ष्य	जनक पुत्री को देख कर
दत्वा-अङ्गुलीयम्	दे कर अङ्गूठी
प्रक्षुद्य-उद्यानम्-	रोंद कर वटिका को
अक्ष-क्षपण-चण-रण:	अक्ष कुमार को मारा निपुण रण में
सोढ-बन्ध:	सहन किया बन्धन
दश-आस्यं दृष्ट्वा	रावण को देख कर
प्लुष्ट्वा च लङ्काम्	जला कर लङ्का को
झटिति स हनुमान्	शीघ्र ही उस हनुमान ने
मौलिरत्नं ददौ ते	चूडामणि दी आपको

आपकी वार्ता सुन कर सम्पाति के पर वेग से निकल आये और उसके कहने पर हनुमान ने समुद्र को लांघ कर लङ्का में प्रवेश किया। वहां जानकी को देख कर उनको अङ्गूठी दी और अशोक वाटिका को रौंद डाला। रण में निपुण हनुमान ने अक्ष कुमार को मार दिया और ब्रह्मास्त्र बन्धन को स्वीकार किया। रावण को देखने के बाद उन्होंने लङ्का को जला दिया और शीघ्र ही लौट कर आपको चूडामणि दी।

त्वं सुग्रीवाङ्गदादिप्रबलकपिचमूचक्रविक्रान्तभूमी-
चक्रोऽभिक्रम्य पारेजलधि निशिचरेन्द्रानुजाश्रीयमाण: ।
तत्प्रोक्तां शत्रुवार्तां रहसि निशमयन् प्रार्थनापार्थ्यरोष-
प्रास्ताग्नेयास्त्रतेजस्त्रसदुदधिगिरा लब्धवान् मध्यमार्गम् ॥४॥

त्वं सुग्रीव-अङ्गद-आदि-	आप सुग्रीव अङ्गद आदि
प्रबल-कपि-चमू-	प्रबल वानरों की सेना
चक्र-विक्रान्त-भूमी-	ने कर के विक्रान्त भूमि तल को
चक्र:-अभिक्रम्य	प्रस्तुत हुए अभिक्रमण कर के
पारे-जलधि	पहुंचे तट पर समुद्र के
निशिचरेन्द्र-अनुज-	रावण के छोटे भाई

आश्रीयमाण:	का आश्रय ले कर
तत्-प्रोक्तां शत्रु-वार्तां	उसके द्वारा बोले गये शत्रु के वृतान्त को
रहसि निशमयन्	रहस्य में सुन कर
प्रार्थना-आपार्थ्य-	प्रार्थना के निष्फल होने से
रोष-प्रास्त-आग्नेय-अस्त्र-	क्रोध से भेजा आग्नेय अस्त्र
तेज:-त्रसत्-उदधि-गिरा	(उसके) तेज से त्रस्त समुद्र की वाणी से
लब्धवान् मध्यमार्गं	पाया (समुद्र के) बीच में मार्ग

सुग्रीव और अङ्गद आदि अनेक प्रबल वानरों की सेना ले कर ने भूमितल का अतिक्रमण करके समुद्र को लांघने के विचार से आप समुद्र के तट पर पहुंचे।आपकी शरण लेते हुए रावण के छोटे भाई ने शत्रु का पूर्ण रहस्यमय वृतान्त आपको सुनाया। फिर आपने समुद्र से मार्ग देने की प्रार्थना की। प्रार्थना के निष्फल होने से क्रोध में आपने आग्नेयास्त्र भेजा। उससे भयभीत हो कर समुद्र देव आपके सामने उपस्थित हुए और उनके कहने पर समुद्र ने आपके लिए मार्ग प्रस्तुत कर दिया।

कीशैराशान्तरोपाहृतगिरिनिकरै: सेतुमाधाप्य यातो
यातून्यामर्द्य दंष्ट्रानखशिखरिशिलासालशस्त्रै: स्वसैन्यै: ।
व्याकुर्वन् सानुजस्त्वं समरभुवि परं विक्रमं शक्रजेत्रा
वेगान्नागास्त्रबद्ध: पतगपतिगरुन्मारुतैर्मोचितोऽभू: ॥५॥

कीशै:-आशान्तर-	वानरों के द्वारा सब दिशाओं से
उपाहृत-गिरिनिकरै:	लाये गये पर्वत समूहों से
सेतुम्-आधाप्य	सेतु का निर्माण कर के
यात: यातूनि-आमर्द्य	गये (लङ्का को) राक्षसों को मार कर
दंष्ट्रा-नख-शिखरि-शिला-साल-शस्त्रै:	दांतों नखों पर्वतों चट्टानों वृक्षों और शस्त्रों से
स्वसैन्यै: व्याकुर्वन्	अपनी सेनाओं (का बल) प्रदर्शित कर के
सानुज:-त्वं समर-भुवि	भाई के साथ आप रण भूमि में
परं विक्रमं	महान पराक्रमी

शक्रजेत्रा वेगात्-नागास्त्र-बद्ध:	इन्द्र के विजयी (इन्द्रजित)के द्वारा वेग से नागास्त्र से बद्ध
पतगपति-	गरुड के
गरुत्-मारुतै:-	पंखों की वायु से
मोचित:-अभू:	मुक्त हुए आप

वानरों के द्वारा सभी दिशाओं से लाये गये पर्वत खण्डों से सेतु का निर्माण कर के आप लङ्का पहुंचे। दांतों, नखों, पर्वतों, चट्टानों, वृक्षों और शस्त्रों से राक्षसों को मार कर वानर सेना ने अपने बल का प्रदर्शन किया। महान पराक्रमी आप अपने भाई के संग इन्द्रजित के द्वारा बडे वेग से नागास्त्र से बांध लिये गये। तब गरुड के पंखों की वायु से आप मुक्त हुए।

सौमित्रिस्त्वत्र शक्तिप्रहृतिगलदसुर्वातजानीतशैल-
घ्राणात् प्राणानुपेतो व्यकृणुत कुसृतिश्लाघिनं मेघनादम् ।
मायाक्षोभेषु वैभीषणवचनहृतस्तम्भन: कुम्भकर्णं
सम्प्राप्तं कम्पितोर्वीतलमखिलचमूभक्षिणं व्यक्षिणोस्त्वम् ॥६॥

सौमित्रि:-तु-अत्र	लक्ष्मण तो यहां (लङ्का में)
शक्ति-प्रहृति-	शक्ति के प्रहार से
गलत्-असु:-	(जब) त्याग रहे थे प्राण
वातज-आनीत-	हनुमान के द्वारा लाये गये
शैल-घ्राणात्	पर्वतौषधि के सूंघने से
प्राणान्-उपेत: व्यकृणुत	प्राणों को पुन: पाकर मार दिया
कुसृति:-लाघिनं मेघनादम्	मायावी विद्या में पटु मेघनाद को
माया-क्षोभेषु	माया से क्षुभित होने से (सेना के)
वैभीषण-वचन-हृत-स्तम्भन:	विभीषण के वचन से दूर हुआ स्तम्भन
कुम्भकर्णं सम्प्राप्तं	कुम्भकर्ण के आने पर
कम्पित-उर्वीतलम्-	कम्पायमान हुआ पृथ्वी तल
अखिल-चमू-भक्षिणं	(और) खाने लगे सभी (वानर) सेना को

व्यक्षिणोः-त्वम्	(उसको) मार डाला आपने

वहां उस संग्राम में शक्ति के प्रहार से जब लक्ष्मण प्राण त्यागने लगे, तब हनुमान द्वारा लाई गई पर्वतौषधि को सूघ कर लक्ष्मण ने फिर से प्राण लाभ किये और मायावी विद्याओं में पटु मेघनाद को मार दिया। माया से क्षुभित हुई सेना को विभीषण के बताये हुए उपाय से आपने स्तम्भन से मुक्त कर दिया। कुम्भकर्ण के रणभूमि में आने से पृथ्वी डोलने लगी और वह वानर सेना को खाने लगा तब आपने उसे मार डाला।

गृह्णन् जम्भारिसंप्रेषितरथकवचौ रावणेनाभियुद्ध्यन्
ब्रह्मास्त्रेणास्य भिन्दन् गलततिमबलामग्निशुद्धां प्रगृह्णन् ।
देवश्रेणीवरोज्जीवितसमरमृतैरक्षतैः ऋक्षसङ्घै-
र्लङ्काभर्त्रा च साकं निजनगरमगाः सप्रियः पुष्पकेण ॥७॥

गृह्णन्	स्वीकार कर के
जम्भारि-संप्रेषित-रथ-कवचौ	इन्द्र के द्वारा भेजे गये रथ और कवच को
रावणेन-अभियुद्ध्यन्	रावण से युद्ध करते हुए
ब्रह्म-अस्त्रेण-	ब्रह्म अस्त्र के द्वारा
अस्य भिन्दन्-गलततिम्-	उसके काटते हुए शिर समूह को
अबलाम्-अग्निशुद्धां प्रगृह्णन्	(सीता) अबला को अग्नि से शुद्ध को ग्रहण कर के
देव-श्रेणीवर-	देवों की श्रेणी में श्रेष्ठ (इन्द्र) के द्वारा
उज्जीवित-समर-मृतैः-	जीवित किये गये युद्ध मे मरे हुए
अक्षतैः ऋक्षसङ्घैः-	को क्षत हीन कर के रीछ वानरों को
लङ्का-भर्त्रा च साकं	लङ्का के राजा के साथ
निज-नगरम्-अगाः	अपने नगर को आये
सप्रियः पुष्पकेण	संग मे प्रिया के पुष्पक के द्वारा

आपने इन्द्र के द्वारा भेजे हुए रथ और कवच को स्वीकार किया और रावण से युद्ध करते हुए उसके शिर समूहों को काट डाला। अबला सीता को अग्नि परीक्षा के बाद ग्रहण किया। देवों की श्रेणी में श्रेष्ठ इन्द्र के द्वारा रण भूमि में हत रीछों और वानरों को पुनः जीवित किया और उनको क्षतों से विहीन किया। तदन्तर आप प्रिया और लङ्का के राजा विभीषण के संग

पुष्पक विमान पर आरूढ हो कर अपने नगर को आये।

प्रीतो दिव्याभिषेकैरयुतसमधिकान् वत्सरान् पर्यरंसी-
मैथिल्यां पापवाचा शिव! शिव! किल तां गर्भिणीमभ्यहासी: ।
शत्रुघ्नेनार्दयित्वा लवणनिशिचरं प्रार्दय: शूद्रपाशं
तावद्वाल्मीकिगेहे कृतवसतिरुपासूत सीता सुतौ ते ॥८॥

प्रीत: दिव्य-अभिषेकै:-	दिव्य राज्याभिषेक से प्रसन्न हो कर
अयुत-सम-अधिकान् वत्सरान्	(आपने) दस हजार से अधिक वर्षों तक
पर्यरंसी	सुख से राज्य किया
मैथिल्यां पाप-वाचा	मैथिली के प्रति पाप वचनों (को सुन कर)
शिव! शिव! किल	शिव! शिव! निश्चय ही
तां गर्भिणीम्-अभ्यहासी:	उस गर्भिणी को त्याग दिया
शत्रुघ्नेन-अर्दयित्वा	शत्रुघ्न के द्वारा मार दिया गया
लवण-निशिचरं	लवण निशाचर
प्रार्दय: शूद्रपाशं	मार दिया शूद्र मुनि को (आपने)
तावत्-वाल्मीकि-गेहे	तब तक वाल्मीकि के घर में
कृतवसति:-उपासूत सीता	करती हुई वास, ने जन्म दिया, सीता ने
सुतौ ते	दो पुत्रों को आपके

दिव्य राज्याभिषेक से प्रसन्न हो कर आपने दस हजा वर्षों से अधिक अवधि तक सुखपूर्वक राज्य किया। मैथिली के प्रति अपवचन सुन कर, आपने, गर्भिणी अवस्था में भी उसे त्याग दिया । शत्रुघ्न ने लवणासुर को मार दिया और आपने शूद्र मुनि का संहार कर दिया। वाल्मीकि मुनि के आश्रम में निवास करती हुई सीता ने आपके दो पुत्रों को जन्म दिया।

वाल्मीकेस्त्वत्सुतोद्गापितमधुरकृतेराज्ञया यज्ञवाटे
सीतां त्वय्याप्तुकामे क्षितिमविशदसौ त्वं च कालार्थितोऽभू: ।
हेतो: सौमित्रिघाती स्वयमथ सरयूमग्ननिश्शेषभृत्यै:
साकं नाकं प्रयातो निजपदमगमो देव वैकुण्ठमाद्यम् ॥९॥

वाल्मीके:-	वाल्मीकि के
त्वत्-सुत-उद्गापित-	आपके पुत्रों के द्वारा गाये गये
मधुर-कृते:-आज्ञया	मधुर कृति, (वाल्मीकि की) आज्ञा से
यज्ञवाटे	यज्ञशाला में
सीतां त्वयि-आप्तुकामे	सीता को आपके पाने के इच्छुक होने पर
क्षितिम्-अविशत्-असौ	पृथ्वी में समा गई यह (सीता)
त्वं च काल-अर्थित:-अभू:	और आप काल से प्रार्थित हो कर
हेतो: सौमित्रि-घाती	निमित्त वश लक्ष्मण को त्याग कर
स्वयम्-अथ सरयू-मग्न-	स्वयं तब सरयू में निमग्न हो गये
निश्शेष-भृत्यै: साकं	सभी सेवकों के संग
नाकं प्रयात:	स्वर्ग को जा कर
निज-पदम्-अगम:	अपने निवास को चले गये
देव वैकुण्ठम्-आद्यम्	हे देव! वैकुण्ठ से परे

वाल्मीकि मुनि की मधुर काव्य रचना को उनकी आज्ञा से आपके पुत्रों ने यज्ञशाला में गाया। आपने वहां सीता को ग्रहण करने की इच्छा की, लिकिन वह धरती में समा गई। निमित्तवश आपने लक्ष्मण को त्याग दिया और काल रूपी यम ने आपसे लौटने की प्रार्थना की। तब आपने स्वयं सरयू के जल में समाधि ले ली और हे देव! अपने सभी सेवकों के संग स्वर्ग में जा कर, वैकुण्ठ से भी परे अपने निवास को चले गये।

सोऽयं मर्त्यावतारस्तव खलु नियतं मर्त्यशिक्षार्थमेवं
विश्लेषार्तिर्निरागस्त्यजनमपि भवेत् कामधर्मातिसक्त्या ।
नो चेत् स्वात्मानुभूते: क्व नु तव मनसो विक्रिया चक्रपाणे
स त्वं सत्त्वैकमूर्ते पवनपुरपते व्याधुनु व्याधितापान् ॥१०॥

स:-अयं मर्त्य-अवतार:-तव	वह यह मर्त्य अवतार आपका
खलु नियतं	निश्चय ही नियत था

मर्त्य-शिक्षा-अर्थम्-एवं	मनुष्यों की शिक्षा के हेतु ही
विश्लेष-आर्तिः-	विरह का कष्ट
निरागः-त्यजनम्-अपि	निरपराधी का त्याग भी
भवेत्	होता है
काम-धर्म-अतिसक्त्या	काम और धर्म की अत्यधि आसक्ति से
नो चेत्	अन्यथा
स्व-आत्म-अनुभूतेः	स्वयं की आत्मा में स्थित
क्व नु तव मनसः विक्रिया	कहां से आपके मन में विकार
चक्रपाणे	हे चक्रपाणि!
स त्वं सत्व-एक-मूर्ते	वह आप (जो) सत्व के एकमात्र मूर्ति हैं
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते
व्याधुनु व्याधि-तापान्	नष्ट कीजिये रोगों के कष्टों का

राम रूप में आपका यह मर्त्य अवतार निश्चय ही मनुष्यों की शिक्षा के लिये नियत था। विरह की पीडा और निरपराधी का त्याग, काम और धर्म के प्रति अत्यधिक आसक्ति के कारण ही सम्भव होते हैं। अन्यथा, हे चक्रपाणि! स्वयं अपनी आत्मा में स्थित आपमें यह विकार कैसे सम्भव है? एक मात्र सत्व स्वरूप, हे पवनपुरपते! मेरे रोगो जनित कष्टों को नष्ट कीजिये।

दशक ३६

अत्रेः पुत्रतया पुरा त्वमनसूयायां हि दत्ताभिधो
जातः शिष्यनिबन्धतन्द्रितमनाः स्वस्थश्चरन् कान्तया ।
दृष्टो भक्ततमेन हेहयमहीपालेन तस्मै वरा-
नष्टैश्वर्यमुखान् प्रदाय ददिथ स्वेनैव चान्ते वधम् ॥१॥

अत्रेः पुत्रतया	अत्रि मुनि के पुत्र रूप में
पुरा त्वम्-	पहले आप
अनसूयायां हि	अनसूया से ही
दत्त-अभिधः जातः	दत्तात्रेय नाम से पैदा हुए
शिष्य-निबन्ध	अपने शिष्यों के आग्रहों से
तन्द्रित-मनाः	तन्द्रित चित्त हुए
स्वस्थः-चरन् कान्तया	आत्मनिष्ठ हो कर विचरते हुए पत्नी के साथ
दृष्टः भक्ततमेन	दिखाए पडे भक्त उत्तम
हेहय-महीपालेन तस्मै	हेहय के राजा (कार्तवीर्यार्जुन) को, उनको
वरान्-अष्ट-ऐश्वर्य-मुखान्	वर आठ ऐश्वर्य पूर्ण
प्रदाय ददिथ	दे कर (फिर) दिया
स्वेन-एव	स्वयं के द्वारा ही
च-अन्ते वधम्	और अन्त में वध

पूर्व काल में आप अत्रि मुनि के पुत्र दत्तात्रेय के रूप में अनसूया के गर्भ से पैदा हुए। अपने शिष्यों के आग्रहों से व्यथित और तन्द्रित चित्त वाले आप अपनी पत्नी के साथ स्वस्थ चित्त हो कर आत्मनिष्ठ भाव से विचरने लगे। उस समय हेहय के राजा भक्तोत्तम कार्तवीर्यार्जुन ने आपको देखा। उनको आपने ऐश्वर्य युक्त आठ वर प्रदान किये और अन्त में स्वयं के द्वारा वध का भी विधान किया।

सत्यं कर्तुमथार्जुनस्य च वरं तच्छक्तिमात्रानतं
ब्रह्मद्वेषि तदाखिलं नृपकुलं हन्तुं च भूमेर्भरम् ।

सञ्जातो जमदग्नितो भृगुकुले त्वं रेणुकायां हरे
रामो नाम तदात्मजेष्ववरज: पित्रोरधा: सम्मदम् ॥२॥

सत्यं कर्तुम्-	सत्य करने के लिये
अथ-अर्जुनस्य च वरं	तब और कार्तवीर्यार्जुन के वरों को
तत्-शक्ति-मात्रा-नतं	(जो) उनकी शक्ति की मात्रा से दबे हुए
ब्रह्मद्वेषि तत्-अखिलं	ब्रह्मद्वेषी उस समस्त
नृपकुलं हन्तुं	नृपकुल को मारने के लिये
च भूमेः-भरम्	और भूमि के भार (स्वरूपों) को
सञ्जातः जमदग्नितः	पैदा हुए जमदग्नि से
भृगुकुले	भृगुकुल में
त्वं रेणुकायां	आप रेणुका में
हरे	हे हरे!
रामः नाम	राम नाम से
तत्-आत्मजेषु	उनके पुत्रों में
अवरजः	सब से छोटे
पित्रोः-अधाः सम्मदम्	माता पिता को दिया आनन्द

कार्तवीर्यार्जुन की शक्ति से किञ्चित दबे हुए तथा ब्रह्मद्रोही एवं पृथ्वी पर भार स्वरूप उस समस्त नृपकुल को मारने के लिये और अर्जुन को प्रदत्त वरों को पूर्ण करने के लिये आपने भृगुकुल में रेणुका के गर्भ से जमदग्नि के पुत्र राम के रूप में जन्म लिया। हे हरे! उनके पुत्रों में आप सब से छोटे थे और माता पिता को आनन्द देने वाले थे।

लब्धाम्नायगणश्चतुर्दशवया गन्धर्वराजे मना-
गासक्तां किल मातरं प्रति पितु: क्रोधाकुलस्याज्ञया ।
ताताज्ञातिगसोदरै: सममिमां छित्वाऽथ शान्तात् पितु-
स्तेषां जीवनयोगमापिथ वरं माता च तेऽदाद्वरान् ॥३॥

लब्ध-आम्नायगण:-	प्राप्त करके वेदों (का ज्ञान) समस्त
चतुर्दश-वया	चौदह (वर्ष की) आयु में
गन्धर्वराजे	गन्धर्व के राजा में
मनाक्-आसक्तां किल	किञ्चित आसक्त हुई
मातरं प्रति	माता के प्रति
पितु: क्रोध-आकुलस्य-आज्ञया	पिता की, क्रोध से पीडित की आज्ञा से
तात-आज्ञातिग-सोदरै:	पिता की आज्ञा का उल्लङ्घन किया भाइयों ने
समम्-इमां छित्वा-	साथ में इनको (माता) काट कर
अथ शान्तात् पितु:	तब शान्त हुए पिता से
तेषां जीवन योगम्-आपिथ वरं	उनके जीवन सम्बन्धी मांगा वर
माता च	और माता ने भी
ते-अदात्-वरान्	आपको दिया वर

आपने चौदह वर्ष की आयु में ही समस्त वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। माता की गन्धर्व के राजा के प्रति किञ्चित आसक्त के कारण क्रोध से पीडित पिता ने उनका वध करने की आज्ञा दी किन्तु आपके भ्राताओं ने इस आज्ञा का उल्लंघन कर दिया। तब आपने अपने भ्राताओं के संग माता का भी सर काट दिया। इससे शान्त हुए पिता से तब आपने सबके पुनर्जीवन का वरदान मांगा। माता ने भी आपको वर दिया।

पित्रा मातृमुदे स्तवाहृतवियद्धेनोर्निजादाश्रमात्
प्रस्थायाथ भृगोर्गिरा हिमगिरावाराध्य गौरीपतिम् ।
लब्ध्वा तत्परशुं तदुक्तदनुजच्छेदी महास्त्रादिकं
प्राप्तो मित्रमथाकृतव्रणमुनिं प्राप्यागम: स्वाश्रमम् ॥४॥

पित्रा मातृमुदे	पिता के द्वारा माता की प्रसन्नता के लिये
स्तव-आहृत-	स्तुति से हरण की गई
वियत्-धेनो:-	(दिव्य) स्वर्ग की धेनु (सुरभि)

निजात्-आश्रमात्	अपने आश्रम से
प्रस्थाय-अथ	प्रस्थान कर के तब
भृगो:-गिरा	भृगु मुनि के आदेश से
हिमगिरौ-आराध्य गौरीपतिम्	हिमालय पर जा कर शंकर जी की आराधना कर के
लब्ध्वा-तत्-परशुं	प्राप्त करके वह परशु
तत्-उक्त-दनुज-छेदी	उनके द्वारा बताये गये असुरों को मार कर
महा-अस्त्रादिकं प्राप्त:	महान अस्त्र आदि को प्राप्त कर के
मित्रम्-अथ-	मित्र से तब
अकृत्-व्रण-मुनिं	अकृत्व्रण मुनि से
प्राप्य-अगम: स्व-आश्रमम्	मिल कर लौट आये अपने आश्रम को

माता की प्रसन्नता के लिये पिता ने स्तुति के द्वारा हरण की हुई दिव्य धेनु सुरभि का हरण करके अपने आश्रम मे रखा था। भृगु मुनि के आदेश से उस आश्रम से प्रस्थान कर के आपने हिमालय जा कर गौरीपति शंकर जी की आराधना की। शंकर जी से परशु और अनेक महान अस्त्र आदि प्राप्त कर के आपने उनके बताये हुए दैत्यों को मारा। तत्पश्चात अपने मित्र अकृत्व्रण से मिल कर आप अपने आश्रम को लौट आये।

आखेटोपगतोऽर्जुन: सुरगवीसम्प्राप्तसम्पद्गणै-
स्त्वत्पित्रा परिपूजित: पुरगतो दुर्मन्त्रिवाचा पुन: ।
गां क्रेतुं सचिवं न्ययुङ्क्त कुधिया तेनापि रुन्धन्मुनि-
प्राणक्षेपसरोषगोहतचमूचक्रेण वत्सो हृत: ॥५॥

आखेट-उपगत:-अर्जुन:	मृगया के लिये गये हुए अर्जुन का
सुरगवी-सम्प्राप्त-सम्पद्गणै:-	सुर धेनु (सुरभि) से पाये गये सम्पदाओं से
त्वत्-पित्रा परिपूजित:	आपके पिता के द्वारा सत्कार किया गया
पुर-गत: दुर्मन्त्रि-वाचा	नगर को लौट कर दुर्मन्त्री के परामर्श से
पुन: गां क्रेतुं	फिर गाय को खरीदने के लिये

सचिवं न्ययुङ्क्त	उस मन्त्री को नियुक्त किया
कुधिया तेन-	दुर्बुद्धि उसके द्वारा
अपि रुन्धन्-	रोकते हुए को भी
मुनि-प्राण-क्षेप	मुनि को प्राणो से मार दिया
सरोष-गो-	क्रोध के सहित उस गाय ने
हत-चमू-चक्रेण	मार दिया प्रकट की हुई सेना के द्वारा
वत्सः हृतः	किन्तु (वह मन्त्री) बछडे को चुराले गया

मृगया के लिये गये हुए राजा कार्तवीर्यार्जुन का आपके पिताने सुरभि धेनु से प्राप्त सम्पदाओं से आतिथ्य सत्कार किया। नगर लौटने पर दुर्मन्त्री के परामर्श से उसने गाय को खरीदने के लिये उसी मन्त्री को नियुक्त किया। उस दुर्बुद्धि मन्त्री ने बाधा डालते हुए मुनि को प्राणों से मार डाला। इस पर सुरभि धेनु ने क्रोध से स्व निर्मित सेना के द्वारा उसकी सारी सेना को मार डाला, किन्तु मन्त्री बछडे को चुरा ले गया।

शुक्रोज्जीविततातवाक्यचलितक्रोधोऽथ सख्या समं
बिभ्रद्ध्यातमहोदरोपनिहितं चापं कुठारं शरान् ।
आरूढः सहवाहयन्तृकरथं माहिष्मतीमाविशन्
वाग्भिर्वत्समदाशुषि क्षितिपतौ सम्प्रास्तुथाः सङ्गरम् ॥६॥

शुक्र-उज्जीवित	शुक्र के द्वारा पुनर्जीवित
तात-वाक्य	पिता के (सारे वृतान्त) कहने से
चलित-क्रोधः-अथ	बढे हुए क्रोध वाले (आपने) तब
सख्या समं विभ्रत्	(अपने) सखा (अकृत्व्रण) के साथ तेजस्वी
ध्यात-महोदर-उपनिहितं	ध्यान किया महोदर का, (उनसे) पा कर
चापं कुठारं शरान्	धनुष परशु और तीर
आरूढः सह-वाह-यन्तृक रथं	चढ कर घोडे और वाहक मय रथ पर
माहिष्मतीम्-आविशन्	माहिष्मती में जा कर

वाग्भि:-वत्सम्-	वचनों से बछडे को
अदाशुषि क्षितिपतौ	नहीं देना चाहा राजा ने (जब)
सम्प्रास्तुथा: सङरम्	आरम्भ कर दिया संग्राम

शुक्राचार्य के द्वारा पुनर्जीवित हुए पिता के द्वारा आपने पूरा वृत्तान्त सुना और आपका क्रोध प्रज्ज्वलित हो उठा। अपने सखा अकृत्व्रण के साथ आपने महोदर का ध्यान किया और उनसे धनुष, परशु और बाण प्राप्त किये। घोडों और वाहक सहित रथ पर चढ कर माहिष्मती में प्रवेश किया। मौखिक रूप से मांगे जाने पर जब राजा बछडे को लौटाने तैयार नहीं हुए तब आपने युद्ध छेड दिया।

पुत्राणामयुतेन सप्तदशभिश्चाक्षौहिणीभिर्महा-
सेनानीभिरनेकमित्रनिवहैर्व्याजृम्भितायोधन: ।
सद्यस्त्वत्ककुठारबाणविदलन्निश्शेषसैन्योत्करो
भीतिप्रद्रुतनष्टशिष्टतनयस्त्वामापतत् हेहय: ॥७॥

पुत्राणाम्-अयुतेन	पुत्र दस हजार के साथ
सप्तदशभि:-च-अक्षौहिणीभि:-	और सत्रह अक्षौहिणी (सेना) के साथ
महा-सेनानीभि:-	महान सेनानियों के साथ
अनेक-मित्र-निवहै:-	अनेक मित्रों के समूह के साथ
व्याजृम्भित-आयोधन:	दर्शाया युद्ध में
सद्य:-त्वत्क-	शीघ्र ही आपके
कुठार-बाण-विदलन्-	परशु बाण आदि ने नष्ट कर दिया
निश्शेष-सैन्य-उत्कर:	समस्त सेना के दल को
भीति-प्रद्रुत-	डर से भाग गये
नष्ट-शिष्ट-तनय:	नष्ट होने से बचे हुए पुत्र
त्वाम्-आपतत्	(तब) आप पर आक्रमण किया
हेहय:	हेहय (नरेश कार्तवीर्यार्जुन ने)

कार्तवीर्यार्जुन ने अपने दस हजार पुत्रों का, सत्रह अक्षौहिणी सेना का दल कई महान सेनापतियों और मित्रों के झुंड का बल युद्ध में दर्शाया। किन्तु वे सब शीघ्र ही आपके परशु और बाणों से नष्ट हो गये। बचे हुए सैनिक और पुत्र डर से भाग गये। तब हेहय नरेश कार्तवीर्यार्जुन ने स्वयं आप पर आक्रमण किया।

लीलावारितनर्मदाजलवलल्लङ्केशगर्वापह-
श्रीमद्बाहुसहस्रमुक्तबहुशस्त्रास्त्रं निरुन्धन्नमुम् ।
चक्रे त्वय्यथ वैष्णवेऽपि विफले बुद्ध्वा हरिं त्वां मुदा
ध्यायन्तं छितसर्वदोषमवधीः सोऽगात् परं ते पदम् ॥८॥

लीला-वारित	क्रीडावश रोके गये
नर्मदा जल	नर्मदा के जल को
वलत्	(उसके कारण) बहे जाते हुए
लङ्केश-गर्व-अपह-	रावण के गर्व का नाश करने वाले
श्रीमत्-	हे भगवन!
बाहु-सहस्र-मुक्त	हजारों बाहुओं से छोडे गये
बहु-शस्त्र-अस्त्रं	अनेक अस्त्र और शस्त्र को
निरुन्धन्-अमुम्	रोकते हुए उनको
चक्रे त्वयि-अथ	चक्र को तब आपके ऊपर (छोडे हुए को)
वैष्णवे-अपि विफले	वैष्णव (चक्र) भे (जब) निष्फल हो गया
बुद्ध्वा हरिं त्वाम्	जान कर आपको हरि
मुदा ध्यायन्तं	सहर्ष ध्यान करते हुए को
छित-सर्व-दोषम्-	छिन्न कर के सब दोषों (पापों) को
अवधीः सः-अगात्	मार दिया (आपने), वह चला गया
परं ते पदम्	आपके परम पद (वैकुण्ठ) को

हे भगवन! कार्तवीर्यार्जुन ने क्रीडावश नर्मदा के जल को रोक दिया था और धारा में बहते हुए रावण का गर्व नष्ट किया था।

उसने अपने सहस्रों हाथों से आप के ऊपर नाना प्रकार के अस्त्र और शस्त्र छोडे, लेकिन आपने सभी को रोक दिया। जब उसके द्वारा छोडा हुआ वैष्णव चक्र भी निष्फल हो गया तब उसने अपनी बुद्धि से आपको हरि जान कर, सहर्ष आपका ध्यान किया। इस पर आपने उसके पापों का छेदन कर के उसे मार कर अपने परम धाम वैकुण्ठ भेज दिया।

भूयोऽमर्षितहेहयात्मजगणैस्ताते हते रेणुका-
माघ्नानां हृदयं निरीक्ष्य बहुशो घोरां प्रतिज्ञां वहन् ।
ध्यानानीतरथायुधस्त्वमकृथा विप्रद्रुहः क्षत्रियान्
दिक्चक्रेषु कुठारयन् विशिखयन् निःक्षत्रियां मेदिनीम् ॥९॥

भूयः-अमर्षित-	तदनन्तर अत्यधिक क्रोधित
हेहय-आत्मज-गणैः-	हेहय के पुत्रों के द्वारा
ताते हते	(आपके) पिता (जमदग्नि) के मारे जाने पर
रेणुकाम्-आघ्नानां हृदयं	रेणुका के मारते हुए छाती को
निरीक्ष्य बहुशः	देख कर बहुत बार
घोरां प्रतिज्ञां वहन्	घोर प्रतिज्ञा को ले कर
ध्यान-आनीत-	ध्यान के द्वारा प्राप्त किये गये
रथ-आयुधः-त्वम्-अकृथा	रथ और अयुधों के, आपने बना लिया
विप्र-द्रुहः क्षत्रियान्	विप्रों के द्रोहियों क्षत्रियों को (शत्रु)
दिक्-चक्रेषु कुठारयन्	चारों दिशाओं में परशु से घात करते हुए
विशिखयन् निःक्षत्रियाम्	कर डाला क्षत्रिय रहित
मेदिनीम्	पृथ्वी को

तदनन्तर हेहय के अत्यन्त क्रोधित हुए पुत्रों ने आपके पिता जमदग्नि को मार दिया। आपकी माता रेणुका को बार बार छाती पीट कर रोते हुए आपने देखा और एक घोर प्रतिज्ञा कर ली। ध्यान के द्वारा रथ और आयुधों को प्राप्त कर के विप्रों के द्रोही क्षत्रियों को शत्रु मान कर चारों दिशाओं में परशु के घात से क्षत्रियों का संहार कर के पृथ्वी को क्षत्रिय रहित कर दिया।

तातोज्जीवनकृन्नृपालककुलं त्रिस्सप्तकृत्वो जयन्
सन्तर्प्याथ समन्तपञ्चकमहारक्तहृदौघे पितृन्
यज्ञे क्ष्मामपि काश्यपादिषु दिशन् साल्वेन युध्यन् पुनः

कृष्णोऽमुं निहनिष्यतीति शमितो युद्धात् कुमारैर्भवान् ॥१०॥

तात-उज्जीवनकृत्-	पिता को पुनर्जीवित कर के
नृपालक-कुलं	राजाओं के कुलों को
त्रिः-सप्त-कृत्वः जयन्	तीन सात बार (२१) करके विजय
सन्तर्प्य-अथ	तर्पण करके तब
समन्त-पञ्चक-महारक्त-ह्रदौघे	समन्त पञ्चक नामक रक्त के महान सरोवर में
पितृन् यज्ञे	पितरों को यज्ञ में
क्ष्माम्-अपि काश्यप-आदिषु	पृथ्वी भी कश्यप आदि
दिशन् साल्वेन युध्यन् पुनः	देकर साल्व के साथ युद्ध करते हुए पुनः
कृष्णः-अमुम्-निहनिष्यति-	कृष्ण इसको मारेंगे'
इति शमितः युद्धात्	इस प्रकार रोके गये युद्ध से
कुमारैः भवान्	सनत कुमारों के द्वारा आप

अपने पिता जमदग्नि को पुनर्जीवित कर के, क्षत्रियों के कुल को २१ बार परास्त किया। रक्त से पूर्ण विशाल सरोवर समन्त पञ्चक में पितरों का तर्पण किया और फिर यज्ञ मे कश्यप आदि ऋषियों को पृथ्वी दान में देकर पुन: साल्व के साथ युद्ध करते हुए सनत कुमारों के द्वारा 'इसको कृष्ण मारेंगे' कहे जाने पर रोक दिये गये।

न्यस्यास्त्राणि महेन्द्रभूभृति तपस्तन्वन् पुनर्मज्जितां
गोकर्णावधि सागरेण धरणीं दृष्ट्वार्थितस्तापसैः ।
ध्यातेष्वासधृतानलास्त्रचकितं सिन्धुं स्रुवक्षेपणा-
दुत्सार्योद्धृतकेरलो भृगुपते वातेश संरक्ष माम् ॥११॥

न्यस्य-अस्त्राणि	परित्याग कर के अस्त्रों का
महेन्द्र-भूभृति	महेन्द्र पर्वत पर
तपः-तन्वन्	तपस्या में प्रवृत हो गये
पुनः-मज्जितां	फिर डूबी हुई

गोकर्ण-अवधि	गोकर्ण पर्यन्त
सागरेण धरणीं दृष्ट्वा-	सागर में धरती को देख कर
अर्थित:-तापसै: ध्यात-	प्रार्थना किये जाने पर तपस्वियों के द्वारा,ध्यान से
इष्वास-धृत-अनल-अस्त्र-	(प्राप्त) धनुष पर चढा कर आग्नेय अस्त्र
चकितं सिन्धुम्	चकित सिन्धु को
स्रुव-क्षेपणात्-	स्रुव के फेंकने से
उत्सार्य-उद्धृत-केरल:	निकाल कर उठा लिया केरल को
भृगुपते वातेश	हे भृगुपति वातेश!
संरक्ष माम्	सुरक्षा करें मेरी

अस्त्रों का परित्याग कर के आप महेन्द्र पर्वत पर तपस्या में प्रवृत हो गये। गोकर्ण पर्यन्त धरती को समुद्र में डूबी हुई देख कर तपस्वियों ने आपसे प्रार्थना की। ध्यान से प्राप्त धनुष पर आग्नेय अस्त्र चढा देख कर समुद्र चकित हो गया। फिर स्रुव को फेंक कर आपने केरल भूमि को निकाल कर उठा लिया। हे भृगुपति वातेश! मेरी सुरक्षा करें।

दशक ३७

सान्द्रानन्दतनो हरे ननु पुरा दैवासुरे सङ्गरे
त्वत्कृत्ता अपि कर्मशेषवशतो ये ते न याता गतिम् ।
तेषां भूतलजन्मनां दितिभुवां भारेण दूरार्दिता
भूमि: प्राप विरिञ्चमाश्रितपदं देवै: पुरैवागतै: ॥१॥

सान्द्र-आनन्द-तनो	हे घनीभूत आनन्द स्वरूप!
हरे ननु पुरा	भगवन! प्राचीन काल में
दैव-असुरे सङ्गरे	देवों और असुरों के संग्राम में
त्वत्-कृत्ता अपि	आपके द्वारा काट दिये जाने पर भी
कर्म-शेष-वशत: ये	कर्मों के शेष रह जाने के कारण
ते न याता गतिम्	वे लोग गति को प्राप्त नहीं हुए
तेषां भूतल-जन्मनां	उनके भूमि पर जन्म हुए
दितिभूवां भारेण	असुरों के भार से
दूरार्दिता भूमि:	विक्षिप्त हुई धरती
प्राप विरिञ्चम्-आश्रित-पदं	पहुंच कर ब्रह्मा के पास,आश्रय ले कर चरणों में
देवै: पुरा-एव-आगतै:	(बोली) पहले से आये हुए देवों के संग

हे घनीभूत आनन्द स्वरूप भगवन! प्राचीन काल में देवों और असुरों के संग्राम में, आपके द्वारा वध कर दिये जाने पर भी कर्मों के शेष रह जाने के कारण असुरों ने मुक्ति नहीं पाई और फिर से धरती पर जन्म लिया। उनके भार से विक्षिप्त हुई धरती ब्रह्मा के पास पहुंची और उनके चरणों का आश्रय ले कर, वहां पहले से उपस्थित देवों के साथ इस प्रकार प्रार्थना करने लगी -

हा हा दुर्जनभूरिभारमथितां पाथोनिधौ पातुका-
मेतां पालय हन्त मे विवशतां सम्पृच्छ देवानिमान् ।
इत्यादिप्रचुरप्रलापविवशामालोक्य धाता महीं
देवानां वदनानि वीक्ष्य परितो दध्यौ भवन्तं हरे ॥२॥

हा हा	हाय! हाय!
दुर्जन-भूरि-भार-मथितां	दुष्टों के अतीव भार से मर्दित
पाथोनिधौ पातुकाम्-	समुद्र में मग्न प्राय:
एतां पालय हन्त	इस (मेरा) पालन कीजिये, दु:ख है
मे विवशतां सम्पृच्छ	मेरी विवशता को पूछिये (जानिये)
देवान्-इमान् इति-आदि	इन देवताओं से, इस प्रकार इत्यादि
प्रचुर-प्रलाप-विवशाम्-	अत्यन्त विलाप करती हुई शिथिल को
आलोक्य धाता महीं	देख कर ब्रह्मा पृथ्वी को
देवानाम् वदनानि वीक्ष्य	(और) देवों के मुखों को देख कर
परित:	चारों ओर से
दध्यौ भवन्तं	ध्यान किया आपका
हरे	हे हरि!

हाय! हाय! दुष्टों के अतीव भार से मर्दित और समुद्र में मग्न प्राय: मेरी विवशता को इन देवताओं से पूछिये और जानिये।' हे हरि! इस प्रकार विलाप करती हुई और शिथिल हुई धरती और चारों ओर एकत्रित देवताओं के मुखों को देख कर ब्रह्मा आपका ध्यान करने लगे।

ऊचे चाम्बुजभूरमूनयि सुरा: सत्यं धरित्र्या वचो
नन्वस्या भवतां च रक्षणविधौ दक्षो हि लक्ष्मीपति: ।
सर्वे शर्वपुरस्सरा वयमितो गत्वा पयोवारिधिं
नत्वा तं स्तुमहे जवादिति ययु: साकं तवाकेतनम् ॥३॥

ऊचे च-अम्बुजभू:-	कहा और कमलजन्मा (ब्रह्मा) ने
अमून्-अयि सुरा:	उनको, ' हे देवों
सत्यं धरित्र्या वच:	सत्य हैं धरती के वचन
ननु-अस्या भवतां च	निश्चय ही इसके और आप लोगों के

रक्षण-विधौ	रक्षण की विधि में
दक्ष: हि लक्ष्मीपति:	चतुर हैं लक्ष्मीपति (विष्णु) ही
सर्वे शर्व-पुर:-सरा	सब (जन) शंकर को सामने कर के
वयम्-इत: गत्वा	हम यहां से जा कर
पय:-वारिधिं	क्षीर सागर को
नत्वा तं स्तुमहे जवात्-	नमन कर के उनकी स्तुति करें शीघ्र'
इति ययु: साकं	इस प्रकार गये साथ में
तव-आकेतनम्	आपके निकेत को

कमलजन्मा ब्रह्मा ने कहा कि 'हे देवों निश्चय ही धरती के वचन सत्य हैं। आप लोगों की और इसकी रक्षा के प्रबन्ध में लक्ष्मीपति विष्णु ही समर्थ हैं। हम सब शीघ्र ही शंकर को सामने कर के यहां से क्षीर सागर जा कर उनको नमस्कार कर के उनकी स्तुति करें'। इस प्रकार वे सब एक साथ आपके निकेतन को गये।

ते मुग्धानिलशालिदुग्धजलधेस्तीरं गता: सङ्गता
यावत्त्वत्पदचिन्तनैकमनसस्तावत् स पाथोजभू: ।
त्वद्वाचं हृदये निशम्य सकलानानन्दयन्नूचिवा-
नाख्यात: परमात्मना स्वयमहं वाक्यं तदाकर्ण्यताम् ॥४॥

ते	वे
मुग्ध-अनिल-शालि-	लुभावनी वायु युक्त
दुग्ध-जलधे: तीरं	क्षीर सागर के तट पर
गता: सङ्गता यावत्-	गये मिल कर जब तक
त्वत्-पद-चिन्तन-एक-मनस:-	आपके चरणों का चिन्तन कर रहे थे एकाग्र मन से
तावत् स पाथोजभू:	तब तक वे कमलजन्मा (ब्रह्मा)
त्वत्-वाचम् हृदये निशम्य	आपके शब्द (अपने) हृदय में सुन कर
सकलान्-आनन्दयन्-	सभी को आनन्द देते हुए

ऊचिवान्-आख्यात:	कहने लगे 'कहा गया है
परमात्मना स्वयम्-	परमात्मा के द्वारा स्वयं
अहं वाक्यं	मुझे वचन
तत्-आकर्ण्यताम्	उसे (आप लोग) सुनें

वे सब मिल कर लुभावनी वायु युक्त क्षीर सागर के तट पर पहुंचे। जब तक वे सब आपके चरणों का एकाग्र मन से ध्यान कर रहे थे, तब तक कमलजन्मा ब्रह्मा ने अपने हृदय में आपकी वाणी को सुना। सभी को आनन्दित करते हुए वे बोले, 'स्वयं परमात्मा ने मुझे जो वचन कहे हैं उन्हें आप सब सुनें।'

जाने दीनदशामहं दिविषदां भूमेश्च भीमैर्नृपै-
स्तत्क्षेपाय भवामि यादवकुले सोऽहं समग्रात्मना ।
देवा वृष्णिकुले भवन्तु कलया देवाङ्गनाश्चावनौ
मत्सेवार्थमिति त्वदीयवचनं पाथोजभूरूचिवान् ॥५॥

जाने दीन-दशाम्-अहं	जानता हूं दीन दशा को मैं
दिविषदां भूमे:-च	स्वर्गवासियों की और भूमि की
भीमै:-नृपै:-	क्रूर राजाओं (के कारण)
तत्-क्षेपाय	उसके उन्मूलन के लिये
भवामि यादव-कुले	होऊंगा यादव कुल में
स:-अहम् समग्र-आत्मना	वह मैं समस्त स्वरूप से
देवा: वृष्णिकुले भवन्तु	देव लोग वृष्णि कुल में (पैदा) हों
कलया	कलाओं सहित
देवाङ्गना:-च-अवनौ	और देवताओं की पत्नियां पृथ्वी पर
मत्-सेवा-अर्थम्-	मेरी सेवा के लिये
इति त्वदीय-वचनम्	यह आपके वचन
पाथोजभू:-ऊचिवान्	ब्रह्मा ने कहे

'क्रूर राजाओं के कारण उपस्थित स्वर्गवासियों की और पृथ्वी की दीन दशा को मैं जानता हूं। उसका उन्मूलन करने के लिये मैं अपने सम्पूर्ण स्वरूप से प्रकट होऊंगा। देव गण वृष्णि कुल में अपने अपने अंश से पैदा हों और मेरी सेवा के लिये देव पत्नियां भी जन्म लें।' ब्रह्मा ने आपके ये वचन सुनाए।

श्रुत्वा कर्णरसायनं तव वच: सर्वेषु निर्वापित-
स्वान्तेष्वीश गतेषु तावककृपापीयूषतृप्तात्मसु ।
विख्याते मधुरापुरे किल भवत्सान्निध्यपुण्योत्तरे
धन्यां देवकनन्दनामुदवहद्राजा स शूरात्मज: ॥६॥

श्रुत्वा कर्ण-रसायनम्	सुन कर कानों के लिये अमृत तुल्य
तव वच: सर्वेषु	आपके वचन, सब के
निर्वापित-स्वान्तेषु-	हो जाने पर परिष्कृत अन्त:करण
ईश गतेषु	हे ईश्वर! (सब के) चले जाने पर
तावक-कृपा-	आपकी कृपा
पीयूष-तृप्त-आत्मसु	रूपी अमृत से तृप्त हुई आत्मा वालों के
विख्याते मधुरापुरे किल	प्रसिद्ध मथुरा में निश्चय रूप से
भवत्-सान्निध्य-पुण्य-उत्तरे	आपके सानिध्य के कारण उद्‌भूत पुण्य वाली (में)
धन्यां देवकनन्दनाम्-	सौभाग्यशाली देवक सुता का
उद्वहत्-राजा स	पाणिग्रहण किया उन राजा
शूरात्मज:	शूर पुत्र (वसुदेव) ने

आपके अमृत तुल्य वचन सुन कर उन सभी के अन्त:करण परिमार्जित हो गये और आपकी अमृत स्वरूप कृपा से तृप्त आत्मा वाले वे सभी चले गये। हे ईश्वर! आपके सान्निध्य से उन्नत हुए पुण्यों वाली प्रसिद्ध मथुरा नगरी में ही देवक की सौभाग्यशालिनी कन्या का राजा शूरसेन के पुत्र वसुदेव ने पाणिग्रहण किया।

उद्वाहावसितौ तदीयसहज: कंसोऽथ सम्मानय-
न्नेतौ सूततया गत: पथि रथे व्योमोत्थया त्वद्गिरा ।
अस्यास्त्वामतिदुष्टमष्टमसुतो हन्तेति हन्तेरित:
सन्त्रासात् स तु हन्तुमन्तिकगतां तन्वीं कृपाणीमधात् ॥७॥

उद्वाह्-अवसितौ	विवाह के सम्पन्न हो जाने पर
तदीय-सहजः कंसः-अथ	उसके (देवकी के) भाई कंस ने तब
सम्मानयन्-एतौ	सम्मान करते हुए दोनों का
सूततया गतः पथि रथे	सारथीत्व ले कर मार्ग में रथ पर
व्योम-उत्थया त्वत्-गिरा	आकाश से उठी हुई आपकी वाणी से
अस्याः-त्वाम्-अति-दुष्टम्-	इसका (देवकी का) तुम अत्यन्त दुष्ट को
अष्टम-सुतः हन्ता-इति	आठवां पुत्र मारने वाला होगा इस प्रकार
हन्त-ईरितः	हाय! कहे जाने पर
सन्त्रासत् स तु	भयभीत वह तो (कंस ने)
हन्तुम्-अन्तिकगतां तन्वीं	मारने को उद्यत पास में (स्थित) युवती को
कृपाणीम्-अधात्	तलवार को निकाला

विवाह के सम्पन्न हो जाने पर देवकी के भाई कंस ने दोनों के सम्मान में रथ का सारथीत्व ग्रहण किया। मार्ग में जाते हुए आपकी आकाशवाणी हुई, 'तुझ दुष्ट का, इसका आठवां पुत्र संहार करेगा।' हाय! इस प्रकार कहे जाने पर भयभीत कंस ने पास में स्थित युवती देवकी को मारने के लिये तलवार निकाल ली।

गृह्णानश्चिकुरेषु तां खलमतिः शौरेश्चिरं सान्त्वनै-
र्नो मुञ्चन् पुनरात्मजार्पणगिरा प्रीतोऽथ यातो गृहान् ।
आद्यं त्वत्सहजं तथाऽर्पितमपि स्नेहेन नाहन्नसौ
दुष्टानामपि देव पुष्टकरुणा दृष्टा हि धीरेकदा ॥८॥

गृह्णानः-चिकुरेषु ताम्	पकड कर केशों से उसको
खलमतिः	दुष्ट्बुद्धि ने
शौरेः-चिरं सान्त्वनैः	वसुदेव के बहुत समय तक सान्त्वना देने के द्वारा
नो मुञ्चन् पुनः-	(भी) नहीं छोडा, तब फिर
आत्मज-अर्पण-गिरा	पुत्र को अर्पण करने की प्रतिज्ञा से

प्रीत:-अथ यात: गृहान्	सन्तुष्ट तब चला गया घर को
आद्यं त्वत्-सहजम्	पहले आपके भाई को
तथा-अर्पितम्-अपि	उसी प्रकार अर्पित कर देने पर भी
स्नेहेन न-अहन्-असौ	स्नेहवश नहीं मारा इसने
दुष्टानम्-अपि देव	दुष्टों का भी हे देव!
पुष्ट-करुणा	युक्त करुणा
दृष्टा हि धी:-एकदा	देखी ही जाती है बुद्धि कभी

उस दुष्ट बुद्धि कंस ने वसुदेव के बहुत समय तक सान्त्वना देने पर भी देवकी को नहीं छोडा। तब यह आश्वासन पा कर कि अपने पुत्रों को वसुदेव कंस को अर्पित कर देंगे, वह सन्तुष्ट हो कर घर चला गया। उसी के अनुसार आपके पहले भाई को अर्पित कर देने पर भी कंस ने स्नेह्वश उसे नहीं मारा। हे देव! कभी कभी दुष्टों में भी करुणा युक्त बुद्धि देखी जाती है।

तावत्त्वन्मनसैव नारदमुनि: प्रोचे स भोजेश्वरं
यूयं नन्वसुरा: सुराश्च यदवो जानासि किं न प्रभो ।
मायावी स हरिर्भवद्वधकृते भावी सुरप्रार्थना-
दित्याकर्ण्य यदूनदूधुनदसौ शौरेश्च सूनूनहन् ॥९॥

तावत्-त्वत्-मनसा-एव	तब आपकी इच्छा से ही
नारद मुनि:	नारद मुनि
प्रोचे स भोजेश्वरं	बोले उन भोजराज (कंस) को
यूयं ननु-असुरा:	आपलोग हैं ही असुर
सुरा:-च यादव:	और देव हैं यादव
जानासि किं न प्रभो	जानते क्या नहीं है प्रभू
मायावी स हरि:-	(कि) मायावी वह हरि
भवत्-वध कृते	आपके संहार के लिये
भावी सुर-प्रार्थनात्-	जन्म लेंगे देवों की प्रार्थना से

इति-आकर्ण्य	ऐसा सुन कर
यदून्-अदूधुनत्-असौ	यदुओं को भगा दिया इसने (कंस ने)
शौरेः-च सूनून्-अहन्	और वसुदेव के पुत्रों को मार दिया

आपकी ही प्रेरणा से नारद मुनि ने उस भोजराज कंस से कहा कि 'हे प्रभॊ! आप क्या जानते नहीं हैं कि आप लोग असुर हैं और यादव देव हैं। मायावी हरि देवों की प्रार्थना से आपके संहार के लिये जन्म लेंगे।' ऐसा सुन कर उसने यदुओं को भगा दिया और वसुदेव के पुत्रों को मार दिया।

प्राप्ते सप्तमगर्भतामहिपतौ त्वत्प्रेरणान्मायया
नीते माधव रोहिणीं त्वमपि भो:सच्चित्सुखैकात्मक: ।
देवक्या जठरं विवेशिथ विभो संस्तूयमान: सुरै:
स त्वं कृष्ण विधूय रोगपटलीं भक्तिं परां देहि मे ॥१०॥

प्राप्ते सप्तम-गर्भताम्-	प्राप्त हो जाने पर सातवें गर्भ में
अहिपतौ	आदिशेष के
त्वत्-प्रेरणात्-	आपकी प्रेरणा से
मायया नीते	माया के द्वारा ले जाया गया (वह)
माधव रोहिणीं	हे माधव! रोहिणी के (गर्भ में)
त्वम्-अपि भोः-	आप भी हे!
सत्-चित्-सुख-एक-आत्मकः	सत चित और आनन्द एक आत्मक
देवक्या जठरं विवेशिथ	देवकी के गर्भ में प्रवेश कर गये
विभो संस्तूयमानः सुरैः	हे विभो! देवों के द्वारा स्तुति किये जाते हुए
स त्वं कृष्ण	वे ही आप हे कृष्ण!
विधूय रोग-पटलीम्	नष्ट करके रोग के समूह को
भक्तिं परां देहि मे	भक्ति परा दें मुझको

देवकी के सातवें गर्भ में आदिशेष के प्राप्त हो जाने पर हे माधव! आपकी प्रेरणा से माया ने उसे रोहिणी के गर्भ में पहुंचा

दिया। हे विभो! देवों के द्वारा स्तुति किये जाते हुए आप भी देवकी के गर्भ में प्रवेश कर गये। वे ही हे कृष्ण! आप मेरे रोगों के समूह को नष्ट कर के मुझे परा भक्ति प्रदान करें।

दशक ३८

आनन्दरूप भगवन्नयि तेऽवतारे
प्राप्ते प्रदीप्तभवदङ्गनिरीयमाणैः ।
कान्तिव्रजैरिव घनाघनमण्डलैर्द्या-
मावृण्वती विरुरुचे किल वर्षवेला ॥१॥

आनन्द-रूप	आनन्द स्वरूप
भगवन्-अयि	हे भगवन!
ते-अवतारे प्राप्ते	आपके अवतार के (समय के) आ जाने पर
प्रदीप्त-भवत्-अङ्ग-	उज्ज्वल आपके अङ्गों से
निरीयमाणैः	प्रदीप्त
कान्ति-व्रजैः-इव	प्रकाश किरणों से जैसे
घनाघन-मण्डलैः-	घनघोर घटाओं से
द्याम्-आवृण्वती	आकाश को आच्छादित करते हुए
विरुरुचे किल वर्षवेला	शोभा पा रही थी वर्षा ऋतु

हे भगवन! आनन्दस्वरूप आपके अवतार का समय प्रस्तुत होने पर, आपके उज्ज्वल अङ्गों की प्रकाश किरणों से प्रदीप्त घनघोर घटाओं से आकाश को आच्छादित करती हुई वर्षा ऋतु अत्यन्त शोभायमान हो रही थी।

आशासु शीतलतरासु पयोदतोयै-
राशासिताप्तिविवशेषु च सज्जनेषु ।
नैशाकरोदयविधौ निशि मध्यमायां
क्लेशापहस्त्रिजगतां त्वमिहाविरासीः ॥२॥

आशासु	सभी दिशाओं के
शीतलतरासु	सुशीतल हो जाने पर
पयोदतोयैः-	वर्षा के जल से

आशासित-	परमार्थित (वस्तु के)
आप्ति-विवशेषु	पा जाने (की खुशी से) अभिभूत
च सज्जनेषु	और सज्जनों के हो जाने से
नैशाकर-उदय-विधौ	चन्द्रमा के उदय होने के समान
निशि मध्यमायां	रात्रि के मध्य में
क्लेशापहः- त्रिजगतां	क्लेशों का नाश करने वाले तीनो जगत के
त्वम्-	आप
इह-आविरासीः	यहां (इस धरा पर) अवतरित हुए

सभी दिशाएं के वर्षा जल से सुशीतल हो गईं। सज्जनों को अपनी मनोकामना पूर्ण होने का अहसास होने लगा और वे हर्षित हो उठे। मध्य रात्रि में, चन्द्रमा के उदित होने के समान, त्रिजगत के क्लेशों का नाश करने वाले आप इस धरा पर अवतरित हुए।

बाल्यस्पृशाऽपि वपुषा दधुषा विभूती-
रुद्यत्किरीटकटकाङ्गदहारभासा ।
शङ्खारिवारिजगदापरिभासितेन
मेघासितेन परिलेसिथ सूतिगेहे ॥३॥

बाल्य-स्पृशा-अपि	बाल भाव में भी
वपुषा	देह से
दधुषा विभूतीः-	धारण किये हुए विभूतियां
उद्यत्-किरीट-	उद्दीप्त होते हुए किरीट
कटक-अङ्गद-	करघनी और बाजूबन्द
हार भासा	हार सुन्दर से (सुसज्जित)
शङ्ख-अरि-	शङ्ख चक्र
वारिज-गदा	कमल गदा (लिये हुए)

परिभासितेन मेघासितेन	प्रभा युक्त मेघों के समान श्याम कान्ति वाले
परिलेसिथ	आप सुशोभित हुए
सूति गेहे	सूतिका गृह में

देह से बाल भाव में भी आप अपनी विभूतियों को धारण किये हुए थे। उद्दीप्त किरीट ,करघनी बाजूबन्द और सुन्दर हार से सुसज्जित, शङ्ख, चक्र गदा और पद्म लिये हुए, प्रभा युक्त मेघों के समान श्यामल कान्ति वाले आप, सूतिका गृह में सुशोभित हुए।

वक्ष:स्थलीसुखनिलीनविलासिलक्ष्मी-
मन्दाक्षलक्षितकटाक्षविमोक्षभेदै: ।
तन्मन्दिरस्य खलकंसकृतामलक्ष्मी-
मुन्मार्जयन्निव विरेजिथ वासुदेव ॥४॥

वक्षः-स्थली-	(आपके) वक्षस्थल पर
सुख-निलीन-	सुख से विराजित
विलासि-लक्ष्मी-	विलासिनी लक्ष्मी
मन्द-अक्ष-लक्षित-	मनोहर नेत्रों से इङ्गित
कटाक्ष-विमोक्ष-भेदैः	कटाक्ष डालते हुए नाना प्रकार से
तत्-मन्दिरस्य	उस (सूतिका) भवन का
खल-कंस-कृताम्-अलक्ष्मीम्-	दुष्ट कंस के द्वारा कीगई अमंगलता को
उन्मार्जयन्-इव	परिमार्जन करती हुई मानो
विरेजिथ वासुदेव	विराजमान हुए हे वासुदेव

विलासिनी लक्ष्मी आपके वक्षस्थल पर सुखपूर्वक विराजमान थीं और अपने मनोहारी नेत्रों से इङ्गित कटाक्ष करते हुए दुष्ट कंश के द्वारा अमंगलकारी बनाये हुए सूतिका भवन का मानो परिमार्जन कर रही थीं। हे वासुदेव! ऐसी उन लक्ष्मी के संग आप विराजमान हुए।

शौरिस्तु धीरमुनिमण्डलचेतसोऽपि
दूरस्थितं वपुरुदीक्ष्य निजेक्षणाभ्याम् ॥

आनन्दवाष्पपुलकोद्गमगद्गदार्द्र-
स्तुष्टाव दृष्टिमकरन्दरसं भवन्तम् ॥५॥

शौरिः-तु	वसुदेव ने तो
धीर-मुनि-मण्डल-	धीर मुनिमण्डल के
चेतसः-अपि	चित्त से भी
दूरस्थितं	दूर स्थित (आपके)
वपुः-उदीक्ष्य	स्वरूप को देख कर
निज-ईक्षणाभ्याम्	अपने नेत्रों के द्वारा
आनन्द-वाष्प-	आनन्द अश्रुओं सहित
पुलक-उद्गम-	पुलकित हुए
गद-गद-आर्द्रः-	गद गद और कोमल
तुष्टाव दृष्टि-	(वाणी से) स्तुति की, दृष्टि (के लिये)
मकरन्द-रसम् भवन्तम्	मकरन्द रस स्वरूप आपकी

धीर मुनिमण्डल के चित्त से भी दूर रहने वाले, नयनों के लिये मकरन्दरस स्वरूप आपको, वसुदेव ने अपने नेत्रों से देखा और पुलकित होते हुए आनन्द अश्रुओं से भीगी गद गद वाणी से आपका स्तवन किया।

देव प्रसीद परपूरुष तापवल्ली-
निर्लूनदात्रसमनेत्रकलाविलासिन् ।
खेदानपाकुरु कृपागुरुभिः कटाक्षै-
रित्यादि तेन मुदितेन चिरं नुतोऽभूः ॥६॥

देव प्रसीद	देव! प्रसन्न हों
परपूरुष	हे परम पुरुष!
तापवल्ली-	सन्तापों की लता को
निर्लून-दात्र-सम-	काट डालने के लिये तीक्ष्ण तलवार के समान

नेत्र-कला-विलासिन्	नेत्रों की क्रीडाओं के विलासी!
खेदान्-अपाकुरु	कष्टो को दूर हटावें
कृपा-गुरुभि: कटाक्षै:-	कृपापूर्ण महान कटाक्षों से
इत्यादि तेन मुदितेन	इस प्रकार वह (वसुदेव) प्रफुल्लित हो कर
चिरं नुतो-अभू:	अनेक समय तक स्तवन करते रहे

हे देव! प्रसन्न हों। हे परम पुरुष! सन्तापों की लता को काट डालने वाली तीक्ष्ण तलवार के समान नेत्रों की क्रीडाओं के विलासी! अपने कृपापूर्ण गम्भीर कटाक्षों से कष्टों को दूर हटावें। वसुदेव इस प्रकार हर्षोल्लास सहित दीर्घ समय तक स्तुति करते रहे।

मात्रा च नेत्रसलिलास्तृतगात्रवल्या
स्तोत्रैरभिष्टुतगुण: करुणालयस्त्वम् ।
प्राचीनजन्मयुगलं प्रतिबोध्य ताभ्यां
मातुर्गिरा दधिथ मानुषबालवेषम् ॥७॥

मात्रा च नेत्र-सलिल-	और (आपकी) माता के द्वारा (जो)आंखों के आंसुओं से
आस्तृत-गात्र-वल्या	बिछी हुई शरीर लता वाली (के द्वारा)
स्तोत्रै:-अभिष्टुत-गुण:	स्तुति की गई (आपके) गुणों की
करुणालय:- त्वम्	दयानिधान आपने
प्राचीन-जन्म-युगलं	प्राचीन काल के जन्म दो का
प्रतिबोध्य ताभ्यां	याद दिला कर उन दोनों को
मातु:-गिरा दधिथ	माता के कहने से धारण किया
मानुष-बाल-वेषम्	मानविक बाल रूप को

और माता ने भी, जिनकी कृष देह लता उनके नेत्रों से बहने वाले अश्रुओं से आप्लावित थी, आपके गुणों की स्तुति की। हे दयानिधान! आपने उन दोनों को उनके दो पूर्व जन्मों की याद दिलाई। तदुपरान्त माता के कहने पर आपने मानवीय बाल रूप धारण कर लिया।

त्वत्प्रेरितस्तदनु नन्दतनूजया ते

व्यत्यासमारचयितुं स हि शूरसूनु: ।
त्वां हस्तयोरधृत चित्तविधार्यमार्यै-
रम्भोरुहस्थकलहंसकिशोररम्यम् ॥८॥

त्वत्-प्रेरित:-तदनु	आपकी प्रेरणा से उसके बाद
नन्द-तनूजया	नन्द की पुत्री से
ते व्यत्यासम्-आरचयितुम्	आपकी अदला-बदली को कार्यान्वित करने के लिये
स हि शूरसूनुः	ही वे शूर पुत्र (वसुदेव)
त्वां हस्थयो:-अधृत	आपको हाथों में ले लिया
चित्त-विधार्यम्-आर्यै:-	चित्त में धारण किये जाने योग्य साधुओं के द्वारा
अम्भोरुह-स्थ-	(मानो) कमल पर स्थित
कल-हंस-किशोर-रम्यम्	सुन्दर कल हंस किशोर (के समान)

आपकी ही प्रेरणा से, तत्पश्चात, नन्द की पुत्री से आपकी अदला बदली को कार्यान्वित करने के लिये ही उन शूर पुत्र वसुदेव ने आपको अपने हाथों में ले लिया। उस समय आप, जो केवल योग्य साधुओं के द्वारा ही चित्त में धारण किए जाते हैं, कमल पर स्थित सुन्दर नव किशोर कलहंस के समान मनोहर लग रहे थे।

जाता तदा पशुपसद्मनि योगनिद्रा ।
निद्राविमुद्रितमथाकृत पौरलोकम् ।
त्वत्प्रेरणात् किमिव चित्रमचेतनैर्यद्-
द्वारै: स्वयं व्यघटि सङ्घटितै: सुगाढम् ॥९॥

जाता तदा	पैदा हुई उस समय
पशुप-सद्मनि	नन्द गोप के घर में
योग-निद्रा	योग निद्रा
निद्रा-विमुद्रितम्-	निद्रा से अभिभूत
अथ-अकृत पौर-लोकम्	तब कर दिया पुरवासियों को
त्वत्-प्रेरणात्	आपकी प्रेरणा से

किम्-इव चित्रम्-	क्या इस प्रकार विचित्र है
अचेतनैः-यत्-द्वारैः	अचेतन जो द्वारों का
स्वयं व्यघटि	स्वयं खुलना
सङ्घटितैः सुगाढम्	बन्द थे जो दृढता से

उस समय नन्द गोप के घर में योग निद्रा ने जन्म लिया। आपकी ही प्रेरणा से पुरवासी गण घोर निद्रा से अभिभूत हो गये। और इसमें क्या आश्चर्य है कि सुदृढ रूप से बन्द निर्जीव द्वार भी स्वतः खुल गये।

शेषेण भूरिफणवारितवारिणाऽथ
स्वैरं प्रदर्शितपथो मणिदीपितेन ।
त्वां धारयन् स खलु धन्यतमः प्रतस्थे
सोऽयं त्वमीश मम नाशय रोगवेगान् ॥१०॥

शेषेण भूरि-फण-वारित	शेष(नाग) के बहुत से फणों से रोके गये
वारिणा-अथ स्वैरम्	जल से तब निर्विघ्न
प्रदर्शित-पथः	प्रदर्शित हुए मार्ग पर
मणि-दीपितेन	(शेष नाग के) मणि से आलोकित
त्वां धारयन्	आपको लिये हुए
स खलु धन्यतमः	वे निश्चय ही धन्य शिरोमणि (वसुदेव) ने
प्रतस्थे	प्रस्थान किया
सः-अयं त्वम्-ईश	वही यह आप हे ईश्वर!
मम नाशय रोगा-वेगान्	मेरे नाश कीजिये रोगों के वेग का

शेष नाग के सहस्र फणों के द्वारा रोके गये जल से सुरक्षित और शेष नाग के फणों की मणि से आलोकित एवं प्रदर्शित मार्ग पर धन्य शिरोमणि वसुदेव ने आपको ले कर प्रस्थान किया। हे ईश्वर! वही आप मेरे रोगों के वेग का नाश कीजिये।

दशक ३९

भवन्तमयमुद्वहन् यदुकुलोद्वहो निस्सरन्
ददर्श गगनोच्चलज्जलभरां कलिन्दात्मजाम् ।
अहो सलिलसञ्चय: स पुनरैन्द्रजालोदितो
जलौघ इव तत्क्षणात् प्रपदमेयतामाययौ ॥१॥

भवन्तम्-अयम्-उद्वहन्	आपको इनके (वसुदेव के) ले जाते हुए
यदुकुल-उद्वह:	यदुकुलनायक ने (वसुदेव ने)
निस्सरन् ददर्श	प्रस्थान करते हुए देखा
गगन-उच्चलत्-जल-भराम्	गगन छूने तक जल से भरी
कलिन्द-आत्मजाम्	कलिन्द पुत्री (यमुना) को
अहो सलिल-सञ्चय: स:	आश्चर्य जनक जल का समूह वह
पुन:-ऐन्द्रजाल-उदित:	फिर (मानो) जादू से उत्पन्न
जलौघ:- इव	अगाध जल जैसे
तत्-क्षणात्	उसी क्षण से
प्रपद-मेयताम्-आययौ	पैर के परिमाण तक आ गया

यदुकुल नायक वसुदेव ने आप को ले कर प्रस्थान करते हुए आकाश को छूते हुए जल से भरी कलिन्द पुत्री यमुना को देखा। मानो जादू से उत्पन्न हुआ सा आश्चर्य जनक वह अगाध जल, उसी क्षण पैर के परिमाण तक आ गया।

प्रसुप्तपशुपालिकां निभृतमारुदद्बालिका-
मपावृतकवाटिकां पशुपवाटिकामाविशन् ।
भवन्तमयमर्पयन् प्रसवतल्पके तत्पदा-
द्वहन् कपटकन्यकां स्वपुरमागतो वेगत: ॥२॥

प्रसुप्त-पशुपालिकां	सुसुप्त गोपिका वाली
निभृतम्-आरुदद्-बालिकाम्-	मन्द रुदन करती हुई बालिका वाली

अपावृत-कवाटिकाम्	खुले हुए दरवाजों वाली
पशुप-वाटिकाम्-आविशन्	गोप के घर में प्रवेश कर के
भवन्तम्-अयम्-अर्पयन्	आपको इन्होने (वसुदेव ने)रख कर
प्रसव-तल्पके	प्रसव शैया पर
तत्-पदात्-वहन्	उस स्थान से उठा कर
कपट-कन्यकाम्	कपट कन्या को
स्वपुरम्-आगतः वेगतः	अपनी पुरी को आ गये शीघ्र ही

नन्द गोप की वाटिका के दरवाजे खुले थे, गोपिकाएं निद्राग्रस्त थीं और एक बालिका का मन्द रुदन सुनाई दे रहा था। वसुदेव ने वहां प्रवेश किया और प्रसव शैया पर आपको रख कर, उस स्थान से कपट कन्या को उठा लिया और वेग से अपनी पुरी को लौट आये।

ततस्त्वदनुजारवक्षपितनिद्रवेगद्रवद्-
भटोत्करनिवेदितप्रसववार्तयैवार्तिमान् ।
विमुक्तचिकुरोत्करस्त्वरितमापतन् भोजरा-
डतुष्ट इव दृष्टवान् भगिनिकाकरे कन्यकाम् ॥३॥

ततः-त्वत्-अनुजा-रव-	उसके बाद आपकी छोटी बहन की आवाज से
क्षपित-निद्र-वेग-द्रवत्-	टूटी हुई निद्रा वाले वेग से दौडते हुए
भट-उत्कर-निवेदित-	द्वार पाल गणों के द्वारा बताये जाने पर
प्रसव-वार्तया-	प्रसव वार्ता से
एव-आर्तिमान्	निश्चय पीडित
विमुक्त-चिकुर-उत्करः-	बिखरे हुए बालों के समूह वाला
त्वरितम्-आपतन्	शीघ्रता से पहुंच कर
भोज-राज-अतुष्ट	भोजराज (कंस) ने असन्तुष्ट
इव दृष्टवान्	के समान देखा

भगिनिका-करे कन्यकाम्	बहन के हाथ में बालिका को

उसके बाद आपकी छोटी बहन के रोने की आवाज से द्वारपालों की निद्रा टूट गई। वे दौड कर गये और कंस को प्रसव के बारे में सूचित किया। भय और पीडा से त्रस्त बिखरे हुए बालो वाला कंस वहां अत्यन्त शीघ्रता से पहुंचा और उसने अपनी बहन के हाथ में बालिका को देखा।

ध्रुवं कपटशालिनो मधुहरस्य माया भवे-
दसाविति किशोरिकां भगिनिकाकरालिङ्गिताम् ।
द्विपो नलिनिकान्तरादिव मृणालिकामाक्षिप-
न्नयं त्वदनुजामजामुपलपट्टके पिष्टवान् ॥४॥

ध्रुवम् कपटशालिन:	निश्चय ही (उस) कपटी
मधुहरस्य माया भवेत्-	मधुसूदन की माया होगी
असौ-इति किशोरिकाम्	यह, इस प्रकार बालिका को
भगिनिका-कर-आलिङ्गिताम्	(जो) बहन की बाहों में आलिङ्गित (थी)
द्विप: नलिनि-कान्तरात्-इव	हाथी कमल सरोवर से जैसे
मृणालिकाम्-आक्षिपन्-	कोमल मृणाल को तोड लेता है
अयम् त्वत्-अनुजाम्-अजाम्-	इसने आपकी छोटी बहन को, अजन्मा को
उपल-पट्टके पिष्टवान्	प्रस्तरशिला के ऊपर पटक दिया

'निश्चय ही यह उस कपटी मधुसूदन की माया होगी' इस प्रकार सोच कर कंस ने अपनी बहन की बाहों के आलिङ्ग्न में से आपकी छोटी बहन को उसी प्रकार खींच लिया जैसे हाथी कमल सरोवर में से कोमल मृणाल को तोड लेता है, और उस अजन्मा कन्या को प्रस्तर शिला पर पटक दिया।

तत: भवदुपासको झटिति मृत्युपाशादिव
प्रमुच्य तरसैव सा समधिरूढरूपान्तरा ।
अधस्तलमजग्मुषी विकसदष्टबाहुस्फुर-
न्महायुधमहो गता किल विहायसा दिद्युते ॥५॥

तत: भवत्-उपासक:	तदन्तर (जिस प्रकार) आपके उपासक

झटिति मृत्युपाशात्-इव	तत्काल मृत्यु के पाश से जिस प्रकार
प्रमुच्य तरसा-एव	छूट कर तुरन्त ही
सा समधिरूढ-रूपान्तरा	वह (बालिका) धारण कर के अन्य रूप को
अध:-तलम्-अजग्मुषी	नीचे लोकों में नहीं जा कर
विकसत्-अष्ट-बाहु:-	प्राप्त करते हुए आठ भुजाएं
स्फुरन्-महा-आयुधम्-	(उनमें) सुशोभित महा आयुध
अहो गता किल	अहो! चली गई निश्चय ही
विहायसा दिद्युते	आकाश मार्ग से, देदीप्यमती

तदनन्तर, जिस प्रकार आपके उपासक मृत्यु के पाश से तत्काल ही छूट जाते हैं, वह, योगमाया भी तुरन्त ही कंस की पकड से छूट गई। नीचे के लोकों की ओर न जाती हुई वह ऊपर की ओर उठी और अन्य रूप धारण कर लिया, जिसमें आठ भुजायें थीं और उन भुजाओं में दिव्य महा आयुध सुशोभित हो रहे थे। अहो! इस प्रकार वह दीप्तिमयी आकाश मार्ग से चली गई।

नृशंसतर कंस ते किमु मया विनिष्पिष्टया
बभूव भवदन्तक: क्वचन चिन्त्यतां ते हितम् ।
इति त्वदनुजा विभो खलमुदीर्य तं जग्मुषी
मरुद्गणपणायिता भुवि च मन्दिराण्येयुषी ॥६॥

नृशंसतर कंस	अत्यन्त क्रूर कंस
ते किमु	तुम्हारा क्या (लाभ है)
मया विनिष्पिष्टया	मुझे पटकने में
बभूव भवत्-अन्तक:	हो गया है तुम्हारा अन्त करने वाला
क्वचन	कहीं पर
चिन्त्यतां ते हितम्	चिन्ता करो तुम्हारे हित की
इति त्वत्-अनुजा	इस प्रकार आपकी छोटी बहन

विभो खलम्-उदीर्य तं	हे विभो! उस दुष्ट को कह कर
जग्मुषी मरुद्गण-पणायिता	चली गई मरुद्गणों के द्वारा स्तुत हो कर
भुवि च मन्दिराणि-एयुषी	और पृथ्वी पर मन्दिरों में आ गई

'हे क्रूर कंस! मुझे इस प्रकार पटकने में तुम्हारा क्या लाभ है? तुम्हारा अन्त करने वाला और कहीं पैदा हो गया है। तुम अपने हित की चिन्ता करो।' हे विभो! उस दुष्ट को इस प्रकार कहते हुए आपकी छोटी बहन चली गई। मरुद्गण उसकी स्तुति करने लगे और वह पृथ्वी पर मन्दिरों में आ विराजी।

प्रगे पुनरगात्मजावचनमीरिता भूभुजा
प्रलम्बबकपूतनाप्रमुखदानवा मानिन: ।
भवन्निधनकाम्यया जगति बभ्रमुर्निर्भया:
कुमारकविमारका: किमिव दुष्करं निष्कृपै: ॥७॥

प्रगे पुन:-	दूसरे दिन सुबह फिर
अगात्मजा-	योग माया द्वारा
वचनम्-ईरिता	वचन कहे हुए
भूभुजा	राजा के द्वारा (कहा गया)
प्रलम्ब-बक-पूतना-	प्रलम्ब, बक, पूतना आदि
प्रमुख-दानवा:	प्रमुख दानवों को
मानिन:	वे दम्भी
भवत्-निधन-काम्यया	आपके अन्त के इच्छुक
जगति बभ्रमु:-निर्भया:	भूतल पर विचरने लगे निर्भयता से
कुमारक-विमारका:	बालकों को मारने वाले
किमिव दुष्करं निष्कृपै:	क्या दुष्कर है निर्दयी लोगों के लिये

दूसरे दिन सुबह राजा कंस ने योगमाया द्वारा कही हुई बात प्रमुख दानव गण - प्रलम्ब, बक, पूतना आदि को कही। आपका अन्त कर देने के इच्छुक, बालकों की हत्या करने वाले वे दम्भी दानव भूतल पर निर्भयता से विचरने लगे। क्रूर निर्दयी लोगों के लिये कौन सा कुकर्म दुष्कर है?

ततः पशुपमन्दिरे त्वयि मुकुन्द नन्दप्रिया-
प्रसूतिशयनेशये रुदति किञ्चिदञ्चत्पदे ।
विबुध्य वनिताजनैस्तनयसम्भवे घोषिते
मुदा किमु वदाम्यहो सकलमाकुलं गोकुलम् ॥८॥

ततः पशुप-मन्दिरे	तब गोप (नन्द के) घर में
त्वयि मुकुन्द	आपको, हे मुकुन्द!
नन्द प्रिया-प्रसूति-शयने-	नन्द पत्नी की प्रसूति शय्या पर
शये रुदति	सोये हुए और रोते हुए
किञ्चित्-अञ्चत्-पदे	कुछ उछालते हुए पैरों को
विबुध्य वनिता-जनैः-	(देख कर) जगाये जाने पर गोपियों के द्वारा
तनय-सम्भवे घोषिते	पुत्र के पैदा होने की घोषणा किये जाने पर
मुदा किमु वदामि-अहो	आनन्दित क्या कहूं मैं अहो!
सकलम्-आकुलं गोकुलं	सम्पूर्ण गोकुल आनन्द से विह्वल हो उठा

हे मुकुन्द! तब नन्द गोप के घर में उनकी पत्नी की प्रसूती शय्या पर सोये हुए ,रोते हुए और पैरों को किञ्चित उछालते हुए आपको देख कर गोपियों के द्वारा जगाये जाने पर और यह घोषणा की जाने पर कि पुत्र उत्पन्न हुआ है, अहो! मैं क्या कहूं, सम्पूर्ण गोकुल आनन्द से विह्वल हो उठा।

अहो खलु यशोदया नवकलायचेतोहरं
भवन्तमलमन्तिके प्रथममापिबन्त्या दृशा ।
पुनः स्तनभरं निजं सपदि पाययन्त्या मुदा
मनोहरतनुस्पृशा जगति पुण्यवन्तो जिताः ॥९॥

अहो खलु यशोदया	अहो! निश्चय ही यशोदा ने
नव-कलाय-चेतोहरं	नूतन कलाय पुष्प के समान लुभावने
भवन्तम्-अलम्-अन्तिके	अआपको अपने अत्यन्त निकट
प्रथमम्-आपिबन्त्या	पहले तो पान कर के

दृशा पुनः	नेत्रों से फिर
स्तनभरं निजं सपदि	परिपूर्ण स्तनों को अपने शीघ्रता से
पाययन्त्या मुदा	पिलाते हुए आनन्द से
मनोहर-तनु-स्पृशा	मनोहर शरीर का स्पर्श करने से
जगति पुण्यवन्तः	संसार में पुण्यशालियों में
जिताः	जीत हासिल कर ली

अहो! निश्चय ही यशोदा ने संसार के सभी पुण्यशालियों को जीत लिया, क्योंकि उन्होंने नव कलाय पुष्प के समान लुभावने आपको अत्यन्त निकट से देखा, अपने नेत्रों से आपके सौन्दर्य का रसपान किया, फिर शीघ्रता से अपने परिपूर्ण स्तनों का पान कराया और आपके मनोहर शरीर का स्पर्श किया।

भवत्कुशलकाम्यया स खलु नन्दगोपस्तदा
प्रमोदभरसङ्कुलो द्विजकुलाय किन्नाददात् ।
तथैव पशुपालकाः किमु न मङ्गलं तेनिरे
जगत्त्रितयमङ्गल त्वमिह पाहि मामामयात् ॥१०॥

भवत्-कुशल-काम्यया	आपके कुशल की कामना से
स खलु नन्दगोपः-तदा	उन नन्द गोप ने तब
प्रमोद-भर-सङ्कुलः	अत्यन्त हर्ष के उद्वेग में
द्विज-कुलाय	द्विजों के कुलों को
किम्-न-अददात्	क्या नहीं दे दिया
तथा-एव पशु-पालकाः	उसी प्रकार गोपों ने
किमु न मङ्गलं तेनिरे	क्या नहीं मंगल किया
जगत्-त्रितय-मङ्गल त्वम्-	हे तीनों जगतों के मंगलकारी आप
इह पाहि माम्-आमयात्	यहां रक्षा कीजिये मेरी रोगों से

आपके कुशल की कामना से और हर्ष के उद्वेग में नन्द गोप ने द्विजों के कुलों को क्या कुछ दान में नहीं दिया! उसी प्रकार

गोपों ने भी आपके लिए कौन कौन से मंगल कार्य नहीं किये। हे त्रिजगत के मंगलकारी! आप रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ४०

तदनु नन्दममन्दशुभास्पदं नृपपुरीं करदानकृते गतम्।
समवलोक्य जगाद भवत्पिता विदितकंससहायजनोद्यम: ॥१॥

तदनु नन्दम्-	तदनन्तर नन्द को
अमन्द-शुभ-आस्पदम्	(जो) अमन्द मंगल के आश्रय हैं (उनको)
नृप-पुरीम्	राजधानी को
कर-दान-कृते गतम्	कर देने के लिये गये
समवलोक्य	(उनसे) मिल कर
जगाद भवत्-पिता	कहा आपके पिता ने
विदित-कंस-	(जिन्हें) मालूम था कंस के
सहायजन-उद्यम:	सहायको की चेष्टाओं के बारे में

तदनन्तर, अमन्द मंगलों के आश्रय नन्द, कर देने के लिये राजधानी गये। वहां उनकी भेंट आपके पिता वसुदेव से हुई। कंस और उसके सहायकों की गतिविधियों से परिचित वसुदेव ने नन्द से कहा -

अयि सखे तव बालकजन्म मां सुखयतेऽद्य निजात्मजजन्मवत् ।
इति भवत्पितृतां व्रजनायके समधिरोप्य शशंस तमादरात् ॥२॥

अयि सखे	अयि सखे!
तव बालक जन्म	आपके पुत्र का जन्म
मां-सुखयते-अद्य	मुझे सुख दे रहा है आज
निज-आत्मज-जन्मवत्	अपने ही पुत्र के जन्म के समान
इति भवत्-पितृतां	इस प्रकार आपके पितृत्व को
व्रजनायके समधिरोप्य	व्रजेश्वर (नन्द) पर आरोपित कर के
शशंस तम्-आदरात्	कहा उनको आदर पूर्वक

हे सखे! आपके पुत्र का जन्म मुझे उसी प्रकार सुख दे रहा है मानो मेरे अपने पुत्र का जन्म हुआ हो। इस प्रकार कुशलता से आपका पितृत्व नन्द पर आरोपित कर के उनसे आदर पूर्वक कहा -

इह च सन्त्यनिमित्तशतानि ते कटकसीम्नि ततो लघु गम्यताम् ।
इति च तद्वचसा व्रजनायको भवदपायभिया द्रुतमाययौ ॥३॥

इह च सन्ति-	और यहां पर हो रहे हैं
अनिमित्त-शतानि	अपशकुन सैंकडों
ते कटक-सीम्नि	आपके निवास की सीमा में
ततः लघु गम्यताम्	इस लिये जल्दी चले जाइये
इति च तत्-वचसा	और इस प्रकार से उनके कहने से
व्रजनायकः	व्रजनायक (नन्द)
भवत्-अपाय-भिया	आपके अमंगल के भय से
द्रुतम्-आययौ	तुरन्त ही लौट आये

आपके नगर की सीमा पर सैंकडों अपशकुन हो रहे हैं , इस लिये आप शीघ्र ही चले जाइये।' उनके इस प्रकार कहने पर व्रजनायक नन्द तुरन्त ही लौट आये।

अवसरे खलु तत्र च काचन व्रजपदे मधुराकृतिरङ्गना ।
तरलषट्पदलालितकुन्तला कपटपोतक ते निकटं गता ॥४॥

अवसरे खलु तत्र च	और उस समय ही ठीक वहां पर
काचन व्रजपदे	कोई, गोकुल में
मधुर-आकृतिः-अङ्गना	सुन्दर स्वरूप वाली युवती
तरल-षट्पद-	मण्डराते हुए भौंरों से
लालित-कुन्तला	सुसज्जित केशों वाली
कपट-पोतक	हे माया से बालक (स्वरूप)

ते निकटं गता	आपके निकट गयी

हे माया से बाल स्वरूपधारी! ठीक उसी समय गोकुल में, कोई सुन्दर स्वरूप वाली युवती जिसके सुसज्जित केशों पर भंवरे मण्डरा रहे थे, आपके पास गई।

सपदि सा हृतबालकचेतना निशिचरान्वयजा किल पूतना ।
व्रजवधूष्विह केयमिति क्षणं विमृशतीषु भवन्तमुपाददे ॥५॥

सपदि सा	तुरन्त ही उसने
हृत-बालक-चेतना	हरण करने वाली बालकों के प्राणों को
निशिचर-अन्वय-जा	राक्षसों के कुल में उत्पन्न हुई
किल पूतना	निश्चय ही पूतना ने
व्रज-वधूषु-इह	व्रज गोपियों के बीच
का-इयम्-इति	कौन है यह इस प्रकार
क्षणं विमृशतीषु	क्षण भर के लिये विचार करती हुई में से
भवन्तम्-उपाददे	आपको उठा लिया

राक्षसों के कुल में उत्पन्न हुई, बालकों के प्राणों को हरने वाली उस पूतना ने, व्रज गोपियों के बीच से, आपको तुरन्त ही उठा लिया। ब्रज गोपियां विचार ही करती रह गईं कि 'यह सुन्दरी कौन है?'

ललितभावविलासहृतात्मभिर्युवतिभि: प्रतिरोद्धुमपारिता ।
स्तनमसौ भवनान्तनिषेदुषी प्रददुषी भवते कपटात्मने ॥६॥

ललित-भाव-विलास-	मनोहर हाव भाव के विलास से
हृत-आत्मभि:-युवतिभि:	खोये हुए मन वाली युवतियों के द्वारा
प्रतिरोद्धुम्-अपारिता	रोके जाने में असमर्थ (हो जाने पर)
स्तनम्-असौ	स्तन को इसने (पूतना ने)
भवन-अन्त-निषेदुषी	भवन के बीच में बैठ कर

प्रददुषी भवते	दे दिया आपको
कपट-आत्मने	कपट बाल रूप धारी

पूतना के मनोहर हाव भावों के विलास से मोहित हुई युवतियां उसको रोकने मे असमर्थ हो गईं। हे कपट बाल रूप धारी! तब उसने भवन के बीच में बैठ कर अपको मुंह में अपना स्तन दे दिया।

समधिरुह्य तदङ्कमशङ्कितस्त्वमथ बालकलोपनरोषित: ।
महदिवाम्रफलं कुचमण्डलं प्रतिचुचूषिथ दुर्विषदूषितम् ॥७॥

समधिरुह्य तत्-अङ्कम्-	चढ कर उसकी गोद में
अशङ्कित:-त्वम्-अथ	अशङ्कित भाव से आपने तब
बालक-लोपन-रोषित:	बालकों को मारने के (कारण) क्रोधित
महत्-इव-आम्र-फलम्	बडे मानो आम के फलों के समान
कुच-मण्डलं प्रति-चुचूषिथ	स्तन मण्डलों को भली प्रकार चूसा
दुर्विष-दूषितम्	(जो) घोर विष से दूषित था

बालकों का वध करने वाली पूतना के प्रति अत्यधिक क्रोध से भरे आपने उसकी गोद में निशङ्क भाव से चढ कर, बडे बडे आमों के फलों के समान उसके स्तन मण्डलों को चूसा, जो घोर विष से लिप्त होने के कारण दूषित थे।

असुभिरेव समं धयति त्वयि स्तनमसौ स्तनितोपमनिस्वना ।
निरपतद्भयदायि निजं वपु: प्रतिगता प्रविसार्य भुजावुभौ ॥८॥

असुभि:-एव समम्	प्राणों ही के साथ
धयति त्वयि स्तनम्-	पीते हुए आपके उसके स्तन को
असौ स्तनित-उपम-निस्वना	वह मेघगर्जन के समान चीत्कार करती हुई
निरपतत्-	गिर पडी
भयदायि निजं वपु:	भयानक अपने शरीर को
प्रतिगता	प्रकट करती हुई

प्रविसार्य भुजौ-उभौ	फैला कर दोनों बाहुओं को

उसके स्तनों के साथ साथ जब उसके प्राणों स्तनों को आपने पीया, तब वह मेघगर्जना के समान चीत्कार करती हुई, अपने भयानक शरीर को प्रकट करती हुई दोनो भुजाएं फैला कर गिर पडी।

भयदघोषणभीषणविग्रहश्रवणदर्शनमोहितवल्लवे ।
व्रजपदे तदुर:स्थलखेलनं ननु भवन्तमगृह्णत गोपिका: ।।९॥

भयद-घोषण-	भयानक चीत्कार (को)
भीषण-विग्रह-	(और) भयानक आकार (को)
श्रवण-दर्शन-	सुन कर और देख कर
मोहित-वल्लवे	आश्चर्यचकित हुए गोपों के
व्रजपदे	और (पूरे) गोकुल के (हो जाने पर)
तत्-उदर:-स्थल-	उसकी छाती पर
खेलनं ननु	खेलते हुए भी
भवन्तम्-अगृह्णत	आपको उठा लिया
गोपिका:	गोपिकाओं ने

उसकी भयानक चीत्कार सुन कर और भयानक आकार देख कर गोप जन और पूरा गोकुल आश्चर्यचकित हो गया। उसकी छाती पर क्रीडा करते हुए आपको गोपिकाओं ने उठा लिया।

भुवनमङ्गलनामभिरेव ते युवतिभिर्बहुधा कृतरक्षण: ।
त्वमयि वातनिकेतननाथ मामगदयन् कुरु तावकसेवकम् ॥१०॥

भुवन-मङ्गल-	हे भुवन मङ्गलकारी!
नामभि:-एव ते	नामों से ही आपके
युवतिभि:-बहुधा	युवतियों के द्वारा बहुत प्रकार से
कृतरक्षण: त्वम्-अयि	किया गया रक्षित आपको अयि!

वातनिकेतननाथ	हे वातनिकेतननाथ!
माम्-अगदयन्	मुझको निरोग
कुरु तावक-सेवकम्	करें (और) आपका सेवक (बना लें)

अयि भुवनमङ्गलकारी! युवतियों ने आप ही के मङ्गलकारी नामों से आपकी बहुत प्रकार से रक्षा की है। हे वातनिकेतननाथ! मेरे रोगों को दूर करके मुझे भी अपना सेवक बना लें।

दशक ४१

व्रजेश्वर: शौरिवचो निशम्य समाव्रजन्नध्वनि भीतचेता: ।
निष्पिष्टनिश्शेषतरुं निरीक्ष्य कञ्चित्पदार्थं शरणं गतस्त्वाम् ॥१॥

व्रजेश्वर:	व्रजके ईश्वर (नन्द) ने
शौरि-वच: निशम्य	वसुदेव के वचन सुन कर
समाव्रजन्-अध्वनि	लौटते हुए मार्ग में
भीत-चेता:	भयभीत चित्त से
निष्पिष्ट-निश्शेष-तरुम्	परिमर्दित समस्त वृक्षों को
निरीक्ष्य किञ्चित्-पदार्थम्	देख कर किसी (अद्भुत) पदार्थ को
शरणम् गत:-त्वाम्	शरण में गए आपकी

व्रजेश्वर नन्द वसुदेव के वचनो सुन कर लौट रहे थे। मार्ग में किसी अद्भुत वस्तु के द्वारा समस्त तरुओं को अभिमर्दित देख कर भयभीत चित्त से वे आपकी शरण में गए।

निशम्य गोपीवचनादुदन्तं सर्वेऽपि गोपा भयविस्मयान्धा: ।
त्वत्पातितं घोरपिशाचदेहं देहुर्विदूरेऽथ कुठारकृत्तम् ॥२॥

निशम्य गोपी-वचनात्	सुन कर गोपिकाओं के वचनों से
उदन्तम्	वार्ता को (पूतना की)
सर्वे-अपि गोपा:	सभी गोप जन
भय-विस्मय-अन्धा:	भय और आश्चर्य से स्तम्भित हुए
त्वत्-पातितम्	आपके द्वारा गिराए गए
घोर-पिशाच-देहम्	भयंकर दैत्य के शारीर को
देहु:-विदूरे-अथ	जला दिया बहुत दूर पर तब
कुठार-कृत्तम्	फरसे से (टुकडों में) काट कर

गोपिकाओं के द्वारा कही गई पूतना की वार्ता सुन कर सभी गोप जन भय और आश्चर्य से स्तम्भित हो गए। फिर आपके द्वारा धराशाई की गई भयंकर पिशाच देह को दूर ले गए और फरसे से टुकडों में काट कर उसे जला दिया।

त्वत्पीतपूतस्तनतच्छरीरात् समुच्चलन्नुच्चतरो हि धूम: ।
शङ्कामधादागरव: किमेष किं चान्दनो गौल्गुलवोऽथवेति ॥३॥

त्वत्-पीत-पूत-स्तन-	आपके द्वारा पान किए जाने से पवित्र हुए स्तन वाले
तत्-शरीरात् समुच्चलन्-	उस शरीर से उठते हुए
उच्चतर: हि धूम:	ऊपर की ओर धूम्र
शङ्काम्-अधात्-	(से) शङ्का जाग्रत हुई
अगरव: किम्-एष	अगर है क्या यह
किम् चान्दन:	क्या चन्दन है
गौल्गुलव:-अथवा-	गुग्गुल अथवा है
इति	इस प्रकार

आपके द्वारा स्तन पान के कारण पवित्र हुए को जलाने से उसमें से बहुत ऊंचा उठता हुआ धुआं निकला जो अत्यन्त सुगन्धित था। इससे लोगों को यह शङ्का हो रही थी कि यह अगरु का धुआं है या चन्दन का अथवा गुग्गुल का।

मदङ्गसङ्गस्य फलं न दूरे क्षणेन तावत् भवतामपि स्यात् ।
इत्युल्लपन् वल्लवतल्लजेभ्य: त्वं पूतनामातनुथा: सुगन्धिम् ॥४॥

मत्-अङ्ग-सङ्गस्य	मेरे अङ्ग के सङ्ग का
फलं न दूरे	फल नहीं है बहुत दूर
क्षणेन तावत्	शीघ्र ही वह
भवताम्-अपि स्यात्	आप लोगों को भी मिलेगा'
इति-उल्लपन्	इस प्रकार कह कर
वल्लव-तल्लजेभ्य:	गोप जनों वरिष्ठ को

त्वम्	आप ने
पूतनाम्-अतनुथा:	पूतना पर विस्तार किया
सुगन्धिम्	सुगन्धि (कृपा) का

मेरे अङ्ग के संग का फल दूर भविष्य में नहीं है। वह शीघ्र ही आपको भी प्राप्त होगा।' आपने वरिष्ठ गोपों से ऐसा कहा मानो अपनी बात को सिद्ध करने के लिए ही आपने पूतना में सुगन्ध (कृपा) का विस्तार किया।

चित्रं पिशाच्या न हत: कुमार: चित्रं पुरैवाकथि शौरिणेदम् ।
इति प्रशंसन् किल गोपलोको भवन्मुखालोकरसे न्यमाङ्क्षीत् ॥५॥

चित्रं पिशाच्या	आश्चर्य है पिशाचिनी ने
न हत: कुमार:	नहीं हत्या की कुमार की
चित्रं पुरा-एव-	आश्चर्य है कि पहले ही
अकथि शौरिणा-इदम्	कहा था शौरी (वसुदेव) ने यह
इति प्रशंसन्	इस प्रकार प्रशंसा करते हुए
किल गोपलोक:	निस्सन्देह गोप जन
भवत्-मुख-आलोक-रसे	आपके मुख को देखने के आनन्द रस में
न्यमाङ्क्षीत्	निमग्न हो गए

आश्चर्य है कि पिशाचिनी ने कुमार की हत्या नहीं की। यह भी आश्चर्य है कि शौरी वसुदेव ने पहले ही यह बात बता दी थी।' इस प्रकार प्रशंसा करते हुए, गोपजन निस्सन्देह आपके मुख को देखने के आनन्द रस में निमग्न हो गए।

दिनेदिनेऽथ प्रतिवृद्धलक्ष्मीरक्षीणमाङ्गल्यशतो व्रजोऽयम् ।
भवन्निवासादयि वासुदेव प्रमोदसान्द्र: परितो विरेजे ॥६॥

दिने-दिने-अथ	प्रतिदिन तब फिर
प्रति-वृद्ध-लक्ष्मी:-	निरन्तर वर्धित होती हुई लक्ष्मी
अक्षीण-माङ्गल्य-शत:	निर्विघ्न (सम्पादित) मङ्गल कार्य सैंकडों

व्रज:-अयम्	व्रज यह
भवत्-निवासात्-	आपके निवास से
अयि वासुदेव	अयि वासुदेव!
प्रमोद-सान्द्र:	आनन्द घनीभूत
परित: विरेजे	से घिरा हुआ सुशोभित था

अयि वासुदेव! आपके निवास करने से व्रज में लक्ष्मी प्रतिदिन सम्वर्धित होती और सैंकडों माङ्गलिक कार्य निर्विघ्न सम्पादित होते। घनीभूत आनन्द के सब ओर प्रसारित होने से यह व्रज सुशोभित रहता।

गृहेषु ते कोमलरूपहासमिथ:कथासङ्कुलिता: कमन्य: ।
वृत्तेषु कृत्येषु भवन्निरीक्षासमागता: प्रत्यहमत्यनन्दन् ॥७॥

गृहेषु	घरों में
ते कोमल-रूप-हास-	आपके कोमल रूप और हास (की)
मिथ:-कथा-सङ्कुलिता:	परस्पर चर्चा में संलग्न
कमन्य:	कामिनियां
वृत्तेषु कृत्येषु	शेष हो जाने पर कार्यों के
भवत्-निरीक्षा-समागता:	आपको देखने के लिए संग आई हुई
प्रति-अहन्-अति-अनन्दन्	प्रतिदिन अत्यन्त आनन्द पाती थीं

अपने घरों में आपके कोमल रूप और मधुर हास की चर्चा में गोपिकाएं परस्पर संलग्न रहतीं। अपने गृहकार्य समाप्त कर के वे सब आपको देखने के लिए प्रतिदिन एकत्रित होतीं और अत्यधिक आनन्द पातीं।

अहो कुमारो मयि दत्तदृष्टि: स्मितं कृतं मां प्रति वत्सकेन ।
एह्येहि मामित्युपसार्य पाणी त्वयीश किं किं न कृतं वधूभि: ॥८॥

अहो कुमार:	अहो! कुमार ने
मयि दत्त-दृष्टि:	मुझ पर डाली दृष्टि

स्मितं कृतं मां प्रति	मन्द हास किया मेरी ओर
वत्सकेन	बच्चे ने
एहि-एहि माम्-इति	आओ आओ मेरे पास' इस प्रकार
उपसार्य पाणी	बढा कर हाथ
त्वयि-ईश	आपको हे ईश!
किं किं न कृतं वधूभि:	क्या क्या नहीं किया वधुओं ने

अहो! कुमार ने मुझ पर दृष्टि डाली!, बालक ने मेरी ओर मन्द हास किया!, आओ आओ मेरे पास' इस प्रकार वधुओं ने हाथ बढा कर, हे ईश! आपका क्या क्या आदर नहीं किया।

भवद्वपु:स्पर्शनकौतुकेन करात्करं गोपवधूजनेन ।
नीतस्त्वमाताम्रसरोजमालाव्यालम्बिलोलम्बतुलामलासी: ॥९॥

भवत्-वपु:-	आपका शरीर
स्पर्शन-कौतुकेन	स्पर्श करने की उत्सुकता से
करात्-करं	हाथ से हाथ में
गोप-वधू-जनेन	गोप वधू जनों के द्वारा
नीत:-त्वम्-	लिए गए आप
आताम्र-सरोज-माला-	लाल कमलो की माला (पर)
व्यालम्बि-लोलम्ब-	(मानो) मण्डराते हुए भंवरे
तुलाम्-अलासी:	के समान दिखाई दिए

आपकी देह का स्पर्श पाने की उत्सुकता में गोपिकाएं आपको परस्पर एक के हाथ से दूसरी के हाथ में देती जाती। उस समय आप ऐसे दिखाई दे रहे थे मानो लाल कमल की माला पर भंवरा मण्डरा रहा हो।

निपाययन्ती स्तनमङ्कगं त्वां विलोकयन्ती वदनं हसन्ती ।
दशां यशोदा कतमां न भेजे स तादृश: पाहि हरे गदान्माम् ॥१०॥

निपाययन्ती स्तनम्-	पान करवाते हुए स्तनों को
अङ्कगं त्वाम्	गोद में स्थित आपको
विलोकयन्ती वदनम्	निहारते हुए मुख को
हसन्ती	हंस कर
दशां यशोदा कतमां	दशा यशोदा के (आनन्द) की
न भेजे	नही प्राप्त की
स तादृशः पाहि	वही इस प्रकार के (आप) रक्षा करें
हरे गदान्-माम्	हे हरे! रोगों से मेरी

हंसती हुई यशोदा, गोद में स्थित आपको स्तनपान कराते हुए, आपका मुख निहारते हुए, आनन्द की किन किन दशाओं को नहीं प्राप्त करती थी। इस प्रकार के वही हे हरे! आप रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ४२

कदापि जन्मर्क्षदिने तव प्रभो निमन्त्रितज्ञातिवधूमहीसुरा ।
महानसस्त्वां सविधे निधाय सा महानसादौ ववृते व्रजेश्वरी ॥१॥

कदापि जन्म-ऋक्ष-दिने	एक बार जन्म नक्षत्र के दिन
तव प्रभो	आपके हे प्रभो!
निमन्त्रित-	निमन्त्रित
ज्ञाति-वधू-महीसुरा:	परिवार जन, गोपिकाएं और ब्राह्मण
महा-अनस:-त्वां सविधे	(एक) बडे छकडे के आपको पास में
निधाय सा	रख कर वह (यशोदा)
महान-सादौ	महा भोज की (तैयारी में)
ववृते व्रजेश्वरी	व्यस्त हो गई व्रजेश्वरी

हे प्रभो! एक बार आपके जन्म नक्षत्र के दिन परिवार जन, गोपिकाएं और ब्राह्मण आमन्त्रित थे। उस समय आपको एक बडे छकडे के पास रख कर व्रजेश्वरी यशोदा महा भोज की तैयारी में व्यस्त हो गई।

ततो भवत्त्राणनियुक्तबालकप्रभीतिसङ्क्रन्दनसङ्कुलारवै: ।
विमिश्रमश्रावि भवत्समीपत: परिस्फुटद्दारुचटच्चटारव: ॥२॥

तत: भवत्-	तदनन्तर आपकी
त्राण-नियुक्त-	रक्षा के लिए नियुक्त
बालक-प्रभीति-	बालकों के डरे हुए
सङ्क्रन्दन-	आक्रन्दन
सङ्कुला-रवै:	(और) चकित आवाजों से
विमिश्रम्-अश्रावि	युक्त सुनाई दी
भवत्-समीपत:	आपके पास से

परिस्फुटत्-दारु-	फटती हुई लकडी की
चटत्-चटा-रव:	चटकने की चटा चट आवाज

तदनन्तर, आपकी रक्षा के लिए नियुक्त बालकों का भयपूर्ण क्रन्दन सुनाई दिया जो चकित कोलाहल से युक्त था, और आपके समीप से लकडी के फटने की और चट चटा कर चटखने की आवाज भी सुनाई दी।

ततस्तदाकर्णनसम्भ्रमश्रमप्रकम्पिवक्षोजभरा व्रजाङ्गना: ।
भवन्तमन्तर्ददृशुस्समन्ततो विनिष्पतद्दारुणदारुमध्यगम् ॥३॥

तत:-तत्-आकर्णन-	तब उसको सुनने से
सम्भ्रम-श्रम-	विस्मय और परिश्रम से
प्रकम्पि-वक्षोज-भरा:	कांपते हुए स्तन भारी (जिनके)
व्रजाङ्गना:	(उन) गोपिकाओं ने
भवन्तम्-अन्त:-ददृशु:-	आपको बाहर में देखा
समन्तत: विनिष्पतत्-	चारों ओर बिखरे हुए
दारुण-दारु-मध्यगम्	बडे लकडी के टुकडों के बीच में

तब उस भयानक कोलाहल को सुन कर विस्मय और परिश्रम से कांपती हुई, भारी स्तनों वाली गोपिकाओं ने तब बाहर जा कर देखा कि आप चारों ओर से गिर कर बिखरे हुए लकडी के बडे बडे दारुण टुकडों के बीच स्थित हैं।

शिशोरहो किं किमभूदिति द्रुतं प्रधाव्य नन्द: पशुपाश्च भूसुरा: ।
भवन्तमालोक्य यशोदया धृतं समाश्वसन्नश्रुजलार्द्रलोचना: ॥४॥

शिशो:-अहो	बच्चे को अहो!
किं किम्-अभूत्-	क्या, क्या हो गया'
इति द्रुतं प्रधाव्य	इस प्रकार जल्दी से दौड कर
नन्द: पशुपा:-च	नन्द और गोप जन
भूसुरा: भवन्तम्-आलोक्य	ब्राह्मण आपको देख कर

यशोदया धृतं	यशोदा के द्वारा उठाए हुए
समाश्वसन्-	आश्वासित हुए
अश्रु-जल-आर्द्र-लोचना:	अश्रुओं के जल से भीगे हुए नेत्रों वाले

अहो! बच्चे को क्या हो गया, क्या हुआ!' इस प्रकार कहते हुए नन्द, गोप जन और ब्राह्मण जल्दी से दौड कर गए। यशोदा ने आपको गोद में उठा लिया है देख कर वे लोग आश्वस्त हुए। आनन्द अश्रुओं से उनके नेत्र गीले हो गए।

कस्को नु कौतस्कुत एष विस्मयो विशङ्कटं यच्छकटं विपाटितम् ।
न कारणं किञ्चिदिहेति ते स्थिता: स्वनासिकादत्तकरास्त्वदीक्षका: ॥५॥

क:-क: नु कौत:-कुत:	'कौन, कौन है, कहां से, कहां
एष विस्मय: विशङ्कटम्	यह आश्चर्यजनक विशाल
यत्-शकटम् विपाटितम्	जो छकडे को तोड डाला है
न कारणम्	नहीं (कोई) कारण
किञ्चित्-इह-इति	कोई भी यहां है' ऐसे
ते स्थिता:	वे खडे रह गए
स्व-नासिका-दत्त-करा:-	अपनी नाक पर दे कर हाथ
त्वत्-ईक्षका:	आपको देखने वाले

'कौन, यह कौन है, कहां से आया है, कहां है, जिसने इस विशाल छकडे को तोड दिया है। आश्चर्य है! यहां तो इसका कोई भी कारण दृष्टिगत नहीं होता।' इस प्रकार आपको देखते हुए लोग अपनी नाक पर हाथ रख कर स्तम्भित से खडे रह गए।

कुमारकस्यास्य पयोधरार्थिन: प्ररोदने लोलपदाम्बुजाहतम् ।
मया मया दृष्टमनो विपर्यगादितीश ते पालकबालका जगु: ॥६॥

कुमारकस्य-अस्य	कुमार के इसके
पयोधर-अर्थिन:	स्तनपान की इच्छा से
प्ररोदने	रुदन करने से

लोल-पद-अम्बुज-	चलाने से पद कमल से
आहतम्	आहत हो जाने से
मया मया दृष्टम्-	मैने मैने देखा है
अन: विपर्यगात्-	छकडा उलट गया
इति-ईश	इस प्रकार हे ईश!
ते पालक-बालका:	आपके रक्षक बालक
जगु:	बोले

हे ईश्वर! आपकी रक्षा के लिए नियुक्त बालक इस प्रकार बोले, 'कुमार ने स्तनपान के लिए विचलित हो कर रुदन करते हुए अपने पदकमलों को चलाया। इससे आहत हो कर छकडा उलट गया। मैने देखा है। मैने देखा है।'

भिया तदा किञ्चिदजानतामिदं कुमारकाणामतिदुर्घटं वच: ।
भवत्प्रभावाविदुरैरितीरितं मनागिवाशङ्क्यत दृष्टपूतनै: ॥७॥

भिया तदा	भय से तब
किञ्चित्-अजानताम्-	कुछ भी नहीं जानने वालों के लिए
इदम् कुमारकाणाम्-	यह कुमारों का
अति-दुर्घटम् वच:	अत्यन्त असम्भव वचन (था)
भवत्-प्रभाव-अविदुरै:-	आपके प्रभाव को न जानने वाले (किन्तु)
इति-ईरितं मनाक्-इव-	यह कहा हुआ थोडा सा मानो
अशङ्क्यत दृष्ट-पूतनै:	आशङ्कित करता था पूतना को देखने से

जो लोग कुछ भी नहीं जानते थे वे सोचने लगे कि गोपकुमार भयभीत हो कर ऐसा कह रहे हैं। अन्य कुछ लोग जो आपके प्रभाव को तो नहीं जानते थे, किन्तु पूतना की घटना के साक्षी थे, वे इस बात से अवश्य ही थोडा आशङ्कित हो गए।

प्रवालताम्रं किमिदं पदं क्षतं सरोजरम्यौ नु करौ विरोजितौ।
इति प्रसर्पत्करुणातरङ्गितास्त्वदङ्गमापस्पृशुरङ्गनाजना: ॥८॥

प्रवाल-ताम्रं	कोमल पत्तों के समान
किम्-इदं पदं क्षतं	क्या यह पैर चोट खा गए हैं
सरोज-रम्यौ नु	कमल के समान सुन्दर क्या
करौ विरोजितौ	हाथ छिल गए हैं
इति प्रसर्पत्-करुणा-	इस प्रकार बहती हुई दया से
तरङ्गिताः-त्वत्-अङ्गम्-	विचलित आपके अङ्गों को
आपस्पृशुः-अङ्गनाजनाः	सहलाती रही गोपिकाएं

नव पल्लव के समान कोमल ये पैर क्या चोट खा गए हैं? कमल के समान सुन्दर ये हाथ क्या छिल गए हैं?' इस प्रकार दया से द्रवित गोपिकाएं आपके अङ्गों को सहलाती रहीं।

अये सुतं देहि जगत्पते: कृपातरङ्गपातात्परिपातमद्य मे ।
इति स्म सङ्गृह्य पिता त्वदङ्गकं मुहुर्मुहु: श्लिष्यति जातकण्टक: ॥९॥

अये सुतं देहि	अयि पुत्र को दो
जगत्पतेः कृपातरङ्ग-पातात्-	जगत्पति की कृपाकी तरङ्गों के गिरने से
परिपातम्-अद्य मे	बच गया आज मेरा (पुत्र)'
इति स्म सङ्गृह्य	इस प्रकार ले कर
पिता त्वत्-अङ्गकम्	पिता ने आपके अङ्गों को
मुहुः-मुहुः श्लिष्यति	बारम्बार आलिङ्गन किया
जात-कण्टकः	हो कर रोमाञ्चित

'अयि (यशोदा) पुत्र को मुझे दो। जगत्पति की कृपा के तरंगापात से ही आज मेरा पुत्र बच गया।' इस प्रकार कहते हुए पिता ने आपको गोद में ले लिया और बारम्बार आलिङ्गन करके रोमाञ्चित हो गए।

अनोनिलीन: किल हन्तुमागत: सुरारिरेवं भवता विहिंसित: ।
रजोऽपि नो दृष्टममुष्य तत्कथं स शुद्धसत्त्वे त्वयि लीनवान् ध्रुवम् ॥१०॥

अन:-निलीन:	छकडे के वेष में
किल हन्तुम्-आगत:	निस्सन्देह हत्या करने के लिए आया था
सुरारि:-एवं	दैत्य इस प्रकार
भवता विहिंसित:	आपके द्वारा मार दिया गया
रज:-अपि न: दृष्टम्-अमुष्य	धूल भी नहीं दिखी इसकी
तत्-कथं स	वह कैसे, वह
शुद्ध-सत्वे त्वयि	निर्मल सत्व में आपमें
लीनवान् ध्रुवम्	लवलीन हो गया अवश्य

निस्सन्देह छकडे के वेष में यह दैत्य आपकी हत्या करने के लिए ही आया था। उसको आपने इस प्रकार मार डाला। यह कैसे सम्भव है कि उसकी धूल तक भी दिखाई नहीं दी। अवश्य ही वह निर्मल सत्व स्वरूप आपमें लीन हो गया।

प्रपूजितैस्तत्र ततो द्विजातिभिर्विशेषतो लम्भितमङ्गलाशिषः ।
व्रजं निजैर्बाल्यरसैर्विमोहयन् मरुत्पुराधीश रुजां जहीहि मे ॥११॥

प्रपूजितै:-तत्र	सम्पूजित हुए वहां
तत: द्विजातिभि:-	तब ब्राह्मणों ने
विशेषत:	विशेष रूप से
लम्भित-मङ्गल-आशिष:	न्यौछावर किए माङ्गलिक आशीर्वाद
व्रजं	व्रज को
निजै:-बाल्य-रसै:-	अपने बाल (रूप) की मधुरता से
विमोहयन्	सम्मोहित करते हुए
मरुत्पुराधीश	हे मरुत्पुराधीश
रुजां जहीहि मे	कष्टों को हर लीजिए मेरे

तब वहां सम्पूजित हुए ब्राह्मणों ने आपके ऊपर मङ्गल आशीर्वाद न्योछावर किये। अपने बाल रूप की मधुरता से व्रज को रस सिक्त करने वाले, हे मरुत्पुराधीश! मेरे कष्टों को हर लीजिए।

दशक ४३

त्वामेकदा गुरुमरुत्पुरनाथ वोढुं
गाढाधिरूढगरिमाणमपारयन्ती ।
माता निधाय शयने किमिदं बतेति
ध्यायन्त्यचेष्टत गृहेषु निविष्टशङ्का ॥१॥

त्वाम्-एकदा	आपको एक दिन
गुरुमरुत्पुरनाथ	हे गुरुमरुत्पुरनाथ!
वोढुं	उठाने में
गाढ-अधिरूढ-गरिमाणम्-	अत्यधिक बढे हुए वजन वाले
अपारयन्ती माता	असमर्थ हुई माता ने
निधाय शयने	लिटा दिया पलङ्ग पर
किम्-इदं बत-इति	क्या है यह आश्चर्य इस प्रकार
ध्यायन्ती	सोचती हुई
अचेष्टत गृहेषु	करने लगी घर के काम
निविष्ट-शङ्का	घिरी हुई शंकाओं से

हे गुरुमरुत्पुरनाथ! एक दिन आपका वजन अत्यधिक बढ जाने से आपको गोद में उठाने में असमर्थ माता ने आपको पलङ्ग पर लिटा दिया। 'यह कैसा आश्चर्य है', इस प्रकार की शंका से घिरी हुई वह घर के कामों में व्यस्त हो गई।

तावद्विदूरमुपकर्णितघोरघोष-
व्याजृम्भिपांसुपटलीपरिपूरिताशः ।
वात्यावपुस्स किल दैत्यवरस्तृणाव-
र्ताख्यो जहार जनमानसहारिणं त्वाम् ॥२॥

तावत्-विदूरम्-	तब दूर पर
उपकर्णित-घोर-घोष-	सुनाई दी भयंकर आवाज

व्याजृम्भि-पांसुपटली-	(और) ऊपर की ओर उठती हुई घनी धूल से
परिपूरित-आश:	भर गई सब दिशाएं
वात्या-वपु:-स	हवा के वेष में वह
किल दैत्यवर:-	निश्चय ही नामी असुर
तृणावर्त-आख्य:	तृणावर्त नाम का
जहार	उठा ले गया
जनमानस-हारिणं	जन मानस के मनों का हरण करने वाले
त्वाम्	आपको

तब दूर से भयंकर आवाज सुनाई दी और उसके साथ ही घनी धूल ऊपर की ओर उठ कर गिरने लगी, जिससे सारी दिशाएं ढक गईं। निश्चय ही वह वायु देह में तृणावर्त नाम का नामी राक्षस था, जो जन मानस का हरण करने वाले आपको उठा कर ले गया।

उद्दामपांसुतिमिराहतदृष्टिपाते
द्रष्टुं किमप्यकुशले पशुपाललोके ।
हा बालकस्य किमिति त्वदुपान्तमाप्ता
माता भवन्तमविलोक्य भृशं रुरोद ॥३॥

उद्दाम-पांसु-	अत्यन्त धूल से
तिमिर-आहत-	अंधेरे से नष्ट हो जाने से
दृष्टि-पाते	दृष्टि पथ के
द्रष्टुम् किम्-अपि-	देखना कुछ भी
अकुशले	असम्भव होने से
पशुपाल-लोके	गोप जन लोक
हा बालकस्य किम्-	हाय बालक को क्या (हुआ)
इति	इस प्रकार

त्वत्-उपान्तम्-आप्ता	आपके पास पहुंच कर
माता भवन्तम्-	आपकी माता आपको
अविलोक्य	न देखते हुए
भृशं रुरोद	खूब रोने लगी

अत्यधिक धूल के कारण हुए अन्धेरे से कुछ भी दृष्टि गोचर होना असम्भव था। 'हायबालक को क्या हुआ' इस प्रकार चिन्ता करते हुए गोप जन आपके पास पहुंचे और वहां पर आपको न देखते हुए आपकी माता यशोदा खूब जोरों से रोने लगीं।

तावत् स दानववरोऽपि च दीनमूर्ति-
र्भावत्कभारपरिधारणलूनवेग: ।
सङ्कोचमाप तदनु क्षतपांसुघोषे
घोषे व्यतायत भवज्जननीनिनाद: ॥४॥

तावत् स दानववर:-	तब वह दानव वीर
अपि च दीनमूर्ति:-	भी और दीन हो गया
भावत्क-भार-परिधारण-	आपके भार को उठाने से
लून-वेग:	कम हो जाने से (उसका) वेग
सङ्कोचम्-आप	क्षीणता को प्राप्त हो गया
तत्-अनु	उसके बाद
क्षत-पांसु-घोषे	मन्द हो जाने पर घोर आवाज के
घोषे व्यतायत	गोकुल में व्याप्त हो गई
भवत्-जननी-निनाद्	आपकी माता के रोने की आवाज

आपके भारी भार को वहन करने से वह वीर दानव भी कमजोर हो गया और उसकी गति क्षीण पड गई। तब तक वायु और धूल के झंझावात का तुमुल शोर भी मन्द पड गया और गोकुल में आपकी माता यशोदा के रुदन की ध्वनि व्याप्त हो गई।

रोदोपकर्णनवशादुपगम्य गेहं
क्रन्दत्सु नन्दमुखगोपकुलेषु दीन: ।
त्वां दानवस्त्वखिलमुक्तिकरं मुमुक्षु-

स्त्वय्यप्रमुञ्चति पपात वियत्प्रदेशात् ॥५॥

रोद-उपकर्णन-वशात्-	रोना सुनने के कारण
उपगम्य गेहं	पहुंच कर घर को
क्रन्दत्सु	रोने लगे (जब)
नन्द-मुख-गोपकुलेषु	नन्द आदि प्रमुख गोप जन
दीनः	(तब) कमजोर हुआ (वह दानव)
त्वाम् दानवः-तु	आपको (वह) दानव तो
अखिल-मुक्तिकरम्	समस्त (प्राणियों के) मुक्तिदाता (आपको)
मुमुक्षुः-	मुक्त करना चाहते हुए भी
त्वयि-अप्रमुञ्चति	(जब) आपने उसको नहीं छोडा
पपात्	गिर पडा
वियत्-प्रदेशात्	आकाश की ऊंचाइयों से

यशोदा का रोना सुन कर नन्द आदि प्रमुख गोप जन घर पहुंच कर रोने लगे। बलहीन हुआ वह दानव, समस्त प्राणियों के मुक्ति दाता आपको छोडना चाहता था किन्तु तब आपने उसे नहीं छोडा और वह आकाश की ऊंचाइयों से गिर पडा।

रोदाकुलास्तदनु गोपगणा बहिष्ठ-
पाषाणपृष्ठभुवि देहमतिस्थविष्ठम् ।
प्रैक्षन्त हन्त निपतन्तममुष्य वक्ष-
स्यक्षीणमेव च भवन्तमलं हसन्तम् ॥६॥

रोदाकुलाः-तत्-अनु	रोते हुए और निर्बल तब
गोपगणा बहिष्ठ-	गोप गण ने (घर के) बाहर
पाषाण-पृष्ठ-भुवि	पत्थर के ऊपर की जगह पर
देहम्-अतिस्थविष्ठम्	(उस दानव के) विशाल स्थूल शरीर को

प्रैक्षन्त हन्त	देखा, विस्मय से
निपतन्तम्-	गिरते हुए
अमुष्य वक्षसि-	उसके वक्षस्थल पर
अक्षीणम्-एव	अक्षुण्ण (स्थिति में) ही
च भवन्तम्	और आपको (देखा)
अलं हसन्तम्	कुछ हंसते हुए

अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि रुदन से व्याकुल और विह्वल गोप गणों ने तब घर के बाहर शिलाखण्ड की पीठ पर उस दानव के विराट स्थूल शरीर को गिरते हुए देखा और उसके वक्षस्थल पर, अक्षुण्ण स्थिति में कुछ हंसते हुए, आपको देखा।

ग्रावप्रपातपरिपिष्टगरिष्ठदेह-
भ्रष्टासुदुष्टदनुजोपरि धृष्टहासम् ।
आघ्नानमम्बुजकरेण भवन्तमेत्य
गोपा दधुर्गिरिवरादिव नीलरत्नम् ॥७॥

ग्राव-प्रपात	शिला पर गिरने से
परिपिष्ट-गरिष्ठ-देह-	चूर्णित हुए स्थूल शरीर से
भ्रष्टासु-दुष्ट-दनुज-	निष्प्राण हुए दुष्ट दानव के
उपरि धृष्ट-हासम्	ऊपर धारण किये हुए हास को
आघ्नानम्-	पीटते हुए
अम्बुजकरेण	कमल समान हाथ से
भवन्तम्-एत्य	आपके पास जा कर
गोपा: दधु:-	गोपों ने ले लिया (आप को)
गिरिवरात्-इव	गिरिवर से जैसे
नीलरत्नम्	नील रत्न को

शिला खण्ड पर गिरने से चूर चूर हुए उस दैत्य का स्थूल शरीर निष्प्राण हो गया था। आप उसके वक्षस्थल पर अपने कमल के समान कोमल हाथों से हंसते हुए प्रहार कर रहे थे। गोप गणों ने तब आपके पास पहुंच कर आपको ऐसे उठा लिया जैसे गिरिवर से कोई नीलरत्न उठा ले।

एकैकमाशु परिगृह्य निकामनन्द-
न्नन्दादिगोपपरिरब्धविचुम्बिताङ्गम् ।
आदातुकामपरिशङ्कितगोपनारी-
हस्ताम्बुजप्रपतितं प्रणुमो भवन्तम् ॥८॥

एक-एकम्-आशु	एक के बाद एक, शीघ्र ही
परिगृह्य	पकड कर
निकाम-नन्दम	परमानन्दमय (आपको)
नन्द-आदि-गोप-	नन्द आदि गोपों द्वारा
परिरब्ध-विचुम्बित-	आलिङ्गित और चुम्बित
अङ्गम्	अङ्गों वाले (आपको)
आदातु-काम-	(गोद में) लेने की इच्छुक
परिशङ्कित-गोपनारी-	(किन्तु) लजायमान गोपियों के
हस्त-अम्बुज-	हस्त कमलों में
प्रपतितम्	(उछल कर जा) गिरने वाले (आपको)
प्रणुम: भवन्तम्	प्रणाम करते हैं आपको

शीघ्र ही नन्द आदि गोपों ने परमानन्दमय आपको पकड कर आपके अङ्गों का आलिङ्गन और चुम्बन किया। अपनी गोद में लेने को इच्छुक कुछ कुछ लजाती हुई गोपियों के हस्त कमलों में उछल कर जा गिरने वाले आपको हम प्रणाम करते हैं।

भूयोऽपि किन्नु कृणुम: प्रणतार्तिहारी
गोविन्द एव परिपालयतात् सुतं न: ।
इत्यादि मातरपितृप्रमुखैस्तदानीं
सम्प्रार्थितस्त्वदवनाय विभो त्वमेव ॥९॥

भूयः-अपि	बारम्बार
किम्-नु कृणुमः	क्या हम करें
प्रणतार्तिहारी	प्रपन्न जनों के क्लेशहारी
गोविन्द एव	गोविन्द ही
परिपालयतात्	रक्षा करें
सुतं नः	पुत्र की हमारे
इति-आदि	इस प्रकार और
मातः-पितृ-	माता पिता
प्रमुखैः-तदानीम्	और प्रमुख जनों के द्वारा
सम्प्रार्थितः-	प्रार्थना किये गये
त्वत्-अवनाय	आपके संरक्षण के लिये
विभो त्वम्-एव	हे ईश्वर! आप ही

आपके माता पिता और प्रमुख जन बारम्बार यही कह रहे थे कि 'हम लोग और क्या कर सकते है? प्रपन्न जनों के क्लेशहारी गोविन्द ही हमारे पुत्र की रक्षा करने में समर्थ हैं।' हे ईश्वर! इस प्रकार आपके संरक्षण के लिये वे आप ही से प्रार्थना करने लगे।

वातात्मकं दनुजमेवमयि प्रधून्वन्
वातोद्भवान् मम गदान् किमु नो धुनोषि ।
किं वा करोमि पुनरप्यनिलालयेश
निश्शेषरोगशमनं मुहुरर्थये त्वाम् ॥१०॥

वातात्मकं दनुजम्-	वायु वेष में उस असुर का
एवम्-अयि	इस प्रकार हे!
प्रधून्वन्	संहार कर के
वात-उद्भवान्	वायु से उठती हुई

मम गदान्	मेरे रोगों को
किमु नो धुनोषि	क्यों नहीं नष्ट करते हैं
किं वा करोमि	क्या अथवा करूं
पुनः-अपि-	फिर भी
अनिलालयेश	हे अनिलालयेश!
निश्शेष-रोग-शमनं	समस्त रोगों के नाश के लिये
मुहुः-अर्थये त्वाम्	बारम्बार प्रार्थना करता हूं

वायु वेष में उस असुर का आपने इस प्रकार संहार किया। वायु से उद्भूत मेरे रोगों का भी नाश कीजिये। हे अनिलालयेश! अपने बाह्याभ्यन्तर समस्त रोगों के नाश के लिये मैं बारम्बार आपसे प्रार्थना करता हूं, इसके अतिरिक्त और कर भी क्या सकता हूं?

दशक ४४

गूढं वसुदेवगिरा कर्तुं ते निष्क्रियस्य संस्कारान् ।
हृद्गतहोरातत्त्वो गर्गमुनिस्त्वत् गृहं विभो गतवान् ॥१॥

गूढम्	गुप्त रूप से
वसुदेव-गिरा	वसुदेव के कहने से
कर्तुम् ते	करने के लिये आपके
निष्क्रियस्य	(आप जो) निष्क्रिय हैं (उनके)
संस्कारान्	(नामकरण आदि) संस्कार (करने के लिये)
हृद्-गत-होरा-तत्व:	हृदयस्थ हैं जिनके होरा तत्व (वे)
गर्ग-मुनि:	गर्ग मुनि
त्वत्-गृहम्	आपके घर को
विभो	हे विभो!
गतवान्	गये

हे विभो! वसुदेव के कहने से, गर्ग मुनि, जिनको होरा तत्व (ज्योतिष और खगोल शास्त्र) का गूढ ज्ञान था, गुप्त रूप से, आपके नामकरण आदि संस्कार सम्पन्न करने आपके घर गये। यद्यपि आप इन सब से परे हैं, निष्क्रिय हैं।

नन्दोऽथ नन्दितात्मा वृन्दिष्टं मानयन्नमुं यमिनाम् ।
मन्दस्मितार्द्रमूचे त्वत्संस्कारान् विधातुमुत्सुकधी: ॥२॥

नन्द:-अथ	नन्द ने तब
नन्दित-आत्मा	हर्षित मन से
वृन्दिष्टम्	श्रेष्ठतम (उन का)
मानयन्-अमुम्	सम्मान करके उनका
यमिनाम्	मुनियों में (श्रेष्ठ)

मन्द्-स्मित-आर्द्रम्-ऊचे	मन्द मुस्कान और आर्द्र वाणी से कहा
त्वत्-संस्कारन्	आपके संस्कार
विधातुम्-उत्सुक-धी:	करने के लिये उत्सुकता पूर्वक

नन्द ने हर्षित मन से मुनियों में श्रेष्ठतम गर्ग मुनि को देख कर उनका सादर सम्मान किया। फिर मुस्कुराते हुए आर्द्र वाणी में आपके संस्कार करने के लिये उत्सुक मुनि को आपके संस्कार करने के लिये कहा।

यदुवंशाचार्यत्वात् सुनिभृतमिदमार्य कार्यमिति कथयन् ।
गर्गो निर्गतपुलकश्चक्रे तव साग्रजस्य नामानि ॥३॥

यदुवंश-	"यदुवंश
आचार्यत्वात्	के आचार्य होने के कारण
सुनिभृतम्-इदम्-	अत्यन्त गुप्त रूप से यह
आर्य कार्यम्-इति	हे आर्य! करना होगा" इस प्रकार
कथयन् गर्ग:	कहते हुए गर्ग ने
निर्गत-पुलक:-	होते हुए रोमाञ्चित
चक्रे तव	किया तब
साग्रजस्य नामानि	साथ में बडे भाई के नामकरण

गर्गाचार्य ने कहा कि, ' हे आर्य! युदुवंश का आचार्य होने के कारण मुझे यह कार्य अत्यन्त गुप्त रूप से करना होगा।' इस प्रकार कहते हुए पुलकित और रोमाञ्चित होते हुए उन्हों ने आपके अग्रज और आपका नाम करण किया।

कथमस्य नाम कुर्वे सहस्रनाम्नो ह्यनन्तनाम्नो वा ।
इति नूनं गर्गमुनिश्चक्रे तव नाम नाम रहसि विभो ॥४॥

कथम्-अस्य	किस प्रकार इसका
नाम कुर्वे	नाम करूं
सहस्र-नाम्न: हि-	हजार नामों वाला ही

अनन्त-नाम्न: वा	अनन्त नामों वाला अथवा
इति नूनं	ऐसा निश्चय ही (सोचते हुए)
गर्ग-मुनि:-	गर्ग मुनि ने
चक्रे तव नाम	किया आपका नाम
नाम रहसि	पूरे रहस्य से
विभो	हे विभो!

गर्ग मुनि सोचने लगे कि 'इनके तो सहस्रों अथवा अनन्त नाम हैं। इनका किस प्रकार नामकरण करूं?' हे विभो! फिर उन्होंने अत्यन्त रहस्य पूर्वक आपका नामकरण किया।

कृषिधातुणकाराभ्यां सत्तानन्दात्मतां किलाभिलपत् ।
जगदघकर्षित्वं वा कथयदृषि: कृष्णनाम ते व्यतनोत् ॥५॥

कृषि-धातु-	कृषि धातु
ण-काराभ्याम्	(और) ण कार दोनों से
सत्ता-आनन्द-आत्मताम्	(जो) सत्त और आनन्द स्वरूप हैं (आप)
किल-अभिलपत्	निश्चय ही इङ्गित करते हैं
जगत्-अघ-कर्षित्वं वा	(अथवा) जग के पापों को खींच लेने वाले
कथयत्-ऋषि:	कहा ऋषि ने
कृष्ण-नाम ते	कृष्ण नाम आपका
व्यतनोत्	रखा

कृषि' धातु (क्रिया), सत्ता द्योतक है और 'ण' कार आनन्द द्योतक है। ये दोनों आपके ही रूप हैं। दोनों के योग से बने शब्द से 'जगत के पापों का कर्षण करने वाले, इङ्गित होता है। अतएव ऋषिवर ने आपका नाम 'कृष्ण' रख दिया।

अन्यांश्च नामभेदान् व्याकुर्वन्नग्रजे च रामादीन् ।
अतिमानुषानुभावं न्यगदत्त्वामप्रकाशयन् पित्रे ॥६॥

अन्यान्-च नाम-भेदान्	अन्य अन्य और भी नामों के भेद
व्याकुर्वन्-	को बताते हुए
अग्रजे च राम-आदीन्	बडे भाई का 'राम' आदि (नाम रखा)
अतिमानुष-अनुभावं	मानव मात्र से उन्नत व्यक्तित्व को
न्यगदत्-	इङ्गित किया
त्वाम्-अप्रकाशयन्	आपको अप्रकाशित करते हुए
पित्रे	पिता से

मुनि ने अन्यान और भी नामों की व्याख्या की तथा आपके बडे भाई का नाम 'राम' आदि रखा। फिर आपके पिता के सामने आपके ब्रह्म स्वरूप को अप्रकाशित रखते हुए आपके अलौकिक व्यक्तित्व की ओर संकेत किया।

स्निह्यति यस्तव पुत्रे मुह्यति स न मायिकै: पुन: शोकै: ।
द्रुह्यति य: स तु नश्येदित्यवदत्ते महत्त्वमृषिवर्य: ॥७॥

स्निह्यति य:-तव पुत्रे	स्नेह करेगा जो आपके पुत्र से
मुह्यति स न मायिकै:	मोहित वह नहीं होगा मायिक
पुन: शोकै:	पुन: शोकों से
द्रुह्यति य:	द्रोह करेगा जो
स तु नश्येत्-	वह तो नष्ट ही हो जायगा
इति-अवदत्-	इस प्रकार कहा
ते महत्त्वम्-	आपकी महानता को
ऋषिवर्य:	ऋषिवर ने

ऋषिवर ने आपकी महानता को दर्शाते हुए कहा कि, 'जो आपके पुत्र से स्नेह करेगा वह माया जनित शोकों से मोहित नहीं होगा। लेकिन जो द्रोह करेगा वह तो नष्ट ही हो जायगा।'

जेष्यति बहुतरदैत्यान् नेष्यति निजबन्धुलोकममलपदम् ।

श्रोष्यसि सुविमलकीर्तीरस्येति भवद्विभूतिमृषिरूचे ॥८॥

जेष्यति बहुतर-दैत्यान्	"जीतेगा बहुत से असुरों को
नेष्यति निजबन्धु-लोकम्-	ले जायेगा अपने बन्धु गण को
अमल-पदम्	अमल पद पर
श्रोष्यसि	सुनाई देगी
सुविमल-कीर्ती:-अस्य-	अत्यन्त विमल कीर्ति इसकी
इति भवत्-विभूतिम्-	इस प्रकार आपके ऐश्वर्य को
ऋषि:-ऊचे	ऋषि ने बताया

यह बहुत से असुरों को जीतेगा, एवं अपने बन्धु गणों को अमल पद की प्राप्ति करवायेगा। इसकी अत्यन्त विमल कीर्ति सुनाई देगी', इस प्रकार ऋषि ने आपके ऐश्वर्य का वर्णन किया।

अमुनैव सर्वदुर्गं तरितास्थ कृतास्थमत्र तिष्ठध्वम् ।
हरिरेवेत्यनभिलपन्नित्यादि त्वामवर्णयत् स मुनि: ॥९॥

अमुना-एव	इसी (पुत्र) के द्वारा
सर्व-दुर्गम् तरितास्थ	सारे संकटों से पार हो जाओगे
कृत-आस्थम्-अत्र	किये हुए आस्था इसमें
तिष्ठध्वम्	स्थित रहो
हरि:-एव-इति-	हरि ही है, यह
अनभिलपन्-	नहीं बोलते हुए
इत्यादि	इस प्रकार से
त्वाम्-अवर्णयत्	आपका वर्णन किया
स मुनि:	उन मुनि ने

इसी पुत्र के द्वारा आप लोग सभी संकटों से पार हो जायेंगे। इसमें आस्था बनाए रखिये।' इस प्रकार मुनि ने 'यह हरि ही है' ऐसा न कहते हुए भी आपकी महिमा का वर्णन किया।

गर्गेऽथ निर्गतेऽस्मिन् नन्दितनन्दादिनन्द्यमानस्त्वम् ।
मद्गदमुद्गतकरुणो निर्गमय श्रीमरुत्पुराधीश ॥१०॥

गर्गे-अथ	गर्ग मुनि तब
निर्गते-अस्मिन्	चले जाने पर उनके
नन्दित-नन्द-आदि-	आनन्दित हुए नन्द आदि
नन्द्यमानः-त्वम्	लाड प्यार करने लगे आपका
मत्-गदम्-	मेरे कष्टों को
उद्गत-करुणः	उद्दाम करुणा वाले
निर्गमय	हटा दीजिये
श्रीमरुत्पुराधीश	हे श्री मरुत्पुराधीश

गर्ग मुनि के चले जाने पर आनन्द विभोर नन्द आदि ने आपका खूब लाड प्यार किया। उद्दाम करुणा वाले, हे श्री मरुत्पुराधीश! मेरे कष्टों का निराकरण कीजिये।

दशक ४५

अयि सबल मुरारे पाणिजानुप्रचारै:
किमपि भवनभागान् भूषयन्तौ भवन्तौ ।
चलितचरणकञ्जौ मञ्जुमञ्जीरशिञ्जा-
श्रवणकुतुकभाजौ चेरतुश्चारुवेगात् ॥१॥

अयि सबल मुरारे	बलराम के साथ हे मुरारि!
पाणि-जानु-प्रचारैः	हाथों और घुटनों के ऊपर (चलते हुए)
किम्-अपि	किसी भी
भवन-भागान्	भवन के भाग को
भूषयन्तौ भवन्तौ	अलंकृत करते हुए आप दोनों
चलित-चरण-कञ्जौ	(चलने से) चलायमान पग नूपुरों की
मञ्जु-मञ्जीर-शिञ्जा	सुमधुर झंकार के शब्द
श्रवण-कुतुक-भाजौ	सुनने के लिये उत्सुक आप दोनों
चेरतुः-चारु-वेगात्	विचरते थे और वेग से

हे मुरारि! बलराम के साथ आप दोनों हाथों और घुटनों के बल चलते हुए भवन के किसी भी भाग में पहुंच जाते थे और आपकी उपस्थिति से वह भाग मानों अलंकृत हो उठता था। चलते हुए चलायमान नूपुरों की सुमधुर झंकार को और भी सुनने की उत्सुकता से आप और भी वेग से विचरने लगते थे।

मृदु मृदु विहसन्तावुन्मिषद्दन्तवन्तौ
वदनपतितकेशौ दृश्यपादाब्जदेशौ ।
भुजगलितकरान्तव्यालगत्कङ्कणाङ्कौ
मतिमहरतमुच्चै: पश्यतां विश्वनृणाम् ॥२॥

मृदु मृदु विहसन्तौ-	अति कोमलता से हंसते हुए
उन्मिषत्-दन्तवन्तौ	प्रदर्शित करते हुए दांतों को
वदन-पतित-केशौ	मुख पर गिरते हुए केशों वाले

दृश्य-पादाब्ज-देशौ	दर्शनीय पदकमल प्रदेश वाले
भुज-गलित-कर-अन्त-	भुजाओं से उतरे हुए हाथ के अन्त में
व्याल-गत्-कङ्कण-अङ्कौ	लिपटे हुए कङ्ग्न से अङ्क वाले
मतिम्-अहरतम्-उच्चैः	मन को हरते हुए अत्यधिकता से
पश्यतां विश्वनृणाम्	देखने वाले विश्व के सभी लोगों के

मधुर कोमल हंसी से आप दोनों के सुन्दर दांत दिख जाते थे। मुख पर गिरे हुए केश और पद कमल प्रदेश अत्यन्त दर्शनीय थे। भुजाओं से नीचे सरक कर आये हुए हाथों के अन्त में लिपटे हुए कङ्कण, विश्व के सभी देखने वालों का मन अत्यधिक मात्रा में मोह लेते थे।

अनुसरति जनौघे कौतुकव्याकुलाक्षे
किमपि कृतनिनादं व्याहसन्तौ द्रवन्तौ ।
वलितवदनपद्मं पृष्ठतो दत्तदृष्टी
किमिव न विदधाथे कौतुकं वासुदेव ॥३॥

अनुसरति जनौघे	पीछा किये जाते हुए लोगों के समूह से
कौतुक-व्याकुल-आक्षे	उत्सुकता से चंचल आंखों वाले
किम्-अपि	कैसी सी
कृत-निनादम्	करने पर किलकारी
व्याहसन्तौ द्रवन्तौ	हंसते हुए फिर दौडते हुए
वलित-वदन-पद्मम्	घुमाते हुए मुख कमल को
पृष्ठतः दत्त-दृष्टी	पीछे की ओर डालते हुए नजर
किम्-इव न	किस प्रकार का नहीं
विदधाथे कौतुकम्	करते थे कौतुक
वासुदेव	हे वासुदेव!

उत्सुकता से आकुल आंखों वाले लोग जब आप दोनों का पीछा करते तब आप अद्भुत किलकारी मारते हुए दौड पडते। दौडते हुए अपने मुख कमल को घुमा कर पीछे की ओर नजर डालते। हे वासुदेव! इस प्रकार आप दोनों किस किस प्रकार का कौतुक नहीं करते थे?

द्रुतगतिषु पतन्तावुत्थितौ लिप्तपङ्कौ
दिवि मुनिभिरपङ्कैः सस्मितं वन्द्यमानौ ।
द्रुतमथ जननीभ्यां सानुकम्पं गृहीतौ
मुहुरपि परिरब्धौ द्राग्युवां चुम्बितौ च ॥४॥

द्रुतगतिषु	द्रुत गति से दौडते हुए
पतन्तौ-उत्थितौ	गिर कर उठ जाने से
लिप्त-पङ्कौ	(आप दोनों के) सन जाने से पङ्क से
दिवि	आकाश में
मुनिभिः-अपङ्कैः	मुनियों के द्वारा जो पङ्क रहित हैं
सस्मितं वन्द्यमानौ	मुस्कुराते हुए वन्दित
द्रुतम्-अथ	शीघ्रता से फिर
जननीभ्यां सानुकम्पं	माताओं के द्वारा दया पूर्वक
गृहीतौ	उठाए जाने पर
मुहुःअपि परिरब्धौ	बार बार हृदय से लगाए जाते
द्राक्-युवां चुम्बितौ च	और झट से चूम लिये जाते

आप दोनों द्रुत गति से दौडते हुए गिर जाते और फिर उठते तब पङ्क में लिप्त हो जाते। आकाश में स्थित पाप पङ्क रहित मुनि जन यह दृश्य देख कर मुस्कुराते हुए आपकी वन्दना करने लगते। दया के वशीभूत माताएं शीघ्र आ कर आप दोनों को उठा लेती और बार बार हृदय से लगा कर झट से चूम लिया करतीं।

स्नुतकुचभरमङ्के धारयन्ती भवन्तं
तरलमति यशोदा स्तन्यदा धन्यधन्या ।
कपटपशुप मध्ये मुग्धहासाङ्कुरं ते
दशनमुकुलहृद्यं वीक्ष्य वक्त्रं जहर्ष ॥५॥

स्नुत-कुचभरम्-	छलछलाये स्तनों वाली
अङ्के धारयन्ती भवन्तं	गोद में ले कर आपको
तरलमति यशोदा	कोमल हृदय यशोदा
स्तन्यदा धन्यधन्या	स्तन दे कर धन्य धन्य हो जाती थी
कपट-पशुप मध्ये	हे लीला गोप! बीच बीच में
मुग्ध-हास-अङ्कुरं	मनोहर हंसी से अङ्कुरित हुए
ते दशन-मुकुल-हृद्यं	आपके दांत कलियों के समान सुन्दर
वीक्ष्य वक्त्रं जहर्ष	देख कर मुख को हर्षित हो जाती थी

छलकते हुए स्तनों वाली यशोदा आपको गोद में ले कर स्तन पान करा कर अतिशय धन्य हो जाती। हे लीला गोप रूप धारी! स्तनपान करते हुए बीच बीच में आप हंसने लगते जिससे अङ्कुरित कलियों के समान सुन्दर आपके दांत दिखने लगते। आपके ऐसे मनोहर मुख को देख कर यशोदा हर्षोत्फुल्ल हो जाती।

तदनुचरणचारी दारकैस्साकमारा-
न्निलयततिषु खेलन् बालचापल्यशाली ।
भवनशुकविडालान् वत्सकांश्चानुधावन्
कथमपि कृतहासैर्गोपकैर्वारितोऽभू: ॥६॥

तदनु-चरण-चारी	उसके बाद (जब) पैरों से चलने लगे
दारकै:-साकम्-	अन्य बालकों के संग
आरात्-निलयततिषु	निकट के घर आङ्गनों में
खेलन्	खेलते हुए
बाल-चापल्य-शाली	बाल सुलभ चपलता से
भवन-शुक-विडालान्	भवन के तोतों और बिल्लियों के
वत्सकान्-च-	और बछडों के
अनुधावन् कथम्-अपि	पीछे दौडते हुए कैसे भी

कृत-हासैः-गोपकैः-	हंसते हुए गोपों के द्वारा
वारितः-अभूः	रोके जाते थे

बाद में जब आप पैरों से चलने लगे तब अन्य बालकों के संग निकट के घरों और आङ्गनों में चले जाते। वहां भवन के तोते बिल्लियों और बछडों के पीछे दौडते हुए आपको, हंसते हुए गोप जन किसी प्रकार रोक पाते।

हलधरसहितस्त्वं यत्र यत्रोपयातो
विवशपतितनेत्रास्तत्र तत्रैव गोप्यः ।
विगलितगृहकृत्या विस्मृतापत्यभृत्या
मुरहर मुहुरत्यन्ताकुला नित्यमासन् ॥७॥

हलधर-सहितः-त्वं	बलराम के साथ आप
यत्र यत्र-उपयातः	जहां जहां भी गये
विवश-पतित-नेत्राः-	विवशता से पड जाते थे नेत्र
तत्र तत्र-एव गोप्यः	वहां वहां ही गोपियों के
विगलित-गृह-कृत्या	छोड छाड के घर के काम
विस्मृत-अपत्य-भृत्या	भूल करके बच्चों और सेवकों को
मुरहर	हे मुरारि!
मुहुः-अत्यन्त-	बारम्बार अत्यधिक
आकुला नित्यम्-आसन्	व्यग्र रहती थी सदा (आपके लिये)

बलराम के साथ आप जहां जहां भी जाते, वहां वहां गोपियों की दृष्टि विवश हो कर आप ही पर पड जाती। हे मुरारि! वे बारम्बार अपने घर के काम छोड कर, अपने बच्चों और सेवकों को भूल कर सदैव आपके लिये ही व्यग्र रहती।

प्रतिनवनवनीतं गोपिकादत्तमिच्छन्
कलपदमुपगायन् कोमलं क्वापि नृत्यन् ।
सदययुवतिलोकैरर्पितं सर्पिरश्नन्
क्वचन नवविपक्वं दुग्धमप्यापिबस्त्वम् ॥८॥

प्रतिनव-नवनीतं	ताजा मक्खन
गोपिका-दत्तम्-	गोपिका के द्वारा दिया हुआ
इच्छन् कलपदम्-	(और) मांगते हुए, मीठे गीत
उपगायन्	गाते हुए
कोमलं क्व-अपि	कोमलता से कहीं कहीं
नृत्यन्	नाचते हुए
सदय-युवति-लोकैः	दयालु युवति जनों के द्वारा
अर्पितं सर्पिः-अश्नन्	दिये हुए मक्खन को खाते हुए
क्वचन नव- विपक्वं	कहीं पर अभी ही पकाया हुआ
दुग्धम्-अपि-	दूध भी
अपिबः-त्वम्	पीते थे आप

गोपियों के द्वारा दिया हुआ ताजा मक्खन और भी पाने की इच्छा से कभी तो आप मीठे पद गाते और कभी कोमलता से नाचते। दयालु युवतियों के द्वारा दिया हुआ मक्खन खाते और कहीं कहीं तुरन्त पकाया हुआ ताजा दूध भी पीया करते।

मम खलु बलिगेहे याचनं जातमास्ता-
मिह पुनरबलानामग्रतो नैव कुर्वे ।
इति विहितमतिः किं देव सन्त्यज्य याच्ञां
दधिघृतमहरस्त्वं चारुणा चोरणेन ॥९॥

मम खलु बलि-गेहे	'मेरा बलि के घर में
याचनं जातम्-आस्ताम्	याचना करना हुआ था, जो हो
इह पुनः-	यहां पुनः
अबलानाम्-अग्रतः	अबलाओं के सामने
न-एव कुर्वे	नहीं वैसा करूंगा'

इति विहित-मति:	इस प्रकार निश्चय करके मन में
किं देव	क्या हे देव!
सन्त्यज्य यच्ञां	छोड कर मांगना
दधि-घृतम्-	दही घी आदि
अहर:-त्वं	ले लेते थे आप
चारुणा चोरणेन	लीला चोरी द्वारा

मैने बलि के घर में याचना की थी, यह सच है। किन्तु अब इन अबलाओं के सामने वैसा नहीं करूंगा।' हे देव! क्या मन में ऐसा निश्चय कर के ही याचना छोड कर आप लीला चोरी के द्वारा दही घी आदि ले लेते थे?

तव दधिघृतमोषे घोषयोषाजनाना-
मभजत हृदि रोषो नावकाशं न शोक: ।
हृदयमपि मुषित्वा हर्षसिन्धौ न्यधास्त्वं
स मम शमय रोगान् वातगेहाधिनाथ ॥१०॥

तव दधि-घृतम्-ओषे	आपके दही घी चुराने से
घोष-योषा-जनानाम्-	व्रज की युवति जनों को
अभजत हृदि रोष:	अनुभव नहीं होता था हृदय में क्रोध का
न-अवकाशं न शोक:	नहीं कोई कमी न दु:ख
हृदयम्-अपि मुषित्वा	(उनके) हृदयों को भी चुरा कर
हर्ष-सिन्धौ	आनन्द समुद्र में
न्यधा:-त्वं	डाल देते थे आप
स	वही (आप)
मम शमय रोगान्	मेरे शमन (करिये) रोगों का
वातगेहाधिनाथ	हे वातगेहाधिनाथ!

आपके द्वारा दही घी आदि चुरा लिए जाने से व्रज की युवतियों के हृदयों में न तो क्रोध का अनुभव होता था न हीं कोई कमी लगती थी न ही किसी प्रकार का दु:ख होता था। आप उनके हृदयों को भी चुरा लेते थे और उन्हें आनन्द समुद्र में डाल देते थे। ऐसे वही आप, हे वातगेहाधिनाथ! मेरे रोगों का शमन कीजिये।

दशक ४६

अयि देव पुरा किल त्वयि स्वयमुत्तानशये स्तनन्धये ।
परिजृम्भणतो व्यपावृते वदने विश्वमचष्ट वल्लवी ॥१॥

अयि देव	अयि देव!
पुरा किल	पहले एक बार
त्वयि स्वयम्-	आप स्वयं
उत्तानशये	सीधे सोये हुए
स्तनन्धये	स्तन पान करते हुए
परिजृम्भणत:	जम्भाई लेते हुए
व्यपावृते वदने	खुले हुए मुख में
विश्वम्-अचष्ट	विश्व को देखा
वल्लवी	गोपी (यशोदा) ने

हे देव! अपने बाल्य काल में आप एकबार सीधे सोये हुए स्तनपान कर रहे थे। उसी समय जम्भाई लेते हुए आपके खुले मुख में गोपी यशोदा ने पूरे विश्व को देखा।

पुनरप्यथ बालकै: समं त्वयि लीलानिरते जगत्पते ।
फलसञ्चयवञ्चनक्रुधा तव मृद्भोजनमूचुरर्भका: ॥२॥

पुन:-अपि-अथ	फिर एकबार तब
बालकै: समं	बालकों के साथ
त्वयि लीला-निरते	(जब) आप लीला (क्रीडा) मे व्यस्त थे
जगत्पते	हे जगत्पति!
फल-सञ्चय-	फल संचय
वञ्चन-क्रुधा	से छलित और क्रुद्ध हुए (बालकों ने)

तव मृद्-भोजनम्-	आपके मिट्टी खाने को
ऊचु:-अर्भका:	बताया बालकों ने

और एकबार जब आप बालकों के साथ लीला क्रीडा में व्यस्त थे तब फलों के संचय में छलित बालक आप से क्रुद्ध हो गये और उन्होंने यशोदा को आपकी मट्टी खाने की बात बता दी।

अयि ते प्रलयावधौ विभो क्षितितोयादिसमस्तभक्षिण: ।
मृदुपाशनतो रुजा भवेदिति भीता जननी चुकोप सा ॥३॥

अयि	अयि
ते प्रलय-अवधौ	आपके प्रलय काल में
विभो	हे विभो!
क्षिति-तोय-आदि-	पृथ्वी जल आदि
समस्त-भक्षिण:	समस्त खाने वाले को
मृद्-उपाशनत:	मिट्टी खाने से
रुजा भवेत्-इति	रोग हो जाएगा इस प्रकार
भीता जननी	डरी हुई माता
चुकोप सा	वह कुपित हो गई

अयि विभो! प्रलय काल में पृथ्वी जल आदि समस्त ब्रह्माण्ड का भक्षण करने वाले आप मिट्टी खाने से रोगी हो जायेंगे इस डर से माता कुपित हो गई।

अयि दुर्विनयात्मक त्वया किमु मृत्सा बत वत्स भक्षिता ।
इति मातृगिरं चिरं विभो वितथां त्वं प्रतिजज्ञिषे हसन् ॥४॥

अयि दुर्विनयात्मक	अरे दुष्ट!
त्वया किमु	तुमने क्या
मृत्सा बत	मिट्टी ही

वत्स भक्षिता	पुत्र खाई थी
इति मातृगिरं	इस प्रकार माता के वचन को
चिरं विभो	कुछ समय तक, हे विभो!
वितथां त्वं	असत्य आपने
प्रतिजज्ञिषे हसन्	ठहराया हंसते हुए

'अरे दुष्ट पुत्र! तुमने मिट्टी ही खाई थी या कुछ और?' हे विभो! माता के ऐसा पूछने पर कुछ समय तक आप हंसते हुए माता के वचन को असत्य बताते रहे।

अयि ते सकलैर्विनिश्चिते विमतिश्चेद्वदनं विदार्यताम् ।
इति मातृविभर्त्सितो मुखं विकसत्पद्मनिभं व्यदारय: ॥५॥

अयि ते	अरे तुम्हारे
सकलै:-विनिश्चिते	ये सभी निश्चय बता रहे हैं
विमति:-चेत्-	अन्यथा है यदि
वदनं विदार्यताम्	मुंह खोलो'
इति मातृ-विभर्त्सित:	इस प्रकार माता के डांटने पर
मुखं विकसत्-पद्म-निभम्	मुख को खिलते हुए कमल के समान
व्यदारय:	खोल दिया (आपने)

'अरे! तुम्हारे ये सभी साथी निश्चित रूप से बता रहे हैं कि तुमने मिट्टी खाई है। यदि ऐसा नहीं है तो अपना मुंह खोलो।' माता के इस प्रकार डांटने पर आपने खिलते हुए कमल के समान अपना मुंह खोल दिया।

अपि मृल्लवदर्शनोत्सुकां जननीं तां बहु तर्पयन्निव ।
पृथिवीं निखिलां न केवलं भुवनान्यप्यखिलान्यदीदृश: ॥६॥

अपि मृल्-लव	मिट्टी का कण भी
दर्शन-उत्सुकां	देखने को उत्सुक

जननीं तां	उस माता को
बहु तर्पयन्-इव	बहुत सन्तुष्ट करते हुए मानो
पृथिवीं निखिलां	पृथ्वी को पूरी
न केवलं	नहीं केवल
भुवनान्-अपि-	भुवनों को भी
अखिलान्-अदीदृश:	समस्त दिखला दिया

माता आपके मुख में मिट्टी का कण मात्र भी मिट्टी देखने को उत्सुक थीं। उनको बहुत सन्तुष्ट करते हुए ही मानों आपने न केवल पूरी पृथ्वी अपितु समस्त भुवनों को भी दिखला दिया।

कुहचिद्वनमम्बुधि: क्वचित् क्वचिदभ्रं कुहचिद्रसातलम् ।
मनुजा दनुजा: क्वचित् सुरा ददृशे किं न तदा त्वदानने ॥७॥

कुहचित्-वनम्-	कहीं पर वन
अम्बुधि: क्वचित्	समुद्र कहीं पर
क्वचित्-अभ्रं	कहीं पर आकाश
कुहचित्-रसातलम्	कहीं पर रसातल
मनुजा: दनुजा:	मानव, असुर
क्वचित् सुरा:	कहीं पर देवगण
ददृशे किं न	दिखाया क्या नहीं
तदा त्वत्-आनने	तब आपके मुख में

उस समय, कहीं पर वन और कहीं समुद्र, कहीं पर आकाश तो कहीं रसातल, कहीं मानव कहीं असुर तो कहीं देवता गण, इस प्रकार क्या क्या नहीं देखा माता यशोदा ने आपके मुख में?

कलशाम्बुधिशायिनं पुन: परवैकुण्ठपदाधिवासिनम् ।
स्वपुरश्च निजार्भकात्मकं कतिधा त्वां न ददर्श सा मुखे ॥८॥

कलश-अम्बुधि-शायिनं	क्षीर सागर में लेटे हुए
पुन: पर-वैकुण्ठपद-	फिर परमात्मस्वरूप में वैकुण्ठ पद मे
अधिवासिनम्	निवास करने वाले
स्व-पुर:-च	स्वयं के सामने और
निज-अर्भक-आत्मकं	अपने पुत्र के रूप में
कतिधा	कितने स्वरूपों में
त्वाम् न ददर्श	आपको नहीं देखा
सा मुखे	उसने मुख में

क्षीर सागर में शेष शैया पर शयन करते हुए, वैकुण्ठ पद के निवासी परमात्म स्वरूप में, स्वयं के सामने अपने पुत्र के रूप में, किस किस रूप में उसने नही देखा आपको आपके ही मुख में?

विकसद्भुवने मुखोदरे ननु भूयोऽपि तथाविधानन: ।
अनया स्फुटमीक्षितो भवाननवस्थां जगतां बतातनोत् ॥९॥

विकसत्-भुवने	दिखाए देते हुए भुवन
मुख-उदरे	मुख गह्वर में
ननु भूय:-अपि	निश्चय ही फिर से भी
तथा-विध-आनन:	उसी प्रकार का मुख
अनया स्फुटम्-ईक्षित:	उसके द्वारा स्पष्ट देखा गया
भवान्-अनवस्थां	आप ने अनवस्था को
जगतां	जगत की
बत्-आतनोत्	ही प्रमाणित किया

आपके मुख गह्वर में यशोदा ने स्पष्ट रूप से भुवनों को देखा और उसी प्रकार खुले हुए मुंह वाले आपको देखा, जिसमें फिर भुवन और मुख दिख रहे थे। इस प्रकार आपने जगत की अनवस्था को प्रतिपादित किया।

धृततत्त्वधियं तदा क्षणं जननीं तां प्रणयेन मोहयन् ।
स्तनमम्ब दिशेत्युपासजन् भगवन्नद्भुतबाल पाहि माम् ॥१०॥

धृत-तत्त्व-धियं	पा जाने पर तत्व ज्ञान ध्यान में
तदा क्षणं	तब क्षण भर के लिये
जननीं तां	उस जननी को
प्रणयेन मोहयन्	स्नेह से मोहित कर के
स्तनम्-अम्ब दिश-	दूध मां दो'
इति-उपासजन्	इस प्रकार गोद में चढते हुए
भगवन्-	हे भगवन!
अद्भुत-बाल	हे अद्भुत बालक!
पाहि माम्	रक्षा करें मेरी

तब क्षण भर के लिये यशोदा को मन में तत्त्व ज्ञान हो गया। फिर आप जननी को स्नेह से मोहित कर के, 'दूध दो मां' कहते हुए गोद में चढने का उपक्रम करने लगे। हे भगवन! हे अद्भुत बालक! मेरी रक्षा करें।

दशक ४७

एकदा दधिविमाथकारिणीं मातरं समुपसेदिवान् भवान् ।
स्तन्यलोलुपतया निवारयन्नङ्कमेत्य पपिवान् पयोधरौ ॥१॥

एकदा	एक दिन
दधि-विमाथ-कारिणीं	दधि मन्थन करती हुई
मातरं	माता के
समुपसेदिवान् भवान्	समीप गये आप
स्तन्य-लोलुपतया	स्तन पान करने के लोभ से
निवारयन्-	रोकते हुए (मन्थन को)
अङ्कम्-एत्य	गोद में चढ कर
पपिवान् पयोधरौ	पीने लगे स्तन को

एक दिन जब यशोदा दधि मन्थन कर रही थी, आप उनके समीप गये और स्तन पान करने के लोभ से आप मन्थन को रोक कर उनकी गोद में चढ गये और स्तन पान करने लगे।

अर्धपीतकुचकुड्मले त्वयि स्निग्धहासमधुराननाम्बुजे ।
दुग्धमीश दहने परिस्रुतं धर्तुमाशु जननी जगाम ते ॥२॥

अर्धपीत-	आधा पीये हुए
कुचकुड्मले	स्तन कमल कली के समान
त्वयि स्निग्ध-हास-	आपको मधुर हंसते हुए को
मधुर-आनन-अम्बुजे	कोमल मुख कमल को
दुग्धम्-ईश	दूध को हे ईश्वर!
दहने परिस्रुतं	आग पर उफनते हुए
धर्तुम्-आशु	उठाने के लिये शीघ्र

जननी जगाम ते	माता चली गई आपकी

आधा पीये हुए कमल कली के समान स्तनों को, मधुरता से हंसते हुए कोमल मुख कमल वाले आपको, छोड कर, हे ईश्वर! अग्नि पर रखे हुए उफनते हुए दूध को उठाने के लिये आपकी माता शीघ्रता से चली गई।

सामिपीतरसभङ्गसङ्गतक्रोधभारपरिभूतचेतसा।
मन्थदण्डमुपगृह्य पातितं हन्त देव दधिभाजनं त्वया ॥३॥

सामि-पीत-	आधा पीये हुए
रस-भङ्ग-सङ्गत-	से हुए रस भङ्ग के कारण
क्रोध-भार-	क्रोध से भरे हुए
परिभूत-चेतसा	परिभूत चित्त वाले (आपने)
मन्थ-दण्डम्-	मथानी को
उपगृह्य पातितं	उठा कर तोड दिया
हन्त देव	हा देव!
दधि-भाजनम् त्वया	दही के पत्र को आपने

आधा ही स्तनपान कर पाने के कारण हुए रस भङ्ग से आपका चित्त क्रोध से उद्विग्न हो गया। हा देव! तब आपने मथानी को उठाया और उससे दही पात्र को मार कर उसे तोड डाला।

उच्चलद्ध्वनितमुच्चकैस्तदा सन्निशम्य जननी समाद्रुता ।
त्वद्यशोविसरवद्ददर्श सा सद्य एव दधि विस्तृतं क्षितौ ॥४॥

उच्चलत्-ध्वनितम्-	ऊंची आवाज
उच्चकैः-तदा	उठती हुई तब
सन्निशम्य	सुन कर
जननी समाद्रुता	माता दौड कर आई
त्वत्-यशः-विसरः-	आपके सुयश के विस्तार के

वत्-ददर्श सा	समान देखा उसने
सद्य एव दधि	तुरन्त ही दधी
विस्तृतं क्षितौ	फैला हुआ धरती पर

दही पात्र के टूटने की तीव्र ध्वनि सुन कर सशंकित माता यशोदा शीघ्र ही दौड कर आईं। उन्होंने देखा संसार में आपके निर्मल सुयश के विस्तार के समान धरती पर दही फैला हुआ है।

वेदमार्गपरिमार्गितं रुषा त्वमवीक्ष्य परिमार्गयन्त्यसौ ।
सन्ददर्श सुकृतिन्युलूखले दीयमाननवनीतमोतवे ॥५॥

वेदमार्ग-परिमार्गितं	वेद मार्गों से (मुनियों के द्वारा) खोजे जाते हुए आप
रुषा त्वाम्-अवीक्ष्य	कुपित हुई आपको न देख कर
परिमार्गयन्ती-	खोजती हुई
असौ सन्ददर्श	उसने देखा
सुकृतिनी-	पुण्यशालिनी ने
उलूखले	ऊलुखल पर
दीयमान-नवनीतम्-	देते हुए मक्खन
ओतवे	बिल्लियों को

जिन आप को मुनिजन वेदमार्गों के द्वारा खोजते रहते हैं, उन आपको न देख कर कुपित हुई यशोदा आपको खोजने लगी। उस पुण्यशालिनी ने आपको उलूखल पर चढे कर बिल्लियों को मक्खन खिलाते हुए देखा।

त्वां प्रगृह्य बत भीतिभावनाभासुराननसरोजमाशु सा ।
रोषरूषितमुखी सखीपुरो बन्धनाय रशनामुपाददे ॥६॥

त्वां प्रगृह्य बत	आपको पकड कर, अहो!
भीति-भावना-	भय की भावना से
भासुर-आनन-सरोजम्-	दमकते हुए मुख कमल वाले (आपको)

आशु सा	तुरन्त उसने
रोष-रूषित-मुखी	क्रोध से सूर्ख मुख वाली
सखी-पुरः	सखियों के सामने
बन्धनाय	बान्धने के लिये
रशनाम्-उपाददे	रस्सी ले आई

क्रोध से सूखे हुए मुख वाली यशोदा, तुरन्त ही, सखियों के सामने ही, भय की भावना का प्रदर्शन करने से दमकते हुए मुख कमल वाले आपको बान्धने के लिये रस्सी ले आई।

बन्धुमिच्छति यमेव सज्जनस्तं भवन्तमयि बन्धुमिच्छती ।
सा नियुज्य रशनागुणान् बहून् व्यङ्गुलोनमखिलं किलैक्षत ॥७॥

बन्धुम्-इच्छति	मित्र रूप में चाहते हैं
यम्-एव सज्जनः-	जिन्हें ही सज्जन
तं भवन्तम्-अयि	उन आपको अयि!
बन्धुम्-इच्छती	बान्धना चाहती हुई
सा नियुज्य	उसने लगा कर
रशना-गुणान् बहून्	रस्सियों और गांठों को बहुत सारी
व्यङ्गुल-ऊनम्-	दो अङ्गुलियों जितनी कम
अखिलं	पूरी (रस्सी) को
किल-ऐक्षत	फिर भी पाया

जिनको सज्जन जन मित्र के रूप में बान्धना चाहते हैं उन आपको, अयि!, बान्धने की इच्छा रखने वाली यशोदा बहुत सी रस्सियों में गांठे लगा लगा कर बढाते रही फिर भी हर बार उसे दो अङ्गुल छोटा ही पाया।

विस्मितोत्स्मितसखीजनेक्षितां स्विन्नसन्नवपुषं निरीक्ष्य ताम् ।
नित्यमुक्तवपुरप्यहो हरे बन्धमेव कृपयाऽन्वमन्यथाः ॥८॥

विस्मित्-उत्स्मित-	आश्चर्य चकित हंसते हुए
सखीजन-ईक्षितां	सखियों के देखते हुए
स्विन्न-सन्न-वपुषं	पसीने से भरे हुए शरीर वाली
निरीक्ष्य ताम्	देख कर उसको
नित्य-मुक्त-वपुः-	सदैव मुक्त शरीर वाले
अपि-अहो हरे	भी, अहो हरि!
बन्धम्-एव	बन्धन को ही
कृपया-अन्वमन्यथाः	कृपा कर के स्वीकार कर लिया

नित्य मुक्त शरीर वाले अहो हरि! आश्चर्य से चकित हंसती हुई सखियों के देखते देखते, पसीने से लथ पथ शरीर वाली क्लान्त यशोदा को देख कर आपने कृपा के वशीभूत हो कर बन्धन को स्वीकार कर लिया।

स्थीयतां चिरमुलूखले खलेत्यागता भवनमेव सा यदा।
प्रागुलूखलबिलान्तरे तदा सर्पिरर्पितमदन्नवास्थिथाः ॥९॥

स्थीयतां	'बैठे रहो
चिरम्-उलूखले	देर तक उलूखल में ही
खल-इति-	दुष्ट' इस प्रकार (कह कर)
आगता भवनम्-एव	लौट आई भवन को भी
सा यदा प्राक्-	वह जब, पहले
उलूखल-बिलान्तरे	उलूखल के गढ्ढे में
तदा सर्पिः-अर्पितम्-	तब मक्खन रक्खे हुए को
अदन्-अवास्थिथाः	खाया बैठ कर

' दुष्ट! देर तक इसी उलूखल में बैठे रहो' कह कर जब यशोदा भवन को लौट गई, तब पहले आपने बैठ कर उलूखल के गढ्ढे में रखा हुआ मक्खन खाया।

यद्यपाशसुगमो विभो भवान् संयत: किमु सपाशयाऽनया ।
एवमादि दिविजैरभिष्टुतो वातनाथ परिपाहि मां गदात् ॥१०॥

यदि-अपाश-सुगम:	यदि बन्धन रहित जनों के लिये सुगम हैं
विभो भवान्	हे विभो! आप
संयत: किमु	बन्ध गये कैसे
सपाशया-अनया	रस्सी वाली इसके द्वारा
एवम्-आदि	इत्यादि
दिविजै:-अभिष्टुत:	देवताओं के द्वारा संस्तुत आप
वातनाथ	हे वातनाथ!
परिपाहि मां गदात्	रक्षा कीजिये मेरी रोगों से

'हे विभो! यदि सांसारिक बन्धन रहित जनों के लिये आप सुगम हैं तो यशोदा की रस्सी के बन्धन में कैसे आ गये?' इस प्रकार देवताओं ने आपकी स्तुति की। हे वातनाथ! रोगों से मेरी रक्षा कीजिये।

दशक ४८

मुदा सुरौघैस्त्वमुदारसम्मदै-
रुदीर्य दामोदर इत्यभिष्टुत: ।
मृदुदर: स्वैरमुलूखले लग-
न्नदूरतो द्वौ ककुभावुदैक्षथा: ॥१॥

मुदा सुरौघै:-	प्रसन्न देवताओं के द्वारा
त्वम्-उदार-सम्मदै:-	आप अत्यन्त हर्ष के साथ
उदीर्य दामोदर	कहे गये दामोदर
इति-अभिष्टुत:	इस प्रकार स्तुति किये जा कर
मृदु-उदर:	कोमल उदर वाले
स्वैरम्-उलूखले	स्वयं को उलूखल में
लगन्-अदूरत:	बन्धा, पास ही में
द्वौ ककुभौ-उदैक्षथा:	दो अर्जुन वृक्षों को देखा

प्रसन्न देवताओं ने अत्यन्त हर्ष के साथ आपको 'दामोदर' नाम दिया और आपकी स्तुति की। कोमल उदर वाले, स्वेच्छा से उलूखल में बन्धे हुए आपने पास ही दो अर्जुन वृक्षों को देखा।

कुबेरसूनुर्नलकूबराभिध:
परो मणिग्रीव इति प्रथां गत: ।
महेशसेवाधिगतश्रियोन्मदौ
चिरं किल त्वद्विमुखावखेलताम् ॥२॥

कुबेर-सूनु:-	कुबेर के पुत्र
नलकूबर-अभिध:	नल कूबर नाम का
पर: मणिग्रीव इति	दूसरा मणिग्रीव इस प्रकार
प्रथां गत:	प्रसिद्धि प्राप्त (थे)

महेश-सेवा-	शंकर की सेवा से
अधिगत-श्रिय-	प्राप्त वैभव (से)
उन्मदौ चिरं किल	उन्मत्त दोनों बहुत समय तक
त्वत्-विमुखौ-	आपसे विमुख
अवखेलताम्	उद्दण्ड हो गये

कुबेर के पुत्र नलकूबर और मणिग्रीव नाम से प्रसिद्ध थे। दोनों ने शंकर की उपासना कर के वैभव प्राप्त किया, जिसके कारण, बहुत समय तक, आपसे विमुख हो कर वे दोनों उद्दण्ड हो गये थे।

सुरापगायां किल तौ मदोत्कटौ
सुरापगायद्बहुयौवतावृतौ ।
विवाससौ केलिपरौ स नारदो
भवत्पदैकप्रवणो निरैक्षत ॥३॥

सुर-आपगायाम्	दैवी नदी (गङ्गा) में
किल तौ मदोत्कटौ	एक बार वे दोनों मदमस्त
सुरा-आप-गायत्-	सुरा पान कर के, गाती हुई
बहु-यौवत-आवृतौ	बहुत सी युवतियों से घिरे हुए
विवासिसौ केलिपरौ	निर्वस्त्र क्रीडा करते हुए (को)
स नारदः	उन नारद ने
भवत्-पद-एक-प्रवणः	(जो) आपके चरणों में ही आसक्त (हैं)
निरैक्षत	देखा

एक बार मदमस्त वे दोनों सुरा पान करके गाती हुई बहुत सी युवतियों से घिरे हुए निर्वस्त्र हो कर, दैवी नदी गङ्गा में क्रीडा विहार कर रहे थे। आपके ही चरणों में आसक्त नारद ने उन्हे ऐसी अवस्था में देखा।

भिया प्रियालोकमुपात्तवाससं
पुरो निरीक्ष्यापि मदान्धचेतसौ ।
इमौ भवद्भक्त्युपशान्तिसिद्धये

मुनिर्जगौ शान्तिमृते कुत: सुखम् ॥४॥

भिया प्रिया-लोकम्-	भय से युवती गण ने
उपात्त-वाससं	डाल लिये कपडे
पुरः निरीक्ष्य-अपि	(किन्तु) सामने देख कर भी
मद-अन्ध-चेतसौ	मद से अन्धे चित्त वाले
इमौ	इन दोनों ने (नहीं किया)
भवत्-भक्ति-	आपकी भक्ति (और)
उपशान्ति-सिद्धये	परम शान्ति की सिद्धि के लिये
मुनिः-जगौ	मुनि ने कहा
शान्तिम्-ऋते	शान्ति के बिना
कुतः सुखम्	कहां सुख है

भयभीत युवतियों ने तो बदन पर कपडे डाल लिये किन्तु मदान्ध चित्त वाले उन दोनों ने ऐसा नहीं किया। आपकी भक्ति और परम शान्ति की सिद्धि के लिये मुनि ने कहा, (आगे के श्लोक में) शान्ति के बिना सुख कहां है?

युवामवाप्तौ ककुभात्मतां चिरं
हरिं निरीक्ष्याथ पदं स्वमाप्नुतम् ।
इतीरितौ तौ भवदीक्षणस्पृहां
गतौ व्रजान्ते ककुभौ बभूवतु: ॥५॥

युवाम्-अवाप्तौ	तुम दोनों पाकर
ककुभ-आत्मतां चिरं	अर्जुन स्वरूप को चिरकाल तक
हरिं निरीक्ष्य-अथ	हरि को देख कर फिर
पदं स्वम्-आप्नुतम्	स्थान को अपने प्राप्त होवोगे
इति-ईरितौ तौ	इस प्रकार कहे गये वे दोनों

भवत्-ईक्षण-स्पृहां	आपके दर्शन की इच्छा से
गतौ व्रज-अन्ते	गये व्रज के किनारे
ककुभौ बभूवतुः	(और) ककुभ (अर्जुन वृक्ष) बन गये

'चिरकाल तक तुम दोनों अर्जुन वृक्ष का स्वरूप पाकर रहोगे। जब हरि का दर्शन करोगे, तब फिर अपने स्थान को प्राप्त करोगे।' नारद द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर वे दोनों प्रभु के दर्शन की इच्छा से व्रज के किनारे चले गये और अर्जुन वृक्ष बन गये।

अतन्द्रमिन्द्रद्रुयुगं तथाविधं
समेयुषा मन्थरगामिना त्वया ।
तिरायितोलूखलरोधनिर्धुतौ
चिराय जीर्णौ परिपातितौ तरू ॥६॥

अतन्द्रम्-	बिना रुके हुए
इन्द्र-द्रु-युगम्	अर्जुन द्रुम युगल
तथा-विधम्	उस प्रकार के
समेयुषा	पास पहुंच कर
मन्थर-गामिना त्वया	धीरे धीरे चलते हुए आपके द्वारा
तिरायुत-उलूखल-	टेढे हुए उलूखल से
रोध-निर्धुतौ	अटक कर उखड गये
चिराय जीर्णौ	अनेक समय से जीर्ण हुए
परिपातितौ तरू	गिर पडे दोनों पेड

इन्हीं अर्जुन द्रुम युगल के पास आप बिना रुके हुए पहुंच गये। फिर दोनों वृक्षों के बीच आपके धीरे धीरे चलने से टेढा हुआ उलूखल दोनों वृक्षों के बीच अटक गया। अनेक समय से जीर्ण हुए दोनों पेड, खींचे जाने से उखड कर गिर पडे।

अभाजि शाखिद्वितयं यदा त्वया
तदैव तद्गर्भतलान्निरेयुषा ।
महात्विषा यक्षयुगेन तत्क्षणा-

दभाजि गोविन्द भवानपि स्तवैः ॥७॥

अभाजि शाखिद्वितयं	(जब) उखाड दिये गये दोनों पेड
यदा त्वया तदा-एव	जब आपके द्वारा तब ही
तत्-गर्भ-तलात्-निरेयुषा	उसके भीतर से निकले
महात्विषा	महान कान्तिमान
यक्षयुगेन	यक्ष युगल जिनके द्वारा
तत्-क्षणात्-अभाजि	उसी क्षण पूजित हुए
गोविन्द	हे गोविन्द!
भवान्-अपि स्तवैः	आप भी स्तुतियों से

जब आपने दोनों पेडों को उखाड दिया तब उनके भीतर से दो कान्तिमान यक्ष निकले और हे गोविन्द! उसी क्षण उन्होंने स्तुतियों से आपका पूजन किया।

इहान्यभक्तोऽपि समेष्यति क्रमात्
भवन्तमेतौ खलु रुद्रसेवकौ ।
मुनिप्रसादाद्भवदङ्घ्रिमागतौ
गतौ वृणानौ खलु भक्तिमुत्तमाम् ॥८॥

इह-अन्य-भक्तः-अपि	यहां (इस संसार में) अन्य देवों के भक्त भी
समेष्यति	निश्चय ही आयेंगे
क्रमात् भवन्तम्-	क्रम से आप तक
एतौ खलु रुद्र-सेवकौ	ये दोनों जो शंकर के भक्त थे
मुनि-प्रसादात्-	(नारद) मुनि की कृपा से
भवत्-अङ्घ्रिम्-	आपके चरणों में
आगतौ गतौ	आ गये (और) चले गये

वृणानौ खलु	वरदान पा कर
भक्तिम्-उत्तमाम्	उत्तम भक्ति का

यहां, इस संसार में अन्य देवों के भक्त भी क्रम से आप तक ही आयेंगे। ये दोनों यक्ष जो शंकर के भक्त थे, मुनि नारद की कृपा से आपके चरणों की शरण में आ गये और उत्तम भक्ति का वरदान पा कर अपने स्थान को चले गये।

ततस्तरूद्दारणदारुणारव-
प्रकम्पिसम्पातिनि गोपमण्डले ।
विलज्जितत्वज्जननीमुखेक्षिणा
व्यमोक्षि नन्देन भवान् विमोक्षद: ॥९॥

तत:-तरू-द्दारण-	तब पेडों के गिरने से
दारुण-आरव-	भयंकर आवाज (सुन कर)
प्रकम्पि-सम्पातिनि	कांपते हुए दौड पडने पर
गोप-मण्डले	गोप मण्डल के
विलज्जित-त्वत्-जननी-	लज्जित आपकी माता
मुख-इक्षिणा	(जिनका) मुख देख रहे थे
व्यमोक्षि नन्देन	खोल दिया नन्द ने
भवान् विमोक्षद:	आपको जो मोक्ष दाता हैं

पेडों के गिरने से हुई भयंकर आवाज को सुन कर गोप मण्डल तब उधर ही दौड पडा। आपको बान्धने से लज्जित हुई आपकी माता का मुख देखते हुए नन्द ने मुक्तिदाता आपको बन्धन मुक्त कर दिया।

महीरुहोर्मध्यगतो बतार्भको
हरे: प्रभावादपरिक्षतोऽधुना ।
इति ब्रुवाणैर्गमितो गृहं भवान्
मरुत्पुराधीश्वर पाहि मां गदात् ॥१०॥

महीरुहो:-मध्य-गत:	पेडों के बीच से जाते हुए

बत-अर्भक:	आश्चर्य है! बालक
हरेः प्रभावात्-	हरि के प्रभाव से
अपरिक्षतः-अधुना	बच गया आज
इति ब्रुवाणैः-	ऐसा कहते हुए (गोपों के द्वारा)
गमितः गृहं	(आप) ले जाये गये घर को
भवान् मरुत्पुराधीश्वर	आप, हे मरुत्पुराधीश्वर!
पाहि मां गदात्	रक्षा करे मेरी रोगों से

'आश्चर्य है! पेडों के बीच से जाते हुए भी यह बालक आज प्रभु की कृपा से बच गया।' ऐसा कहते हुए गोप गण आपको घर ले गये। हे मरुत्पुराधीश्वर! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ४९

भवत्प्रभावाविदुरा हि गोपास्तरुप्रपातादिकमत्र गोष्ठे ।
अहेतुमुत्पातगणं विशङ्क्य प्रयातुमन्यत्र मनो वितेनु: ॥१॥

भवत्-प्रभाव-	आपके प्रभाव को
अविदुरा: हि गोपा:-	नहीं जानने से ही गोप गण
तरु-प्रपात-आदिकम्-	पेडों के गिरने आदि को
अत्र गोष्ठे	यहां व्रज में
अहेतुम्-उत्पात-गणम्	निरर्थक बहुत से उत्पातों से
विशङ्क्य	शङ्कित हो कर
प्रयातुम्-अन्यत्र	जाने के लिये दूसरी जगह
मन: वितेनु:	मन को तैयार करने लगे

गोप गण आपके प्रभाव को नहीं जानते थे। व्रज में पेडों के गिरने आदि जैसे नाना प्रकार के होने वाले अकारण उत्पातों से शङ्कित हो कर वे व्रज को छोड कर दूसरी जगह जाने का मन बनाने लगे।

तत्रोपनन्दाभिधगोपवर्यो जगौ भवत्प्रेरणयैव नूनम् ।
इत: प्रतीच्यां विपिनं मनोज्ञं वृन्दावनं नाम विराजतीति ॥२॥

तत्र-उपनन्द-अभिध-	वहां उपनन्द नाम के
गोपवर्य: जगौ	श्रेष्ठ गोप ने कहा
भवत्-प्रेरणया-एव	आप की प्रेरणा से ही
नूनम्	निश्चय
इत: प्रतीच्याम्	यहां से पश्चिम की ओर
विपिनं मनोज्ञं	वन (है) मनोहर
वृन्दावनं नाम	वृन्दावन नाम से

विराजति-इति	जाना जाता है, इस प्रकार

निश्चय ही आपकी ही की प्रेरणा से, वहां पर उपनन्द नाम के वरिष्ठ गोप ने गोष्ठी में कहा कि गोकुल के पश्चिम की ओर एक मनोहर वन प्रदेश है जो वृन्दावन के नाम से जाना जाता है।

बृहद्वनं तत् खलु नन्दमुख्या विधाय गौष्ठीनमथ क्षणेन ।
त्वदन्वितत्वज्जननीनिविष्टगरिष्ठयानानुगता विचेलु: ॥३॥

बृहद्वनम् तत् खलु	उस वृहद्वन को निश्चय करके
नन्द-मुख्या विधाय	नन्द आदि मुख्य (गोपों) ने खाली करके
गौष्ठीनम्-अथ	गौशाला को फिर
क्षणेन	तुरन्त ही
त्वत्-अन्वित-	आपके सहित
त्वत्-जननी-निविष्ट-	आपकी माता को बैठये हुए
गरिष्ठ-यान-अनुगता	विशाल गाडी के पीछे चलते हुए
विचेलु:	निकल पडे

नन्द आदि मुख्य गोपों ने तब निर्णय ले कर उस वृहद्वन की गौशाला को खाली कर दिया। इसके बाद शीघ्र ही आप सहित आपकी माता को विशाल गाडी में बैठा कर स्वयं उसके पीछे पीछे चलते हुए निकल पडे।

अनोमनोज्ञध्वनिधेनुपालीखुरप्रणादान्तरतो वधूभि: ।
भवद्विनोदालपिताक्षराणि प्रपीय नाज्ञायत मार्गदैर्घ्यम् ॥४॥

अन:-मनोज्ञ-ध्वनि-	गाडी की सुन्दर ध्वनि
धेनु-पाली-	गौ समूह के
खुर-प्रणाद-अन्तरत:	खुरों का नाद (उसके) बीच बीच में
वधूभि:	युवतियों के द्वारा
भवत्-विनोद-	आपके हास्य पूर्ण

आलपित-अक्षराणि	कहे गये अक्षरों को
प्रपीय न-अज्ञायत	पी कर (सुन कर) नहीं बोध हुआ
मार्ग-दैर्घ्यम्	मार्ग की दूरी का

गाडी की सुन्दर ध्वनि, गौ समूह के खुरों का नाद और बीच बीच में आपके द्वारा कहे गये हास्यपूर्ण अक्षर, इन सब का सम्मिलित रूप से पान करते हुए, अथवा इन्हें सुनते हुए गोप युवतियों को मार्ग की दूरी का बोध ही नहीं हुआ।

निरीक्ष्य वृन्दावनमीश नन्दत्प्रसूनकुन्दप्रमुखद्रुमौघम् ।
अमोदथा: शाद्वलसान्द्रलक्ष्म्या हरिन्मणीकुट्टिमपुष्टशोभम् ॥५॥

निरीक्ष्य वृन्दावनम्-	देख कर वृन्दावन को
ईश	हे ईश्वर!
नन्दत्-प्रसून-	खिलते हुए फूलों वाले
कुन्द-प्रमुख-द्रुम-औघम्	कुन्द आदि प्रमुख पेडों के समूह वाले
अमोदथा:	प्रसन्न हो गये
शाद्वल-सान्द्र-लक्ष्म्या	हरी घनी घास से
हरिन्-मणी-कुट्टिम-	हरे मणि (पन्ने) से जडे हुए के समान
पुष्ट-शोभम्	बढा रहा था शोभा को

हे ईश्वर! खिले हुए फूलों वाले, कुन्द आदि सभी प्रमुख पेडों के समूहों वाले वृन्दावन को देख कर आप प्रसन्न हो गये। घनी हरी घास, जडे हुए हरे पन्ने की मणि के समान वहां की शोभा बढा रही थी।

नवाकनिर्व्यूढनिवासभेदेष्वशेषगोपेषु सुखासितेषु ।
वनश्रियं गोपकिशोरपालीविमिश्रित: पर्यगलोकथास्त्वम् ॥६॥

नवाक-निर्व्यूढ-	अर्ध चन्द्र के समान बनाये गये
निवास-भेदेषु-	विभिन्न घरों में
अशेष-गोपेषु	सभी गोप (जब)

सुख-आसितेषु	सुख से टिक गये
वनश्रियं	वन की सुन्दरता को
गोप-किशोर-पाली-	युवक गोप जनों की टोली के साथ
विमिश्रित:	मिल कर
पर्यक्-अलोकथा:-त्वम्	घूम घूम कर देखने लगे आप

अर्ध चन्द्र के आकार में बनाए हुए विभिन्न घरों में सभी गोप जन सुख पूर्वक टिक गये। तब युवक गोप जनों की टोली के संग घूम घूम कर आप वन की सुन्दरता का मुग्ध भाव से परिदर्शन करने लगे।

अरालमार्गागतनिर्मलापां मरालकूजाकृतनर्मलापाम् ।
निरन्तरस्मेरसरोजवक्त्रां कलिन्दकन्यां समलोकयस्त्वम् ॥७॥

अराल-मार्ग-	टेढे मेढे मार्गों से
आगत्-निर्मल-आपां	प्रवाहित होते हुए निर्मल जल वाली
मराल-कूज-	हंसो की कूंजन से
आकृत-नर्म-लापाम्	मुखरित मधुर शब्द वाली
निरन्तर-स्मेर-	सदैव मुस्कुराते हुए
सरोज-वक्त्राम्	कमल मुख वाली
कलिन्द-कन्याम्	कालिन्द की कन्या (यमुना नदी) को
समलोकय:-त्वम्	देखा आपने

अपने टेढे मेढे मार्गों से प्रवाहित होती हुई निर्मल जल वाली कलिन्द पुत्री कालिन्दी (यमुना) को आपने देखा। हंसों के मधुर कलरव से उसका कल कल करता जल मुखरित हो रहा था और खिलते हुए कमलों से भरा हुआ उसका मुख कमल सदैव मुस्कुरा रहा था।

मयूरकेकाशतलोभनीयं मयूखमालाशबलं मणीनाम् ।
विरिञ्चलोकस्पृशमुच्चशृङ्गैर्गिरिं च गोवर्धनमैक्षथास्त्वम् ॥८॥

मयूर-केका-शत-	मयूरों के शत शत कूकने से
लोभनीयं	मनोहर
मयूख-माला-शबलम्	किरणो की मालओं के रंगीन जाल से
मणीनाम्	(आच्छादित) मणियों के
विरिञ्च-लोक-	ब्रह्मा के निवास को
स्पृशम्-उच्च-शृङ्गै:	छूता हुआ सा ऊंचे शिखरों से
गिरिम् च गोवर्धनम्-	और गोवर्धन पर्वत को
ऐक्षथा:-त्वम्	देखा आपने

और आपने गोवर्धन पर्वत को देखा जो मयूरों की शत शत कूक से मनोहारी था। पर्वत चारों ओर विस्तीर्ण रंग बिरंगी मणियों की रंगीन किरणों से आलोकित था। अपने ऊंचे शिखरों से वह मानो ब्रह्म लोक को छूने की स्पर्धा कर रहा था।

समं ततो गोपकुमारकैस्त्वं समन्ततो यत्र वनान्तमागा: ।
ततस्ततस्तां कुटिलामपश्य: कलिन्दजां रागवतीमिवैकाम् ॥९॥

समं तत:	साथ में तब
गोपकुमारकै:-	गोपकुमारों के
त्वं समन्तत: यत्र	आप सब ओर जहां
वनान्तम्-आगा:	वन के अन्त तक गये
तत:-तत:-	वहां वहां
ताम् कुटिलाम्-	उस टेढी मेढी
अपश्य: कलिन्दजाम्	को देखा कालिन्दी (को)
रागवतीम्-इव-ऐकाम्	अनुरागिनी मानो एकमात्र

गोपकुमारों के साथ आप वन के अन्त तक जहां जहां भी गये, आपने एकमात्र आपकी अनुरागिनी उस टेढी मेढी कालिन्दी (यमुना) को ही देखा।

तथाविधेऽस्मिन् विपिने पशव्ये समुत्सुको वत्सगणप्रचारे ।
चरन् सरामोऽथ कुमारकैस्त्वं समीरगेहाधिप पाहि रोगात् ॥१०॥

तथा-विधे-	इस प्रकार के
अस्मिन् विपिने	इस वन में
पशव्ये	पशुओं के लिये उपयुक्त
समुत्सुकः	उत्साहित
वत्सगण-प्रचारे	गोवत्सों को चराने के लिये
चरन्-सरामः-अथ	घूमते हुए, बलराम के साथ,फिर
कुमारकैः-त्वं	गोपकुमारों के साथ आप
समीरगेहाधिप	हे समीरगेहाधिप!
पाहि रोगात्	रक्षा करें रोगों से

पशुओं के लिये उपयुक्त इस प्रकार के वन में बलराम और गोपकुमारों के साथ विचरते हुए, गोवत्सों की चर्या करने में उत्साहित आप, हे समीरगेहाधिप! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ५०

तरलमधुकृत् वृन्दे वृन्दावनेऽथ मनोहरे
पशुपशिशुभि: साकं वत्सानुपालनलोलुप: ।
हलधरसखो देव श्रीमन् विचेरिथ धारयन्
गवलमुरलीवेत्रं नेत्राभिरामतनुद्युति: ॥१॥

तरल-मधुकृत्-वृन्दे	मण्डराते हुए मधुमक्खी के झुण्ड वाले
वृन्दावने-अथ	वृन्दावन में तब
मनोहरे	सुन्दर
पशुप-शिशुभि: साकं	गोप वत्सों के साथ
वत्स-अनुपालन-लोलुप:	गो वत्सों को चराने में उत्सुक
हलधर-सख:	बलराम जी के साथ
देव श्रीमन्	हे देव श्रीमन!
विचेरिथ धारयन्	विचरते थे ले कर (हाथ में)
गवल-मुरली-वेत्रं	सीङ्ग, मुरली और बेंत
नेत्र-अभिराम-तनु-द्युति:	नेत्रों को मोहित करने वाली देह कान्ति वाले, (आप)

हे देव श्रीमन! नेत्रों को मोहित करने वाली देह कान्ति वाले आप, हाथ में सीङ्ग मुरली और बेंत लिये हुए, मधुमक्खियों के झुण्डों के मण्डराने से और भी सुन्दर हुए वृन्दावन में, बलराम और गोप वत्सों के साथ, गो वत्सों को चराने के लिये समुत्सुक, विचरते रहते थे।

विहितजगतीरक्षं लक्ष्मीकराम्बुजलालितं
ददति चरणद्वन्द्वं वृन्दावने त्वयि पावने ।
किमिव न बभौ सम्पत्सम्पूरितं तरुवल्लरी-
सलिलधरणीगोत्रक्षेत्रादिकं कमलापते ॥२॥

विहित-जगती-रक्षं	सन्निहित जगत की रक्षा वाले
लक्ष्मी-कर-अम्बुज-लालितं	लक्ष्मी के कर कमलों से सेवित

ददति चरण-द्वन्द्वम्	रखते हैं (जब) चरण दोनों
वृन्दावने त्वयि पावने	वृन्दावन में आपके द्वारा पवित्र
किम्-इव न बभौ	क्या कुछ नहीं हुआ
सम्पत्-सम्पूरितं	सम्पदाओं से सुपूरित
तरु-वल्लरी-सलिल-	पेड, लताएं, जल
धरणी-गोत्र-क्षेत्र-आदिकं	धरती, पर्वत, क्षेत्र, आदि
कमलापते	हे कमलापति!

हे कमलापति! जगत की रक्षा से सन्निहित और लक्ष्मी के करकमलों से सेवित अपने चरण युगल जब आपने पावन वृन्दावन में रक्खे, तब वहां के पेड, लताएं, जल, धरती, पर्वत, क्षेत्र आदि क्या कुछ अपनी सम्पदाओं से परिपूरित नहीं हुआ!

विलसदुलपे कान्तारान्ते समीरणशीतले
विपुलयमुनातीरे गोवर्धनाचलमूर्धसु ।
ललितमुरलीनाद: सञ्चारयन् खलु वात्सकं
क्वचन दिवसे दैत्यं वत्साकृतिं त्वमुदैक्षथा: ॥३॥

विलसत्-उलपे	घनी घास वाले मैदान में
कान्तार-अन्ते	वन के अन्त में
समीरण-शीतले	ठण्डी हवा में
विपुल-यमुना-तीरे	विस्तृत यमुना के किनारे
गोवर्धन-अचल-मूर्धसु	गोवर्धन पर्वत की चोटियों पर
ललित-मुरली-नाद:	सुन्दर मुरली की तान से
सञ्चारयन् खलु वात्सकं	चराते हुए जब गोवत्सों को
क्वचन दिवसे	(तब) एक दिन
दैत्यं वत्स-आकृतिम्	दैत्य बछडे की आकृति में

त्वम्-उदैक्षथा:	आपने देखा

एक दिन, घनी घास वाले मैदान में, ठण्डी हवा वाले वन के अन्त में, विस्तृत यमुना के किनारे, गोवर्धन पर्वत की चोटियों पर, आप मुरली की सुन्दर तान बजाते हुए, गोवत्सों को चरा रहे थे। उस समय आपने बछडे की आकृति वाले एक दैत्य को देखा।

रभसविलसत्पुच्छं विच्छायतोऽस्य विलोकयन्
किमपि वलितस्कन्धं रन्ध्रप्रतीक्षमुदीक्षितम् ।
तमथ चरणे बिभ्रद्विभ्रामयन् मुहुरुच्चकै:
कुहचन महावृक्षे चिक्षेपिथ क्षतजीवितम् ॥४॥

रभस-विलसत्-पुच्छं	वेग से हिलाते हुए पूंछ को
विच्छायत:-	चलते हुए
अस्य विलोकयन्	उसका देखना
किम्-अपि वलित-स्कन्धं	कुछ जरा टेढा करके कन्धे को
रन्ध्र-प्रतीक्षम्-उदीक्षितम्	अवसर की प्रतीक्षा को देखता हुआ
तम्-अथ चरणे	उसको पैरों से
विभ्रत्-विभ्रामयन्	पकड कर घुमाते हुए
मुहु:-उच्चकै:	बार बार जोर से
कुहचन महावृक्षे	किसी बडे पेड पर
चिक्षेपिथ क्षत-जीवितम्	फेंक दिया निष्प्राण को

वह वत्सासुर वेग से पूंछ को हिलाता हुआ चल रहा था और कन्धों को घुमा कर देख रहा था मानों (घात के) अवसर की प्रतीक्षा कर रहा हो। उसको आपने पैरों से पकड कर बार बार जोर से घुमाते हुए किसी बडे पेड पर फेंक दिया और वह निष्प्राण हो गया।

निपतति महादैत्ये जात्या दुरात्मनि तत्क्षणं
निपतनजवक्षुण्णक्षोणीरुहक्षतकानने ।
दिवि परिमिलत् वृन्दा वृन्दारका: कुसुमोत्करै:
शिरसि भवतो हर्षाद्वर्षन्ति नाम तदा हरे ॥५॥

निपतति महा-दैत्ये	गिरते हुए महा दैत्य के
जात्या दुरात्मनि	जन्म से दुरात्मा के
तत्-क्षणम्	उसी क्षण
निपतन-जव-	गिरने के वेग से
क्षुण्ण-क्षोणी:-	टूटने से ऊपर के
उह-क्षत-कानने	पेडों के (कारण) नष्ट हुए
दिवि परिमिलत् वृन्दा	आकाश में इकट्ठे हुए समूह
वृन्दारका:	देवों के
कुसुम-उत्करै:	फूलों के ढेरों से
शिरसि भवत:	सिर पर आपके
हर्षात्-वर्षन्ति	हर्ष से वर्षा करने लगे
नाम तदा हरे	ही तब हे हरि!

जन्म से ही कुटिल उस महा दैत्य के गिरने से पेडों के ऊपर के हिस्से टूट गये और वह वन नष्ट हो गया। हे हरि! आकाश में सम्मिलित देव समूह अत्यन्त हर्ष से आपके सिर पर पुष्प पुञ्जों की वर्षा करने लगे।

सुरभिलतमा मूर्धन्यूर्ध्वं कुत: कुसुमावली
निपतति तवेत्युक्तो बालै: सहेलमुदैरय: ।
झटिति दनुजक्षेपेणोर्ध्वं गतस्तरुमण्डलात्
कुसुमनिकर: सोऽयं नूनं समेति शनैरिति ॥६॥

सुरभिलतमा	अत्यन्त सुगन्धित
मूर्धनि-ऊर्ध्वं	सिर के ऊपर
कुत: कुसुमावली	कहां से पुष्पों के गुच्छे
निपतति तव-	गिर रहे हैं तुम्हारे

इति-उक्त: बालै:	इस प्रकार कहा बालकों ने
सहेलम्-उदैरय:	विनोद में कहा
झटिति	हटात
दनुज-क्षेपेण-	दानव को फेंकने से
ऊर्ध्वं गत:-	ऊपर को उठ गये
तरु-मण्डलात्	पेडों की सतह से
कुसुम-निकर:	पुष्पों के समूह
स:-अयं नूनं	वही यह निश्चय ही
समेति शनै:-इति	नीचे आ रहे हैं धीरे धीरे, इस प्रकार

बालकों ने पूछा कि सुगन्धित पुष्पों के ये समूह आपके सिर पर कहां से गिर रहे थे। तब आपने विनोद में उनसे कहा कि दानव को हटात फेंकने से पेडों की सतह से ऊपर की ओर उठे हुए पुष्प ही अब धीरे धीरे नीचे की ओर गिर रहे हैं।

क्वचन दिवसे भूयो भूयस्तरे परुषातपे
तपनतनयापाथ: पातुं गता भवदादय: ।
चलितगरुतं प्रेक्षामासुर्बकं खलु विस्मृतं
क्षितिधरगरुच्छेदे कैलासशैलमिवापरम् ॥७॥

क्वचन दिवसे	किसी एक दिन
भूय: भूयस्तरे	फिर अत्यधिक
परुष-आतपे	कडी धूप से
तपन-तनया-पाथ:	सूर्य पुत्री (यमुना) का जल
पातुं गता	पीने के लिये गये
भवत्-आदय:	आप और अन्य जन
चलित-गरुतम्	चलाते हुए वेग से पंखों को

प्रेक्षामासुः-बकं	देखा बगुले को
खलु विस्मृतं	कदाचित भूल गये थे
क्षितिधर-गरुत्-छेदे	पर्वतों के पंखों को काटते समय
कैलास-शैलम्-इव-अपरम्	कैलाश पर्वत के समान दूसरा

फिर किसी एक दिन, अत्यधिक कडी धूप से त्रस्त आप अन्य गोपों के साथ, सूर्य पुत्री यमुना का जल पीने गये। वहां आपने एक बगुला देखा जो तीव्रता से पंख फडफडा रहा था, मानो वह दूसरा कैलाश पर्वत ही हो, पर्वतों के पंख काटते समय इन्द्र जिसके पंख काटना भूल गये थे।

पिबति सलिलं गोपव्राते भवन्तमभिद्रुत:
स किल निगिलन्नग्निप्रख्यं पुनर्द्रुतमुद्वमन् ।
दलयितुमगात्त्रोट्या: कोट्या तदाऽऽशु भवान् विभो
खलजनभिदाचुञ्चुश्चञ्चू प्रगृह्य ददार तम् ॥८॥

पिबति सलिलं	पीते हुए जल को
गोपव्राते	गोपवत्सों के
भवन्तम्-अभिद्रुतः	आपकी ओर लपकते हुए
स किल निगिलन्-	वह तब निगल कर
अग्नि-प्रख्यम्	(आपको) अग्नि के समान
पुनः-द्रुतम्-उद्वमन्	फिर झट से उगलते हुए
दलयितुम्-अगात्-	चीर डालने के लिये आया
त्रोट्याः कोट्या	चोंच की नोंक से
तदा-आशु	तब शीघ्रता से
भवान् विभो	आपने हे विभो!
खल-जन-भिदा-चुञ्चुः-	कुटिल जनों को चीरने में पटु
चञ्चू प्रगृह्य	चोंच पकड कर

ददार तम्	चीर दिया उसको

जब गोपवत्स गण जल पी ही रहे थे, वह लपक कर आपको निगल गया लेकिन तुरन्त ही अग्नि सम आपको उगल दिया। अपनी चोंच की नोंक से आपको विदारने के लिये आपके निकट आया। कुटिल जनों को विदारने में पटु, हे विभो! आपने शीघ्रता से उसकी चोंच के दोनो भागों को पकड कर उसे ही चीर दिया।

सपदि सहजां सन्द्रष्टुं वा मृतां खलु पूतना-
मनुजमघमप्यग्रे गत्वा प्रतीक्षितुमेव वा ।
शमननिलयं याते तस्मिन् बके सुमनोगणे
किरति सुमनोवृन्दं वृन्दावनात् गृहमैयथा: ॥९॥

सपदि सहजां	तुरन्त ही बहन को
सन्द्रष्टुं वा मृतां	देखने के लिये या मरी हुई को
खलु पूतनाम्-	ही पूतना को
अनुजम्-अघम्-अपि-	छोटे भाई अघासुर को भी
अग्रे गत्वा	आगे जा कर
प्रतीक्षितुम्-एव वा	प्रतीक्षा करते हुए अथवा
शमन-निलयं	मृत्यु लोक को
याते तस्मिन् बके	जाने पर उस बगुले के
सुमनोगणे	(जब) देवगण
किरति सुमन-वृन्दं	बरसा रहे थे पुष्प समूह
वृन्दावनात्	वृन्दावन से
गृहम्-ऐयथा:	घर को आये (आप)

अघासुर अपनी बहन पूतना से मिलने के लिये, अथवा पूतना अपने छोटे भाई (अघासुर) के आगमन की प्रतीक्षा में जहां पहले ही पहुंच गई थी, वहां उस मृत्युलोक में उस बगुले के चले जाने पर, जब देव गण आपके ऊपर पुष्प वृष्टि कर रहे थे, तब आप वृन्दावन से घर चले आये।

ललितमुरलीनादं दूरान्निशम्य वधूजनै-

स्त्वरितमुपगम्यारादारूढमोदमुदीक्षित: ।
जनितजननीनन्दानन्द: समीरणमन्दिर-
प्रथितवसते शौरे दूरीकुरुष्व ममामयान् ॥१०॥

ललित-मुरली-नादं	सुमधुर मुरली की तान
दूरात्-निशम्य	दूर से ही सुन कर
वधूजनैः-	वधूजन (गोपियां)
त्वरितम्-उपगम्य-आरात्-	शीघ्रता से आकर पास में
आरूढ-मोदम्-उदीक्षितः	अत्यन्त हर्षित होते हुए देख कर
जनित-जननी-नन्द-आनन्दः	कारण स्वरूप माता और नन्द के आनन्द के
समीरण-मन्दिर-प्रथित-वसते	गुरुवायुर मन्दिर के सुप्रसिद्ध निवासी
शौरे	हे शौरी!
दूरी कुरुष्व	दूर कर दीजिये
मम-आमयान्	मेरे रोगों को

दूर से ही मुरली की सुमधुर तान सुन कर गोपियां शीघ्रता से समीप आ कर आपको निकट से देख कर अत्यन्त हर्षित हो जाती हैं। माता यशोदा और नन्द के आनन्द के कारण स्वरूप, गुरुवायुर मन्दिर के सुप्रसिद्ध निवासी, हे शौरी! मेरे रोगों को दूर कर दीजिये।

दशक ५१

कदाचन व्रजशिशुभि: समं भवान्
वनाशने विहितमति: प्रगेतराम् ।
समावृतो बहुतरवत्समण्डलै:
सतेमनैर्निरगमदीश जेमनै: ॥१॥

कदाचन	एक बार
व्रजशिशुभि: समं	व्रज के बालकों के साथ
भवान् वन-अशने	आप वन में खाने के लिये
विहित-मति:	निश्चय मन में कर के
प्रगेतराम् समावृत:	भोर बेला में घिरे हुए
बहुतर-वत्स-मण्डलै:	बहुत से गोवत्सों के समूह से
सतेमनै:-निरगमत्-	(ले कर) खाद्य व्यञ्जन निकल पडे
ईश जेमनै:	हे ईश! भात भी (ले कर)

हे ईश! व्रज के बालकों के साथ वन में भोजन करने का मन में विचार कर के, एक बार, भोर बेला में, बहुत से गोवत्सों के समूहों से घिरे हुए, स्वादु खाद्य व्यञ्जन और भात ले कर निकल पडे।

विनिर्यतस्तव चरणाम्बुजद्वया-
दुदञ्चितं त्रिभुवनपावनं रज: ।
महर्षय: पुलकधरै: कलेबरै-
रुदूहिरे धृतभवदीक्षणोत्सवा: ॥२॥

विनिर्यत: तव	जाते हुए आपके
चरण-अम्बुज-द्वयात्-	चरण कमल युगल से
उदञ्चितं	उठी हुई
त्रिभुवन-पावनं रज:	त्रिभुवन को पावन करने वाली धूल को

महर्षय: पुलकधरै:	महर्षियों ने रोमञ्चित होते हुए
कलेबरै:-उद्हिरे	(अपने) शरीरों पर ग्रहण किया
धृत-भवत्-ईक्षण-	धारण कर के आपके दर्शन को
उत्सवा:	उत्सव के समान

चलने से आपके चरण कमल युगल से उठी हुई त्रिभुवन को पावन करने वाली धूल को ऋषियों ने पुलकित हो कर अपने शरीरों पर धारण किया और आपके दर्शन का उत्सव मनाया।

प्रचारयत्यविरलशाद्वले तले
पशून् विभो भवति समं कुमारकै: ।
अघासुरो न्यरुणदघाय वर्तनी
भयानक: सपदि शयानकाकृति: ॥३॥

प्रचारयति-	चराते हुए
अविरल-शाद्वले तले	घनी घास वाले भूतल पर
पशून् विभो	पशुओं को हे विभो!
भवति समं कुमारकै:	आप के साथ कुमार भी
अघासुर: न्यरुणत्-	अघासुर ने रोक लिया
अघाय वर्तनी	पपाप कर्म करने के लिये मार्ग को (जब)
भयानक: सपदि	भयंकर अचानक
शयानक-आकृति:	अजगर की आकृति में

हे विभो! जब आप कुमारों के साथ घनी घास वाले भूतल पर पशुओं को चरा रहे थे उस समय अघासुर ने अजगर की भयंकर आकृति धारण कर पाप कर्म करने के लिये मार्ग रोक लिया।

महाचलप्रतिमतनोर्गुहानिभ-
प्रसारितप्रथितमुखस्य कानने ।
मुखोदरं विहरणकौतुकाद्गता:
कुमारका: किमपि विदूरगे त्वयि ॥४॥

महाचल-प्रतिम-तनो:-	पर्वत के समान तन वाला
गुहा-निभ-प्रसारित-	गुफा के समान फैलाये हुए
प्रथित-मुखस्य	बडे मुख वाले उसको
कानने	वन में
मुख-उदरं	मुख के भीतर
विहरण-कौतुकात्-	विहार करने के लिये उत्सुक
गता: कुमारका:	गये कुमार गण
किम्-अपि	कुछ भी
विदूरगे त्वयि	दूर गये थे आप

आप कुछ दूर आगे चले गये थे। उसके विशाल तन को पर्वत, और फैलाये हुए विशाल मुख को कन्दरा समझ कर, वे वन में विचरण करने के कुतुहल से कुमार उसमें घुस गये।

प्रमादत: प्रविशति पन्नगोदरं
क्वथत्तनौ पशुपकुले सवात्सके ।
विदन्निदं त्वमपि विवेशिथ प्रभो
सुहृज्जनं विशरणमाशु रक्षितुम् ॥५॥

प्रमादत: प्रविशति	प्रमाद से घुस जाने से
पन्नग-उदरं	अजगर के पट में
क्वथत्-तनौ	जलते हुए तन वाले
पशुपकुले सवात्सके	गोपकुमारों के बछडों सहित
विदन्-इदम् त्वम्-अपि	जानते हुए यह आप भी
विवेशिथ प्रभो	घुस गये हे प्रभो!
सुहृत्-जनं	मित्र जनों

विशरणम्-	के शरण
आशु रक्षितुम्	तुरन्त रक्षा करने के लिये

बछडों के सहित गोपकुमारों के प्रमादवश अजगर के पेट में घुस जाने पर उनके तन जलने लगे। मित्र जनों के शरण हे प्रभो! यह सब जानते हुए आप भी तुरन्त उनकी रक्षा करने के लिये अन्दर घुस गये।

गलोदरे विपुलितवर्ष्मणा त्वया
महोरगे लुठति निरुद्धमारुते ।
द्रुतं भवान् विदलितकण्ठमण्डलो
विमोचयन् पशुपपशून् विनिर्ययौ ॥६॥

गल-उदरे	गले के भीतर में
विपुलित-वर्ष्मणा	बढाते हुए शरीर से
त्वया	आपके द्वारा
महोरगे लुठति	महान अजगर के छटपटाने से
निरुद्ध-मारुते	रुक जाने से प्राण वायु के
द्रुतं भवान्	शीघ्रता से आपने
विदलित-कण्ठ-मण्डल:	चीरते हुए कण्ठ प्रदेश को
विमोचयन् पशुप-पशून्	छुडा कर गोपों और बछडों को
विनिर्ययौ	निकल आए

उस विशाल अजगर के गले के भीतर आपने अपने शरीर को बढा लिया जिससे उसकी प्राण वायु रुक गई और वह छटपटाने लगा। तब शीघ्रता से आपने उसके कण्ठ प्रदेश को फाड डाला और गोपों और बछडों को छुडा कर निकल आए।

क्षणं दिवि त्वदुपगमार्थमास्थितं
महासुरप्रभवमहो महो महत् ।
विनिर्गते त्वयि तु निलीनमञ्जसा
नभ:स्थले ननृतुरथो जगु: सुरा: ॥७॥

क्षणं दिवि	क्षण मात्र के लिये आकाश में
त्वत्-उपगम-अर्थम्-आस्थितं	आपके निकलने की प्रतीक्षा में रुका रहा
महा-असुर-प्रभवम्-	महान असुर से निकला हुआ
अहो महः महत्	अहो! महान तेज
विनिर्गते त्वयि तु	निकल जाने पर आपके तब फिर
निलीनम्-अञ्जसा	विलीन हो गया तुरन्त (आप ही में)
नभः-स्थले	आकाश स्थल में
ननृतुः-अथः	नाचने लगे तब
जगुः सुराः	गाने लगे देवता

अहो! उस विशाल असुर से निकला हुआ महान तेज क्षण मात्र के लिये आपके निकलने की प्रतीक्षा में आकाश में रुका रहा। आपके निकलते ही वह आप ही में विलीन हो गया। आकाश मे स्थित देवता नाचने और गाने लगे।

सविस्मयैः कमलभवादिभिः सुरै-
रनुद्रुतस्तदनु गतः कुमारकैः ।
दिने पुनस्तरुणदशामुपेयुषि
स्वकैर्भवानतनुत भोजनोत्सवम् ॥८॥

सविस्मयैः	विस्मय सहित
कमलभव-आदिभिः	ब्रह्मा आदि
सुरैः-अनुद्रुतः	देवताओं के द्वारा पीछा करते हुए
तदनु गतः	उसके बाद आप चले गये
कुमारकैः दिने पुनः-	गोप कुमारों के साथ जब दिन फिर से
तरुण-दशाम्-उपेयुषि	तरुण दशा को प्राप्त हुआ (मध्याह्न हुआ)
स्वकैः भवान्-	स्वजनों के साथ आपने

अतनुत भोजन-उत्सवम्	प्रारम्भ किया भोजनोत्सव

ब्रह्मा आदि देवता सविस्मय आपको देखते हुए आपके पीछे चलने लगे। दिन के तरुण दशा प्राप्त करने पर, अर्थात, मध्याह्न होने पर, आप गोप कुमारों और स्वजनों के साथ चले गये और भोजनोत्सव प्रारम्भ किया।

विषाणिकामपि मुरलीं नितम्बके
निवेशयन् कबलधरः कराम्बुजे ।
प्रहासयन् कलवचनैः कुमारकान्
बुभोजिथ त्रिदशगणैर्मुदा नुतः ॥९॥

विषाणिकाम्-अपि	सींग और
मुरलीं नितम्बके	मुरली को कटि प्रदेश में
निवेशयन्	खोंस कर
कबलधरः कराम्बुजे	ग्रास ले कर करकमल में
प्रहासयन्	हंसाते हुए
कलवचनैः	हास्यपूर्ण बातों से
कुमारकान् बुभोजिथ	कुमारों को, आपने खाया
त्रिदशगणैः	देवों के द्वारा
मुदा नुतः	मोद से स्तुति किये जाते हुए

आपने सींग और मुरली को अपने कटि प्रदेश में खोंस लिया और करकमल में ग्रास ले कर हास्यपूर्ण बातों से कुमारों को हंसाते हुए खाना आरम्भ किया। प्रमुदित देवगण आपकी स्तुति करने लगे।

सुखाशनं त्विह तव गोपमण्डले
मखाशनात् प्रियमिव देवमण्डले ।
इति स्तुतस्त्रिदशवरैर्जगत्पते
मरुत्पुरीनिलय गदात् प्रपाहि माम् ॥१०॥

सुख-अशनम् तु -इह	यहां तो सुख से भोजन करना

तव गोप-मण्डले	आपका गोप मण्डली के बीच
मख-अशनात्	यज्ञ भोजन से (अधिक)
प्रियम्-इव	प्रिय ही है
देव-मण्डले	देव मण्डल में
इति स्तुतः-त्रिदशवरैः-	इस प्रकार स्तुतित देवों के द्वारा
जगत्पते	हे जगत्पते!
मरुत्पुरीनिलय	मरुत्पुरी निवासी!
गदात् प्रपाहि माम्	रोगों से रक्षा करें मेरी

' यहां गोप मण्डली के बीच भोजन करना ही आपको देव मण्डल में यज्ञ भोजन करने से अधिक प्रिय है'। हे जगत्पति! इस प्रकार देवों ने आपकी स्तुति की। हे मरुत्पुरी निवासिन! रोगों से मेरी सुरक्षा करें।

दशक ५२

अन्यावतारनिकरेष्वनिरीक्षितं ते
भूमातिरेकमभिवीक्ष्य तदाघमोक्षे ।
ब्रह्मा परीक्षितुमना: स परोक्षभावं
निन्येऽथ वत्सकगणान् प्रवितत्य मायाम् ॥१॥

अन्य-अवतार-निकरेषु-	अन्य अवतारों के समूहों को
अनिरीक्षितं ते	नहीं देखने के कारण आपके
भूमातिरेकम्-अभिवीक्ष्य	वैभव अतिरेक को देख कर
तदा-अघ-मोक्षे	तब अघासुर के मोक्ष (वृतान्त) में
ब्रह्मा परीक्षितु-मना:	ब्रह्मा परीक्षा करने के इच्छुक
स परोक्षभावं	वह अदृश्यता को
निन्ये-अथ	ले गये तब
वत्सक-गणान्	बछडों को
प्रवितत्य मायाम्	विस्तार कर के माया का

आपके अन्यान्य अवतारों को न देखने के कारण, तथा आपके वैभव से अनभिज्ञ ब्रह्मा ने जब आपके वैभवातिरेक को अघासुर के मोक्ष के वृतान्त में देखा, तब उन्होंने आपकी परीक्षा लेनी चाही और अपनी माया का विस्तार कर के बछडों को अदृष्य कर दिया।

वत्सानवीक्ष्य विवशे पशुपोत्करे ता-
नानेतुकाम इव धातृमतानुवर्ती ।
त्वं सामिभुक्तकबलो गतवांस्तदानीं
भुक्तांस्तिरोऽधित सरोजभव: कुमारान् ॥२॥

वत्सान्-अनवीक्ष्य	गोवत्सों को न देख कर
विवशे पशुप-उत्करे	चिन्तित हो जाने पर गोपवत्स गणों के
तान्-आनेतुकाम इव	उनको लाने की चेष्टा करते हुए से

धातृ-मत-अनुवर्ती	(यथार्थ में) ब्रह्मा की इच्छा के अनुकूल
त्वं सामिभुक्त-कबल:	आप आधे खाये हुए ग्रास वाले
गतवान्-तदानीम्	चले गये, उस समय
भुक्तान्-तिरोऽधित	खाते हुए (उनको) अदृष्य कर दिया
सरोजभव: कुमारान्	ब्रह्मा ने कुमारों को

गोपवत्स गण बछडों को न देख कर चिन्तित हो गये। ब्रह्मा की इच्छा के अनुकूल, मानो उनको खोज लाने के लिये, आप आधा खाया हुआ ग्रास हाथ में ले कर ही आप चले गये। तब ब्रह्मा ने भोजन करते हुए कुमारों को भी अदृष्य कर दिया।

वत्सायितस्तदनु गोपगणायितस्त्वं
शिक्यादिभाण्डमुरलीगवलादिरूप: ।
प्राग्वद्विहृत्य विपिनेषु चिराय सायं
त्वं माययाऽथ बहुधा व्रजमाययाथ ॥३॥

वत्सायित:-तदनु	धारण कर के बछडों का रूप उसके बाद
गोपगणायित:-त्वं	धारण कर के गोप कुमारों का स्वरूप, आप
शिक्य-आदि-	गुलेल आदि
भाण्ड-मुरली-	पात्र, मुरली
गवल-आदि-रूप:	सींग आदि रूप
प्राक्-वत्-विहृत्य	पहले के जैसे विचरते हुए
विपिनेषु चिराय	वनों में बहुत समय तक
सायं त्वं	सन्ध्या समय में आप
मायया-अथ बहुधा	माया के द्वारा बहुत प्रकार से
व्रजम्-आययाथ	व्रज को आ गये

तत्पश्चात माया से, आपने गोवत्स और गोपवत्सों का रूप धारण कर लिया और गुलेल, पात्र, मुरली, सींग आदि का भी रूप धर कर, आप पहले की ही भांति वन में विचरने लगे। सन्ध्या के समय आप इन अनेक रूपों में व्रज लौट आये।

त्वामेव शिक्यगवलादिमयं दधानो
भूयस्त्वमेव पशुवत्सकबालरूपः ।
गोरूपिणीभिरपि गोपवधूमयीभि-
रासादितोऽसि जननीभिरतिप्रहर्षात् ॥४॥

त्वाम्-एव	आप ही को
शिक्य-गवल-आदि-मयं	गुलेल सींग आदि रूपों में
दधानः	पकडे हुए
भूयः-त्वम्-एव	फिर से आप ही
पशु-वत्सक-बाल-रूपः	बछडे और बलकों के स्वरूप में
गो-रूपिणीभिः-अपि	गौओं के रूप में भी
गोप-वधूमयीभिः	(और) गोपियों के रूप में भी
आसादितः-असि	(आपका) स्वागत किया गया
जननीभिः-	माताओं के द्वारा
अति-प्रहर्षात्	अत्यन्त प्रफुल्लता के साथ

आप ही बछडों के रूप में थे और आप ही गोपबालकों के रूप में पकडे हुए थे स्वयं को ही गुलेल, सींग आदि रूप में। गौ तथा गोपियों रूपी माताओं ने अत्यन्त प्रफुल्लता के साथ बछडों और बालकों के रूप में आपका स्वागत किया।

जीवं हि कञ्चिदभिमानवशात्स्वकीयं
मत्वा तनूज इति रागभरं वहन्त्यः ।
आत्मानमेव तु भवन्तमवाप्य सूनुं
प्रीतिं ययुर्न कियतीं वनिताश्च गावः ॥५॥

जीवं हि किञ्चित्-	जीव ही कुछ
अभिमान-वशात्-	अभिमान से वशीभूत हो कर
स्वकीयं मत्वा	अपना मान कर
तनूज इति	(मेरा) पुत्र है इस प्रकार

रागभरं वहन्त्य:	ममत्व से बन्ध जाता है
आत्मानम्-एव तु	आत्म स्वरूप स्वयं
भवन्तम्-अवाप्य	आपको पा कर
सूनुं प्रीतिम्	पुत्र स्नेह को (पा कर)
ययु:-न कियतीं	पाया नही किन (अवस्थाओं) को
वनिता:-च गाव:	गोपियों और गायों ने

सामान्य जीव 'मैं' 'मेरा' के वशीभूत हो कर 'मेरा पुत्र' इस प्रकार मान कर ममत्व में बन्ध जाते हैं। पुत्र स्नेह के पात्र आत्मस्वरूप स्वयं आपको गोपिकायें पुत्र रूप में और गौएं बछडों के रूप में, पा कर किन आनन्द की अवस्थाओं को नहीं पहुंच गईं!

एवं प्रतिक्षणविजृम्भितहर्षभार-
निश्शेषगोपगणलालितभूरिमूर्तिम् ।
त्वामग्रजोऽपि बुबुधे किल वत्सरान्ते
ब्रह्मात्मनोरपि महान् युवयोर्विशेष: ॥६॥

एवं प्रतिक्षण-	इस प्रकार, हर क्षण
विजृम्भित-हर्षभार-	बढते हुए हर्षातिरेक से
निश्शेष-गोपगण-	समस्त गोपजन
लालित-भूरिमूर्तिम्	लालन करते रहे आपके अनेक स्वरूपों का
त्वाम्-अग्रज:-अपि	आपको (आपके) अग्रज (बलराम) भी
बुबुधे किल	पहचान पाये निश्चय से
वत्सर-अन्ते	वर्ष के अन्त में ही
ब्रह्मात्मन:-अपि	ब्रह्मस्वरूप भी
महान् युवयो:	महान, आप दोनों में
विशेष:	अन्तर है

इस प्रकार प्रतिदिन, प्रतिपल बढते हुए आपके विभिन्न स्वरूपों का समस्त गोप वृन्द हर्षातिरेक के साथ लालन करते रहे। आपके अग्रज बलराम भी आपको वर्ष के अन्त में ही पहचान पाये। आप दोनों ही ब्रह्म स्वरूप हैं, लेकिन आप दोनों में महान अन्तर है। आप विशेष हैं।

वर्षावधौ नवपुरातनवत्सपालान्
दृष्ट्वा विवेकमसृणे द्रुहिणे विमूढे ।
प्रादीदृशः प्रतिनवान् मकुटाङ्गदादि
भूषांश्चतुर्भुजयुजः सजलाम्बुदाभान् ॥७॥

वर्ष-अवधौ	एक वर्ष की अवधि (समाप्त) होने पर
नव-पुरातन-	नये और पुराने
वत्सपालान्	बछडों और गोपालकों को
दृष्ट्वा विवेकम्-असृणे	देख कर विवेक छोड बैठे
द्रुहिणे विमूढे	ब्रह्मा विमोहित हो गये
प्रादीदृशः प्रतिनवान्	(तब) दिखाया (आपने) प्रत्येक नये वालों को
मकुट-अङ्गद-आदि भूषान्-	मुकुट अङ्गद आदि भूषण वाले
चतुर्भुज-युजः	चार भुजा युक्त
सजल-अम्बुद-आभान्	जल वाले मेघ की आभा वाले

एक वर्ष की अवधि के अन्त में नये और पुराने बछडो और गोपालकों को देख कर ब्रह्मा विस्मित और विमोहित हो गये और उनका विवेक लुप्त हो गया। तब आपने प्रत्येक नये बछडे और गोपालक को मुकुट अङ्गद आदि भूषणों से भूषित चार भुजाओं से युक्त तथा जलपूर्ण मेघों की आभा वाले रूप में दिखाया।

प्रत्येकमेव कमलापरिलालिताङ्गान्
भोगीन्द्रभोगशयनान् नयनाभिरामान् ।
लीलानिमीलितदृशः सनकादियोगि-
व्यासेवितान् कमलभूर्भवतो ददर्श ॥८॥

प्रत्येकम्-एव	प्रत्येक को भी

कमला-परिलालित-अङ्गान्	लक्ष्मी के द्वारा लालित अङ्गों वाले
भोगीन्द्र-भोग-शयनान्	आदिशेष शय्या पर सोए हुए
नयन-अभिरामान्	नयनाभिराम उनको
लीला-निमीलित-दृश:	लीला पूर्वक बन्द किये हुए नेत्रों को
सनक-आदि-योगि-	सनक आदि योगियों द्वारा
व्यासेवितान्	तत्परता से सेवित
कमलभू:-	ब्रह्मा ने
भवत: ददर्श	आपको देखा

नयनाभिराम उन सभी गोपालकों के अङ्ग लक्ष्मी के द्वारा लालित थे, सभी आदिशेष शय्या पर शायित थे, सभे ने लीलापूर्वक नेत्र मूंद रखे थे, और सभी सनकादि मुनियों के द्वारा तत्परता से सेवित थे। ब्रह्मा ने प्रत्येक गोपाल और गोवत्स को आप ही के स्वरूप में देखा।

नारायणाकृतिमसंख्यतमां निरीक्ष्य
सर्वत्र सेवकमपि स्वमवेक्ष्य धाता ।
मायानिमग्नहृदयो विमुमोह याव-
देको बभूविथ तदा कबलार्धपाणि: ॥९॥

नारायण-आकृतिम्-	नारायण की आकृति को
असंख्यतमां	असंख्य रूपों में
निरीक्ष्य सर्वत्र	देख कर सभी ओर
सेवकम्-अपि	सेवक भी
स्वम्-अवेक्ष्य धाता	स्वयं को देख कर ब्रह्मा
माया-निमग्न-हृदय:	माया मे निमग्न हृदय
विमुमोह यावत्-	विमोहित हो गये जब
एक: बभूविथ तदा	एक हो गये (आप) तब

कबल-अर्ध-पाणि:	कौर आधा (खाया हुआ) हाथ में लिये हुए

सभी ओर असंख्य रूपों में नारायण की आकृति को देख कर, और हर आकृति के संग स्वयं को सेवक के रूप में देख कर ब्रह्मा का हृदय माया में निमग्न हो गया और वे विमोहित हो गये। तब आपने अपने रूपों को एकत्रित कर लिया और हाथ में आधा खाया हुआ कौर ले कर एक रूप हो गये।

नश्यन्मदे तदनु विश्वपतिं मुहुस्त्वां
नत्वा च नूतवति धातरि धाम याते ।
पोतैः समं प्रमुदितैः प्रविशन् निकेतं
वातालयाधिप विभो परिपाहि रोगात् ॥१०॥

नश्यन्-मदे तदनु	नष्ट हो जाने पर दम्भ के तब
विश्वपतिं मुहुः-	विश्वपति (आपको) बारंबार
त्वाम् नत्वा	आपको नमन कर के
च नूतवति धातरि	और स्तवन कर के ब्रह्मा के
धाम याते	धाम को चले जाने पर
पोतैः समं प्रमुदितैः	बालकों के सङ्ग प्रसन्न
प्रविशन् निकेतं	चले गये घर को
वातालयाधिप विभो	वातालयाधिप विभो!
परिपाहि रोगात्	रक्षा कीजिये रोगों से

दम्भ नष्ट हो जाने पर ब्रह्मा आपको बारंबार नमन करके और आपका स्तवन करके अपने धाम चले गये। आप भी प्रमुदित बालकों के सङ्ग घर चले गये। हे वातालयाधिप विभो! रोगों से मेरी रक्षा कीजिये।

दशक ५३

अतीत्य बाल्यं जगतां पते त्वमुपेत्य पौगण्डवयो मनोज्ञं ।
उपेक्ष्य वत्सावनमुत्सवेन प्रावर्तथा गोगणपालनायाम् ॥१॥

अतीत्य बाल्यम्	पार करके बाल्यकाल
जगतां पते	हे जगत्पति!
त्वम्-उपेत्य	आप प्राप्त करके
पौगण्ड-वय: मनोज्ञम्	लडकपन की अवस्था को मनोहर
उपेक्ष्य वत्सावनम्-	छोड कर बछडो को चराना
उत्सवेन प्रावर्तथा	उत्साह पूर्वक प्रवृत हुए
गो-गण-पालनायाम्	गो गणों के चारण में

हे जगत्पति! बाल्यावस्था को पार करके आपने पौगण्ड (लडकपन) अवस्था में प्रवेश किया। तब बछडों को चराना छोड कर गो गण के चारण में सोत्साह प्रवृत हुए।

उपक्रमस्यानुगुणैव सेयं मरुत्पुराधीश तव प्रवृत्ति: ।
गोत्रापरित्राणकृतेऽवतीर्णस्तदेव देवाऽऽरभथास्तदा यत् ॥२॥

उपक्रमस्य-	प्रारम्भ के लिये
अनुगुण-एव	अनुरूप ही
सा-इयं	वह यह
मरुत्पुराधीश	हे मरुत्पुराधीश!
तव प्रवृत्ति:	आपकी प्रवृत्ति है
गोत्रा-परित्राण-	पृथ्वी की रक्षा
कृते-अवतीर्ण:-	करने के लिये अवतरित
तत्-एव	वह ही

देव-आरभथा:-	हे देव! प्रारम्भ किया
तदा यत्	तब जिससे

हे देव! हे मरुत्पुराधीश! क्योंकि आपका यह अवतार (गो) पृथ्वी की रक्षा के निमित्त ही है, और गो रक्षा का कार्य उस ओर बढने का प्रथम उपक्रम है, अतएव आपकी यह प्रवृति आपके भविष्य के कार्यक्रम के अनुरूप ही है।

कदापि रामेण समं वनान्ते वनश्रियं वीक्ष्य चरन् सुखेन ।
श्रीदामनाम्न: स्वसखस्य वाचा मोदादगा धेनुककाननं त्वम् ॥३॥

कदापि रामेण समं	एकबार बलराम के साथ
वनान्ते	वन के अन्त में
वनश्रियं वीक्ष्य	वन के सौन्दर्य को देख कर
चरन् सुखेन	विचरण करते हुए सुख से
श्रीदाम-नाम्न:	श्रीदाम नाम के
स्वसखस्य वाचा	अपने सखा के कहने से
मोदात्-अगा:	प्रसन्नता से गये
धेनुक-काननं	धेनुक वन को
त्वम्	आप

एकबार बलराम के साथ, वन की शोभा देखते हुए आप सुख से वन में विचरण कर रहे थे। तभी सुदामा नाम के अपने एक मित्र के कहने पर आप प्रसन्नता पूर्वक धेनुक वन में गये।

उत्तालतालीनिवहे त्वदुक्त्या बलेन धूतेऽथ बलेन दोर्भ्याम् ।
मृदु: खरश्चाभ्यपतत्पुरस्तात् फलोत्करो धेनुकदानवोऽपि ॥४॥

उत्ताल-ताली-निवहे	ऊंचे ताल वृक्षों के झुण्ड में
त्वत्-उक्त्या	आपके कहने से
बलेन धूते-अथ	बलराम के द्वारा झकझोडेजाने से तब

बलेन दोर्भ्याम्	बलपूर्वक दोनों हाथों से
मृदुः खरः-च-	मीठे और कडे
अभ्यपतत्-पुरस्तात्	गिर पडे सामने
फल-उत्करः	फलों के ढेर
धेनुक-दानवः-अपि	धेनुक दैत्य भी
(खरः-च अभ्यपतत्)	(गर्दभ के रूप में आ गिरा)

आपके कहने से बलराम ने दोनों हाथों से ऊंचे ऊंचे ताल वृक्षों को बलपूर्वक झकझोड दिया। तब मीठे और कडे ताल फलों का ढेर सामने गिरा और गर्दभ रूपधारी धेनुकासुर भी उसी समय सामने उपस्थित हुआ।

समुद्यतो धैनुकपालनेऽहं कथं वधं धैनुकमद्य कुर्वे ।
इतीव मत्वा ध्रुवमग्रजेन सुरौघयोद्धारमजीघनस्त्वम् ॥५॥

समुद्यतः	संलग्न हूं
धैनुक-पालने-अहं	धेनु समूह के पालन में मैं
कथं	कैसे
वधं धैनुकम्-अद्य	वध धेनुक का आज
कुर्वे इति-इव	करूं इस प्रकार से
मत्वा	मान कर
ध्रुवम्-अग्रजेन	अवश्यमेव बडे भाई के द्वारा
सुरौघ-योद्धारम्-	देवों के शत्रु को
अजीघनः-त्वम्	मरवाया आपने

'मैं धेनू समूह के पालन में संलग्न हूं, अत: मैं धेनुक को कैसे मार सकता हूं?' अवश्यमेव इसी प्रकार सोच कर आपने अपने अग्रज के द्वारा उस देवद्रोही धेनुकासुर का वध करवाया।

तदीयभृत्यानपि जम्बुकत्वेनोपागतानग्रजसंयुतस्त्वम् ।

जम्बूफलानीव तदा निरास्थस्तालेषु खेलन् भगवन् निरास्थ: ॥६॥

तदीय-भृत्यान्-अपि	उसके भृत्य गणों को भी
जम्बुकत्वेन-उपागतान्-	सियार रूप में आये हुओं को
अग्रज-संयुत:-त्वम्	अग्रज के साथ मिल कर आपने
जम्बु-फलानि-इव	जामुन के फलों की भांति
तदा निरास्थ:-	तब मसल डाला
तालेषु खेलन्	ताल वृक्षो के बीच खेलते हुए
भगवन्	हे भगवन!
निरास्थ:	बिना परिश्रम के

सियार के रूप में आये हुए धेनुकासुर के भृत्यगणों को भी, ताल वृक्षों के वन में, अग्रज के साथ, खेल खेल में ही बिना किसी श्रम के जामुन के फलों के समान मसल डाला।

विनिघ्नति त्वय्यथ जम्बुकौघं सनामकत्वाद्वरुणस्तदानीम् ।
भयाकुलो जम्बुकनामधेयं श्रुतिप्रसिद्धं व्यधितेति मन्ये ॥७॥

विनिघ्नति	मारते समय
त्वयि अथ	आपके तब
जम्बुक-औघं	(उस) जम्बुक झुण्ड के
सनामकत्वात्-	सनामधारी होने के कारण
वरुण:-तदानीम्	वरुण ने उस समय
भयाकुल:	भयभीत हो कर
जम्बुक-नाम-धेयं	जम्बुक नाम वाला (अपना नाम)
श्रुति-प्रसिद्धं व्यधित-	(जो) वेदों में प्रसिद्ध छुपा लिया (वेदों ही में)

इति मन्ये	ऐसा मानता हूं

जिस समय आप जम्बुकों के झुण्ड को मार रहे थे, उस समय, सनामधारी वरुण ने भयभीत हो कर, वेदों में प्रसिद्ध अपने 'जम्बुक' नाम को वेदों ही में छुपा दिया। ऐसा मैं मानता हूं।

तवावतारस्य फलं मुरारे सञ्जातमद्येति सुरैर्नुतस्त्वम् ।
सत्यं फलं जातमिहेति हासी बालैः समं तालफलान्यभुङ्क्थाः ॥८॥

तव-अवतारस्य फलं	आपके अवतार का फल
मुरारे	हे मुरारि!
सञ्जातम्-अद्य-	प्राप्त हुआ आज
इति सुरैः-नुतः त्वम्	इस प्रकार कहते हुए देवों ने स्तुति की आपकी
सत्यं फलं	यथार्थ में फल
जातम्-इह-इति	प्राप्त हुआ यहां इस प्रकार
हासी बालैः समं	हंसते हुए बालकों के संग
ताल फलानि-	ताल फलों को
अभुङ्क्थाः	खाया

'हे मुरारे! आपके अवतार का फल आज प्राप्त हुआ है", इस प्रकार कहते हुए देवताओं ने आपकी स्तुति की। आपने भी हंसते हुए कहा कि 'यथार्थ में आज फलों की प्राप्ति हुई है", और ऐसा कहते हुए आपने गोपबालकों के संग ताल फल खाये।

मधुद्रवस्रुन्ति बृहन्ति तानि फलानि मेदोभरभृन्ति भुक्त्वा ।
तृप्तैश्च दृप्तैर्भवनं फलौघं वहद्भिरागाः खलु बालकैस्त्वम् ॥९॥

मधुद्रव-स्रुन्ति	मधुर रसों से झरते हुए
बृहन्ति तानि फलानि	बडे बडे वे फल
मेदोभर-भृन्ति	गूदे से भरे हुए

भुक्त्वा तृप्तै:-च	खा कर और तृप्त हो कर
दृप्तै:-भवनं	गर्व के साथ घर को
फलौघं वहद्भि:-	फलों के गुच्छों को ले जाते हुए
आगा: खलु	आये निश्चय ही
बालकै:-त्वम्	बालकों के साथ आप

उन बडे बडे फलों से रस झर रहा था और वे गूदे से भरे हुए थे। उन्हें खा कर तृप्त हुए आप गर्व सहित फलों के गुच्छों को ले कर बालकों के साथ घर लौटे।

हतो हतो धेनुक इत्युपेत्य फलान्यदद्भिर्मधुराणि लोकै: ।
जयेति जीवेति नुतो विभो त्वं मरुत्पुराधीश्वर पाहि रोगात् ॥१०॥

हत: हत: धेनुक:	मारा गया मारा गया धेनुकासुर
इति-उपेत्य	ऐसा कहते हुए आ कर
फलानि-अदद्भि:-	फलों को खाते हुए
मधुराणि	मधुर
लोकै: जय-इति	लोगों ने (कहा) जय हो
जीव-इति	जीवित रहें इस प्रकार
नुत: विभो त्वं	स्तुत हुए हे विभो! आप
मरुत्पुराधीश्वर	हे मरुत्पुराधीश्वर!
पाहि रोगात्	रक्षा करें रोगों से

'मारा गया, धेनुकासुर मारा गया', इस प्रकार कहते हुए और मधुर फल खाते हुए लोग आये, और 'जय हो, चिरंजीवी हों' ऐसा कहते हुए हे विभो! आपकी स्तुति की। हे मरुत्पुराधीश्वर! रोगों से रक्षा करें।

दशक ५४

त्वत्सेवोत्कस्सौभरिर्नाम पूर्वं
कालिन्द्यन्तर्द्वादशाब्दम् तपस्यन् ।
मीनव्राते स्नेहवान् भोगलोले
तार्क्ष्यं साक्षादैक्षताग्रे कदाचित् ॥१॥

त्वत्-सेव-उत्कः-	आपकी सेवा के लिये उत्सुक
सौभरिः-नाम	सौभरि नाम के (मुनि)
पूर्वं कालिन्दि-अन्तः-	बहुत पहले कालिन्दि (यमुना) के अन्दर
द्वादश-आब्दम्	बारह वर्ष तक
तपस्यन्	तपस्या करते हुए
मीनव्राते	मत्स्य समूह में
स्नेहवान् भोगलोले	स्नेहासक्त हो गये (जो) क्रीडारत थे
तार्क्ष्यम्	गरुड को
साक्षात्-ऐक्षत-अग्रे	साक्षात देखा सामने
कदाचित्	एकबार

बहुत पहले, आपकी सेवा में समुत्सुक सौभरि नाम के मुनि बारह वर्षों तक यमुना नदी के जल में तपस्या करते रहे। उस जल में क्रीडारत मत्स्यों में वे स्नेहासक्त हो गये। एकबार उन्होंने अपने समक्ष साक्षात गरुड को देखा।

त्वद्वाहं तं सक्षुधं तृक्षसूनुं
मीनं कञ्चिज्जक्षतं लक्षयन् सः ।
तप्तश्चित्ते शप्तवानत्र चेत्त्वं
जन्तून् भोक्ता जीवितं चापि मोक्ता ॥२॥

त्वत्-वाहं	आपके वाहन
तं सक्षुधं तृक्षसूनुं	उस क्षुधित गरुड को

मीनं कञ्चित्-	मछली कोई
जक्षतं लक्षयन्	खाते हुए देख कर
स तप्त:- चित्ते	उसने सन्तप्त चित्त हो कर
शप्तवान्-	शाप दिया
अत्र चेत्-त्वं	यहां यदि तुम
जन्तून् भोक्ता	जन्तुओं का भोग करोगे
जीवितं च-अपि	जीवन को भी
मोक्ता	मुक्त करोगे

आपके वाहन उस क्षुधित गरुड को किसी मछली को खाते देख कर सन्तप्त चित्त वाले सौभरि ने शाप देते हुए कहा कि 'यहां यदि तुम किसी जन्तु को खाओगे तो अपने जीवन से मुक्त हो जाओगे', अर्थात मर जाओगे।

तस्मिन् काले कालिय: क्ष्वेलदर्पात्
सर्पाराते: कल्पितं भागमश्नन् ।
तेन क्रोधात्त्वत्पदाम्भोजभाजा
पक्षक्षिप्तस्तद्दुरापं पयोऽगात् ॥३॥

तस्मिन् काले	उसी समय
कालिय: क्ष्वेल-दर्पात्	कालिय (अपने) विष के मद से
सर्प-आराते: कल्पितं	सर्पों के शत्रु (गरुड) के लिये रखा हुआ
भागम्-अश्नन्	भाग खा गया
तेन क्रोधात्-	उससे क्रोधित हो कर
त्वत्-पद-अम्भोज-भाजा	आपके चरण कमल के सेवक (गरुड) के
पक्ष-क्षिप्त:-	पंख (की मार से) फेंका गया
तत्-दुरापम्	उसके (गरुड के) लिये अगम्य

पयः-अगात्	(यमुना के) जल में चला गया

उसी समय कालिय नाम का सर्प अपने विष के मद से सर्पों के शत्रु गरुड के लिये रखा हुआ भाग खा गया। इससे क्रोधित हो कर, आपके चरण कमलों के सेवक गरुड ने उसे अपने पंख से मारा जिससे वह यमुना के जल में ऐसे स्थान पर चला गया जो गरुड के लिये अगम्य था।

घोरे तस्मिन् सूरजानीरवासे
तीरे वृक्षा विक्षता: क्ष्वेलवेगात् ।
पक्षिव्राता: पेतुरभ्रे पतन्त:
कारुण्यार्द्रं त्वन्मनस्तेन जातम् ॥४॥

घोरे तस्मिन्	जब क्रूर वह (कालिय)
सूरजा-नीर-वासे	सूर्य पुत्री (यमुना) के जल में वास कर रहा था
तीरे वृक्षा	किनारे के वृक्ष
विक्षताः क्ष्वेल-वेगात्	नष्ट हो गये विष के वेग से
पक्षिव्राताः पेतुः-	पक्षी गण गिर पडे
अभ्रे पतन्तः	आकाश में उडते हुए
कारुण्य-आर्द्रम्	करुणा से द्रवीभूत
त्वत्-मनः-	आपका मन
तेन जातम्	उससे (यह देख कर) हो गया

वह क्रूर कालिय जब सूर्य पुत्री यमुना में वास कर रहा था, उसके विष के वेग से किनारे के वृक्ष नष्ट हो गये। आकाश में उडते हुए पक्षी गण उस विष के कारण मर कर गिरने लगे। यह सब देख कर आपका मन करुणा से द्रवीभूत हो गया।

काले तस्मिन्नेकदा सीरपाणिं
मुक्त्वा याते यामुनं काननान्तम् ।
त्वय्युद्दामग्रीष्मभीष्मोष्मतप्ता
गोगोपाला व्यापिबन् क्ष्वेलतोयम् ॥५॥

काले तस्मिन्-	समय में उस

एकदा	एकबार
सरिपाणिं मुक्त्वा	बलराम को छोड कर
याते यामुनं	गये (आप) यमुना के
कानन-अन्तम् त्वयि-	वन के अन्त में आप
उद्दाम-ग्रीष्म-	भीषण ग्रीष्म (ऋतु के कारण)
भीष्म-ऊष्म-तप्ता	अत्यधिक गर्मी से सन्तप्त
गो-गोपाला	गौओं और गोपलों ने
व्यापिबन्	पी लिया
क्ष्वेल-तोयम्	विषयुक्त जल

उस समय एक बार आप बलराम के बिना यमुना नदी के किनारे के जङ्गल के अन्दर चले गये। भीषण ग्रीष्म ऋतु की अत्यधिक कडी धूप से सन्तप्त गौओं और गोपबालकों ने वह विषाक्त जल पी लिया।

नश्यज्जीवान् विच्युतान् क्ष्मातले तान्
विश्वान् पश्यन्नच्युत त्वं दयार्द्र: ।
प्राप्योपान्तं जीवयामासिथ द्राक्
पीयूषाम्भोवर्षिभि: श्रीकटक्षै: ॥६॥

नश्यत्-जीवान्	नष्ट हुए जीवन वाले
विच्युतान् क्ष्मातले	गिरे हुए धरती पर
तान् विश्वान् पश्यन्-	उन सब को देख कर
अच्युत त्वं दयार्द्र:	हे अच्युत आप दया से द्रवित हो कर
प्राप्य-उपान्तं	पहुंच कर पास में
जीवयामासिथ	जिला दिया
द्राक्	शीघ्र

पीयूष-अम्भो-वर्षिभि:	अमृत युक्त जल की वर्षा से
श्रीकटाक्षै:	मङ्गल दृष्टि से

उन सब का जीवन नष्ट हो गया और वे सब धरती पर गिर पडे। हे अच्युत! उन सभी की यह अवस्था देख कर आप दया से द्रवित हो गये और निकट जा कर अपनी मङ्गलमय दृष्टि के अमृतमय जल की वर्षा करके उन्हें पुनर्जीवित कर दिया।

किं किं जातो हर्षवर्षातिरेक:
सर्वाङ्गेष्वित्युत्थिता गोपसङ्घा: ।
दृष्ट्वाऽग्रे त्वां त्वत्कृतं तद्विदन्त-
स्त्वामालिङ्गन् दृष्टनानाप्रभावा: ॥७॥

किं किं जात:	क्या क्या हुआ
हर्ष-वर्षा-अतिरेक:	हर्ष की वर्षा का अतिरेक
सर्व-अङ्गेषु-	सभी अङ्गों में
इति-उत्थिता	इस प्रकार पुनर्जीवित हुए
गोपसङ्घा:	गोपालक गण
दृष्ट्वा-अग्रे त्वां	देख कर सामने आपको
त्वत्-कृतं	आपका कार्य है
तत्-विदन्त:-	यह जान कर
त्वाम्-आलिङ्गन्	आपका आलिङ्गन किया
दृष्ट-नाना-प्रभावा:	देखा हुआ था आपका (विभिन्न) प्रभाव जिन्होंने

पुनर्जीवित हुए, अङ्ग अङ्ग में हर्षातिरेक की वर्षा का अनुभव करते हुए गोपबालक गण सविस्मय कह उठे, 'यह क्या, क्या हुआ?' आपको सामने देख कर वे जान गये कि यह आप ही का कार्य है क्योंकि उन्होंने आपके विभिन्न गौरवपूर्ण प्रभावो देखे थे।

गावश्चैवं लब्धजीवा: क्षणेन
स्फीतानन्दास्त्वां च दृष्ट्वा पुरस्तात् ।
द्रागावव्रु: सर्वतो हर्षबाष्पं

व्यामुञ्चन्त्यो मन्दमुद्यन्निनादा: ॥८॥

गाव:-च-एवं	और गौएं भी
लब्ध-जीवा:	पा कर जीवन
क्षणेन	क्षण भर में
स्फीत-आनन्दा:-	आनन्द से परिपूर्ण
त्वां च दृष्ट्वा	और आपको देख कर
पुरस्तात् द्राक्	सामने शीघ्र ही
आवव्रु: सर्वत:	घेर लिया (आपको) सब तरफ से
हर्ष-वाष्पं	आनन्दाश्रु
व्यामुञ्चन्त्य:	गिराते हुए
मन्दम्-उद्यन्-निनादा:	मन्द करते हुए हुंकार

क्षण भर में गौओं ने भी जीवन प्राप्त कर लिया और आनन्द से परिपूर्ण हो उठीं। आपको सामने देख कर वे शीघ्र ही आपको चारों ओर से घेर कर खडी हो गईं और आनन्दाश्रु गिराते हुए मन्द मन्द हुंकारने लगीं।

रोमाञ्चोऽयं सर्वतो न: शरीरे
भूयस्यन्त: काचिदानन्दमूर्छा ।
आश्चर्योऽयं क्ष्वेलवेगो मुकुन्दे-
त्युक्तो गोपैर्नन्दितो वन्दितोऽभू: ॥९॥

रोमाञ्च:-अयं	रोमाञ्चपूर्ण है यह
सर्वत: न: शरीरे	सब ओर हमारे शरीर में
भूयसी-अन्त:	तीव्र है भीतर
कदाचित्-आनन्द-मूर्छा	कोई आनन्द की मूर्छा
आश्चर्य:-अयं	आश्चर्य पूर्ण है यह

क्ष्वेलवेगः	विष का वेग
मुकुन्द-	हे मुकुन्द
इति-उक्तः	ऐसा कह कर
गोपैः-नन्दितः	गोपों के द्वारा अभिनन्दित
वन्दितः-अभूः	वन्दित हुए

'हे मुकुन्द! विष का यह वेग आश्चर्यजनक है। हमारे शरीर में सब ओर रोमाञ्च हो रहा है और भीतर आनन्द की तीव्र मूर्छा व्याप रही है।' ऐसा कह कर गोपबालकों ने आपका अभिनन्दन और वन्दन किया।

एवं भक्तान् मुक्तजीवानपि त्वं
मुग्धापाङ्गैरस्तरोगांस्तनोषि ।
तादृग्भूतस्फीतकारुण्यभूमा
रोगात् पाया वायुगेहाधिनाथ ॥१०॥

एवं भक्तान्	इस प्रकार से भक्तों को
मुक्त-जीवान्-अपि	नष्ट जीवन होते हुए भी
त्वं	आप
मुग्ध-अपाङ्गैः-	मधुर कटाक्षों से
अस्तरोगान्-	रोग रहित
तनोषि	कर देते हैं
तादृक्-भूत-	इस प्रकार की
स्फीत-कारुण्य-भूमा	समुन्नत करुणाशाली
रोगात् पाया	रोगों से रक्षा करें
वायुगेहाधिनाथ	हे वायुगेहाधिनाथ!

नष्ट जीवन वाले भक्तों को भी आप इस प्रकार अपने मधुर कटाक्षों से रोगरहित कर देते हैं। इस प्रकार की समुन्नत करुणा के अधिष्ठाता, हे वायुगेहाधिनाथ! रोगों से रक्षा करें।

दशक ५५

अथ वारिणि घोरतरं फणिनं
प्रतिवारयितुं कृतधीर्भगवन् ।
द्रुतमारिथ तीरगनीपतरुं
विषमारुतशोषितपर्णचयम् ॥१॥

अथ वारिणि	तब फिर जल में
घोरतरं फणिनं	अत्यन्त घोर सर्प का
प्रतिवारयितुं	निवारण करने के लिये
कृतधी:	निश्चय कर के
भगवन्	हे भगवन!
द्रुतम्-आरिथ	शीघ्रता से आये पास
तीरग-नीप-तरुं	किनारे पर लगे हुए कदम्ब वृक्ष के
विष-मारुत-शोषित-	विषाक्त वायु से सूखे हुए
पर्ण-चयम्	पत्तों के समूह वाले

हे भगवन! फिर आपने जल में स्थित उस अत्यन्त घोर सर्प का निवारण करने का निश्चय किया। आप शीघ्रतापूर्वक यमुना के किनारे लगे हुए उस कदम्ब वृक्ष के पास आ कर उस पर चढ गये, जिसके पत्तों का समूह विषाक्त वायु से सूख गया था।

अधिरुह्य पदाम्बुरुहेण च तं
नवपल्लवतुल्यमनोज्ञरुचा ।
ह्रदवारिणि दूरतरं न्यपत:
परिघूर्णितघोरतरङ्गगणे ॥२॥

अधिरुह्य	चढ कर
पद-अम्बु-रुहेण	चरणकमल कोमल
च तं	और उस पर

नव-पल्लव-तुल्य-	नये पत्तों के समान
मनोज्ञ-रुचा	मनोहर और सुन्दर
ह्रद-वारिणि	बीच में जल के
दूरतरं न्यपतः	दूर तक छलाङ्ग लगाते हुए
परिघूर्णित-	घूमती हुई
घोर-तरङ्ग-गणे	बडी तरङ्गों के समूह वाले

आप उस पेड पर अपने नये सुन्दर और कोमल पत्तो के समान चरण कमलों से चढ गये। घूमती हुई बडी बडी तरङ्गोवाले उस जल के बीच आप ऊंची और लम्बी छलाङ्ग लगाते हुए कूद पडे।

भुवनत्रयभारभृतो भवतो
गुरुभारविकम्पिविजृम्भिजला ।
परिमज्जयति स्म धनुश्शतकं
तटिनी झटिति स्फुटघोषवती ॥३॥

भुवन-त्रय-भार-भृतः	त्रिभुवन के भार को वहन करने वाले
भवतः गुरु-भार-	आपके दीर्घ भार से
विकम्पि-विजृम्भि-जला	कम्पायमान हुई और विकसित जल वाली ने
परिमज्जयति स्म	निमग्न कर दिया
धनुः-शतकं	धनुष शतक तक के
तटिनी झटिति	तट को, शीघ्र ही
स्फुट-घोषवती	प्रस्फुटित हुआ घोर शब्द

त्रिभुवन के भार को वहन करने वाले आपके दीर्घ भार से यमुना कम्पायमान हो उठी। उसका जल प्लावित होने से धनुष तक का उसका तट जल निमग्न हो गया और उसमें से घोर शब्द प्रस्फुटित हुआ।

अथ दिक्षु विदिक्षु परिक्षुभित-
भ्रमितोदरवारिनिनादभरैः ।
उदकादुदगादुरगाधिपति-

स्त्वदुपान्तमशान्तरुषाऽन्धमना: ॥४॥

अथ दिक्षु विदिक्षु	तब दिशाओं और विदिशाओं में
परिक्षुभित-भ्रमित-	अत्यन्त क्षुभित और घूर्णित
उदर-वारि-निनाद-भरै:	जल के अन्तर भाग से निकले घोर निनाद वाले
उदकात्-उदगात्-	जल से ऊपर उठ आया
उरगाधिपति:-	नागराज
त्वत्-उपान्तम्-	आपके सामने
अशान्त-रुषा-	विचलित और क्रोध से
अन्धमना:	अन्ध मन वाला

जल के अन्तर भाग से निकलता हुआ घोर निनाद सारी दिशाओं और विदिशाओं में व्याप्त हो गया। अत्यन्त क्षुभित और घूर्णित जल से विचलित और क्रोध से अभिभूत अन्धमना नागराज जल से बाहर निकल कर आपके सम्मुख आ गया।

फणशृङ्गसहस्रविनिस्सृमर-
ज्वलदग्निकणोग्रविषाम्बुधरम् ।
पुरत: फणिनं समलोकयथा
बहुशृङ्गिणमञ्जनशैलमिव ॥५॥

फण-शृङ्ग-	फणों शिखरों (के समान)
सहस्र-विनि:सृमर-	सहस्रों, उगलते हुए
ज्वलत्-अग्नि-कण-	प्रज्वलित अग्नि कणों के समान
उग्र-विष-अम्बुधरम्	कूट विष द्रव्य वाले
पुरत: फणिनं	सामने सर्प को
समलोकयथा:	देखा (आपने)
बहु-शृङ्गिणम्-	अनेक शिखरों वाले

अञ्जन-शैलम्-इव	कज्जल गिरि के समान

सहस्रों शिखरों के समान फणों वाले, प्रस्फुटित अग्नि कणों के समान कूट विष द्रव्य उगलते हुए, अनेक शिखरो वाले कज्जल गिरि के समान उस भयंकर सर्प को आपने अपने समक्ष देखा जो अनेक शिखरों वाले कज्जल गिरि के समान दिखाई दे रहा था।

ज्वलदक्षि परिक्षरदुग्रविष-
श्वसनोष्मभर: स महाभुजग: ।
परिदश्य भवन्तमनन्तबलं
समवेष्टयदस्फुटचेष्टमहो ॥६॥

ज्वलत्-अक्षि	प्रज्वलित नेत्रों वाला
परिक्षरत्-उग्र-विष-	उगलते हुए उग्र विष को
श्वसन्-ऊष्मभर:	तप्त वायु का निश्वास छोडते हुए
स महाभुजग:	वह महानाग
परिदश्य	डसते हुए
भवन्तम्-अनन्तबलं	आपको, (जो) अनन्त बलशाली हैं
समवेष्टयत्-	लिपट गया (आपके चारों ओर)
अस्फुट-चेष्टम्-	गुप्त चेष्टाओं वाले आप को
अहो	अहो!

अहो! उग्र विष को उगलते हुए, तप्त वायु का निश्वास छोडते हुए प्रज्वलित नेत्रों वाले, उस महानाग ने अनन्त बलशाली और गुप्त चेष्टाओं वाले आपको डस लिया और आपके चारों ओर लिपट गया।

अविलोक्य भवन्तमथाकुलिते
तटगामिनि बालकधेनुगणे ।
व्रजगेहतलेऽप्यनिमित्तशतं
समुदीक्ष्य गता यमुनां पशुपा: ।।७॥

अविलोक्य भवन्तम्-	न देखते हुए आपको

अथ-आकुलिते	तब फिर व्याकुल हुए
तट-गामिनि	(यमुना) तट पर गये
बालक-धेनु-गणे	बालक और गो गण
व्रज-गेह-तले-अपि-	व्रज के घरों के भीतर भी
अनिमित्त-शतं	अपशगुन सौओं को
समुदीक्ष्य गता	देख कर गये
यमुनां पशुपाः	यमुना को गोपगण

बालकों और गौओं ने जब आपको नहीं देखा, तब अत्यधिक व्याकुल हो कर आपको खोजते हुए यमुना के तट पर गये। व्रज के घरों में भी सौओं अपशगुनों को देख कर उद्विग्न हुए गोप गण भी यमुना की ओर गये।

अखिलेषु विभो भवदीय दशा-
मवलोक्य जिहासुषु जीवभरम् ।
फणिबन्धनमाशु विमुच्य जवा-
दुदगम्यत हासजुषा भवता ॥८॥

अखिलेषु	(वे) सभी
विभो	हे विभो!
भवदीय-दशाम्	(जब) आपकी दशा को
अवलोक्य	देख कर
जिहासुषु	त्याग देने के लिये उद्यत हो गये
जीवभरम्	(अपने) जीवन को
फणि-बन्धनम्-	फणों के बन्धन को
आशु विमुच्य	शीघ्र खोल कर
जवात्-उदगम्यत	झट से निकल आये

हासजुषा भवता	मुस्कुराते हुए आप

हे विभो! वे सभी आपकी दशा देख कर अपने प्राण त्याग देने को उद्यत हो गये। उसी समय आप शीघ्रतापूर्वक फणों के उस बन्धन को खोल कर तुरन्त ही मुस्कुराते हुए बाहर निकल आये।

अधिरुह्य ततः फणिराजफणान्
ननृते भवता मृदुपादरुचा ।
कलशिञ्जितनूपुरमञ्जुमिल-
त्करकङ्कणसङ्कुलसङ्क्वणितम् ॥९॥

अधिरुह्य ततः	चढ कर तब
फणि-राज-फणान्	महा भुजंग के फणों पर
ननृते भवता	नाचे आप
मृदु-पाद-रुचा	कोमल सुन्दर पैरों से
कलशिञ्जित-नूपुर-	मधुर रव नूपुरों के
मञ्जु-मिलत्-	मनोहर रूप से मिल (ताल दे) रहे थे
कर-कङ्कण-सङ्कुल-	हाथों के कङ्गनों के टकराने की
सङ्क्वणितम्	झंकार से

तब महा भुजङ्ग के फणों पर चढ कर आपने कोमल सुन्दर पैरों से नृत्य किया। पैरों के नूपुरों की मधुर झनक हाथ के कङ्गनो के टकराने से उठी झन्कार के साथ मिल कर ,मनोहर ताल देती हुई, सुन्दर ध्वनि पैदा कर रही थी।

जहृषुः पशुपास्तुतुषुर्मुनयो
ववृषुः कुसुमानि सुरेन्द्रगणाः ।
त्वयि नृत्यति मारुतगेहपते
परिपाहि स मां त्वमदान्तगदात् ॥१०॥

जहृषुः पशुपाः-	हर्षित हुए गोपगण
तुतुषुः-मुनयः	तृप्त हुए मुनि जन

ववृषुः कुसुमानि	वर्षा की कुसुमों की
सुरेन्द्र-गणाः	देव मण्डल ने
त्वयि नृत्यति	आपके नाचने पर
मारुतगेहपते	हे मारुतगेहपते!
परिपाहि	रक्षा करें
स	वही (आप)
मां	मेरी
त्वम्-	आप
अदान्त-गदात्	अदम्य रोगों से

हे मरुतगेह्पते! आपके नृत्य करने पर गोपगण हर्षित हो उठे, मुनिजन तृप्त हो गये और देवमण्डल ने कुसुमों की वर्षा की। वही आप, अदम्य रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ५६

रुचिरकम्पितकुण्डलमण्डल: सुचिरमीश ननर्तिथ पन्नगे ।
अमरताडितदुन्दुभिसुन्दरं वियति गायति दैवतयौवते ॥१॥

रुचिर-कम्पित-	मोहकता से कम्पायमान होते हुए
कुण्डल-मण्डल:	कुण्डल मण्डल (वाले आप)
सुचिरम्-ईश	बहुत समय तक हे ईश!
ननर्तिथ पन्नगे	नाचते रहे नाग के ऊपर
अमर-ताडित-	देवो के द्वारा बजाये गये
दुन्दुभि:-सुन्दरम्	मधुर दुन्दुभि (के साथ)
वियति गायति	आकाश में गाने लगीं
दैवत-यौवते	देवाङ्गनाएं

हे ईश! आप बहुत समय तक नाग के फाणों के ऊपर नाचते रहे। उस समय आपके कुण्डल मनमोहकता से कांप रहे थे। आकाश में देवों ने मधुर दुन्दुभि बजाई और देवाङ्गनाएं सङ्ग में गाने लगीं।

नमति यद्यदमुष्य शिरो हरे परिविहाय तदुन्नतमुन्नतम् ।
परिमथन् पदपङ्करुहा चिरं व्यहरथा: करतालमनोहरम् ॥२॥

नमति यत्-यत्-	झुकता था जो जो
अमुष्य शिर:	उसका शिर
हरे	हे हरे!
परिविहाय तत्-	छोड कर उसको
उन्नतम्-उन्नतम्	ऊंचे उठे हुए
परिमथन् पद्-पङ्करुहा	(शिर को) मथित करते हुए चरण कमल से
चिरं व्यहरथा:	बहुत समय तक क्रीडा करते रहे

करताल-मनोहरम्	मनोहर करताल (देते हुए)

हे हरे! कालिय का जो जो शिर झुक जाता था उसको छोड कर आप उसके ऊपर उठे हुए शिरों पर चढ कर अपने चरण्कमलों से मथ देते थे। इस प्रकार मनोहर करताल देते हुए आप बहुत समय तक क्रीडा करते रहे।

त्वदवभग्नविभुग्नफणागणे गलितशोणितशोणितपाथसि ।
फणिपतावववसीदति सन्नतास्तदबलास्तव माधव पादयो: ॥३॥

त्वत्-अवभग्न-	आपके मर्दन कर देने से
विभुग्न-फणागणे	झुक जाने से फणो के
गलित-शोणित-	बहने लगा रक्त
शोणित-पाथसि	लाल हो जाने पर जल के
फणिपतौ-अवसीदति	नागराज के निर्बल हो जाने पर
सन्नता:-तत्-अबला:-	नमन करने लगी उसकी पत्नियां
तव माधव पादयो:	आपके हे माधव चरण युगल में

नृत्य करते हुए आपके चरणों के प्रहार से नाग के फण विमर्दित हो गये और उनमें से रक्त बहने लगा जिससे यमुना का जल लाल हो गया। हे माधव! नाग के निर्बल और विक्षिप्त हो जाने पर उसकी पत्नियों ने आपके चरण युगल में नमन किया।

अयि पुरैव चिराय परिश्रुतत्वदनुभावविलीनहृदो हि ता: ।
मुनिभिरप्यनवाप्यपथै: स्तवैर्नुनुवुरीश भवन्तमयन्त्रितम् ॥४॥

अयि पुरा-एव	अयि! पहले ही
चिराय परिश्रुत-	सदा से सुनी हुई थी
त्वत्-अनुभाव-	आपकी महानता
विलीन-हृद: हि	(आपमें) निमग्न हृदय वाली
ता: मुनिभि:-अपि-	वे, मुनियों को भी
अनवाप्य-पथै:	अप्राप्य मार्गों से

स्तवैः-नुनुवुः-	स्तुतियों से स्तवन करने लगीं
ईश	हे ईश!
भवन्तम्-अयन्त्रितम्	आपका, अनियन्त्रित

अहो! उन नाग पत्नियों ने बहुत पहले से ही आपकी महानता का गुणगान सुना हुआ था और उनका हृदय सदा आपमें ही निमग्न रहता था। हे ईश! वे, मुनियों को भी दुष्प्राप्य मार्गों से युक्त स्तोत्रों द्वारा, निर्बाध और अनियन्त्रित रूप से आपका स्तवन करने लगीं।

फणिवधूगणभक्तिविलोकनप्रविकसत्करुणाकुलचेतसा ।
फणिपतिर्भवताऽच्युत जीवितस्त्वयि समर्पितमूर्तिरवानमत् ॥५॥

फणि-वधू-गण-	नाग पत्नियों की
भक्ति-विलोकन-	भक्ति देख कर
प्रविकसत्-करुणा-	प्रस्फुटित करुणा से
आकुल-चेतसा	व्याकुल चित्त से
फणिपतिः-भवता-	नागराज आपके द्वारा
अच्युत	हे अच्युत!
जीवितः-त्वयि	पुनर्जीवित (हुआ) आपमे
समर्पित-मूर्तिः-	समर्पित स्वयं को कर के
अवानमत्	प्रणाम किया

हे अच्युत! नाग पत्नियों की उत्कट भक्ति देख कर आपका चित्त करुणा के उद्वेग से व्याकुल हो उठा। आपने नागराज को पुनर्जीवित कर दिया। उसने स्वयं को समर्पित कर के आपको प्रणाम किया।

रमणकं व्रज वारिधिमध्यगं फणिरिपुर्न करोति विरोधिताम् ।
इति भवद्वचनान्यतिमानयन् फणिपतिर्निरगादुरगैः समम् ॥६॥

रमणकं व्रज	रमणक (द्वीप) को जाओ

वारिधि-मध्यगं	समुद्र के मध्य में स्थित
फणि-रिपु:-न करोति	सर्प शत्रु (गरुड) नही करेगा
विरोधिताम् इति	शत्रुता इस प्रकार
भवत्-वचनानि-	आपके वचनों को
अतिमानयन्-	आदर दे कर
फणपति:-निरगात्-	नागराज चला गया
उरगै: समम्	(अन्य) सर्पों के साथ

'तुम, समुद्र के बीच में स्थित रमणक द्वीप को चले जाओ वहां गरुड तुमसे शत्रुता नहीं करेगा।' आपके इस आदेष का आदर कर के वह नागराज अन्य सर्पों के साथ चला गया।

फणिवधूजनदत्तमणिव्रजज्वलितहारदुकूलविभूषित: ।
तटगतै: प्रमदाश्रुविमिश्रितै: समगथा: स्वजनैर्दिवसावधौ ॥७॥

फणिवधूजन-	नागपत्नियों ने
दत्त-मणिव्रज-	दिये मणि समूह
ज्वलित-हार-	दीप्ति युक्त हार
दुकूल-विभूषित:	(और) वस्त्र (उनसे) विभूषित हो कर
तट-गतै:	तट के ऊपर खडे
प्रमदाश्रु-विमिश्रितै:	आनन्दाश्रुओं से मिश्रित (दृष्टि वाले)
समगथा: स्वजनै:-	पास गये स्वजनों के
दिवस-अवधौ	सन्ध्या समय में

नागपत्नियों ने आपको नाना भंति की मणियां देदिप्यमान हार और वस्त्र दिये। आप उनसे विभूषित हो कर, सन्ध्या समय, तट पर प्रतीक्षा करते हुए आनन्दाश्रु मिश्रित दृष्टि वाले स्वजनों के निकट गए।

निशि पुनस्तमसा व्रजमन्दिरं व्रजितुमक्षम एव जनोत्करे ।

स्वपति तत्र भवच्चरणाश्रये दवकृशानुररुन्ध समन्ततः ॥८॥

निशि पुन:-तमसा	रात्रि में फिर अन्धकार के कारण
व्रज-मन्दिरं	व्रज के घरों में
व्रजितुम्-अक्षम	जाने में असमर्थ
एव जनोत्करे	होने से जन समुदाय
स्वपति तत्र	सो गये वहां
भवत्-चरण-आश्रये	आपके चरणों के आश्रय में
दवकृशानुः-	वनाग्नि ने
अरुन्ध समन्ततः	घेर लिया सब ओर से

रात्रि में अन्धकार हो जाने के कारण उस जन समुदाय व्रज मे अपने अपने घर वापस जाने में असमर्थ हो गया। आपके चरणों का आश्रय ले कर वे सभी वहीं यमुना के तट पर सो गये। उसी समय दावाग्नि ने उन्हें सब ओर से घेर लिया।

प्रबुधितानथ पालय पालयेत्युदयदार्तरवान् पशुपालकान् ।
अवितुमाशु पपाथ महानलं किमिह चित्रमयं खलु ते मुखम् ॥९॥

प्रबुधितान्-अथ	जागे हुए तब उनको
पालय पालय-इति-	बचाओ, बचाओ' इस प्रकार
उदयत्-आर्त-रवान्	उठती हुई दु:खित स्वर वाले
पशुपालकान्	गोपालकों को
अवितुम्-आशु	बचाने के लिये तुरन्त
पपाथ महानलम्	पी लिया महान अग्नि को
किम्-इह चित्रम्-	क्या इसमें आश्चर्य है
अयम् खलु	यह (अग्नि) तो नि:सन्देह

ते मुखम्	आपका मुख है

अग्नि के ताप से गोपाल गण जाग गये और 'बचाओ, बचाओ' इस प्रकार आर्त स्वर में पुकारने लगे। उनको बचाने के लिये आपने तुरन्त ही उस महाग्नि का पान कर लिया। इसमे आश्चर्य भी क्या है क्योंकि अग्नि तो निःसन्देह आपका मुख ही है।

शिखिनि वर्णत एव हि पीतता परिलसत्यधुना क्रिययाऽप्यसौ ।
इति नुतः पशुपैर्मुदितैर्विभो हर हरे दुरितैःसह मे गदान् ॥१०॥

शिखिनि वर्णतः एव	अग्नि में वर्ण से ही
हि पीतता	है पीतता (पीलापन)
परिलसति-अधुना	स्थित है (यह) अब
क्रियया-अपि-असौ	क्रिया से भी पीतता (पीये जाने से) युक्त यह
इति नुतः	इस प्रकार स्तुति की
पशुपैः-मुदितैः-	गोपों ने प्रसन्नता पूर्वक
विभो	हे विभो!
हर हरे	हर लीजिये, हे हरे!
दुरितैः सह	पापों के सहित
मे गदान्	मेरे रोगों को

अग्नि में वर्ण स्वरूप 'पीतता' (पीलापन) है। अब यह क्रिया स्वरूप 'पीतता' (पान की गई) से भी युक्त हो गई है। हे विभो! गोपों ने प्रसन्नतापूर्वकइन शब्दों में आपकी स्तुति की। हे हरे! पापों सहित मेरे रोगों को हर लीजिये।

दशक ५७

रामसखः क्वापि दिने कामद भगवन् गतो भवान् विपिनम् ।
सूनुभिरपि गोपानां धेनुभिरभिसंवृतो लसद्वेषः ॥१॥

रामसखः	बलराम के साथ
क्वापि दिने	किसी एक दिन
कामद भगवन्	कामनाओं के दाता भगवन!
गतः भवान्	गये आप
विपिनम्	वन को
सूनुभिः-अपि	पुत्रों के साथ भी
गोपानाम्	गोपों के
धेनुभिः-अभिसंवृतः	गौओं से घिरे हुए
लसत्-वेषः	सुसज्जित वेश में

कामनाओं के दाता हे भगवन! किसी एक दिन आप बलराम और गोप बालकों के साथ सुसज्जित वेश में वन गये।

सन्दर्शयन् बलाय स्वैरं वृन्दावनश्रियं विमलाम् ।
काण्डीरैः सह बालैर्भाण्डीरकमागमो वटं क्रीडन् ॥२॥

सन्दर्शयन्	दिखाते हुए
बलाय स्वैरं	बलराम को स्वच्छन्दता से
वृन्दावन-श्रियं	वृन्दावन की शोभा
विमलाम्	निर्मल
काण्डीरैः सह	लकडी लिये हुए
बालैः-	बालकों के साथ

भाण्डीरकम्-	भाण्डीरक के
आगम:	पास आये
वटं क्रीडन्	पेड के खेलते हुए

बलराम को वृन्दावन की निर्मल शोभ भली भांति दिखाते हुए, बालकों के साथ स्वच्छन्दता से खेलते हुए, हाथ में लकडी लिये हुए आप भाण्डीरक तरु के समीप आए।

तावत्तावकनिधनस्पृहयालुर्गोपमूर्तिरदयालु: ।
दैत्य: प्रलम्बनामा प्रलम्बबाहुं भवन्तमापेदे ॥३॥

तावत्-	तब
तावक-निधन-	आपकी मृत्यु
स्पृहयालु:-गोपमूर्ति:	चाहने वाला गोप के वेश में
अदयालु: दैत्य:	निर्दयी दैत्य
प्रलम्ब-नामा	प्रलम्ब नाम का
प्रलम्ब-बाहुं भवन्तम्-	विशाल बाहुओं वाले आपके
आपेदे	निकट आया

उस समय, गोप के वेष में प्रलम्ब नाम का निर्दयी दैत्य, विशाल बाहुओं वाले आपको मारने की इच्छा से आपके निकट आया।

जानन्नप्यविजानन्निव तेन समं निबद्धसौहार्द: ।
वटनिकटे पटुपशुपव्याबद्धं द्वन्द्वयुद्धमारब्धा: ॥४॥

जानन्-अपि	जानते हुए भी
अविजानन्-इव	अनजान के समान
तेन समं	उसके साथ
निबद्ध-सौहार्द:	करके मित्रता

वट-निकटे	पेड के पास
पटु-पशुप-	चतुर गोपालकों से
व्याबद्धं	निश्चित करवाया
द्वन्द्व-युद्धम्-	द्वन्द्व युद्ध
आरब्धा:	(और) उसे आरम्भ करवाया

यह जानते हुए भी कि वह दैत्य है, आपने अनजान की भांति व्यवहार कर के उसके साथ मित्रता की। फिर वट वृक्ष के पास जा कर, द्वन्द्व युद्ध में चतुर गोपालकों के साथ निश्चय करके द्वन्द्व युद्ध प्रारम्भ करवाया।

गोपान् विभज्य तन्वन् सङ्घं बलभद्रकं भवत्कमपि ।
त्वद्बलभीरुं दैत्यं त्वद्बलगतमन्वमन्यथा भगवन् ॥५॥

गोपान् विभज्य	गोपों का विभाजन करके
तन्वन् सङ्घं	बना कर दल
बलभद्रकं	बलराम का (दल)
भवत्कम्-अपि	और आपका भी (दल)
त्वत्-बल-भीरुं	आपके बल से भयभीत
दैत्यं	दैत्य
त्वद्-बल-गतम्-	आप ही के दल में आ गया
अन्वमन्यथा	आपने स्वीकार कर लिया
भगवन्	हे भगवन!

गोपबालकों को आपने दो दलों में विभजित कर दिया, एक दल बलराम का और एक आपका। दैत्य प्रलम्बासुर ने आपके बल से भयभीत हो कर आपके ही दल में आना चाहा। आपने उसे स्वीकार कर लिया।

कल्पितविजेतृवहने समरे परयूथगं स्वदयिततरम् ।
श्रीदामानमधत्था: पराजितो भक्तदासतां प्रथयन् ॥६॥

कल्पित-	बनाए हुए (नियमों) के अनुसार
विजेतृ-वहने	विजयी को उठा कर ले जाने में
समरे परयूथगं	युद्ध में, अन्य दल के
स्वदयिततरम्	आपके प्रियतम (मित्र)
श्रीदामानम्-	श्रीदामा को
अधत्था: पराजित:	उठाया पराजित हुए आपने
भक्त-दासतां	भक्तों (के प्रति) दासता को
प्रथयन्	प्रदर्शित करते हुए

द्वन्द्व युद्ध के परिकल्पित नियमों के अनुसार पराजित दल को विजयी दल के द्वारा उठा कर ले जाना निर्धारित हुआ। तदनुसार आपने पराजित हुए अपने प्रिय मित्र श्रीदामा का वहन किया, मानों भक्तों के प्रति अपनी दासता का प्रदर्शन करते हुए।

एवं बहुषु विभूमन् बालेषु वहत्सु वाह्यमानेषु ।
रामविजित: प्रलम्बो जहार तं दूरतो भवद्भीत्या ॥७॥

एवं बहुषु	इस प्रकार
विभूमन्	हे विभूमन!
बालेषु वहत्सु	बालकों के परस्पर उठाते हुए
वाह्यमानेषु	(और) उठाये जाते हुए
राम-विजित:	बलराम विजित को
प्रलम्ब: जहार तं	प्रलम्ब ले गया उसको
दूरत: भवत्-भीत्या	दूर आपके डर से

हे विभूमन! बालक परस्पर उठा रहे थे और उठाये जा रहे थे। पराजित बलराम को उठा कर प्रलम्बासुर आपके भय से दूर ले गया।

त्वद्दूरं गमयन्तं तं दृष्ट्वा हलिनि विहितगरिमभरे ।
दैत्यः स्वरूपमागाद्यद्रूपात् स हि बलोऽपि चकितोऽभूत् ॥८॥

त्वत्-दूरं गमयन्तम्	आपसे दूर जाते हुए
तं दृष्ट्वा हलिनि	उसको देख कर
विहित-गरिम-भरे	बढा लेने पर वजन (अपना)
दैत्यः स्वरूपम्-	दैत्य अपने स्वरूप में
आगात्-यत्-रूपात्	आ गया जिस रूप से
स हि बलः-अपि	वह बलराम भी
चकितः-अभूत्	चकित हो गया

जब बलराम ने देखा कि प्रलम्बासुर उन्हें आपसे दूर ले जा रहा है तब उन्होंने अपना वजन बढा दिया। इससे वह असुर भी अपने स्वरूप में आ गया। उसके उस स्वरूप को देख कर बलराम भी चकित रह गये।

उच्चतया दैत्यतनोस्त्वन्मुखमालोक्य दूरतो रामः ।
विगतभयो दृढमुष्ट्या भृशदुष्टं सपदि पिष्टवानेनम् ॥९॥

उच्चतया दैत्य-तनोः-	असुर के ऊंचे शरीर के कारण
त्वत्-मुखम्-	आपके मुख को
आलोक्य	देख कर
दूरतः रामः	दूर से ही बलराम ने
विगत-भयः	भयरहित हो कर
दृढ-मुष्ट्या	दृढ मुष्टि (प्रहार से)
भृश-दुष्टम् सपदि	(उस) अत्यन्त क्रूर को शीघ्र ही
पिष्ट्वान् एनम्	पीस डाला उसको

असुर के ऊंची देह पर स्थित बलराम ने आपके मुख को देखा। तुरन्त ही भय रहित हो कर दृढ मुष्टि प्रहार से उन्होंने उस

अत्यन्त क्रूर दैत्य को शीघ्र ही पीस डाला।

हत्वा दानववीरं प्राप्तं बलमालिलिङ्गिथ प्रेम्णा ।
तावन्मिलतोर्युवयो: शिरसि कृता पुष्पवृष्टिरमरगणै: ॥१०॥

हत्वा दानव-वीरं	मार कर दानव वीर को
प्राप्तं बलम्-	आये हुए बलराम का
आलिलिङ्गिथ	आलिङ्गन किया
प्रेम्णा तावत-	प्रेम से जब
मिलतो:-युवयो:	मिलते हुए आप दोनों के
शिरसि कृता	शिरों पर की
पुष्पवृष्टि:-	पुष्प वृष्टि
अमर-गणै:	देव गण ने

जब बलराम दानववीर को मार कर आये तब आपने उनका आलिङ्गन किया। आप दोनों के उस मिलन के समय देवताओं ने आपके शिरों पर पुष्प वृष्टि की।

आलम्बो भुवनानां प्रालम्बं निधनमेवमारचयन् ।
कालं विहाय सद्यो लोलम्बरुचे हरे हरे: क्लेशान् ॥११॥

आलम्ब: भुवनानां	आधार भूत भुवनों के
प्रालम्बं निधनम्-	प्रलम्बासुर की मृत्यु
एवम्-आरचयन्	इस प्रकार रचने वाले
कालं विहाय	समय छोड कर
सद्य:	शीघ्र
लोलम्बरुचे	भंवरे के समान सुन्दर
हरे	हे हरे!

हरेः	हर लें
क्लेशान्	कष्टों को

भुवन त्रय के आधार भूत आपने इस विधि से प्रलम्बासुर की मृत्यु का विधान रचा। विलम्ब न कर के, हे भंवरे के समान सुन्दर हरे! शीघ्र ही मेरे कष्टों को हर लीजिये।

दशक ५८

त्वयि विहरणलोले बालजालैः प्रलम्ब-
प्रमथनसविलम्बे धेनवः स्वैरचाराः ।
तृणकुतुकनिविष्टा दूरदूरं चरन्त्यः
किमपि विपिनमैषीकाख्यमीषांबभूवुः ॥१॥

बाल-जालैः	बालकों के समुह (के साथ)
प्रलम्ब-प्रमथन-	(और) प्रलम्ब के वध (के कारण)
सविलम्बे	(आपको) विलम्ब होने से
धेनवः स्वैर-चाराः	गौएं स्वतन्त्रता से
तृण-कुतुक-निविष्टा	घास (खाने के लिये) उद्यत
दूर-दूरं चरन्त्यः	दूर दूर तक चरती हुई
किमपि विपिनम्-	किसी वन में
ऐषीक-आख्यम्-	ऐषिक नाम के
ईषां बभूवुः	पास में आईं

बालकों के साथ क्रीडा करने में व्यस्त और प्रलम्बासुर केवध आदि के कारण आपको विलम्ब हो गया। गौएं घास खाने को समुद्यत हो कर स्वतन्त्रता से दूर दूर तक चरते हुए ऐषिक नामक वन के समीप आ गईं।

अनधिगतनिदाघक्रौर्यवृन्दावनान्तात्
बहिरिदमुपयाताः काननं धेनवस्ताः ।
तव विरहविषण्णा ऊष्मलग्रीष्मताप-
प्रसरविसरदम्भस्याकुलाः स्तम्भमापुः ॥२॥

अनधिगत	नहीं अनुभव हो रही थी
निदाघ-क्रौर्यं-	ग्रीष्म की क्रूरता
वृन्दावन-अन्तात्	वृन्दावन के अन्त से

बहिः-इदम्-उपयाताः	बाहर यह जो आ गई थीं
काननं धेनवः-ताः	वन के अन्त में, वे गौएं
तव विरह-विषण्णा	आपके विरह से कातर
ऊष्मल-ग्रीष्म-ताप-	अत्यधिक ग्रीष्म के ताप से
प्रसर-विसरत्-	(जो) बढ रहा था और फैल रहा था
अम्भस्य-आकुलाः	जल के लिये व्याकुल
स्तम्भम्-आपुः	मूर्छा को प्राप्त हो गईं

वृन्दावन के अन्त तक ग्रीष्म की क्रूरता का अनुभव नहीं हो रहा था। किन्तु वे गौएं उसके भी बाहर वन के अन्त में आ गईं थी। एक तो वे आपके विरह में कातर थीं, ऊपर से ग्रीष्म का ताप अत्यधिक मात्रा में बढ कर फैल रहा था, जिसके फलस्वरूप जल के लिये व्याकुल हो कर वे मूर्छितप्रायः हो गई थीं।

तदनु सह सहायैर्दूरमन्विष्य शौरे
गलितसरणिमुञ्जारण्यसञ्जातखेदम् ।
पशुकुलमभिवीक्ष्य क्षिप्रमानेतुमारा-
त्त्वयि गतवति ही ही सर्वतोऽग्निर्जजृम्भे ॥३॥

तदनु सह सहायैः-	उसके बाद सङ्ग में सहायकों के
दूरम्-अन्विष्य	दूर तक खोजते हुए
शौरे	हे शौरे!
गलित-सरणि-	भूल जाने से रास्ता
मुञ्ज-अरण्य-	मुञ्ज अरण्य को
सञ्जात-खेदम्	अभिभूत हुई क्लेश से
पशुकुलम्-अभिवीक्ष्य	पशु समूह को देख कर
क्षिप्रम्-आनेतुम्-	शीघ्र लाने के लिये
आरात्-त्वयि गतवति	तुरन्त आपके जाने पर

ही ही सर्वत:-	हाय हाय चारों ओर
अग्नि;-जजृम्भे	अग्नि प्रज्वलित हो गई

हे शौरे! उसके बाद अपने सहायक गोपबालकों के साथ आप दूर तक गौओं को खोजने के लिये गये। मार्ग भूल जाने के कारण वे मुञ्जारण्य की ओर चली गईं। क्लेश से अभिभूत गौओं को देख कर उनको शीघ्र लाने के लिये आप तुरन्त ही प्रस्तुत हुए, किन्तु, हाय हाय, उसी समय चारों ओर अग्नि प्रज्वलित हो उठी।

सकलहरिति दीप्ते घोरभाङ्कारभीमे
शिखिनि विहतमार्गा अर्धदग्धा इवार्ता: ।
अहह भुवनबन्धो पाहि पाहीति सर्वे
शरणमुपगतास्त्वां तापहर्तारमेकम् ॥४॥

सकल-हरिति दीप्ते	सभी दिशायें प्रज्वलित हो गई
घोर-भाङ्कार-भीमे	भयंकर लपटों के गर्जन के साथ
शिखिनि	उस अग्नि के
विहत-मार्गा	मार्ग को रोक लेने से
अर्ध-दग्धा:	आधे जले हुए
इव-आर्ता:	से दु:खी
अहह भुवनबन्धो	अहो! भुवन बन्धो!
पाहि पाहि-इति	रक्षा करो, रक्षा करो' इस प्रकार
सर्वे शरणम्-उपगता:-	सभी शरण मे चले गये
त्वां ताप-हर्तारम्-एकम्	आपके, एकमात्र तापहर्ता के

उस अग्नि से सभी दिशाएं प्रज्वलित हो उठीं। भयंकर लपटों से घोर गर्जन होने लगा और मार्ग भी अवरुद्ध हो गया। हे भुवनबन्धो! आधे जले हुए से और अत्यन्त दु:खी वे 'रक्षा करो, रक्षा करो' आर्तनाद करते हुए, एकमात्र तापहर्ता आपकी शरण में चले आये।

अलमलमतिभीत्या सर्वतो मीलयध्वं
दृशमिति तव वाचा मीलिताक्षेषु तेषु ।

क्व नु दवदहनोऽसौ कुत्र मुञ्जाटवी सा
सपदि ववृतिरे ते हन्त भाण्डीरदेशे ॥५॥

अलम्-अलम्-	बस करो बस करो
अति-भीत्या	अत्यन्त भय को
सर्वत: मीलयध्वं	सब ओर से बन्द कर लो
दृशम्-इति	दृष्टि को इस प्रकार
तव वाचा	आपके कहने से
मीलित-अक्षेषु	बन्द कर लेने पर नेत्रों के
तेषु क्व नु	उन लोगों के, कहां थी
दव-दहन:-असौ	दावाग्नि यह
कुत्र मुञ्जा-अटवी सा	कहां थी मुञ्जारण्य वह
सपदि ववृतिरे ते	क्षण में पहुंच गये वे
हन्त भाण्डीर-देशे	हाय! भाण्डीर क्षेत्र में

' भयभीत मत होओ। सब ओर से अपनी दृष्टि बन्द कर लो।' इस प्रकार आपके कहने पर, जब उन लोगों ने नेत्र बन्द कर लिये, तब कहां थी वह अग्नि और कहां था वह मुञ्जारण्य? आश्चर्य! क्षण भर में वे सब भाण्डीर क्षेत्र में पहुंच गये।

जय जय तव माया केयमीशेति तेषां
नुतिभिरुदितहासो बद्धनानाविलास: ।
पुनरपि विपिनान्ते प्राचर: पाटलादि-
प्रसवनिकरमात्रग्राह्यघर्मानुभावे ॥६॥

जय जय	'जय जय
तव माया	आपकी माया
का-इयम्	क्या है यह
ईश-	हे ईश्वर!'

इति तेषां	इस प्रकार उनके
नुतिभिः-उदितहासः	स्तुति करने पर, हंसते हुए
बद्ध-नाना-विलासः	करते हुए नाना प्रकार की क्रीडाएं
पुनः-अपि	फिर भी
विपिन-अन्ते	वन के अन्त में
प्राचरः पाटलादि-	विचरण करते रहे, पाटल आदि
प्रसव-निकर-	(पुष्पों) के गुच्छों से
मात्र-ग्राह्य-	मात्र ज्ञान होता था (जहां)
घर्म-अनुभावे	ग्रीष्म के अनुभव का

जय हो जय हो! यह कैसी है आपकी माया।' इस प्रकार उन्होंने आपकी स्तुति की। तब हंसते हुए आप उस वन के अन्त में नाना प्रकार की क्रीडाएं करते हुए विचरते रहे। उस समय उस वन में केवल पाटल आदि पुष्पों के खिले हुए गुच्छों से ही ग्रीष्म ऋतु का भान हो रहा था।

त्वयि विमुखमिवोच्चैस्तापभारं वहन्तं
तव भजनवदन्तः पङ्कमुच्छोषयन्तम् ।
तव भुजवदुदञ्चद्भूरितेजःप्रवाहं
तपसमयमनैषीर्यामुनेषु स्थलेषु ॥७॥

त्वयि विमुखम्-	आप से विमुख (जन)
इव-उच्चैः-	जैसे अत्यधिक
तापभारं वहन्तम्	ताप के भार को सहते हैं
तव भजन-वदन्तः	आपके भजन करने वाले (लोगों के) जैसे
पङ्कम्-	(उनके) मल (जैसे)
उच्छोषयन्तम्	सुखा देते हैं
तव भुज-वत्-	आपकी भुजाओं के समान

उदञ्चत्-	प्रकाशित करती हैं
भूरि-तेज-प्रवाहं	अत्यन्त तेज का प्रवाह
तप-समयम्-	(वैसा) ग्रीष्म समय
अनैषी:	बिताया
यामुनेषु स्थलेषु	यमुना के किनारों पर

जिस प्रकार के ताप का कष्ट आप से विमुख जन सहन करते हैं, आपके भजन गाने वालों की भक्ति के ताप से जैसे पाप पंक सूख जाते हैं, और जिस प्रकार के अतीव तेजोमय प्रवाह को आपकी भुजाएं प्रकाशित करती हैं, वैसे ग्रीष्म ऋतु के दिन आपने यमुना के तटों पर व्यतीत किये।

तदनु जलदजालैस्त्वद्वपुस्तुल्यभाभि-
र्विकसदमलविद्युत्पीतवासोविलासैः ।
सकलभुवनभाजां हर्षदां वर्षवेलां
क्षितिधरकुहरेषु स्वैरवासी व्यनैषीः ॥८॥

तदनु जलद-जालैः-	तदनन्तर मेघों के समूहों से
त्वत्-वपुः-	आपके श्री अङ्गों की
तुल्य-भाभिः-	आभा के समान
विकसत्-अमल-	उठती हुई निर्मल
विद्युत्-पीतवासः-	(पीत) विद्युत पीताम्बर (के समान)
विलासैः	मनोहर
सकल-भुवन-भाजां	समस्त भुवन वासियों को
हर्षदां वर्षवेलां	आनन्द देने वाली वर्षा ऋतु
क्षितिधर-कुहरेषु	पर्वत गुहाओं में
स्वैरवासी व्यनैषी:	स्वच्छन्द रूप से व्यतीत की (आपने)

तदनन्तर आपके श्री अङ्गों की आभा के समान मेघ समूहों वाली, आपके पीताम्बर की कान्ति के समान पीत विद्युत वाली,

समस्त भुवन वासियों को आनन्द देने वाली मनोहर वर्षा ऋतु आपने पर्वत गुहाओं में स्वेच्छा पूर्वक विचरण करते हुए व्यतीत की।

कुहरतलनिविष्टं त्वां गरिष्ठं गिरीन्द्र:
शिखिकुलनवकेकाकाकुभि: स्तोत्रकारी ।
स्फुटकुटजकदम्बस्तोमपुष्पाञ्जलिं च
प्रविदधदनुभेजे देव गोवर्धनोऽसौ ॥९॥

कुहरतल-निविष्टं	(पर्वत) गुहाओं में निवास करते हुए
त्वां गरिष्ठं	आपको गौरवशाली
गिरीन्द्र:	गिरीन्द्र (गोवर्धन)
शिखि-कुल-	मयूरों के समूहों की
नव-केका-	नव कलरव
काकुभि: स्तोत्रकारी	पुकारों से (मानो) स्तुति करता हुआ
स्फुट-कुटज-कदम्ब-	मुकुलित कुटज और कदम्ब के
स्तोम-पुष्पाञ्जलिं च	(पुष्पों के) समूहों से (मानो) पुष्पाञ्जलि से
प्रविदधत्-अनुभेजे	व्यवधान करता था निरन्तर पूजा का
देव	हे देव!
गोवर्धन:-असौ	गोवर्धन (पर्वत) यह

हे देव! पर्वत गुहाओं में गौरवशाली आपके निवास के समय, वह गोवर्धन पर्वत स्वयंपर स्थित मयूर समूहों की नव कलरव ध्वनि से मानो आपकी स्तुति करता था औरस्वयं पर लगे हुए कुटज और कदम्ब वृक्षों के फूलों की अञ्जली से मानो निरन्तर आपकी पूजा का विधान करता था।

अथ शरदमुपेतां तां भवद्भक्तचेतो-
विमलसलिलपूरां मानयन् काननेषु ।
तृणममलवनान्ते चारु सञ्चारयन् गा:
पवनपुरपते त्वं देहि मे देहसौख्यम् ॥१०॥

अथ शरदम्-उपेतां	तब शरद के आने पर
तां भवत्-भक्त-चेत:-	वह आपके भक्तों के (निर्मल)चित्त (के समान)
विमल-सलिल-पूरां	निर्मल जल से परिपूर्ण
मानयन् काननेषु	(मानो) सम्मान देते हुए वन प्रान्तों में
तृणम्-अमल-वनान्ते	घास सुन्दर वनों में
चारु सञ्चारयन् गा:	हर्ष पूर्वक चराते थे गौओं को
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
त्वं देहि	आप दीजिये
मे देह-सौख्यम्	मुझे शारीरिक स्वास्थ्य

इसके बाद, आपके भक्तों के निर्मल चित्त के समान निर्मल जल से परिपूर्ण शरद ऋतु आ गई। सुन्दर घास से युक्त वनों में, वन प्रान्तों को मानो सम्मान देते हुए, आप आनन्द्पूर्वक गौएं चराते थे। हे पवनपुरपते! आप मुझे शारिरिक स्वास्थ्य प्रदान कीजिये।

दशक ५९

त्वद्वपुर्नवकलायकोमलं प्रेमदोहनमशेषमोहनम् ।
ब्रह्म तत्त्वपरचिन्मुदात्मकं वीक्ष्य सम्मुमुहुरन्वहं स्त्रियः ॥१॥

त्वत्-वपुः-	आपके श्री अङ्ग
नव-कलाय-कोमलं	नव (पल्लवित) कलाय कुसुमों के समान कोमल
प्रेम-दोहनम्-	प्रेम का प्रस्फुरण करने वाला
अशेष-मोहनम्	अत्यन्त मनमोहक
ब्रह्म तत्त्व-	ब्रह्म तत्त्व स्वरूप
परचित्-मुद्-आत्मकं	परमचित आनन्द स्वरूप को
वीक्ष्य सम्मुमुहुः-	देख कर सम्मोहित हो जाती थी
अन्वहं स्त्रियः	प्रतिदिन गोपियां

नव पल्लवित कलाय कुसुमों के समान कोमल, प्रेम का स्फुरण करने वाले, ब्रह्म तत्त्व स्वरूप और परमचिदानन्द स्वरूप आपके श्रीअङ्गों की अत्यन्त मनमोहक शोभा को देख देख कर गोपियां प्रतिदिन सम्मोहित होती रहतीं।

मन्मथोन्मथितमानसाः क्रमात्त्वद्विलोकनरतास्ततस्ततः ।
गोपिकास्तव न सेहिरे हरे काननोपगतिमप्यहर्मुखे ॥२॥

मन्मथ-उन्मथित-	प्रेमातिरेक से उन्मथित
मानसाः क्रमात्-	मन वाली, क्रमशः
त्वत्-विलोकन-रताः-	आपको देखने में ही दत्तचित्त
ततः-ततः	बारम्बार
गोपिकाः-	गोपिका जन
तव	आपका
न सेहिरे	नहीं सहन करती थीं

हरे	हे हरे!
कानन-उपगतिम्-	वन को जाना
अपि-अह:-मुखे	भी दिन के आरम्भ में

प्रेमातिरेक से उन्मथित मनों वाली वे गोपिकायें बारम्बार आपको ही देखने के लिए लालायित रहतीं। क्रमश: उन्हे आपका गोचारण के लिये प्रतिदिन प्रात:काल वन को जाना भी असहनीय लगने लगा।

निर्गते भवति दत्तदृष्टयस्त्वद्गतेन मनसा मृगेक्षणा: ।
वेणुनादमुपकर्ण्य दूरतस्त्वद्विलासकथयाऽभिरेमिरे ॥३॥

निर्गते भवति	चले जाने पर आपके
दत्त-दृष्टय:-	(आप पर ही) बन्धी हुई दृष्टि वाली
त्वत्-गतेन	आपके जाने को
मनसा	मानसिक रूप से
मृगेक्षणा:	(वे) मृगनयनी
वेणु-नादम्-	मुरली के स्वर को
उपकर्ण्य दूरत:-	सुन कर दूर से
त्वत्-	आपकी
विलास-कथया-	क्रीडा कथाओं मे
अभिरेमिरे	रमण करती रहती थी

आपके चले जाने पर उनकी दृष्टि आप ही के गमन की ओर बन्धी रहती। वे मृगनयनी आपकी मुरली का स्वर मानसिक रूप से दूर से ही सुनती रहती और आपकी क्रीडा पूर्ण कथाओं की परस्पर चर्चा करते हुए उन्हीं में रमी रहतीं।

काननान्तमितवान् भवानपि स्निग्धपादपतले मनोरमे ।
व्यत्ययाकलितपादमास्थित: प्रत्यपूरयत वेणुनालिकाम् ॥४॥

कानन-अन्तम्-	विपिन के अन्त में

इतवान् भवान्-अपि	जा कर आप भी
स्निग्ध-पादप-तले	शीतल वृक्ष के नीचे
मनोरमे	सुन्दर
व्यत्यय-आकलित-	विपर्यय (एक दूसरे के आमने सामने) बनाये हुए
पादम्-आस्थित:	पैरों से खडे हो कर
प्रत्यपूरयत	भरते रहते थे
वेणुनालिकाम्	(स्वर) मुरली की नालिका में

आप भी, विपिन के अन्त मे जा कर किसी सुन्दर शीतल वृक्ष के नीचे, एक दूसरे के आमने सामने रखे हुए पैरों पर खडे हो कर मुरली की नालिका में स्वर भरते रहते थे।

मारबाणधुतखेचरीकुलं निर्विकारपशुपक्षिमण्डलम् ।
द्रावणं च दृषदामपि प्रभो तावकं व्यजनि वेणुकूजितम् ॥५॥

मार-बाण-धुत-	कामदेव के बाणॊं से त्रस्त (हो गईं)
खेचरी-कुलं	देवाङ्गनाएं
निर्विकार-	स्तब्ध (हो गये)
पशु-पक्षि-मण्डलम्	पशु पक्षि गण
द्रावणं च	और द्रवीभूत हो गये
दृषदाम्-अपि	पत्थर भी
प्रभो तावकं	प्रभो! आपके
व्यजनि	(द्वारा) निर्मित
वेणु-कूजितम्	मुरली की गूंज से

हे प्रभो! जब आपकी बजाई हुई मुरली की तान गूंजती, तब आकाश में देवाङ्गनाएं मानो कामदेव के बाणों से आहत हो त्रस्त और कम्पित हो (सिहर) उठतीं, पशु पक्षिगण स्तब्ध हो जाते, और पत्थर भी द्रवीभूत हो जाते।

वेणुरन्ध्रतरलाङ्गुलीदलं तालसञ्चलितपादपल्लवम् ।
तत् स्थितं तव परोक्षमप्यहो संविचिन्त्य मुमुहुर्व्रजाङ्गना: ॥६॥

वेणु-रन्ध्र-	मुरली के छिद्रों पर
तरल-अङ्गुली-दलं	चञ्चलता से घूमती हुई अङ्गुलियां
ताल-सञ्चलित-	ताल के साथ सञ्चालित
पाद-पल्लवम्	चरण कोमल
तत् स्थितं तव	वह खडा होना आपका
परोक्षम्-अपि-	परोक्ष होते हुए भी
अहो	अहो!
संविचिन्त्य	मन में कल्पना करके
मुमुहुः-	सम्मोहित हो जाती थी
व्रजाङ्गना:	व्रजाङ्गनाएं

अहो! मुरली बजाते समय उसके छिद्रों पर चञ्चलता से घूमती हुई आपकी अङ्गुलियां, तान के साथ साथ सञ्चालित आपके कोमल चरण, और बांके पन से आपका खडा होना, यह सब परोक्ष में होते हुए भी, व्रजाङ्गनाएं निरन्तर इस स्वरूप की मन ही मन कल्पना करके सम्मोहित होती रहतीं।

निर्विशङ्कभवदङ्गदर्शिनी: खेचरी: खगमृगान् पशूनपि ।
त्वत्पदप्रणयि काननं च ता: धन्यधन्यमिति नन्वमानयन् ॥७॥

निर्विशङ्क-	निर्बाध
भवत्-अङ्ग-	आपके श्री अङ्गों को
दर्शिनी: खेचरी:	देखने वाली देवाङ्गनाओं (को)
खग-मृगान्	पक्षियों (को)
पशून्-अपि	पशुओं (को) भी

त्वत्-पद-प्रणयि	आपके चरणों में अनुरक्त
काननं च ता:	और वन को, वे
धन्य-धन्यम्-इति	धन्य धन्य, ऐसा
ननु-अमानयन्	निश्चय मानती थीं

वे देवाङ्गनाएं और पक्षि गण जो निर्बाध रूप से आपके श्रीअङ्गों को देखते रहते हैं, तथा वे पशु गण और वन प्रदेश जो सदा आपके चरणों में अनुरक्त हैं, व्रजाङ्गनाएं निश्चय ही उन सभी को धन्य धन्य मानती थी।

आपिबेयमधरामृतं कदा वेणुभुक्तरसशेषमेकदा ।
दूरतो बत कृतं दुराशयेत्याकुला मुहुरिमा: समामुहन् ॥८॥

आपिबेयम्-	पान (करूंगी)
अधर-अमृतं कदा	अधर अमृत को कब
वेणु-भुक्त-	मुरली द्वारा उपभुक्त
रस-शेषम्-	(अमृत) रस का उच्छिष्ट
एकदा	एकबार
दूरत: बत	दुरूह है निश्चय ही (यह पाना)
कृतं दुराशय-	करना यह दुराग्रह
इति-आकुला	इस प्रकार व्याकुल होकर
मुहु:-इमा:	बारम्बार
समामुहन्	सम्मोहित हो जाती थी

हाय! एक बार मुरली के द्वारा उपभुक्त और उच्छिष्ट उस अधरामृत का पान कब करूंगी? यह निश्चय ही मेरा दुराग्रह है क्योंकि यह दुष्प्राप्य है?' इस प्रकार व्याकुल हो कर व्रजाङ्गनाएं बारम्बार सम्मोहित हो उठतीं।

प्रत्यहं च पुनरित्थमङ्गनाश्चित्तयोनिजनितादनुग्रहात् ।
बद्धरागविवशास्त्वयि प्रभो नित्यमापुरिह कृत्यमूढताम् ॥९॥

प्रत्यहं च पुनः-	प्रतिदिन और सदा ही
इत्थम्-अङ्गनाः-	इस प्रकार युवतियां
चित्तयोनि-जनितात्-	कामदेव से उद्भूत
अनुग्रहात्	अनुग्रह से
बद्ध-राग-विवशाः-	(आपके प्रति) बन्धे हुए प्रेम से विवश हुई
त्वयि प्रभो	आपमें हे प्रभो!
नित्यम्-आपुः-	नित्य पाती थी
इह कृत्य-मूढताम्	इह लोक के कृत्यों में (के प्रति) विमुखता

हे प्रभो! इस प्रकार, प्रतिदिन प्रतिपल, वे युवतियां आपके प्रति प्रेम के कारण आपसे बन्ध कर विवश हुई सी, स्वयं को इह लोक के कर्तव्यों के प्रति विमुख पाती थीं। यह एक प्रकार से उन सब पर कामदेव का अनुग्रह ही था।

रागस्तावज्जायते हि स्वभावा-
न्मोक्षोपायो यत्नतः स्यान्न वा स्यात् ।
तासां त्वेकं तद्द्वयं लब्धमासीत्
भाग्यं भाग्यं पाहि मां मारुतेश ॥१०॥

रागः-तावत्-	राग (तो) तब
जायते हि	पैदा हो ही जाता है
स्वभावात्-	स्वाभाविक रूप से
मोक्ष-उपायः	मोक्ष का उपाय
यत्नतः स्यात्-	यत्न से होजाए
न वा स्यात्	न भी हो
तासां तु-	उनके (गोपियों के) लिये तो
एकं तत्-द्वयं	एक ही में वह दोनों

लब्धम्-आसीत्	प्राप्त हो गये
भाग्यम् भाग्यम्	सौभाग्य! सौभाग्य!
पाहि मां	रक्षा करें मेरी
मारुतेश	हे मरुतेश!

मानव मात्र को राग (प्रेम) तो स्वाभाविक रूप से स्वत: ही हो जाता है। किन्तु यत्न करने पर भी, मोक्ष प्राप्त हो भी जाय न भी हो। गोपियों को तो, आपमें राग होने से, राग और मोक्ष दोनों ही उपलब्ध हो गये। कितनी सौभाग्यशालिनी हैं वे! हे मरुतेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ६०

मदनातुरचेतसोऽन्वहं भवदङ्घ्रिद्वयदास्यकाम्यया ।
यमुनातटसीम्नि सैकतीं तरलाक्ष्यो गिरिजां समार्चिचन् ॥१॥

मदन-आतुर-चेतस:-	प्रेमातुर चित्त वाली
अन्वहं	प्रतिदिन
भवत्-अङ्घ्रि-द्वय-	आपके चरण द्वय की
दास्य-काम्यया	दासता की कामना से
यमुना-तट-सीम्नि	यमुना के किनारे के पास
सैकतीं	बालू मयी
तरल-आक्ष्य:	चञ्चल नेत्रों वाली
गिरिजां	गिरिजा (कात्यायनी) की
समार्चिचन्	पूजा करती थी

चञ्चल नेत्रों और प्रेमातुर चित्त वाली गोपयुवतियां, आपके चरणद्वय की दासता की कामना से, प्रतिदिन, यमुना के किनारे निर्मित गिरिजा (कात्यायनी) की मृण्मयी प्रतिमा की पूजा करती थीं।

तव नामकथारता: समं सुदृश: प्रातरुपागता नदीम् ।
उपहारशतैरपूजयन् दयितो नन्दसुतो भवेदिति ॥२॥

तव	आपके
नाम-कथा-रता:	नाम और आपकी कथाओं मे डूबी हुई
समं सुदृश:	साथ में (वे) सुन्दर नेत्रों वाली
प्रात:-उपागता	प्रात:काल में आ कर
नदीम्	नदी पर
उपहार्-शतै:-	उपहार सैंकडों से

अपूजयन्	पूजा करते हुए
दयित: नन्दसुत:	पति नन्द के पुत्र
भवेत्-इति	हों इस प्रकार (प्रार्थना करती थीं)

आपके ही नाम और आप ही की कथाओं में परस्पर व्यस्त वे सुलोचनाएं, प्रात:काल नदी पर आ कर सैंकडों उपहारों के साथ कात्यायनी देवी की पूजा करती और प्रार्थना करती कि 'नन्दनन्दन कृष्ण उनके पति हों'।

इति मासमुपाहितव्रतास्तरलाक्षीरभिवीक्ष्य ता भवान् ।
करुणामृदुलो नदीतटं समयासीत्तदनुग्रहेच्छया ॥३॥

इति मासम्-	ऐसे एक मास तक
उपाहित-व्रता:-	पालन कर के व्रत का
तरलाक्षी:-	(वे) चञ्चल नेत्रों वाली
अभिवीक्ष्य ता:	देख कर उनको
भवान्	आप
करुणा-मृदुल:	करुणा से द्रवित हो कर
नदीतटं समयासीत्-	नदी के तट पर गये
तत्-अनुग्रह-	उन पर अनुग्रह (करने की)
इच्छया	इच्छा से

इस प्रकार उन चञ्चल नयनों वाली गोपिकाओं ने एक मास तक व्रत का पालन किया। उन को देख कर, करुणा से द्रवित हो कर उन पर अनुग्रह करने की इच्छा से आप नदी के तट पर गए।

नियमावसितौ निजाम्बरं तटसीमन्यवमुच्य तास्तदा ।
यमुनाजलखेलनाकुला: पुरतस्त्वामवलोक्य लज्जिता: ॥४॥

नियम-अवसितौ	(व्रत के) नियमों के समाप्त होने पर
निज-अम्बरं	अपने वस्त्र

तट-सीमनि-	तट के किनारे
अवमुच्य ता:-	रख कर वे
तदा यमुना-जल-	तब यमुना जल में
खेलन-आकुला:	क्रीडा करने के लिये उत्सुक
पुरत:-त्वाम्-	सामने आपको
अवलोक्य	देख कर
लज्जिता:	लज्जित हो गईं

व्रत के नियम समाप्त होने पर यमुना के जल में कीडा करने को उत्सुक उन गोपिकाओं ने अपने वस्त्र यमुना के तट पर छोड दिये। आपको सामने देख कर वे लज्जित हो गईं।

त्रपया नमिताननास्वथो वनितास्वम्बरजालमन्तिके ।
निहितं परिगृह्य भूरुहो विटपं त्वं तरसाऽधिरूढवान् ॥५॥

त्रपया	लज्जा से
नमित-आननासु-	झुके हुए मुख
अथ: वनितासु-	तब युवतियों के होने पर
अम्बर-जालम्-	वस्त्रों के समूह को
अन्तिके निहितं	(जो) पास मे रखे हुए थे
परिगृह्य	उठा कर
भूरुह: विटपम्	वृक्ष की डाली पर
त्वं तरसा-	आप वेग से
अधिरूढवान्	चढ गए

उन युवतियों के मुख लज्जा से झुक गए। तब निकट ही रखे हुए वस्त्रों के ढेर को उठा कर आप वेग से वृक्ष की डाल पर चढ गए।

इह तावदुपेत्य नीयतां वसनं व: सुदृशो यथायथम् ।
इति नर्ममृदुस्मिते त्वयि ब्रुवति व्यामुमुहे वधूजनै: ॥६॥

इह तावत्-	यहां तब
उपेत्य नीयतां	आ कर ले लें
वसनं व:	वस्त्र आप सब
सुदृश:	सुनयनी
यथायथम् इति	जो जिसका है इस प्रकार
नर्म-मृदु-स्मिते	कोमल मधुर हास के साथ
त्वयि ब्रुवति	आपके कहने पर
व्यमुमुहे	विमोहित हो गईं
वधूजनै:	गोपिकाएं

कोमल मधुर हास के साथ फिर आपने कहा, 'हे सुनयनी बालाओं! आप सब यहां आ कर जो जिसका वस्त्र है, ले लेवें।' यह सुन कर गोपिकाएं विमोहित हो गईं।

अयि जीव चिरं किशोर नस्तव दासीरवशीकरोषि किम् ।
प्रदिशाम्बरमम्बुजेक्षणेत्युदितस्त्वं स्मितमेव दत्तवान् ॥७॥

अयि जीव चिरं	अयि जीओ चिरकाल तक
किशोर	हे नन्दकिशोर
न:-तव दासी:-	हम आपकी दासी हैं
अवशी-करोषि किम्	विवश करते हैं क्यों
प्रदिश-अम्बरम्-	दे देवें वस्त्र
अम्बुजेक्षण-	हे कमलनयन
इति-उदित:-	इस प्रकार कहने पर

त्वं स्मितम्-एव	आपने मुस्कान ही
दत्तवान्	दी

हे नन्द किशोर! आप चिरञ्जीवी हों! हे कमलनयन! हम आपकी दासी हैं , हमें विवश क्यों करते हैं, हमारे वस्त्र दे दीजिये।' इस प्रकार उनके कहने पर आप केवल मुस्कुरा दिये।

अधिरुह्य तटं कृताञ्जली: परिशुद्धा: स्वगतीर्निरीक्ष्य ता: ।
वसनान्यखिलान्यनुग्रहं पुनरेवं गिरमप्यदा मुदा ॥८॥

अधिरुह्य तटं	(जल से) चढ कर तट पर
कृताञ्जली:	हाथ जोडे हुए
परिशुद्धा:	निर्मल (मन वाली)
स्वगती:-	आप ही एकमात्र गति (आश्रय वाली)
निरीक्ष्य ता:	देख कर उनको
वसनानि-	वस्त्र
अखिलानि-	समस्त
अनुग्रहं	अनुग्रह
पुन:-एवं	फिर और
गिरम्-अपि-	वचन भी
अदा मुदा	दिये प्रसन्नता से

यह देख कर कि वे जल से निकल कर किनारे पर आ गई हैं, और उन निर्मल मन वाली गोपिकाओं के एकमात्र आश्रय आप ही हैं, आपने उनके समस्त वस्त्र दे दिये और फिर उन पर अनुग्रह करते हुए प्रसन्नता पूर्वक कुछ वचन भी दिये।

विदितं ननु वो मनीषितं वदितारस्त्विह योग्यमुत्तरम् ।
यमुनापुलिने सचन्द्रिका: क्षणदा इत्यबलास्त्वमूचिवान् ॥९॥

विदितं ननु	ज्ञात है निश्चय ही

व: मनीषितं	आप लोगों का मनोरथ
वदितार:-	प्रत्युत्तर में
तु-इह	तो यहां
योग्यम्-उत्तरम्	योग्य उत्तर
यमुना-पुलिने	यमुना के तट पर
सचन्द्रिका:	चन्द्रिका युक्त
क्षणदा: इति-	रात्रि में इस प्रकार
अबला:-	अबलाओं को
त्वम्-ऊचिवान्	आपने कहा

आपने उन अबलाओं को कहा 'नि:सन्देह आप सभी का मनोरथ मुझे ज्ञात है। इसके प्रत्युत्तर में मैं यहां यमुना तट पर, चन्द्रिका युक्त रात्रि में योग्य उत्तर दूंगा।'

उपकर्ण्य भवन्मुखच्युतं मधुनिष्यन्दि वचो मृगीदृशः ।
प्रणयादयि वीक्ष्य वीक्ष्य ते वदनाब्जं शनकैर्गृहं गताः ॥१०॥

उपकर्ण्य	सुन कर
भवत्-मुख-च्युतं	आपके मुख से निकले हुए
मधु-निष्यन्दि वच:	मधु झरते हुए वचनों को
मृगीदृश:	वे मृगनयनी
प्रणयात्-अयि	प्रेम से अयि!
वीक्ष्य वीक्ष्य	देखते देखते
ते वदन्-आब्जं	आपके मुखारविन्द को
शनकै:-गृहं गता:	शनै: शनै: घर को गईं

हे प्रभो! आपके मुख से निकले हुए इन मधु झरते वचनों को सुन कर वे मृगनयनी युवतियां प्रेम से आपके मुखारविन्द को देखते देखते धीरे धीरे घर चली गईं।

इति नन्वनुगृह्य वल्लवीर्विपिनान्तेषु पुरेव सञ्चरन् ।
करुणाशिशिरो हरे हर त्वरया मे सकलामयावलिम् ॥११॥

इति ननु-	इस प्रकार से ही
अनुगृह्य	अनुग्रह करके
वल्लवीः-	गोपिकाओं पर
विपिन-अन्तेषु	वन के अन्त में
पुरा-इव सञ्चरन्	पहले की ही भांति विचरण करते रहे
करुणाशिशिरः	करुणा से शीतल
हरे	हे हरे!
हर त्वरया	हर लीजिये जल्दी से
मे सकल-	मेरे सभी
आमयावलिम्	कष्ट समूहों को

गोपिकाओं पर इस प्रकार अनुग्रह कर के पहले की ही भांति आप वनान्तों में विचरते रहे। करुणा से शीतल, हे हरे! आप मेरे समस्त कष्टों को शीघ्र ही हर लीजिये।

दशक ६१

ततश्च वृन्दावनतोऽतिदूरतो
वनं गतस्त्वं खलु गोपगोकुलैः ।
हृदन्तरे भक्ततरद्विजाङ्गना-
कदम्बकानुग्रहणाग्रहं वहन् ॥१॥

ततः-च	और फिर
वृन्दावनतः-	वृन्दावन से
अतिदूरतः	बहुत दूर पर
वनं गतः-त्वं	वन को गये आप
खलु गोप-गोकुलैः	निःसन्देह गोप और गौओं के साथ
हृदन्तरे	हृदय के अन्दर
भक्ततर-	भक्तों में श्रेष्ठ
द्विजाङ्गनाः-	द्विजाङ्गना
कदम्बक-	गण पर
अनुग्रहण-	अनुग्रह करने की
आग्रहं वहन्	कामना लिये हुए

और फिर एक बार आप गोप और गौओं सहित वृन्दावन से बहुत दूर गये। उस समय, निस्सन्देह, आप के हृदय मे द्विजाङ्गनाओं के समुदाय पर अनुग्रह करने की कामना थी।

ततो निरीक्ष्याशरणे वनान्तरे
किशोरलोकं क्षुधितं तृषाकुलम् ।
अदूरतो यज्ञपरान् द्विजान् प्रति
व्यसर्जयो दीदिवियाचनाय तान् ॥२॥

ततः निरीक्ष्य-	तब देख कर

अशरणे वनान्तरे	शरण रहित वन के अन्त में
किशोर-लोकं	गोप बालकों को
क्षुधितं तृषा-आकुलं	भूखे और प्यास से व्याकुल
अदूरत:	पास ही
यज्ञपरान्	यज्ञ करते हुए
द्विजान् प्रति	द्विजों के पास
व्यसर्जय:	भेजा
दीदिवि-याचनाय	(पका हुआ) चावल मांगने के लिये
तान्	उनको

आपने देखा, वन के अन्त मे गये हुएकिसी भी शरण स्थल से विहीन, गोप बालक भूख और प्यास से व्याकुल हो गए हैं। तब आपने उनको पास ही में यज्ञ करते हुए द्विजों के पास पकाए हुए चावल मांगने के लिए भेजा।

गतेष्वथो तेष्वभिधाय तेऽभिधां
कुमारकेष्वोदनयाचिषु प्रभो ।
श्रुतिस्थिरा अप्यभिनिन्युरश्रुतिं
न किञ्चिदूचुश्च महीसुरोत्तमा: ॥३॥

गतेषु-अथ: तेषु-	जाने पर तब फिर उनके
अभिधाय	बता कर
ते-अभिधां	आपका नाम
कुमारकेषु-	कुमारों ने
ओदन-याचिषु	भात मांगने पर
प्रभो	हे प्रभो!
श्रुति-स्थिरा अपि-	श्रुति (शास्त्रों में) दृढ होते हुए भी

अभिनिन्यु:-अश्रुतिं	अभिनय किया न सुनने का
न किञ्चित्-	नहीं कुछ भी
ऊचु:-च	और कहा
महीसुर-उत्तमा:	ब्राह्मण श्रेष्ठों ने

हे प्रभो! आपके कहने से गोपकुमार चले गए और आपका नाम बता कर उन्होंने भात की याचना की। किन्तु श्रुतियों में पारङ्गत होते हुए भी, उन ब्राह्मण श्रेष्ठों ने न सुनने का अभिनय किया और कुछ कहा भी नहीं।

अनादरात् खिन्नधियो हि बालका: ।
समाययुर्युक्तमिदं हि यज्वसु ।
चिरादभक्ता: खलु ते महीसुरा:
कथं हि भक्तं त्वयि तै: समर्प्यते ॥४॥

अनादरात्	अनादर से
खिन्नधिय:	दु:खी मन से
हि बालका:	ही बालक
समाययु:-	आ गए
युक्तम्-इदं हि	उचित यही था
यज्वसु	यज्ञ कर्ता
चिरात्-अभक्ता:	(जो) बहुत समय से भक्ति रहित थे
खलु ते महीसुरा:	यथार्थ में वे ही ब्राह्मण
कथं हि	कैसे भला
भक्तं त्वयि	भोजन आपको
तै: समर्प्यते	वे दे सकते थे

अनादर से दु:खी हुए वे बालक लौट आए। उन यज्ञ कर्ता ब्राह्मणों का यह व्यवहार उनकी भावना के अनुकूल ही था, क्योंकि दीर्घ काल से यज्ञादि रीतियों का पालन करके, वे भक्ति रहित ब्राह्मण, आपके लिये भात कैसे समर्पित करते।

निवेदयध्वं गृहिणीजनाय मां
दिशेयुरन्नं करुणाकुला इमाः ।
इति स्मितार्द्रं भवतेरिता गता-
स्ते दारका दारजनं ययाचिरे ॥५॥

निवेदयध्वं	सूचना दो
गृहिणीजनाय	गृहणियों को
माम्	मेरी
दिशेयुः-अन्नं	देंगी अन्न
करुणाकुलाः-इमाः	दयामयी ये लोग
इति स्मित-आर्द्रम्	इस प्रकार मुस्कुरा कर मधुरता से
भवता-ईरिताः	आपके कहे हुए
गताः-ते दारकाः	गए वे बालक
दारजनं ययाचिरे	स्त्रियों से याचना की

ब्राह्मणों की गृहणियों को मेरी सूचना दो। करुणामयी वे लोग निश्चय ही अन्न देंगी।' मधुर मुस्कान के साथ आपके यह कहने पर वे बालक स्त्रियों के पास गए और याचना की।

गृहीतनाम्नि त्वयि सम्भ्रमाकुला-
श्चतुर्विधं भोज्यरसं प्रगृह्य ताः ।
चिरंधृतत्वत्प्रविलोकनाग्रहाः
स्वकैर्निरुद्धा अपि तूर्णमाययुः ॥६॥

गृहीत-नाम्नि त्वयि	लेने पर नाम आपका
सम्भ्रम-आकुलाः-	उत्सुक हुई और (आपको देखने के लिये) व्याकुल
चतुर्विधं भोज्य-रसं	चारों प्रकार के भोज्य रसों को
प्रगृह्य-ताः	ले कर वे
चिरं-धृत-त्वत्-	दीर्घ समय से लिये हुए आपके

प्रविलोकन-आग्रहा:	दर्शन की लालसा
स्वकै:-निरुद्धा: अपि	स्वजनों के द्वारा रोके जाने पर भी
तूर्णम्-आययु:	चुपचाप आ गईं

वे द्विजाङ्गनाये आपका नाम सुन कर आपको देखने की उत्कन्ठा से व्याकुल हो उठीं। दीर्घ काल से आपको देखने की लालसा लिये हुए वे, चारों प्रकार के भोज्य पदार्थों को ले कर, स्वजनों द्वारा रोके जाने पर भी, चुपके से आ गईं।

विलोलपिञ्छं चिकुरे कपोलयो:
समुल्लसत्कुण्डलमार्द्रमीक्षिते ।
निधाय बाहुं सुहृदंससीमनि
स्थितं भवन्तं समलोकयन्त ता: ॥७॥

विलोल-पिञ्छं	लहराते हुए मोर पंख (वाले)
चिकुरे कपोलयो:	केशों में. गालों पर
समुल्लसत्-	झिलमिलाते
कुण्डलम्-	कुण्डल (वाले)
आर्द्रम्-ईक्षिते	करुण दृष्टि (वाले)
निधाय बाहुं	रखे हुए हाथ
सुहृत्-अंस-सीमनि	बन्धु के कन्धे के ऊपर
स्थितं भवन्तं	खडे हुए आपका
समलोकयन्त ता:	अवलोकन किया उन्होंने

आपके केशों में मोर पंख लहरा रहे थे और गालों पर कुण्डल झिलमिला रहे थे। सकरुण दृष्टि वाले आप अपने बन्धु के कन्धे पर हाथ रख कर खडे हुए थे। उन द्विजाङ्गनाओं ने आपको इस रूप में भली भांति देखा।

तदा च काचित्त्वदुपागमोद्यता
गृहीतहस्ता दयितेन यज्वना ।
तदैव सञ्चिन्त्य भवन्तमञ्जसा
विवेश कैवल्यमहो कृतिन्यसौ ॥८॥

तदा च काचित्-	और तब एक किसी (द्विजाङ्गना)
त्वत्-उपागम-	(जो) आपके पास जाने के लिए
उद्यता गृहीत-हस्ता	उद्यत थी, पकड ली गई हाथ से
दयितेन यज्वना	पति के द्वारा यज्ञ करते हुए
तदा-एव	उसी समय
सञ्चिन्त्य	चिन्तन करते हुए
भवन्तम्-अञ्जसा	आपका बिना कष्ट के
विवेश कैवल्यम्-	समा गई कैवल्य (आपके सामीप्य) अवस्था में
अहो	अहो! क्या आश्चर्य!
कृतिनी-असौ	पुण्यवती थी यह

उस समय, जो आपके पास जाने को उद्यत थी एक द्विजाङ्गना को, उसके यज्ञ कर्मी पति ने हाथ पकड कर रोक लिया। तब वह आपका सञ्चिन्तन करते हुए बिना कष्ट के ही कैवल्य स्थिति को (आपके सानिध्य को) प्राप्त हो गई। अहो! आश्चर्य है! कितनी पुण्यवती थी वह!

आदाय भोज्यान्यनुगृह्य ताः पुन-
स्त्वदङ्गसङ्गस्पृहयोज्झतीर्गृहम् ।
विलोक्य यज्ञाय विसर्जयन्निमा-
श्चकर्थ भर्तृनपि तास्वगर्हणान् ॥९॥

आदाय भोज्यानि-	ले कर भोज्य पदार्थों को
अनुगृह्य ताः	कृपा करके उन पर
पुनः	फिर से
त्वत्-अङ्ग-	आपके अङ्गों के
सङ्ग-स्पृहया-	सङ्ग की कामना से
उज्झतीः गृहम्	त्याग कर घर को

विलोक्य यज्ञाय	देख कर, यज्ञ के लिये
विसर्जयन्-	भेज कर
इमा:-चकर्थ	इनको, कर दिया
भर्तृन-अपि	पतियों को भी
तासु-अगर्हणान्	उनके प्रति निन्दा रहित

दविजाङ्गनाओं के द्वारा लाए हुए भोजन को आपने स्वीकार किया। फिर जब आपने देखा कि वे लोग आपके अङ्ग साहचर्य की कामना से अपने घर भी त्याग आई हैं, तब आपने उन्हे यज्ञ की क्रियाएं करने के लिये वापस भेज दिया, और उनके पतियों के मनों को भी उनके प्रति निन्दा रहित कर दिया।

निरूप्य दोषं निजमङ्गनाजने
विलोक्य भक्तिं च पुनर्विचारिभि:
प्रबुद्धतत्त्वैस्त्वमभिष्टुतो द्विजै-
र्मरुत्पुराधीश निरुन्धि मे गदान् ॥१०॥

निरूप्य	समझ कर
दोषं निजम्-	गलती को अपनी
अङ्गनाजने	(और) पत्नियों में
विलोक्य भक्तिं	देख कर भक्ति
च पुन:-	और फिर
विचारिभि:	विचारों के द्वारा
प्रबुद्ध-तत्त्वै:-	बोध हुए तत्त्वों से
त्वम्-अभिष्टुत:	आप की स्तुति की गई
द्विजै:-	ब्राह्मणों के द्वारा
मरुत्पुराधीश	हे मरुत्पुराधीश!
निरुन्धि मे गदान्	नष्ट करें मेरे रोगों को

अपनी गलती समझ कर, अपनी पत्नियों की भक्ति देख कर फिर से विचार कर के जब उन ब्राह्मणों को वास्तविक तत्त्व का बोध हुआ, तब उन लोगों ने आपकी स्तुति की। हे मरुत्पुराधीश! नष्ट कर दें मेरे रोगों को।

दशक ६२

कदाचिद्गोपालान् विहितमखसम्भारविभवान्
निरीक्ष्य त्वं शौरे मघवमदमुद्ध्वंसितुमनाः ।
विजानन्नप्येतान् विनयमृदु नन्दादिपशुपा-
नपृच्छ: को वाऽयं जनक भवतामुद्यम इति ॥१॥

कदाचित्-	एक बार
गोपालान्	गोपालगण
विहित-मख-	संग्रह करके यज्ञ के लिए
सम्भार-विभवान्	सामग्री अनेकानेक
निरीक्ष्य त्वं	(यह) देख कर आप
शौरे	हे शौरे!
मघव-मदम्-	इन्द्र के गर्व को
उद्ध्वंसितु-मना:	नष्ट करने के मन से
विजानन-अपि-एतान्	जानते हुए भी इन लोगों को
विनय-मृदु	विनयपूर्वक और मधुरता से
नन्द-आदि-पशुपान्-	नन्द आदि गोपालों को
अपृच्छ:	पूछा
क: वा-अयं	क्या है यह
जनक भवताम्-	हे पिताजी! आपलोगों का
उद्यम इति	आयोजन यह

हे शौरे! एक बार आपने देखा कि गोपालगण यज्ञ के लिये अनेकानेक सामग्री का संग्रह कर रहे हैं। आप यह जानते थे कि यह इन्द्र को प्रसन्न करने के लिये है, किन्तु आप इन्द्र का गर्व नष्ट करना चाहते थे। इसलिये जानते हुए भी आपने विनयपूर्वक और मधुरता से पूछा 'पिताजी आपका यह आयोजन किस लिए है?'

बभाषे नन्दस्त्वां सुत ननु विधेयो मघवतो
मखो वर्षे वर्षे सुखयति स वर्षेण पृथिवीम् ।
नृणां वर्षायत्तं निखिलमुपजीव्यं महितले
विशेषादस्माकं तृणसलिलजीवा हि पशवः ॥२॥

बभाषे नन्दः-त्वाम्	कहा नन्द ने आपको
सुत ननु	हे पुत्र! निश्चय ही
विधेयः मघवतः	नियम है इन्द्र के लिये
मखः वर्षे वर्षे	यज्ञ प्रति वर्ष
सुखयति स	सुख देता है वह
वर्षेण पृथिवीम्	वर्षा से पृथ्वी को
नृणाम् वर्षायत्तम्	मनुष्यों की वर्षा पर आधारित है
निखिलम्-उपजीव्यम्	समस्त उपजीविका
महितले	भूमि पर
विशेषात्-अस्माकम्	विशेषतः हमारे
तृण-सलिल-जीवा	घास और जल से जीवित
हि पशवः	हैं पशुगण

नन्द ने उत्तर दिया 'हे पुत्र! प्रतिवर्ष इन्द्र के लिये यज्ञ करने का विधान है। वह वर्षा से पृथ्वी को सुख देता है, भूतल पर मनुष्यों की समस्त उपजीविका वर्षा पर ही निर्भर है, विशेष कर हमारे पशुगण तो घास और जल से ही जीवित हैं।'

इति श्रुत्वा वाचं पितुरयि भवानाह सरसं
धिगेतन्नो सत्यं मघवजनिता वृष्टिरिति यत् ।
अदृष्टं जीवानां सृजति खलु वृष्टिं समुचितां
महारण्ये वृक्षाः किमिव बलिमिन्द्राय ददते ॥३॥

इति श्रुत्वा	यह सुन कर
वाचं पितुः-	वचन पिता के

अयि भवान्-आह	अयि! आपने कहा
सरसं	तर्क सहित
धिक्-एतत्-नो सत्यं	धिक्कार है! यह नहीं है सत्य
मघव-जनिता	ईन्द्र के द्वारा उत्पादित है
वृष्टिः-इति यत्	वृष्टि यह कहना, जो
अदृष्टं जीवानां	अदृष्ट (कर्म) हैं जीवों के
सृजति खलु	सृजन करते हैं निश्चय ही
वृष्टिं समुचितां	वृष्टि का समुचित
महा-अरण्ये	महा अरण्यों में
वृक्षाः किम्-इव	वृक्ष क्या कभी
बलिम्-इन्द्राय	बलि इन्द्र के लिये
ददते	देते हैं

हे नाथ! पिता के ये वचन सुन कर आपने तर्क सहित कहा कि ' धिक्कार है, ऐसा कहना कि वृष्टि इन्द्र के द्वारा उत्पादित है, यह सत्य नहीं है। जीव मात्र के अदृष्ट पूर्वजन्मकृत कर्मों से ही समुचित वृष्टि का सृजन होता है। अन्यथा महा अरण्यों मे स्थित वृक्ष क्या कभी इन्द्र को बलि देते हैं?'

इदं तावत् सत्यं यदिह पशवो नः कुलधनं
तदाजीव्यायासौ बलिरचलभर्त्रे समुचितः ।
सुरेभ्योऽप्युत्कृष्टा ननु धरणिदेवाः क्षितितले
ततस्तेऽप्याराध्या इति जगदिथ त्वं निजजनान् ॥४॥

इदं तावत् सत्यं	यह तब सत्य ही है
यत्-इह पशवः	कि यहां पशु
नः कुल-धनं	हमारे कुल के धन हैं
तत्-आजीव्याय-	इस लिए उनकी आजीविका के लिए

असौ-बलिः	यह बलि
अचल-भर्त्रे	पर्वतराज के लिए
समुचितः	उचित है
सुरेभ्यः-अपि-	देवताओं से भी
उत्कृष्टा ननु	विशिष्ट है निश्चय ही
धरणि-देवाः	पृथ्वी के देव (ब्राह्मण)
क्षितितले ततः-	भूतल पर इसलिए
ते-अपि-आराध्या	वे भी पूज्य हैं
इति जगदिथ त्वम्	यह कहा आपने
निज-जनान्	अपने स्वजनों को

'यह तो सत्य ही है कि पशु हमारे कुल के धन हैं। उनकी आजीविका के लिये यह बलि पर्वतराज के लिए उचित है। और भूतल पर देवताओं से भी भूदेव (ब्राह्मण) विशिष्ट हैं। इसलिए वे भी पूज्य है।' इस प्रकार आपने अपने स्वजनों से कहा।

भवद्वाचं श्रुत्वा बहुमतियुतास्तेऽपि पशुपा:
द्विजेन्द्रानर्चन्तो बलिमददुरुच्चै: क्षितिभृते ।
व्यधु: प्रादक्षिण्यं सुभृशमनमन्नादरयुता-
स्त्वमादश्शैलात्मा बलिमखिलमाभीरपुरत: ॥५॥

भवत्-वाचं श्रुत्वा	आपके वचनों को सुन कर
बहु-मति-युताः-	अत्यन्त आदर से
ते-अपि पशुपाः	उन गोपालगण ने भी
द्विजेन्द्रान्-अर्चन्तः	ब्राह्मणों की पूजा करके
बलिम्-अददुः-	बलि चढाई
उच्चैः क्षितिभृते	प्रचूरता से, गिरिराज को

व्यधुः प्रादक्षिण्यं	सम्पन्नकी प्रदक्षिणा
सुभृशम्-अनमन्-	बारम्बार प्रणाम किया
आदरयुता:-	सादर
त्वम्-आदः	आपने भोग किया
शैल-आत्मा	पर्वत की आत्मा (बन कर)
बलिम्-अखिलम्-	बलि समस्त (का)
आभीर-पुरतः	गोपों के समक्ष

आपके वचनो सुन कर, गोपगणों ने अत्यन्त आदरपूर्वक ब्राह्मणों की पूजा की और प्रचूर मात्रा में गिरिराज को बलि चढाई। फिर प्रदक्षिणा सम्पन्न करके आदर सहित बारम्बार प्रणाम किया। आपने पर्वत की आत्मा बन कर गोपों के सामने समस्त बलि की सामग्री का भोग लगाया।

अवोचश्चैवं तान् किमिह वितथं मे निगदितं
गिरीन्द्रो नन्वेष स्वबलिमुपभुङ्क्ते स्ववपुषा ।
अयं गोत्रो गोत्रद्विषि च कुपिते रक्षितुमलं
समस्तानित्युक्ता जहृषुरखिला गोकुलजुषः ॥६॥

अवोचः-च-एवं तान्	कहा और इस प्रकार उनको
किम्-इह वितथं मे	क्या यहां कुछ झूठ मैने
निगदितं	कहा था
गिरीन्द्रः ननु एष	गिरिराज सम्भवतः यह
स्व-बलिम्-उपभुङ्क्ते	अपनी बलि का भोग करता है
स्व-वपुषा	अपने ही शरीर से
अयं गोत्रः	यह पर्वत
गोत्रद्विषि च	इन्द्र के और
कुपिते	क्रुद्ध हो जाने पर

रक्षितुम्-अलं	रक्षा करने में पर्याप्त है
समस्तान्-	सभी की
इति-उक्ता	इस प्रकार कहे जाने पर
जहृषुः-अखिला	प्रसन्न हो गए सभी
गोकुल-जुषः	गोकुलवासी

फिर आपने उनसे कहा ,'मैने यहां कुछ भी झूठ कहा क्या? सम्भवत: यह गिरिराज स्वयं अपने शरीर से आपकी बलि का भोग करता है। पर्वत शत्रु इन्द्र के कुपित हो जाने पर भी यह सभी की रक्षा करने में समर्थ है।' यह सुन कर सभी गोकुल वासी प्रसन्न हो गए।

परिप्रीता याता: खलु भवदुपेता व्रजजुषो
व्रजं यावत्तावन्निजमखविभङ्गं निशमयन् ।
भवन्तं जानन्नप्यधिकरजसाऽऽक्रान्तहृदयो
न सेहे देवेन्द्रस्त्वदुपरचितात्मोन्नतिरपि ॥७॥

परिप्रीता	हर्ष प्रफुल्लित
याताः खलु	गए जब
भवत्-उपेता	आपके सङ्ग
व्रजजुषः व्रजं	व्रजवासी व्रज को
यावत्-तावत्-	जिस समय तब तक
निज-मख-विभङ्गं	अपने यज्ञ का भङ्ग (होना)
निशमयन्	सुनकर
भवन्तं जानन्-अपि-	आपको जानते हुए भी
अधिक-रजसा-	अधिक रजोगुण के (उत्कर्ष के कारण)
आक्रान्त-हृदयः	वविक्षिप्त हृदय वाले ने
न सेहे देवेन्द्रः-	नहीं सहन किया इन्द्र ने

त्वत्-उपरचित-	आपके द्वारा सम्वर्धित
आत्म-उन्नति:-अपि	(उसके) स्वयं की उन्नति भी

व्रजवासी हर्ष से प्रफुल्लित हो कर आपके साथ व्रज चले गए। उसी समय इन्द्र ने अपने यज्ञ के विध्वन्स के बारे में सुना। आपके पराक्रम से भलि भांति परिचित होते हुए भी, और आप ही से सम्वर्धित स्वयं की उन्नति के प्रति सजग होते हुए भी, रजोगुण के उत्कर्ष से विक्षिप्त हृदय वाले इन्द्र को यह सहन नहीं हुआ।

मनुष्यत्वं यातो मधुभिदपि देवेष्वविनयं
विधत्ते चेन्नष्टस्त्रिदशसदसां कोऽपि महिमा ।
ततश्च ध्वंसिष्ये पशुपहतकस्य श्रियमिति
प्रवृत्तस्त्वां जेतुं स किल मघवा दुर्मदनिधि: ॥८॥

मनुष्यत्वं यात:	मनुष्यत्व प्राप्त
मधुभित्-अपि	महा विष्णु भी
देवेषु-अविनयं	(यदि) देवों का निरादर
विधत्ते चेत्-	करे यदि
नष्ट:-त्रिदशसदसां	नष्ट हो जाएगी देवाताओं की
क:-अपि महिमा	जो कुछ भी महिमा है
तत:-च ध्वंसिष्ये	इसलिए ध्वन्स कर दूंगा
पशुप-हतकस्य	गोप अधम की
श्रियम्-इति	सम्पत्ति, इस प्रकार
प्रवृत्त:-त्वां जेतुं	प्रेरित हुए जीतने के लिए
स किल मघवा	वह ही इन्द्र
दुर्मद-निधि:	दुर्मद से परिपूर्ण

दुर्दम्य मद से परिपूर्ण इन्द्र ने विचार किया कि, 'यदि मनुष्यत्व को प्राप्त महा विष्णु (मधु के वध कर्ता) भी देवताओं का निरादर करते हैं, तो देवों की जो कुछ भी महिमा है वह भी नष्ट हो जाएगी। इस लिए उस अधम गोप की सारी सम्पत्ति नष्ट कर दूंगा।' इस प्रकार वह आपको जीतने का उद्यम करने लगा।

त्वदावासं हन्तुं प्रलयजलदानम्बरभुवि
प्रहिण्वन् बिभ्राण; कुलिशमयमभ्रेभगमनः ।
प्रतस्थेऽन्यैरन्तर्दहनमरुदाद्यैर्विहसितो
भवन्माया नैव त्रिभुवनपते मोहयति कम् ॥९॥

त्वत्-आवासं हन्तुं	आपके निवास (व्रज) को नष्ट करने के लिए
प्रलय-जलदान्-	प्रलयंकारी मेघों को
अम्बर-भुवि	आकाश की सतह पर
प्रहिण्वन्	प्रवाहित कर के
बिभ्राणः कुलिशम्-	घुमाते हुए वज्र को
अयम्-अभ्रेभ-गमनः	इसने ऐरावत पर आरूढ हो कर
प्रतस्थे-अन्यैः-अन्तः-	प्रस्थान किया, दूसरे (सब) अन्तःकरण मे
दहन-मरुत-आद्यैः-	अग्नि वायु आदि के द्वारा
विहंसितः	उपहासित हुआ
भवत्-माया	आपकी माया
न-एव	नहीं भी
त्रिभुवनपते	हे त्रिभुवनपते!
मोहयति कम्	मोहित करती किसको

आपके निवास व्रज को नष्ट करने के लिए, उसने आकाश की सतह पर प्रलयंकारी मेघों को प्रवाहित किया। ऐरावत पर आरूढ हो कर वज्र को घुमाते हुए उसने प्रस्थान किया, जब कि अन्य देवगण अग्नि वायु आदि अपने अन्तःकारण मे उसका उपहास कर रहे थे। हे त्रिभुवनपते! आपकी माया किसको मोहित नहीं करती है?

सुरेन्द्रः क्रुद्धश्चेत् द्विजकरुणया शैलकृपयाऽ-
प्यनातङ्कोऽस्माकं नियत इति विश्वास्य पशुपान् ।
अहो किन्नायातो गिरिभिदिति सञ्चिन्त्य निवसन्
मरुद्गेहाधीश प्रणुद मुरवैरिन् मम गदान् ॥१०॥

सुरेन्द्रः क्रुद्धः-चेत्	इन्द्र क्रुद्ध हो जाते हैं यदि
द्विज-करुणया	ब्राह्मणो की दया से
शैल-कृपया-अपि-	पर्वत की कृपा से भी
अनातङ्कः-	भयरहित
अस्माकम्	हैं हम
नियत इति	निश्चय है यह
विश्वास्य पशुपान्	विश्वास दिला कर गोपों को
अहो	अहो!
किम्-न-आयातः	क्या नहीं आया
गिरिभिद्-इति	इन्द्र इस प्रकार
सञ्चिन्त्य निवसन्	सोचते हुए रुके रहे
मरुद्गेहाधीश	हे मरुद्गेहाधीश!
प्रणुद मुरवैरिन्	प्रणष्ट करे हे मुरारि!
मम गदान्	मेरे रोगों को

इन्द्र यदि क्रुद्ध हो जाते हैं, तो भी ब्राह्मणों की दया और पर्वत की कृपा से हम निश्चय ही भयरहित हैं।' हे मरुद्गेहाधीश! इस प्रकार गोपों को विश्वास दिला कर आप चिन्ता करते हुए रुके रहे कि इन्द्र अभी तक नहीं आया। हे मुरारे! मेरे रोगों को प्रणष्ट करें।

दशक ६३

दद्दशिरे किल तत्क्षणमक्षत-
स्तनितजृम्भितकम्पितदिक्तटा: ।
सुषमया भवदङ्गतुलां गता
व्रजपदोपरि वारिधरास्त्वया ॥१॥

दद्दशिरे किल	देखी गई नि:सन्देह
तत्-क्षणम्-	उसी क्षण से
अक्षत-स्तनित-	अबाध गर्जना के
जृम्भित-कम्पित-	फैलने से प्रकम्पित हो गईं
दिक्-तटा:	दिशाएं अन्त तक
सुषमया	कान्ति से
भवत्-अङ्ग-तुलां	आपके श्री अङ्गों के समान
गता:	धारण कर के
व्रजपद-उपरि	व्रज स्थान के ऊपर
वारिधरा:-त्वया	जल मेघ आपके द्वारा

उसी क्षण आपने देखा कि अबाध गर्जना के फैलने से दिशाएं अन्त तक कम्पित हो उठीं। आपके श्री अङ्गों की कान्ति के तुल्य कान्ति धारण कर के जल मेघ व्रज के आकाश में छा गए।

विपुलकरकमिश्रैस्तोयधारानिपातै-
र्दिशिदिशि पशुपानां मण्डले दण्ड्यमाने ।
कुपितहरिकृतान्न: पाहि पाहीति तेषां
वचनमजित श्रृण्वन् मा बिभीतेत्यभाणी: ॥२॥

विपुल-करक-मिश्रै:-	बडे बडे ओलों के साथ
तोय-धारा-निपातै:-	जल की धारा गिरने से

दिशि-दिशि	हर दिशा में
पशुपानां मण्डले	गोप मण्डलों में
दण्ड्य़माने	दण्डित होते हुए
कुपित-	क्रुद्ध
हरि-कृतात्-	इन्द्र की करनी से
न: पाहि पाहि-	हमें बचाइए बचाइए
इति तेषां वचनम्-	ऐसे उनके वचन
अजित श्रृणवन्	हे अजित! सुन कर
मा विभीत-	'मत डरो'
इति-अभाणी:	यह कहा (आपने)

हर दिशा में बडे बडे ओलों के साथ मूसलाधार वर्षण से, गोप मण्डल क्रुद्ध इन्द्र की करनी से दण्डित होता हुआ पुकारने लगा, 'हमें बचाइए, बचाइए।' हे अजित! उनके ऐसे वचन सुन कर आपने कहा, 'डरो मत।'

कुल इह खलु गोत्रो दैवतं गोत्रशत्रो-
र्विहतिमिह स रुन्ध्यात् को नु व: संशयोऽस्मिन् ।
इति सहसितवादी देव गोवर्द्धनाद्रिं
त्वरितमुदमुमूलो मूलतो बालदोर्भ्याम् ॥३॥

कुल इह	कुल का यहां
खलु गोत्र: दैवतं	निश्चय ही गिरिराज देवता है
गोत्र-शत्रो:-	पर्वत के शत्रु (इन्द्र) के
विहितम्-इह्	आक्रमण को यहां
स रुन्ध्यात्	वही रोकेगा
क: नु व: संशय:-	कहां है आप लोगों को संशय

अस्मिन् इति	इसमें इस प्रकार
सहसित-वादी	हंसते हुए कहा
देव	हे देव!
गोवर्द्धन-अद्रिम्	गोवर्द्धन गिरि को
त्वरितम्-	झट से
उदमुमूलः मूलतः	उखाड लिया मूल से
बाल-दोर्भ्याम्	कोमल दो हाथों से

'यहां इस कुल के देवता निश्चय ही गिरिराज हैं। पर्वत के शत्रु इन्द्र के आक्रमण को वे ही रोकेंगे। इस में आप लोगों को कहां संन्देह है?' आपने हंसते हुए इस प्रकार कहा और झट से अपने कोमल दो हाथों से, गोवर्द्धन गिरिराज को समूल उखाड लिया।

तदनु गिरिवरस्य प्रोद्धृतस्यास्य तावत्
सिकतिलमृदुदेशे दूरतो वारितापे ।
परिकरपरिमिश्रान् धेनुगोपानधस्ता-
दुपनिदधदधत्था हस्तपद्मेन शैलम् ॥४॥

तदनु गिरिवरस्य	तदनन्तर गिरिराज के
प्रोद्धृतस्य-	(ऊपर) उठाए हुए
अस्य तावत्	इसके तब
सिकतिल-मृदु-देशे	बालू वाले कोमल सतह पर
दूरतः वारित-आपे	दूर तक रोके गए जल वाले के
परिकर-परिमिश्रान्	समस्त सामग्रियों के सहित
धेनु-गोपान्-	गौ और गोपों को
अधस्तात्-	नीचे
उपनिदधत्-	करके

अधत्था:	(आपने) ऊंचा उठा लिया
हस्त-पद्मेन	एक हस्त पद्म से
शैलम्	पर्वत को

तत्पश्चात ऊपर उठाए हुए उस गिरिवर के नीचे बालुका प्रदेश में, जहां दूर तक जल का निवारण हो गया था, आपने समस्त सामग्रियों सहित गौ और गोपों को सुरक्षित स्थापित कर दिया। फिर आपने अपने एक करकमल से पर्वत को और ऊपर उठा लिया।

भवति विधृतशैले बालिकाभिर्वयस्यै-
रपि विहितविलासं केलिलापादिलोले ।
सविधमिलितधेनूरेकहस्तेन कण्डू-
यति सति पशुपालास्तोषमैषन्त सर्वे ॥५॥

भवति	आपके
विधृत-शैले	उठाए जाने पर पर्वत के
बालिकाभि:	बालिकाओं के द्वारा
वयस्यै:-अपि	समवयस्कों के द्वारा भी
विहित-विलासं	सन्लग्न क्रीडा में
केलि-लाप-आदि-लोले	क्रीडापूर्ण मधुर वार्तालाप मे व्यस्त
सविध-मिलित-धेनू:-	निकट मे सम्मिलित हुई गौओं को
एक-हस्तेन	एक हाथ से
कण्डूयति सति	सहलाते हुए
पशुपाला:-	(देख कर) गोपालक गण
तोषम्-ऐषन्त	सन्तुष्ट हो गए
सर्वे	सभी

पर्वत को उठाए रख कर भी आप समवयस्क बालिकाओं और गोपालों के साथ क्रीडा और क्रीडापूर्ण वार्तालाप मे संलग्न थे।

उस समय आप अपने निकट सम्मिलित हुई गौओं को एक हाथ से सहला रहे थे। यह देख कर सभी गोपालकगण अत्यधिक सन्तुष्ट हो गए।

अतिमहान् गिरिरेष तु वामके
करसरोरुहि तं धरते चिरम् ।
किमिदमद्भुतमद्रिबलं न्विति
त्वदवलोकिभिराकथि गोपकै: ॥६॥

अतिमहान्	अत्यन्त विशाल
गिरि:-एष	पर्वत यह
तु वामके	को भी बांए
कर-सरोरुहि	हाथ कमलनाल के समान (कोमल) में
तं धरते चिरम्	उसको उठाए हुए है देर से
किम्-इदम्-	कितना है यह
अद्भुतम्-	आश्चर्यजनक
अद्रि-बलं	(या) पर्वत का ही गुरुत्व
नु-इति	अथवा है इस प्रकार
त्वत्-अवलोकिभि:-	आपके देखने वालों ने
आकथि गोपकै:	कहा गोपों ने

'इस अत्यन्त विशाल पर्वत को भी इतनी देर से अपने कमलनाल के समान कोमल बाएं हाथ में उठाए हुए है। कितने आश्चर्य की बात है! अथवा क्या यह पर्वत का ही बल है।' आपको देखने वाले गोपों ने परस्पर ऐसा कहा।

अहह धार्ष्ट्यममुष्य वटोर्गिरिं
व्यथितबाहुरसाववरोपयेत् ।
इति हरिस्त्वयि बद्धविगर्हणो
दिवससप्तकमुग्रमवर्षयत् ॥७॥

अहह धार्ष्ट्यम्-	अहो! धृष्टता

अमुष्य वटोः-	इस बटुक की
गिरिम् व्यथित-बाहुः-	पर्वत को व्यथित बांह से
असौ-अवरोपयेत्	यह रख देगा
इति हरिः-त्वयि	इस प्रकार इन्द्र आपमें
बद्ध-विगर्हणः	धारण कर के कटुता
दिवस-सप्तकम्-	दिनों तक सात
उग्रम्-अवर्षयत्	भीषण वर्षा करता रहा

'अहो! इस बटुक की धृष्टता तो देखो। बांह व्यथित होने पर यह पर्वत को रख देगा।' इस प्रकार इन्द्र आपके प्रति कटुता भर कर सात दिनों तक भीषण वर्षा करता रहा।

अचलति त्वयि देव पदात् पदं
गलितसर्वजले च घनोत्करे ।
अपहृते मरुता मरुतां पति-
स्त्वदभिशङ्कितधीः समुपाद्रवत् ॥८॥

अचलति त्वयि	जब आप
देव	हे देव!
पदात् पदं	एक पग से दूसरे पग पर भी नही हिले
गलित-सर्व-जले	समाप्त हो जाने पर समस्त जल के
च घनोत्करे	और मेघों के
अपहृते मरुता	उडा ले जाने पर हवाओं के
मरुतां पतिः	देवताओं के पति (इन्द्र)
त्वत्-अभिशङ्कित-धीः	आपके प्रति शङ्कित मन वाले
समुपाद्रवत्	भाग गए

हे देव! आप एक पग से दूसरे पग पर भी विचलित नहीं हुए। मेघों का समस्त जल समाप्त हो गया और उन मेघों को वायु उडा कर ले गई। इस पर देवताओं के पति इन्द्र का चित्त आपके प्रति शंकित हो गया और वे वहां से भाग गए।

शममुपेयुषि वर्षभरे तदा
पशुपधेनुकुले च विनिर्गते ।
भुवि विभो समुपाहितभूधर:
प्रमुदितै: पशुपै: परिरेभिषे ॥९॥

शमम्-उपेयुषि	उपशमन हो जाने पर
वर्षभरे तदा	भारी वर्षा का तब
पशुप-धेनु-कुले	गोपों और गौओं के कुल
च विनिर्गते	और निकल गए (पर्वत के नीचे से)
भुवि विभो	भूमि पर हे प्रभो!
समुपाहित-भूधर:	संस्थापित कर के पर्वत को
प्रमुदितै: पशुपै:	प्रसन्न हुए गोपों के द्वारा
परिरेभिषे	आप आलिङ्गित हुए

उस भारी वर्षा का उपशमन हो जाने पर गोपों और गौओं के कुल पर्वत के नीचे से निकल आए। तब आपने पर्वत को भूमि पर प्रतिस्थापित कर दिया। अत्यधिक प्रसन्न हुए गोपों ने आपका आलिङ्गन किया।

धरणिमेव पुरा धृतवानसि
क्षितिधरोद्धरणे तव क: श्रम: ।
इति नुतस्त्रिदशै: कमलापते
गुरुपुरालय पालय मां गदात् ॥१०॥

धरणिम्-एव पुरा	पृथ्वी को ही पहले (कूर्मावतार के समय)
धृतवानसि	ऊपर उठा लिया था (आपने)
क्षितिधर-उद्धरणे	पर्वत के उठाने में

तव क: श्रम:	आपको क्या श्रम हुआ
इति नुत:-त्रिदशै:	इस प्रकार वन्दना की देवों ने
कमलापते	हे कमलापते!
गुरुपुरालय	हे गुरुपुरालय!
पालय मां गदात्	पालन करे मेरा रोगों से

हे कमलापते! पहले कूर्मावतार के समय आपने सम्पूर्ण पृथ्वी को ही ऊपर उठा लिया था। इस पर्वत को उठाने में आपको क्या श्रम हुआ होगा?' इस प्रकार देवताओं ने आपकी स्तुति की। हे गुरुपुरालय! रोगों से रक्षा करके मेरा पालन करें।

दशक ६४

आलोक्य शैलोद्धरणादिरूपं प्रभावमुच्चैस्तव गोपलोका: ।
विश्वेश्वरं त्वामभिमत्य विश्वे नन्दं भवज्जातकमन्वपृच्छन् ॥१॥

आलोक्य	देख कर
शैल-उद्धरण-	गिरिराज को उठाने
आदि-रूपं	आदि (अन्य) प्रकार के
प्रभावम्-उच्चै:-	प्रभाव को उत्कृष्ट
तव	आपके
गोप-लोका:	गोप जन
विश्वेश्वरं	विश्वेश्वर
त्वाम्-अभिमत्य	आपको मान कर
विश्वे नन्दं	(वे लोग) सब नन्द को
भवत्-जातकम्-	आपकी जन्म पत्रिका (के बारे में)
अन्वपृच्छन्	बार बार पूछने लगे

गोप जन आपके द्वारा पर्वत को उठाये जाने जैसे अन्य उत्कृष्ट प्रभाव वाले कार्य को देख कर आपको जगदीश्वर मानने लगे और नन्द से बार बार आपकी जन्मपत्रिका के विषय में पूछने लगे।

गर्गोदितो निर्गदितो निजाय वर्गाय तातेन तव प्रभाव: ।
पूर्वाधिकस्त्वय्यनुराग एषामैधिष्ट तावत् बहुमानभार: ॥२॥

गर्ग-उदित:	गर्ग के द्वारा कहा गया
निर्गदित:	कह दिया
निजाय वर्गाय	स्वजन समुदाय को
तातेन तव प्रभाव:	(आपके) पिता के द्वारा आपके प्रभाव को

पूर्वाधिक:	पहले से भी अधिक
त्वयि-अनुराग	आपमें स्नेह
एषाम्-ऐधिष्ट	इन लोगों का बढ गया
तावत् बहुमानभार:	फिर अधिक समादर भी

गर्ग मुनि ने आपका जो महान प्रभाव कहा था उसे आपके पिता ने अपने स्वजन समुदाय को कह सुनाया। इससे उन लोगों का आपके प्रति स्नेह और समादर पहले से भी अधिक बढ गया।

ततोऽवमानोदिततत्त्वबोध: सुराधिराज: सह दिव्यगव्या।
उपेत्य तुष्टाव स नष्टगर्व: स्पृष्ट्वा पदाब्जं मणिमौलिना ते ॥३॥

तत:-अवमान-उदित-	तदनन्तर अपमान से जनित
तत्त्व-बोध:	तत्त्व बोध वाले
सुराधिराज:	इन्द्र ने
सह दिव्य-गव्या	साथ दिव्य गौ के
उपेत्य तुष्टाव	आ कर स्तुति की
स नष्टगर्व:	वह नष्ट हुए गर्व वाला
स्पृष्ट्वा पदाब्जं	स्पर्श कर के चरण्कमल को
मणिमौलिना	मणि मण्डित मुकुट से
ते	आपके

तदनन्तर अपमान के कारण जिसका तत्त्व ज्ञान प्रस्फुटित हुआ था वह इन्द्र दिव्य धेनु सुरभि को ले कर आपके पास आया और आपकी स्तुति की। नष्ट हुए गर्व वाले इन्द्र ने अपने मणि मण्डित मुकुट से आपके चरण कमलों को स्पर्श करके प्रणाम किया।

स्नेहस्नुतैस्त्वां सुरभि: पयोभिर्गोविन्दनामाङ्कितमभ्यषिञ्चत् ।
ऐरावतोपाहृतदिव्यगङ्गापाथोभिरिन्द्रोऽपि च जातहर्ष: ॥४॥

स्नेह-स्नुतैः-	स्नेह से झरते हुए
त्वां सुरभिः पयोभिः-	आपको सुरभि ने दूध से
गोविन्द-नाम-	गोविन्द नाम से
अङ्कितम्-अभ्यषिञ्चत्	चिह्नित किया और अभिषेक किया
ऐरावत-उपाहृत-	ऐरावत के द्वारा लाया गया
दिव्य-गङ्गा-	दिव्य गङ्गा
पाथोभिः-इन्द्रः-अपि	जल से इन्द्र ने भी
च (अभिषिञ्चत्)	और (अभिषेक किया)
जात-हर्षः	हो कर प्रसन्न

सुरभि ने स्नेह से झरते हुए दूध से आपका अभिषेक किया और गोविन्द नाम से आपको चिह्नित किया। ऐरावत के द्वारा लाए गए दिव्य गङ्गा जल से प्रसन्न हो कर इन्द्र ने भी प्रसन्नतापूर्वक आपका अभिषेक किया।

जगत्त्रयेशे त्वयि गोकुलेशे तथाऽभिषिक्ते सति गोपवाटः ।
नाकेऽपि वैकुण्ठपदेऽप्यलभ्यां श्रियं प्रपेदे भवतः प्रभावात् ॥५॥

जगत्त्रय-ईशे	हे जगत्त्रय ईश!
त्वयि गोकुलेशे	आपके गोकुल के ईश्वर के
तथा-अभिषिक्ते सति	इस प्रकार अभिषिक्त होने पर
गोपवाटः	गोकुल
नाके-अपि	स्वर्ग में भी
वैकुण्ठपदे-अपि-	वैकुण्ठ धाम में भी
अलभ्यां श्रियं	अलभ्य वैभव को
प्रपेदे भवतः प्रभावात्	प्राप्त किया आपके प्रभाव से

हे त्रिजगत के ईश! गोकुल के ईश्वर के रूप में आप के इस प्रकार अभिषिक्त होने पर, आपके प्रभाव से गोकुल को ऐसा वैभव प्राप्त हुआ जो स्वर्ग और वैकुण्ठ धाम में भी अलभ्य है।

कदाचिदन्तर्यमुनं प्रभाते स्नायन् पिता वारुणपूरुषेण ।
नीतस्तमानेतुमगा: पुरीं त्वं तां वारुणीं कारणमर्त्यरूप: ॥६॥

कदाचित्-	एक बार
अन्तर्-यमुनं	अन्दर यमुना के
प्रभाते स्नायन् पिता	प्रभात समय में स्नान करते हुए पिता को
वारुण-पूरुषेण	वरुण के पुरुष
नीत:-तम्-आनेतुम्-	ले गए, उनको लाने के लिए
अगा: पुरीं	गए पुरी को
त्वं तां वारुणीं	आप उस वरुण की
कारण-मर्त्य-रूप:	कारण वश मनुष्य रूप

एक बार प्रभात समय में आपके पिता नन्द यमुना में स्नान करने गए। स्नान करते समय उनको वरुण के पार्षद उठा कर ले गए। तब, कारण वश मनुष्य रूप धारण करने वाले आप उनको लाने के लिये वरुण की पुरी में गए।

ससम्भ्रमं तेन जलाधिपेन प्रपूजितस्त्वं प्रतिगृह्य तातम् ।
उपागतस्तत्क्षणमात्मगेहं पिताऽवदत्तच्चरितं निजेभ्य: ॥७॥

ससम्भ्रमं	विस्मय सहित
तेन जलाधिपेन	उस जल देवता के (वरुण के) द्वारा
प्रपूजित:-त्वं	पूजन किया गया आपका
प्रतिगृह्य तातम्	ले कर के पिता को
उपागत:-	लौट आए
तत्-क्षणम्-	उसी क्षण

आत्म-गेहं	स्वयं के घर को
पिता-अवदत्-	पिता ने बताया
तत्-चरितं	वह चरित्र (आपका)
निजेभ्यः	अपने स्वजनों को

आपके आगमन को देख कर जलदेवता वरुण विस्मित हो गए और आपका पूजन किया। उसी क्षण आप अपने पिता को ले कर अपने घर लौट आए। पिता ने आपका यह चरित्र को स्वजनों को कह सुनाया।

हरिं विनिश्चित्य भवन्तमेतान् भवत्पदालोकनबद्धतृष्णान् ॥
निरीक्ष्य विष्णो परमं पदं तद्दुरापमन्यैस्त्वमदीदृशस्तान् ॥८॥

हरिं विनिश्चित्य	हरि को निश्चय पूर्वक जान कर
भवन्तम्-एतान्	आपको इन लोगों को
भवत्-पद-आलोकन-	आपके धाम को देखने के लिए
बद्ध-तृष्णान्	बन्धे हुए तृष्णा से (उनको)
निरीक्ष्य विष्णो	देख कर हे विष्णो!
परमं पदं तत्-	परम धाम उसको
दुरापम्-अन्यैः-	दुर्लभ अन्य लोगों को
त्वम्-अदीदृशः-तान्	आपने दिखाया उनको

गोपों को निश्चय ही यह ज्ञात हो गया कि आप हरि ही हैं। तब उनके मन में आपके धाम को देखने की इच्छा प्रबल हो उठी। हे विष्णो! उनकी यह तृष्णा देख कर आपने उनको वह परम धाम दिखाया जो अन्य लोगों के लिए दुर्लभ है।

स्फुरत्परानन्दरसप्रवाहप्रपूर्णकैवल्यमहापयोधौ ।
चिरं निमग्नाः खलु गोपसङ्घास्त्वयैव भूमन् पुनरुद्धृतास्ते ॥९॥

स्फुरत्-	कान्तिमय
परानन्दरस-	परम आनन्द रस के

प्रवाह-प्रपूर्ण-	प्रवाह से परिपूर्ण
कैवल्य-महापयोधौ	कैवल्य के महार्णव में
चिरं निमग्ना:	देर तक निमग्न हुए
खलु गोपसङ्घा:-	नि:सन्देह वे गोपगण
त्वया-एव भूमन्	आपके द्वारा ही हे भूमन
पुन:-उद्धृता:-ते	फिर से निकाले गए वे

वे गोपगण परम आनन्द रस के प्रवाह से परिपूर्ण उस कैवल्य के कान्तिमय महार्णव में देर तक निमग्न रहे। हे भूमन! फिर वहां से वे सभी नि:सन्देह आप ही के द्वारा निकाले गए। अर्थात आप ही उनको इस भौतिक धरातल पर ले कर आए।

करबदरवदेवं देव कुत्रावतारे
निजपदमनवाप्यं दर्शितं भक्तिभाजाम् ।
तदिह पशुपरूपी त्वं हि साक्षात् परात्मा
पवनपुरनिवासिन् पाहि मामामयेभ्य: ॥१०॥

कर-बदर-वत्-एवं	हाथ में बेर के समान इस प्रकार
देव कुत्र-अवतारे	हे देव! कहां किन अवतारों में
निज-पदम्-अनवाप्यम्	स्वयं के धाम को जो अप्राप्य है
दर्शितं भक्तिभाजाम्	दिखाया भक्त जनों को
तत्-इह पशुपरूपी	इसलिये यहां गोपाल के रूप में (अवतरित)
त्वं हि साक्षात्	आप ही साक्षात
परात्मा	परमात्मा हैं
पवनपुरनिवासिन्	हे पवनपुरनिवासिन!
पाहि माम्-	रक्षा कीजिए मेरी
आमयेभ्य:	रोगों से

हे देव! आपने अपने भक्त जनों को अपना अप्राप्य धाम इतनी सहजता से दिखा दिया मानो हाथ पर रखा हुआ बेर हो। ऐसा आपके और किन अवतारों में कहां सम्भव हुआ है? इसलिये गोपाल के रूप में अवतरित आप ही साक्षात परमात्मा हैं। हे पवनपुरनिवासिन! रोगों से मेरी रक्षा कीजिए।

दशक ६५

गोपीजनाय कथितं नियमावसाने
मारोत्सवं त्वमथ साधयितुं प्रवृत्त: ।
सान्द्रेण चान्द्रमहसा शिशिरीकृताशे
प्रापूरयो मुरलिकां यमुनावनान्ते ॥१॥

गोपीजनाय	गोपियों के लिए
कथितं	(जो) कहा था
नियम-अवसाने	(व्रत के) नियमों के समाप्त होने पर
मार-उत्सवं	प्रेम उत्सव को
त्वम्-अथ	आप तब
साधयितुं प्रवृत्त:	क्रियान्वित करने के लिए प्रस्तुत
सान्द्रेण चान्द्रमहसा	स्निग्ध चांदनी से चन्द्रमा की
शिशिरी-कृत-आशे	(जब) शीतल हो गई थीं दिशाएं
प्रापूरय: मुरलिकां	परिपूर्ण कर रहे थे मुरली को
यमुना-वन-अन्ते	यमुना के वन की सीमा पर

गोपियों के व्रत के नियम आदि समाप्त हो जाने पर आपने जिस प्रेम उत्सव के लिए उनसे कहा था, उसको क्रियान्वित करने के लिए आप प्रस्तुत हुए। एक रात जब चन्द्रमा की स्निग्ध चांदनी चारों दिशाओं को शीतल कर रही थी, तब यमुना वन की सीमा पर आप मुरली को स्वर से परिपूरित कर रहे थे।

सम्मूर्छनाभिरुदितस्वरमण्डलाभि:
सम्मूर्छयन्तमखिलं भुवनान्तरालम् ।
त्वद्वेणुनादमुपकर्ण्य विभो तरुण्य-
स्तत्तादृशं कमपि चित्तविमोहमापु: ॥२॥

सम्मूर्छनाभि:-	सम्मूर्छनाओं से (स्वर के उतार चढाव से)
उदित-	निकले

स्वरमण्डलाभि:	स्वर मण्डलों से
सम्मूर्छयन्तम्-	सम्मोहित हुए
अखिलं	समस्त
भुवन-अन्तरालम्	भुवन मण्डल के
त्वत्-वेणु-नादम्-	आपकी मुरली की धुन को
उपकर्ण्य विभो	सुन कर हे विभो!
तरुण्य:-तत्-तादृशं	तरुणी जन उस प्रकार की
कम्-अपि	किसी भी
चित्त-विमोहम्-आपु:	चित्त के सम्मोह को प्राप्त हो गईं

स्वरों के उतार चढाव वाली सम्मूर्छनाओं से उत्पन्न हुई स्वर मण्डली से समस्त भुवन सम्मोहित हो गया। हे विभो! आपकी मुरली की उस अवर्णनीय धुन को सुन कर तरुणियां भी उसी प्रकार के किसी (अवर्णनीय) चित्त के विमोह से विमुग्ध हो उठीं।

ता गेहकृत्यनिरतास्तनयप्रसक्ता:
कान्तोपसेवनपराश्च सरोरुहाक्ष्य: ।
सर्वं विसृज्य मुरलीरवमोहितास्ते
कान्तारदेशमयि कान्ततनो समेता: ॥३॥

ता:	वे (जो)
गेह-कृत्य-निरता:-	गृह कार्यों में संलग्न थीं
तनय-प्रसक्ता:	(या) बच्चों का लालन कर रही थीं
कान्त-उपसेवन-परा:-च	और पतियों की सेवा में तत्पर थीं
सरोरुह-आक्ष्य:	(वे) कमल्नयनी
सर्वं विसृज्य	सब कुछ छोड कर
मुरली-रव-	मुरली के स्वर से

मोहिताः-ते	मोहित हुई वे
कान्तार-देशम्-	वन प्रदेश को
अयि कान्त-तनो	अयि कान्तिमान!
समेताः	आ गईं

हे कान्तिमान! मुरली के स्वर से विमोहित हुई, वे सभी कमलनयनी गोपिकाएं जो नाना भांति के गृह कार्यों में व्यस्त थीं, अपने शिशुओं का लालन कर रही थीं अथवा अपने पतियों की सेवा में तत्पर थीं, सब कुछ छोड कर, वन प्रदेश में आ गईं।

काश्चिन्निजाङ्गपरिभूषणमादधाना
वेणुप्रणादमुपकर्ण्य कृतार्धभूषाः ।
त्वामागता ननु तथैव विभूषिताभ्य-
स्ता एव संरुरुचिरे तव लोचनाय ॥४॥

काश्चित्-	कोई
निज-अङ्ग-	अपने अङ्गो को
परिभूषणम्-	आभूषणों से
आदधाना	सजाती हुई
वेणु-प्रणादम्-	मुरली के नाद को
उपकर्ण्य	सुन कर
कृत-अर्ध-भूषाः	करके अधूरी प्रसज्जा
त्वाम्-आगताः	आपके पास आगई
ननु तथा-एव	निःसन्देह वैसे ही
विभूषिताभ्यः	विभूषित गोपियों से
ता एव	वे ही
संरुरुचिरे	(अधिक) सुन्दर लगीं

तव लोचनाय	आपके नेत्रों को

कुछ गोपिकाएं आभूषणों से अपने अङ्गों का प्रसाधन कर रही थी। मुरली की तान को सुनते ही अधूरी प्रसज्जा किए हुए ही वे आपके पास आ गईं। नि:सन्देह विभूषित गोपियों की अपेक्षा वे ही आपके नेत्रों को अधिक सुन्दर लग रही थीं।

हारं नितम्बभुवि काचन धारयन्ती
काञ्चीं च कण्ठभुवि देव समागता त्वाम् ।
हारित्वमात्मजघनस्य मुकुन्द तुभ्यं
व्यक्तं बभाष इव मुग्धमुखी विशेषात् ॥५॥

हारं नितम्ब-भुवि	हार को कटि प्रदेश में
काचन धारयन्ती	कोई धारण कर के
काञ्चीं च	करघनी को और
कण्ठ-भुवि	कण्ठ प्रदेश में
देव	हे देव!
समागता त्वाम्	आ गई पास आपके
हारित्वम्-	मनोहरता
आत्म-जघनस्य	अपनी जङ्घा की
मुकुन्द तुभ्यं	हे मुकुन्द आपके लिए
व्यक्तं बभाष इव	स्पष्टता से कहते हुए सी
मुग्धमुखी	मुग्धमुखी
विशेषात्	विशेषता से

हे देव! कोई एक गोपिका हार कटि प्रदेश में करके और करघनी कण्ठ प्रदेश में धारण करके आपके पास चली आई। हे मुकुन्द! मानो वह मुग्धमुखी आपके समक्ष स्पष्ट रूप से अपनी जङ्घाओं की विशेष मनोहरता को व्यक्त कर रही हो।

काचित् कुचे पुनरसज्जितकञ्चुलीका
व्यामोहत: परवधूभिरलक्ष्यमाणा ।
त्वामाययौ निरुपमप्रणयातिभार-

राज्याभिषेकविधये कलशीधरेव ॥६॥

काचित् कुचे	कोई कुचों पर
पुन:-असज्जित-	फिर न धारण करके
कञ्चुलीका	कञ्चुलीका को
व्यामोहत:	विमोहित हुई
परवधूभि:-	अन्य वधुओं के द्वारा
अलक्ष्यमाणा	नहीं देखी जाती हुई
त्वाम्-आययौ	आपके पास आ गई
निरुपम-प्रणय-	अतुलनीय प्रणय
अतिभार-	के गम्भीर भार का
राज्य-अभिषेक-विधये	(आपके) राज्याभिषेक के करने के लिए
कलशीधर-इव	कलशों को धारण किए हुए के समान

अन्य एक विमोहित हुई गोपिका अपने कुचों पर कञ्चुलीका धारण न किए हुए ही आपके पास आ गई। उसको अन्य गोपिकाओं ने नहीं देखा क्योंकि वे सब भी विमोहित थीं। ऐसा प्रतीत होता था मानों वह आपका राज्याभिषेक करने के लिए प्रस्तुत वक्ष रूपी कलशों को धारण किए हुए हो, जो अतुलनीय प्रणय के अतिशय भार का वहन कर रही हो।

काश्चित् गृहात् किल निरेतुमपारयन्त्य-
स्त्वामेव देव हृदये सुदृढं विभाव्य ।
देहं विधूय परचित्सुखरूपमेकं
त्वामाविशन् परमिमा ननु धन्यधन्या: ॥७॥

काश्चित् गृहात्	कई (गोपियां) घर से
किल निरेतुम्-	सर्वथा निकलने में
अपारयन्त्य:	असमर्थ होने के कारण
त्वाम्-एव देव	आप ही को हे देव!

हृदये सुदृढं विभाव्य	मन में प्रगाढता से स्मरण करके
देहं विधूय	शरीर को त्याग कर
पर-चित्-सुख-	परम चित आनन्द
रूपम्-एकं त्वाम्-	स्वरूप एकमात्र आप में
आविशन्	समा गईं
परम्-इमा:-ननु	अत्यन्त ये (गोपियां) अवश्यमेव
धन्य-धन्या:	धन्य धन्य हैं

कुछ गोपियां घर से निकलने में सर्वथा असमर्थ थीं। हे देव! इस कारण वे प्रगाढता से मन में आपका ही स्मरण करने लगीं। फलस्वरूप उन्होने आपना शरीर त्याग दिया और परम चित्त आनन्दमय एकमात्र आपमें समा गईं। नि:सन्देह वे अत्यन्त ही धन्य हैं।

जारात्मना न परमात्मतया स्मरन्त्यो
नार्यो गता: परमहंसगतिं क्षणेन ।
तं त्वां प्रकाशपरमात्मतनुं कथञ्चि-
च्चित्ते वहन्नमृतमश्रममश्नुवीय ॥८॥

जारात्मना	पर पुरुष प्रेम (की भावना) से
न परमात्मतया	न कि परमात्मा (की भावना) से
स्मरन्त्य:	(आपका) स्मरण करते हुए
नार्य: गता:	(उन) नारियों ने पा लिया
परमहंसगतिं	परमहंस की गति को
क्षणेन तं त्वां	क्षण भर में, उन आपको
प्रकाश-परमात्म-तनुं	प्रकाशमान परमात्म विग्रहवान को
कथञ्चित्-	जिस किसी भी प्रकार
चित्ते वहन्-	चित्त में धारण करके

अमृतम्-	अमृतत्व को
अश्रमम्-अश्नुवीय	अनायास ही प्राप्त कर लूं

उन पूण्यवती गोपियों ने पर-पुरुष-प्रेम की भावना से, न कि परमात्मा की भावना से आपका स्मरण किया। उस पर भी क्षण भर में उन्हे परमहंस की गति प्राप्त हो गई। प्रकाशमान परमात्म विग्रहवान आपको, जिस किसी भी प्रकार से चित्त में धारण कर के मैं भी अनायास ही अमृतत्व को प्राप्त कर लूं। ऐसी कृपा करें।

अभ्यागताभिरभितो व्रजसुन्दरीभि-
र्मुग्धस्मितार्द्रवदन: करुणावलोकी ।
निस्सीमकान्तिजलधिस्त्वमवेक्ष्यमाणो
विश्वैकहृद्य हर मे पवनेश रोगान् ॥९॥

अभ्यागताभि:-	आई हुई (गोपियों) के द्वारा
अभित:	सब ओर से
व्रजसुन्दरीभि:-	व्रज की सुन्दरियों के द्वारा
मुग्ध-स्मित-आर्द्र-वदन:	मधुर मुस्कान से कान्तिमान मुख वाले
करुणा-अवलोकी	करुणा मयी दृष्टि वाले
निस्सीम-कान्ति-	अनन्त कान्ति वाले
जलधि:-त्वम्-	समुद्र मय आप
अवेक्ष्यमाण:	देखे गए
विश्वैकहृद्य	हे विश्व विमोहक!
हर मे	हर ले मेरे
पवनेश	हे पवनेश!
रोगान्	रोगों को

सब ओर से आ आ कर एकत्रित हुई व्रज की सुन्दरियों ने मधुर मुस्कान से उज्ज्वल मुख वाले, करुणामयी दृष्टि वाले, अनन्त कान्ति के समुद्र स्वरूप आपको देखा। हे विश्वविमोहक पवनेश! मेरे रोगों को हर लें।

दशक ६६

उपयातानां सुदृशां कुसुमायुधबाणपातविवशानाम् ।
अभिवाञ्छितं विधातुं कृतमतिरपि ता जगाथ वाममिव ॥१॥

उपयातानां	आई हुई को
सुदृशां	सुनयनाओं को
कुसुमायुध-	कुसुमायुध (कामदेव) के
बाण-पात-	बाणों के आघात से
विवशानाम्	विवश हुई को
अभिवाञ्छितं	मनोवाञ्छित
विधातुं	करने के लिए
कृतमति:-अपि	कर के निश्चय भी
ता: जगाथ	उनको कहा
वामम्-इव	विपरीत की भांति

कामदेव के बाणों से आहत हो कर विवश हुई आपके पास आई हुई सुनयनाओं को उनका मनोवाञ्छित करने के लिए आप कृत निश्चय थे। फिर भी आपने उनको विपरीत भाव में कहा।

गगनगतं मुनिनिवहं श्रावयितुं जगिथ कुलवधूधर्मम् ।
धर्म्यं खलु ते वचनं कर्म तु नो निर्मलस्य विश्वास्यम् ॥२॥

गगन-गतं	गगन में स्थित
मुनि-निवहं	मुनि गण को
श्रावयितुं	सुनाने के लिए
जगिथ	(आपने) कहा
कुल-वधू-धर्मम्	कुल वधुओं का धर्म

धर्म्यम् खलु	धर्म के अनूकूल ही
ते वचनं	आपके वचनों का
कर्म तु नो	कर्मों का तो नहीं
निर्मलस्य	(आप) परम निर्मल का
विश्वास्यम्	अनुकरणीय है

गगन में स्थित मुनि गण को सुनाने के लिए आपने कुल वधुओं को उनके धर्म का उपदेश दिया। परम निर्मल आपके वचन सर्वदा धर्म सङ्गत होते हैं इस लिए अनुकरणीय हैं, किन्तु कर्म सर्वथा अलौकिक होने के कारण अनुकरणीय नहीं हैं।

आकर्ण्य ते प्रतीपां वाणीमेणीदृश: परं दीना: ।
मा मा करुणासिन्धो परित्यजेत्यतिचिरं विलेपुस्ता: ॥३॥

आकर्ण्य ते	सुन कर आपकी
प्रतीपां वाणीम्-	प्रतिकूल वाणी को
एणीदृश:	मृगनयनी वे
परं दीना:	अत्यन्त दु:खी (हो कर कहने लगीं)
मा मा	नहीं नहीं
करुणासिन्धो	हे करुणासिन्धो!
परित्यज-इति-	परित्याग करें इस प्रकार
अचिरं	बहुत समय तक
विलेपु:-ता:	विलाप करते रहीं वे

आपकी प्रतिकूल वाणी सुन कर वे मृगनयनी गोपियां, अत्यन्त दु:खी हो कर कहने लगीं, 'हे करुणासिन्धो! हमारा परित्याग न करें, न करें।' इस प्रकार वे दीर्घ समय तक विलाप करती रहीं।

तासां रुदितैर्लपितै: करुणाकुलमानसो मुरारे त्वम् ।
ताभिस्समं प्रवृत्तो यमुनापुलिनेषु काममभिरन्तुम् ॥४॥

तासां रुदितैः-	उन (गोपिकाओं) के रुदन से
लपितैः	(और) करुण आग्रह से
करुणा-आकुल-	करुणा से व्याकुल
मानसः	मन वाले (आप)
मुरारे त्वम्	हे मुरारे! आप
ताभिः-समम्	उनके सङ्ग
प्रवृत्तः	प्रस्तुत हो गए
यमुना-पुलिनेषु	यमुना के तटों पर
कामम्-अभिरन्तुम्	स्वेच्छा से रमण करने के लिए

हे मुरारे! उन गोपिकाओं के रुदन और करुण आग्रहों से करुणा द्रवित हुआ आपका मन विचलित हो गया। यमुना के तटों पर उनके सङ्ग स्वेच्छा से रमण करने के लिए आप प्रस्तुत हो गए।

चन्द्रकरस्यन्दलसत्सुन्दरयमुनातटान्तवीथीषु ।
गोपीजनोत्तरीयैरापादितसंस्तरो न्यषीदस्त्वम् ॥५॥

चन्द्रकर-	चन्द्र किरणों की
स्यन्द-लसत्-	स्निग्धता से सुशोभित
सुन्दर-	सुन्दर
यमुना-तटान्त-	यमुना के तट के किनारे की
वीथीषु	वीथियों में
गोपीजन-	गोपीजनों ने
उत्तरीयैः-	अपने उत्तरीय से
आपादित-संस्तरः	बिछा दिया बिस्तर

न्यषीदः-त्वम्	(और) आप बैठ गए

यमुना के तट चन्द्र किरणो की स्निग्ध सुन्दरता भरी शोभा से आच्छादित थे। तटान्त की वीथियों मे गोपिजन ने अपने उत्तरीय से बिस्तर बिछा दिया। आप उस पर बैठ गए।

सुमधुरनर्मालपनैः करसंग्रहणैश्च चुम्बनोल्लासैः ।
गाढालिङ्गनसङ्गैस्त्वमङ्गनालोकमाकुलीचकृषे ॥६॥

सुमधुर्-	अत्यन्त मधुर
नर्म-आलपनैः	परिहास पूर्ण बातों से
कर-संग्रहणैः-च	(परस्पर) हाथों के पकडने से
चुम्बन-उल्लासैः	और चुम्बन के उल्लास से
गाढ-आलिङ्गन-सङ्गैः-	प्रगाढ आलिङ्गनों से
त्वम्-	आपने
अङ्गना-लोकम्-	गोपिकाओं को
आकुली-चकृषे	अत्यन्त आकुलित कर दिया

आपने गोपाङ्गनाओं को अपनी मधुर और हास्यपूर्ण बातों से, परस्पर हाथ पकडने से, चुम्बन के उत्साह से और प्रगाढ आलिङ्गनों से अत्यन्त आकुलित कर दिया।

वासोहरणदिने यद्वासोहरणं प्रतिश्रुतं तासाम् ।
तदपि विभो रसविवशस्वान्तानां कान्त सुभ्रुवामदधाः ॥७॥

वासो-हरण-दिने	वस्त्रों के हरण के दिन
यत्-वासो-हरणम्	जो वस्त्रों का हरण हुआ था
प्रतिश्रुतं तासाम्	प्रतिज्ञा की थी उनसे (गोपियों से)
तत्-अपि विभो	वह भी हे विभो!
रस-विवश-स्वान्तानां	(आनन्द) रस से विवश चित्त वाली

कान्त	हे कान्त!
सुभ्रुवाम्-	सुभ्रू उनको
अदधा:	दिया

हे विभो! वस्त्र हरण के दिन आपने, उन सुभ्रू गोपियों से, वस्त्र के हरण की प्रतिज्ञा की थी। हे कान्त! आपने आनन्द रस से विवश चित्त वाली गोपिकाओं को उस वस्त्र के (माया के आवरण का) हरण (का आनन्द) दिया।

कन्दलितघर्मलेशं कुन्दमृदुस्मेरवक्त्रपाथोजम् ।
नन्दसुत त्वां त्रिजगत्सुन्दरमुपगूह्य नन्दिता बाला: ॥८॥

कन्दलित-	उभरे हुए
घर्म-लेशं	स्वेद बिन्दुओं वाले
कुन्द-मृदु-स्मेर-	कुन्द (पुष्प) के समान मधुर मुस्कान वाले
वक्त्र-पाथोजम्	मुख पद्म वाले
नन्दसुत त्वां	हे नन्द पुत्र! आपको
त्रिजगत्-सुन्दरम्-	त्रिजगत में सर्वोत्तम सुन्दर को
उपगूह्य	आलिङ्गन कर के
नन्दिता: बाला:	परम आनन्दित हुई बालाएं

हे नन्द पुत्र! त्रिजगत में सर्वोच्च सुन्दर हैं। स्वेद बिन्दु युक्त, कुन्द कुसुम के समान मुस्कान से सुशोभित मुख पद्म वाले आपका आलिङ्गन कर के वे बालाएं अत्यन्त आनन्दित हुईं।

विरहेष्वङ्गारमय: शृङ्गारमयश्च सङ्गमे हि त्वम्
नितरामङ्गारमयस्तत्र पुनस्सङ्गमेऽपि चित्रमिदम् ॥९॥

विरहेषु-	विरह के समय
अङ्गारमय:	अङ्गारमय (दाहक)
शृङ्गारमय:-च	और शृङ्गारमय

सङ्गमे	समागम के समय (में)
हि त्वम्	भी आप
नितराम्-	सर्वथा
अङ्ग-अरमय:	हे अङ्ग! रमण किया
तत्र पुन:-	वहां फिर
सङ्गमे-अपि	संगम में भी
चित्रम्-इदम्	आश्चर्य है यह

विरह में आप अङ्गार स्वरूप (दाहक) प्रतीत होते हैं। और समागम के समय आप सर्वथा शृङ्गारमय (शीतल) प्रतीत होते हैं। हे अङ्ग! आप गोपियों से समागम के समय रागमय प्रतीत हुए। क्या आश्चर्य है?

राधातुङ्गपयोधरसाधुपरीरम्भलोलुपात्मानम् ।
आराधये भवन्तं पवनपुराधीश शमय सकलगदान् ॥१०॥

राधा-तुङ्ग-पयोधर-	राधा के उतुङ्ग स्तनों का
साधु-परीरम्भ-	भलि भांति आलिङ्गन करने के लिए
लोलुप-आत्मानम्	लोलुप मन वाले (आपकी)
आराधये भवन्तं	आराधना (करता हूं) आपकी
पवनपुराधीश	हे पवनपुराधीश!
शमय सकल-गदान्	शान्त करें व्याधियों को

राधा के उतुङ्ग पयोधरों का भलि भांति आलिङ्गन करने के लिए उतावले मन वाले हे पवनपुराधीश! मैं आपकी आराधना करता हूं। मेरी व्याधियों का शमन करें।

दशक ६७

स्फुरत्परानन्दरसात्मकेन त्वया समासादितभोगलीला: ।
असीममानन्दभरं प्रपन्ना महान्तमापुर्मदमम्बुजाक्ष्य: ॥१॥

स्फुरत्-परानन्द-	स्फुरणशील परमानन्द
रसात्मकेन	रस रूप
त्वया	आपके द्वारा
समासादित-	आस्वादन करके
भोगलीला:	रसमय क्रीडा का (वे गोपियां)
असीमम्-	अद्वितीय
आनन्दभरं	आनन्द समुद्र मे
प्रपन्ना महान्तम्-	निमग्न महान
आपु:-मदम्-	पा गईं दर्प को
अम्बुज-आक्ष्य:	(वे) कमलनयनी

स्फुरणशील परमानन्द के रस रूप आपके साथ रसमय क्रीडा का आस्वादन करके कमलनयनी गोपिकाएं अवर्णनीय और अद्वितीय आनन्द समुद्र में निमग्न हो गईं। फिर उनको अत्यधिक दर्प हो गया।

निलीयतेऽसौ मयि मय्यमायं रमापतिर्विश्वमनोभिराम: ।
इति स्म सर्वा: कलिताभिमाना निरीक्ष्य गोविन्द तिरोहितोऽभू: ॥२॥

निलीयते-	निमग्न हैं
असौ मयि	यह मुझमें
मयि-अमायं	मुझमें ही केवल
रमापति:-	रमापति
विश्व-मनोभिराम:	विश्व सम्मोहक

इति स्म सर्वा:	इस प्रकार सभी
कलिता-अभिमाना:	भरपूर अभिमान वाली
निरीक्ष्य	(को) देख कर
गोविन्द्	हे गोविन्द! (आप)
तिरोहित:-अभू:	अदृश्य हो गए

ये विश्व विमोहक रमापति मुझमें, केवल मुझमें ही अनुराग निमग्न हैं।' गोपिकाओं को इस प्रकार अभिमान से पूरित देख कर, हे गोविन्द! आप अदृश्य हो गए।

राधाभिधां तावदजातगर्वामतिप्रियां गोपवधूं मुरारे ।
भवानुपादाय गतो विदूरं तया सह स्वैरविहारकारी ॥३॥

राधा-अभिधां	राधा नाम वाली
तावत्	तब तक
अजात-गर्वाम्-	(जिसमे) नहीं पैदा हुआ था गर्व
अति-प्रियां	अत्यन्त प्रिय
गोपवधूम्	गोपिका को
मुरारे	हे मुरारे!
भवान्-उपादाय	आप उठा कर
गत: विदूरं	ले गए दूर
तया सह	उसके साथ
स्वैर-विहार-कारी	स्वच्छन्द भाव क्रीडा रत

हे मुरारे! राधा नामक आपकी अत्यन्त प्रिय गोपिका के मन में उस समय तक गर्व पैदा नहीं हुआ था। आप उसको उठा कर दूर ले गए और उसके साथ स्वच्छन्दता से क्रीडा रत हो गए।

तिरोहितेऽथ त्वयि जाततापा: समं समेता: कमलायताक्ष्य: ।

वने वने त्वां परिमार्गयन्त्यो विषादमापुर्भगवन्नपारम् ॥४॥

तिरोहिते-	अदृश्य हो जाने पर
अथ त्वयि	तब फिर आपके
जात-तापा:	संतप्त हुई
समं समेता:	साथ में एकत्रित हो कर
कमलायत-आक्ष्य:	कमलनयनी
वने वने त्वां	वन वन में आपको
परिमार्गयन्त्य:	खोजती हुई
विषादम्-आपु:-	विषाद को प्राप्त हो गईं
भगवन्-	हे भगवन!
अपारम्	अनन्त

हे भगवन! तब फिर, आपके अदृश्य हो जाने पर, वे कमलनयनी गोपिकाएं संतप्त हो गईं और एक साथ एकत्रित हो कर प्रत्येक वन प्रान्त में आपको खोजने लगीं। आपको न पा कर वे अपार विषाद ग्रस्त हो गईं।

हा चूत हा चम्पक कर्णिकार हा मल्लिके मालति बालवल्य: ।
किं वीक्षितो नो हृदयैकचोर: इत्यादि तास्त्वत्प्रवणा विलेपु: ॥५॥

हा चूत	हे आम्र!
हा चम्पक	हे चम्पक!
कर्णिकार	हा कर्णिकार (कनेर)
हा मल्लिके	हे मल्लिका!
मालति	मालति!
बालवल्य:	हे कोमल लताओं!

किं वीक्षित:	क्या देखा है
न:-हृदय-एक-चोर:	हमारे हृदय के एकमात्र चोर को
इति-आदि ता:-	इत्यादि वे
त्वत्-प्रवणा:	आपकी प्रपन्नाएं
विलेपु:	विलाप करने लगीं

आपमें ही प्रपन्न चित्त वाली वे इस प्रकार प्रलाप करने लगीं, 'हे आम्र, हे चम्पक, हे कनेर, हे मल्लिका हे मालति, हे कोमल लताओं, क्या तुमने हमारे हृदय के एकमात्र चोर को देखा है?' इत्यादि।

निरीक्षितोऽयं सखि पङ्कजाक्ष: पुरो ममेत्याकुलमालपन्ती ।
त्वां भावनाचक्षुषि वीक्ष्य काचित्तापं सखीनां द्विगुणीचकार ॥६॥

निरीक्षित:-	देखा है
अयं सखि	यह, हे सखि! (मैने)
पङ्कजाक्ष:	कमलनयन को
पुर: मम-इति-	सामने मेरे, इस प्रकार
आकुलम्-	व्याकुल हुई
आलपन्ती	प्रलाप करती हुई
त्वां	आपको
भावना-चक्षुषि	भावना के नेत्रों से
वीक्ष्य काचित्	देख कर किसी (गोपी) ने
तापं सखीनां	संताप को सखियों के
द्विगुणी-चकार	द्विगुणित कर दिया

किसी एक सखी ने भावना चक्षुओं से आपको देखा और अधीरता से व्याकुल हो कर प्रलाप करने लगी, ' हे सखि! मैने अभी अभी सामने कमलनयन को देखा है।' यह सुन कर और भी सखियों का संताप द्विगुणित हो गया।

त्वदात्मिकास्ता यमुनातटान्ते तवानुचक्रु: किल चेष्टितानि ।
विचित्य भूयोऽपि तथैव मानात्त्वया विमुक्तां ददृशुश्च राधाम् ॥७॥

त्वत्-आत्मिका:-ता	आपमे एकात्मक हुई वे
यमुना-तट-अन्ते	यमुना के तट के अन्त में (जा कर)
तव-अनुचक्रु:	आपका अनुकरण करने लगीं
किल चेष्टितानि	निश्चय ही आपकी लीलाओं का
विचित्य	खोजते हुए
भूय:-अपि	फिर से आपको
तथा-एव मानात्-	उसी प्रकार अभिमान से
त्वया विमुक्तां	आपके द्वारा त्यक्ता को
ददृशु:-च	देखा और
राधाम्	राधा को

आपके साथ एकात्म हुई वे गोपिकाएं यमुना के तटान्त पर एकत्रित हो कर आपकी ही लीलाओं का अनुकरण करके फिर से आपको खोजने लगीं। तब उन्होंने एक जगह राधा को देखा जो उसी प्रकार अभिमानवश आपके द्वारा त्याग दी गई थी।

तत: समं ता विपिने समन्तात्तमोवतारावधि मार्गयन्त्य: ।
पुनर्विमिश्रा यमुनातटान्ते भृशं विलेपुश्च जगुर्गुणांस्ते ॥८॥

तत: समं ता:	तदनन्तर एक साथ वे सब
विपिने समन्तात्-	वन में एक ओर से दूसरी ओर तक
तमोवतार-अवधि	अन्धकार घिर आने तक
मार्गयन्त्य:	खोजती हुई
पुन:-विमिश्रा	फिर से एकत्रित हो कर
यमुना-तट-अन्ते	यमुना के तट के अन्त पर

भृशं विलेपुः-	अत्यधिक विलाप करने लगीं
च जगुः-	और गाने लगी
गुणान्-ते	गुणों को आपके

तदनन्तर, वे सब एक साथ वन में एक छोर से दूसरे छोर तक आपको तब तक खोजती रहीं जब तक अन्धकार न घिर आया। वे फिर से यमुना के किनारे एकत्रित हो कर तीव्र विलाप करती हुई आपके गुण गान करने लगीं।

तथा व्यथासङ्कुलमानसानां व्रजाङ्गनानां करुणैकसिन्धो ।
जगत्त्रयीमोहनमोहनात्मा त्वं प्रादुरासीरयि मन्दहासी ॥९॥

तथा व्यथा-सङ्कुल-	इस प्रकार व्यथा से अभिभूत
मानसानाम्	मानस वाली
व्रजाङ्गनानाम्	व्रजाङ्गनाओं के
करुणैकसिन्धो	हे करुणासिन्धो!
जगत्-त्रयी-मोहन-	हे त्रिजगत को मोहित करने वाले
मोहन-आत्मा	मनमोहक स्वरूप वाले
त्वं	आप
प्रादुः-आसीः-	सामने प्रकट हुए
अयि	अयि
मन्दहासी	मन्द हास के सहित

उन व्रजाङ्गनाओं के मानस व्यथा से अभिभूत हो कर, हे करुणासिन्धो! हे त्रिजगत को मोहित करने वाले मनमोहन! मन्द हास के सहित आप उनके समक्ष प्रकट हो गए।

सन्दिग्धसन्दर्शनमात्मकान्तं त्वां वीक्ष्य तन्व्य: सहसा तदानीम् ।
किं किं न चक्रु: प्रमदातिभारात् स त्वं गदात् पालय मारुतेश ॥१०॥

सन्दिग्ध-	सन्देह युक्त

सन्दर्शनम्-	दर्शन के लिए
आत्म-कान्तम्	अपने प्रिय का
त्वां वीक्ष्य	(उन) आपको देख कर
तन्व्यः सहसा	वए तन्वाङ्गी सहसा
तदानीम्	उस समय
किम् किम्	क्या क्या
न चक्रुः	न करने लगीं
प्रमद-अति-भारात्	प्रेम के अतिरेक के कारण
स त्वम्	वही आप
गदात् पालय	रोगों से पालन करें
मारुतेश	हे मारुतेश!

अपने प्रिय के दर्शन मे सन्देह युक्त उन तन्वङ्गियों जब ने सहसा आपको देखा तब प्रेमानन्द के अतिरेक के कारण क्या क्या नहीं किया! वही आप, हे मारुतेश! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ६८

तव विलोकनाद्गोपिकाजना: प्रमदसङ्कुला: पङ्कजेक्षण ।
अमृतधारया संप्लुता इव स्तिमिततां दधुस्त्वत्पुरोगता: ॥१॥

तव विलोकनात्-	आपको देखने से
गोपिका-जना:	गोपिकाएं
प्रमद-सङ्कुला:	आनन्द विभोर हुई
पङ्कजेक्षण	हे कमलनयन!
अमृत-धारया	अमृत की धारा से
संप्लुता इव	सुसिञ्चित के समान (हो कर)
स्तिमिततां	निश्चलता को
दधु:-	प्राप्त कर के
त्वत्-पुरो-गता:	आपके सामने आ गईं

हे कमलनयन! गोपिकाएं आपको देख कर आनन्द विभोर हो गई। आपको सामने आए हुए देख कर मानो अमृत स्रोत की धारा से सुसिञ्चित हो कर वे स्तब्ध हो गईं।

तदनु काचन त्वत्कराम्बुजं सपदि गृह्णती निर्विशङ्कितम् ।
घनपयोधरे सन्निधाय सा पुलकसंवृता तस्थुषी चिरम् ॥२॥

तदनु काचन	तब फिर कोई
त्वत्-कराम्बुजम्	आपके हस्त कमल को
सपदि गृह्णती	हठात पकडती हुई
निर्विशङ्कितम्	शंकारहित हो कर
घन-पयोधरे	पीन पयोधर पर
सन्निधाय सा	रख कर वह

पुलक-संवृता	रोमाञ्च से परिपूर्ण
तस्थुषी चिरम्	खडी रही देर तक

एक गोपिका ने हठात आपका करकमल पकड कर निश्शङ्क भाव से अपने पीन पयोधर पर रख लिया। रोमाञ्च से परिपूर्ण उस स्थिति में वह बहुत देर तक खडी रही।

तव विभोऽपरा कोमलं भुजं निजगलान्तरे पर्यवेष्टयत् ।
गलसमुद्गतं प्राणमारुतं प्रतिनिरुन्धतीवातिहर्षुला ॥३॥

तव विभो-	आपकी हे विभो!
अपरा	दूसरी (गोपिका) ने
कोमलं भुजं	कोमल भुजा को
निज-गल-अन्तरे	स्वयं के गले के चारों ओर
पर्यवेष्टयत्	लपेट लिया
गल-समुद्गतं	गले में आए हुए
प्राण-मारुतं	प्राण वायु को
प्रतिनिरुन्धति-	रोकते हुए
इव-अति-हर्षुला	के समान अत्यन्त हर्षित हुई

हे विभो! दूसरी गोपिका ने मानो प्राण वायु को गले में ही रोकते हुए, अत्यधिक हर्ष विह्वल हो कर आपकी कोमल भुजाओं को अपने गले में लपेट लिया।

अपगतत्रपा कापि कामिनी तव मुखाम्बुजात् पूगचर्वितम् ।
प्रतिगृहय्य तद्वक्त्रपङ्कजे निदधती गता पूर्णकामताम् ॥४॥

अपगत-त्रपा	छोड कर लज्जा को
कापि कामिनी	कोई और कामिनी
तव	आपके

मुख-अम्बुजात्	मुख कमल से
पूग-चर्वितम्	पान चबाए हुए को
प्रतिगृहय्य	ले कर के
तत्-वक्त्र-पङ्कजे	उसके मुखारविन्द में
निदधती गता	डालते हुए पहुंच गई
पूर्ण-कामताम्	सर्व काम परिपूर्णता को

एक और कोई कामिनी लज्जा को छोड कर आपके मुख कमल से चबाया हुआ पान ले कर अपने मुखारविन्द में डाल कर मानो सर्व काम परिपूर्णता की स्थिति को प्राप्त हो गई।

विकरुणो वने संविहाय मामपगतोऽसि का त्वामिह स्पृशेत् ।
इति सरोषया तावदेकया सजललोचनं वीक्षितो भवान् ॥५॥

विकरुण:	निर्दयी
वने संविहाय माम्-	वन में छोड कर मुझको
अपगत:-असि	चले गए हो
का त्वाम्-इह	कौन तुमको यहां
स्पृशेत् इति	स्पर्श करे इस प्रकार
सरोषया तावत्-	उलाहना सहित तब
एकया	एक के द्वारा
सजल-लोचनम्	(जिसके) नेत्रों में आंसू भरे हुए
वीक्षित: भवान्	देखे गए आप

'निर्दयी तुम मुझको वन में छोड कर चले गए थे। ऐसे तुमको अब यहां कौन स्पर्श करेगा?' इस प्रकार उलाहना देते हुए, एक ने आखों में आंसू भर कर आपको देखा।

इति मुदाऽऽकुलैर्वल्लवीजनै: सममुपागतो यामुने तटे ।

मृदुकुचाम्बरैः कल्पितासने घुसृणभासुरे पर्यशोभथाः ॥६॥

इति मुदाकुलैः-	इस प्रकार हर्ष से आकुल उन
वल्लवीजनैः	गोपिकाओं के
समम्-उपागतः	साथ जा कर
यामुने तटे	यमुना के तट पर
मृदु-कुच-अम्बरैः	नर्म ओढनियों से
कल्पित-आसने	बनाए गए आसनों पर
घुसृण-भासुरे	केसर से अङ्कित
पर्यशोभथाः	(आप) सुशोभित हुए

हर्षातिरेक से आकुल उन गोपिकाओं के साथ आप यमुना के तट पर गए। वहां गोपियों द्वारा अपनी केसर चर्चित नर्म ओढनियों से बनाए आसन पर विराजमान हो कर आप सुशोभित हुए।

कतिविधा कृपा केऽपि सर्वतो धृतदयोदयाः केचिदाश्रिते ।
कतिचिदीदृशा मादृशेष्वपीत्यभिहितो भवान् वल्लवीजनैः ॥७॥

कतिविधा कृपा	कितने प्रकार की कृपा (होती है)
के-अपि सर्वतः	कोई तो सभी पर
धृत-दयोदयाः	धारण सदा करते हैं दया
केचित्-आश्रिते	कोई आश्रितो पर
कतिचित्-ईदृशा	कुछ इस प्रकार के होते हैं
मा-दृशेषु-अपि-	(जो) मुझ जैसों के ऊपर भी (दया नहीं करते)
इति-अभिहितः	इस प्रकार कहा
भवान्	आपको

वल्लवीजनैः	युवतियों ने

दया अनेक प्रकार की होती है। कुछ तो सभी के लिए सदा ही दया का भाव धारण करते हैं। कुछ केवल अपने आश्रितों पर ही दया करते हैं। कुछ ऐसे भी होते हैं जो मुझ जैसी (दीन) पर भी दया नहीं करते।' युवतियों ने आपसे इस प्रकार कहा।

अयि कुमारिका नैव शङ्क्यतां कठिनता मयि प्रेमकातरे ।
मयि तु चेतसो वोऽनुवृत्तये कृतमिदं मयेत्यूचिवान् भवान् ॥८॥

अयि कुमारिका	अयि कुमारिकाओं
न-एव शङ्क्यतां	न ही आशंकित होवो
कठिनता मयि	निष्ठुरता मुझमें
प्रेम-कातरे	प्रेम के लिए विह्वल
मयि तु	मुझमें ही
चेतसः वः-	चित्त तुम लोगों का हो
अनुवृत्तये	सदा सर्वदा
कृतम्-इदम्	(इसलिए) किया यह
मया-इति-	मैने इस प्रकार
उचिवान्	कहा
भवान्	आपने

आपने कहा, 'हे कुमारिकाओं मुझमें निष्ठुरता की आशंका मत करो। मैं तुम्हारे प्रेम के लिये विह्वल रहता हूं। तुम्हारा चित्त सदा सर्वदा मुझी में लगा रहे इसीलिए मैने अदृश्य होने की यह क्रीडा की थी।'

अयि निशम्यतां जीववल्लभाः प्रियतमो जनो नेदृशो मम ।
तदिह रम्यतां रम्ययामिनीष्वनुपरोधमित्यालपो विभो ॥९॥

अयि निशम्यतां	अयि सुनो
जीववल्लभाः	हे जीवन वल्लभाओं!

प्रियतम: जन:	प्रियतम जन
न-ईदृश: मम	नही हैं ऐसी मेरी (तुमसे अन्य)
तत्-इह रम्यतां	इसलिए यहां रमण करो
रम्य-यामिनीषु-	रमणीय रात्रियों में
अनुपरोधम्-	निश्शङ्कित हो कर
इति-आलप:	इस प्रकार कहा (आपने)
विभो	हे विभो!

हे विभो! आपने गोपिकाओं से कहा 'अयि जीवन वल्लभाओं सुनो! तुमसे अन्य और कोई मेरे प्रियतम जन नहीं हैं। इन रमणीय रात्रियों में मेरे संग निश्शङ्क भाव से रमण करो।'

इति गिराधिकं मोदमेदुरैर्व्रजवधूजनै: साकमारमन् ।
कलितकौतुको रासखेलने गुरुपुरीपते पाहि मां गदात् ॥१०॥

इति गिरा-	इस प्रकार की वाणी से
अधिकं	और अधिक
मोद-मेदुरै:-	प्रसन्नता से अभिभूत
व्रज-वधूजनै:	व्रज की गोपिकाओं के
साकम्-आरमन्	साथ रमण करने लगे
कलित-कौतुक:	सम्पूर्ण उत्साह के साथ
रास-खेलने	रास क्रीडा में
गुरुपुरीपते	हे गुरुपुरीपते!
पाहि मां गदात्	रक्षा करें रोगों से

आपकी यह वाणी सुन कर व्रज की गोपिकाएं और भी आनन्द विभोर हो गई। उनके साथ आप अत्यन्त उत्साह से रास कीडा में रमण करने लगे। हे गुरुपुरीपते! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ६९

केशपाशधृतपिञ्छिकाविततिसञ्चलन्मकरकुण्डलं
हारजालवनमालिकाललितमङ्गरागघनसौरभम् ।
पीतचेलधृतकाञ्चिकाञ्चितमुदञ्चदंशुमणिनूपुरं
रासकेलिपरिभूषितं तव हि रूपमीश कलयामहे ॥१॥

केश-पाश-धृत-	केशों के पाश को पकडा हुआ है
पिञ्छिका-वितति-	मोर पंख के गुच्छों से
सञ्चलन्-	झूम रहे हैं
मकर-कुण्डलम्	मकर के आकार के कुण्डल
हार-जाल-	हारों के जाल
वन-मालिका-ललितम्-	वन मालिकाओं से सुसज्जित
अङ्ग-राग-घन-सौरभम्	अङ्ग राग घनी सुगन्ध वाला (अङ्गों पर लगाया हुआ)
पीत-चेल	पीत वर्ण के वस्त्र
धृत-काञ्चिका-अञ्चितम्-	धारण किए हुए स्वर्ण करघनी से सुशोभित
उदञ्चत्-अंशु-	उद्भासित करती किरणों को
मणि-नूपुरम्	मणि युक्त नूपुर
रास-केलि-	रास क्रीडा (के लिए)
परिभूषितम्	विभूषित
तव हि	आप ही के
रूपम्-ईश	रूप का हे ईश!
कलयामहे	(हम) ध्यान करते हैं

मयूर पंखों के गुच्छों से बन्धी हुई केश राशि, मकराकृति के झूमते हुए कुण्डल गालों पर, मुक्ताहारों के साथ वन मालाओं के जालों से सुसज्जित कण्ठ, घनी सुगन्ध युक्त अङ्गराग से परिलिप्त अङ्ग, पीत वर्ण के वस्त्र पर धारण की हुई स्वर्ण

करघनी, किरणों को उद्भासित करते हुए नूपुर, हे ईश! रास क्रीडा के लिये आपके इस प्रकार विभूषित रूप का ही हम ध्यान करते हैं।

तावदेव कृतमण्डने कलितकञ्चुलीककुचमण्डले
गण्डलोलमणिकुण्डले युवतिमण्डलेऽथ परिमण्डले ।
अन्तरा सकलसुन्दरीयुगलमिन्दिरारमण सञ्चरन्
मञ्जुलां तदनु रासकेलिमयि कञ्जनाभ समुपादधाः ॥२॥

तावत्-एव	तभी
कृत-मण्डने	करके शृङ्गार
कलित-कञ्चुलीक-	पहन कर कञ्चुलीक
कुच-मण्डले	स्तन मण्डल पर
गण्ड-लोल	गालों पर झूमते हुए
मणि-कुण्डले	मणिमय कुण्डल वाली
युवति-मण्डले-	युवतियों के मण्डल ने
अथ परिमण्डले	जब मण्डलाकार बना लिया
अन्तरा	(तब) बीच में
सकल-सुन्दरी-	सब सुन्दरियों के
युगलम्-	युगलों के
इन्दिरा-रमण	हे इन्दिरा रमण!
सञ्चरन्	संचरण करते हुए
मञ्जुलां तदनु	सुन्दर तब फिर
रासकेलिम्-अयि	रास क्रीडा का अयि
कञ्जनाभ	कमलनाभ! (आपने)
समुपादधाः	प्रारम्भ किया

तत्पश्चात शृङ्गार करके, वक्षस्थल पर कञ्चुकी पहन कर, कानों में मणिमय कुण्डल झलकाते हुए, युवतियों के मण्डल ने आपके चारों ओर मण्डलाकार घेरा बना लिया। हे इन्दिरा रमण! सब सुन्दरियों के युगलों के बीच बीच में संचरण करते हुए, हे कमलनाभ! आपने सुन्दर रास क्रीडा प्रारम्भ की।

वासुदेव तव भासमानमिह रासकेलिरससौरभं
दूरतोऽपि खलु नारदागदितमाकलय्य कुतुकाकुला ।
वेषभूषणविलासपेशलविलासिनीशतसमावृता
नाकतो युगपदागता वियति वेगतोऽथ सुरमण्डली ॥३॥

वासुदेव तव	हे वासुदेव! आपकी
भासमानम्-इह	कान्तिमय यहां
रास-केलि-रससौरभम्	रास लीला का रस और सौरभ
दूरत:-अपि खलु	दूर तक भी निश्चय ही
नारद-आगदितम्-	नारद के कहने से
आकलय्य	सुन कर
कुतुक-आकुला	उत्सुकता से व्याकुल
वेष-भूषण-विलास-पेशल-	(जो) वेष भूषा की साज सज्ज में पटु वे
विलासिनी-शत-समावृता	विलासी सुन्दरियां सैंकडों में सम्मिलित हो कर
नाकत:	स्वर्ग से
युगपत्-आगता	एक संग आ गई
वियति वेगत:-	आकाश में शीघ्रता से
अथ सुर-मण्डली	और फिर देव मण्डली

हे वासुदेव! नारद से आपकी रसमयी और सौरभमयी रासलीला की वार्ता सुन कर, सैंकडों विलासिनी सुन्दरियां जो स्वयं वेष भूषा की साज सज्जा में पटु हैं, उत्सुकता से व्याकुल हो कर स्वर्ग से आ कर आकाश में एकत्रित हो गईं। इसी प्रकार देव मण्डली भी शीघ्रता से आकाश में एकत्रित हो गई।

वेणुनादकृततानदानकलगानरागगतियोजना-

लोभनीयमृदुपादपातकृततालमेलनमनोहरम् ।
पाणिसंक्कणितकङ्कणं च मुहुरंसलम्बितकराम्बुजं
श्रोणिबिम्बचलदम्बरं भजत रासकेलिरसडम्बरम् ॥४॥

वेणु-नाद-	मुरली के नाद से
कृत-तान-	सम्मिलित किया हुआ तान
दान-कल-	देते हुए मधुर
गान-राग-	गान को राग
गति-योजना-	(और) गति और योजना
लोभनीय-	लोभनीय
मृदु-पाद-पात-कृत-	मधुर पैर की पटक से किया
ताल-मेलन-	ताल का मिलाना
मनोहरम्	मनोहारी
पाणि-संक्कणित-	हाथों की ताली से
कङ्कणम् च	कङ्गनो की खनखन से मिश्रित
मुहुः-अंस-लम्बित-	बार बार कन्धों पर (गोपिकाओं के) रखे हुए
कर-अम्बुजं	करकमल
श्रोणि-बिम्ब-	कमर पर
चलत्-अम्बरम्	लहराते हुए वस्त्र
भजत रासकेलि-	ध्यान करें रास लीला का
रस-डम्बरम्	(जो) रसों का भण्डार है

मुरली के नाद ने लय प्रदान करते हुए मधुर गीतों को राग और गतिमय छन्द दिया। नर्तन के समय पैरों के कोमल पात ने सुन्दर संगीत को ताल बद्ध किया। हाथों की ताली कङ्गनों की खनखन से युक्त हो कर और भी मधुर हो गई। आप बार बार अपने कर कमल गोपिकाओं के कन्धों पर रख देते थे। नर्तन करते समय कटि पर के वस्त्र लहरा जाते थे। रसों के भण्डार

ऐसी रास लीला का हम ध्यान करें।

स्पर्धया विरचितानुगानकृततारतारमधुरस्वरे
नर्तनेऽथ ललिताङ्गहारलुलिताङ्गहारमणिभूषणे ।
सम्मदेन कृतपुष्पवर्षमलमुन्मिषद्दिविषदां कुलं
चिन्मये त्वयि निलीयमानमिव सम्मुमोह सवधूकुलम् ॥५॥

स्पर्धया विरचित-	(मानो) प्रतियोगिता से रचना की हो
अनुगान-कृत-	एक के बाद एक गान करते हुए
तार-तार-	तार और मन्द
मधुर-स्वरे	मधुर स्वरों का
नर्तने-अथ	और फिर नाचते हुए
ललित-अङ्ग-हार-	मनोहर अङ्गो के प्रचालन से
लुलित-अङ्ग-हार-	सञ्चालित हो जाते हैं अङ्गों के हार
मणि-भूषणे	(और) मणिमय आभूषण
सम्मदेन	हर्षातिरेक से
कृत-पुष्प-वर्षम्-	की पुष्पों की वर्षा
अलम्-उन्मिषत्-	अपलक
दिविषदां कुलं	दिव्य देव कुलों ने
चिन्मये त्वयि	चिन्मय स्वरूप आपमें
निलीयमानम्-इव	विलीन भूत होते हुए से
सम्मुमोह	स्म्मोहित होगए
सवधूकुलम्	अपनी वधुओं के साथ

मानो प्रतियोगिता चल रही हो, एक के बाद एक तार और मन्द स्वरों में गान की रचना हो रही थी। नृत्य करते हुए अङ्गों के मनोहर प्रचालन से अङ्गों के मणिमय आभूषण सञ्चालित हो रहे थे। हर्षातिरेक से दिव्य देव गण वधुओं के साथ दिव्य पुष्प

वृष्टि कर रहे थे। सम्मोहित हो कर अपलक रास को देखते हुए मोहमुग्ध अवस्था में वे आप ही के चिन्मय स्वरूप में विलीयमान हो गए।

स्विन्नसन्नतनुवल्लरी तदनु कापि नाम पशुपाङ्गना
कान्तमंसमवलम्बते स्म तव तान्तिभारमुकुलेक्षणा ॥
काचिदाचलितकुन्तला नवपटीरसारघनसौरभं
वञ्चनेन तव सञ्चुचुम्ब भुजमञ्चितोरुपुलकाङ्कुरा ॥६॥

स्विन्न-सन्न-	स्वेद शिथिल
तनु-वल्लरी	देह लता (के समान)
तदनु कापि नाम	उसके बाद किसी एक
पशुपाङ्गना	गोपिका ने
कान्तम्-अंसम्-	कान्तिमय स्कन्ध पर
अवलम्बते स्म	सहारा ले लिया
तव तान्ति-भार-	आपके, थकावट के कारण
मुकुल-ईक्षणा	अधखुली आंखों वाली
काचित्-	कोई
आचलित-कुन्तला	लहराते हुए बालों वाली
नव-पटीर-सार-घन-सौरभम्	नए चन्दन सार की घनी सौरभ से युक्त
वञ्चनेन तव	छल से आपके
सञ्चुचुम्ब भुजम्-	चूम लिया भुजा को
अञ्चित-उरु-	अङ्कुरित हुए बडे
पुलक-अङ्कुरा	पुलक बिन्दु

तदनन्तर लता के समान कोमल देह वाली किसी एक गोपिका ने, जो थकावट से स्वेद सिक्त हो कर शिथिल हो गई थी, आपके कमनीय स्कन्ध का सहारा ले लिया। अन्य एक गोपिका ने, जिसके केश लहरा रहे थे और आंखें अधखुली थीं, आपके नव चन्दन सार की घनी सौरभ से युक्त भुजा को छल से चूम लिया जिसके फलस्वरूप उसके अङ्गों पर बडे बडे

पुलक बिन्दु उभर आए।

कापि गण्डभुवि सन्निधाय निजगण्डमाकुलितकुण्डलं
पुण्यपूरनिधिरन्ववाप तव पूगचर्वितरसामृतम् ।
इन्दिराविहृतिमन्दिरं भुवनसुन्दरं हि नटनान्तरे
त्वामवाप्य दधुरङ्गना: किमु न सम्मदोन्मददशान्तरम् ॥७॥

कापि गण्डभुवि	किसी ने गण्ड स्थल पर (आपके)
सन्निधाय निज गण्डम्-	रख कर अपने कपोल को
आकुलित-कुण्डलम्-	(जहां) सञ्चालित हो रहे थे कुण्डल
पुण्य-पूर निधि:-	पुण्यों से भरपूर निधि वाली उसने
अन्ववाप	ले लिया
तव-पूग-चर्वित-	आपका पान चबाया हुआ
रस-अमृतम्	अमृत रस मय
इन्दिरा-विहृति-मन्दिरम्	लक्ष्मी के विलास मन्दिर (आप) को
भुवन-सुन्दरम्	त्रिभुवन सुन्दर (आप) को
हि नटन-अन्तरे	ही नृत्य के समय
त्वाम्-अवाप्य	आपको पा कर
दधु:-अङ्गना:	प्राप्त कर गईं गोपिकाएं
किमु न सम्मद-	किन किन नही मद के
उन्मद-दशान्तरम्	उन्माद की दशाओं को

पुण्यों की भरपूर निधि वाली किसी एक गोपिका ने आपके गण्डस्थल पर सञ्चालित कुण्डलों वाला अपना कपोल रख दिया और आपके चबाए हुए पान के रसामृत का पान कर लिया। लक्ष्मी के विलास मन्दिर आपको, त्रिभुवन सुन्दर आपको, नृत्य के समय पा कर, गोपिकाओं ने किन किन आनन्द उन्माद की दशाओं का रसास्वादन नहीं किया?

गानमीश विरतं क्रमेण किल वाद्यमेलनमुपारतं
ब्रह्मसम्मदरसाकुला: सदसि केवलं ननृतुरङ्गना: ।

नाविदन्नपि च नीविकां किमपि कुन्तलीमपि च कञ्चुलीं
ज्योतिषामपि कदम्बकं दिवि विलम्बितं किमपरं ब्रुवे ॥८॥

गानम्-ईश	गीत हे ईश्वर
विरतं क्रमेण	रुक जाने पर क्रमश:
किल वाद्य-मेलनम्-	फहिर वाद्य यन्त्रों के मेल के भी
उपारतं	थम जाने पर
ब्रह्म-सम्मद-	ब्रह्मानन्द के
रस-आकुला:	रस में निमग्न
सदसि केवलं	समूह में केवल
ननृतुः-अङ्गना:	नाचती रहीं गोपाङ्गनाएं
न-अविदन्-अपि च	नहीं जान पाईं और
नीविकां किमपि	नीविका के (खिसकने के) विषय मे कुछ भी
कुन्तलीम्-अपि	केशों के अस्त व्यस्त हो जाने के विषय में
च कञ्चुलीम्	और कञ्चुली के विषय में भी
ज्योतिषाम्-अपि	(आकाश में) तारक गण भी
कदम्बकं	अपनी परिधि में
दिवि विलम्बितं	आकाश में लटके हुए से (रह गए)
किम्-अपरं ब्रुवे	क्या अधिक कहा जाए

हे ईश्वर! गीत के साथ साथ क्रमश: वाद्य यन्त्रों की संगत भी थम गई। किन्तु ब्रह्मानन्द में निमग्न गोपाङ्गनाएं समूह में नृत्य करती रहीं। सम्मोहित अवस्था में वे अपनी नीविका के खिसकने को नहीं जान पाईं, न ही अपने केशों के अस्त व्यस्त होने अथवा कञ्चुली के स्थान भ्रष्ट होने को समझ पाईं। और क्या कहा जाए, आकाश में तारक गण भी अपनी परिधि में स्तम्भित खडे रह गए।

मोदसीम्नि भुवनं विलाप्य विहृतिं समाप्य च ततो विभो

केलिसम्मृदितनिर्मलाङ्गनवघर्मलेशसुभगात्मनाम् ।
मन्मथासहनचेतसां पशुपयोषितां सुकृतचोदित-
स्तावदाकलितमूर्तिरादधिथ मारवीरपरमोत्सवान् ॥९॥

मोदसीम्नि	आनन्द की पराकाष्ठा में
भुवनं विलाप्य	त्रिभुवन को निमग्न करके
विहृतिं समाप्य च	क्रीडा को समाप्त कर के और
ततः विभो	तब हे विभो!
केलि-सम्मृदित-	क्रीडा से विक्षिप्त
निर्मल-अङ्ग-	निर्मल (कोमल) अङ्ग वाली
नव-घर्म-लेश-	स्वेद बिन्दुओं से
सुभग-आत्मनाम्	सुन्दर देह वाली
मन्मथ-असहन-	मन्मथ पीडा को न सहन करने वाले
चेतसां	मानस वाली
पषुप-योषितां	गोपाङ्गनाओं के
सुकृत-चोदितः-	पुण्यों से प्रेरित हो कर
तावत्-आकलित-मूर्तिः-	तब धारण कर के रूपों को
अदधिथ	आयोजन किया
मारवीर-परम-	उत्कृष्ट मदन
उत्सवान्	उत्सव का

रास क्रीडा के समाप्त होने पर त्रिभुवन आनन्द की पराकाष्ठा में निमज्जित हो गया। तब हे विभो! क्रीडाविक्षिप्त गोपाङ्गनाओं के कोमल अङ्गों पर नव स्वेद बिन्दु उभर आए, जिनसे वे बहुत ही सुन्दर लगने लगीं। मन्मथ पीडा को सहन न कर पाने से शिथिल हुए मानस वाली उन गोपाङ्गनाओं के पुण्यों से प्रेरित हो कर आपने अनेक रूप धारण किये और एक उत्कृष्ट मदनोत्सव का आयोजन किया।

केलिभेदपरिलोलिताभिरतिलालिताभिरबलालिभिः
स्वैरमीश ननु सूरजापयसि चारुनाम विहृतिं व्यधाः ।
काननेऽपि च विसारिशीतलकिशोरमारुतमनोहरे
सूनसौरभमये विलेसिथ विलासिनीशतविमोहनम् ॥१०॥

केलि-भेद-	नाना प्रकार की क्रीडाओं से
परिलोलिताभिः-	श्रमित हुई
अति-लालिताभिः-	और अत्यन्त दुलारी गईं
अबलालिभिः	अबलाओं के साथ
स्वैरम्-ईश	स्वेच्छा से हे ईश्वर!
ननु सूरजा-पयसि	निःसन्देह यमुना के जलों में
चारु-नाम्	अत्यन्त सुन्दर
विहृतिं व्यधाः	क्रीडा सम्पन्न कर के
कानने-अपि च	वन में भी और
विसारि-शीतल-	सम्प्रसारित शीतल
किशोर-मारुत-	मन्द वायु
मनोहरे	मनमोहक में
सून-सौरभमये	पुष्पों की सुगन्ध से परिपूर्ण
विलेसिथ	विचरण किया (आपने)
विलासिनी-शत-	विलासिनी सैंकडों को
विमोहनम्	विमोहित करने वाला

हे ईश्वर! विभिन्न क्रीडाओं से श्रमित हुई और अत्यन्त दुलारी गई अबलाओं के साथ आपने निःसन्देह यमुना के जल में स्वेच्छापूर्वक अत्यधिक सुन्दर विहार सम्पन्न किया। तत्पश्चात पुष्पों की सुगन्ध से युक्त मोहक और मन्द वायु से सम्प्रसारित वनों में भी विचरण किया जो सैंकडों विलासिनियों को विमोहित कर देने वाला था।

कामिनीरिति हि यामिनीषु खलु कामनीयकनिधे भवान्
पूर्णसम्मदरसार्णवं कमपि योगिगम्यमनुभावयन् ।
ब्रह्मशङ्करमुखानपीह पशुपाङ्गनासु बहुमानयन्
भक्तलोकगमनीयरूप कमनीय कृष्ण परिपाहि माम् ॥११॥

कामिनीः-इति हि	युवतियों को इसी प्रकार ही
यामिनीषु खलु	रात्रियों में
कामनीयकनिधे	हे कमनीय निधि!
भवान्	आपने
पूर्ण-सम्मद-	पूर्णानन्द के
रस-अर्णवं	रस समुद्र का
कमपि	किसी
योगि-गम्यम्-	योगियों के अनुभव गम्य
अनुभावयन्	अनुभव कराया
ब्रह्म-शङ्कर-मुखान्-	ब्रह्मा शंकर आदि मुख्य
अपि-इह्	भी यहां
पशुप-अङ्गनासु	गोपिका जनों में
बहुमानयन्	बहुत आदर करने लगे
भक्त-लोक-	भक्त जनों के द्वारा
गमनीय-रूप	प्राप्तव्य स्वरूप वाले
कमनीय कृष्ण	हे कमनीय कृष्ण!
परिपाहि माम्	रक्षा करें मेरी

हे कमनीयता के निधि! इसी प्रकार आपने युवतियों को रात्रियों में उस आनन्दमय रसामृत से पूर्ण सागर का आस्वादन करवाया जो किसी योगी के लिए ही अनुभव गम्य है। यहां ब्रह्मा शंकर आदि प्रमुख देवता भी गोपिकाओं का बहुत आदर

करने लगे। भक्त जनों के द्वारा प्राप्तव्य स्वरूप वाले, हे कमनीय कृष्ण! मेरी रक्षा करें।

दशक ७०

इति त्वयि रसाकुलं रमितवल्लभे वल्लवा:
कदापि पुरमम्बिकाकमितुरम्बिकाकानने ।
समेत्य भवता समं निशि निषेव्य दिव्योत्सवं
सुखं सुषुपुरग्रसीद्व्रजपमुग्रनागस्तदा ॥१॥

इति त्वयि	इसी भांति आपके
रस-आकुलं	रसास्वादन करवाने से व्याकुल
रमित-वल्लभे	रमण कर रही थीं गोपिकाएं
वल्लवा: कदापि	गोपजन किसी समय
पुरम्-अम्बिका-कमितु:-	पुरी को अम्बिका पति के
अम्बिका-कानने	अम्बिका वन में
समेत्य भवता समं	सम्मिलित हो कर आपके साथ
निशि निषेव्य	रात्रि में आयोजित कर के
दिव्य-उत्सवं	दिव्य उत्सव को
सुखं सुषुपु:-	सुख से सो गए
अग्रसीत्-व्रजपम्-	ग्रस लिया व्रजेश (नन्द) को
उग्रनाग:-तदा	भयंकर नाग ने तब

इसी भांति गोपियों को आपने परमानन्द रस का आस्वादन करवाया, जिसकी मादकता में वे रमण कर रही थी। उसी समय गोपजन सम्मिलित हो कर आपके संग अम्बिका पति, शंकर, की आराधना के लिये अम्बिका वन में स्थित उनके मन्दिर में गए। दिव्य उत्सव के सम्पन्न हो जाने पर गोपजन सुख से सो गए। उसी समय एक भयंकर नाग ने व्रजेश नन्द को ग्रस लिया।

समुन्मुखमथोल्मुकैरभिहतेऽपि तस्मिन् बला-
दमुञ्चति भवत्पदे न्यपति पाहि पाहीति तै: ।
तदा खलु पदा भवान् समुपगम्य पस्पर्श तं
बभौ स च निजां तनुं समुपसाद्य वैद्यधरीम् ॥२॥

समुन्मुखम्-	ऊपर उठे मुख वाले उसको
अथ-उल्मुकै:-	तब जलती हुई लकडियों से
अभिहते-अपि-तस्मिन्	मारने पर भी उसके
बलात्-अमुञ्चति	(अपनी) पकड से न छोडने पर (नन्द को)
भवत्-पदे न्यपति	आपके चरणों पर गिर पडे
पाहि पाहि-इति तै:	रक्षा करें रक्षा करें इस प्रकार उनके द्वारा
तदा खलु	तब फिर
पदा भवान्	पैर से आपने
समुपगम्य	पास जा कर
पस्पर्श तं	स्पर्श किया उसको
बभौ स च	हो गया वह और
निजां तनुं	स्वयं के शरीर
समुपसाद्य	मे आ कर
वैद्यधरीम्	वैद्यधरी (रूप में)

गोपों ने उसके ऊपर उठे हुए मुख पर जलती हुई लकडियों से प्रहार किया फिर भी उसने अपनी पकड से नन्द को नहीं छोडा। तब वे 'रक्षा करें, रक्षा करें,' कहते हुए आपके चरणों पर गिर पडे। आपने उस अजगर के समीप जा कर अपने चरण से उसका स्पर्श किया और वह अपने निजी शरीर को प्राप्त करके वैद्यधरी रूप में आ गया।

सुदर्शनधर प्रभो ननु सुदर्शनाख्योऽस्म्यहं
मुनीन् क्वचिदपाहसं त इह मां व्यधुर्वाहसम् ।
भवत्पदसमर्पणादमलतां गतोऽस्मीत्यसौ
स्तुवन् निजपदं ययौ व्रजपदं च गोपा मुदा ॥३॥

सुदर्शनधर प्रभो	सुदर्शनधारी हे प्रभो!
ननु सुदर्शन-आख्य:-	नि:सन्देह सुदर्शन नाम का

अस्मि-अहं	हूं मैं
मुनीन् क्वचित्-	मुनियों का एक समय
अपाहसं	उपहास किया था
ते-इह मां	उन्हों ने यहां मुझको
व्यधुः-वाहसम्	बना दिया अजगर
भवत्-पद-	आपके चरण
समर्पणात्-	स्पर्श से
अमलतां गतः-अस्मि	निर्मलता को प्राप्त हो गया हूं
इति-असौ स्तुवन्	इस प्रकार यह स्तुति करते हुए
निजपदं ययौ	अपने लोक को चला गया
व्रजपदं च	और व्रज भूमि को
गोपा मुदा	गोपजन आनन्दपूर्वक (चले गए)

सुदर्शनधारी हे प्रभो! नि:सन्देह मेरा नाम सुदर्शन है। एक समय मैने मुनियों का उपहास किया था, जिसके कारण उन्होंने मुझे अजगर बना दिया। आपके चरणों के स्पर्श से मैं निर्मल हो गया हूं।' इस प्रकार स्तुति करते हुए वह विद्याधर अपने लोक को चला गया और गोप जन भी आनन्दपूर्वक व्रजधाम को लौट गए।

कदापि खलु सीरिणा विहरति त्वयि स्त्रीजनै-
र्जहार धनदानुग: स किल शङ्खचूडोऽबला: ।
अतिद्रुतमनुद्रुतस्तमथ मुक्तनारीजनं
रुरोजिथ शिरोमणिं हलभृते च तस्याददा: ॥४॥

कदापि खलु	एक समय अवश्यमेव
सीरिणा विहरति	बलराम के साथ विहार करते हुए
त्वयि स्त्रीजनैः-	आपके, और स्त्री जनों के साथ
जहार धनद-अनुगः	हरण कर लिया कुबेर के अनुचर ने

स किल	उसने निश्चय ही
शङ्खचूडः-	शङ्खचूड (नाम का) ने
अबलाः	अबलाओं को
अतिद्रुतम्-	वेगपूर्वक
अनुद्रुतः-तम्-अथ	अत्यन्त द्रुत गति से उसका तब अनुगमन करके
मुक्त-नारी-जनम्	मुक्त कर दिया नारियों को
रुरोजिथ	संहार कर दिया (आपने उसका)
शिरोमणिम्	(उसके) शिर की मणि को
हलभृते च	बलराम को और
तस्य-अददाः	उसके दे दिया

अवश्य ही, एक समय आप बलराम और स्त्रीजनों के साथ विहार कर रहे थे। उस समय निश्चय ही कुबेर के अनुचर शङ्खचूड ने अबलाओं का अपहरण कर लिया। आपने अत्यन्त तीव्र गति से उनका अनुसरण किया जिससे उसने युवतियों को छोड दिया। आपने उसका संहार करके उसके मस्तक की मणि बलराम को दे दी।

दिनेषु च सुहृज्जनैस्सह वनेषु लीलापरं
मनोभवमनोहरं रसितवेणुनादामृतम् ।
भवन्तममरीदृशाममृतपारणादायिनं
विचिन्त्य किमु नालपन् विरहतापिता गोपिकाः ॥५॥

दिनेषु च	प्रति दिन और
सुहृत्-जनैः-सह	बन्धुओं के साथ
वनेषु लीलापरं	वनों में लीला में लगे हुए
मनोभव-मनोहरं	कामदेव के मन को भी हर लेने वाले
रसित-वेणु-	(आप) रसमय मुरली
नाद-अमृतम्	की तान अमृत के समान

भवन्तम्-	आपको
अमरी-दृशाम्-	देवाङ्गनाओं की दृष्टि के लिए
अमृत-पारणा-दायिनं	अमृतमय पेय देने वाले का
विचिन्त्य	चिन्तन करके
किमु न-आलपन्	क्या क्या नहीं चर्चा करती थीं
विरह-तापिता	विरह संतप्त
गोपिका:	गोपिकाएं

दिन प्रति दिन आप अपने बन्धुओं के साथ विभिन्न वनों में जा कर नाना प्रकार की लीलाओं में संलग्न रहते। आपका रूप कामदेव के मन को भी हरने वाला था। मुरली की अमृत तुल्य रसमय तान की वर्षा करते समय का आपका स्वरूप देवाङ्गनाओं की दृष्टि को अमृत मय पेय प्रदान करता था। आपके उसी स्वरूप का चिन्तन करते हुए विरह संतप्त गोपाङ्गनाएं आपकी क्या क्या चर्चा नहीं करती थीं?

भोजराजभृतकस्त्वथ कश्चित् कष्टदुष्टपथदृष्टिररिष्ट: ।
निष्ठुराकृतिरपष्ठुनिनादस्तिष्ठते स्म भवते वृषरूपी ॥६॥

भोजराज-भृतक:-	कंस का अनुचर
तु-अथ कश्चित्	तो तत्पश्चात कोई
कष्ट-दुष्ट-	कष्ट पूर्ण क्रूर
पथ-दृष्टि:-अरिष्ट:	मार्गों पर दृष्टि रखने वाला, अरिष्ट (नाम का)
निष्ठुर-आकृति:-	कठोर अकृति वाला
अपष्ठु-निनाद:-	कर्कश गर्जन करने वाला
तिष्ठते स्म भवते	सामने खडा हो गया आपके
वृषरूपी	सांड के रूप मे

तत्पश्चात कंस का अरिष्ट नाम का कोई अनुचर, जिसकी दृष्टि कठिन और क्रूर मार्गों पर ही रहती थी, एवं जिसकी आकृति कठोर और गर्जन अत्यन्त कर्कश था, सांड के रूप में आ कर आपके सामने उपस्थित हो गया।

शाक्वरोऽथ जगतीधृतिहारी मूर्तिमेष बृहतीं प्रदधान: ।
पङ्क्तिमाशु परिघूर्ण्य पशूनां छन्दसां निधिमवाप भवन्तम् ॥७॥

शाक्वर:-अथ	सांड (यह) तब
जगती-धृति-हारी	(जो) जीव जन्तुओं के धैर्य का हरण करने वाला था
मूर्तिम्-एष	आकार उसने
बृहतीं प्रदधान:	विशाल धारण करके
पङ्क्तिम्-आशु	समूह को शीघ्र ही
परिघूर्ण्य	अस्त व्यस्त करके
पशूनां	पशुओं के
छन्दसाम् निधिम्-	वेदों के निधि (आपके)
अवाप भवन्तम्	निकट आ गया आपके

हे वेदों के निधि! जगत के जीव जन्तुओं के धैर्य और शान्ति का हर्ता वह सांड, विशाल आकार धारण करके पशुओं के समूह को शीघ्र ही अस्त व्यस्त कर के आपके समीप आ गया।

तुङ्गशृङ्गमुखमाश्वभियन्तं संगृहय्य रभसादभियं तम् ।
भद्ररूपमपि दैत्यमभद्रं मर्दयन्नमदय: सुरलोकम् ॥८॥

तुङ्ग-शृङ्ग-मुखम्-	उठाए हुए सींग और मुख वाले उसको
आशु-अभियन्तं	शीघ्रता से आक्रमण करते हुए उसको
संगृहय्य रभसात्-	पकड कर तुरन्त
अभियं तम्	निर्भय उसको
भद्र-रूपम्-अपि	साधु वेष वाले
दैत्यम्-अभद्रम्	(किन्तु) असाधु दैत्य को
मर्दयन्-अमदय:	मार कर प्रसन्न कर दिया

सुरलोकम्	देव जन को

अपने सींग और मुख को उठाए हुए उसने शीघ्रता से आप पर आक्रमण किया। तुरन्त उस साधु वेष वाले असाधु दैत्य को पकड कर आपने निर्भयता से मार डाला और देवगण को प्रसन्न कर दिया।

चित्रमद्य भगवन् वृषघातात् सुस्थिराऽजनि वृषस्थितिरुर्व्याम् ।
वर्धते च वृषचेतसि भूयान् मोद इत्यभिनुतोऽसि सुरैस्त्वम् ॥९॥

चित्रम्-अद्य	आश्चर्य है आज
भगवन्	हे भगवन!
वृष-घातात्	वृषभासुर को मारने से
सुस्थिरा-अजनि	सुद्दढ हो गई है
वृष-स्थितिः-	धर्म की स्थिति
उर्व्याम्	पृथ्वी पर
वर्धते च	बढ रहा है
वृष-चेतसि	इन्द्र के चित्त में
भूयान् मोद	महान आनन्द
इति-अभिनुतः-असि	इस प्रकार स्तुति की
सुरैः-त्वम्	देवताओं ने आपकी

हे भगवन! आश्चर्य है कि आज वृषभासुर के मारे जाने से पृथ्वी पर धर्म की स्थिति सुद्दढ हो गई है और इन्द्र के चित्त में महान आनन्द बढ रहा है' देवगण ने इस प्रकार आपकी स्तुति की।

औक्षकाणि परिधावत दूरं वीक्ष्यतामयमिहोक्षविभेदी ।
इत्थमात्तहसितैः सह गोपैर्गेहगस्त्वमव वातपुरेश ॥१०॥

औक्षकाणि	अहो सांडों
परिधावत दूरं	भाग जाओ दूर

वीक्ष्यताम्-	देखो
अयम्-इह-	यह यहां
उक्षविभेदी	सांडों को मारने वाला आ गया'
इत्थम्-आत्त-हसितैः	इस प्रकार परिहास करते हुए
सह गोपैः-	साथ में गोपों के
गेहगः-त्वम्-	घर को गए आप
अव वातपुरेश	रक्षा करें हे वातपुरेश!

अहो सांडों! दूर भाग जाओ। देखो सांडों का भेदन करने वाला यह आ गया है।' इस प्रकार परिहास करते हुए आप गोपों के साथ घर आ गए। हे वातपुरेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ७१

यत्नेषु सर्वेष्वपि नावकेशी केशी स भोजेशितुरिष्टबन्धु: ।
त्वां सिन्धुजावाप्य इतीव मत्वा सम्प्राप्तवान् सिन्धुजवाजिरूप: ॥१॥

यत्नेषु	प्रयत्नों में
सर्वेषु-अपि	सभी में भी
न-अवकेशी	नही असफल
केशी स	केशी (नामक) वह
भोज-ईशितु:-	भोजराज (कंस) का
इष्ट-बन्धु:	प्रिय बन्धु
त्वाम्	आपको
सिन्धुजा-अवाप्य	लक्ष्मी के द्वारा प्राप्य
इति-इव मत्वा	ऐसा ही मान कर
सम्प्राप्तवान्	समीप आया
सिन्धुज-	सिन्धु (प्रदेश) में उत्पन
वाजि-रूप:	घोडे के रूप में

भोजराज कंस का प्रिय ब्न्धु केशी जो अपने सभी प्रयासों में कभी भी असफल नहीं हुआ था (सिन्धुजा) लक्ष्मी के द्वारा आपको प्राप्य, मान कर, (सिन्धुज) सिन्धु प्रदेश में उत्पन घोडे के रूप में आपके समीप आया।

गन्धर्वतामेष गतोऽपि रूक्षैर्नादै: समुद्वेजितसर्वलोक: ।
भवद्विलोकावधि गोपवाटीं प्रमर्द्य पाप: पुनरापतत्त्वाम् ॥२॥

गन्धर्वताम्-	गन्धर्वता को
एष गत:-अपि	यह प्राप्त हुआ भी
रूक्षै:-नादै:	कर्कश चीत्कारों से

समुद्वेजित-सर्व-लोक:	भयभीत कर देता था पूरे विश्व को
भवत्-विलोक-अवधि	आपके देखने तक
गोपवाटीं प्रमर्द्य	गोपवाटिकाओं को रोंद कर
पाप:	पापी ने
पुन:-आपतत्-त्वाम्	फिर आक्रमण किया आप पर

गन्धर्व होते हुए भी वह अपनी कर्कश चीत्कारों से समस्त विश्व को भयभीत कर देता था। जब तक आपने उसे देखा, तब तक में ही उसने गोपों की वाटिकाओं को रोंद डाला और फिर आप पर आक्रमण कर दिया।

ताक्ष्यार्पिताङ्घ्रेस्तव ताक्ष्र्य एष चिक्षेप वक्षोभुवि नाम पादम् ।
भृगो: पदाघातकथां निशम्य स्वेनापि शक्यं तदितीव मोहात् ॥३॥

ताक्ष्र्य-अर्पित-	गरुड के ऊपर रखे हुए
अङ्घ्रे:-तव	चरण आपके
ताक्ष्र्य एष चिक्षेप	घोडे ने इसने प्रहार किया
वक्षोभुवि	वक्ष स्थल पर
नाम पादम्	निश्चय ही पैर को
भृगो: पद-आघात-	भृगु (मुनि) के पग के आघात की
कथां निशम्य	कथा को सुन कर
स्वेन-अपि	स्वयं के द्वारा भी
शक्यं तत्-	किया जा सकता है वह
इति-इव मोहात्	इस प्रकार ही मोह से

गरुड के ऊपर आपके चरण रखे हुए हैं। घोडे ने निश्चय ही आपके वक्षस्थल पर अपने पैर से आघात किया। भृगु के द्वारा किये गए पग के आघात की कथा सुन कर मानो मोहवश ही उसने समझा कि वह भी ऐसा करने में सक्षम है।

प्रवञ्चयन्नस्य खुराञ्चलं द्रागमुञ्च चिक्षेपिथ दूरदूरम्

सम्मूर्च्छितोऽपि ह्यतिमूर्च्छितेन क्रोधोष्मणा खादितुमाद्रुतस्त्वाम् ॥४॥

प्रवञ्चयन्-अस्य	बचते हुए उसके
खुराञ्चलं	खुरों की झपेट से
द्राक्-अमुं-च	तुरन्त उसको और
चिक्षेपिथ	फेंक दिया
दूर-दूरम्	दूर बहुत दूर
सम्मूर्च्छित:-अपि	मूर्छित हो जाने पर भी
हि-अतिमूर्च्छितेन	अतिमूछर्चना से
क्रोध-उष्मणा	क्रोध की ज्वाला से
खादितुम्-अद्रुत:-	खाने के लिए उद्यत हुआ
त्वाम्	आपको

उसके खुरों की झपेट से बचते हुए आपने उसको बहुत दूर पर फेंक दिया। वह मूर्छित हो गया लेकिन अतिमूर्छना से उपजे क्रोध से जलते हुए आपको खाने के लिए उद्यत हुआ।

त्वं वाहदण्डे कृतधीश्च वाहादण्डं न्यधास्तस्य मुखे तदानीम् ।
तद् वृद्धिरुद्धश्वसनो गतासु: सप्तीभवन्नप्ययमैक्यमागात् ॥५॥

त्वं	आप
वाह-दण्डे	घोडे को दण्ड देने में
कृतधी:-च	और निश्चित मन से
वाहा-दण्डं	अपने भुजा दण्ड को
न्यधा:-तस्य	रख दिया उसके
मुखे तदानीम्	मुख में उस समय

तद्-वृद्धि-	उसके बढने से
रुद्ध-श्वसनः	रुक जाने पर श्वास
गतासुः	चले जाने पर प्राण
सप्तीभवन्-अपि-	घोडे के रूप में होने पर भी
अयम्-	यह (आपसे)
ऐक्यम्-आगात्	एकात्मकता पा गया

आप घोडे को दण्ड देने में कृत संकल्प थे। आपने अपना भुजा दन्ड उसके मुख में डाल दिया और उसका विस्तार होने लगा। इससे उसके श्वास की गति रुक गई और उसके प्राण निकल गए। घोडे के रूप में होने पर भी वह आप में एकात्मकता पा गया।

आलम्भमात्रेण पशोः सुराणां प्रसादके नूत्न इवाश्वमेधे ।
कृते त्वया हर्षवशात् सुरेन्द्रास्त्वां तुष्टुवुः केशवनामधेयम् ॥६॥

आलम्भ-	संहार
मात्रेण पशोः	मात्र से पशु (अश्व) का
सुराणाम् प्रसादके	देवों के आनन्द में
नूत्न इव-	नूतन मानो
अश्वमेधे	अश्वमेध यज्ञ में
कृते त्वया	करने पर आपके
हर्षवशात्	हर्षातिरेक से
सुरेन्द्राः-त्वां	देवगण आपकी
तुष्टुवुः	वन्दना करने लगे
केशव-नाम-धेयम्	केशव नाम दे कर

उस पशु के संहार मात्र से, देवों का आनन्द नूतन हो गया मानो आपने अश्वमेध यज्ञ किया हो। हर्षातिरेक से देवगण आपको

केशव नाम देकर आपकी स्तुति और वन्दना करने लगे ।

कंसाय ते शौरिसुतत्वमुक्त्वा तं तद्वधोत्कं प्रतिरुध्य वाचा।
प्राप्तेन केशिक्षपणावसाने श्रीनारदेन त्वमभिष्टुतोऽभू: ॥७॥

कंसाय ते	कंस को आपका
शौरि-सुतत्वम्-उक्त्वा	शौरी का पुत्र होना बता कर
तं तत्-	उसको उसके (वसुदेव के)
वध-उत्कं	वध के लिए उत्सुक को
प्रतिरुध्य वाचा	रोक कर वचनों से
प्राप्तेन	(जो) आए थे ऊन्होंने
केशि-क्षपण-अवसाने	केशी के संहार के बाद
श्री-नारदेन त्वम्-	श्री नारद ने आपका
अभिष्टुत:-अभू:	अभिस्तवन किया

श्री नारद ने कंस को आपका शौरी का पुत्र होना बताया। फिर वसुदेव को मारने के लिए उद्यत हुए कंस को से उन्होंने वचनों से रोका। केशी के संहार के बाद श्री नारद आपके पास आए और आपका अभिस्तवन किया।

कदापि गोपै: सह काननान्ते निलायनक्रीडनलोलुपं त्वाम् ।
मयात्मज: प्राप दुरन्तमायो व्योमाभिधो व्योमचरोपरोधी ॥८॥

कदापि	एक बार
गोपै: सह	गोपालों के संग
काननान्ते	वन के अन्त में
निलायन-क्रीडन-लोलुपं	लुका-छिपी खेलने में व्यस्त
त्वाम्	आपके
मय-आत्मज:	मय का पुत्र

प्राप	पास आया
दुरन्त-माय:	अत्यन्त मायावी
व्योम-अभिध:	व्योम नाम का
व्योम-चर-उपरोधी	आकाश गामी जीवों का अवरोधक

एक समय आप गोपालों के साथ वन के अन्त में लुका छिपी का खेल खेलने में व्यस्त थे। उस समय, मय का पुत्र व्योम, जिसकी माया दुर्दमनीय थी, और जो आकाश गामी जीवों का अवरोधक था, आपके पास आया।

स चोरपालायितवल्लवेषु चोरायितो गोपशिशून् पशूंश्च
गुहासु कृत्वा पिदधे शिलाभिस्त्वया च बुद्ध्वा परिमर्दितोऽभूत् ॥९॥

स	वह (व्योम)
चोर-पालायित-वल्लवेषु	चोर, रक्षक और भेडों में
चोरायित:	चोर बना हुआ
गोप-शिशून्	गोप बालकों को
पशून्-च	और पशुओं को
गुहासु कृत्वा	गुफाओं में (डाल) कर
पिदधे शिलाभि:-	बन्द कर दिया शिलाओं से
त्वया च बुद्ध्वा	आपके द्वारा (स्थिति को) समझे जाने पर
परिमर्दित:-अभूत्	मार दिया गया

उस खेल में, ग्वाल बाल चोर रक्षक और भेड बन कर खेल रहे थे। वह चोर बन कर उनके मध्य घुस गया। ग्वाल बालकों और पशुओं को गुफा में डाल कर, वह गुफा को शिला से बन्द कर देता था। उसका यह कृत्य समझने पर आपने उसे मार डाला।

एवं विधैश्चाद्भुतकेलिभेदैरानन्दमूर्च्छामतुलां व्रजस्य ।
पदे पदे नूतनयन्नसीमां परात्मरूपिन् पवनेश पाया: ॥१०॥

एवं विधै:-च-	और इसी प्रकार के
अद्‍भुत-	अद्‍भुत
केलि-भेदै:-	विभिन्न क्रीडाओं से
आनन्द-मूर्च्छाम्-	आनन्द से परिभूत
अतुलां व्रजस्य	अवर्णनीय व्रज की
पदे पदे	समय समय पर
नूतयन्-	नवीन बनाते हुए
असीमां	असीमित
परमात्मरूपिन्	परमात्मरूपी
पवनेश	हे पवनेश!
पाया:	रक्षा करें

यह और इसी प्रकार की नित नूतन और असीमित विभिन्न क्रीडाओं से आप व्रज को समय समय पर अवर्णनीय आनन्द से परिभूत करते रहते थे। परमात्मरूपी हे पवनेश! रक्षा करें।

दशक ७२

कंसोऽथ नारदगिरा व्रजवासिनं त्वा-
माकर्ण्य दीर्णहृदय: स हि गान्दिनेयम् ।
आहूय कार्मुकमखच्छलतो भवन्त-
मानेतुमेनमहिनोदहिनाथशायिन् ॥१॥

कंस:-अथ	कंस ने तब
नारद-गिरा	नारद के कहने के अनुसार
व्रजवासिनं त्वां	व्रज में रहने वाले आपको
आकर्ण्य	यह सुन कर कि
दीर्ण-हृदय:	भयभीत हृदय वाला
स हि	उसने ही
गान्दिनेयम्	गान्दिनी के पुत्र (अक्रूर) को
आहूय	बुला कर
कार्मुक-मख:-छलत:	धनुष यज्ञ के बहाने से
भवन्तम्-आनेतुम्-	आपको लाने के लिए
एनम्-अहिनोत्-	इसको भेजा
अहिनाथशायिन्	हे शेषशायी!

हे शेषाशायिन प्रभो! जब नारद के कहने पर कंस को ज्ञात हुआ कि आप, व्रज में निवास कर रहे हैं, उसका हृदय भयभीत हो उठा। तब उसने गान्दिनी पुत्र अक्रूर को धनुष यज्ञ के बहाने से आपको लाने के लिये बुला भेजा।

अक्रूर एष भवदंघ्रिपरश्चिराय
त्वद्दर्शनाक्षममना: क्षितिपालभीत्या ।
तस्याज्ञयैव पुनरीक्षितुमुद्यतस्त्वा-
मानन्दभारमतिभूरितरं बभार ॥२॥

अक्रूर एष	अक्रूर यह
भवत्-अंघ्रि-परः-	आपके चरणो का भक्त
चिराय	बहुत समय से
त्वत्-दर्शन-अक्षम-मना:	आपके दर्शन पाना असम्भव, जान कर
क्षितिपाल-भीत्या	राजा के डर से
तस्य-आज्ञया-एव	उसी की आज्ञा ही से
पुनः-	फिर
ईक्षितुम्-उद्यतः-त्वाम्-	देखने ने लिए तत्पर आपको
आनन्द-भारम्-अति-	आनन्द अत्यधिक से
भूरितरं	भरपूर
बभार	हो गया

अक्रूर दीर्घ काल से आपके चरणों का भक्त था, किन्तु राजा (कंस) के डर से मान बैठा था कि आपके दर्शन उसके लिए असम्भव हैं। अब राजा की ही आज्ञा सुन कर वह पुन: आपको देखने के लिए व्याकुल हो उठा और आनन्दातिरेक से भरपूर हो गया।

सोऽयं रथेन सुकृती भवतो निवासं
गच्छन् मनोरथगणांस्त्वयि धार्यमाणान् ।
आस्वादयन् मुहुरपायभयेन दैवं
सम्प्रार्थयन् पथि न किञ्चिदपि व्यजानात् ॥३॥

स-अयं	वह यह
रथेन	रथ के द्वारा
सुकृती	पुण्य शाली
भवत: निवासं	आपके निवास को
गच्छन्	जाते हुए

मनोरथ-गणान्-	मनोरथों को अगिणित
त्वयि धार्यमाणान्	आप ही में आधारित
आस्वादयन् मुहुः-	अनुभव करते हुए बारम्बार
अपाय-भयेन दैवं	विघ्नों के भय से देवों को
सम्प्रार्थयन् पथि	प्रार्थना करते हुए
न किञ्चित्-अपि	नही कुछ भी
व्यजानत्	जाना

अक्रूर, रथ आपके प्रसिद्ध निवासस्थान नन्द गांव ले कर जाने के लिए प्रस्तुत हुए। अपने मन में, आपसे ही सम्बन्धित अनेको मनोरथों का वे बारम्बार अनुभव कर रहे थे। विघ्नों के भय से त्रस्त वे देवों की प्रार्थना करते जाते थे, और इसीलिए उन्हें मार्ग का कुछ ज्ञान नहीं हुआ।

द्रक्ष्यामि वेदशतगीतगतिं पुमांसं
स्प्रक्ष्यामि किंस्विदपि नाम परिष्वजेयम् ।
किं वक्ष्यते स खलु मां क्वनु वीक्षित: स्या-
दित्थं निनाय स भवन्मयमेव मार्गम् ॥४॥

द्रक्ष्यामि	(मैं) देखूंगा
वेद-शत-गीत-गतिं	वेदों के सैंकडों गीतों के नायक को
पुमांसं	परम पुरुष को
स्प्रक्ष्यामि	स्पर्श करूंगा
किंस्वित्-अपि	थोडा सा भी
नाम परिष्वजेयम्	क्या आलिङ्गन करूंगा
किं वक्ष्यते	क्या कहेंगे
स खलु मां	वे निश्चय ही मुझको
क्वनु वीक्षित: स्यात्	कहां पर दिखाई देंगे

इत्थं निनाय	इस प्रकार (विचार) ले कर
स भवन्मयम्-एव	वह अपमें ही तन्मय हो कर
मार्गम्	मार्ग में (चलते रहे)

अन्तत: मैं वेदों के सैंकडों गीतों के नायक को देखूंगा। उन परम पुरुष का स्पर्श करूंगा। क्या मैं थोडा सा भी उनको हृदय से लगा पाऊंगा? क्या कहेंगे वे मुझको ? कहां पर दिखाई देंगे? इस प्रकार आपमें ही तन्मय हो कर आपके ही विचारों में तल्लीन वे मार्ग में चलते जा रहे थे।

भूय: क्रमादभिविशन् भवदंघ्रिपूतं
वृन्दावनं हरविरिञ्चसुराभिवन्द्यम् ।
आनन्दमग्न इव लग्न इव प्रमोहे
किं किं दशान्तरमवाप न पङ्कजाक्ष ॥५॥

भूय: क्रमात्-	फिर क्रमश:
अभिविशन्	प्रवेश करते हुए
भवत्-अंघ्रि-पूतम्	आपके चरणों से पवित्र
वृन्दावनम्	वृन्दावन को
हर्-विरिञ्च-सुर-	शंकर ब्रह्मा और देवों द्वारा
अभिवन्द्यम्	वन्दनीय
आनन्द-मग्न इव	आनन्द में डूबे हुए मानो
लग्न इव प्रमोहे	डूबे हुए से मूर्छा में
किं किं	क्या क्या
दशान्तरम्-	दशाओं को
अवाप न	प्राप्त नहीं हुए
पङ्कजाक्ष	हे कमलनयन!

क्रमश: अक्रूर ने आपके चरण कमलों से पुनीत, शंकर ब्रह्मा और देवताओं द्वारा पूजित, वृन्दावन में फिर प्रवेश किया। हे

कमलनयन! उस समय वे आनन्द मग्न हो कर मानों मूर्छा में डूबे हुए से, न जाने किन किन अवस्थाओं को प्राप्त हुए।

पश्यन्नवन्दत भवद्विहृतिस्थलानि
पांसुष्ववेष्टत भवच्चरणाङ्कितेषु ।
किं ब्रूमहे बहुजना हि तदापि जाता
एवं तु भक्तितरला विरला: परात्मन् ॥६॥

पश्यन्-अवन्दत	देख कर वन्दना की
भवत्-विहृति-स्थलानि	आपके विहार स्थलों की
पांसुषु-अवेष्टत	धूलि में लोट गए (जहां)
भवत्-चरण-अङ्कितेषु	आपके चरण चिह्न थे
किं ब्रूमहे	क्या कहूं
बहुजना हि	अनेक लोगों ने ही
तदापि जाता	उस समय भी जन्म लिया था
एवं तु	इस प्रकार किन्तु
भक्तितरला:	भक्ति में सराबोर
विरला:	बिरले (ही थे)
परात्मन्	हे परमात्मन्!

अक्रूर ने आपके विहार स्थलों को देख कर उनकी वन्दना की। जिस भूमि पर आपके चरण कमलों के चिह्न अंकित थे, उसकी धूलि में लोट गए। और क्या कहूं? उस समय भी अनेक भक्तों ने जन्म लिया था किन्तु इस कोटि की भक्ति में सराबोर जन बिरले ही थे।

सायं स गोपभवनानि भवच्चरित्र-
गीतामृतप्रसृतकर्णरसायनानि ।
पश्यन् प्रमोदसरितेव किलोह्यमानो
गच्छन् भवद्भवनसन्निधिमन्वयासीत् ॥७॥

सायं स	सन्ध्या के समय

गोप-भवनानि	गोपों के घरों को (जो)
भवत्-चरित्र-	आप ही के चरित्र के
गीत-अमृत-प्रसृत-	गीतों के अमृत के प्रवाह में
कर्ण-रसायनानि	(जो) कानों के लिए रसायन सदृश्य थे
पश्यन्	देखते हुए
प्रमोद-सरिता-इव	आनन्द की सरिता के मानो
किल-उह्यमान:	(प्रवाह में) ही बहते हुए
गच्छन् भवत्-	जाते हुए आपके
भवन-सन्निधिम्-	भवन के समीप
अन्वयासीत्	पहुंचे

सन्ध्या समय, जहां से कानों के लिए रसायन के सदृश्य आपके ही चरित्र के अमृतमय गान की ध्वनि सुनाई दे रही थी, ऐसे गोपों के घरों को, देखते हुए, अक्रूर आनन्द सरिता के प्रवाह में बहे जाते हुए, धीरे धीरे चल कर आपके ही भवन के समीप पहुंच गए।

तावद्ददर्श पशुदोहविलोकलोलं
भक्तोत्तमागतिमिव प्रतिपालयन्तम् ।
भूमन् भवन्तमयमग्रजवन्तमन्त-
र्ब्रह्मानुभूतिरससिन्धुमिवोद्वमन्तम् ॥८॥

तावत्-ददर्श	उसी समय देखा
पशु-दोह-	पशुओं के दोहन
विलोक-लोलं	को देखने की लीला करते हुए
भक्त-उत्तम-आगतिम्-	भक्त शिरोमणि के आने की
इव प्रतिपालयन्तम्	मानो प्रतीक्षा करते हुए
भूमन्	हे भूमन्!

भवन्तम्-अयम्-	आपको इसने
अग्रजवन्तम्-	बडे भाई के साथ
अन्त:-ब्रह्म-अनुभूति-	अन्त:स्थले की ब्रह्मानुभूति के
रस-सिन्धुम्-इव-उद्वमन्तम्	रसमय सागर को मानो उलीचते हुए

हे भूमन्! उसी समय अक्रूर ने आपको बडे भाई बलराम के साथ देखा। आप दोनों पशुओं के दोहन को उत्सुक्ता पूर्वक देखने की लीला कर रहे थे और अपने भक्त शिरोमणि (अक्रूर) की प्रतीक्षा करते हुए मानो रसमय सागर के समान आप स्वयं उनके अन्त:स्थल की ब्रह्मानुभूति को उलीच रहे थे।

सायन्तनाप्लवविशेषविविक्तगात्रौ
द्वौ पीतनीलरुचिराम्बरलोभनीयौ ।
नातिप्रपञ्चधृतभूषणचारुवेषौ
मन्दस्मितार्द्रवदनौ स युवां ददर्श ॥९॥

सायन्तन-आप्लव	सायंकालीन स्नान से
विशेष-विविक्त-	विशेष निर्मल हुए
गात्रौ द्वौ	शरीर वाले आप दोनों
पीत-नील-	पीले और नीले
रुचिर-अम्बर-	सुन्दर वस्त्रों (के धारण से)
लोभनीयौ	लोभनीय दोनों
न-अति-प्रपञ्च-	नही अधिक आडम्बर के
धृत-भूषण	पहने हुए आभूषण
चारु-वेषौ	मनोहारी वेष वाले
मन्द-स्मित-	मधुर मुस्कान से
आर्द्र-वदनौ	कोमल मुख वाले (आप दोनों को)
स	उसने

युवां ददर्श	आप दोनों को देखा

अक्रूर ने सायंकालीन स्नान के कारण विशेष रूप से निर्मल शरीर वाले, पीले और नीले वस्त्रों को धारण किये हुए लोभनीय आकृति वाले, अधिक आडम्बर रहित आभूषण पहने हुए अत्यधिक मनोहारी वेष वाले तथा मधुर मुस्कान से कोमल मुख वाले आप दोनों को देखा।

दूराद्रथात्समवरुह्य नमन्तमेन-
मुत्थाप्य भक्तकुलमौलिमथोपगूहन् ।
हर्षान्मिताक्षरगिरा कुशलानुयोगी
पाणिं प्रगृह्य सबलोऽथ गृहं निनेथ ॥१०॥

दूरात्-रथात्-	दूर पर ही रथ से
समवरुह्य	उतर कर
नमन्तम्-एनम्-	नमन करते हुए इसको
उत्थाप्य	उठा कर
भक्तकुल-मौलिं-	भक्तों के कुल के शिरोमणि को
अथ-उपगूहन्	तब आलिङ्गन करके
हर्षात्-	हर्ष से
मित-अक्षर-गिरा	(और) थोडे अक्षरों के वचन से
कुशल-अनुयोगी	कुशलता पूछ कर
पाणिं प्रगृह्य	हाथ पकड कर
सबल:- अथ	बलराम के सहित
गृहं निनेथ	घर की ओर ले चले

आप दोनों को देख कर अक्रूर कुछ दूरी पर ही रथ से उतर गए। नमन करते हुए उन भक्तशिरोमणि को उठा कर आपने हृदय से लगा लिया और हर्षपूर्वक अल्प शब्दों में ही कुशल क्षेम पूछी। फिर बलराम और आप अक्रूर का हाथ पकड कर उन्हें अपने घर ले आए।

नन्देन साकममितादरमर्चयित्वा

तं यादवं तदुदितां निशमय्य वार्ताम् ।
गोपेषु भूपतिनिदेशकथां निवेद्य
नानाकथाभिरिह तेन निशामनैषी: ॥११॥

नन्देन साकम्-	नन्द के साथ
अमित-आदरम्-	अत्यन्त आदर सहित
अर्चयित्वा	सत्कार करके
तं यादवं	उस यादव (अक्रूर) को
तत्-उदितां	उसके द्वारा कहे हुए
निशमय्य वार्ताम्	सुन कर समाचार को
गोपेषु	गोपों में
भूपति-निदेश-कथां	राजा के आदेश की कथा को
निवेद्य	निवेदन करके
नाना-कथाभि:-	विभिन्न कथाओं से
इह तेन	यहां उसके साथ
निशाम्-अनैषी:	रात्रि बिताई

नन्द के साथ आपने उनका अत्यन्त आदर सत्कार किया। यादव अक्रूर के कहे हुए समाचारों को सुना और राजा के द्वारा गोपों के सम्मुख दिये हुए आदेशों का निवेदन किया। फिर अन्यान्य विभिन्न कथाओं से यहां उसके साथ रात्रि व्यतीत की।

चन्द्रागृहे किमुत चन्द्रभगागृहे नु
राधागृहे नु भवने किमु मैत्रविन्दे ।
धूर्तो विलम्बत इति प्रमदाभिरुच्चै-
राशङ्कितो निशि मरुत्पुरनाथ पाया: ॥१२॥

चन्द्रा गृहे	चन्द्रा के घर में
किमुत	या फिर

चन्द्रभगा गृहे	चन्द्रभगा के घर में
नु	या कि
राधा गृहे नु	राधा के घर में
भवने किमु मैत्रविन्दे	अथवा मित्रवृन्दा के यहां
धूर्त: विलम्बते	कपटी देर कर रहा है
इति प्रमदाभि:-	इस प्रकार युवतियों ने
उच्चै: आशङ्कित:	स्पष्टता से आशङ्का की
निशि	रात्रि में
मरुत्पुरनाथ	हे मरुत्पुरनाथ!
पाया:	रक्षा करें

स्पष्ट रूप से गोपियां आप पर आशङ्का करने लगीं, कि आप जैसा धूर्त न जाने इतनी देर तक किसके घर में है, चन्द्रा या चन्द्रभागा या राधा या फिर मित्रवृन्दा? हे मरुत्पुरनाथ! रक्षा करें।

दशक ७३

निशमय्य तवाथ यानवार्तां भृशमार्ता: पशुपालबालिकास्ता: ।
किमिदं किमिदं कथं न्वितीमा: समवेता: परिदेवितान्यकुर्वन् ॥१॥

निशमय्य	सुन कर
तव-अथ	आपके तब
यान-वार्ताम्	जाने की बात को
भृशम्-आर्ता:	अत्यन्त दुखी हो गईं
पशुपाल-बालिका:-ता:	गोपिकाएं वे
किम्-इदं किम्-इदं	यह क्या है, यह क्या है
कथं नु-इति-	यह कैसे है, इस प्रकार
इमा: समवेता:	ये (युवतियां) एकत्रित हो कर
परिदेवितानि-	विलाप
अकुर्वन्	करने लगीं

आपके जाने की बात सुन कर गोपिकाएं अत्यन्त दु:खी हो गईं। 'यह क्या. यह क्या, यह कैसे हुआ?' इस प्रकार वे सभी एकत्रित हो कर विलाप करने लगीं।

करुणानिधिरेष नन्दसूनु: कथमस्मान् विसृजेदनन्यनाथा: ।
बत न: किमु दैवमेवमासीदिति तास्त्वद्गतमानसा विलेपु: ॥२॥

करुणा-निधि:-	करुणा के सागर
एष नन्द-सूनु:	यह नन्द कुमार
कथम्-अस्मान्-	कैसे हमको
विसृजेत्-अनन्यनाथा:	छोड कर, जिनके अन्य कोई सहारा नहीं है
बत न: किमु	हाय! हमारा क्या

दैवम्-एवम्-आसीत्-	भाग्य ऐसा ही है
इति ताः-	इस प्रकार वे
त्वत्-गत-मानसा	आपमें ही चित्त को स्थित करके
विलेपुः	विलाप करने लगीं

करुणा के सागर नन्द कुमार, हमको, जिनके अन्य कोई अवलम्ब नहीं है, छोड कर कैसे जा सकते हैं। हाय! क्या हमारा भाग्य ऐसा ही है?' इस प्रकार आपही में स्थित चित्त वे विलाप करने लगीं।

चरमप्रहरे प्रतिष्ठमानः सह पित्रा निजमित्रमण्डलैश्च ।
परितापभरं नितम्बिनीनां शमयिष्यन् व्यमुचः सखायमेकम् ॥३॥

चरम-प्रहरे	अन्त के प्रहर में (रात्रि के)
प्रतिष्ठमानः	प्रस्थान करते हुए
सह पित्रा	अपने पिता के साथ
निज-मित्र-मण्डलैः-च	और अपने मित्रों की मण्डली के साथ
परिताप-भरं	उन दुःखी
नितम्बिनीनां	गोपिकाओं
शमयिष्यन्	को शान्त करने के लिए
व्यमुचः	छोड दिया
सखायम्-एकम्	एक सखा को

रात्रि के अन्तिम प्रहर में आपने अपने पिता और मित्र मण्डली के साथ जाने के लिए प्रस्थान किया। उन दु:खी गोपिकाओं को सान्त्वना देने के लिए अपने एक सखा को वहीं छोड दिया।

अचिरादुपयामि सन्निधिं वो भविता साधु मयैव सङ्गमश्रीः ।
अमृताम्बुनिधौ निमज्जयिष्ये द्रुतमित्याश्वसिता वधूरकार्षीः ॥४॥

अचिरात्-उपयामि	शीघ्र ही वापस आऊंगा

सन्निधिं वः	पास में आपके
भविता साधु	(और) होगा सुन्दर
मया-एव	मेरे साथ ही
सङ्गम-श्रीः	मिलन मङ्गल
अमृत-अम्बुनिधौ	अमृत के सागर में
निमज्जयिष्ये	मैं निमग्न कर दूंगा आपको
द्रुतम्-इति-आश्वासिताः	शीघ्र इस प्रकार सान्त्वना
वधूः-अकार्षीः	कुमारियों को दी

मैं आप सभी के पास शीघ्र ही लौट आऊंगा, और फिर मेरे साथ आप सब का सुन्दर मङ्गल मिलन होगा।आपको मैं अमृत के सागर में निमग्न कर दूंगा।' आपने उन गोपकुमारियों को तुरन्त ही ऐसा कह कर सन्त्वना दी।

सविषादभरं सयाच्ञमुच्चैः अतिदूरं वनिताभिरीक्ष्यमाणः ।
मृदु तद्दिशि पातयन्नपाङ्गान् सबलोऽक्रूररथेन निर्गतोऽभूः ॥५॥

सविषादभरं	विषाद से परिपूर्ण
सयाच्ञम्-	विनती करती हुई
उच्चैः-अतिदूरम्	मुखरित हुई सी
वनिताभिः-	उन वनिताओं की
ईक्ष्यमाणः	पीछा करती हुई दृष्टि
मृदु तत्-दिशि	मधुर उसी दिशा में
पातयन्-	डालते हुए
अपाङ्गान्	कटाक्ष दृष्टि
सबलः-	साथ में बलराम के

अक्रूर-रथेन	अक्रूर के रथ में
निर्गत:-अभू:	चले गए

उन वनिताओं की विषाद पूर्ण विनती मुखरित करती हुई सी दृष्टि दूर तक आपका पीछा करती रही। आप भी उसी दिशा में मधुर कटाक्ष पात करते हुए बलराम के साथ अक्रूर के रथ में चले गए।

अनसा बहुलेन वल्लवानां मनसा चानुगतोऽथ वल्लभानाम् ।
वनमार्तमृगं विषण्णवृक्षं समतीतो यमुनातटीमयासी: ॥६॥

अनसा बहुलेन	गाडियों से अनेक
वल्लवानां मनसा	(और) गोपिकाओं के मनों से
च-अनुगत:-अथ	अनुसरण किए जाते हुए
वल्लभानाम्	गोपों से
वनम्-आर्तमृगम्	वनो को दु:खित पशुओं वाले
विषण्ण-वृक्षम्	और विषादग्रस्त पेडों वाले
समतीत:	पार करके
यमुना-तटीम्-	और यमुना के किनारे
अयासी:	पहुंच गए

गोपों की अनेक गाडियां और गोपिकाओं के मन आपका पीछा करते रहे। दु:खित पशुओं वाले और विषाद ग्रस्त पेडों वाले वनों को पार करके आप यमुना के तट पर पहुंचे।

नियमाय निमज्य वारिणि त्वामभिवीक्ष्याथ रथेऽपि गान्दिनेय: ।
विवशोऽजनि किं न्विदं विभोस्ते ननु चित्रं त्ववलोकनं समन्तात् ॥७॥

नियमाय निमज्य	नियमों की पूर्ति के लिए स्नान करके
वारिणि त्वाम्	जल में (यमुना के) आपको
अभिवीक्ष्य-अथ	देख कर तब

रथे-अपि	रथ के ऊपर भी
गान्दिनेय:	गान्दीनी (अक्रूर)
विवश:-अजनि	विवश हो गए
किम् नु-इदम्	यह अन्तत: क्या है?'
विभो:-ते	हे विभो! आपका
ननु चित्रं तु-	आश्चर्य है किन्तु
अवलोकनम्	दर्शन होने लगा
समन्तात्	सब ओर ही

गान्दिनि पुत्र अक्रूर नित्य नियमों का पालन करने के लिए स्नान करने गए। यमुना के जल में भी और रथ के ऊपर भी आप ही को देख कर अक्रूर विवश हो गए कि'यह अन्तत: क्या है? हे विभो! यह कैसा महान विस्मय है कि सब ओर से आपके ही दर्शन हो रहे हैं। आप तो सर्वव्यापी हैं।

पुनरेष निमज्य पुण्यशाली पुरुषं त्वां परमं भुजङ्गभोगे ।
अरिकम्बुगदाम्बुजै: स्फुरन्तं सुरसिद्धौघपरीतमालुलोके ॥८॥

पुन:-एष	फिर इस ने
निमज्य	डुबकी लगाई
पुण्यशाली	इस पुण्यशाली ने
पुरुषं त्वां परमं	आप परम पुरुष को
भुजङ्ग-भोगे	भुजङ्ग शैया पर
अरि-कम्बु-गदा-अम्बुजै:	चक्र शङ्ख गदा और पद्म सहित
स्फुरन्तं	सुशोभित
सुर-सिद्ध-औघ-परीतं	देवों और सिद्धों की मन्डली से घिरा हुआ
आलुलोके	देखा

पुण्यवान अक्रूर ने फिर से यमुना के जल में डुबकी लगाई। इस बार उन्होंने भुजङ्ग शैया पर लेटे हुए आप को, यानी, परम पुरुष को देखा। आप अपने आयुधों, शङ्ख चक्र गदा और पद्म को धारण किये हुए शोभायमान थे। देवों और सिद्धों की मण्डली आपको घेरे हुए थी।

स तदा परमात्मसौख्यसिन्धौ विनिमग्नः प्रणुवन् प्रकारभेदैः ।
अविलोक्य पुनश्च हर्षसिन्धोरनुवृत्त्या पुलकावृतो ययौ त्वाम् ॥९॥

स तदा	अक्रूर ने तब
परमात्म-सौख्य-सिन्धौ	ब्रह्मानन्द सिन्धु में
विनिमग्नः प्रणुवन्	निमग्न स्तुति करते हुए
प्रकार-भेदैः	विभिन्न प्रकार से (सगुण निर्गुण रूप में)
अविलोक्य	नहीं देखते हुए (आपको)
पुनः-च	और फिर
हर्ष-सिन्धोः-	आनन्द सागर में
अनुवृत्त्या	फिर डूबते हुए
पुलक-आवृतः	रोमाञ्चित हो कर
ययौ त्वाम्	गए आपके पास

ब्रह्मानन्द सिन्धु में निमग्न अक्रूर ने विभिन्न प्रकार से (सगुण और निर्गुण रूप में) आपकी स्तुति की। फिर एक बार आपको न देख पाने पर भी, आनन्द सागर में डूबे हुए रोमाञ्चित से वे आपके पास (रथ के निकट) चले गए।

किमु शीतलिमा महान् जले यत् पुलकोऽसाविति चोदितेन तेन ।
अतिहर्षनिरुत्तरेण सार्धं रथवासी पवनेश पाहि मां त्वम् ॥१०॥

किमु शीतलिमा	क्या शीतल है
महान् जले यत्	अधिक जल में जो कि
पुलकः-असौ-	रोमाञ्च यह है

इति चोदितेन	इस प्रकार पूछे जाने पर
तेन अति-हर्ष-	अत्यन्त आनन्द से उसके (साथ)
निरुत्तरेण	निरुत्तर (अक्रूर के)
सार्धम् रथवासी	साथ रथ पर बैठे हुए
पवनेश	हे पवनपुरेश!
पाहि मां त्वम्	आप मेरी रक्षा करें

क्या जल में अधिक शीतलता है, जिसके कारण यह रोंमाञ्च हो रहा है?' इस प्रकार पूछे जाने पर अत्यधिक आनन्द से अभिभूत अक्रूर निरुत्तर हो गए। उनके साथ रथ पर बैठे हुए हे पवनपुरेश! आप मेरी रक्षा करें।

दशक ७४

सम्प्राप्तो मथुरां दिनार्धविगमे तत्रान्तरस्मिन् वस-
न्नारामे विहिताशन: सखिजनैर्यात: पुरीमीक्षितुम् ।
प्रापो राजपथं चिरश्रुतिधृतव्यालोककौतूहल-
स्त्रीपुंसोद्यदगण्यपुण्यनिगलैराकृष्यमाणो नु किम् ॥१॥

सम्प्राप्त: मथुरां	पहुंच कर मथुरा को
दिन-अर्ध-विगमे	दिन के आधे बीत जाने पर
तत्र-अन्तरस्मिन्	वहां पर बाहर के निकट
वसन्-आरामे	ठहर कर उद्यान में
विहित-आशन:	सम्पन्न करके भोजन
सखि-जनै:-यात:	मित्र जनों के साथ
पुरीम्-ईक्षितुम्	पुरी देखने की इच्छा से
प्राप: राजपथं	पहुंचे राज मार्ग पर
चिर-श्रुति-धृत-	बहुत काल से सुनने से धारण किए हुए
व्यालोक-कौतूहल-	दर्शन की उत्सुकता
स्त्री-पुंस-	स्त्री और पुरुष जन के
उद्यत्-अगण्य-पुण्य-निगलै:-	विकसित होते हुए अगणित पुण्यों की जंजीर से
आकृष्यमाण:	खिंचे जाते हुए
नु किम्	मानो

आधा दिन बीत जाने पर आप मथुरा पहुंचे, और निकट ही एक बाहरी उद्यान में ठहर कर भोजन आदि सम्पन्न किया। पुरी देखने की इच्छा से आप मित्र जनों के संग राज पथ पर पहुंचे। जिन स्त्री और पुरुषों ने दीर्घ काल से आपकी कथाएं सुन रखीं थीं, वे आपके दर्शन की लालसा लिए हुए थे। विकसित होते हुए उन्ही के अगणित पुण्यों की जंजीर से आकृष्ट हो कर आप मानो खिंचे चले जा रहे थे।

त्वत्पादद्युतिवत् सरागसुभगा: त्वन्मूर्तिवद्योषित:
सम्प्राप्ता विलसत्पयोधररुचो लोला भवत् दृष्टिवत् ।
हारिण्यस्त्वदुर:स्थलीवदयि ते मन्दस्मितप्रौढिव-
न्नैर्मल्योल्लसिता: कचौघरुचिवद्राजत्कलापाश्रिता: ॥२॥

त्वत्-पाद्-द्युतिवत्	आपके चरणों की कान्ति के समान
सराग-सुभगा:	लाली वाले, सौभाग्यवती
त्वत्-मूर्तिवत्-योषित:	आपके स्वरूप के समान युवतियां
सम्प्राप्ता:	आ कर एकत्रित हो गईं
विलसत्-पयोधर-रुच:	शोभायमान बादलों के समान सुन्दर, विकसित सुन्दर पयोधर वाले
लोला	चञ्चल, दर्शनों के लिए लालायित
भवत्-दृष्टिवत्	आपकी दृष्टि के समान
हारिण्य:	हार धारण किए हुए, हर लेने वाली
त्वत्-उर:स्थलीवत्-	आपके वक्षस्थल के समान
अयि ते	अयि आपके
मन्द्-स्मित-प्रौढिवत्	मधुर मुस्कान की प्रौढता के समान
नैर्मल्य-उल्लसिता:	निर्मल और देदीप्यमान
कचौघ-रुचिवत्-	केशों के समूह की सुन्दरता के समान
राजत्-कलाप-आश्रिता:	सुसज्जित मोर पंख से, आभूषणों से

आपके चरणद्वय की लाली से पूर्ण कान्ति के ही समान, प्रेमोत्कर्ष से द्युतिमान सौभाग्यशालिनी युवतियां आपके समीप आ गईं। जलपूर्ण मेघों के समान आपकी छटा सुशोभित थी, वे पीन पयोधरों से सुशोभित थीं। आपकी चञ्चल दृष्टि के समान उनके भी नेत्र आप ही को देखने के लिए लालायित थे। आपका वक्षस्थल अनेक हारों से मनोहर था, वे मनोहारी रूप वाली थीं। आपके मन्द हास में भी गम्भीरता देदीप्यमान थी, वे अपने निर्मल स्वभाव से देदीप्यमान थीं। आपके केशपाश मयूर पिच्छ से अलङ्कृत थे, उनके केश अलङ्कारों से सुसज्जित थे।

तासामाकलयन्नपाङ्गवलनैर्मोदं प्रहर्षाद्भुत-

व्यालोलेषु जनेषु तत्र रजकं कञ्चित् पटीं प्रार्थयन् ।
कस्ते दास्यति राजकीयवसनं याहीति तेनोदित:
सद्यस्तस्य करेण शीर्षमहृथा: सोऽप्याप पुण्यां गतिम् ॥३॥

तासाम्-आकलयन्-	उन लोगों के बढाते हुए
अपाङ्ग-वलनै:-	कटाक्ष दृष्टि से
मोदं	हर्ष को
प्रहर्ष-अद्भुत-व्यालोलेषु	आनन्द से अद्भुत चपल हुए
जनेषु तत्र	लोगों में वहां
रजकं कञ्चित्	धोबी किसी से
पटीं प्रार्थयन्	वस्त्र मांगते हुए
क:-ते दास्यति	कौन तुमको देगा
राजकीय-वसनं	राजकीय वस्त्र
याहि-इति	जाओ" ऐसा
तेन-उदित:	उसने कहा
सद्य:-तस्य	उसी समय उसके
करेण शीर्षम्-अहृथा:	हाथ से शिर को काट डाला
स:-अपि-आप	वह भी पा गया
पुण्यां गतिं	पुण्य गति

अपने कटाक्षों के विक्षेप से आप युवतियों का हर्ष बढाते हुए जा रहे थे। लोग आनन्दातिरेक के कारण अद्भुत चपल से दिखाई दे रहे थे। वहां किसी एक धोबी से आपने वस्त्र मांगे। 'जाओ, तुमको राजकीय वस्त्र कौन देगा', उसके ऐसा कहने पर आपने तत्क्षण उसका शिर अपने हाथ से काट डाला। वह पुण्य गति को प्राप्त हो गया।

भूयो वायकमेकमायतमतिं तोषेण वेषोचितं
दाश्वांसं स्वपदं निनेथ सुकृतं को वेद जीवात्मनाम् ।
मालाभि: स्तबकै: स्तवैरपि पुनर्मालाकृता मानितो

भक्तिं तेन वृतां दिदेशिथ परां लक्ष्मीं च लक्ष्मीपते ॥४॥

भूयः	फिर
वायकम्-एकम्-	दर्जी को एक
आयत-मतिं	(जो) उदार मति वाला था
तोषेण वेष-उचितं	सन्तुष्ट हो कर वेष के अनुरूप
दाश्वांसं स्वपदं	(वस्त्र) दिये, निज पद को
निनेथ सुकृतं	ले गए पुण्यशाली को
कः वेद	कौन जानता है
जीवात्मनाम्	जीवधारियों के (पुण्यों को)
मालाभिः स्तबकैः	मालाओं और पुष्प गुच्छों से
स्तवैः-अपि	(और) स्तुतियों से भी
पुनः-मालाकृता	फिर माली ने
मानितः भक्तिं	सम्मानित किया, भक्ति
तेन वृतां	उसने वरण की
दिदेशिथ	दे दी
परां लक्ष्मीं च	अपरिमित लक्ष्मी और
लक्ष्मीपते	हे लक्ष्मीपते!

फिर एक उदार मति वाले दर्जी ने सन्तुष्ट हो कर आपके वेष के अनुसार आपको वस्त्र दिए। उस पुण्यशाली को आप अपने धाम ले गए। जीवधारियों के पुण्यों को आपके अलावा और कौन जानता है? फिर एक माली ने मालाओं और पुष्पगुच्छों से आपको सम्मानित किया। उसने भक्ति का वर मांगा। हे लक्ष्मीपते! आपने वह तो दे ही दिया अपरिमित धन भी दिया।

कुब्जामब्जविलोचनां पथिपुनर्दृष्ट्वाऽङ्गरागे तया
दत्ते साधु किलाङ्गरागमददास्तस्या महान्तं हृदि ।
चित्तस्थामृजुतामथ प्रथयितुं गात्रेऽपि तस्याः स्फुटं

गृह्णन् मञ्जु करेण तामुदनयस्तावज्जगत्सुन्दरीम् ॥५॥

कुब्जाम्-अब्ज-विलोचनाम्	कुब्जा कमलनयना
पथि-पुनः-दृष्ट्वा-	मार्ग में फिर देख कर
अङ्गरागे तया दत्ते	अङ्गराग उसके द्वारा देने पर
साधु किल-	सुन्दर निस्सन्देह
अङ्ग	हे अङ्ग!
रागम्-अददाः-	प्रेम दिया
तस्याः महान्तम्	उसको महान
हृदि चित्तस्थाम्-	हृदय में और चित्त में स्थापित करके
ऋजुताम्-अथ	वह सरलता तब
प्रथयितुं गात्रे-अपि	प्रकट करने के लिए शरीर में भी
तस्याः स्फुटं गृह्णन्	उसकी ठोडी को पकड कर
मञ्जु करेण	सुन्दर हाथ से
ताम्-उदनयः-तावत्-	उसको ऊपर खींच कर तब
जगत्-सुन्दरीम्	विश्व सुन्दरी (बना दिया)

फिर आपने कमलनयना कुब्जा को मार्ग में देखा। उसने आपको सुन्दर अङ्गराग दिया, जिससे प्रसन्न हो कर आपने उसके हृदय और चित्त में अपना महान प्रेम स्थापित कर दिया। उसके स्वभाव की सरलता को उसके शरीर में भी प्रकट करने के लिए आपने अपने सुन्दर हाथ से उसकी ठोडी पकड कर ऊपर की ओर खींच कर, उसका कूबड नष्ट कर उसे विश्व सुन्दरी बना दिया।

तावन्निश्चितवैभवास्तव विभो नात्यन्तपापा जना
यत्किञ्चिद्ददते स्म शक्त्यनुगुणं ताम्बूलमाल्यादिकम् ।
गृह्णानः कुसुमादि किञ्चन तदा मार्गे निबद्धाञ्जलि-
र्नातिष्ठं बत हा यतोऽद्य विपुलामार्तिं व्रजामि प्रभो ॥६॥

तावत्	तदनन्तर
निश्चित-वैभवा:-तव	निश्चित रूप से आपके वैभव (को जानने वाले)
विभो	हे विभो!
न-अत्यन्त-पापा-जना	(जो) अधिक पापी जन नहीं थे
यत्-किञ्चित्-ददते-स्म	जो कुछ भी देते थे (आपको)
शक्ति-अनुगुणं	(अपने) शक्ति के अनुसार
ताम्बूल-माल्य-आदिकम्	पान, माला आदि
गृह्णान: कुसुम-आदि	लिए हुए पुष्पादि
किञ्चन तदा मार्गे	कुछ जन उस समय मार्ग में
निबद्ध-अञ्जलि:	जोडे हुए हाथ (खडे थे)
न-अतिष्ठं	नहीं खडा था (मैं)
बत हा यत:-अद्य	कष्ट है जिस कारण आज
विपुलाम्-आर्तिम्	अत्यधिक पीडा को
व्रजामि प्रभो	भोग रहा हूं हे प्रभो!

हे विभो! उस समय, जो जन कुछ कम पापात्मा थे, और इसी कारण आपके वैभव को निश्चित रूप से जानते थे, वे अपने अपने सामर्थ्य के अनुसार आपको पान माला आदि कुछ भी भेंट करते थे। उस समय कुछ जन मार्ग में, पुष्प ले कर हाथ जोड कर खडे हुए थे। खेद है कि मैं वहां नहीं खडा था, इसीलिए तो आज इतनी अधिक पीडा भोग रहा हूं।

एष्यामीति विमुक्तयाऽपि भगवन्नालेपदात्र्या तया
दूरात् कातरया निरीक्षितगतिस्त्वं प्राविशो गोपुरम् ।
आघोषानुमितत्वदागममहाहर्षोल्ललद्देवकी-
वक्षोजप्रगलत्पयोरसमिषात्त्वत्कीर्तिरन्तर्गता ॥७॥

एष्यामि-इति	आऊंगा मैं' इस प्रकार
विमुक्तया-अपि	भेज दिए जाने पर भी

भगवन्-	हे भगवन!
आलेपदात्र्या	अङ्गराग देने वाली
तया दूरात्	उसने दूर तक
कातरया	कातर दृष्टि से
निरीक्षित-गति:-त्वम्	देखा जाते हुए आपको
प्राविश: गोपुरम्	प्रवेश करते हुए गोपुर में
आघोष-अनुमित-	घोषणाओं से अनुमान कर के
त्वत्-आगम-	आपका आना
महा-हर्ष-उल्ललत्-	अत्यन्त हर्ष उल्लास से
देवकी-वक्षोज-	देवकी के वक्षों से जनित
प्रगलत्-पयोरस-	बहने लगी दुग्ध धारा
मिषात्-	बहाने से
त्वत्-कीर्ति:-	आपकी कीर्ति के
अन्त:गता	फैल गई भीतर तक (नगर के)

हे भगवन! 'मैं आऊंगा' ऐसे कह कर आपने उस अङ्गराग देने वाली को भेज दिया। किन्तु उसकी कातर दृष्टि दूर तक आपकी गति का अनुसरण करती रही। तब आपने नगर के गोपुर द्वार में प्रवेश किया। घोषणाओं से और विविध हलचलों से देवकी को आपके आगमन का अनुमान हो गया। उसके स्तन मण्डल से दुग्ध धारा बहने लगी मानो आपके आने के पूर्व ही मथुरा में आपकी कीर्ति और यश फैल गए हों।

आविष्टो नगरीं महोत्सववतीं कोदण्डशालां व्रजन्
माधुर्येण नु तेजसा नु पुरुषैर्दूरेण दत्तान्तर: ।
स्रग्भिर्भूषितमर्चितं वरधनुर्मा मेति वादात् पुर:
प्रागृह्णा: समरोपय: किल समाक्राक्षीरभाङ्क्षीरपि ॥८॥

आविष्ट:	प्रवेश कर के

नगरीं महोत्सववतीं	नगरी में महान उत्सव के लिए सुसज्जित
कोदण्डशालां व्रजन्	कोदण्ड धनुष शाला में जा कर
माधुर्येण नु	(अपनी) कोमलता से या तो
तेजसा नु	(अपने) तेज से या फिर
पुरुषै:-दूरेण	(रक्षक) पुरुषों के द्वारा दूर से ही
दत्तान्तर:	मार्ग दे देने पर
स्रग्भि:-भूषितम्-	मालाओं से सुसज्जित
अर्चितं वर-धनु:-	सम्पूजित श्रेष्ठ धनुष को
मा मा-इति	नही नहीं' इस प्रकार
वादात् पुर:	कहे जाने से पहले
प्रागृह्णा:	ले कर उठा कर
समरोपय: किल	(और) आरोपित कर दिया निस्सन्देह
समाक्राक्षी:-	खींचा
अभाङ्क्षी:-अपि	तोड भी दिया

महान धनुषोत्सव के लिए सुसज्जित नगर में प्रवेश कर के आप कोदण्ड धनुष शाला में गए। आपकी कोमलता के कारण, या फिर आपके तेज के कारण, रक्षक पुरुषों ने दूर से ही आपको मार्ग दे दिया। आपने मालाओं से सुसज्जित और सम्पूजित उस महान धनुष को देखा। 'नहीं नहीं इसे मत छूओ', ऐसा कहे जाने के पहले ही आपने उसे उठा लिया।फिर उसपर प्रत्यञ्चा आरोपित कर के उसे खींचा और तोड भी दिया।

श्व: कंसक्षपणोत्सवस्य पुरत: प्रारम्भतूर्योपम-
श्चापध्वंसमहाध्वनिस्तव विभो देवानरोमाञ्चयत् ।
कंसस्यापि च वेपथुस्तदुदित: कोदण्डखण्डद्वयी-
चण्डाभ्याहतरक्षिपूरुषरवैरुत्कूलितोऽभूत् त्वया ॥९॥

श्व:	कल

कंस-क्षपण-उत्सवस्य	कंस के वध के उत्सव के
पुरत: प्रारम्भ-तूर्य-उपम:-	पहले प्रारम्भ के तूर्य घोष के समान
चाप-ध्वंस-महा-ध्वनि:-	धनुष भंग की महा ध्वनि ने
तव विभो	आपकी हे विभो!
देवान्-अरोमाञ्चयत्	देवों को रोमाञ्चित कर दिया
कंसस्य-अपि च	कंस के भी
वेपथु:-तत्-उदित:	कम्पन उससे उठ गया
कोदण्ड-खण्ड-द्वयी-	कोद्ण्ड के दो टुकडों से
चण्ड-अभ्याहत-	खूब मारे गए
रक्षि-पूरुष-रवै:-	रक्षक जनों के कोलाहल से
उत्कूलित:-अभूत्	(कंस का कम्पन) बढ गया
त्वया	आपके द्वारा

आपके धनुष भंग की महा ध्वनि ने आगामी कल सम्पन्न होने वाले कंस के वध के प्रारम्भ में होने वाले तूर्य घोष की ही मानो घोषणा कर दी। हे विभो! उस ध्वनि से देवगण रोमाञ्चित हो उठे। कंस के भी शरीर में कम्पित हो उठा। आपने कोदण्ड के दो खण्डों से रक्षक जनों को खूब पीटा, तथा उनके आर्त नाद से कंस का कम्पन और भी बढ गया।

शिष्टैर्दुष्टजनैश्च दृष्टमहिमा प्रीत्या च भीत्या तत:
सम्पश्यन् पुरसम्पदं प्रविचरन् सायं गतो वाटिकाम् ।
श्रीदाम्ना सह राधिकाविरहजं खेदं वदन् प्रस्वप-
न्नानन्दन्नवतारकार्यघटनाद्वातेश संरक्ष माम् ॥१०॥

शिष्टै:-	शिष्टों ने
दुष्ट-जनै:-च	और दुष्टों ने
दृष्ट-महिमा	देखी महिमा
प्रीत्या च भीत्या	प्रेम से और भय से

ततः सम्पश्यन्	फिर देख कर
पुर-सम्पदं प्रविचरन्	नगर की शोभा सम्पन्नता को विचरते हुए
सायं गतः वाटिकाम्	सन्ध्या के समय चले गए वाटिका में
श्रीदाम्ना सह	श्रीदामा के साथ
राधिका-विरह्जं खेदं	राधा के विरह जनित कष्ट को
वदन् प्रस्वपन्-	कहते हुए सो गए
आनन्दन्-	आनन्दित होते हुए
अवतार-कार्य-घटनात्-	अवतार के लक्ष्य की पूर्ति से
वातेश संरक्ष माम्	हे वातेश! रक्षा करें मेरी

शिष्ट जनों ने प्रेम से और दुष्ट जनों ने भय से आपकी महिमा देखी। तदनन्तर सन्ध्या समय विचरण करते करते नगर की शोभा सम्पन्नता को देखते हुए आप वाटिका में चले गए। राधा विरह जनित अपने दु:ख को श्रीदामा को बताते हुए आप सो गए। अपने अवतार के लक्ष्य की पूर्ति के शीघ्र ही घटित होने की सम्भावना से आप आनन्दित भी थे। हे वातेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ७५

प्रात: सन्त्रस्तभोजक्षितिपतिवचसा प्रस्तुते मल्लतूर्ये
सङ्घे राज्ञां च मञ्चानभिययुषि गते नन्दगोपेऽपि हर्म्यम् ।
कंसे सौधाधिरूढे त्वमपि सहबल: सानुगश्चारुवेषो
रङ्गद्वारं गतोऽभू: कुपितकुवलयापीडनागावलीढम् ॥१॥

प्रात:	दूसरे दिन प्रात:काल
सन्त्रस्त-भोज-	भयभीत भोजराज (कंस)
क्षितिपति-वचसा	की आज्ञा से
प्रस्तुते मल्ल-तूर्ये	आरम्भ होने के लिए मल्ल युद्ध के, तूर्य घोष होने पर
सङ्घे राज्ञां च	और समूह राजाओं के
मञ्चान्-अभिययुषि	मञ्चों पर आरूढ हो गए
गते नन्दगोपे-	चले जाने पर नन्द गोप के
अपि हर्म्यम्	भी महल को
कंसे-सौध-अधिरूढे	कंस के सिंहासन पर आसीन हो जाने पर
त्वम्-अपि सह-बल:	आप भी बलराम के साथ
सानुग:-चारु-वेष:	सहचरों के साथ, आकर्षक वेश भूषा में
रङ्ग-द्वारं गत:-अभू:	रंग शाला के द्वार पर पहुंचे
कुपित-कुवलयापीड-	कुपित कुवलयापीड (नामक)
नाग-अवलीढम्	हाथी ने अवरुद्ध किया था (द्वार को)

दूसरे दिन प्रात:काल, भयभीत भोजराज कंस की आज्ञा से तूर्य नाद के द्वारा मल्ल युद्ध के आरम्भ होने की घोषणा हो गई। राजाओं के समूह अपने निर्धारित मञ्चों पर आरूढ हो गए, और नन्दगोप भी महल में चले गए। कंस भी सिंहासन पर आसीन हो गया। तब आप आकर्षक वेश भूषा में, बलराम और अपने सहचरों के साथ रंगशाला के द्वार पर पहुंचे। उस द्वार को कुपित कुवलयापीड नामक हाथी ने अवरुद्ध कर रक्खा था।

पापिष्ठापेहि मार्गाद्द्रुतमिति वचसा निष्ठुरक्रुद्धबुद्धे-
रम्बष्ठस्य प्रणोदादधिकजवजुषा हस्तिना गृह्यमाणः ।
केलीमुक्तोऽथ गोपीकुचकलशचिरस्पर्धिनं कुम्भमस्य
व्याहत्यालीयथास्त्वं चरणभुवि पुनर्निर्गतो वल्गुहासी ॥२॥

पापिष्ठ-अपेहि	अरे पापी हटो
मार्गात्-द्रुतम्-	मार्ग से शीघ्र
इति वचसा	यह कह कर
निष्ठुर-क्रुद्ध-बुद्धे-	क्रूर और कुपित बुद्धि वाले
अम्बष्ठस्य प्रणोदात्-	महावत के द्वारा प्रेरित
अधिक-जव-जुषा	अतिशय गति मान
हस्तिना गृह्यमाणः	हाथी ने (आपको) पकड लिया
केली-मुक्तः-अथ	खेल खेल में ही छूट कर तब
गोपी-कुच-कलश-	गोपियों के कुच कलशों से
चिर-स्पर्धिनं	सदा स्पर्धाशाली
कुम्भम्-अस्य व्याहत्य-	कुम्भ के समान मस्तक पर इसके प्रहार किया
अलीयथाः-त्वं	छुप गए आप
चरण-भुवि	(उसके) पैरों के बीच में
पुनः-निर्गतः	फिर से निकल आए
वल्गु-हासी	मधुर हास के साथ

अरे पापी! शीघ्र ही मार्ग से हटो'। आपके यह कहने पर क्रूर और कुपित बुद्धि वाले महावत के प्रेरित करने से हाथी ने तीव्र गति से आपको पकड लिया। आप खेल ही खेल में उसकी पकड से मुक्त हो गए। फिर, गोपियों के कुच कलशों से सदा ही स्पर्धाशील, उस हाथी के कुम्भ समान मस्तक पर आपने प्रहार किया और उसके पैरों के बीच छुप गए। उसके बाद मधुर हास के साथ आप बाहर निकल आए।

हस्तप्राप्योऽप्यगम्यो झटिति मुनिजनस्येव धावन् गजेन्द्रं

क्रीडन्नापात्य भूमौ पुनरपिपततस्तस्य दन्तं सजीवम् ।
मूलादुन्मूल्य तन्मूलगमहितमहामौक्तिकान्यात्ममित्रे
प्रादास्त्वं हारमेभिर्ललितविरचितं राधिकायै दिशेति ॥३॥

हस्त-प्राप्य:-अपि-	हाथों में प्राप्त (आ कर) भी
अगम्य: झटिति	अप्राप्य झट से
मुनिजनस्य-	मुनिजनों के लिए
इव धावन्	उसी प्रकार भागते हुए
गजेन्द्रं क्रीडन्-	हाथी से खेलते हुए से मानो
आपात्य भूमौ	पटक कर भूमि पर
पुन:-अभिपतत:-तस्य	फिर जब वह झपटा तब उसके
दन्तं सजीवम्	दांतो को जीवित अवस्था में ही
मूलात्-उन्मूल्य	मूल से उखाड कर
तत्-मूलग-	उसके मूल से निकले हुए
महित-महा-	अमूल्य बडे
मौक्तिकानि-	मोती
आत्म-मित्रे	अपने मित्र को
प्रादा:-त्वम्	दे दिये आपने
हारम्-एभि:-	हार इनसे
ललित-विरचितं	सुन्दर बनवा कर
राधिकायै	राधा को
दिश-इति	दे देना इस प्रकार (कहा)

साधना करने वाले मुनिजन के लिए जिस प्रकार आप प्राय: पकड में आने पर भी अप्राप्य हैं, उसी प्रकार भागते हुए उस

हाथी की पकड में भी आप नहीं आ रहे थे। फिर सहसा उसके साथ मानो खेल खेलते हुए आपने उसे भूमि पर पटक दिया। इस पर जब वह आप पर झपटा, तब आपने जीवित अवस्था में ही उसके दांत जड से उखाड दिए। उन दांतों के मूल से बडे बडे अमूल्य मोती निकले । उन्हें आपने अपने मित्र को दे कर कहा कि 'इनसे एक सुन्दर हार बनवा कर राधा को दे देना,'।

गृह्णानं दन्तमंसे युतमथ हलिना रङ्गमङ्गाविशन्तं
त्वां मङ्गल्याङ्गभङ्गीरभसहृतमनोलोचना वीक्ष्य लोका: ।
हंहो धन्यो हि नन्दो नहि नहि पशुपालाङ्गना नो यशोदा
नो नो धन्येक्षणा: स्मस्त्रिजगति वयमेवेति सर्वे शशंसु: ॥४॥

गृह्णानं दन्तम्-अंसे	उठाते हुए दांत को कन्धे पर
युतम्-अथ हलिना	साथ में तब बलराम के
रङ्गम्-अङ्ग-	रङ्गशाला में हे प्रभो!
आविशन्तम्	प्रवेश करते हुए
त्वां मङ्गल्य-अङ्ग-भङ्गी-	आपकी माङ्गलिक अङ्गभङ्गी को
रभस-हृत-मन:-लोचना	(जो) हठात हरने वाली थी मन और नेत्रों को
वीक्ष्य लोका:	देख कर लोग (कहने लगे)
हंहो धन्य हि नन्द:	अहा! धन्य ही हैं नन्द
नहि नहि पशुपाल-अङ्गना	नहीं नहीं गोपिकाएं (धन्य हैं)
नो यशोदा	नहीं यशोदा ही धन्य है
नो नो धन्य-ईक्षणा: स्म:-	अरे नहीं नहीं देखते हुए
त्रिजगति	तीनों लोकों में
वयम्-एव-इति	हम सब ही (धन्य हैं) इस प्रकार
सर्वे शशंसु:	सभी कहने लगे

तब कन्धे पर हस्ति दन्त को उठा कर आपने बलराम के सङ्ग रङ्गशाला में प्रवेश किया। आपकी माङ्गलिक अङ्गभङ्गी हठात मन और नेत्रों को आकृष्ट करने वाली थी। देख कर सभी कहने लगे, 'नन्द भाग्यशाली हैं। नही नहीं, गोपिकाएं धन्य है। अरे

नहीं, यशोदा ही अत्यधिक धन्य हैं। अरे नहीं इनके दर्शन करने से तीनों लोकों में सर्वाधिक धन्य हम ही हो गए हैं।'

पूर्णं ब्रह्मैव साक्षान्निरवधि परमानन्दसान्द्रप्रकाशं
गोपेषु त्वं व्यलासीर्न खलु बहुजनैस्तावदावेदितोऽभूः ।
दृष्ट्वाऽथ त्वां तदेदंप्रथममुपगते पुण्यकाले जनौघाः
पूर्णानन्दा विपापाः सरसमभिजगुस्त्वत्कृतानि स्मृतानि ॥५॥

पूर्णं ब्रह्म-एव	परिपूर्ण ब्रह्म ही
साक्षात्-निरवधि	साक्षात निस्सीम
परम-आनन्द-सान्द्र-प्रकाशं	परम आनन्द के घनीभूत प्रकाश स्वरूप
गोपेषु त्वं व्यलासीः-	गोपों के मध्य में (अवतरित हो कर) लीला कर रहे हैं
न खलु बहु-जनैः-	(यह) नही ही सामान्यतया लोगों को
तावत्-आविदेतः-अभूः	तब तक ज्ञात हुआ था
दृष्ट्वा-अथ त्वां	देख कर अब आपको
तत्-इदम्-प्रथमम्-	वह यह पहला
उपगते पुण्यकाले	प्रकट होने से पुण्य के समय का
जन-औघाः	जन समूह
पूर्णानन्दा विपापाः	पूर्णानन्दित और पाप रहित (हो कर)
सरसम्-अभिजगुः-	रस ले ले कर वर्णन करने लगे
त्वत्-कृतानि स्मृतानि	आपकी लीलाओं का याद कर कर के

साक्षात, निस्सीम, परम आनन्द के घनीभूत प्रकाश स्वरूप, परिपूर्ण ब्रह्म, स्वयं आप ही गोपों के मध्य अवतरित हो कर लीला कर रहे हैं, यह बात सामान्यतया लोगों को तब तक ज्ञात नहीं थी। आपको देख कर, मानो उनके पुण्योदय का प्रथम काल प्रस्तुत हुआ था, जिसके कारण वे पूर्णानन्दित और पाप रहित हो कर आपकी लीलाओं का स्मरण कर के, रस ले ले कर उनका वर्णन करने लगे।

चाणूरो मल्लवीरस्तदनु नृपगिरा मुष्टिको मुष्टिशाली
त्वां रामं चाभिपेदे झटझटिति मिथो मुष्टिपातातिरूक्षम् ।

उत्पातापातनाकर्षणविविधरणान्यासतां तत्र चित्रं
मृत्यो: प्रागेव मल्लप्रभुरगमदयं भूरिशो बन्धमोक्षान् ॥६॥

चाणूरः मल्लवीरः-	चाणूर मल्ल (युद्ध) वीर
तदनु नृप-गिरा	उसके बाद राजा के कहने से
मुष्टिकः मुष्टिशाली	मुष्टिक, मुष्टि (युद्ध वीर)
त्वां रामं च-अभिपेदे	आप और बलराम पर झपटे
झटझटिति मिथ:	त्वरित गति से परस्पर
मुष्टि-पात-अति-रूक्षम्	मुष्टि के प्रहार से अति कठोर
उत्पात-आपातन-आकर्षण-	उछालने, पटकने, खींचने (आदि)
विविध-रणानि-	विभिन्न दांव पेंच से
आसतां तत्र चित्रं	थे जो वहां आश्चर्य है
मृत्यो: प्राक्-एव	मृत्यु के पहले ही
मल्लप्रभुः-अगमत्-अयं	(उस) मल्ल दक्ष ने प्राप्त किया इसने
भूरिश: बन्ध-मोक्षान्	कई बार बन्धन और मोक्ष

उसके बाद राजा के कहने पर मल्लयुद्ध प्रवीण चाणूर और मुष्टि युद्ध वीर मुष्टिक ने आप पर और बलराम पर आक्रमण किया। फिर तो तीव्र गति से, परस्पर उछालना, पटकना खींचना आदि बिभिन्न दांव पेंच से वहां युद्ध होने लगा। आश्चर्य है कि मृत्यु के पहले ही मल्ल-दक्ष चणूर ने आपके हाथों अनेक बार बन्धन और मोक्ष प्राप्त किया।

हा धिक् कष्टं कुमारौ सुललितवपुषौ मल्लवीरौ कठोरौ
न द्रक्ष्यामो व्रजामस्त्वरितमिति जने भाषमाणे तदानीम् ।
चाणूरं तं करोद्भ्रामणविगलदसुं पोथयामासिथोर्व्यां
पिष्टोऽभून्मुष्टिकोऽपि द्रुतमथ हलिना नष्टशिष्टैर्दधावे ॥७॥

हा धिक् कष्टं	हा हा! खेद है!
कुमारौ सुललित-वपुषौ	दोनों कुमार कोमल शरीर वाले

मल्लवीरौ कठोरौ	मल्लवीर कठोर
न द्रक्ष्यामः	नहीं देखेंगे
व्रजामः-त्वरितम्-	चले जाएंगे शीघ्र ही
इति जने भाषमाणे	इस प्रकार लोगों के कहने पर
तदानीम् चाणूरं तं	उस समय चाणूर को उसको
कर-उद्भ्रामण-	हाथ से घुमाते हुए
विगलत्-असुं	निकल गए थे प्राण (जिसके)
पोथयामासिथ-उर्व्यां	पटक दिया धरती पर
पिष्टः-अभूत्-मुष्टिकः-अपि	रौन्द दिया गया मुष्टिक भी
द्रुतम्-अथ हलिना	शीघ्र ही बलराम के द्वारा
नष्ट-शिष्टैः-दधावे	नष्ट होने से बचे हुए भाग गए

हा हा! खेद है! दोनों कुमार कोमल शरीर वाले हैं और ये मल्ल वीर क्रूर हैं। हम शीघ्र ही चले जाएंगे, यह युद्ध नहीं देखेंगे।' जब लोग इस प्रकार कह रहे थे, उसी समय, आपने चाणूर को हाथ से घुमाते हुए धरती पर पटक दिया और उसके प्राण निकल गए। बलराम ने भी शीघ्र ही मुष्टिक को रौंद डाला। जो मल्ल योद्धा नष्ट होने से बचे गये, वे पलायन कर गए।

कंस संवार्य तूर्यं खलमतिरविदन् कार्यमार्यान् पितृंस्ता-
नाहन्तुं व्याप्तमूर्तेस्तव च समशिषद्दूरमुत्सारणाय ।
रुष्टो दुष्टोक्तिभिस्त्वं गरुड इव गिरिं मञ्चमञ्चन्नुदञ्चत्-
खड्गव्यावल्गदुस्संग्रहमपि च हठात् प्राग्रहीरौग्रसेनिम् ॥८॥

कंस संवार्य तूर्यं	कंस ने रोक दिए ढोल
खल-मतिः-अविदन्	दुष्ट बुद्धि न जानते हुए
कार्यम्-	कर्तव्य को
आर्यान्-पितृन्-तान्-आहन्तुं	आदरणीय पितृगणों को उनको मारने के लिए
व्याप्तमूर्तेः-तव	हे सर्वव्यापी! आपके

च समशिषत्-	और आदेश दिया
दूरम्-उत्सारणाय	दूर हटा देने के लिए
रुष्टः दुष्ट-उक्तिभिः -त्वं	क्रुद्ध हो कर (उसकी) दुष्ट वाणी से आपने
गरुडः-इव गिरिं	गरुड जैसे पर्वत पर (जा पहुंचता है)
मञ्चम्-अञ्चन्-	मञ्च पर छलांग लगा कर
उदञ्चत्-खड्ग-व्यावल्ग-	उठा कर तलवार चलाते हुए
दुस्संग्रहम्-अपि	पकडे जाने में असम्भव भी (कंस को)
च हठात् प्राग्रहीः-	और सहसा झपट कर
औग्रसेनिम्	अग्रसेन पुत्र (कंस) को

कंस ने ढोल बजाना रुकवा दिया। हे सर्वव्यापी! उस दुर्बुद्धि ने किंकर्तव्यविमूढ हो कर आपके आदरणीय पितृवर्ग को मारने और आपको दूर हटा देने का आदेश दिया। उस दुष्ट के क्रूर वचनों से आप क्रुद्ध हो गए। फिर, जैसे गरुड छलाग लगा कर पर्वत पर पहुंच जाता है, आप कंस के मञ्च पर पहुंच गए। अग्रसेन पुत्र कंस तलवार चला रहा था इसलिए उसे पकडना असम्भव था, फिर भी आपने सहसा झपट कर उसे पकड लिया।

सद्यो निष्पिष्टसन्धिं भुवि नरपतिमापात्य तस्योपरिष्टा-
त्त्वय्यापात्ये तदैव त्वदुपरि पतिता नाकिनां पुष्पवृष्टिः ।
किं किं ब्रूमस्तदानीं सततमपि भिया त्वद्गतात्मा स भेजे
सायुज्यं त्वद्वधोत्था परम परमियं वासना कालनेमेः ॥९॥

सद्यः निष्पिष्ट-सन्धिं	तुरन्त ही चूर चूर करके सन्धियों को
भुवि नरपतिम्-आपात्य	धरती पर राजा को पटक कर
तस्य-उपरिष्टात्-	उसके ऊपर
त्वयि-आपात्ये तदा-एव	आपके (कूदने पर) तब ही
त्वत्-उपरि पतिता	आपके ऊपर गिरने लगे
नाकिनां पुष्प वृष्टिः	देवों की पुष्प वृष्टि

किं किं ब्रूम:-तदानीं	क्या क्या कहूं उस समय
सततम्-अपि भिया	सदैव भय से
त्वत्-गत-आत्मा स भेजे	आपमें लगी हुई आत्मा से उसने पाया
सायुज्यं त्वत्-वध-उत्था	सायुज्य आपके मारने के फलस्वरूप
परम परम-इयं	हे परमेश्वर! केवल यह
वासना कालनेमे:	वासना थी कालनेमी की

तुरन्त ही आपने कंस उस राजा की सन्धियों को चूर चूर कर के उसे धरती पर पटक दिया, और उसके ऊपर कूद पडे। उसी समय देव गण आपके ऊपर पुष्प वर्षा करने लगे। हे परमेशवर! क्या क्या कहूं? सदैव आपके भय के कारण आपही में अत्मा लगाए हुए उस कंस ने आपके द्वारा मारे जाने के फलस्वरूप सायुज्य प्राप्त किया। क्योंकि कालनेमी के रूप में, अपने पूर्वजन्म में उसकी यही कामना थी।

तद्भ्रातृनष्ट पिष्ट्वा द्रुतमथ पितरौ सन्नमन्नुग्रसेनं
कृत्वा राजानमुच्चैर्यदुकुलमखिलं मोदयन् कामदानै: ।
भक्तानामुत्तमं चोद्धवममरगुरोराप्तनीतिं सखायं
लब्ध्वा तुष्टो नगर्यां पवनपुरपते रुन्धि मे सर्वरोगान् ॥१०॥

तत्-भ्रातृन्-अष्ट पिष्ट्वा	उसके भाइयों आठों को पीस कर
द्रुतम्-अथ	शीघ्र ही तब
पितरौ सन्नमन्-	माता पिता को नमन करके
उग्रसेनं कृत्वा राजानम्-	उग्रसेन को राजा बना कर
उच्चै:-यदुकुलम्-अखिलं	बहुत ही यदुकुल को सम्पूर्ण
मोदयन् कामदानै:	आनन्दित करके मनोरथ पूर्ण करके
भक्तानाम्-उत्तमं	भक्तों में सर्वश्रेष्ठ
च-उद्धवम्-	और उद्धव को
अमरगुरो:-आप्त-नीतिं	देवगुरू से पाई थी नीति जिसने

सखायं लब्ध्वा	मित्र रूप में पा कर
तुष्टः नगर्यां	सन्तुष्ट हो कर (मथुरा) नगरी में (निवास किया)
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
रुन्धि मे सर्व-रोगान्	नष्ट कर देजिए मेरे सर्व रोगों को

कंस के आठों भाइयों को भी आपने पीस डाला, और शीघ्र ही अपने माता पिता को नमन करके नाना उग्रसेन को राजा बना दिया। यदुकुल के सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करके आपने उन्हें बहुत ही आनन्दित किया। देवगुरू बृहस्पति से नीतिशास्त्र की विद्या प्राप्त उद्धव को अपना मित्र बनाया। तदनन्तर सन्तुष्ट हो कर आप मथुरा पुरी में निवास करने लगे। हे पवनपुरेश! मेरे सभी रोगों को नष्ट कर दीजिए।

दशक ७६

गत्वा सान्दीपनिमथ चतुष्षष्टिमात्रैरहोभि:
सर्वज्ञस्त्वं सह मुसलिना सर्वविद्या गृहीत्वा ।
पुत्रं नष्टं यमनिलयनादाहृतं दक्षिणार्थं
दत्वा तस्मै निजपुरमगा नादयन् पाञ्चजन्यम् ॥१॥

गत्वा सान्दीपनिम्-अथ	जा कर सान्दीपनि (मुनि) के पास तब
चतु:-षष्टि-मात्रै:-अहोभि:	चौसठ मात्र दिनों में
सर्वज्ञ:-त्वं	सर्वज्ञ आप
सह मुसलिना	साथ में बलराम के
सर्व-विद्या गृहीत्वा	समस्त विद्याओं को ग्रहण करके
पुत्रं नष्टं	पुत्र नष्ट हुए को
यम-निलयनात्-आहृतं	यम के निवास से वापस ला कर
दक्षिणा-अर्थं	दक्षिणा स्वरूप
दत्वा तस्मै	दे कर उसको (सान्दीपनि को)
निज-पुरम्-अगा	अपने नगर को आ गए
नादयन् पाञ्चजन्यम्	बजाते हुए पाञ्चजन्य (शङ्ख) को

सर्वज्ञ आप बलराम के साथ विद्यार्जन के लिए सान्दीपनि मुनि के पास गए और मात्र चौसठ दिनों में ही आपने समस्त विद्याएं ग्रहण कर ली। मुनि सान्दीपनि के मृत पुत्र को यम निकेत से वापस ला कर गुरु-दक्षिणा स्वरूप दे कर पाञ्चजन्य शङ्ख बजाते हुए आप अपने नगर लौट आए।

स्मृत्वा स्मृत्वा पशुपसुदृश: प्रेमभारप्रणुन्ना:
कारुण्येन त्वमपि विवश: प्राहिणोरुद्धवं तम् ।
किञ्चामुष्मै परमसुहृदे भक्तवर्याय तासां
भक्त्युद्रेकं सकलभुवने दुर्लभं दर्शयिष्यन् ॥२॥

स्मृत्वा स्मृत्वा	याद कर कर के

पशुप-सुदृशः	गोपिकाएं सुनयनाए
प्रेम-भार-प्रणुन्नाः	(जो) प्रेम के अतिरेक से विह्वल थीं
कारुण्येन	(आपने) करुणा से
त्वम्-अपि विवशः	आप भी विवश हो गए
प्राहिणोः-उद्धवं तम्	भेजा उद्धव को उसको
किम्-च-अमुष्मै	और क्या इस को
परम-सुहृदे	परम सखा को
भक्तवर्याय तासां	भक्तिपूर्णाओं की उनकी
भक्ति-उद्रेकं	भक्ति की उत्कटता को
सकल-भुवने दुर्लभं	(जो) समस्त संसार में दुर्लभ है
दर्शयिष्यन्	दिखाने के लिए

सुनयना गोपिकाओं को जो प्रेमातिरेक से विह्वल थीं, याद कर कर के आप भी करुणार्दित हो कर विवश हो गए। तब आपने अपने परम प्रिय सखा भक्तमौलि उद्धव को उनके पास भेजा। ताकि भक्तिपूर्णा गोपिकाओं की, समस्त संसार में दुर्लभ भक्ति की उत्कटता को वे देख पाएं।

त्वन्माहात्म्यप्रथिमपिशुनं गोकुलं प्राप्य सायं
त्वद्वार्ताभिर्बहु स रमयामास नन्दं यशोदाम् ।
प्रातर्द्दृष्ट्वा मणिमयरथं शङ्किताः पङ्कजाक्ष्यः
श्रुत्वा प्राप्तं भवदनुचरं त्यक्तकार्याः समीयुः ॥३॥

त्वत्-माहात्म्य-	आपकी महानता के
प्रथिम-पिशुनं	विस्तार को सूचित करने वाले
गोकुलं प्राप्य सायं	गोकुल को पहुंच कर सन्ध्या समय
त्वत्-वार्ताभिः-बहु	आपकी वार्ताओं बहुत सी से
स रमयामास	उसने प्रसन्न किया

नन्दं यशोदाम्	नन्द और यशोदा को
प्रात:-दृष्ट्वा	सुबह देख कर
मणिमय-रथं	मणिमय रथ को
शङ्किता: पङ्कजाक्ष्य:	शङ्कित हुई कमलनयनी
श्रुत्वा प्राप्तं	सुन कर आए हैं
भवत्-अनुचरं	आपके अनुगामी
त्यक्त-कार्या:	छोड कर कार्यों को
समीयु:	सम्मिलित हो गई

उद्धव सन्ध्या समय आपकी महानता के विस्तार को सूचित करने वाले गोकुल पहुंच गए। उन्होंने आपकी अनेक वार्ताओं और समाचारों से नन्द और यशोदा को प्रसन्न कर दिया। प्रात:काल कमलनयनी गोपिकाएं मणिमय रथ को देख कर यह सुन कर कि आपके अनुगामी आए हैं, अपने अपने कार्यों को छोड कर एकत्रित हो कर आ गईं।

दृष्ट्वा चैनं त्वदुपमलसद्वेषभूषाभिरामं
स्मृत्वा स्मृत्वा तव विलसितान्युच्चकैस्तानि तानि ।
रुद्धालापा: कथमपि पुनर्गद्गदां वाचमूचु:
सौजन्यादीन् निजपरभिदामप्यलं विस्मरन्त्य: ॥४॥

दृष्ट्वा च-एनं	देख कर और इसको
त्वत्-उपम-	आपके समान
लसत्-वेष-भूषा-अभिरामं	सुसज्जित वस्त्रों और आभूषणों में मनोरम
स्मृत्वा स्मृत्वा	याद कर कर के
तव विलसितानि-	आपकी क्रीडाओं को
उच्चकै:-तानि तानि	विस्तार से उन सब को
रुद्ध-आलापा:	अवरुद्ध कण्ठ स्वर वाली
कथम्-अपि	किसी प्रकार भी

पुनः-गद्गदां	फिर से गद्गद
वाचम्-ऊचुः	वाणी में बोलीं
सौजन्य-आदीन्	व्यवहार आदि
निज-पर-भिदाम्-	अपने पराए का भेद
अपि-अलं	भी सर्वथा
विस्मरन्त्यः	भूल गईं

आप ही के समान मनोरम वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित उद्धव को देख कर गोपिकाएं, बारंबार आपकी क्रीडालीलाओं का विस्तार से स्मरण करने लगीं। उनके कण्ठ स्वर अवरुद्ध हो गए, फिर किसी प्रकार, सामाजिक व्यवहार और अपने पराए के भेद को भी भूल कर वे गद्गद वाणी में बोलीं।

श्रीमान् किं त्वं पितृजनकृते प्रेषितो निर्दयेन
क्वासौ कान्तो नगरसुदृशां हा हरे नाथ पाया: ।
आश्लेषाणाममृतवपुषो हन्त ते चुम्बनाना-
मुन्मादानां कुहकवचसां विस्मरेत् कान्त का वा ॥५॥

श्रीमान् किं त्वं	श्रीमान! क्या तुम को
पितृजन-कृते	पितृजनों के लिए
प्रेषितः निर्दयेन	भेजा है निर्दयी ने
क्व-असौ कान्तः	कहां है प्यारा
नगर-सुदृशां	नगर कामिनियों का
हा हरे नाथ पायाः	हा हरे! हे नाथ! रक्षा करें
आश्लेषाणाम्-	आलिङ्गन
अमृत-वपुषः	(उस) अमृत स्वरूप का
हन्त ते	हाय! आपका
चुम्बनानाम्	चुम्बनों का

उन्मादानां	उन्माद का
कुहक-वचसां	कपट वचनों का
विस्मरेत् कान्त	भूलेगी प्यारे
का वा	कौन अथवा

श्रीमान! उस निर्दयी ने क्या आपको पितृजनों के लिए भेजा है? नगर की कामिनियों का प्यारा कहां है?' हा हरे! हे नाथ! रक्षा करें। हे प्यारे! हाय! आपके अमृत स्वरूप के आलिङ्गन को, आपके चुम्बनों के उन्माद को, आपके कपट वचनों को कौन स्त्री भला भूलेगी?

रासक्रीडालुलितललितं विश्लथत्केशपाशं
मन्दोद्भिन्नश्रमजलकणं लोभनीयं त्वदङ्गम् ।
कारुण्याब्धे सकृदपि समालिङ्गितुं दर्शयेति
प्रेमोन्मादाद्भुवनमदन त्वत्प्रियास्त्वां विलेपुः ॥६॥

रास-क्रीडा	रास क्रीडा (के समय)
लुलित-ललितं	सजाए हुए सुन्दर
विश्लथत्-केश-पाशं	ढीले पडे हुए केश गुच्छ वाले
मन्द-उद्भिन्न-	हलके उभरते हुए
श्रमजल-कणं	सश्रम जनित स्वेद बिन्दु वाले
लोभनीयं त्वत्-अङ्गम्	मोहनीय आपके श्री अङ्गों को
कारुण्य-अब्धे	हे करुणासिन्धु!
सकृत्-अपि	एक बार भी
समालिङ्गितुम् दर्शय-	आलिङ्गन करने के लिए दिखा दीजिए
इति प्रेम-उन्मादात्-	इस प्रकार प्रेम के उन्माद से
भुवनमदन	हे भुवनमोहन!
त्वत्-प्रिया:-	आपकी प्रियायें

त्वां विलेपुः	आपके लिए विलाप करने लगीं

हे करुणा सिन्धो! सजाए हुए सुन्दर केश गुच्छ जो रास क्रीडा के समय, ढीले पड गए थे, वे मोहनीय श्री अङ्ग जिन पर श्रम जनित स्वेद बिन्दु उभर आए थे, उनको, एकबार ही सही आलिङ्गन करने के लिए दिखा दीजिए।' हे भुवनमोहन! आपकी प्रेमिकाएं इस प्रकार प्रेम में उन्मत्त हो आपके लिए विलाप करने लगीं।

एवंप्रायैर्विवशवचनैराकुला गोपिकास्ता-
स्त्वत्सन्देशैः प्रकृतिमनयत् सोऽथ विज्ञानगर्भैः ।
भूयस्ताभिर्मुदितमतिभिस्त्वन्मयीभिर्वधूभि-
स्तत्तद्वार्तासरसमनयत् कानिचिद्वासराणि ॥७॥

एवं-प्रायैः-	ऐसे ही प्रायः
विवश-वचनैः-	विवशता पूर्ण वचनों से
आकुलाः गोपिकाः-ताः-	विह्वल उन गोपिकाओं को
त्वत्-सन्देशैः	आपके सन्देशों के द्वारा
प्रकृतिम्-अनयत्	प्रकृतस्थ किया
सः-अथ	उस (उद्धव) ने तब
विज्ञान-गर्भैः	ज्ञानपूर्ण (बातों से)
भूयः-	फिर से
ताभिः-मुदितमतिभिः-	उन सम्मुदित मन वाली
त्वत्-मयीभिः-वधूभिः-	आप में ही तन्मय वधुओं के साथ
तत्-तत्-वार्ता-	उन उन घटनाओं का (वर्णन करते हुए)
सरसम्-अनयत्	आनन्दपूर्वक बिताए
कानिचित्-वासराणि	कुछ दिन

प्रायः इसी प्रकार के विवशता पूर्ण वचनों से विह्वल गोपिकाओं को आपका सन्देश सुना कर उद्धव ने प्रकृतस्थ किया। आपमें ही तन्मय और सम्मुदित मन वाली गोपिकाओं को उद्धव ने ज्ञान पूर्ण बातें बताईं। फिर उनके साथ आपकी ही उन उन घटनाओं का वर्णन करते हुए कुछ दिन आनन्दपूर्वक व्यतीत किए।

त्वत्प्रोद्गानैः सहितमनिशं सर्वतो गेहकृत्यं
त्वद्वार्तैव प्रसरति मिथः सैव चोत्स्वापलापाः ।
चेष्टाः प्रायस्त्वदनुकृतयस्त्वन्मयं सर्वमेवं
दृष्ट्वा तत्र व्यमुहदधिकं विस्मयादुद्धवोऽयम् ॥८॥

त्वत्-प्रोद्गानैः सहितम्-	आपके गीतों के साथ
अनिशं सर्वतः	दिन रात सर्वत्र
गेह-कृत्यं	गृह कार्यों को (करती थीं)
त्वत्-वार्ता-एव	आपके किस्से ही
प्रसरति	चलते थे
मिथः सा-एव	परस्पर वह ही
च-उत्स्व-अपलापाः	और स्वप्न में कहती थीं
चेष्टाः प्रायः-	(सभी) चेष्टाएं प्रायः
त्वत्-अनुकृतयः-	आपके अनुकरण स्वरूप
त्वत्-मयं	आपमें ही तन्मय
सर्वम्-एवं	सभी इस प्रकार
दृष्ट्वा तत्र	देख कर वहां
व्यमुहत्-अधिकं	सम्मोहित और अधिक
विस्मयात्-उद्धवः-अयम्	आश्चर्य से उद्धव यह

गोपिकाएं दिन रात और सर्वत्र आप ही के गीतों के साथ गृह कार्यों को करती थीं। उनके बीच परस्पर आप ही के किस्सों की चर्चा चलती थी। स्वप्न में भी वे आप ही की कहानियां कहती थीं। उनकी सारी चेष्टाएं प्रायः आप ही का अनुकरण स्वरूप होती थीं। इस प्रकार सभी कुछ आप ही में तल्लीन देख कर उद्धव आश्चर्य से और अधिक सम्मोहित हो गए।

राधाया मे प्रियतममिदं मत्प्रियैवं ब्रवीति
त्वं किं मौनं कलयसि सखे मानिनीमत्प्रियेव।
इत्याद्येव प्रवदति सखि त्वत्प्रियो निर्जने मा-

मित्थंवादैररमदयं त्वत्प्रियामुत्पलाक्षीम् ॥९॥

राधाया: मे	राधा के लिए मेरी
प्रियतमम्-इदं	प्रियतर है यह
मत्-प्रिया-एवं ब्रवीति	मेरी प्रिया इस प्रकार कहती है
त्वं किं मौनं कलयसि	तुम क्या मौन धारण किए हो
सखे	हे सखे!
मानिनी-मत्-प्रिया-इव	स्वाभिमानी मेरी प्रिया के समान
इति-आदि-एव	यही इत्यादि ही
प्रवदति सखि	कहता है, हे सखी!
त्वत्-प्रिय:	तुम्हारा प्रिय
निर्जने माम्-	एकान्त में मुझको
इत्थं-वादै:-	इस प्रकार के कथन से
अरमत्-अयं	प्रसन्न कर दिया इसने
त्वत्-प्रियाम्-	आपकी प्रिया
उत्पल-आक्षीम्	कमलनयनी को

मेरी राधा के लिए यह प्रियतर है,' 'मेरी प्रिया इस प्रकार कहती है,' 'हे सखे! मेरी स्वभिमानिनी प्रिया के समान तुम क्यों मौन धारण किए हो?' - 'हे सखी! तुम्हारा प्रिय एकान्त में मुझसे यही सब कहता रहता है' उद्धव ने इस प्रकार के कथनों से आपकी कमलनयना प्रिया को प्रसन्न कर दिया।

एष्यामि द्रागनुपगमनं केवलं कार्यभारा-
द्विश्लेषेऽपि स्मरणदृढतासम्भवान्मास्तु खेद: ।
ब्रह्मानन्दे मिलति नचिरात् सङ्गमो वा वियोग-
स्तुल्यो व: स्यादिति तव गिरा सोऽकरोन्निर्व्यथास्ता: ॥१०॥

एष्यामि द्राक्-	आऊंगा शीघ्र

अनुपगमनं	(मेरा) नहीं आना
केवलं कार्यभारात्-	मात्र कार्य के भार (के कारण) है
विश्लेषे-अपि	वियोग में भी
स्मरण-दृढता-सम्भवात्-	स्मृतियों की प्रगाढता से
मा-अस्तु खेदः	नहीं होना चाहिए दु:ख
ब्रह्मानन्दे मिलति	ब्रह्मानन्द मिल जाने से
न-चिरात्	नहीं देर से (जल्दी ही)
सङ्गमः वा वियोगः-	सङ्गम अथवा वियोग
तुल्यः वः स्यात्-	समान तुम लोगों के लिए होगा
इति तव गिरा	इस प्रकार आपकी वाणी से
सः-अकरोत्-	उसने कर दिया
निर्व्यथाः-ताः	दु:ख रहित उनको

मैं शीघ्र ही आऊंगा। केवल कार्य भार के कारण ही मेरा आना नहीं हो रहा है। परस्पर स्मृतियों की प्रगाढता से विरह जनित दुख नहीं होना चाहिए। शीघ्र ही ब्रह्मानन्द प्राप्त हो जाने पर तुम लोगों के लिये संयोग अथवा वियोग दोनों समान होंगे।' आपकी ऐसी वाणी सुना कर उद्धव ने गोपिकाओं को दु:ख रहित कर दिया।

एवं भक्ति सकलभुवने नेक्षिता न श्रुता वा
किं शास्त्रौघैः किमिह तपसा गोपिकाभ्यो नमोऽस्तु ।
इत्यानन्दाकुलमुपगतं गोकुलादुद्धवं तं
दृष्ट्वा हृष्टो गुरुपुरपते पाहि मामामयौघात् ॥११॥

एवं भक्तिः	ऐसी भक्ति
सकल-भुवने	समस्त विश्व में
न-ईक्षिता	नहीं देखी गई
न श्रुता वा	अथवा नहीं सुनी गई

किं शास्त्र-औघै:	क्या (प्रयोजन) शास्त्रों के समूह से
किम्-इह तपसा	क्या (लाभ) यहां तपस्या से
गोपिकाभ्य: नम:-अस्तु	गोपिकाओं को ही नमस्कार है
इति-आदि-	यह और इस प्रकार
आनन्द-आकुलम्-	आनन्द विभोर को
उपगतं गोकुलात्-	(जो) चला गया था गोकुल से
उद्धवं तं	उस उद्धव को
दृष्ट्वा हृष्ट:	देख कर प्रसन्न हो गए
गुरुपुरपते पाहि	हे गुरुपुरपते! रक्षा करें
माम्-आमय-औघात्	मेरी रोग समूहों से

'सम्पूर्ण विश्व में ऐसी भक्ति, न तो देखने में आई और न हीं सुनने में आई। शास्त्रों के समूहों का क्या प्रयोजन? तपस्या का भी क्या लाभ? गोपिकाएं ही सर्वथा सम्पूज्य हैं।' इसी प्रकार के विचारों से आनन्द विभोर हो कर उद्धव गोकुल से चले गए। उन्हे देख कर आप प्रसन्न हो उठे। हे गुरुपुरपते! रोग समूहों से मेरी रक्षा करें।

दशक ७७

सैरन्ध्र्यास्तदनु चिरं स्मरातुराया
यातोऽभू: सुललितमुद्धवेन सार्धम् ।
आवासं त्वदुपगमोत्सवं सदैव
ध्यायन्त्या: प्रतिदिनवाससज्जिकाया: ॥१॥

सैरन्ध्या:-	सैरन्ध्री के (पास)
तदनु चिरं	तदनन्तर, (जो) चिरकाल से
स्मर-आतुराया	कामातुर थी
यात:-अभू:	चले गए
सुललितम्-	सुसज्जित हो कर
उद्धवेन सार्धम्	उद्धव के साथ
आवासं	निवास स्थान पर (उसके)
त्वत्-उपगम-उत्सवं	आपके आगमन के उत्सव का
सदा-एव	सदैव ही
ध्यायन्त्या:	प्रतीक्षा करती हुई
प्रतिदिन-वास-सज्जिकाया:	प्रतिदिन अपने घर को और स्वयं को सजाती थी

तदनन्तर, चिरकाल से कामातुर सौरन्ध्री, के पास सुसज्जित वेश में उद्धव के साथ आप उसके निवास स्थान पर गए। आपके आगमन के उत्सव की प्रतीक्षा में निरन्तर रत वह प्रतिदिन स्वयं को और अपने घर को सजाती रहती थी।

उपगते त्वयि पूर्णमनोरथां प्रमदसम्भ्रमकम्प्रपयोधराम् ।
विविधमाननमादधतीं मुदा रहसि तां रमयाञ्चकृषे सुखम् ॥२॥

उपगते त्वयि	आजाने पर आपके
पूर्णमनोरथाम्	परिपूर्ण मनोरथ वाली

प्रमद-सम्भ्रम-	हर्ष और प्रफुल्लता से
कम्प्र-पयोधराम्	कम्पायमान स्तनों वाली
विविध-माननम्-	नाना प्रकार के सत्कारों से
आदधतीं मुदा	सम्मान देती हुई प्रसन्नता से
रहसि तां	एकान्त में उसको
रमयान्-चकृषे	(आपने) आनन्दित कर के
सुखम्	सुख से

आपके आजाने पर सौरन्ध्री मानो पूर्ण मनोरथ हो गई। हर्ष और प्रफुल्लता से उसके स्तन कम्पायमान हो रहे थे, और वह प्रसन्नता से भरी हुई वह नाना प्रकार के सत्कारों से आपको सम्मान दे रही थी। आपने एकान्त में उसे आनन्द दे कर सुखी किया।

पृष्टा वरं पुनरसाववृणोद्वराकी
भूयस्त्वया सुरतमेव निशान्तरेषु ।
सायुज्यमस्त्विति वदेत् बुध एव कामं
सामीप्यमस्त्वनिशमित्यपि नाब्रवीत् किम् ॥३॥

पृष्टा वरं	पूछे जाने पर वरदान के लिए
पुनः-असौ-	फिर इसने
अवृणोत्-वराकी	वरण किया बेचारी ने
भूयः-त्वया	फिर से आप के साथ
सुरतम्-एव	रमण ही
निशा-अन्तरेषु	रात्रियों में अन्य
सायुज्यम्-अस्तु-	सायुज्य हो
इति वदेत् बुध एव	ऐसा कहें बुद्धिमान ही
कामं	(अथवा) निश्चय ही

सामीप्यम्-अस्तु-अनिशम्-	सामीप्य हो सदा
इति-अपि-	ऐसा भी
न-अब्रवीत् किम्	नहीं कहा क्यों

आपके द्वारा वरदान मांगने के लिये पूछे जाने पर उस बेचारी ने आगामी रात्रियों में भी आपके संग रमण ही मांगा। 'सायुज्य प्राप्त हो' ऐसा वर शायद बुद्धिमान ही मांग पाएं। किन्तु वह बेचारी 'सदैव सामीप्य प्राप्त हो' ऐसा भी नहीं कहा पाई!

ततो भवान् देव निशासु कासुचिन्मृगीदृशं तां निभृतं विनोदयन् ।
अदादुपश्लोक इति श्रुतं सुतं स नारदात् सात्त्वततन्त्रविद्बभौ ॥४॥

ततः भवान् देव	तब आपने हे देव!
निशासु कासुचित्-	रात्रियों में कुछ
मृगीदृशं तां निभृतं	उस मृगाक्षी को एकान्त में
विनोदयन् अदात्-	आनन्दित कर के दिया
उपश्लोक इति	उपश्लोक इस प्रकार
श्रुतं सुतं	विख्यात पुत्र
स नारदात्	वह नारद से
सात्त्वत-तन्त्र-विद् बभौ	सात्त्वत तन्त्र विद्वान हो गया

हे देव! तब आपने उस मृगाक्षी को कुछ एकान्त रात्रियों में आनन्द दिया। उसने उपश्लोक नामक विख्यात पुत्र को जन्म दिया। नारद से सात्त्वत तन्त्र की विद्या पा कर वह उसमें निष्णात हो गया।

अक्रूरमन्दिरमितोऽथ बलोद्धवाभ्या-
मभ्यर्चितो बहु नुतो मुदितेन तेन ।
एनं विसृज्य विपिनागतपाण्डवेय-
वृत्तं विवेदिथ तथा धृतराष्ट्रचेष्टाम् ॥५॥

अक्रूर-मन्दिरम्-	अक्रूर के घर
इतः-अथ	जा कर, तब

बल-उद्धवाभ्याम्-	बलराम और उद्धव के साथ
अभ्यर्चित: बहु नुत:	समर्चित और समस्तुत हुए
मुदितेन तेन	आनन्दविभोर उस (अक्रूर) के द्वारा
एनं विसृज्य	उसको भेज कर
विपिन-आगत-	वन से आए
पाण्डवेय-वृत्तं	पाण्डवों के वृतान्तों को
विवेदिथ तथा	जाना और
धृतराष्ट्र-चेष्टाम्	धृतराष्ट्र की चेष्टाओं को

तदनन्तर आप बलराम और उद्धव के साथ अक्रूर के घर गये। आनन्दविभोर अक्रूर ने आपकी अर्चना और स्तुति की। आपने अक्रूर को भेज कर वन से लौटे हुए पाण्डवों का वृतान्त जाना और धृतराष्ट्र की चेष्टाओं के बारे में भी जाना।

विघाताज्जामातु: परमसुहृदो भोजनृपते-
र्जरासन्धे रुन्धत्यनवधिरुषान्धेऽथ मथुराम् ।
रथाद्यैर्द्योर्लब्धै: कतिपयबलस्त्वं बलयुत-
स्त्रयोविंशत्यक्षौहिणि तदुपनीतं समहृथा: ॥६॥

विघातात्-जामातु:	वध से जामाता के
परम-सुहृद:	परम मित्र के
भोज-नृपते:-	भोजराज (कंस) के
जरासन्धे रुन्धति-	जरासन्ध के घेर लेने पर (मथुरा को)
अनवधि-रुषा-अन्धे-	अदम्य क्रोध से अन्ध
अथ मथुराम्	तब मथुरा को
रथ-आद्यै:-द्यो:-लब्धै:	रथ आदि स्वर्ग से प्राप्त कर के
कतिपय-बल:-त्वं	कुछ सैनिकों से आप

बल-युत:-	बलराम सहित
त्रय:-विंशति-अक्षौहिणि	तेईस अक्षौहिणि
तत्-उपनीतं समहृथा:	उसके द्वारा लाई गई, का संहार कर दिया

अपने परम मित्र और जामाता भोजराज कंस के वध से जरासन्ध अदम्य क्रोध से अन्धा हो गया और उसने मथुरा को घेर लिया। स्वर्ग से लाए हुए रथ आदि उपकरणों और कुछ सैनिकों के साथ बलराम के साथ मिलकर आपने, जरासन्ध के द्वारा लाई गई तेईस अक्षौहिणी सेना का संहार कर दिया।

बद्धं बलादथ बलेन बलोत्तरं त्वं
भूयो बलोद्यमरसेन मुमोचिथैनम् ।
निश्शेषदिग्जयसमाहृतविश्वसैन्यात्
कोऽन्यस्ततो हि बलपौरुषवांस्तदानीम् ॥७॥

बद्धं बलात्-अथ	बन्दी (बना लिया) बलपूर्वक तब
बलेन बलोत्तरं	बलराम के द्वारा (वह) अति बलवान
त्वं भूय:	आपने फिर
बल-उद्यम-रसेन	(उसे) सेना लाने के उद्यम की भावना से
मुमोचिथ-एनं	छोड दिया इसको
निश्शेष-दिक्-	प्रत्येक दिशा से
जय-समाहृत-	विजय कर के संगृहीत
विश्व-सैन्यात्	समस्त सेना से
क:-अन्य:-तत: हि	कौन दूसरा उससे ही
बल-पौरुषवान्-	बलवान और पौरुषवान था
तदानीम्	उस समय

तब अत्यन्त बलशाली वह जरासन्ध बलराम के द्वारा बन्दी बना लिया गया। किन्तु यह इच्छा रखते हुए कि वह फिर सेना ले कर आए, आपने उसे छोड दिया। प्रत्येक दिशा के राज्यों पर विजय प्राप्त कर के जरासन्ध ने भारी सेना संगृहीत कर ली थी। इसलिये उस समय बल और पौरुष में उसके समान कौन था?

भग्नः स लग्नहृदयोऽपि नृपैः प्रणुन्नो
युद्धं त्वया व्यधित षोडशकृत्व एवम् ।
अक्षौहिणीः शिव शिवास्य जघन्थ विष्णो
सम्भूय सैकनवतित्रिशतं तदानीम् ॥८॥

भग्नः स	भग्न हुआ हुआ वह
लग्न-हृदयः-अपि	साथ में मन भी (भग्न होने पर) भी
नृपैः प्रणुन्नः	राजाओं के द्वारा प्रेरित (उसने)
युद्धं त्वया व्यधित	युद्ध आपके साथ किया
षोडशकृत्वः-एवं	सोलह बार इस प्रकार
अक्षौहिणीः	अक्षौहिणी के साथ
शिव शिव-अस्य	शिव शिव उसका
जघन्थ	संहार कर दिया
विष्णो	हे विष्णो!
सम्भूय	कुल
स-एक-नवति-त्रिशतं	वह एक नब्बे और तीन सौ (३९१)
तदानीम्	उस समय (युद्धों में)

हे विष्णो! पराजित जरासन्ध ने, जिसका मनोबल भी टूट गया था, अन्य राजाओं के द्वारा प्रेरित हो कर अक्षौहिणी सेना के साथ सोलह बार आपके साथ युद्ध किया। शिव शिव! उस समय युद्धों में आपने उसकी तीन सौ इक्यानबे सेनाओं का संहार कर दिया।

अष्टादशेऽस्य समरे समुपेयुषि त्वं
दृष्ट्वा पुरोऽथ यवनं यवनत्रिकोट्या ।
त्वष्ट्रा विधाप्य पुरमाशु पयोधिमध्ये
तत्राऽथ योगबलतः स्वजनाननैषीः ॥९॥

अष्टादशे-अस्य	अट्ठारहवें इसके (जरासन्ध के)

समरे समुपेयुषि	युद्ध के आरम्भ में
त्वं दृष्ट्वा पुरः-अथ	आपने देखा सामने तब
यवनं यवन-त्रिकोट्या	(काल) यवन को तीन करोड यवन सैनिकों (के साथ)
त्वष्ट्रा विधाप्य	विश्वकर्मा के द्वारा बनवा कर
पुरम्-आशु	नगरी को शीघ्र
पयोधि-मध्ये	समुद्र के मध्य में
तत्र-अथ योग-बलतः	वहां तब योग बल से
स्व-जनान्-अनैषीः	स्वजनों को ले गए

जरासन्ध द्वारा अट्ठारहवें युद्ध का प्रारम्भ करने के पहले आपने सामने कालयवन को देखा जो तीन करोड यवन सैनिकों को ले कर उपस्थित था। तब आपने विश्वकर्मा से समुद्र के बीच में (द्वारका) पुरी का निर्माण करवाया और अपने योग बल से स्वजनों को वहां ले गए।

पदभ्यां त्वां पद्ममाली चकित इव पुरान्निर्गतो धावमानो
म्लेच्छेशेनानुयातो वधसुकृतविहीनेन शैले न्यलैषीः ।
सुप्तेनांघ्र्याहतेन द्रुतमथ मुचुकुन्देन भस्मीकृतेऽस्मिन्
भूपायास्मै गुहान्ते सुललितवपुषा तस्थिषे भक्तिभाजे ॥१०॥

पदभ्यां त्वं	पैदल ही आप
पद्ममाली	कमल माला धारण किये हुए
चकित इव	किंकर्तव्यविमूढ के समान
पुरात्-निर्गतः धावमानः	नगरी से निकल कर भागते हुए
म्लेच्छ-ईशेन-अनुयातः	यवन राजा के द्वारा पीछा किए जाते हुए
वध-सुकृत-विहीनेन	(आप के द्वारा) मारे जाने के पुण्य से विहीन
शैले न्यलैषीः	पर्वत गुहा में ले जाया गया
सुप्तेन-अंघ्रया-हतेन	सोए हुए, पैर से मारे गए ने

द्रुतम्-अथ मुचुकुन्देन	शीघ्र ही तब मुचुकुन्द ने
भस्मी-कृते-अस्मिन्	भस्म कर दिया उसको
भूपाय-अस्मै गुहान्ते	राजा (मुचुकुन्द) के लिए, गुफा में
सुललित-वपुषा	सुमनोहर वेष में
तस्थिषे भक्तिभाजे	उपस्थित हुए (आप) भक्तिमान के लिए

पद्मों की माला धारण किए हुए आप किंकर्तव्यविमूढ के समान पैदल ही भागने लगे। कालयवन आपका पीछा करने लगा। आप उसे एक पर्वत गुफा में ले गए। वहां राजा मुचुकुन्द सो रहे थे। आपके द्वारा मारे जाने के पुण्य से वञ्चित कालयवन ने, राजा पर चरण प्रहार किया और तत्क्षण राजा के द्वारा भस्मीभूत कर दिया गया। तब आप भक्तिमान राजा मुचुकुन्द के लिए सुमनोहर वेष में गुफा में प्रकट हुए।

ऐक्ष्वाकोऽहं विरक्तोऽस्म्यखिलनृपसुखे त्वत्प्रसादैककाङ्क्षी
हा देवेति स्तुवन्तं वरविततिषु तं निस्पृहं वीक्ष्य हृष्यन् ।
मुक्तेस्तुल्यां च भक्तिं धुतसकलमलां मोक्षमप्याशु दत्वा
कार्यं हिंसाविशुद्ध्यै तप इति च तदा प्रात्थ लोकप्रतीत्यै ॥११॥

ऐक्ष्वाक:-अहं	इक्ष्वाकु (वंश) का हूं मैं
विरक्त:-अस्मि-	वैरागी हूं
अखिल-नृप-सुखे	समस्त राज्य भोगों से
त्वत्-प्रसाद-	आपका अनुग्रह की
ऐक-काङ्क्षी	केवलमेव आकाङ्क्षा करता हूं
हा देव-इति	हा देव! इस प्रकार
स्तुवन्तम्	स्तुति करते हुए
वर-विततिषु तं निस्पृहम्	वर समूहों में उसको नि:स्पृह
वीक्ष्य हृष्यन्	देख कर प्रसन्न हो कर
मुक्ते:-तुल्यां च भक्तिं	मुक्ति के समान ही भक्ति

धुत-सकल-मलां	(जो) परिष्कृत करने वाली सभी पापों को
मोक्षम्-अपि-आशु दत्वा	मोक्ष भी तुरन्त दे कर
कार्यं हिंसा-विशुद्ध्यै	करना चाहिये हिंसा शोधन के लिए
तप इति च तदा	तपस्या इस प्रकार और तब
प्रात्थ लोक-प्रतीत्यै	कहा लोक कल्याण के लिए

हा देव! मैं इक्ष्वाकु वंश का हूं। समस्त राजसीय भोगों से विरक्त हूं। केवलमेव आपके अनुग्रह की आकांक्षा रखता हूं।' इस प्रकार स्तुति करते हुए राजा मुचुकुन्द को देख कर और समस्त वरों मे स्पृहा रहित जान कर आप प्रसन्न हो गए। तुरन्त आपने पापों को नष्ट करने वाली मुक्ति के समान भक्ति दे दी और सभी पापों का परिष्करण करने वाला मोक्ष भी प्रदान कर दिया। इसके पश्चात लोक कल्याण के लिये अपने उसे क्षात्र धर्म जनित हिंसा के शोधन के लिए तपस्या करने का आदेश भी दिया।

तदनु मथुरां गत्वा हत्वा चमूं यवनाहृतां
मगधपतिना मार्गे सैन्यैः पुरेव निवारितः ।
चरमविजयं दर्पायास्मै प्रदाय पलायितो
जलधिनगरीं यातो वातालयेश्वर पाहि माम् ॥१२॥

तदनु मथुरां गत्वा	तदनन्तर मथुरा जा कर
हत्वा चमूं	संहार करके सेना का
यवन-आहृतां	(जो) यवन के द्वारा लाई गई थी
मगधपतिना	मगधपति (जरासन्ध) ने
मार्गे सैन्यैः पुरा-इव	मार्ग में सेना के द्वारा पहले की ही भांति
निवारितः	रोक दिया (आपको)
चरम-विजयम्	अन्तिम विजय
दर्पाय-अस्मै	गर्व के लिए उसके
प्रदाय पलायितः	दे कर भाग गए
जलधि-नगरीं यातः	समुद्र नगरी (द्वारका) को चले गए

वातालयेश्वर	हे वातालयेश्वर!
पाहि माम्	रक्षा करें मेरी

तदनन्तर, आपने मथुरा जा कर यवनों द्वारा लाई हुई सेना का संहार किया। फिर आपके द्वारका जाते समय जरासन्ध ने अपनी सेना द्वारा आपका मार्ग रोक लिया। उसके गर्व को पोषित करने के लिए आपने उसे एक अन्तिम विजय दे दी और पलायन कर के समुद्र नगरी द्वारका चले गए। हे वतालयेश्वर! मेरी रक्षा करें।

दशक ७८

त्रिदिववर्धकिवर्धितकौशलं त्रिदशदत्तसमस्तविभूतिमत् ।
जलधिमध्यगतं त्वमभूषयो नवपुरं वपुरञ्चितरोचिषा ॥१॥

त्रिदिव-वर्धकि-	स्वर्ग के निर्माता (विश्वकर्मा) के
वर्धित-कौशलं	अपूर्व कौशल से (निर्मित)
त्रिदश-दत्त-	देवताओं द्वारा प्रदत्त
समस्त-विभूतिमत्	अखिल विभूति वाले
जलधि-मध्यगतं	समुद्र के मध्य में स्थित
त्वम्-अभूषय:	आपने विभूषित किया
नव-पुरं	नवीन पुरी को
वपु:-अञ्चित-	(अपने) स्वरूप की असामान्य
रोचिषा	कान्ति से

स्वर्ग के निर्माता विश्वकर्मा के अपूर्व कौशल द्वारा रचित, और देवताओं द्वारा प्रदत्त अखिल विभूति वाली, समुद्र के मध्य स्थित नवीन पुरी को आपने अपनी असामान्य कान्ति से विभूषित किया।

ददुषि रेवतभूभृति रेवतीं हलभृते तनयां विधिशासनात् ।
महितमुत्सवघोषमपूपुष: समुदितैर्मुदितै: सह यादवै: ॥२॥

ददुषि	दे दिया
रेवत-भूभृति	रेवत राजा ने
रेवतीं हलभृते	रेवती को बलराम के लिए
तनयां	पुत्री को
विधि-शासनात्	ब्रह्मा की आज्ञा से
महितम्-उत्सव-	महान उत्सव को

घोषम्-अपूपुष:	उत्साह से सम्पन्न किया
समुदितै:-मुदितै:	एकत्रित हुए प्रसन्न
सह यादवै:	यादवों के साथ

रेवत नरेश ने अपनी पुत्री रेवती का विवाह बलराम के साथ कर दिया। प्रसन्न यादवों के साथ एकत्रित होकर आपने वह महान उत्सव अत्यन्त उत्साह और आनन्द से सम्पन्न किया।

अथ विदर्भसुतां खलु रुक्मिणीं प्रणयिनीं त्वयि देव सहोदर: ।
स्वयमदित्सत चेदिमहीभुजे स्वतमसा तमसाधुमुपाश्रयन् ॥३॥

अथ विदर्भ-सुतां	तदनन्तर, विदर्भ पुत्री
खलु रुक्मिणीं	नि:सन्देह रुक्मिणी को
प्रणयिनीं त्वयि	(जो) अनुरक्त थी आपमें
देव सहोदर:	हे देव! (उसके) भाई
स्वयम्-अदित्सत	स्वयं ही कृत निश्चय थे देने के लिए
चेदि-महीभुजे	चेदि राज (शिशुपाल) को
स्व-तमसा	निज के तमो गुण के कारण
तम्-असाधुम्-	उस दुर्जन का
उपाश्रयन्	आश्रय लेते हुए

तदन्तर, विदर्भराज (भीष्मक) की कन्या रुक्मिणी निस्सन्देह आप में ही अनुरक्त थी। उसके भाई रुक्मी ने किन्तु स्वेच्छा ही से रुक्मिणी को शिशुपाल को देने का निश्चय कर लिया था। तमोगुणी रुक्मी ने उस दुर्जन का आश्रय भी ले लिया था।

चिरधृतप्रणया त्वयि बालिका सपदि काङ्क्षितभङ्गसमाकुला ।
तव निवेदयितुं द्विजमादिशत् स्वकदनं कदनङ्गविनिर्मितं ॥४॥

चिर-धृत-प्रणया	चिर काल से धारण करने वाली अनुराग
त्वयि बालिका	आपमें वह बालिका

सपदि	तुरन्त
काङ्क्षित-भङ्ग-	मनोकाङ्क्षा को भङ्ग (होते हुए जान कर)
समाकुला	व्याकुल हो गई
तव निवेदयितुम्	आपको निवेदन करने के लिए
द्विजम्-आदिशत्	ब्राह्मण को आदेश दिया
स्व-कदनं	निज की व्यथा को
कदन-अङ्ग-	निर्दयी कामदेव के द्वारा
विनिर्मितम्	रचित

बालिका रुक्मिणी चिरकाल से आपमें अनुरक्त थी। सहसा अपना मनोरथ भङ्ग होता जान कर वह व्याकुल हो गई। उसने ब्राह्मण को आदेश दिया कि वह निर्दयी कामदेव द्वारा रचित उसकी मनोव्यथा को आपके समक्ष निवेदित करे।

द्विजसुतोऽपि च तूर्णमुपाययौ तव पुरं हि दुराशदुरासदम् ।
मुदमवाप च सादरपूजित: स भवता भवतापहृता स्वयम् ॥५॥

द्विज-सुत:-अपि	ब्राह्मण कुमार भी
च तूर्णम्-उपाययौ	और शीघ्र ही पहुंच गए
तव पुरं हि	आपकी नगरी में ही
दुराश-दुरासदं	दुर्जनों के लिए दुर्गम
मुदम्-अवाप च	प्रसन्नता को पाया और
सादर-पूजित:	सादर पूजित हुए
स भवता	वह आपके द्वारा
भव-ताप-हृता	(जो) तापों के हर्ता हैं
स्वयम्	स्वयं

आपकी उस नगरी में जहां दुर्जनों का प्रवेश असाध्य है, ब्राह्मण कुमार शीघ्र ही पहुंच गए। समस्त तापों के हर्ता आपके द्वारा सादर पूजित और सम्मानित हो कर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए।

स च भवन्तमवोचत कुण्डिने नृपसुता खलु राजति रुक्मिणी ।
त्वयि समुत्सुकया निजधीरतारहितया हि तया प्रहितोऽस्म्यहम् ॥६॥

स च	वह और
भवन्तम्-अवोचत	आपको बोला
कुण्डिने	कुण्डिन में
नृप-सुता खलु	राज कन्या निश्चय ही
राजति रुक्मिणी	सुशोभित है रुक्मिणी
त्वयि समुत्सुकया	आपमें अत्यन्त अनुरक्त (उसके) द्वारा
निज-धीरता-रहितया	स्वयं की धीरता रहिता के द्वारा
हि तया प्रहित:-	ही उसके द्वारा भेजा गया
अस्मि-अहम्	हूं मैं

उसने आपसे कहा 'कुण्डिन में रुक्मिणी नामक राज कन्या सुशोभित है। निश्चित रूप से वह आप में अत्यन्त अनुरक्त है। आपको न पाने के भय से शंकित हो कर वह अपना धैर्य खो बैठी है। मैं उसी के द्वारा मैं भेजा गया हूं।'

तव हृताऽस्मि पुरैव गुणैरहं हरति मां किल चेदिनृपोऽधुना ।
अयि कृपालय पालय मामिति प्रजगदे जगदेकपते तया ॥७॥

तव हृता-अस्मि	आपकी हरण की हुई हूं (मैं)
पुरा-एव	पहले ही
गुणै:-अहं	(आपके) गुणों के द्वारा
हरति मां किल	हरण कर रहा है मेरा निश्चय ही
चेदि-नृप:-अधुना	चेदिराज इस समय

अयि कृपालय (कृपा-आलय)	अयि कृपालय
पालय माम्-इति	रक्षा करें मेरी इस प्रकार
प्रजगदे	प्रार्थना की गई
जगदेकपते (जगत्-एक-पते)	हे जगत के एकमात्र पालक!
तया	उसके द्वारा

पहले से ही मैं आपके गुणों द्वारा हर ली गई हूं। इस समय चेदिराज निश्चित रूप से मेरा हरण कर रहा है। अयि कृपालय! मेरी रक्षा करें।' हे जगत के एकमात्र पालक! उसने आपसे इस प्रकार प्रार्थना की है।

अशरणां यदि मां त्वमुपेक्षसे सपदि जीवितमेव जहाम्यहम् ।
इति गिरा सुतनोरतनोत् भृशं सुहृदयं हृदयं तव कातरम् ॥८॥

अशरणाम्	निस्सहाय
यदि मां	यदि मुझको
त्वम्-उपेक्षसे	आप उपेक्षा करते हैं
सपदि जीवितम्-एव	तुरन्त ही जीवन का ही
जहामि-अहम्	ह्रास करूंगी मैं
इति गिरा सुतनोः-	इस प्रकार की वाणी सुन्दरी की
अतनोत् भृशं	बना दिया अत्यन्त
सुहृत्-अयं	सुहृत इस (ब्राह्मण) ने
हृदयं तव कातरम्	हृदय को आपके कातर

यदि मुझ निस्सहाय की आप उपेक्षा करते हैं तो मैं तुरन्त ही अपने जीवन का ह्रास कर दूंगी। 'सुहृद ब्राह्मण से सुन्दरी की ऐसी वाणी को सुन कर आपका हृदय अत्यन्त कातर हो उठा।

अकथयस्त्वमथैनमये सखे तदधिका मम मन्मथवेदना ।
नृपसमक्षमुपेत्य हराम्यहं तदयि तां दयितामसितेक्षणाम् ॥९॥

अकथय:-	कहा
त्वम्-अथ-एनम्-	आपने तब उसको
अये सखे	अये सखे
तत्-अधिका	उससे अधिक
मम मन्मथ-वेदना	मेरी काम वेदना है
नृप समक्षम्-	राजाओं के सामने
उपेत्य हरामि-अहं	पहुंच कर हरण करूंगा मैं
तत्-अयि तां	उस अयि उसको
दयिताम्-असित-ईक्षणाम्	प्रियतमा को कजरारे नेत्रों वाली को

तब आपने उससे कहा 'हे सखे! मेरी काम वेदना उससे भी अधिक है। राजाओं के समक्ष पहुंच कर, हे सखे! मैं उस कजरारे नेत्रों वाली को हर लाऊंगा।'

प्रमुदितेन च तेन समं तदा रथगतो लघु कुण्डिनमेयिवान् ।
गुरुमरुत्पुरनायक मे भवान् वितनुतां तनुतां निखिलापदाम् ॥१०॥

प्रमुदितेन च	आनन्द मग्न और
तेन समं तदा	उसके साथ उस समय
रथ-गत: लघु	रथ आरूढ हो कर शीघ्र
कुण्डिनम्-एयिवान्	कुण्डिन को पहुंचे
गुरुमरुत्पुरनायक	हे गुरुमरुत्पुरनायक!
मे भवान्	मेरे, आप
वितनुतां तनुतां	कृपा कर क्षीण कीजिए
निखिल-आपदाम्	समस्त आपदाओं को

आनन्द विभोर हो कर आप उसके साथ रथ पर आरूढ हो शीघ्र ही कुण्डिन पहुंचे। हे गुरुमरुत्पुरनायक! कृपा करके मेरी समस्त आपदाएं क्षीण कर दीजिए।

दशक ७९

बलसमेतबलानुगतो भवान् पुरमगाहत भीष्मकमानित: ।
द्विजसुतं त्वदुपागमवादिनं धृतरसा तरसा प्रणनाम सा ।।१॥

बल-समेत-	सेना के सहित
बल-अनुगत:	बलराम (जो) पीछे आए थे
भवान्	आप ने
पुरम्-अगाहत	नगर (कुण्डिन) में प्रवेश किया
भीष्मक-मानित:	भीष्मक के द्वारा सम्मानित हुए
द्विज-सुतं	ब्राह्मण कुमार को
त्वत्-उपागम-वादिनं	(जिसने) आपके आगमन की सूचना दी
धृतरसा तरसा	हर्षित (रुक्मिणी) ने वेग से
प्रणनाम सा	प्रणाम किया उसने

सेना के साथ पीछे पीछे आते हुए बलराम के संग साथ आपने कुण्डिन नगर में प्रवेश किया। भीष्मक ने आपका सम्मानपूर्वक स्वागत किया। ब्राह्मण कुमार ने रुक्मिणी को आपके आगमन की सूचना दी, और हर्षित रुक्मिणी ने तुरन्त उसको प्रणाम किया।

भुवनकान्तमवेक्ष्य भवद्वपुर्नृपसुतस्य निशम्य च चेष्टितम् ।
विपुलखेदजुषां पुरवासिनां सरुदितैरुदितैरगमन्निशा ॥२॥

भुवन-कान्तम्-अवेक्ष्य	त्रिभुवन सुन्दर (आपको) देख कर
भवत्-वपु:-	आपके स्वरूप को
नृप-सुतस्य	राजा के पुत्र (रुक्मी) की
निशम्य च चेष्टितम्	सुन कर चेष्टाओं को
विपुल-खेद-जुषाम्	अत्यन्त पीडा से अभिभूत

पुर-वासिनां	पुरवासियों की
सरुदितैः-उदितैः-	विलाप करते हुए वार्ता से
अगमत्-निशा	व्यतीत हुई रात्रि

त्रिभुवन सुन्दर आपके स्वरूप को देख कर और राजा के पुत्र रुक्मी की दुष्चेष्टाओं के विषय में सुन कर पुरवासी जन पीडा से व्याकुल हो गए। इसी सन्दर्भ में विलाप-वार्ता करते हुए उन्होंने रात्रि व्यतीत की।

तदनु वन्दितुमिन्दुमुखी शिवां विहितमङ्गलभूषणभासुरा ।
निरगमत् भवदर्पितजीविता स्वपुरतः पुरतः सुभटावृता ॥३॥

तदनु वन्दितुम्-	तदनन्तर पूजा करने के लिए
इन्दुमुखी शिवां	चन्द्रवदनी (रुक्मिणी) पार्वती की,
विहित-मङ्गल-	धारण करके माङ्गलिक
भूषण-भासुरा	आभूषण और सुसज्जित हो कर
निरगमत्	निकली
भवत्-अर्पित-जीविता	आपको समर्पित जीवन वाली
स्वपुरतः पुरतः	अपनी नगरी से
सुभट-आवृता	रक्षकों से घिरी हुई

तत्पश्चात, आपको समर्पित जीवना, चन्द्रवदनी रुक्मिणी पार्वती की पूजा करने के लिए, अपने नगर से निकली। वह रक्षकों से घिरी हुई थी। उसने माङ्गलिक आभूषण धारण किये थे और भली भांति सुसज्जित थी।

कुलवधूभिरुपेत्य कुमारिका गिरिसुतां परिपूज्य च सादरम् ।
मुहुरयाचत तत्पदपङ्कजे निपतिता पतितां तव केवलम् ॥४॥

कुल-वधुभिः-उपेत्य	कुलाङ्गनाओं के साथ पहुंच कर
कुमारिका	कुमारी ने
गिरिसुतां परिपूज्य	पार्वती का सम्पूजन करके

च सादरम्	और आदर सहित
मुहुः-अयाचत	बारम्बार याचना की
तत्-पद-पङ्कजे	उनके चरण कमलों में
निपतिता	शिर रख कर
पतितां तव केवलं	पतित्व आपका केवल

कुलाङ्गनाओं के सहित गिरिजा मन्दिर पहुंच कर कुमारी रुक्मिणी ने पार्वती की आदरपूर्वक समर्चना की। उनके चरण कमलों में शिर रख कर बारम्बार आपको ही पति रूप में पाने की याचना की।

समवलोक्यकुतूहलसङ्कुले नृपकुले निभृतं त्वयि च स्थिते ।
नृपसुता निरगाद्गिरिजालयात् सुरुचिरं रुचिरञ्जितदिङ्मुखा ॥५॥

समवलोक्य-	देख कर (रुक्मिणी) को
कुतूहल-सङ्कुले	कौतुहल से अभिभूत
नृप-कुले	राज समाज के हो जाने पर
निभृतं त्वयि	एकान्त मे आपके
च स्थिते	और खडे रहने पर
नृप-सुता निरगात्-	राजकुमारी निकली
गिरिजा-आलयात्	गिरिजा मन्दिर से
सुरुचिरं	मनोहरता से
रुचिर-रञ्जित-	अपनी कान्ति से देदीप्यमान करते हुए
दिक्-मुखा	दिशाओं को

रुक्मिणी को देख कर राजसमाज कौतुहल से अभिभूत हो गया, किन्तु आप एकान्त में खडे रहे। उसी समय राजकुमारी अपनी कन्ति से दिशाओं को देदीप्यमान करती हुई मनोहर गति से, गिरिजा मन्दिर से बाहर निकली।

भुवनमोहनरूपरुचा तदा विवशिताखिलराजकदम्बया ।

त्वमपि देव कटाक्षविमोक्षणै: प्रमदया मदयाञ्चकृषे मनाक् ॥६॥

भुवन-मोहन-	त्रिभुवन को मोहित करने वाले
रूप-रुचा तदा	सुन्दर रूप से तब
विवशित-अखिल-	असहाय हो गया समस्त
राज-कदम्बया	राज समाज
त्वम्-अपि देव	हे देव आप भी
कटाक्ष-विमोक्षणै:	कटाक्षों के सञ्चार से
प्रमदया	विमोहिनी के
मदयान्-चकृषे	मादकता को प्राप्त हुए
मनाक्	कुछ कुछ

उसके त्रिभुवन को मुग्ध कर देने वाले सुन्दर रूप को देख कर समस्त राज समाज विवश से हो गया। हे देव! विमोहिनी के कटाक्षों के सञ्चार से आप भी कुछ-कुछ मदमस्त हो गए थे।

क्वनु गमिष्यसि चन्द्रमुखीति तां सरसमेत्य करेण हरन् क्षणात् ।
समधिरोप्य रथं त्वमपाहृथा भुवि ततो विततो निनदो द्विषाम् ॥७॥

क्वनु गमिष्यसि	कहां जाओगी
चन्द्रमुखी-इति	चन्द्रमुखी इस प्रकार
तां सरसम्-एत्य	उसके मधुरता से पास आ कर
करेण हरन् क्षणात्	हाथ से हरण करके क्षण भर में
समधिरोप्य रथं	बैठा कर रथ में
त्वम्-अपाहृथा	आपने अपहरण कर लिया
भुवि तत: वितत:	विश्व में इससे विस्तृत हो गया

निनदः द्विषाम्	कोलाहल शत्रुओं का

उसके पास जा कर मधुरता से 'कहां जाओगी, चन्द्रमुखी?' कह कर हाथ से हरण कर के क्षण भर में रथ में बैठा कर आपने उसका अपहरण कर लिया। इस घटना से शत्रु राजाओं में विश्व भर में कोलाहल फैल गया।

क्व नु गतः पशुपाल इति क्रुधा कृतरणा यदुभिश्च जिता नृपाः ।
न तु भवानुदचाल्यत तैरहो पिशुनकैः शुनकैरिव केसरी ॥८॥

क्व नु गतः	कहां पर चला गया
पशुपाल इति	ग्वाला इस प्रकार
क्रुधा कृतरणा	कुपित हुए रण के लिए तत्पर
यदुभिः-च	यदुओं के द्वारा और
जिताः-नृपाः	जीत लिए गए राजा गण
न तु भवान्-	नहीं किन्तु आप
उदचाल्यत	विचलित हुए
तैः-अहो	उनके द्वारा अहो
पिशुनकैः	दुर्जनों के द्वारा
शुनकैः-इव केसरी	कुत्तों के द्वारा जैसे सिंह

वह ग्वाला कहां चला गया' ऐसा कहते हुए कुपित राजा गण युद्ध के लिये तत्पर हो गये। अहो! और यदुओं ने उन सभी को परास्त कर दिया। आप किन्तु उन दुर्जनों के द्वारा किञ्चित मात्र भी विचलित नही हुए जैसे कुत्तों से सिंह विचलित नहीं होता।

तदनु रुक्मिणमागतमाहवे वधमुपेक्ष्य निबध्य विरूपयन् ।
हृतमदं परिमुच्य बलोक्तिभिः पुरमया रमया सह कान्तया ॥९॥

तदनु रुक्मिणम्-	तत्पश्चात रुक्मी को
आगतम्-आहवे	(जो) आया था युद्ध के लिए
वधम्-उपेक्ष्य	(उसके) वध की उपेक्षा कर के

निबध्य विरूपयन्	बान्ध दिया और उसे कुत्सित कर दिया
हृत-मदम्	हरण कर के उसके गर्व को
परिमुच्य	छोड दिया
बल-उक्तिभिः	बलराम के कहने से
पुरम्-अयाः	(द्वारका) पुरी को आ गए
रमया सह कान्तया	रमा के साथ पत्नी के

तत्पश्चात युद्ध के लिए प्रस्तुत हो कर आए रुक्मी का वध न कर के, आपने उसे बान्ध कर कुत्सित कर दिया और उसके गर्व को हर लिया। फिर बलराम के कहने पर उसे मुक्तकर दिया और अपनी पत्नी रमा के साथ द्वारका पुरी लौट आए।

नवसमागमलज्जितमानसां प्रणयकौतुकजृम्भितमन्मथाम् ।
अरमयः खलु नाथ यथासुखं रहसि तां हसितांशुलसन्मुखीम् ॥१०॥

नव-समागम	नवीन मिलन से
लज्जित-मानसाम्	लज्जित मन वाली
प्रणय-कौतुक-	प्रेम और कौतुहल से
जृम्भित-मन्मथाम्	वर्धित कामेच्छा वाली
अरमयः खलु	(के साथ) रमण किया निश्चय ही
नाथ	हे नाथ
यथा-सुखं	यथेष्ट सुख पूर्वक
रहसि तां	एकान्त में उसको
हसित-अंशुल-सन्मुखीम्	हास मन्द रश्मि से सुन्दर मुख वाली को

उसका मन नवीन मिलन से लज्जित था। प्रेम और कौतूहल से उसकी कामेच्छा वर्धित थी। हे नाथ! मन्द स्मित की किरणों से सुशोभित मुख वाली पत्नी के साथ आपने एकान्त में यथेष्ट सुख पूर्वक रमण किया।

विविधनर्मभिरेवमहर्निशं प्रमदमाकलयन् पुनरेकदा ।

ऋजुमते: किल वक्रगिरा भवान् वरतनोरतनोदतिलोलताम् ॥११॥

विविध-नर्मभि:-	नाना प्रकार के परिहास से
एवम्-अह:-निशम्	इस प्रकार दिन रात
प्रमदम्-आकलयन्	आनन्द बढाते हुए (रुक्मिणी का)
पुन:-एकदा	फिर एक दिन
ऋजु-मते:	सरल बुद्धि वाली को
किल वक्र-गिरा	निश्चय ही टेढी वाणी से
भवान्	आपने
वर-तनो:-अतनोत्-	सुन्दर काया वाली के लिए उत्पन्न कर दी
अति-लोलताम्	अति विचलितता

इस प्रकार विविध परिहास से आप दिन रात रुक्मिणी का आनन्द बढाते रहे। फिर एक दिन सरल बुद्धि और सुन्दर काया वाली रुक्मिणी के मन को आपने वक्रोक्ति से अत्यधिक विचलित कर दिया।

तदधिकैरथ लालनकौशलै: प्रणयिनीमधिकं सुखयन्निमाम् ।
अयि मुकुन्द भवच्चरितानि न: प्रगदतां गदतान्तिमपाकुरु ॥१२॥

तत्-अधिकै:-अथ	उससे भी अधिक तब
लालन-कौशलै:	प्रेम प्रदर्शन कौशल से
प्रणयिनीम्-अधिकं	प्रियतमा को अत्यन्त
सुखयन्-इमाम्	सुखी करते हुए इसको
अयि मुकुन्द	अयि मुकुन्द!
भवत्-चरितानि	आपकी लीलाओं का
न: प्रगदतां	हम गुणगान करते हुओं का

गद-तान्तिम्-अपाकुरु	रोग जनित दु:ख दूर करें

अधिकाधिक प्रेम प्रदर्शित करने में कुशल आप इस प्रकार प्रियतमा को और अधिक सुखी करते थे। हे मुकुन्द! आपकी लीलाओं का गुणगान करने वाले हम सब के रोग जनित दु:खों का निवारण करें।

दशक ८०

सत्राजितस्त्वमथ लुब्धवदर्कलब्धं
दिव्यं स्यमन्तकमणिं भगवन्नयाची: ।
तत्कारणं बहुविधं मम भाति नूनं
तस्यात्मजां त्वयि रतां छलतो विवोढुम् ॥१॥

सत्राजित:-	सत्राजित से
त्वम्-अथ	आपने फिर
लुब्ध-वत्-	लोभी के समान
अर्क-लब्धं	सूर्य से प्राप्त
दिव्यं स्यमन्तक-मणिं	दिव्य स्यमन्तक मणि को
भगवन्-अयाची:	हे भगवन! मांगा
तत्-कारणं	उसके कारण
बहु-विधं	अनेक प्रकार के थे
मम भाति नूनं	मुझे प्रतीत होता है निश्चय ही
तस्य-आत्मजां	उसकी पुत्री को
त्वयि रतां	(जो) आपमें अनुरक्त थी
छलत: विवोढुम्	व्याज से (उससे) विवाह करने के लिए

हे भगवन! फिर आपने लोभी की भांति सत्राजित से वह दिव्य स्यमन्तक मणि मांगी जो उसे सूर्य से प्राप्त हुई थी। इसके कारण अनेक थे। किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि निश्चय ही आप उसकी पुत्री से, जो आपमें अनुरक्त थी, व्याज से विवाह करना चाहते थे।

अदत्तं तं तुभ्यं मणिवरमनेनाल्पमनसा
प्रसेनस्तद्भ्राता गलभुवि वहन् प्राप मृगयाम् ।
अहन्नेनं सिंहो मणिमहसि मांसभ्रमवशात्
कपीन्द्रस्तं हत्वा मणिमपि च बालाय ददिवान् ॥२॥

अदत्तं तं	नहीं दी वह
तुभ्यं मणिवरम्-	आपको मणि श्रेष्ठ
अनेन-अल्प-मनसा	इसने छोटे मन वाले ने
प्रसेनः-तत्-भ्राता	प्रसेन, उसके भाई ने
गल-भुवि वहन्	गले में धारण करके
प्राप मृगयाम्	गया शिकार करने के लिए
अहन्-एनम् सिंहः	मार दिया इसको सिंह ने
मणि-महसि	मणि की चमक में
मांस-भ्रम-वशात्	मांस के भ्रम के कारण
कपीन्द्रः-तं हत्वा	कपीन्द्र (जाम्बवान) ने उसको मार कर
मणिम्-अपि च	और मणि को भी
बालाय ददिवान्	बालक को दे दिया

संकीर्ण मन वाले सत्राजित ने वह बहुमूल्य मणि आपको नहीं दी। उसके भाई प्रसेन ने वह मणि गले में धारण कर ली और शिकार करने चला गया। मणि की चमक में मांस के भ्रम से एक सिंह ने उसे मार दिया। तत्पश्चात कपीन्द्र जाम्बवान ने उस सिंह को मार कर वह मणि अपने पुत्र को दे दी।

शशंसु: सत्राजिद्गिरमनु जनास्त्वां मणिहरं
जनानां पीयूषं भवति गुणिनां दोषकणिका ।
तत: सर्वज्ञोऽपि स्वजनसहितो मार्गणपर:
प्रसेनं तं दृष्ट्वा हरिमपि गतोऽभू: कपिगुहाम् ॥३॥

शशंसुः	कहने लगे
सत्राजित्-गिरम्-अनु	सत्राजित की बात का अनुकरण कर के
जनाः-त्वां मणि-हरं	लोग आपको मणि का चोर
जनानां पीयूषं	लोगों के लिए अमृत के समान

भवति गुणिनां	होता है गुण्वानों का
दोष-कणिका	दोष लेशमात्र भी
ततः सर्वज्ञः-अपि	इसलिए सब जानते हुए भी (आप)
स्व-जन-सहितः	स्वजनों के साथ
मार्गण-परः	खोजने के लिए तत्पर
प्रसेनं तं	प्रसेन को उस
दृष्ट्वा हरिम्-अपि	देख कर, सिंह को भी
गतः-अभूः	चले गए
कपि-गुहाम्	कपीन्द्र की गुफा में

सत्राजित के कहने के अनुसार लोग भी आपको मणि हर्ता कहने लगे। गुणवानों का लेशमात्र दोष भी लोगो के लिए अंमृत के समान होता है। इसलिए सब कुछ जानते हुए भी आप स्वजनों के साथ मणि को खोजने के लिए निकल पडे। मरे हुए प्रसेन और सिंह को देख कर आप कपीन्द्र जाम्बवान की गुफा में चले गए।

भवन्तमवितर्कयन्नतिवयाः स्वयं जाम्बवान्
मुकुन्दशरणं हि मां क इह रोद्धुमित्यालपन् ।
विभो रघुपते हरे जय जयेत्यलं मुष्टिभि-
श्चिरं तव समर्चनं व्यधित भक्तचूडामणिः ॥४॥

भवन्तम्-अवितर्कयन्-	आपको न पहचान कर
अति-वयाः	अत्यन्त वृद्ध होने से
स्वयं जाम्बवान्	स्वयं जाम्बवान ने
मुकुन्द-शरणं	'मुकुन्द की शरण
हि माम् कः-इह	ही मुझको कौन यहां है
रोद्धुम्-इति-आलपन्	अवरुद्ध करने के लिए?
विभो रघुपते	हे विभो रघुपते!

हरे जय जय-इति-अलं	हे हरे जय जय!' इस प्रकार बारम्बार कह्ते हुए
मुष्टिभि:-चिरं	मुष्टिकाओं से देर तक
तव समर्चनम् व्यधित	आपकी समर्चना सम्पन्न की
भक्तचूडामणि:	भक्तशिरोमणि (ने)

अत्यधिक वृद्ध हो जाने के कारण जाम्बवान स्वयं आपको पहचान नहीं सके। 'मैं सर्वथा मुकुन्द की शरण में हूं। मुझे यहां कौन अवरुद्ध कर सकता है? हे विभो रघुपते! हे हरे जय जय।' इस प्रकार कहते हुए उस भक्त शिरोमणि ने देर तक मुष्टिकाओं के प्रहार से आपकी पूजा सम्पन्न की।

बुद्ध्वाऽथ तेन दत्तां नवरमणीं वरमणिं च परिगृह्णन् ।
अनुगृह्णन्नमुमागा: सपदि च सत्राजिते मणिं प्रादा: ॥५॥

बुध्वा-अथ	पहचान कर तब
तेन दत्तां	उसके द्वारा दी हुई
नव-रमणीं	कोमल कुमारी (अपनी कन्या) को
वर-मणिं च	और श्रेष्ठ मणि को
परिगृह्णन्	स्वीकार करते हुए
अनुगृह्णन्-अमुम्-	कृपा करके उस पर
आगा: सपदि	लौट आए तुरन्त
च सत्राजिते	और सत्राजित को
मणिं प्रादा:	मणि दे दी

जाम्बवान ने आपको पहचान लेने पर अपनी कोमल कन्या और वह श्रेष्ठ मणि आपको दे दी। उसे स्वीकार करके और उस पर अनुग्रह कर के आप तुरन्त लौट आए और मणि सत्राजित को दे दी।

तदनु स खलु ब्रीलालोलो विलोलविलोचनां
दुहितरमहो धीमान् भामां गिरैव परार्पिताम् ।
अदित मणिना तुभ्यं लभ्यं समेत्य भवानपि
प्रमुदितमनास्तस्यैवादान्मणिं गहनाशय: ॥६॥

तदनु स खलु	उसके बाद वह निस्सन्देह
ब्रीलालोल:	लज्जा से आकुल
विलोल-लोचनां	चञ्चल नयनों वाली
दुहितरम्-अहो	पुत्री को अहो
धीमान्	बुद्धिमान ने
भामान्	सत्यभामा को (जो)
गिरा-एव	वचन से ही
पर-अर्पिताम्	अन्य (जन) को समर्पित थी
अदित मणिना	दे दिया मणि के साथ
तुभ्यम् लभ्यम्	आपके लिये (जो) पाने के योग्य हैं
समेत्य भवान्-अपि	पा कर आपने भी
प्रमुदित-मना:-	प्रसन्न मन से
तस्य-एव-आदात्-	उसको ही दे दी
मणिम्	मणि
गहन-आशय:	गम्भीर अभिप्राय (आपने)

लज्जित सत्राजित ने तब बुद्धीमान से अपनी लज्जा से आकुल चञ्चल नयनों वाली पुत्री सत्यभामा को, जो अन्य किसी की वाग्दत्ता थी, मणि के साथ ही, आपके योग्य हाथों में सौंप दी। उसे पा कर गम्भीर अभिप्राय वाले आपने प्रसन्नता से वह मणि सत्राजित को ही लौटा दी।

व्रीलाकुलां रमयति त्वयि सत्यभामां
कौन्तेयदाहकथयाथ कुरून् प्रयाते ।
ही गान्दिनेयकृतवर्मगिरा निपात्य
सत्राजितं शतधनुर्मणिमाजहार ॥७॥

व्रीला-आकुलां	लज्जावती के साथ

रमयति त्वयि	रमण करते हुए आपके
सत्यभामाम्	सत्यभामा (के साथ)
कौन्तेय-दाह-	कुन्ती पुत्रों के दाह की
कथया-अथ	कथा से तब
कुरून् प्रयाते	हस्तिनापुर चले जाने पर
ही	खेद है
गान्दिनेय-कृतवर्म-गिरा	अक्रूर और कृतवर्मा के कहने से
निपात्य सत्राजितं	हत्या करके सत्राजित की
शतधनुः-मणिम्-आजहार	शतधनु ने मणि छीन ली

लज्जावती सत्यभामा के साथ रमण करते हुए आपने कुन्ती पुत्रों के दाह की वार्ता सुनी और आप हस्तिनापुर चले गए। खेद है कि अक्रूर और कृतवर्मा के कहने से शतधनु ने सत्राजित की हत्या कर के मणि छीन ली।

शोकात् कुरूनुपगतामवलोक्य कान्तां
हत्वा द्रुतं शतधनुं समहर्षयस्ताम् ।
रत्ने सशङ्क इव मैथिलगेहमेत्य
रामो गदां समशिशिक्षत धार्तराष्ट्रम् ॥८॥

शोकात्	शोक मग्न
कुरून्-उपगताम्-	हस्तिनापुर आई हुई
अवलोक्य कान्तां	देख कर पत्नी को
हत्वा द्रुतं शतधनुं	वध कर के शीघ्र शतधनु का
समहर्षय:-ताम्	आनन्दित कर के उसको (सत्यभामा को)
रत्ने सशङ्क इव	मणि (के विषय) मे सशङ्कित के समान
मैथिल-गेहम्-एत्य	मिथिलेश के घर को आ कर

रामो गदां	बलराम ने गदा की
समशिशिक्षत	शिक्षा दी
धार्तराष्ट्रम्	दुर्योधन को

शोक मग्न सत्यभामा को हस्तिनापुर आई देख कर आपने शीघ्र ही शतधनु का वध कर दिया और पत्नीके हर्ष को बढाया। किन्तु मणि के विषय मे किञ्चित सशङ्कित बलराम मिथिला नरेश के घर चले गए और वहां दुर्योधन को गदा युद्ध में प्रशिक्षित किया।

अक्रूर एष भगवन् भवदिच्छयैव
सत्राजित: कुचरितस्य युयोज हिंसाम् ।
अक्रूरतो मणिमनाहृतवान् पुनस्त्वं
तस्यैव भूतिमुपधातुमिति ब्रुवन्ति ॥९॥

अक्रूर एष	अक्रूर यह
भगवन्	हे भगवन
भवत्-इच्छया-एव	आप की इच्छा ही से
सत्राजित: कुचरितस्य	सत्राजित दुराचारी का
युयोज हिंसाम्	नियुक्त किया हिंसा में
अक्रूरत: मणिम्-	अक्रूर से मणि को
अनाहृतवान् पुन:-त्वं	नहीं लिया फिर से आपने
तस्य एव भूतिम्-	उसके ही वैभव को
उपधातुम्-	उन्नत करने के लिए
इति ब्रुवन्ति	इस प्रकार कहा जाता है

हे भगवन! अक्रूर आप ही की इच्छा से दुराचारी सत्राजित के प्रति हिंसा करने में प्रेरित हुआ था। आपने उससे मणि वापस नहीं ली। ऐसा कहा जाता है कि आपने अक्सूर के वैभव की उन्नति के लिए ही ऐसा किया था।

भक्तस्त्वयि स्थिरतर: स हि गान्दिनेय-
स्तस्यैव कापथमति: कथमीश जाता ।

विज्ञानवान् प्रशमवानहमित्युदीर्णं
गर्वं ध्रुवं शमयितुं भवता कृतैव ॥१०॥

भक्तः-त्वयि	भक्त वह आप में
स्थिरतरः	दृढता से स्थित थे
स हि गान्दिनेयः	वह ही अक्रूर
तस्य-एव	उसकी भी
कापथ-मतिः	विकृत बुद्धि
कथम्-ईश जाता	कैसे हे ईश्वर उत्पन्न हो गई
विज्ञानवान्	अनन्त ज्ञानी
प्रशमवान्-अहम्-	(और) अत्यन्त निग्रही हूं (मैं)
इति-उदीर्णं गर्वं	इस प्रकार संवर्धित गर्व को
ध्रुवं शमयितुम्	निश्चय ही शमन करने के लिए
भवता कृता-एव	आपके द्वारा ऐसा किया गया

भक्त प्रवर अक्रूर आपमें दृढता से स्थित थे, हे ईश्वर! उसकी भी बुद्धि विकृत कैसे हो गई। 'मैं अनन्त ज्ञानी और अत्यन्त निग्रही हूं' अवश्यमेव, उसके ऐसे संवर्धित गर्व के शमन के लिए ही आपने ऐसा किया था।

यातं भयेन कृतवर्मयुतं पुनस्त-
माहूय तद्विनिहितं च मणिं प्रकाश्य ।
तत्रैव सुव्रतधरे विनिधाय तुष्यन्
भामाकुचान्तशयनः पवनेश पायाः ॥११॥

यातं भयेन	पलायन किए हुए भय से
कृतवर्मयुतं	कृतवर्मा के साथ
पुनः-तम्-आहूय	फिर से उसको बुलवा कर
तत्-विनिहितम् च	उस छुपी हुई

मणिम् प्रकाश्य	मणि को प्रकाशित कर के
तत्र-एव सुव्रत-धरे	वहीं पर (उस) उत्तम चरित्रवान को
विनिधाय तुष्यन्	दे कर सन्तुष्ट किया
भामा-कुचान्त-शयन:	सत्यभामा के वक्षस्थल पर शयन करने वाले
पवनेश पाया:	हे पवनेश! रक्षा करें

कृतवर्मा के साथ भय से पलायन किए हुए अक्रूर को आपने फिर से बुलवाया और उसके पास छुपी हुई मणि को प्रकाशित कर के, उत्तम चरित्रवान अक्रूर को वहीं पर, वह मणि दे कर उसे सन्तुष्ट किया। सत्यभामा के वक्षस्थल पर शयन करने वाले हे पवनेश! रक्षा करें।

दशक ८१

स्निग्धां मुग्धां सततमपि तां लालयन् सत्यभामां
यातो भूय: सह खलु तया याज्ञसेनीविवाहम् ।
पार्थप्रीत्यै पुनरपि मनागास्थितो हस्तिपुर्यां
शक्रप्रस्थं पुरमपि विभो संविधायागतोऽभू: ॥१॥

स्निग्धां मुग्धां	सुन्दरी और मनमोहिनी (को)
सततम्-अपि	सदा ही
तां लालयन्	उसको प्रेम करते हुए
सत्यभामां	सत्यभामा को
यात: भूय:	गए फिर
सह खलु तया	संग में निश्चय ही उसके
याज्ञसेनी-विवाहम्	द्रौपदी के विवाह में
पार्थ-प्रीत्यै	अर्जुन के स्नेह के कारण
पुन:-अपि	फिर भी
मनाक्-आस्थित:	कुछ (दिनों के लिए) रुक गए
हस्तिपुर्याम्	हस्तिनापुर में
शक्रप्रस्थम् पुरम्-अपि	इन्द्रप्रस्थ पुरी को भी
विभो संविधाय-	हे विभो! बसा कर
आगत:-अभू:	लौट आए

सुन्दरी और मनमोहिनी सत्यभामा का आप सदैव ही प्रेम से लालन करते रहे और उसी के साथ द्रौपदी के विवाह में हस्तिनापुर भी गए। अर्जुन के स्नेह के वशीभूत आप कुछ दिनों के लिए हस्तिनापुर में ही रुक गए। हे विभो! फिर इन्द्रप्रस्थ नगरी का निर्माण कर के और उसको बसा कर आप द्वारका लौट आए।

भद्रां भद्रां भवदवरजां कौरवेणार्थ्यमानां

त्वद्वाचा तामहृत कुहनामस्करी शक्रसूनुः ।
तत्र क्रुद्धं बलमनुनयन् प्रत्यगास्तेन सार्धं
शक्रप्रस्थं प्रियसखमुदे सत्यभामासहायः ॥२॥

भद्रां भद्रां	कल्याणी सुभद्रा को
भवत्-अवरजां	आपकी छोटी बहन को
कौरवेण-अर्थ्यमानाम्	कौरव (दुर्योधन) (जिसको) मांग रहा था
त्वत्-वाचा	आपके कहने से
ताम्-अहृत	उसका अपहरण कर लिया
कुहना-मस्करी	छद्म सन्यासी
शक्रसूनुः	इन्द्र के पुत्र (अर्जुन) ने
तत्र क्रुद्धम् बलम्-	वहां पर कुपित हुए बलराम को
अनुनयन् प्रत्यगाः-	मना कर (आप) चले गए
तेन सार्धम्	उसके साथ
शक्रप्रस्थम्	इन्द्रप्रस्थ को
प्रिय-सख-मुदे	प्रिय मित्र (अर्जुन) की प्रसन्नता के लिए
सत्यभामा-सहायः	सत्यभामा के साथ

आपकी छोटी बहन कल्याणी सुभद्रा को कौरव दुर्योधन मांग रहा था। आपके कहने से इन्द्र पुत्र अर्जुन ने सन्यासी के छद्म वेष में उसका हरण कर लिया। इस पर बलराम कुपित हो गए। आपने अनुनय से उन्हें मना लिया। फिर उनके और सत्यभामा के साथ अपने प्रिय मित्र अर्जुन की प्रसन्नता के लिए आप इन्द्रप्रस्थ चले गए।

तत्र क्रीडन्नपि च यमुनाकूलदृष्टां गृहीत्वा
तां कालिन्दीं नगरमगमः खाण्डवप्रीणिताग्निः ।
भ्रातृत्रस्तां प्रणयविवशां देव पैतृष्वसेयीं
राज्ञां मध्ये सपदि जहृषे मित्रविन्दामवन्तीम् ॥३॥

तत्र क्रीडन्-अपि च	वहां खेलती हुई भी और

यमुना-कूल-दृष्टां	यमुना के किनारे देखी गई
गृहीत्वा तां कालिन्दीम्	ले कर उस कालिन्दी को
नगरम्-अगम:	नगर को चले गए
खाण्डव-प्रीणित-अग्नि:	खाण्डव (वन के दाह) से सन्तुष्ट करके अग्नि को
भ्रातृ-त्रस्ताम्	भाइयों से संत्रस्त
प्रणय-विवशाम्	प्रेम से विवश
देव पैतृष्वसेयीं	हे देव! पिता की बहन की पुत्री को
राज्ञां मध्ये	राजाओं के बीच से
सपदि जहृषे	शीघ्र ही हरण कर लिया
मित्रविन्दाम्-अवन्तीम्	मित्रवृन्दा अवन्ती राजकुमारी को

यमुना के किनारे खेलती हुई कालिन्दी को आपने देखा और उसे ले कर नगर चले गए। तत्पश्चात खाण्डव वन का दाह करके आपने अग्नि देव को सन्तुष्ट किया। हे देव! अपने पिता की भगिनी की पुत्री, अवन्ती की राजकुमारी, मित्रवृन्दा का, जो आपमें अनुरक्त थी और अपने भाईयों से संत्रस्त थी, अनेक राजाओं के मध्य से आपने हरण कर लिया।

सत्यां गत्वा पुनरुदवहो नग्नजिन्नन्दनां तां
बध्वा सप्तापि च वृषवरान् सप्तमूर्तिर्निमेषात् ।
भद्रां नाम प्रददुरथ ते देव सन्तर्दनाद्या-
स्तत्सोदर्या वरद भवत: साऽपि पैतृष्वसेयी ॥४॥

सत्यां गत्वा	सत्या के पास जा कर
पुन:-उदवह:	फिर विवाह किया
नग्नजित्-नन्दनां तां	नग्नजित नन्दिनी उससे (सत्या से)
बध्वा सप्त-अपि	और भी नथ कर सात ही
च वृष-वरान्	श्रेष्ठ बैलों को
सप्त-मूर्ति:-निमेषात्	सात स्वरूप में पल भर में

भद्रां नाम	भद्रा नाम की
प्रददु:-अथ	दे दी तब फिर
ते देव	आपको हे देव!
सन्तर्दन-आद्या:-	सन्तर्दन आदि
तत्-सोदर्या	उसके भाइयों ने
वरद भवत:	हे वरद! आपके लिए
सा-अपि पैतृष्वसेयी	वह भी आपके पिताकी भगिनी की पुत्री थी

हे देव! सत्या नगरी जा कर, सात स्वरूपों में, सात श्रेष्ठ बैलों को पल भर में नथ कर आपने नग्नजित नन्दिनी सत्या से विवाह किया। हे वरद! फिर आपके पिता की भगिनी की पुत्री भद्रा को, उसके भाई सन्तर्दन आदि ने आपको दे दिया।

पार्थाद्यैरप्यकृतलवनं तोयमात्राभिलक्ष्यं
लक्षं छित्वा शफरमवृथा लक्ष्मणां मद्रकन्याम् ।
अष्टावेवं तव समभवन् वल्लभास्तत्र मध्ये
शुश्रोथ त्वं सुरपतिगिरा भौमदुश्चेष्टितानि ॥५॥

पार्थ-आद्यै:-अपि	अर्जुन आदि से भी
अकृत-लवनं	नहीं भेदी गई
तोय-मात्र-अभिलक्ष्यं	जल में ही दिखने वाली (प्रतिबिम्बित)
लक्षं छित्वा	लक्ष्य का छेदन कर के
शफरम्-अवृथा	मत्स्य का, विवाह किया
लक्ष्मणां मन्द्रकन्याम्	लक्ष्मणा मन्द्रकन्या से
अष्टौ-एवम्	आठ इस प्रकार
तव समभवन्	आपकी हो गईं
वल्लभा:-तत्र	पटरानियां वहां

मध्ये शुश्रुथ	इसी बीच सुना
त्वं सुरपति-गिरा	आपने इन्द्र के वचनों से
भौम-दुष्टचेष्टितानि	भौमासुर के क्रूर कर्मों के बारे में

अर्जुन आदि भी जल में प्रतिबिम्बित मत्स्य का लक्ष्य भेद नहीं कर सके थे, उस लक्ष्य का छेदन करके आपने मन्द्र कन्या लक्ष्मणा से विवाह किया। इस प्रकार आपकी आठ पटरानियां हो गईं। इसी बीच इन्द्र के वचनों से आपको भौमासुर के क्रूर कर्मों की सूचना मिली।

स्मृतायातं पक्षिप्रवरमधिरूढस्त्वमगमो
वहन्नङ्के भामामुपवनमिवारातिभवनम् ।
विभिन्दन् दुर्गाणि त्रुटितपृतनाशोणितरसै:
पुरं तावत् प्राग्ज्योतिषमकुरुथा: शोणितपुरम् ॥६॥

स्मृत-आयातं	याद करने पर ही आ जाने वाले
पक्षिप्रवरम्-	दिव्य पक्षी (गरुड) पर
अधिरूढ:-त्वम्-अगम:	चढ कर आप गए
वहन्-अङ्के	उठा कर अङ्क में
भामाम्-उपवनम्-इव-	सत्यभामा को वाटिका के समान
अराति-भवनम्	शत्रु के महल में
विभिन्दन् दुर्गाणि	भेद कर दुर्गों को
त्रुटित-पृतना-	हनन करके सेना का
शोणित-रसै:	रक्त की धारा से
पुरं तावत्	नगरी को तब
प्राग्ज्योतिषम्-	प्राग्ज्योतिष को
अकुरुथा:	कर डाला
शोणितपुरम्	शोणितपुर

स्मरण मात्र से ही उपस्थित हो जाने वाले दिव्य पक्षी पर आरूढ हो कर, सत्यभामा को अङ्क में लिए हुए शत्रु के महल में ऐसे चले गए जैसे किसी वाटिका में जा रहे हों। वहां उसके दुर्गों को भेद कर और सेनाओं का हनन कर के रक्त की धारा से प्राग्ज्योतिष पुर को शोणितपुर बना डाला।

मुरस्त्वां पञ्चास्यो जलधिवनमध्यादुदपतत्
स चक्रे चक्रेण प्रदलितशिरा मङ्क्षु भवता ।
चतुर्दन्तैर्दन्तावलपतिभिरिन्धानसमरं
रथाङ्गेन छित्वा नरकमकरोस्तीर्णनरकम् ॥७॥

मुरः-त्वां	(असुर) मुर आपको
पञ्च-आस्यः	पांच मुख वाला
जलधि-वन-मध्यात्-	समुद्र वन के बीच से
उदपतत्	उछल कर
स चक्रे चक्रेण	उसने कर दिया (आक्रमण), चक्र से
प्रदलित-शिरा	कटे हुए शिर वाला
मङ्क्षु भवता	निमिष मात्र में (हो गया) आपके द्वारा
चतुः-दन्तैः-	चार दांतों वाले
दन्तावलपतिभिः-	हाथियों के द्वारा
इन्धान-समरं	उपस्थित होने पर युद्ध में
रथाङ्गेन छित्वा	चक्र से छिन्न कर के
नरकम्-अकरोः-	नरकासुर को कर दिया
तीर्ण-नरकम्	सन्तीर्ण नरक से

पांच मुख वाले असुर मुर ने समुद्र के समान वन में से सहसा निकल कर आप पर आक्रमण कर दिया। निमिष मात्र में ही आपने उसका शिर काट डाला। तदनन्तर चार दांतों वाले हाथियों को लेकर नरकासुर युद्ध भूमि में उपस्थित हो गया और देर तक भीषण युद्ध करता रहा। उसका भी मस्तक आपने चक्र से छिन्न कर उसे नरक से संतीर्ण कर दिया।

स्तुतो भूम्या राज्यं सपदि भगदत्तेऽस्य तनये

गजञ्चैकं दत्वा प्रजिघयिथ नागान्निजपुरीम् ।
खलेनाबद्धानां स्वगतमनसां षोडश पुन:
सहस्राणि स्त्रीणामपि च धनराशिं च विपुलं ॥८॥

स्तुत: भूम्या	स्तुति की भूमि ने (आपकी)
राज्यं सपदि	राज्य को तुरन्त
भगदत्ते-अस्य तनये	भगदत्त, इसके पुत्र को
गजम्-च-एकं	और एक हाथी
दत्वा प्रजघयिथ	दे कर भेज दिया
नागान्-निज-पुरीम्	(शेष) हाथियों को अपनी पुरी (द्वारका) को
खलेन-आबद्धानाम्	दुष्ट के द्वारा बन्दी बनाई हुई
स्वगत-मनसां	आपमें दत्त चित्त
षोडश पुन: सहस्राणि	सोलह फिर सहस्र (१६०००)
स्त्रीणाम्-अपि च	स्त्रियों को भी
धन-राशिं च विपुलं	और विपुल धन राशि (भेज दिया)

भूमि देवी ने आपकी स्तुति की। नरकासुर के पुत्र भगदत्त को आपने एक हाथी और राज्य दे कर तुरन्त भेज दिया। शेष हाथियों को, और दुष्ट नरकासुर के द्वारा बन्दी बनाई हुई आपमें दत्त चित्त सोलह हजार स्त्रियों को, प्रचूर धन राशि के साथ आपने अपनी नगरी द्वारका भेज दिया।

भौमापाहृतकुण्डलं तददितेर्दातुं प्रयातो दिवं
शक्राद्यैर्महित: समं दयितया द्युस्त्रीषु दत्तह्रिया ।
हृत्वा कल्पतरुं रुषाभिपतितं जित्वेन्द्रमभ्यागम-
स्तत्तु श्रीमददोष ईदृश इति व्याख्यातुमेवाकृथा: ॥९॥

भौम-अपाहृत-कुण्डलं	भौमासुर के द्वारा छीने गए कुण्डलों को
तत्-अदिते:-दातुं	उनको अदिति को देने के लिए
प्रयात: दिवम्	प्रस्थान किया स्वर्ग को

शक्र-आद्यैः-महितः	इन्द्र आदि (देवों) से समादृत
समं दयितया	संग में पत्नी (सत्यभामा) के
द्यु-स्त्रीषु	स्वर्ग की स्त्रियों में
दत्त-ह्रिया	देने वाली लज्जा
हृत्वा कल्पतरुम्	ले कर कल्पतरु को
रुषा-अभिपतितं	क्रोध से आक्रमण करते हुए
जित्वा-इन्द्रम्-	जीत कर इन्द्र को
अभ्यागमः-	लौट आए
तत्-तु श्री-मद-दोष	वह तो वैभव के मद के दोष (के फल स्वरूप)
ईदृश इति	इस प्रकार होता है ऐसा
व्याख्यातुम्-एव-अकृथाः	घोषित करने के लिए ही किया

भौमासुर द्वारा छीने गए कुण्डल अदिति को देने के लिए आपने स्वर्ग को प्रस्थान किया। वहां इन्द्र आदि देवताओं ने आपका और आपकी पत्नी सत्यभामा का, जो अपने सौन्दर्य से स्वर्ग की स्त्रियों को भी लज्जित करती थी, का आदर सम्मान किया। आपके द्वारा कल्पतरु ले आने पर इन्द्र ने क्रोध से आप पर आक्रमण कर दिया। उसे जीत कर आप लौट आए। आपका यह कृत्य यही घोषणा करने के लिए था कि सम्पन्नता के मद के दोष का फल ऐसा ही होता है।

कल्पद्रुं सत्यभामाभवनभुवि सृजन् द्व्यष्टसाहस्रयोषाः
स्वीकृत्य प्रत्यगारं विहितबहुवपुर्लालयन् केलिभेदैः ।
आश्चर्यान्नारदालोकितविविधगतिस्तत्र तत्रापि गेहे
भूयः सर्वासु कुर्वन् दश दश तनयान् पाहि वातालयेश ॥१०॥

कल्पद्रुं	कल्प वृक्ष को
सत्यभामा-भवन-भुवि	सत्यभामा के भवन के उद्यान में
सृजन्	लगा कर
द्व्य-अष्ट-साहस्र-	द्वि-अष्ट-सहस्र (१६०००)

योषा: स्वीकृत्य	स्त्रियों को (पत्नी रूप में) स्वीकार कर के
प्रति-आगारं	प्रत्येक के घर में
विहित-बहु-वपुः-	धारण कर के अनेक शरीर
लालयन् केलिभेदै:	(उनका) पोषण करते हुए विविध क्रीडाओं से
आश्चर्यात्-नारद-	आश्चर्य से नारद ने
आलोकित-विविध-गतिः-	देखी (आपकी) नाना गति विधियां
तत्र तत्र-अपि गेहे	उन उन भी घरों में
भूय: सर्वासु कुर्वन्	फिर सभी में करके
दश दश तनयान्	दस दस पुत्रों को
पाहि वातालयेश	रक्षा करें हे वातालयेश!

कल्प वृक्ष को सत्यभामा के भवन के उद्यान में लगा कर, आपने सोलह हजार स्त्रियों को पत्नी रूप में स्वीकार किया। अनेक शरीर धारण करके, प्रत्येक के घर में विविध क्रीडाओं से आप उनका पालन पोषण करने लगे। नारद ने आश्चर्य चकित हो कर उन सभी घरों में आपकी नाना प्रकार की गति विधियों को देखा। फिर आपने उन सभी पत्नियों से दस दस पुत्रों को जन्म दिया। रक्षा करें हे वातालयेश!

दशक ८२

प्रद्युम्नो रौक्मिणेय: स खलु तव कला शम्बरेणाहृतस्तं
हत्वा रत्या सहाप्तो निजपुरमहरद्रुक्मिकन्यां च धन्याम् ।
तत्पुत्रोऽथानिरुद्धो गुणनिधिरवहद्रोचनां रुक्मिपौत्रीं
तत्रोद्वाहे गतस्त्वं न्यवधि मुसलिना रुक्म्यपि द्यूतवैरात् ॥१॥

प्रद्युम्न: रौक्मिणेय:	प्रद्युम्न रुक्मिणी के पुत्र ने
स खलु तव कला	वह निस्सन्देह आप ही की कला था
शम्बरेण-आहृत:-	(उसका) शम्बर ने हरण कर लिया
तं हत्वा	उसको मार कर
रत्या सह-आप्त:	रति के साथ लौट कर
निजपुरम्-	अपनी पुरी को
अहरत्-रुक्मि-कन्यां	हरण कर लिया रुक्मी की कन्या को
च धन्यां	और भाग्यशालीनी को
तत्-पुत्र:-अथ-	उसका पुत्र तब
अनिरुद्ध: गुणनिधि:-	अनिरुद्ध जो गुणों के भण्डार थे
अवहत्-रोचनाम्	(उसने) विवाह किया रोचना से
रुक्मि पौत्रीम्	(जो) रुक्मि की पौत्री थी
तत्र-उद्वाहे गत:-त्वं	उस विवाह में गए थे आप
न्यवधि मुसलिना	वध कर दिया गया बलराम के द्वारा
रुक्मि-अपि	रुक्मि का भी
द्यूत-वैरात्	जुए के खेल में वैर हो जाने से

प्रद्युम्न आप ही की कला स्वरूप रुक्मिणी के पुत्र, का शम्बर ने हरण कर लिया। उन्होंने शम्बर को मार दिया और रति के साथ अपनी पुरी लौट आए। फिर प्रद्युम्न ने रुक्मि की भाग्यशालिनी कन्या का हरण कर लिया। प्रद्युम्न का पुत्र अनिरुद्ध

गुणों का भण्डार था। उसने रुक्मि की पौत्री रोचना से विवाह किया। उस विवाह में आप भी गए थे। वहां पर द्यूत क्रीडा के समय वैर हो जाने से बलराम ने रुक्मि का वध कर दिया।

बाणस्य सा बलिसुतस्य सहस्रबाहो-
र्माहेश्वरस्य महिता दुहिता किलोषा ।
त्वत्पौत्रमेनमनिरुद्धमदृष्टपूर्वं
स्वप्नेऽनुभूय भगवन् विरहातुराऽभूत् ॥२॥

बाणस्य सा	बान की वह
बलि-सुतस्य	बलि के पुत्र की
सहस्र-बाहोः-	सहस्र बाहुओं वाले की
माहेश्वरस्य	शिव भक्त की
महिता दुहिता	श्लाघनीया पुत्री
किल-उषा	नाम्नी ऊषा
त्वत्-पौत्रम्-एनम्-	आपके पौत्र इसको
अनिरुद्धम्-अदृष्ट-पूर्वम्	अनिरुद्ध को नहीं देखा था जिसे पहले
स्वप्ने-अनुभूय	स्वप्न में अनुभव करके
भगवन्	हे भगवन!
विरह-आतुरा-अभूत्	विरह से व्याकुल हो गई

बलि का पुत्र बाणासुर जिसके सहस्र बाहुएं थीं शिव भक्त था। ऊषा नाम की उसकी श्लाघनीया पुत्री थी। आपके पौत्र अनिरुद्ध को उसने पहले कभी नहीं देखा था, किन्तु स्वप्न में उससे भेंट होने पर ही वह विरह विकल हो गई।

योगिन्यतीव कुशला खलु चित्रलेखा
तस्या: सखी विलिखती तरुणानशेषान् ।
तत्रानिरुद्धमुषया विदितं निशाया-
मानेष्ट योगबलतो भवतो निकेतात् ॥३॥

योगिनी-	यौगिक ज्ञाता

अतीव कुशला	(और) अत्यन्त पटु
खलु चित्रलेखा	निश्चय ही चित्रलेखा
तस्या: सखी	उसकी सखी
विलिखती	अङ्कित करती थी
तरुणान्-अशेषान्	युवकों का (चित्र) समस्त
तत्र-अनिरुद्धम्-	वहां अनिरुद्ध को
उषया विदितं	उषा ने पहिचाना
निशायाम्-आनेष्ट	रात्रि के समय, ले आई (चित्रलेखा)
योग-बलत:	योग बल से
भवत: निकेतात्	आपके महल से

उषा की सखी योगिनी चित्रलेखा जो अत्यन्त पटु थी युवक राजकुमारों की छबि आंकती रहती थी। उन्ही चित्रों में उषा ने अनिरुद्ध को पहिचाना। चित्रलेखा अपने योग बल से रात्रि के समय अनिरुद्ध को आपके महल से ले आई।

कन्यापुरे दयितया सुखमारमन्तं
चैनं कथञ्चन बबन्धुषि शर्वबन्धौ ।
श्रीनारदोक्ततदुदन्तदुरन्तरोषै-
स्त्वं तस्य शोणितपुरं यदुभिर्न्यरुन्धा: ॥४॥

कन्या-पुरे	कुमारियों के महल में
दयितया	प्रियतमा के संग
सुखम्-आरमन्तं	सुख पूर्वक रमण करते हुए
च-एनम् कथञ्चन	और इसको किसी प्रकार (देख कर)
बबन्धुषि	बान्ध दिया
शर्वबन्धौ	शिवभक्त (बाणासुर) ने

श्री-नारद-उक्त-	श्री नारद ने कहा
तत्-उदन्त-	उसकी वार्ता
दुरन्तः-रोषैः-त्वं	अदम्य क्रोध से आपने
तस्य शोणितपुरं	उसके शोणितपुर को
यदुभिः-न्यरुन्धाः	यदुओं के साथ घेर लिया

कुमारियों के महल में प्रियतमा के साथ सुखपूर्वक रमण करते हुए अनिरुद्ध को किसी समय शिवभक्त बाणासुर ने देख लिया, और उसे बांध लिया। श्री नारद से इस वार्ता को सुन कर आप अदम्य क्रोध के वशीभूत हो गए। फिर आपने यदुओं के साथ उसके शोणितपुर को घेर लिया।

पुरीपालश्शैलप्रियदुहितृनाथोऽस्य भगवान्
समं भूतव्रातैर्यदुबलमशङ्कं निरुरुधे ।
महाप्राणो बाणो झटिति युयुधानेनयुयुधे
गुहः प्रद्युम्नेन त्वमपि पुरहन्त्रा जघटिषे ॥५॥

पुरीपालः-	(शोणित) पुरी के पालक
शैल-प्रिय-दुहितृ-नाथः-अस्य	पर्वत की प्रिय पुत्री के भर्ता, इनकी
भगवान्	भगवान शिव ने
समं भूतव्रातैः-	साथ में ले कर (अपनी) भूत सेना
यदु-बलम्-अशङ्कं	यादव सेना को निडर हो कर
निरुरुधे	रोका दिया
महाप्राणः बाणः	महाबली बाण ने
झटिति	तत्क्षण
युयुधानेन युयुधे	सात्यकि के साथ युद्ध किया
गुहः प्रद्युम्नेन	गुह ने प्रद्युम्न के साथ
त्वम्-अपि	आपने भी

पुरहन्त्रा जघटिषे	त्रिपुरारि शिव के साथ

हिमवान पर्वत की प्रिय पुत्री पार्वती के भर्ता शिव ने, जो शोणितपुर के पालक थे, अपने भूतों की सेना के साथ निडरता पूर्वक यादवों की सेना को रोक दिया। तत्क्षण महाबली बाण ने सात्यकि के साथ, गुह ने प्रद्युम्न के साथ और आपने त्रिपुरारि शिव के साथ युद्ध किया।

निरुद्धाशेषास्त्रे मुमुहुषि तवास्त्रेण गिरिशे
द्रुता भूता भीता: प्रमथकुलवीरा: प्रमथिता: ।
परास्कन्दत् स्कन्द: कुसुमशरबाणैश्च सचिव:
स कुम्भाण्डो भाण्डं नवमिव बलेनाशु बिभिदे ॥६॥

निरुद्ध-अशेष-अस्त्रे	रोक दिए गए समस्त अस्त्र
मुमुहुषि	मोहित हो जाने पर
तव-अस्त्रेण गिरिशे	आपके अस्त्र से शिव के
द्रुता:-भूता:-भीता:	पलायित हो गए भूतगण भय से
प्रमथ-कुल-वीरा:	प्रमथ कुल के वीर
प्रमथिता:	कुचल दिए गए
परास्कन्दत् स्कन्द:	पराजित कर दिया गया स्कन्द
कुसुम-शर-बाणै:-च	(प्रद्युम्न के) सुमन धनुष के बाणों से और
सचिव: स कुम्भाण्ड:	मन्त्री वह (बाण का) कुम्भाण्ड
भाण्डं नवम्-इव	(मिट्टी के) कलश नए के समान
बलेन-आशु बिभिदे	बलराम के द्वारा शीघ्र चकनाचूर कर दिया गया

शिव के समस्त अस्त्र आपके अस्त्र के द्वारा रोक दिए गए, और मोहनास्त्र से शिव के मोहित हो जाने पर, भूतगण भयभीत हो कर भाग गए। प्रमथ कुल के वीर कुचल दिए गए। प्रद्युम्न के सुमन्धनुष के बाणों से स्कन्द पराजित हो गए। बाण का वह मन्त्री कुम्भाण्ड भी, मिट्टी के नए भाण्ड के समान, बलराम के द्वारा शीघ्र ही चकनाचूर कर दिया गया।

चापानां पञ्चशत्या प्रसभमुपगते छिन्नचापेऽथ बाणे
व्यर्थे याते समेतो ज्वरपतिरशनैरज्वरि त्वज्ज्वरेण ।

ज्ञानी स्तुत्वाऽथ दत्वा तव चरितजुषां विज्वरं स ज्वरोऽगात्
प्रायोऽन्तर्ज्ञानवन्तोऽपि च बहुतमसा रौद्रचेष्टा हि रौद्रा: ॥७॥

चापानां पञ्चशत्या	धनुष पांच सौ के साथ
प्रसभम्-उपगते	क्रूरता से आक्रमण करते हुए
छिन्न-चापे-अथ बाणे	टूट जाने पर धनुषों के तब बाणासुर के
व्यर्थे यात:	निष्फल हो कर चले जाने पर
समेत: ज्वरपति:-	आ पहुंचा ज्वरपति (शैव ज्वर)
अशनै:-अज्वरि	तुरन्त संतप्त हो गया
त्वत्-ज्वरेण	आपके ज्वर से
ज्ञानी स्तुत्वा-अथ	ज्ञानी (शैव ज्वर) ने स्तुति कर के तब
दत्वा तव चरितजुषां	दे कर आपके चरित्र के प्रशंसकों को
विज्वरं स ज्वर:-अगात्	असंतप्त (होने का वर), वह ज्वर चला गया
प्राय:-अन्त:-ज्ञानवन्त:-अपि	प्राय: अन्तर्ज्ञानी होने पर भी
च बहु-तमसा	और अधिकता से तमस के
रौद्र-चेष्टा हि रौद्रा:	क्रूरकर्मा ही होते हैं रुद्र गण

बाणासुर ने पांच सौ धनुषों के साथ क्रूरता से आक्रमण कर दिया। समस्त धनुषों के टूट जाने पर अन्त में वह निष्फल हो कर चला गया। फिर ज्वरपति शैव ज्वर आ पहुंचा, किन्तु आपके, वैष्णव ज्वर से वह संतप्त हो गया। उसने स्तुति करके आपके चरित्र के प्रशंसकों को असंतप्त होने का वर दिया और फिर, चला गया। अक्सर, रुद्र गण अन्तर्ज्ञानी होने पर भी तमस की अधिकता के कारण क्रूरकर्मा होते हैं।

बाणं नानायुधोग्रं पुनरभिपतितं दर्पदोषाद्वितन्वन्
निर्लूनाशेषदोषं सपदि बुबुधुषा शङ्करेणोपगीत: ।
तद्वाचा शिष्टबाहुद्वितयमुभयतो निर्भयं तत्प्रियं तं
मुक्त्वा तद्दत्तमानो निजपुरमगम: सानिरुद्ध: सहोष: ॥८॥

बाणं नाना-आयुध-उग्रम्	बाण को (जो) विविध आयुधों से उग्रपराक्रमी हो रहा था

पुनः-अभिपतितं	फिर से आक्रमण कर देने पर
दर्प-दोषात्-वितन्वन्	गर्व के दोष से (उसको) कर दिया
निर्लून-अशेष-दोषं	विमुक्त समस्त दोषों (बाहुओं) से
सपदि बुबुधुषा	तुरन्त सर्वज्ञानी
शङ्करेण-उपगीतः	शङ्कर के द्वारा (आपकी) स्तुति की गई
तत्-वाचा	उनके वचनों से
शिष्ट-बाहु-द्वितयम्-उभयतः	शेष (छोड दिए) बाहू दो दोनों ओर
निर्भयं तत्-प्रियं तं	भयरहित उनके भक्त उसको
मुक्त्वा	मुक्त कर के
तत्-दत्त-मानः	(और) उसको सम्मान दे कर
निज-पुरम्-अगमः	निज पुर को आ गए
सानिरुद्ध सहोषः	अनिरुद्ध और उषा के साथ

विविध आयुधों को प्राप्त कर के उग्रपराक्रमी बाणासुर ने फिर से आक्रमण कर दिया। उसको दर्प दोष से सर्वथा विमुक्त करने के लिए आपने उसके दोष रूपी बाहुओं का छेदन कर दिया। तुरन्त सर्वज्ञानी शङ्कर ने आपकी स्तुति की! उनके कहने से आपने बाणासुर के शेष दो बाहुओं को दोनों ओर छोड दिया। उनके भक्त को भय रहित और मुक्त कर के उसको सम्मान दे कर अनिरुद्ध और उषा के संग आप अपनी पुरी आ गए।

मुहुस्तावच्छक्रं वरुणमजयो नन्दहरणे
यमं बालानीतौ दवदहनपानेऽनिलसखम् ।
विधिं वत्सस्तेये गिरिशमिह बाणस्य समरे
विभो विश्वोत्कर्षी तदयमवतारो जयति ते ॥९॥

मुहुः-तावत्-शक्रं	बारम्बार तब इन्द्र को (जीता)
वरुणम्-अजयः	वरुण को जीता
नन्द-हरणे	नन्द के हरण (के समय)

यमं बाल-आनीतौ	यम को बालकों को लाने (के समय) में
दव-दहन-पाने-	दावाग्नि (के समय) पान में
अनिल-सखम्	वायु सखा (अग्नि) को
विधिं वत्स-स्तेये	ब्रह्मा को वत्सों की चोरी (के समय) में
गिरिशम्-इह्	शङ्कर को यहां
बाणस्य समरे	बाण के संग्राम में
विभो	हे विभो!
विश्व-उत्कर्षी	सर्व श्रेष्ठ
तत्-अयम्-अवतारः	इसलिए यह अवतार है
जयति ते	जय हो आपके (इस अवतार की)

आपने बारम्बार इन्द्र को जीता। नन्द के हरण के समय वरुण को जीता, गुरू के बालकों को लाने के समय यम को जीता, दावाग्नि के पान के समय वायु सखा अग्नि को जीता, ब्रह्मा को वत्सों की चोरी के समय जीता, और यहां वाणासुर के संग्राम में शङ्कर को जीता। इसीलिये हे विभो! आपके अवतारों में यह अवतार सर्व श्रेष्ठ है। इस अवतार की जय हो!

द्विजरुषा कृकलासवपुर्धरं नृगनृपं त्रिदिवालयमापयन् ।
निजजने द्विजभक्तिमनुत्तमामुपदिशन् पवनेश्वर् पाहि माम् ॥१०॥

द्विज-रुषा	ब्राह्मण के क्रोध से
कृकलासः-वपुः-धरं	गिरगिट शरीर धारी
नृग-नृपं	नृग राजा को
त्रिदिव-आलयम्-	देवों के निवास को
आपयन्	भेज कर
निज-जने	स्वजनों में
द्विज-भक्तिम्-अनुत्तमाम्-	द्विज भक्ति अति उत्तम (है)

उपदिशन्	उपदेश के लिए
पवनेश्वर पाहि माम्	हे पवनेश! रक्षा करें मेरी

ब्राह्मण के श्राप से गिरगिट शरीर धारी राजा नृग को आपने स्वर्ग भिजवा कर स्वजनों को अति उत्तम द्विजभक्ति का उपदेश दिया। हे पवनेश! मेरी रक्षा करें।

दशक ८३

रामेऽथ गोकुलगते प्रमदाप्रसक्ते
हूतानुपेतयमुनादमने मदान्धे ।
स्वैरं समारमति सेवकवादमूढो
दूतं न्ययुङ्क्त तव पौण्ड्रकवासुदेव: ॥१॥

रामे-अथ	बलराम ने तब
गोकुल-गते	गोकुल जाने पर
प्रमदा-प्रसक्ते	प्रमदाओं में आसक्त होने पर
हूत-अनुपेत-	बुलाया, नहीं आने पर
यमुना-दमने	यमुना के, (उसके) दमन के लिए
मदान्धे	मदान्ध हो कर
स्वैरं समारमति	स्वेच्छा पूर्वक क्रीडातुर हो गए
सेवक-वाद्-मूढ:	(अपने) सेवकों के (मिथ्या प्रशंसा) कहने से विमूढ बुद्धि वाले ने
दूतं न्ययुङ्क्त	दूत को भेजा
तव	आपके पास
पौण्ड्रक-वासुदेव	पौण्ड्रक वासुदेव ने

बलराम ने गोकुल जा कर कामिनियों के साथ विहार करते समय यमुना को बुलाया। यमुना के नहीं आने पर उनका दमन करने के लिए मदान्ध बलराम स्वेच्छा पूर्वक क्रीडातुर हो कर जल में विहार करने लगे। उसी समय अपने सेवकों द्वारा अपनी मिथ्या प्रशंसा सुन कर विमूढ बुद्धि पौण्ड्रक वासुदेव ने आपके पास दूत भेजा।

नारायणोऽहमवतीर्ण इहास्मि भूमौ
धत्से किल त्वमपि मामकलक्षणानि ।
उत्सृज्य तानि शरणं व्रज मामिति त्वां
दूतो जगाद सकलैर्हसित: सभायाम् ॥२॥

नारायण:-अहम्-	नारायण हूं मैं

अवतीर्ण इह-अस्मि भूमौ	अवतीर्ण हुआ हूं यहां भूमि पर
धत्से किल त्वम्-अपि	धारण करते हो निस्सन्देह तुम भी
मामक-लक्षणानि	मेरे लक्षणों को
उत्सृज्य तानि	छोड कर उनको
शरणं व्रज माम्-इति	शरण आ जाओ मेरी' इस प्रकार
त्वां दूत: जगाद	आपको दूत ने कहा
सकलै:-हसित:	सभी के हंसते हुए
सभायाम्	सभा में

'मैं नारायण हूं और यहां इस भूमि पर अवतरित हुआ हूं। निस्सन्देह तुम भी मेरे लक्षणों को धारण करते हो, किन्तु उनको छोड दो और मेरी शरण में आ जाओ।' दूत ने आपसे पौण्ड्रक का यह सन्देश कहा। इसे सुन कर सभा में सभी हंसने लगे।

दूतेऽथ यातवति यादवसैनिकैस्त्वं
यातो ददर्शिथ वपु: किल पौण्ड्रकीयम् ।
तापेन वक्षसि कृताङ्कमनल्पमूल्य-
श्रीकौस्तुभं मकरकुण्डलपीतचेलम् ॥३॥

दूते-अथ यातवति	दूत के तब चले जाने पर
यावद-सैनिकै:-त्वं	यादव सैनिकों के साथ आप
यात: ददर्शिथ	गए (और) देखा
वपु: किल पौण्ड्रकीयम्	शरीर निस्सन्देह पौण्ड्रक का
तापेन वक्षसि	ताप से वक्षस्थल पर
कृत-अङ्कम्-	किया था चिह्न
अनल्प-मूल्य-	अमूल्य
श्री कौस्तुभं	श्री कौस्तुभ का

मकर-कुण्डल	मकर कुण्डल (पहने था)
पीत-चेलम्	(और) पीले वस्त्र

दूत के चले जाने पर, यादव सैनिकों के साथ आप पौण्ड्रक का शरीर देखने के लिए गए। निस्सन्देह उसके वक्षस्थल पर ताप से श्री वत्स चिह्नित था । वह अमूल्य श्री कौस्तुभ धारण किए हुए था। उसने कानों में मकर कुण्डल थे और वह पीत वस्त्र भी धारण किए हुए था।

कालायसं निजसुदर्शनमस्यतोऽस्य
कालानलोत्करकिरेण सुदर्शनेन ।
शीर्षं चकर्तिथ ममर्दिथ चास्य सेनां
तन्मित्रकाशिपशिरोऽपि चकर्थ काश्याम् ॥४॥

काल-आयासं	काले लोहे के
निज-सुदर्शनम्-	अपने सुदर्शन को
अस्यत:-अस्य	छोडते हुए इसके
काल-अनल-उत्कर-	कालाग्नि किरणों को
किरेण सुदर्शनेन्	विस्फुरित करने वाले सुदर्शन से
शीर्षम् चकर्तिथ	शिर को काट डाला
ममर्दिथ च अस्य सेनां	और कुचल दिया इसकी सेना को
तत्-मित्र-काशिप-	उसके मित्र काशी के
शिर:-अपि चकर्थ	शिर को भी काट कर
काश्याम्	(भेज दिया) काशी में

पौण्ड्रक ने काले लोहे से बने अपने सुदर्शन को छोडा, तब आपने कालाग्नि की किरणों को विस्फुरित करने वाले अपने सुदर्शन से उसके शिर को काट दिया। उसके मित्र काशी के शिर को भी काट कर काशी पुरी भेज दिया।

जाल्येन बालकगिराऽपि किलाहमेव
श्रीवासुदेव इति रूढमतिश्चिरं स: ।
सायुज्यमेव भवदैक्यधिया गतोऽभूत्

को नाम कस्य सुकृतं कथमित्यवेयात् ॥५॥

जाल्येन	मूर्खता के कारण
बालक-गिरा-अपि	बालकों (के समान) वाणी से भी
किल-अहम्-एव	निश्चय ही मैं ही
श्री-वासुदेव इति	श्री वासुदेव हूं इस प्रकार
रूढमति:-चिरं स:	दृढ बुद्धि वाला बहुत समय से वह
सायुज्यम्-एव	सायुज्य ही
भवत्-ऐक्य-धिया	आपसे एकाकार ध्यान से
गत:-अभूत्	पा गया
क: नाम	कौन भला
कस्य सुकृतं	किसके पुण्यों को (जान सकता है)
कथम्-इति-अवेयात्	कैसे इस प्रकार फलीभूत होंगे

अपनी मूर्खता के कारण, अथवा बालकों की सी अबोध बुद्धि वाले लोगों के कहने के कारण, 'निश्चय ही मैं ही वासुदेव हूं' बहुत समय से ऐसा विचार कर, आप में एकाग्र चित्त वाला पौण्ड्रक अन्त में सायुज्य मोक्ष ही पा गया। कौन जान सकता है कि किसका पुण्य कैसे फलीभूत होगा!

काशीश्वरस्य तनयोऽथ सुदक्षिणाख्य:
शर्वं प्रपूज्य भवते विहिताभिचार: ।
कृत्यानलं कमपि बाणरणातिभीतै-
र्भूतै: कथञ्चन वृतै: सममभ्यमुञ्चत् ॥६॥

काशी-ईश्वरस्य	काशीराज के
तनय:-अथ	पुत्र ने तब
सुदक्षिण-आख्य:	सुदक्षिण नाम के
शर्वं प्रपूज्य	सशङ्कर की सुचारु पूजा करके

भवते विहित-	आपमें चलाया
अभिचार:	अभिचार (जादू)
कृत्या-अनलं	कृत्या अग्नि को
कम्-अपि	किसी भी
बाण-रण-अति-भीतै:-	बाण के संग्राम से भयभीत
भूतै: कथञ्चन वृतै:	भूतों से किसी प्रकार घिरे हुए
समम्-अभ्यमुञ्चत्	के साथ मोचन किया (कृत्या का)

काशीराज के पुत्र सुदक्षिण ने शङ्कर की सुचारु रूप से पूजा कर के, आप पर अभिचार चलाया और किसी कृत्या अग्नि को प्रकट किया। बाणासुर के संग्राम के समय शङ्कर के भयभीत भूत गणों को किसी प्रकार सम्मिलित किया और उनसे घिर कर उसने कृत्याग्नि का मोचन किया।

तालप्रमाणचरणामखिलं दहन्तीं
कृत्यां विलोक्य चकितै: कथितोऽपि पौरै: ।
द्यूतोत्सवे किमपि नो चलितो विभो त्वं
पार्श्वस्थमाशु विससर्जिथ कालचक्रम् ॥७॥

ताल-प्रमाण-चरणाम्-	ताड के (वृक्ष के) समान पैरों वाली
अखिलं दहन्तीं	सभी कुछ को भस्म करती हुई
कृत्यां विलोक्य	कृत्या को देख कर
चकितै:	आश्चर्य चकित
कथित:-अपि पौरै:	कहे (सूचित किए) जाने पर भी पुरवासियों के द्वारा
द्यूत-उत्सवे	द्यूत क्रीडा मे (लगे हुए)
किम्-अपि नो चलित:	किसी प्रकार भी नहीं उद्यत हुए
विभो त्वं	हे विभो! आप
पार्श्वस्थम्-आशु	निकट में रखे हुए को शीघ्र

विससर्जिथ	भेज दिया
काल-चक्रम्	सुदर्शन चक्र को

ताड के वृक्ष के समान लम्बे पैरों वाली, सभी कुछ भस्म करती हुई कृत्या को देख कर पुरवासी आश्चर्य चकित हो गए और उन्होंने आपको इसकी सूचना भी दी। किन्तु द्यूत क्रीडा में संलग्न हे विभो! आप स्वयं उद्यत नहीं हुए, आपने निकट ही रखे हुए अपने सुदर्शन चक्र को भेज दिया।

अभ्यापतत्यमितधाम्नि भवन्महास्त्रे
हा हेति विद्रुतवती खलु घोरकृत्या।
रोषात् सुदक्षिणमदक्षिणचेष्टितं तं
पुप्लोष चक्रमपि काशिपुरीमधाक्षीत् ॥८॥

अभ्यापतति-	आक्रमण करने पर
अमित-धाम्नि	अनन्त तेजस्वी
भवत्-महा-अस्त्रे	आपके महान आयुध के
हा हा-इति	हा हा कार करती हुई
विद्रुतवती	पलायन करती हुई
खलु घोर-कृत्या	निस्सन्देह (उस) घोर कृत्या के
रोषात् सुदक्षिणम्-	क्रोध से सुदक्षिण को
अदक्षिण-चेष्टितं तं	नीच कर्मी उसको
पुप्लोष चक्रम्-अपि	जला डाला, (सुदर्शन) चक्र ने भी
काशि-पुरीम्-अधाक्षीत्	काशी पुरी को भस्म कर दिया

आपके महान और अनन्त तेजस्वी आयुध के आक्रमण करने पर कृत्या हा हाकार करते हुए पलायन कर गई। अपने क्रोध से उस भयानक कृत्या ने निस्सन्देह नीच कर्मा सुदक्षिण को भी जला डाला। आपके सुदर्शन चक्र ने भी काशीपुरी को भस्म कर दिया।

स खलु विविदो रक्षोघाते कृतोपकृति: पुरा
तव तु कलया मृत्युं प्राप्तुं तदा खलतां गत: ।

नरकसचिवो देशक्लेशं सृजन् नगरान्तिके
झटिति हलिना युध्यन्नद्धा पपात तलाहत: ॥९॥

स खलु विविद:	वह ही विविद (जिसने)
रक्षोघाते	राक्षसों का वध करने में
कृत-उपकृति: पुरा	किया था उपकार पहले
तव तु कलया	आपके अंशावतार से
मृत्युं प्राप्तुं	मृत्यु पाने के लिए
तदा खलतां गत:	उस समय दुर्जनता अपना कर
नरक-सचिव:	नरकासुर का मन्त्री (वह)
देश-क्लेशं सृजन्	प्रजा को कष्ट पहुंचाने लगा
नगर-अन्तिके	नगर (द्वारका) के आस पास
झटिति हलिना	तुरन्त बलराम के द्वारा
युध्यन्-अद्धा	लडते हुए यथार्थत:
पपात-तल-आहत:	गिर पडा हाथ से आहत हो कर

आपके रामावतार के समय विविद ने राक्षसों के संहार में आपकी सहायता की थी। वह आपके अंशावतार से मृत्यु प्राप्त करना चाहता था। उसने नरकासुर का मन्त्रित्व पा कर दुष्कर्म करने आरम्भ कर दिए, और द्वारका नगरी के आस पास ही प्रजा को संतप्त करने लगा। तुरन्त ही बलराम के साथ लडते हुए, हथेली के एक ही प्रहार से वह यथार्थत: गिर कर मर गया।

साम्बं कौरव्यपुत्रीहरणनियमितं सान्त्वनार्थी कुरूणां
यातस्तद्वाक्यरोषोद्धृतकरिनगरो मोचयामास राम: ।
ते घात्या: पाण्डवेयैरिति यदुपृतनां नामुचस्त्वं तदानीं
तं त्वां दुर्बोधलीलं पवनपुरपते तापशान्त्यै निषेवे ॥१०॥

साम्बं	साम्ब को
कौरव्य-पुत्री-हरण-	कौरवों की पुत्री के हरण (कर लेने) के कारण

नियमितं	बन्दी (बना लिया)
सान्त्वना-अर्थी	शान्त करने के लिए (कौरवों को)
कुरूणां यातः-	कुरुओं के पास जा कर
तत्-वाक्य-रोष-	उन लोगों की बातों से क्रोधित (हो कर)
उद्धृत-करिनगरः	उखाड डाला हस्तिनापुर को
मोचयामास रामः	(और) छोड दिया (साम्ब को) बलराम ने
ते घात्याः	उन (कुरुओं) का वध करना चाहिए
पाण्डवेयैः-इति	पाण्डवों को, इस प्रकार
यदु-पृतनां	यदु सेना को
न-अमुचः-त्वं तदानीं	नहीं भेजा आपने उस समय
तं त्वां दुर्बोधलीलं	उन आपकी अज्ञात लीलाधारी की
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
ताप-शान्त्यै निषेवे	संतापों की शान्ति के लिए पूजन करता हूं

साम्ब, कौरवों की पुत्री का हरण कर लेने के कारण कौरवों द्वारा बन्दी बना लिया गया। कौरवों को शान्त करने के लिए बलराम उनके पास गए, किन्तु उनकी आक्षेप पूर्ण बातों से क्रोधित हो कर उन्होंने हस्तिनापुर को उखाड डाला और साम्ब को मुक्त कर दिया। कौरवों का वध पाण्डवों के द्वारा होना चाहिए, इसी विचार से आपने उस समय यदु सेना नहीं भेजी। अज्ञात लीलाधारी, हे पवनपुरपते! संतापों की शान्ति के लिए मैं आपका पूजन करता हूं।

दशक ८४

क्वचिदथ तपनोपरागकाले पुरि निदधत् कृतवर्मकामसूनू ।
यदुकुलमहिलावृत: सुतीर्थं समुपगतोऽसि समन्तपञ्चकाख्यम् ॥१॥

क्वचित्-अथ	किसी तब
तपन-उपराग-काले	सूर्य ग्रहण के समय
पुरि निदधत्	(द्वारका) पुरी मे छोड कर
कृतवर्म-कामसूनू	कृतवर्मा और अनिरुद्ध को
यदुकुल्-महिला-आवृत:	यदुकुल की महिलाओं के संग
सुतीर्थं समुपगत:-असि	उत्तम तीर्थ को गए थे (आप)
समन्तपञ्चक-आख्यम्	समन्तपञ्चक नामक

तदनन्तर एक बार सूर्यग्रहण के समय, द्वारका पुरी में कृतवर्मा और अनिरुद्ध को छोड कर, यदुकुल की महिलाओं के साथ आप समन्तपञ्चक नामक उत्तम तीर्थ को गए थे।

बहुतरजनताहिताय तत्र त्वमपि पुनन् विनिमज्य तीर्थतोयम् ।
द्विजगणपरिमुक्तवित्तराशि: सममिलथा: कुरुपाण्डवादिमित्रै: ॥२॥

बहुतर-जनता-हिताय	जन सामान्य के हित के लिए
तत्र त्वम्-अपि	वहां आपने भी
पुनन्	पवित्र करते हुए
विनिमज्य तीर्थ-तोयम्	डुबकी लगा कर तीर्थ जल में
द्विज-गण-परिमुक्त-	ब्राह्मण जनों को देते हुए
वित्त-राशि:	धन राशि
सममिलथा:	भेंट की
कुरु-पाण्डव-आदि-मित्रै:	कौरव पाण्डव और अन्य मित्रों से

जन सामान्य के हित के लिए उस तीर्थ जल को पवित्र करते हुए, आपने भी उसमें डुबकी लगाई। उक्त अवसर पर ब्राह्मण जनों के लिए प्रचूर धन राशि वितरित की तथा कौरव पाण्डव आदि अन्य मित्रों से भेंट भी की।

तव खलु दयिताजनैः समेता द्रुपदसुता त्वयि गाढभक्तिभारा ।
तदुदितभवदाहृतिप्रकारैः अतिमुमुदे सममन्यभामिनीभिः ॥३॥

तव खलु दयिता-जनैः	आपकी निश्चय ही पत्नियों के संग
समेता	परस्पर मिल कर
द्रुपदसुता त्वयि	द्रौपदी (जो) आपमें
गाढ-भक्ति-भारा	दृढ भक्ति रखती थी
तत्-उदित-	उन लोगों के कहे हुए
भवत्-आहृति-प्रकारैः	आपके (उनको) हरण करने के तरीकों को
अति-मुमुदे	अत्यन्त प्रसन्न हुई
समम्-अन्य-भामिनीभिः	अन्य महिलाओं के संग

आपमें दृढ भक्ति रखने वाली द्रौपदी, वहां आपकी पत्नियों से मिलीलि। अन्य महिलाओं के साथ आपकी पत्नियों के द्वारा बताए हुए उनके हरण के विविध वृतान्त सुन कर वह अत्यन्त प्रसन्न हुई।

तदनु च भगवन् निरीक्ष्य गोपानतिकुतुकादुपगम्य मानयित्वा।
चिरतरविरहातुराङ्गरेखाः पशुपवधूः सरसं त्वमन्वयासीः ॥४॥

तदनु च भगवन्	और फिर हे भगवन!
निरीक्ष्य गोपान्-	देख कर गोपों को
अति-कुतुकात्-	अत्यन्त हर्ष से
उपगम्य मानयित्वा	पास जा कर और आदर दे कर (मिले)
चिरतर-विरह-आतुर-	दीर्घ काल से विरह संतप्त (होने के कारण)
अङ्ग-रेखाः	शरीर क्षीण वाली

पशुप-वधूः	गोपिकाओं से
सरसं त्वम्-अन्वयासीः	मधुरता से आप मिले

हे भगवन! फिर आपने गोपों को देखा और अत्यन्त हर्ष से उनके पास जा कर आदर से उन सब से मिले। दीर्घ काल से आपके विरह से संतप्त कृष शरीर वाली गोपांगनाओं से भी आप मधुरता से मिले।

सपदि च भवदीक्षणोत्सवेन प्रमुषितमानहृदां नितम्बिनीनाम् ।
अतिरसपरिमुक्तकञ्चुलीके परिचयहृद्यतरे कुचे न्यलैषीः ॥५॥

सपदि च	तुरन्त ही
भवत्-ईक्षण-उत्सवेन	आपको देखने के उत्सव से
प्रमुषित-मान-हृदाम्	मिट गया मान हृदय से (गोपियों का)
नितम्बिनीनाम्	सुन्दर स्तनों वाली का
अति-रस-परिमुक्त-	अत्यधिक रस के भाव से निस्सरित
कञ्चुलीके	चोलियों के
परिचय-हृद्यतरे	परिचित मनोहर
कुचे न्यलैषीः	स्तनों में निलीन हो गए

आपको देखने के सुख के उत्सव से उन पीनपयोधर गोपिकाओं के मन का मान तुरन्त ही मिट गया। अत्यधिक प्रेम रस के भाव से उनकी चोलियां सरक गईं और उन मनोहर परिचित स्तनों में आप विलीन हो गए।

रिपुजनकलहैः पुनः पुनर्मे समुपगतैरियती विलम्बनाऽभूत् ।
इति कृतपरिरम्भणेत्वयि द्राक् अतिविवशा खलु राधिका निलिल्ये ॥६॥

रिपु-जन-कलहैः	शत्रुओं से युद्ध के कारण
पुनः पुनः-	बारम्बार
मे समुपगतैः-	मेरे आने में
इयती विलम्बना-	इतना विलम्ब

अभूत्	हो गया
इति कृत-परिरम्भणे-	इस प्रकार (कह कर) आलिङ्गन करने पर
त्वयि द्राक्	आपके, तुरन्त ही
अतिविवशा	अत्यन्त विवश हो गई
खलु राधिका	निस्सन्देह राधिका
निलिल्ये	(और) निलीन हो गई

बारम्बार शत्रुओं से युद्ध के कारण मेरे आने में इतना विलम्ब हो गया।' इस प्रकार कह कर आपने राधिका का आलिङ्गन किया। निस्सन्देह राधिका अत्यधिक विवश हो कर आपमें ही विलीन हो गई।

अपगतविरहव्यथास्तदा ता रहसि विधाय ददाथ तत्त्वबोधम् ।
परमसुखचिदात्मकोऽहमात्मेत्युदयतु व: स्फुटमेव चेतसीति ॥७॥

अपगत-विरह-व्यथा:-	दूर हो जाने से विरह व्यथा
तदा ता:	तब उन (गोपिकाओं) ने
रहसि विधाय	एकान्त में करके
ददाथ तत्त्व-बोधम्	देदिया (आपने) तत्त्व का ज्ञान
परम-सुख-चित्-	परम सुख आनन्द
आत्मक:-अहम्-आत्मा-	ब्रह्मन मै आत्मा हूं
इति-उदयतु व:	यह (ज्ञान) जागे तुम लोगों में
स्फुटम्-एव	स्पष्टतया ही
चेतसि-इति	(तुम्हारे) हृदय में, इस प्रकार

एकान्त में गोपिकाओं की विरह व्यथा दूर कर के आपने उन्हे तत्त्व ज्ञान दिया। 'यह ज्ञान स्पष्टता से तुम लोगों के हृदय में जागे कि "मैं आत्मा रूप में परम सुख आनन्दमय ब्रह्मन ही हूं"।

सुखरसपरिमिश्रितो वियोग: किमपि पुराऽभवदुद्धवोपदेशै: ।

समभवदमुत: परं तु तासां परमसुखैक्यमयी भवद्विचिन्ता ॥८॥

सुख-रस-परिमिश्रित:	सुख के रस से मिला हुआ
वियोग: किम्-अपि	वियोग सम्भवत:
पुरा-अभवत्-	पहले हुआ था
उद्धव-उपदेशै:	उद्धव के उपदेश से
समभवत्-अमुत:	(किन्तु) हो गया इस (उपदेश) से
परं तु तासाम्	अत्यन्त ही उनके लिए
परम्-सुख-ऐक्यमयी	परम सुखमय ऐक्य भाव (से युक्त)
भवत्-विचिन्ता	(आपसे) आपके स्मरण से ही

गोपिकाओं को सम्भवत: उद्धव के उपदेश से ही पहले वियोग में भी सुख का आभास हुआ था। अब आपके दिए हुए इस उपदेश से, आपका स्मरण ही, उनके लिए परम सुखमय ऐक्य भाव से आपसे युक्त हो गया।

मुनिवरनिवहैस्तवाथ पित्रा दुरितशमाय शुभानि पृच्छ्यमानै: ।
त्वयि सति किमिदं शुभान्तरै: रित्युरुहसितैरपि याजितस्तदाऽसौ ॥९॥

मुनि-वर-निवहै:-	मुनिवर समाहितों से
तव-अथ पित्रा	आपके तब पिता के
दुरित-शमाय	दुष्कर्मों की शन्ति के लिए
शुभानि	अनुष्ठानों के लिए
पृच्छ्यमानै:	पूछने पर
त्वयि सति	आपके रहते हुए
किम्-इदम्-शुभ-अन्तरै:-	क्या प्रयोजन अनुष्ठानों का दूसरे
इति-उरु-हसितै:-अपि	इस प्रकार हृदय में हंसते हुए भी

याजित:-तदा-असौ	यज्ञ करवाया तब इनसे

तब आपके पिता ने समाहित मुनिवरों से दुष्कर्मों की शान्ति के लिए किये जाने योग्य अनुष्ठानों के विषय में पूछा। 'आपके रहते हुए अन्य अनुष्ठानों का क्या प्रयोजन है', इस प्रकार सोच कर मन ही मन में हंसते हुए भी मुनियों ने वसुदेव से यज्ञ करवाया।

सुमहति यजने वितायमाने प्रमुदितमित्रजने सहैव गोपा: ।
यदुजनमहितास्त्रिमासमात्रं भवदनुषङ्गरसं पुरेव भेजु : ॥१०॥

सुमहति यजने	(उस) महान यज्ञ के
वितायमाने	अनुष्ठान के समय
प्रमुदित-मित्र-जने	प्रसन्न मित्र जनों
सह-एव गोपा:	के साथ ही गोप जन भी
यदु-जन-महिता:	यादवों से सम्मानित
त्रि-मास-मात्रं	तीन मासों के लिए
भवत्-अनुषङ्ग-रसं	आपके संग के रस का सुख
पुरा-एव भेजु:	पहले के समान भोगते रहे

उस महान यज्ञ के अनुष्ठान के समय, प्रसन्न मित्र जनों के साथ ही साथ गोप जन भी यादवों का सम्मान पाते रहे और तीन मास तक पहले के ही समान आपके संग के आनन्द रस का उपभोग करते रहे।

व्यपगमसमये समेत्य राधां दृढमुपगूह्य निरीक्ष्य वीतखेदाम् ।
प्रमुदितहृदय: पुरं प्रयात: पवनपुरेश्वर पाहि मां गदेभ्य: ॥११॥

व्यपगम-समये	विदा होने के समय
समेत्य राधाम्	पास जा कर राधा के
दृढम्-उपगूह्य	गाढालिङ्गन करके
निरीक्ष्य वीत-खेदाम्	देख कर (उसको) रहित व्यथा के

प्रमुदित-हृदय:	प्रसन्न चिता से
पुरम्-प्रयात:	(आप) (द्वारका) पुरी को चले गए
पवनपुरेश्वर	हे पवनपुरेश्वर!
पाहि मां गदेभ्य:	रक्षा करें मेरी कष्टों से

विदा होने के समय आपने राधा के पास जा कर उसका गाढालिङ्गन किया। उसे विरह व्यथा रहित देख कर आप प्रसन्न चित्त से द्वारका पुरी लौट गए। हे पवनपुरेश्वर! कष्टों से मेरी रक्षा करें।

दशक ८५

ततो मगधभूभृता चिरनिरोधसंक्लेशितं
शताष्टकयुतायुतद्वितयमीश भूमीभृताम् ।
अनाथशरणाय ते कमपि पूरुषं प्राहिणो-
दयाचत स मागधक्षपणमेव किं भूयसा ॥१॥

ततः मगध-भूभृता	तदनन्तर मगध राजा के द्वारा
चिर-निरोध-संक्लेशितं	बहुत समय से बन्दी बनाए गए, और दुःख सहते हुए
शत-अष्टक-युत-अयुत-द्वितयम्-	शत अष्ट के साथ दस हजार द्विगुणित २०८००
ईश	हे ईश्वर!
भूमीभृताम्	राजाओं ने
अनाथ-शरणाय ते	अशरणों के शरण आपके (पास)
कम्-अपि पूरुषम्	किसी दूत को
प्राहिणोत्-अयाचत स	भेजा, प्रार्थना की उसने
मागध-क्षपणम्-एव	मगधराज के वध की ही
किम् भूयसा	और क्या कहा जाय

हे ईश्वर! तदनन्तर, मगध राजा जरासन्ध के द्वारा, बहुत समय से बन्दी बनाए गए २०८०० दुःखी और पीडित राजाओं ने अपने किसी दूत को, अशरणों के शरण आपके पास भेजा। और क्या कहा जाये!! उसने आपसे जरासन्ध के वध की ही याचना की।

यियासुरभिमागधं तदनु नारदोदीरिता-
द्युधिष्ठिरमखोद्यमादुभयकार्यपर्याकुलः ।
विरुद्धजयिनोऽध्वरादुभयसिद्धिरित्युद्धवे
शशंसुषि निजैः समं पुरमियेथ यौधिष्ठिरीम् ॥२॥

यियासुः-	(आप के) युद्ध करने को उत्सुक
अभिमागधं	साथ में मगधराज के

तदनु नारद-उदीरितात्-	उसी समय नारद के द्वारा कहे जाने पर
युधिष्ठिर-मख-उद्यमात्-	युद्धिष्ठिर के यज्ञ की योजना के विषय में
उभय-कार्य-पर्याकुल:	दोनों कार्यों के करने की दुविधा में,
विरुद्ध-जयिन:-अध्वरात्-	शत्रुओं से विजय (से ही) यज्ञ का अनुष्ठान
उभय-सिद्धि:-इति-	दोनों की सिद्धि होगी, इस प्रकार
उद्धवे शशंसुषि	उद्ध्व की मन्त्रणा से
निजै: समं	स्वजनों के साथ
पुरम्-इयेथ	पुरी को आए
यौधिष्ठिरीम्	युधिष्ठिर की (इन्द्रप्रस्थ को)

आप मगधराज जरासन्ध से युद्ध करने को उद्यत थे। उसी समय नारद के द्वारा आपको सन्देश मिला कि युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ की योजना बना रहे हैं। आप इसी दुविधा में थे कि दोनों कार्यों मे से किसको प्राथमिकता दी जाय। उद्धव ने आपको मन्त्रणा दी कि 'यज्ञ के लिए शत्रुओं पर विजय तो अश्यम्भावी है'। इस पर आप अपने स्वजनों के साथ युधिष्ठिर की नगरी इन्द्रप्रस्थ चले गए।

अशेषदयितायुते त्वयि समागते धर्मजो
विजित्य सहजैर्महीं भवदपाङ्गसंवर्धितै: ।
श्रियं निरुपमां वहन्नहह भक्तदासायितं
भवन्तमयि मागधे प्रहितवान् सभीमार्जुनम् ॥३॥

अशेष-दयिता-युते	समस्त पत्नियों के साथ
त्वयि समागते	आपके आ जाने पर
धर्मज: विजित्य	युधिष्ठिर ने जीत कर
सहजै:-महीं	भाइयों के साथ पृथ्वी को
भवत्-अपाङ्ग-संवर्धितै:	आपकी कृपा दृष्टि से परिवर्धित
श्रियं निरुपमां	लक्ष्मी अनुपम

वहन्-अहह	प्राप्त की, अहो
भक्त-दासायितं	भक्तों की दासता (दिखाने वाले)
भवन्तम्-अयि	आपको अयि
मागधे प्रहितवान्	मगध भेज दिया
सभीम-अर्जुनम्	साथ में भीम और अर्जुन के

अपनी समस्त पत्नियों के साथ आपके आ जाने पर, युधिष्ठिर ने भाइयों के साथ पूरी पृथ्वी को जीत लिया और आपकी कृपा दृष्टि से अनुपम लक्ष्मी प्राप्त की। ऐ भगवन! भक्तों के प्रति दास्य भाव रखने वाले आपको युधिष्ठिर ने भीम और अर्जुन के साथ मगध भेज दिया।

गिरिव्रजपुरं गतास्तदनु देव यूयं त्रयो
ययाच समरोत्सवं द्विजमिषेण तं मागधम् ।
अपूर्णसुकृतं त्वमुं पवनजेन संग्रामयन्
निरीक्ष्य सह जिष्णुना त्वमपि राजयुद्ध्वा स्थित: ॥४॥

गिरिव्रजपुरं	गिरिव्रज पुर को
गता:-तदनु	जा कर तब
देव यूयं त्रय:	हे देव! आप लोगों तीनों ने
ययाच समर-उत्सवं	याचना की युद्ध करने की
द्विज-मिषेण	ब्राह्मण के वेष में
तं मागधं	उस मगधराज को
अपूर्ण-सुकृतं	(जो) कम था पुण्य कर्मों में
तु-अमुं	निश्चय ही उसको
पवनजेन संग्रामयन्	भीम के साथ युद्ध करवा कर
निरीक्ष्य सह जिष्णुना	देखने लगे साथ में अर्जुन के
त्वम्-अपि	आप भी

राज-युद्ध्वा स्थित:	राजाओं को लडवा कर खडे हुए

हे देव! गिरिव्रजपुर जा कर आप तीनों ने ब्राह्मण के वेष में जरासन्ध से युद्ध करने की याचना की। पुण्य कर्मों से सर्वथा विहीन मगधराज के साथ भीम को लडवा दिया और अर्जुन के साथ खडे खडे आप राजाओं की उस लडाई को देखते रहे।

अशान्तसमरोद्धतं बिटपपाटनासंज्ञया
निपात्य जररस्सुतं पवनजेन निष्पाटितम् ।
विमुच्य नृपतीन् मुदा समनुगृह्य भक्तिं परां
दिदेशिथ गतस्पृहानपि च धर्मगुप्त्यै भुव: ॥५॥

अशान्त्-समर-उद्धतं	(उस) उग्र युद्ध में उद्दण्ड (जरासन्ध को)
विटप-पाटना-संज्ञया	टहनी को चीरने के संकेत से
निपात्य जरस:-सुतं	मार के जरा के पुत्र को
पवनजेन निष्पाटितम्	भीम के द्वारा चीर कर
विमुच्य नृपतीन्	छुडवा कर राजाओं को
मुदा समनुगृह्य	हर्ष से सम्मान कर के
परां भक्तिं दिदेशिथ	परा भक्ति दे दी
गत: स्पृहान्-अपि	नहीं इच्छाएं जिनको, उनको भी
च धर्म-गुप्तै भुव:	और धर्म पूर्वक पालन करने के लिए पृथ्वी

उस उग्र युद्ध में जरासन्ध उद्दण्ड होता जा रहा था। तब आपने टहनी को चीर कर भीम को संकेत दिया। इस पर भीम ने जरा के पुत्र को चीर कर उसको मार दिया। तत्पश्चात आपने बन्दी राजाओं को छुडवा कर उनको सम्मान सहित परा भक्ति का वर दिया। समस्त कामनाओं से रहित उन राजाओं को आपने धर्म पूर्वक पालन करने के लिए राज्य भी दे दिया।

प्रचक्रुषि युधिष्ठिरे तदनु राजसूयाध्वरं
प्रसन्नभृतकीभवत्सकलराजकव्याकुलम् ।
त्वमप्ययि जगत्पते द्विजपदावनेजादिकं
चकर्थ किमु कथ्यते नृपवरस्य भाग्योन्नति: ॥६॥

प्रचक्रुषि	अनुष्ठान करते हुए

युधिष्ठिरे	युधिष्ठिर के
तदनु	तब
राजसूय-अध्वरं	राजसूय यज्ञ के
प्रसन्न-भृतकी-भवत्-	आनन्द से सेवक बन कर
सकल-राजक-व्याकुलम्	समस्त राजा जन कार्यरत हुए
त्वम्-अपि-	आप ने भी
अयि जगत्पते	अयि जगत्पते
द्विज-पद-अवनेज-	ब्राह्मणों के पग प्रक्षालण
आदिकं चकर्थ	आदि (कार्यों को) किया
किमु कथ्यते	क्या कहा जाय
नृप-वरस्य	नृपश्रेष्ठ (युधिष्ठर) के
भाग्य-उन्नति:	सौभाग्य के उत्तंस की

जिस समय युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ के अनुष्ठान में रत थे, समस्त राजा गण आनन्द से सेवकों की भांति विभिन्न कार्यों में व्यस्त थे। हे जगत्पते! आप भी ब्राह्मणों के चरण प्रक्षालण आदि कार्यों मे लगे हुए थे। नृपश्रेष्ठ युधिष्ठर के सौभाग्य के उत्तंस के विषय में क्या कहा जाये?

तत: सवनकर्मणि प्रवरमग्र्यपूजाविधिं
विचार्य सहदेववागनुगत: स धर्मात्मज: ।
व्यधत्त भवते मुदा सदसि विश्वभूतात्मने
तदा ससुरमानुषं भुवनमेव तृप्तिं दधौ ॥७॥

तत: सवन-कर्मणि	तत्पश्चात हवन कर्म के समय
प्रवरम-अग्र्य-पूजा-विधिं	श्रेष्ठ (पुरुष) की अग्र्य पूजा विधि को
विचार्य	ध्यान में रख कर
सहदेव-वाक्-अनुगत:	सहदेव के कथनानुसार

स धर्मात्मजः	उन धर्मराज (युधिष्ठिर) ने
व्यधत्त भवते	सम्पन्न किया आप में
मुदा सदसि	हर्षित सभा में
विश्वभूतात्मने	समस्त प्राणियों के आत्मा स्वरूप
तदा स-सुर-मानुषं	उस समय देवों के सहित मनुष्य
भुवनम्-एव	समस्त संसार ही
तृप्तिम् दधौ	सन्तुष्ट हो गया

तत्पश्चात हवन क्रिया के समय श्रेष्ठ पुरुष की अग्र पूजा विधि को ध्यान में रख कर सहदेव के कथनानुसार धर्मराज युधिष्ठिर ने वह क्रिया, हर्षित सभा के मध्य , समस्त प्राणियों के आत्मा स्वरूप आप पर सम्पन्न की। इससे देवों सहित मनुष्य गण एवं समस्त संसार ही सन्तुष्ट हो गया।

ततः सपदि चेदिपो मुनिनृपेषु तिष्ठत्स्वहो
सभाजयति को जडः पशुपदुर्दुरूढं वटुम् ।
इति त्वयि स दुर्वचोविततिमुद्वमन्नासना-
दुदापतदुदायुधः समपतन्नमुं पाण्डवाः ॥८॥

ततः सपदि चेदिपः	तब तुरन्त चेदिराज (शिशुपाल)
मुनि-नृपेषु	मुनियों और राजाओं के बीच
तिष्ठत्सु-अहो	बैठे हुए, अहो
सभा-जयति	सभा पूजती है
कः जडः	किस मूर्ख को
पशुप-दुर्दुरूटं वटुम्	ग्वाले के नीच छोकरे को
इति त्वयि स	इस प्रकार आप पर वह
दुर्वचः-विततम्-	दुर्वचनों की बौछार
उद्वमन्-	उगलते हुए

आसनात्-उदापतत्-	आसन से उछल पडा
उदायुध:	खींच कर शस्त्रों को
समपतन्-अमुं	सामना किया उसका
पाण्डवा:	पण्डवों ने

अहो! अचानक राजाओं और मुनियों के बीच बैठे हुए चेदिराज शिशुपाल, 'सभा किस मूर्ख उछृङ्खल ग्वाले के छोकरे को पूज रही है!' कहते हुए आप पर दुर्वचनों की बौछार उगलते हुए, शस्त्रों को खींचते हुए, अपने आसन से उछल पडा। उस समय पाण्डवों ने उसका सामना किया।

निवार्य निजपक्षगानभिमुखस्यविद्वेषिण-
स्त्वमेव जहृषे शिरो दनुजदारिणा स्वारिणा ।
जनुस्त्रितयलब्धया सततचिन्तया शुद्धधी-
स्त्वया स परमेकतामधृत योगिनां दुर्लभाम् ॥९॥

निवार्य निज-पक्षगान्	संवारित कर के अपने पक्ष वालों को
अभिमुखस्य विद्वेषिण:-	सम्मुख (खडे हुए) वैरी (शिशुपाल) का
त्वम्-एव जहृषे शिर:	आपने ही काट दिया शिर
दनुज-दारिणा स्व-अरिणा	असुरों को विदीर्ण करने वाले अपने चक्र से
जनु:-त्रितय-लब्धया	जन्म तीन (में) प्राप्त कर के
सतत-चिन्तया	निरन्तर स्मरण (आपका)
शुद्ध-धी:-त्वया स	पवित्र चित्त वाला, आपके साथ, वह
पर-एकताम्-अधृत	परम एकता को प्राप्त हो गया
योगिनां दुर्लभाम्	(जो) योगियों को भी दुर्लभ है

अपने मित्र पाण्डवों को संवरित कर के, आपने स्वयं अपने असुर विदारण चक्र से सम्मुख खडे हुए उस वैरी शिशुपाल का शिर काट दिया। तीन जन्मों में (हिरण्यकशिपु, रावण और शिशुपाल) निरन्तर आपका स्मरण करने से पवित्र चित्त वाले उसने आपके साथ, योगियों को भी दुर्लभ. परम एकत्म को प्राप्त कर लिया।

तत: सुमहिते त्वया क्रतुवरे निरूढे जनो

ययौ जयति धर्मजो जयति कृष्ण इत्यालपन्।
खलः स तु सुयोधनो धुतमनास्सपत्नश्रिया
मयार्पितसभामुखे स्थलजलभ्रमादभ्रमीत् ॥१०॥

ततः सुमहिते	तदनन्तर महान
त्वया क्रतुवरे	आपके द्वारा यज्ञ के
निरूढे जनः-ययौ	सम्पन्न होने पर, लोक जन चले गए
जयति धर्मजः	जय हो धर्मराज की
जयति कृष्ण	जय हो कृष्ण की
इति-आलपन्	इस प्रकार कहते हुए
खलः स तु	दुष्ट वह किन्तु
सुयोधनः धुतमनाः-	दुर्योधन ईर्ष्यालू
सपत्न-श्रिया	शत्रु की सम्पन्नता से
मय-अर्पित-सभा-मुखे	मय दानव की दी हुई सभा के सामने
स्थल-जल-भ्रमात्-	स्थल और जल के भ्रम से
अभ्रमीत्	भ्रमित हो गया

तदनन्तर आपके निर्देश में उस महान यज्ञ के सुसम्पन्न हो जाने पर लोक जन 'धर्मराज की जय हो, कृष्ण की जय हो', कहते हुए चले गए। किन्तु दुष्ट दुर्योधन, जो अपने शत्रुओं की सम्पन्नता से ईर्ष्यालू था, मय दानव के द्वारा पाण्डवों को दी गई सभा के द्वार पर स्थल और जल के भ्रम से भ्रमित हो गया।

तदा हसितमुत्थितं द्रुपदनन्दनाभीमयो-
रपाङ्गकलया विभो किमपि तावदुज्जृम्भयन् ।
धराभरनिराकृतौ सपदि नाम बीजं वपन्
जनार्दन मरुत्पुरीनिलय पाहि मामामयात् ॥११॥

तदा हसितम्-उत्थितं	उस समय हंसी निकल गई
द्रुपदनन्दना-भीमयोः-	द्रौपदी और भीम की

अपाङ्ग-कलया	तिरछी आंखों से देख कर
विभो किमपि तावत-	हे विभो! किञ्चित मात्र तब
उज्जृम्भयन्	उत्साहित कर के
धरा-भर-निराकृतौ	पृथ्वी के भार को समाप्त करने में
सपदि नाम	तुरन्त ही
बीजं वपन्	बीज को बो दिया
जनार्दन	हे जनार्दन
मरुत्पुरीनिलय	हे मरुत्पुरीनिलय
पाहि माम्-आमयात्	रक्षा करें मेरी रोगों से

उस समय द्रौपदी और भीम की हंसी निकल गई। हे विभो! उनकी आंखों की तिरछी भंगिमा ने किंचित मात्र ही सही, दुर्योधन के रोष को प्रेरित कर दिया। इस प्रकार आपने धरती के भार को समाप्त करने का बीज तुरन्त ही बो दिया। हे जनार्दन! हे मरुत्पुरीनिलय! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ८६

साल्वो भैष्मीविवाहे यदुबलविजितश्चन्द्रचूडाद्विमानं
विन्दन् सौभं स मायी त्वयि वसति कुरुंस्त्वत्पुरीमभ्यभाङ्क्षीत् ।
प्रद्युम्नस्तं निरुन्धन्निखिलयदुभटैर्न्यग्रहीदुग्रवीर्यं
तस्यामात्यं द्युमन्तं व्यजनि च समरः सप्तविंशत्यहान्तः ॥१॥

साल्वः भैष्मी-विवाहे	साल्व ने (जिसको) रुक्मिणी के विवाह में
यदु-बल-विजितः-	यदु सेना ने पराजित किया था
चन्द्रचूडात्-विमानं	शंकर से विमान (मांगने पर)
विन्दन् सौभं	प्राप्त किया सौभ (नामक विमान को)
स मायी त्वयि	उस मायावी ने, आपके
वसति कुरून्-	रहते हुए कौरवों के शहर (इन्द्रप्रस्थ) में
त्वत्-पुरीम्-अभ्यभाङ्क्षीत्	आपके नगर (द्वारका) पर आक्रमण किया
प्रद्युम्नः-तं	प्रद्युम्न ने उसका
निरुन्धन्-	सामना किया
निखिल-यदु-भटैः-	समस्त यदु सेना के साथ
न्यग्रहीत्-उग्र-वीर्यं	मार डाला पराक्रमी
तस्य-आमात्यं द्युमन्तं	उसके मन्त्री द्युमन्त को
व्यजनि च समरः	चलता रहा और (वह) युद्ध
सप्त-विंशति-अहान्तः	सात बीस (२७) दिनों तक

रुक्मिणी विवाह के समय यादव सेना से पराजित साल्व ने, शंकर से विमान की याचना करके, नामक विमान प्राप्त किया। जिस समय आप कौरवों की राजधानी इन्द्रप्रस्थ में थे, उसी समय मायावी साल्व ने आपकी नगरी द्वारका पर आक्रमण कर दिया। प्रद्युम्न ने समस्त यादव सेना के साथ डट कर उसका सामना किया और उसके पराक्रमी मन्त्री द्युमन्त को मार डाला। इस प्रकार वह युद्ध सत्ताईस दिनों तक चलता रहा।

तावत्त्वं रामशाली त्वरितमुपगत: खण्डितप्रायसैन्यं
सौभेशं तं न्यरुन्धा: स च किल गदया शार्ङ्गमभ्रंशयत्ते ।
मायातातं व्यहिंसीदपि तव पुरतस्तत्त्वयापि क्षणार्धं
नाज्ञायीत्याहुरेके तदिदमवमतं व्यास एव न्यषेधीत् ॥२॥

तावत्-त्वम् रामशाली	फिर आपने बलराम के साथ
त्वरितम्-उपगत:	निर्विलम्ब जा कर
खण्डित-प्राय-सैन्यं	नष्ट प्राय: सेना वाले
सौभेशं तं न्यरुन्धा:	सौभ के मालिक उसका सामना किया
स च किल गदया	और उसने निस्सन्देह गदा से
शार्ङ्गम्-अभ्रंशयत्-ते	शार्ङ्ग (धनुष) को गिरा दिया आपके
माया-तातं	माया से, पिता को (वसुदेव)
व्यहिंसीत्-अपि	भी मार दिया
तव-पुरत:-तत्-त्वया-अपि	आपके ही सामने, वह आपके द्वारा भी
क्षणार्धं न-अज्ञायि-इति	आधे क्षण के लिए नहीं समझा गया, ऐसा
आहु:-एके तत्-इदम्-अवमतं	कहते हैं कुछ, वह यह कहना
व्यास एव न्यषेधीत्	(स्वयं) व्यास ने निषेध किया है

तब आपने बलराम के साथ अविलम्ब जा कर सौभ के मालिक साल्व का जिसकी सेना नष्ट प्राय: हो गई थी, सामना किया। उसने अपनी गदा से प्रहार किया जिससे आपका धनुष शार्ङ्ग गिर पडा। फिर आपके देखते ही देखते उसने माया से रचे आपके पिता वसुदेव का भी वध कर दिया। कुछ जन कहते हैं कि उसके इस मायावी कृत्य को आधे क्षण के लिए आप भी नहीं समझ सके थे। किन्तु स्वयं व्यास ने इस धारणा का निषेध किया है।

क्षिप्त्वा सौभं गदाचूर्णितमुदकनिधौ मङ्क्षु साल्वेऽपि चक्रे-
णोत्कृत्ते दन्तवक्त्र: प्रसभमभिपतन्नभ्यमुञ्चद्गदां ते ।
कौमोदक्या हतोऽसावपि सुकृतनिधिश्चैद्यवत्प्रापदैक्यं
सर्वेषामेष पूर्वं त्वयि धृतमनसां मोक्षणार्थोऽवतार: ॥३॥

क्षिप्त्वा सौभं	फेंक कर सौभ को
गदा-चूर्णितम्-	गदा से चूर्णित को
उदकनिधौ मङ्क्षु	समुद्र में तुरन्त
साल्वे-अपि-चक्रेण-	साल्व के भी चक्र से
उत्कृत्ते दन्तवक्त्रः	काट दिए जाने पर, दन्तवक्त्र
प्रसभम्-अभिपतन्-	वेगपूर्वक आक्रमण करते हुए
अभ्यमुञ्चत्-गदां ते	दे मारा गदा को आप पर
कौमोदक्या	कौमुदकी से
हतः-असौ-अपि	मार दिया गया यह भी
सुकृति-निधिः-	पुण्यशाली
चैद्य-वत्-प्रापत्-ऐक्यं	चैद्य के समान पा गया एकत्व
सर्वेषाम्-एष	सभी जनों के लिए, यह
पूर्वं त्वयि धृत-मनसां	पहले से आपमें चित्त लगाए हुओं के
मोक्षण-अर्थः-अवतारः	मोक्ष के लिए, था यह अवतार (आपका)

गदा से सौभ विमान को चकनाचूर करके आपने उसे समुद्र में फेंक दिया और तुरन्त ही साल्व के शिर को भी चक्र से काट दिया। तब दन्तवक्त्र ने वेगपूर्वक आप पर आक्रमण कर गदा को आप पर दे मारा। आपने उसे कौमुदकी से मार डाला। दन्तवक्त्र ने चेद्य (शिशुपाल) के समान ही आपके साथ एकत्व प्राप्त कर लिया और पुण्यशाली कहलाया। निश्चय ही आपका यह अवतार उन सभी लोगों को मोक्ष देने के लिए हुआ है, जो बहुत समय से आपमें ही चित्त लगाए हुए थे।

त्वय्यायातेऽथ जाते किल कुरुसदसि द्यूतके संयतायाः
क्रन्दन्त्या याज्ञसेन्याः सकरुणमकृथाश्चेलमालामनन्ताम् ।
अन्नान्तप्राप्तशर्वांशजमुनिचकितद्रौपदीचिन्तितोऽथ
प्राप्तः शाकान्नमश्नन् मुनिगणमकृथास्तृप्तिमन्तं वनान्ते ॥४॥

त्वयि-आयाते-अथ	आपके आ जाने पर, इसके बाद

जाते किल कुरुसदसि	सम्पन्न हुआ निस्सन्देह कुरुसभा में
द्यूतके संयताया:	कपट द्यूत क्रीडा (जिसमें) खींच लाई गई
क्रन्दन्त्या याज्ञसेन्या:	रोती हुई द्रौपदी
सकरुणम्-अकृथा:-	दु:खित, कर दिया (उसके)
चेल-मालाम्-अनन्ताम्	वस्त्र को माला के समान अनन्त
अन्न-अन्त-प्राप्त-	अन्न के समाप्त हो जाने पर
शर्वांशज-मुनि-	शंकर के अंशज मुनि (दुर्वासा)
चकित्-द्रौपदी-	(को देख कर) चकित हुई द्रौपदी ने
चिन्तित:-अथ प्राप्त:	आपका स्मरण किया, पहुंच कर (आपने)
शाक-अन्नम्-अश्नन्	पत्ते का शाकअन्न खा कर
मुनिगणम्-अकृथा:-	मुनिगण को कर दिया
तृप्तिम्-अन्तम् वनान्ते	तृप्त समुचित, वनान्त में

आपके द्वारका लौट आने के बाद, कुरुसभा में कपट द्यूत क्रीडा सम्पन्न हुई। उसमें रोती हुई दु:खित द्रौपदी को खींच लाया गया। करुणा परिपूर्ण आपने उसके वस्त्र को माला के समान अन्तहीन कर दिया। फिर वनवास के समय एकबार, सब का भोजन समाप्त हो जाने पर, शंकर अंशज दुर्वासा को शिष्यों सहित देख कर द्रौपदी चिन्तित हो गई। उसने तब आपका स्मरण किया। आपने वहां पहुंच कर शाक अन्न खा कर मुनिगण की समुचित क्षुधा तृप्त कर दी।

युद्धोद्योगेऽथ मन्त्रे मिलति सति वृत: फल्गुनेन त्वमेक:
कौरव्ये दत्तसैन्य: करिपुरमगमो दौत्यकृत् पाण्डवार्थम् ।
भीष्मद्रोणादिमान्ये तव खलु वचने धिक्कृते कौरवेण
व्यावृण्वन् विश्वरूपं मुनिसदसि पुरीं क्षोभयित्वागतोऽभू: ॥५॥

युद्ध-उद्योगे-अथ	युद्ध के उद्योग (तैयारी) में तब
मन्त्रे मिलति सति	मन्त्रणाओं का विचार करते समय
वृत: फल्गुनेन त्वम्-एक:	वरण किया अर्जुन ने आपका एकमात्र

कौरव्ये दत्त-सैन्य:	कौरवों को दे दी सेना
करिपुरम्-अगम:	हस्तिनापुर को आए (आप)
दौत्य-कृत् पाण्डव-अर्थम्	दूत कर्तव्य करने के लिए पाण्डवों के लिए
भीष्म-द्रोण-आदि-मान्ये	भीष्म द्रोण आदि के मान लेने पर
तव खलु वचने	आपके निस्सन्देह वचन
धिक्कृते कौरवेण	अमान्य करदेने पर कौरव (दुर्योधन) के
व्यावृण्वन् विश्वरूपं	धारण किया विश्वरूप
मुनि-सदसि	मुनियों की सभा में
पुरीं क्षोभयित्वा-	हस्तिनापुर को विचलित कर के
गत:-अभू:	चले आए

युद्ध की तैयारियां और मन्त्रणाएं करने के समय, अर्जुन ने एकमात्र आपका ही वरण किया। आपनी यादव सेना आपने कौरवों को दे दी। पाण्डवों के हित के लिए दूत का कर्तव्य निभाते हुए आप हस्तिनापुर आए। भीष्म द्रोण आदि ने निस्सन्देह आपके वचनों को मान लिया, किन्तु कौरव दुर्योधन ने उसे अमान्य कर दिया। तब मुनिजन की सभा में आपने विश्वरूप प्रकट किया, जिसको देख कर सारा हस्तिनापुर विचलित हो गया। फिर आप द्वारका लौट आए।

जिष्णोस्त्वं कृष्ण सूत: खलु समरमुखे बन्धुघाते दयालुं
खिन्नं तं वीक्ष्य वीरं किमिदमयि सखे नित्य एकोऽयमात्मा ।
को वध्य: कोऽत्र हन्ता तदिह वधभियं प्रोज्झ्य मय्यर्पितात्मा
धर्म्यं युद्धं चरेति प्रकृतिमनयथा दर्शयन् विश्वरूपम् ॥६॥

जिष्णो:-त्वं	अर्जुन को आपने
कृष्ण सूत: खलु	हे कृष्ण सारथी (रूप में) निश्चय ही
समर-मुखे	युद्ध के प्रारम्भ में
बन्धु-घाते दयालुं	स्वजनों के वध (के प्रसंग) में दयालू को
खिन्नं तं वीक्ष्य वीरं	दु:खी उसको देख कर वीर को

किम्-इदम्-अयि सखे	क्या यह हे सखे
नित्य:-एक:-अयम्-आत्मा	अविनाशी और अद्वितीय है यह आत्मा
क: वध्य:	कौन वध के योग्य है
क:-अत्र हन्ता	कौन यहां वध करने वाला है
तत्-इह	इसलिए यहां
वध-भियं प्रोज्झ्य	हिंसा के भय को त्याग कर
मयि-अर्पित-आत्मा	मुझ में आत्मा का समर्पण करके
धर्म्यम् युद्धं चर-इति	धर्म युक्त युद्ध का पालन करो, इस प्रकार
प्रकृतिम्-अनयथा:	प्रकृतिस्थ अवस्था में ला कर (अर्जुन को)
दर्शयन् विश्वरूपम्	(और) दिखला कर विश्वरूप

आपने अर्जुन का सारथीत्व किया। युद्धारम्भ के पहले स्वजनों के वध के प्रसंग में वीर अर्जुन को कातर और दु:खी देख कर आपने कहा, 'हे सखे! यह क्या है? यह आत्मा अविनाशी और अद्वितीय है। यहां कौन वध के योग्य है, और कौन वध करने वाला है? अतएव यहां हिंसा के भय को त्याग कर, मुझमें आत्म समर्पण कर के धर्म युक्त युद्ध करने में संलग्न हो जाओ।'ऐसा कह कर और अपना विश्वरूप दिखला कर आप अर्जुन को प्रकृतिस्थ अवस्था में ले आए।

भक्तोत्तंसेऽथ भीष्मे तव धरणिभरक्षेपकृत्यैकसक्ते
नित्यं नित्यं विभिन्दत्ययुतसमधिकं प्राप्तसादे च पार्थे ।
निश्शस्त्रत्वप्रतिज्ञां विजहदरिवरं धारयन् क्रोधशाली-
वाधावन् प्राञ्जलिं तं नतशिरसमथो वीक्ष्य मोदादपागा: ॥७॥

भक्त-उत्तंसे-अथ भीष्मे	भक्तशिरोमणि तब भीष्म के
तव धरणि-भर-क्षेप-	आपके धरती के भार को हटाने के
कृत्ये-एक-सक्ते	कार्य में अकेले संलग्न (हो कर)
नित्यं नित्यं विभिन्दति-	प्रतिदिन मारते हुए
अयुत-सम-अधिकं	दस हजार प्राय: से भी अधिक को

प्राप्त-सादे च पार्थे	और क्लान्त हो जाने पर अर्जुन के
निश्शस्त्रत्व-प्रतिज्ञां	निश्शस्त्र रहने की प्रतिज्ञा को
विजहत्-अरिवरं	त्याग कर, सुदर्शन चक्र को
धारयन् क्रोधशाली-	धारण करके क्रोध से
इव-अधावन्	मानो भागते हुए
प्राञ्जलिं तं	हाथ जोडे हुए उस (भीष्म) को
नतशिरसम्-अथ	नतमस्तक को तब
वीक्ष्य मोदात्-अपागा:	देख कर हर्ष से लौट गए

युद्ध में भक्तशिरोमणि भीष्म, भू भार को क्षीण करने के आपके कार्य में संलग्न, प्रति दिन प्राय: दस हजार से अधिक सैनिकों को अकेले ही मार रहे थे। अर्जुन क्लान्त हो गए थे। तब आपने अपनी निश्शस्त्र रहने की प्रतिज्ञा को भुला कर अपने दिव्य आयुध सुदर्शन चक्र को धारण कर क्रोध पूर्वक भीष्म की ओर भागे। भीष्म को अञ्जलि बद्ध नतमस्तक अवस्था में देख कर आप हर्ष से लौट गए।

युद्धे द्रोणस्य हस्तिस्थिररणभगदत्तेरितं वैष्णवास्त्रं
वक्षस्याधत्त चक्रस्थगितरविमहा: प्रार्दयत्सिन्धुराजम् ।
नागास्त्रे कर्णमुक्ते क्षितिमवनमयन् केवलं कृत्तमौलिं
तत्रे तत्रापि पार्थं किमिव नहि भवान् पाण्डवानामकार्षीत् ॥८॥

युद्धे द्रोणस्य	युद्धमें द्रोण के साथ
हस्ति-स्थिर-	हाथी पर बैठे हुए
रण-भगदत्त-ईरितं	युद्ध करते हुए भगदत्त ने छोडा (जो)
वैष्णव-अस्त्रं	वैष्णव अस्त्र (उसको)
वक्षसि-आधत्त	वक्षस्थल पर ले लिया (आपने)
चक्र-स्थगित-	सुदर्शन चक्र में रोक लिया
रवि-महा:	सूर्य की किरणो को

प्रार्दयत्-सिन्धुराजं	(और) मार दिया जयद्रथ को
नाग-अस्त्रे कर्ण-मुक्ते	नाग अस्त्र कर्ण के छोडने पर
क्षितिम्-अवनमयन्	धरती को नीचा करके
केवलं कृत्त-मौलिं	केवल कट जाने से किरीट
तत्रे तत्र-अपि पार्थं	रक्षा की वहां भी आर्जुन की
किम्-इव नहि भवान्	क्या कुछ नहीं आपने
पाण्डवानाम्-अकार्षीत्	पाण्डवों के (हित के) लिए किया

युद्ध में द्रोणाचार्य के साथ हाथी पर सुस्थित भगदत्त ने अर्जुन के ऊपर वैष्णवास्त्र चलाया जिसे आपने अपने वक्षस्थल पर झेल लिया। पुन: अपने दिव्य अस्त्र सुदर्शन से सूर्य की किरणों को रोक कर सिन्धुराज जयद्रथ के वध में सहायक हुए। उसके बाद जब कर्ण ने अर्जुन के ऊपर नागास्त्र का प्रयोग किया, तब आपने पैर से धरती को नीचे कर दिया, फलस्वरूप अर्जुन का केवल किरीट ही कटा, वह स्वयं बच गया। इस प्रकार आपने पाण्डवों के हित के लिए क्या क्या नहीं किया?

युद्धादौ तीर्थगामी स खलु हलधरो नैमिषक्षेत्रमृच्छ-
न्नप्रत्युत्थायिसूतक्षयकृदथ सुतं तत्पदे कल्पयित्वा ।
यज्ञघ्नं वल्कलं पर्वणि परिदलयन् स्नाततीर्थो रणान्ते
सम्प्राप्तो भीमदुर्योधनरणमशमं वीक्ष्य यात: पुरीं ते ॥९॥

युद्ध-आदौ तीर्थ-गामी	(महाभारत)युद्ध के प्रारम्भ में तीर्थ को जाते हुए
स खलु हलधर:	उन ही बलराम ने
नैमिष-क्षेत्रम्-ऋच्छन्-	नैमिष क्षेत्र का भ्रमण किया
अप्रत्युत्थायि-सूत-	उठ कर अभिवादन न करने के कारण सूत को
क्षय-कृत्-अथ	मार कर तब
सुतं तत्-पदे	पुत्र को उसके स्थान पर
कल्पयित्वा	नियुक्त कर के
यज्ञघ्नं वल्कलं	यज्ञ को नष्ट करने वाले वल्कल (असुर) को

पर्वणि परिदलयन्	पर्व के समय, मार कर
स्नात-तीर्थ:	स्नान करके तीर्थ जलों में
रण-अन्ते सम्प्राप्त:	युद्ध के अन्त में लौट कर
भीम-दुर्योधन-रणम्-	भीम और दुर्योधन के (गदा) युद्ध को
अशमं वीक्ष्य यात:	समाप्त न होते हुए देख कर चले गए
पुरीं ते	(द्वारिका) पुरी को आपके

महाभारत युद्ध के प्रारम्भ में ही बलराम तीर्थ यात्रा के लिए निकल गए। उन्होंने नैमिष क्षेत्र का भ्रमण किया। उठ कर अभिवादन न करने की धृष्टता के कारण सूत को मार डाला और उसके पुत्र को उसके स्थान पर नियुक्त कर दिया। पर्व के समय किए जाने वाले यज्ञ का विध्वन्स करने वाले वल्कल असुर का वध कर दिया। तत्पश्चात तीर्थ जलों में स्नान किया और कुरुक्षेत्र लौट आए। किन्तु यह देख कर कि भीम और दुर्योधन के बीच अभी भी गदा युद्ध समाप्त नहीं हुआ, वे आपकी पुरी द्वारिका लौट आए।

संसुप्तद्रौपदेयक्षपणहतधियं द्रौणिमेत्य त्वदुक्त्या
तन्मुक्तं ब्राह्ममस्त्रं समहृत विजयो मौलिरत्नं च जह्रे ।
उच्छित्यै पाण्डवानां पुनरपि च विशत्युत्तरागर्भमस्त्रे
रक्षन्नङ्गुष्ठमात्र: किल जठरमगाश्चक्रपाणिर्विभो त्वम् ॥१०॥

संसुप्त-द्रौपदेय	निद्रा मग्न द्रौपदी के पुत्रों का
क्षपण-हत-धियं	वध करके नष्ट बुद्धि उस के
द्रौणिम्-एत्य	द्रोण के पुत्र (अश्वत्थामा) के निकट जा कर
त्वत्-उक्त्या	आपके कहने से
तत्-मुक्तं ब्राह्मम्-अस्त्रं	उसके छोडे हुए ब्रह्मास्त्र को
समहृत विजय:	स्तम्भित कर दिया अर्जुन ने
मौलिरत्नम् च जह्रे	और (उसके) मौलिरत्न को छीन लिया
उच्छितै पाण्डवानां	उच्छेदन करने के लिए पाण्डवों का
पुन;-अपि च	और फिर से भी

विशति-उत्तरा-गर्भम्-	प्रवेश करने पर उत्तरा के गर्भ में
अस्त्रे रक्षन्-	अस्त्र के, रक्षा करते हुए
अङ्गुष्ठ-मात्र: किल	अंगूठे के बराबर ही
जठरम्-अगा:-	उदर में गए
चक्रपाणि:-विभो त्वम्	चक्र धारण करके हे विभो! आप

द्रौपदी के निद्रामग्न पुत्रों का, द्रोणपुत्र नीच अश्वत्थामा ने हनन कर दिया, नष्ट बुद्धि उसने ब्रह्मास्त्र का मोचन कर दिया। तब आपके आदेश से अर्जुन ने उसके उसके समीप जा कर उस अस्त्र को स्तम्भित कर दिया और अश्वत्थामा का मौलिरत्न छीन लिया। पाण्डवों के उच्छेदन के लिए फिर से वह अस्त्र उत्तरा के गर्भ में प्रवेश कर गया। तब, हे विभो! रक्षा करने के लिए आप अंगुष्ठ मात्र शरीर धारण कर सुदर्शन चक्र के साथ उत्तरा के उदर मे घुस गए।

धर्मौघं धर्मसूनोरभिदधदखिलं छन्दमृत्युस्स भीष्म-
स्त्वां पश्यन् भक्तिभूम्नैव हि सपदि ययौ निष्कलब्रह्मभूयम् ।
संयाज्याथाश्वमेधैस्त्रिभिरतिमहितैर्धर्मजं पूर्णकामं
सम्प्राप्तो द्वरकां त्वं पवनपुरपते पाहि मां सर्वरोगात् ॥११॥

धर्मौघं धर्मसूनो:-	धर्मशास्त्र का धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) को
अभिदधत्-अखिलं	उपदेश दे कर समस्त
छन्द-मृत्यु:-स भीष्म:-	मृत्यु क्षण (ज्ञानी) उन भीष्म ने
त्वां पश्यन्	आपको देखते हुए
भक्ति-भूम्ना-एव हि	भक्ति सुदृढ से ही
सपदि ययौ	शीघ्र ही चले गए
निष्कल-ब्रह्म-भूयम्	कला रहित ब्रह्म स्वरूप मोक्ष को
संयाज्य-अथ-	यजन करके तब
अश्व-मेधै:-त्रिभि:-	अश्व मेध यज्ञों का तीन
अति-महितै:-	अत्यन्त महत्वपूर्ण

धर्मजं पूर्णकामं	धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) को कृतकृत्य कर के
सम्प्राप्त: द्वारकां त्वं	पहुंच गए द्वारका को आप
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
पाहि मां सर्वरोगात्	रक्षा करें मेरी सभी रोगों से

इच्छा मृत्यु वर प्राप्त ज्ञानी भीष्म ने धर्मपुत्र युधिष्ठिर को समस्त धर्म शास्त्रों का उपदेश दे दिया और अपनी सुदृढ भक्ति के बल पर ही आपको देखते हुए निष्कल ब्रह्मस्वरूप मोक्ष प्राप्त कर लिया। तत्पश्चात युधिष्ठिर ने तीन महत्वपूर्ण अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया। उसको कृतकृत्य करके आप द्वारका लौट गए। हे पवनपुरपते! सभी रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ८७

कुचेलनामा भवत: सतीर्थ्यतां गत: स सान्दीपनिमन्दिरे द्विज: ।
त्वदेकरागेण धनादिनिस्स्पृहो दिनानि निन्ये प्रशमी गृहाश्रमी ॥१॥

कुचेल-नामा	कुचेल (सुदामा) नामक
भवत: सतीर्थ्यतां	आपका सहपाठी
गत: स	जा कर वह
सान्दीपनि-मन्दिरे	सान्दीपनि के आश्रम में
द्विज:	(वह) ब्राह्मण
त्वत्-एक-रागेण	आपमें ही एकमात्र अनुरागी (होने के कारण)
धन-आदि-निस्स्पृह:	धन आदि (लालसाओं) के अनिच्छुक
दिनानि निन्ये	दिनों को व्यतीत करते थे
प्रशमी गृहाश्रमी	जितेन्द्रिय हो कर गृहस्थ (पालन करते थे)

सान्दीपनि मुनि के आश्रम में कुचेल नामक आपके सहपाठी ब्राह्मण एकमात्र आप ही में अनुराग रखते थे। इसी कारण वे धन आदि लालसाओं से निस्स्पृह थे। वे जितेन्द्रिय थे और गृहस्थ आश्रम का निर्वाह करते हुए दिन व्यतीत करते थे।

समानशीलाऽपि तदीयवल्लभा तथैव नो चित्तजयं समेयुषी ।
कदाचिदूचे बत वृत्तिलब्धये रमापति: किं न सखा निषेव्यते ॥२॥

समान-शीला-अपि	(उनके) समान ही शील (स्वभाव) होने पर भी
तदीय-वल्लभा	उनकी पत्नी
तथा-एव नो	उस प्रकार का नहीं
चित्त-जयं समेयुषी	चित्त पर अधिकार पा सकी
कदाचित्-ऊचे बत	एक समय बोली अहो!
वृत्ति-लब्धये	जीविका प्राप्ति के लिए

रमापतिः	लक्ष्मीपति
किं न सखा	क्यों नही (अपने) सखा की
निषेव्यते	सेवा में जाते

उनकी पत्नी उनके समान ही शील स्वभाव की थी परन्तु अपने चित्त पर वैसा अधिकार नहीं पा सकी थीं। एक समय अपने पति को बोली, 'जीविका अर्जन के लिए आप अपने सखा लक्ष्मीपति की सेवा में क्यों नहीं जाते।'

इतीरितोऽयं प्रियया क्षुधार्तया जुगुप्समानोऽपि धने मदावहे ।
तदा त्वदालोकनकौतुकाद्ययौ वहन् पटान्ते पृथुकानुपायनम् ॥३॥

इति-ईरितः-अयं	इस प्रकार कहे जाने पर यह
प्रियया क्षुधार्तया	प्रिया के द्वारा क्षुधा पीडिता
जुगुप्समानः-अपि	तिरस्कार करते हुए भी
धने मद-आवहे	धन का उन्मत्त बना देने के कारण
तदा त्वत्-आलोकन-	उस समय आपको देखने की
कौतुकात्-ययौ	उत्सुकता से चले गए
वहन् पट-अन्ते	ले कर कपडे के कोने में
पृथुकान्-उपायनम्	चिडवा भेंट स्वरूप

इस प्रकार क्षुधा पीडिता पत्नी के कहने पर, धन की भर्त्सना करते हुए भी, कि वह उन्मत्त बना देता है, कुचेल मात्र आपके दर्शन की उत्कट इच्छासे प्रेरित हो कर द्वारका गए। भेंट स्वरूप वे अपने वस्त्र के कोने में चिडवा लेते गए।

गतोऽयमाश्चर्यमयीं भवत्पुरीं गृहेषु शैब्याभवनं समेयिवान् ।
प्रविश्य वैकुण्ठमिवाप निर्वृतिं तवातिसम्भावनया तु किं पुनः ॥४॥

गतः-अयम्-	जा कर वे
आश्चर्यमयीम्	अद्भुत
भवत्-पुरीम्	अपकी पुरी को

गृहेषु शैब्या-भवन	अनेक घरों में से, मित्रवृन्दा के घर में
समेयिवान्	प्रवेश कर गए
प्रविश्य	प्रवेश करने पर
वैकुण्ठम्-इव-	वैकुण्ठ के समान
आप निवृतिं	प्राप्त किया परमानन्द
तव-अति-सम्भावनया	आपके अत्यधिक आदर सत्कार से
तु किम् पुन:	तो (और) कितना अधिक

अद्‌भुत आश्चर्य चकित कर देने वाली द्वारका पुरी पहुंच कर, वहां के अनेक घरों में से वे मित्रवृन्दा के घर में प्रवेश कर गए। वहां प्रवेश करने पर उन्हें वैकुण्ठ के समान ही पमानन्द प्राप्त हुआ। पुन: आपके अत्यधिक आदर सत्कार से तो और कितना अवर्णनीय आनन्द प्राप्त हुआ होगा!!

प्रपूजितं तं प्रियया च वीजितं करे गृहीत्वाऽकथय: पुराकृतम् ।
यदिन्धनार्थं गुरुदारचोदितैरपर्तुवर्षं तदमर्षि कानने ॥५॥

प्रपूजितं तं	सुसत्कृत उनको
प्रियया च वीजितं	और प्रिया (रुक्मिणी) के पंखा झलने पर
करे गृहीत्वा-	हाथ (अपने हाथ) में लेकर
अकथय:	कहा (आपने)
पुराकृतम्	पहले की हुई (घटना)
यत्-इन्धन-अर्थम्	जैसे इन्धन के लिए
गुरु-दार-चोदितै:-	गुरू पत्नी के द्वारा भेजे गए
अपर्तु-वर्षम्	ऋतु के विपरीत वर्षा
तत्-अमर्षि कानने	वह हुई थी वन में

उनका सुस्त्कार कर के, आपकी प्रिया पत्नी रुक्मिणी पंखा झलने लगीं। तब आपने उनका हाथ अपने हाथ में ले कर पुरानी

घटनाओं का स्मरण कराया, जैसे एक बार जब गुरु पत्नि के आदेश से आप दोनों जंगल में इन्धन लाने गए थे तब वहां वन में, ऋतु के विपरीत वर्षा होने लगी थी।

त्रपाजुषोऽस्मात् पृथुकं बलादथ प्रगृह्य मुष्टौ सकृदाशिते त्वया ।
कृतं कृतं नन्वियतेति संभ्रमाद्रमा किलोपेत्य करं रुरोध ते ॥६॥

त्रपाजुषः-अस्मात्	लज्जित होते हुए उनसे
पृथुकम् बलात्-अथ	चिडवे बलपूर्वक तब
प्रगृह्य	छीन कर
मुष्टौ सकृत्-	मुट्ठी एक
आशिते त्वया	खा लेने पर आपके
कृतं कृतं	बस बस
ननु-इयत-इति	इतना ही पर्याप्त है इस प्रकार
संभ्रमात्-रमा	ससम्भृत रुक्मिणी ने
किल-उपेत्य	निस्सन्देह निकट आ कर
करं रुरोध ते	हाथ रोक दिया आपका

इस प्रकार के अप्रत्याशित सत्कार से संकुचित सुदामा से आपने बलपूर्वक चिडवे छीन लिए। आपके एक मुट्ठी चिडवा खालेने पर ही, 'बस बस इतना पर्याप्त है' कहते हुए ससम्भृत रुक्मिणी ने निकट आ कर आपका हाथ रोक लिया।

भक्तेषु भक्तेन स मानितस्त्वया पुरीं वसन्नेकनिशां महासुखम् ।
बतापरेद्युर्द्रविणं विना ययौ विचित्ररूपस्तव खल्वनुग्रहः ॥७॥

भक्तेषु भक्तेन	भक्तों में भक्त
स मानितः-	वह सम्मानित हुए
त्वया पुरीं वसन्-	आपके द्वारा, पुरी में रह कर
एक निशाम्	एक रात्रि के लिए

महा-सुखम्	अत्यन्त सुख से
बत-अपरेद्युः-	अहो! दूसरे दिन
द्रविणं विना ययौ	धन के बिना चले गए
विचित्र-रूपः-तव	अद्भुत रूपों की है
खलु-अनुग्रहः	आपकी कृपा

भक्तों में श्रेष्ठ भक्त रूप में आपके द्वारा सुसम्मानित हो कर एक रात्रि के लिए आपके मित्र द्वारका में अत्यन्त सुख से रहे। दूसरे दिन अहो! बिना धन के ही वे चले गए। अपकी कृपा भी कितने अद्भुत रूपों वाली होती है!

यदि ह्ययाचिष्यमदास्यदच्युतो वदामि भार्यां किमिति व्रजन्नसौ ।
त्वदुक्तिलीलास्मितमग्नधीः पुनः क्रमादपश्यन्मणिदीप्रमालयम् ॥८॥

यदि हि-अयाचिष्यम्-	यदि ही याचना करता (मैं)
अदास्यत्-अच्युतः	दे देते अच्युत (कृष्ण)
वदामि भार्यां किम्-इति	कहूंगा क्या पत्नी को इस प्रकार
व्रजन्-असौ	चलते हुए यह
त्वत्-उक्ति-लीला-स्मित-	आपकी बातें, (आपकी) लीला, (आपकी) मुस्कान में
मग्न-धीः पुनः	निमग्न हो जाता (था) उनका मन, फिर
क्रमात्-अपश्यत्-	क्रमशः देखा
मणि-दीप्रम्-आलयम्	मणियों से देदीप्यमान भवन

यदि, याचना करता तो अवश्य ही अच्युत कृष्ण मुझे धन दे देते। अब पत्नी को क्या कहूंगा।' इस प्रकार सोचते हुए, आपकी ही बातों में, आप ही की लीलाओं में, आप ही की मुस्कान में मग्न चित्त वे मार्ग में चले जाते थे। क्रमशः उन्होने देखा - मणियों से देदीप्यमान एक भवन।

किं मार्गविभ्रंश इति भ्रंमन् क्षणं गृहं प्रविष्टः स ददर्श वल्लभाम् ।
सखीपरीतां मणिहेमभूषितां बुबोध च त्वत्करुणां महाद्भुताम् ॥९॥

किं मार्ग-विभ्रंश	क्या मार्ग भूल गया
इति भ्रंमन् क्षणं	इस प्रकार भ्रमित हो कर क्षण भर के लिए
गृहं प्रविष्टः	घर में प्रवेश कर के
स ददर्श वल्लभाम्	उन्होंने देखा पत्नी को
सखी-परीतां	सखियों से घिरी हुई
मणि-हेम-भूषितां	मणियों और सोने के आभूषणों से भूषित
बुबोध च	और समझ गए
त्वत्-करुणां	आपकी करुणा को
महा-अद्भुताम्	(जो) अत्यन्त ही विचित्र है

उस भवन को देख कर क्षण भर के लिए सुदामा को भ्रम हुआ कि कहीं वे मार्ग तो नहीं भूल गए। फिर घर में प्रवेश कर के उन्होने अपनी पत्नी को देखा जो सोने और मणियों के आभूषणों से भूषित थी और सखियां उन्हें घेरे हुए थीं। तब सुदामा को आपकी अत्यन्त विचित्र करुणा का ज्ञान हुआ।

स रत्नशालासु वसन्नपि स्वयं समुन्नमद्भक्तिभरोऽमृतं ययौ ।
त्वमेवमापूरितभक्तवाञ्छितो मरुत्पुराधीश हरस्व मे गदान् ॥१०॥

स रत्न-शालासु	वह मणिमय भवन में
वसन्-अपि स्वयं	निवास करते हुए भी स्वयं
समुन्नमद्-भक्ति-भरः-	(उनकी) विकसित होती गई भक्ति की प्रगाढता
अमृतं ययौ	(और) वे मोक्ष को प्राप्त हुए
त्वम्-एवम्-आपूरित-	आप ने इस प्रकार पूर्ण किया
भक्त-वाञ्छितः	भक्त का मनोरथ
मरुत्पुराधीश	हे मरुत्पुराधीश!
हरस्व मे गदान्	हर लीजिए मेरे रोगों को

उस मणिमय भवन में निवास करते हुए भी स्वयं सुदामा की भक्ति की प्रगाढता क्रमशः विकसित होती गई, और वे मोक्ष को प्राप्त हुए। इस प्रकार अपने भक्तों के मनोरथों को परिपूर्ण करने वाले, हे मरुत्पुराधीश! आप मेरे रोगों को हर लीजिए।

दशक ८८

प्रागेवाचार्यपुत्राहृतिनिशमनया स्वीयषट्सूनुवीक्षां
काङ्क्षन्त्या मातुरुक्त्या सुतलभुवि बलिं प्राप्य तेनार्चितस्त्वम् ।
धातु: शापाद्धिरण्यान्वितकशिपुभवान् शौरिजान् कंसभग्ना-
नानीयैनान् प्रदर्श्य स्वपदमनयथा: पूर्वपुत्रान् मरीचे: ॥१॥

प्राक्-एव-	बहुत समय से ही
आचार्य-पुत्र-आहृति-	(अपने) आचार्य के पुत्रों को लौटा लाने
निशमनया	(के विषय में) सुन ने से
स्वीय-षट्-सूनु-	स्वयं के छह पुत्रों को
वीक्षां कांक्षन्त्या	देखने की इच्छा वाली
मातु:-उक्त्या	माता के कहने से
सुतल-भुवि बलिं प्राप्य	सुतल लोक में बलि के पास पहुंच कर
तेन-अर्चित:-त्वम्	उसके द्वारा अर्चित हुए आप
धातु: शापात्-	ब्रह्मा के शाप से
हिरण्यान्वितकशिपु	हिरण्यकशिपु से जन्मे
भवान् शौरिजान्	(जो अब) आप वसुदेव से जन्मे (थे)
कंस-भग्नान्-	(और) कंस ने मार दिया था (उनको)
आनीय-एनान् प्रदर्श्य	ला कर उनको दिखा कर (माता को)
स्वपदम्-अनयथा:	निज पद को ले गए
पूर्व-पुत्रान्-मरीचे:	(ये पहले) पुत्र थे मरीचि के

अपने गुरु पुत्रों को ला कर अपने आचार्य को लौटा देने की आपकी गाथा सुन कर आपकी माता देवकी की भी इच्छा हुई अपने छह पुत्रों को देखने की। माता की आज्ञा से आप सुतल लोक पहुंचे। वहां महाबलि ने आपकी समर्चना की। पूर्व काल में वे छहों मरीचि के पुत्र थे जो ब्रह्मा के शाप से हिरण्यकशिपु के पुत्रों के रूप में जन्मे थे। वे ही फिर वसुदेव के सुत हुए

थे, जिन्हें मामा कंस ने मार दिया था। उन्हें ला कर आपने माता से मिलाने के बाद आप उन सब को अपने वैकुण्ठ धाम को ले गए।

श्रुतदेव इति श्रुतं द्विजेन्द्रं
बहुलाश्वं नृपतिं च भक्तिपूर्णम् ।
युगपत्त्वमनुग्रहीतुकामो
मिथिलां प्रापिथ तापसैः समेतः ॥२॥

श्रुतदेव	श्रुतदेव
इति श्रुतं	इस प्रकार विख्यात
द्विजेन्द्रम्	ब्राह्मण को
बहुलाश्वम्	बहुलाश्व
नृपतिं च भक्तिपूर्णम्	राजा को और भक्ति से परिपूर्ण
युगपत्-	दोनों को एक संग
त्वम्-अनुग्रहीतु-कामः	आप अनुग्रह करने की इच्छा से
मिथिलां प्रापिथ	मिथिला को पहुंचे
तापसैः समेतः	तपस्वी जनों के साथ

श्रुतदेव नाम से विख्यात ब्राह्मण और राजा बहुलाश्व, दोनो ही भक्ति से परिपूर्ण थे। उन दोनों पर एक संग अनुग्रह करने की इच्छा से आप तपस्वी जनो के साथ मिथिला पहुंचे।

गच्छन् द्विमूर्तिरुभयोर्युगपन्निकेत-
मेकेन भूरिविभवैर्विहितोपचारः ।
अन्येन तद्दिनभृतैश्च फलौदनाद्यै-
स्तुल्यं प्रसेदिथ ददाथ च मुक्तिमाभ्याम् ॥३॥

गच्छन्-द्विमूर्तिः-	जा कर दो स्वरूपों में
उभयोः-युगपत्-	दोनों के पास एक ही समय में
निकेतम्-	(उनके) घर को

एकेन भूरिविभवैः-	एक के द्वारा अनेक वैभवों से
विहित-उपचारः	किया गया (आपका) पूजन
अन्येन	दूसरे के द्वारा
तत्-दिन-भृतैः-च	और उस दिन के भिक्षा से
फल-ओदन-आद्यैः-	(प्राप्त) फल चावल आदि से
तुल्यं प्रसेदिथ	समान रूप से ही प्रसादित किया
ददाथ च	और दे दी
मुक्तिम्-आभ्यम्	मुक्ति दोनों को

दो स्वरूप धारण कर के आप एक ही समय में दोनों के घर गए। राजा बहुलाश्व ने अनेक वैभव युक्त सामग्री से आपका परिपूजन किया। द्विज श्रुतदेव ने उस दिन की प्राप्त भिक्षा के फल और चावल आदि से ही आपका आदर सम्मान किया। आपने दोनों को समान रूप से कृतार्थ करते हुए दोनों को मुक्ति प्रदान की।

भूयोऽथ द्वारवत्यां द्विजतनयमृतिं तत्प्रलापानपि त्वम्
को वा दैवं निरुन्ध्यादिति किल कथयन् विश्ववोढाप्यसोढाः ।
जिष्णोर्गर्वं विनेतुं त्वयि मनुजधिया कुण्ठितां चास्य बुद्धिं
तत्त्वारूढां विधातुं परमतमपदप्रेक्षणेनेति मन्ये ॥४॥

भूयः-अथ द्वारवत्यां	पुनः तब द्वारका में
द्विज-तनय-मृतिम्	ब्राह्मण के पुत्रों की मृत्यु (के कारण)
तत्-प्रलापान्-अपि त्वम्	उसके प्रलापों को भी आप
को वा दैवं निरुन्ध्यात्-	कौन अथवा भाग्य को रोक सकता है
इति किल कथयन्	इस प्रकार निश्चय ही कह कर
विश्व-वोढा-अपि-	विश्व का वहन करने वाले भी
असोढाः	नहीं उठाया (उसे)
जिष्णोः-गर्वम्	अर्जुन के गर्व को

विनेतुं त्वयि	दूर करने के लिए, आपमें
मनुज-धिया	मनुजत्व की बुद्धि से
कुण्ठितां च-अस्य बुद्धिम्	और कुण्ठित हुई इसकी बुद्धि को
तत्त्व-आरूढां विधातुं	तत्व (ज्ञान) में ऊंचा उठाने के लिए
परमतम-पद-प्रेक्षणेन-	(अपने) परम पद को दिखा कर
इति मन्ये	ऐसा (मैं) सोचता हूं

द्वारका में एक ब्राह्मण के पुत्रों की मृत्यु जनमते ही हो जाने के कारण हुए उसके विलापों को आपने यह कह कर अनसुना कर दिया कि भाग्य की गति को कौन रोक सकता है। समस्त विश्व के भार को वहन करने वाले आपने उसके दु:ख का वहन नहीं किया। मैं सोचता हूं कि इसका प्रयोजन अर्जुन के गर्व को नष्ट करने का था, क्योंकि उसकी बुद्धि आपमें सामान्य मनुष्यत्व देख कर कुण्ठित हो रही थी। बाद में आपने उसे अपना परम पद दिखाया, क्योंकि आप उसके तत्त्व ज्ञान का उत्कर्ष चाहते थे।

नष्टा अष्टास्य पुत्रा: पुनरपि तव तूपेक्षया कष्टवाद:
स्पष्टो जातो जनानामथ तदवसरे द्वारकामाप पार्थ: ।
मैत्र्या तत्रोषितोऽसौ नवमसुतमृतौ विप्रवर्यप्ररोदं
श्रुत्वा चक्रे प्रतिज्ञामनुपहृतसुत: सन्निवेक्ष्ये कृशानुम् ॥५॥

नष्टाः-अष्ट-अस्य पुत्राः	नष्ट हो गए हैं इसके आठ पुत्र
पुनः-अपि तव तु-	फिर भी आपकी तो
उपेक्षया कष्टवादः	उपेक्षा से असन्तोष की वार्ताएं
स्पष्टः जातः	खुले रूप से चल रही थी
जनानाम्-अथ	जनता में तब
तत्-अवसरे	उस अवसर पर
द्वारकाम्-आप पार्थः	द्वारका में आए आर्जुन
मैत्र्या तत्र-	मित्रता के नाते, वहां
उषितः-असौ	रहते हुए उसके

नवम-सुत-मृतौ	नवम पुत्र के मर जाने से
विप्रवर्य-प्ररोदं	द्विज श्रेष्ठ का रोना
श्रुत्वा चक्रे प्रतिज्ञाम्-	सुन कर, कर ली प्रतिज्ञा
अनुपहृत-सुतः	(यदि) नहीं बचा सकूं बालक को
सन्निवेक्ष्ये कृशानुम्	प्रवेश करूंगा अग्नि में

उसके आठ पुत्रों के नष्ट हो जाने पर भी आपकी उपेक्षा देख कर जनता में स्पष्ट रूप से आपके प्रति असन्तोष की चर्चाएं होने लगीं। उस अवसर पर अर्जुन मित्रता के नाते द्वारका आए। उनके वहां रहते हुए उस द्विज श्रेष्ठ के नवम पुत्र की भी मृत्यु हो गई। उसका विलाप सुन कर अर्जुन ने प्रतिज्ञा कर ली कि 'यदि मैं आपका पुत्र सुरक्षित ला कर ने दे सका तो अग्नि में प्रवेश कर जाऊंगा।'

मानी स त्वामपृष्ट्वा द्विजनिलयगतो बाणजालैर्महास्त्रै
रुन्धानः सूतिगेहं पुनरपि सहसा दृष्टनष्टे कुमारे ।
याम्यामैन्द्रीं तथाऽन्याः सुरवरनगरीर्विद्ययाऽऽसाद्य सद्यो
मोघोद्योगः पतिष्यन् हुतभुजि भवता सस्मितं वारितोऽभूत् ॥६॥

मानी स त्वाम्-अपृष्ट्वा	अभिमानी वह (अर्जुन) आपको पूछे बिना
द्विज-निलय-गतः	ब्राह्मण के घर गया
बाण-जालैः-महा-अस्त्रैः	बाणों के जाल से और महान अस्त्रों से
रुन्धानः सूतिगेहं	आच्छादित कर दिया सूतिका गृह को
पुनः-अपि सहसा	फिर भी अचानक
दृष्ट-नष्टे कुमारे	लुप्त हो जाने पर बालक के
याम्याम्-ऐन्द्रीम्	यम के यहां, इन्द्र के यहां,
तथा-अन्याः	और भी अन्य
सुरवर-नगरीः-	देवताओं की नगरी में
विद्यया-आसाद्य	(योग) विद्या से प्रवेश कर के

सद्यः मोघ-उद्योगः	तुरन्त ही असफल हो कर
पतिष्यन् हुतभुजि	गिरते हुए अग्नि में
भवता सस्मितम्	आपके द्वारा मुस्कुराते हुए
वारितः-अभूत्	रोक लिया गया

अभिमानी अर्जुन आपको पूछे बिना ही विप्रवर के घर चला गया और बाणों तथा महान अस्त्रों से सूतिका गृह को आच्छादित कर दिया। इतने पर भी अचानक बालक के ओझल हो जाने पर, वे, अपनी योग विद्या से यम के घर, इन्द्र के यहां और भी अन्य देवताओं की नगरी में प्रवेश कर के बालक को खोजते रहे। असफल हो जाने पर तुरन्त ही अग्नि में प्रवेश करते हुए अर्जुन को आपने मुस्कुराते हुए रोक लिया।

सार्धं तेन प्रतीचीं दिशमतिजविना स्यन्दनेनाभियातो
लोकालोकं व्यतीतस्तिमिरभरमथो चक्रधाम्ना निरुन्धन् ।
चक्रांशुक्लिष्टदृष्टिं स्थितमथ विजयं पश्य पश्येति वारां
पारे त्वं प्राददर्शः किमपि हि तमसां दूरदूरं पदं ते ॥७॥

सार्धं तेन	साथ में उसके
प्रतीचीं दिशम्-	पश्चिम दिशा को
अति-जविना स्यन्दनेन-	अत्यन्त वेगवान रथ से
अभियातः	प्रयाण करके
लोकालोकं व्यतीतः-	लोकालोक को पार करके
तिमिरभरम्-अथ	अन्धकार घोर को तब
चक्रधाम्ना निरुन्धन्	उज्ज्वल चक्र से काट कर
चक्र-अंशु-क्लिष्ट-दृष्टिम्	चक्र की किरणों से चौंधयाई हुई दृष्टि वाले
स्थितम्-अथ विजयं	खडे हुए तब अर्जुन को
पश्य पश्य-इति	देखो देखो इस प्रकार
वारां पारे	जल के पार

त्वं प्राददर्श:	आपने दिखाया
किमपि हि	कोई निश्चय ही
तमसां दूर दूरं	तामसिक गुण से दूर दूर
पदं ते	पद आपका

अर्जुन के साथ अपने वेगवान रथ से आपने पश्चिम दिशा की ओर प्रयाण किया। वहां लोकालोक को पार करने पर घोर अन्धकार को आपने अपने देदीप्यमान चक्र से काट दिया। चक्र की किरणों से चौंधियाई हुई दृष्टि वाले अर्जुन से कहा, 'देखो देखो'। और जल के उस पार निश्चय ही तामसिक गुणों से रहित कोई अद्भुत धाम दिखाया।

तत्रासीनं भुजङ्गाधिपशयनतले दिव्यभूषायुधाद्यै-
रावीतं पीतचेलं प्रतिनवजलदश्यामलं श्रीमदङ्गम् ।
मूर्तीनामीशितारं परमिह तिसृणामेकमर्थं श्रुतीनां
त्वामेव त्वं परात्मन् प्रियसखसहितो नेमिथ क्षेमरूपम् ॥८॥

तत्र-आसीनम्	वहां बैठे हुए
भुजङ्ग-अधिप-शयन-तले	नागराज के शयन के तल पर
दिव्य-भूषा-आयुध-आद्यै:-	दिव्य वेष भूषा आयुध आदि से
आवीतं पीतचेलं	धारण किए हुए पीताम्बर
प्रतिनव-जलद-श्यामलं	नूतन मेधों के समान श्यामल
श्रीमदङ्गम्	लक्ष्मी अंग सहित
(तिसृणाम्) मूर्तिनाम्-	त्रिमूर्ति (ब्रह्मा विष्णु महेश) के
ईशितारं परम्-	ईश्वर परम
इह तिसृणाम्-	यहां त्रिगुणात्मक (विश्व) के
एकम्-अर्थम्-श्रुतीनां	एकमात्र अर्थ समस्त वेदों के
त्वाम्-एव त्वं	आपको ही आपने
परमात्मन्	हे परमात्मन

प्रिय-सख-सहित:	प्रिय सखा के सहित
नेमिथ क्षेमरूपम्	नमन किया मोक्ष स्वरूप को

हे परमात्मन! वहां नागराज के शरीर के तल्प तल पर आप विराजमान थे। नवीनमेधों के समान श्यामल वर्ण वाले, दिव्य वेष भूषा और आयुधों से सुसज्जित, पीताम्बर धारी, लक्ष्मी के संग, त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) और त्रिगुणात्मक विश्व के परम ईश्वर, तथा समस्त वेदों के एकमात्र अर्थ, स्वयं को ही आपने, अपने प्रिय सखा अर्जुन के साथ देखा और नमन किया, स्वयं के ही मोक्ष स्वरूप को।

युवां मामेव द्वावधिकविवृतान्तर्हिततया
विभिन्नौ सन्द्रष्टुं स्वयमहमहार्षं द्विजसुतान् ।
नयेतं द्रागेतानिति खलु वितीर्णान् पुनरमून्
द्विजायादायादा: प्रणुतमहिमा पाण्डुजनुषा ॥९॥

युवां माम्-एव द्वौ-	तुम दोनों मेरे ही दो (रूप) हो
अधिक-विवृत-अन्तर्हिततया	(एक का) (ऐश्वर्य) अधिक उजागर है (दूसरे का) विलीन है
विभिनौ	(इसलिए) विभिन्न हो
सन्द्रष्टुं	देखने के लिए (तुम दोनों को)
स्वयम्-अहम्-अहार्षम्	स्वयं मैने ही हरण किया
द्विज-सुतान्	द्विज पुत्रों का
नयेतं द्राक्-एतान्-इति	ले जाओ शीघ्र इनको, इस प्रकार
खलु वितीर्णान् पुन:-अमून्	निस्सन्देह दे कर फिर उनको
द्विजाय-आदाय-	ब्राह्मण के लिए ले कर
अदा:	दे दिया
प्रणुत-महिमा	गान किया महिमा का (आपकी)
पाण्डुजनुषा	अर्जुन ने

'तुम दोनों मेरे ही दो रूप हो। एक का ऐश्वर्य उजागर है और दूसरे का अन्तर्निहित है। तुमसे मिलने के लिए स्वयं मैने ही ब्राह्मण पुत्रों का हरण किया था। उनको शीघ्र ले जाओ।" ऐसा कह कर पमेश्वर ने वे बालक आपको ला कर दे दिये और

आपने उन्हें ब्राह्मण को दे दिया। अर्जुन ने आपकी महिमा की स्तुति की।

एवं नानाविहारैर्जगदभिरमयन् वृष्णिवंशं प्रपुष्ण-
न्नीजानो यज्ञभेदैरतुलविहृतिभिः प्रीणयन्नेणनेत्राः ।
भूभारक्षेपदम्भात् पदकमलजुषां मोक्षणायावतीर्णः
पूर्णं ब्रह्मैव साक्षाद्यदुषु मनुजतारूषितस्त्वं व्यलासीः ॥१०॥

एवं नाना-विहारैः-	इस प्रकार विभिन्न लीलाओं से
जगत्-अभिरमयन्	विश्व को आनन्दित करते हुए
वृष्णि-वंशं प्रपुष्णन्-	वृष्णि वंश का पोषण करते हुए
ईजानः-यज्ञ-भेदैः-	यजन करते हुए नानाप्रकार के यज्ञों से
अतुल-विहृतिभिः	अवर्णनीय केली विहारों से
प्रीणयन्-एण-नेत्राः	तृप्त करते हुए मृगनयनी (रानियों) को
भूभार-क्षेप-दम्भात्	भूमि के भार को हटाने के बहाने
पद-कमल-जुषां	(आपके) चरण कमल के सेवक जनों के
मोक्षणाय-अवतीर्णः	मोक्ष के लिए अवतरित
पूर्णं ब्रह्म-एव	पूर्ण ब्रह्म ही
साक्षात्-यदुषु	मूर्त रूप में यदु कुल में
मनुजता-रूषितः-	मनुजता धारण करके
त्वं व्यलासीः	आप देदीप्यमान थे

इस प्रकार विभिन्न लीलाओं से विश्व को आनन्दित करते हुए, वृष्णि वंश का पोषण करते हुए, नाना प्रकार के यज्ञों से यजन करते हुए, अवर्णनीय केली विहारों से मृगनयनी रानियों को तृप्त करते हुए, भूमि के भार के हरण के बहाने, अपने चरण कमलों के सेवकों को मोक्ष देने के लिए अवतरित, परिपूर्ण ब्रह्म ही मूर्त रूप से यदु कुल में मनुजता के छद्म स्वरूप में आलोकित हो रहे थे।

प्रायेण द्वारवत्यामवृतदयि तदा नारदस्त्वद्रसार्द्र-
स्तस्माल्लेभे कदाचित्खलु सुकृतनिधिस्त्वत्पिता तत्त्वबोधम् ।

भक्तानामग्रयायी स च खलु मतिमानुद्धवस्त्वत्त एव
प्राप्तो विज्ञानसारं स किल जनहितायाधुनाऽऽस्ते बदर्याम् ॥११॥

प्रायेण द्वारवत्याम्-	प्राय: ही द्वारका में
अवृतत्-अयि	रहते थे, हे भगवन!
तदा नारदः-	तब नारद
त्वत्-रसार्द्रः-	आपके (भक्ति) रस में निमग्न
तस्मात्-लेभे	उनसे प्राप्त किया
कदाचित्-खलु	किसी समय निस्सन्देह
सुकृत-निधिः-त्वत्-पिता	सुकर्म निधि आपके पिता ने
तत्त्व-बोधम्	तत्त्व ज्ञान
भक्तानाम्-अग्रयायी	भक्त अग्रणी
स च खलु	और उस निश्चय ही
मतिमान्-उद्धवः-	बुद्धिमान उद्धव ने
त्वत्त एव	आपसे ही
प्राप्तः विज्ञान सारं	प्राप्त किया तत्त्वज्ञान का सार
स किल जन-हिताय-	वे निस्सन्देह लोगों के हितार्थ
अधुना-आस्ते बदर्याम्	आज भी रहते हैं बद्रिकाश्रम में

हे भगवन! आपकी भक्ति रस में निमग्न नारद तब प्राय: ही द्वारका में रहते थे। किसी समय, आपके सुकर्म निधि पिता वसुदेव ने, उनसे तत्त्व ज्ञान प्राप्त किया। भक्तों में अग्रगण्य बुद्धिमान उद्धव ने निश्चय ही स्वयं आपसे ही तत्त्व ज्ञान का सार प्राप्त किया। निस्सन्देह, वे आज भी लोक जन के हितार्थ बद्रिकाश्रम में रहते हैं।

सोऽयं कृष्णावतारो जयति तव विभो यत्र सौहार्दभीति-
स्नेहद्वेषानुरागप्रभृतिभिरतुलैरश्रमैर्योगभेदै: ।
आर्तिं तीर्त्वा समस्ताममृतपदमगुस्सर्वत: सर्वलोका:
स त्वं विश्वार्तिशान्त्यै पवनपुरपते भक्तिपूर्त्यै च भूया: ॥१२॥

स-अयं कृष्ण-अवतार:	वह यह कृष्ण अवतार
जयति तव विभो	जयी है आपका हे विभो! (अन्य अवतारों से)
यत्र सौहार्द-भीति-स्नेह-	जहां सौहार्द, भय, स्नेह,
द्वेष-अनुराग-प्रभृतिभि:-	द्वेष, अनुराग आदि
अतुलै:-अश्रमै:-योग-भेदै:	अनुपम श्रम रहित मनोयोग के उपायों से
आर्तिं तीर्त्वा समस्ताम्-	क्लेशों का उल्लङ्घन करके सभी
अमृत-पदम्-अगु:-	अमृत (मोक्ष) पद को प्राप्त किया
सर्वत: सर्व-लोका:	सभी ओर सभी लोगों ने
स त्वं विश्व-आर्ति-शान्त्यै	वही आप विश्व भर की पीडाओं की शान्ति के लिए
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
भक्ति-पूर्त्यै च भूया:	और भक्ति की पूर्ति के लिए हों

हे विभो! इस प्रकार आपका यह कृष्णावतार आपके अन्य अवतारों में उत्कृष्ट है, जहां, सौहार्द्र, भय, स्नेह, द्वेष, अनुराग आदि मनोयोग के अनुपम उपायों से समस्त क्लेशों का अतिक्रमण कर के, सभी ओर सभी लोगों ने अमृतमय मोक्ष पद प्राप्त किया। हे पवनपुरपते! वही आप विश्व भर की समस्त पीडाओं के उपशमन के लिए और भक्ति की पूर्ति के लिए कृपामय हों।

दशक ८९

रमाजाने जाने यदिह तव भक्तेषु विभवो
न सद्यस्सम्पद्यस्तदिह मदकृत्त्वादशमिनाम् ।
प्रशान्तिं कृत्वैव प्रदिशसि ततः काममखिलं
प्रशान्तेषु क्षिप्रं न खलु भवदीये च्युतिकथा ॥१॥

रमाजाने	हे लक्ष्मी पते!
जाने यत्-इह	समझता हूं कि यहां
तव भक्तेषु विभवः	आपके भक्तों को सम्पदाएं
न सद्यः-सम्पद्यः-	नही शीघ्र मिलतीं
तत्-इह	वह (सम्पदाएं) यहां
मद-कृत्त्वात्-	मद वर्धक होने के कारण
अशमिनाम्	निरग्रही लोगों में
प्रशान्तिं कृत्वा-एव	(उन्हें) प्रशान्त कर के ही
प्रदिशसि ततः	देते हैं तब
कामम्-अखिलम्	इच्छित सब कुछ
प्रशान्तेषु क्षिप्रं	(जो पहले से ही) प्रशान्त हैं उन्हे शीघ्र ही देते हैं
न खलु	नहीं है निस्सन्देह
भवदीये च्युति-कथा	आपके भक्तों में विकार की बात ही

हे लक्ष्मीपते! मैं समझता हूं कि यहां आपके भक्त को सम्पदाओं के मद वर्धक दोष के कारण, शीघ्र ही सम्पदाएं नहीं मिलती। आप पहले अशान्त लोगों को शान्त करने के बाद ही उन्हे इच्छित सब कुछ देते हैं। जो पहले से ही प्रशान्त हैं उनको शीघ्र ही मनोवांछित दे देते हैं। इसलिए, निस्सन्देह आपके भक्तों में विकार की सम्भावना नही होती है।

सद्यः प्रसादरुषितान् विधिशङ्करादीन्
केचिद्विभो निजगुणानुगुणं भजन्तः ।
भ्रष्टा भवन्ति बत कष्टमदीर्घदृष्ट्या

स्पष्टं वृकासुर उदाहरणं किलास्मिन् ॥२॥

सद्यः प्रसाद-रुषितान्	क्षण में प्रसन्न, क्षण में रुष्ट
विधि-शङ्कर-आदीन्	ब्रह्मा शङ्कर आदि का
केचित्-विभो	कुछ जन हे विभो!
निज-गुण-अनुगुणम्	अपने गुणों के अनुरूप गुणों के कारण
भजन्तः	पूजन करते हैं
भ्रष्टाः-भवन्ति	च्युत हो जाते हैं
बत कष्टम्-	अहो खेद है
अदीर्घ-दृष्ट्या	संकीर्ण दृष्टि के कारण
स्पष्टं वृकासुर	(यह बात) स्पष्ट है वृकासुर
उदाहरणं किल-अस्मिन्	के उदाहरण से इस विषय में

क्षण में प्रसन्न और क्षण मे रुष्ट होने वाले देवों, ब्रह्मा, शङ्कर आदि का निज स्वभावानुसार, गुणों के अनुरूप, लोग पूजन करते हैं। अहो खेद है कि वे संकीर्ण दृष्टि के कारण मार्ग से च्युत हो जाते हैं। वृकासुर के उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

शकुनिजः स तु नारदमेकदा
त्वरिततोषमपृच्छदधीश्वरम् ।
स च दिदेश गिरीशमुपासितुं
न तु भवन्तमबन्धुमसाधुषु ॥३॥

शकुनिजः स	शकुनि के पुत्र उसने (वृकासुर ने)
तु नारदम्-एकदा	तो नारद को एकबार
त्वरित-तोषम्-अपृच्छत्-	तुरन्त तुष्ट होने वाले के बारे में पूछा
अधीश्वरम्	देव के
स च दिदेश	उन्होंने और निर्देश दे दिया

गिरीशम्-उपासितुं	शङ्कर की उपासना करने के लिए
न तु भवन्तम्-	नहीं ही आपकी
अबन्धुम्-असाधुषु	(क्योंकि आप) सहायक नहीं है दुष्टों के

शकुनि के पुत्र वृकासुर ने एकबार नारद से शीघ्र प्रसन्न होने वाले देव के विषय में पूछा। नारद ने शङ्कर की उपासना करने का निर्देश दिया, आपकी नहीं, क्यों कि आप दुष्ट जनों के सहायक नहीं हैं।

तपस्तप्त्वा घोरं स खलु कुपित: सप्तमदिने
शिर: छित्वा सद्य: पुरहरमुपस्थाप्य पुरत: ।
अतिक्षुद्रं रौद्रं शिरसि करदानेन निधनं
जगन्नाथाद्वव्रे भवति विमुखानां क्व शुभधी: ॥४॥

तप:-तप्त्वा घोरं	तपस्या करके घोर
स खलु कुपित:	वह निस्सन्देह कुपित हो कर
सप्तम-दिने	सातवें दिन
शिर: छित्वा	(अपना) शिर काट कर
सद्य: पुरहरम्-	तुरन्त शिव को
उपस्थाप्य पुरत:	उपस्थित करके सामने
अतिक्षुद्रं रौद्रं	अत्यन्त तुच्छ और क्रूर
शिरसि कर-दानेन	सिर पर हाथ रख देने से
निधनं	मृत्यु (यह वर)
जगन्नाथात्-वव्रे	जग्गन्नाथ शिव से वर मांगा
भवति विमुखानां	आपसे विमुख लोगों की
क्व शुभधी:	कहां है कल्याणकारी बुद्धि

उसने घोर तपस्या की और सातवें दिन कुपित हो कर अपना शिर काटने का उपक्रम किया, और इस प्रकार शिव को तुरन्त अपने सामने प्रकट कर के उनसे अत्यन्त तुच्छ और क्रूर वर मांगा कि, 'जिस किसी के भी सिर पर मैं हाथ रख दूं,

उसकी मृत्यु हो जाए।' आपसे विमुख लोगों की बुद्धि कल्याणकारी कैसे हो सकती है?

मोक्तारं बन्धमुक्तो हरिणपतिरिव प्राद्रवत्सोऽथ रुद्रं
दैत्यात् भीत्या स्म देवो दिशि दिशि वलते पृष्ठतो दत्तदृष्टि: ।
तूष्णीके सर्वलोके तव पदमधिरोक्ष्यन्तमुद्वीक्ष्य शर्वं
दूरादेवाग्रतस्त्वं पटुवटुवपुषा तस्थिषे दानवाय ॥५॥

मोक्तारं	मुक्ति दाता को
बन्ध-मुक्त:	बन्धन मुक्त होकर
हरिणपति:-इव	सिंह के समान ही
प्राद्रवत्-स-अथ रुद्रं	दौड पडा वह तब शङ्कर की ओर
दैत्यात् भीत्या स्म	असुर से भयभीत हो कर
देव: दिशि दिशि	देव प्रत्येक दिशा में
वलते	भागते रहे
पृष्ठत:-दत्त-दृष्टि:	पीछे की ओर डालते हुए दृष्टि
तूष्णीके सर्व-लोके	चुप रहे सभी लोग
तव पदम्-अधिरोक्ष्यन्तम्-	आपके पद की ओर बढते हुए
उद्वीक्ष्य शर्वं	देख कर शिव को
दूरात्-एव-अग्रत:-त्वं	दूर से ही, सामने आप
पटु-वटु-वपुषा	बुद्धिमान ब्रह्मचारी के वेश में
तस्थिषे दानवाय	प्रस्तुत हो गए असुर के

जिस प्रकार बन्धन मुक्त हुआ सिंह मुक्ति दाता पर ही आक्रमण कर देता है, वह असुर भी शङ्कर की ओर दौड पडा। उस असुर से भयभीत हो कर पीछे की ओर दृष्टि डालते हुए देव प्रत्येक दिशा में भागते रहे। सभी ने चुप्पी साध ली, किसी ने भी सहायता नहीं की। तब शङ्कर ने आपके पद की ओर प्रस्थान किया। दूर से ही देख कर, आप एक बुद्धिमान ब्रह्मचारी के रूप में असुर के सामने प्रस्तुत हो गए।

भद्रं ते शाकुनेय भ्रमसि किमधुना त्वं पिशाचस्य वाचा

सन्देहश्चेन्मदुक्तौ तव किमु न करोष्यङ्गुलीमङ्ग मौलौ ।
इत्थं त्वद्वाक्यमूढः शिरसि कृतकरः सोऽपतच्छिन्नपातं
भ्रंशो ह्येवं परोपासितुरपि च गतिः शूलिनोऽपि त्वमेव ॥६॥

भद्रं ते शाकुनेय	कल्याण हो! हे शकुनि पुत्र!
भ्रमसि किं अधुना त्वं	भाग रहे हो क्यों अभी तुम
पिशाचस्य वाचा	पिशाच के कहने से
सन्देहः-चेत्-मत्-उक्तौ	सन्देह है यदि मेरी बात का
तव किमु न करोषि-	तुम्हारे क्यों नहीं करते हो
अङ्गुलीम्-अङ्ग-मौलौ	अङ्गुली को, हे प्रिय! सिर पर
इत्थं त्वत्-वाक्य-मूढः	इस प्रकार आपके कहने से उस मूर्ख ने
शिरसि कृत-करः	सिर पर रख लिया हाथ
सः-अपतत्-छिन्न-पातं	वह गिर पडा निर्मूल वृक्ष के समान
भ्रंशः- हि-एवं	नाश ही है ऐसे
पर-उपासितुः अपि	अन्य (देवों) की उपासना से भी
च गतिः	और अन्तिम आश्रय
शूलिनः-अपि त्वम्-एव	शङ्कर के भी आप ही हुए

"हे शकुनिपुत्र तुम्हारा कल्याण हो! तुम उस पिशाच के कहने पर विश्वास कर के क्यों भागे जा रहे हो? हे प्रिय! यदि मेरे कथन में सन्देह न हो तो, अपने ही सिर पर अङ्गुली क्यों नहीं रखते?" इस प्रकार आपके कहने से उस मूर्ख ने अपने ही सिर पर हाथ रख लिया और वह निर्मूल वृक्ष की भांति गिर कर मर गया। प्रतीत होता है कि अन्य देवों की उपासना से ऐसे ही नाश होता है। शङ्कर के भी अन्तिम आश्रय आप ही हुए!

भृगुं किल सरस्वतीनिकटवासिनस्तापसा-
स्त्रिमूर्तिषु समादिशन्नधिकसत्त्वतां वेदितुम् ।
अयं पुनरनादरादुदितरुद्धरोषे विधौ
हरेऽपि च जिहिंसिषौ गिरिजया धृते त्वामगात् ॥७॥

भृगुं किल	भृगु को, एक समय
सरस्वती-निकट-वासिन:-	सरस्वती (नदी) के निकट निवास करने वाले
तापसा:-	तपस्वियों ने
त्रि-मूर्तिषु	त्रिमूर्ती (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) में
समादिशन्-	आदेश दे कर
अधिक-सत्त्वतां वेदितुं	अधिक सत्वता जानने के लिए
अयं पुन:-अनादरात्-	यह भृगु फिर अनादर से
उदित-रुद्ध-रोषे	उठे हुए क्रोध को रोक कर
विधौ	(जब) ब्रह्मा ने,
हरे-अपि च	और शङ्कर को भी
जिहिंसिषौ	मारने को उद्यत
गिरिजया धृते	पार्वती के रोक लेने पर
त्वाम्-अगात्	आपके पास गए

एक समय, सरस्वती नदी के निकट निवास करने वाले तपस्वियों ने भृगु मुनि को यह जानने के लिए आदेश दिया कि त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) में सर्वाधिक सात्विक कौन हैं। भृगु मुनि ने जा कर ब्रह्मा का अनादर किया, किन्तु क्रोध आने पर भी ब्रह्मा ने अपने क्रोध को दबा लिया। तब वे शङ्कर के पास गए, और उनका निरादर करने पर, शङ्कर भृगु को मारने पर उद्यत हो गए और पार्वती ने उन्हें ऐसा करने से रोका। तब फिर भृगु मुनि आपके पास गए।

सुप्तं रमाङ्कभुवि पङ्कजलोचनं त्वां
विप्रे विनिघ्नति पदेन मुदोत्थितस्त्वम् ।
सर्वं क्षमस्व मुनिवर्य भवेत् सदा मे
त्वत्पादचिन्हमिह भूषणमित्यवादी: ॥८॥

सुप्तं रमा-अङ्क-भुवि	सोए हुए लक्ष्मी की गोद में
पङ्कजलोचनं त्वां	कमलनयन आपको

विप्रे विनिघ्नति पदेन	(जब) ब्राह्मण ने प्रहार किया पैर से
मुदा-उत्थित:-त्वम्	हर्ष से उठ कर आपने
सर्वं क्षमस्व मुनिवर्य	(कहा) सब अपराध क्षमा करें हे मुनिवर!
भवेत् सदा मे	रहेगा सदा मेरे
त्वत्-पाद-चिन्हम्-इह	आपका पग चिह्न यहां
भूषणम्-इति-अवादी:	आभूषण यह कहा

जब भृगु मुनि आपके पास गए, आप लक्ष्मी की गोद में सोए हुए थे। हे कमलनयन! ब्राह्मण ने आपके वक्षस्थल पर अपने पैर से प्रहार किया। आप तुरन्त उठ कर हर्ष से बोले, ' हे मुनिवर मेरे सभी अपराध क्षमा करें। आपका यह पग चिह्न सर्वदा मेरे वक्ष पर आभूषण (श्रीवत्स) की भांति सुशोभित रहेगा।'

निश्चित्य ते च सुदृढं त्वयि बद्धभावा:
सारस्वता मुनिवरा दधिरे विमोक्षम् ।
त्वामेवमच्युत पुनश्च्युतिदोषहीनं
सत्त्वोच्चयैकतनुमेव वयं भजाम: ॥९॥

निश्चित्य ते च	और फिर निश्चय करके वे
सुदृढं त्वयि	अत्यन्त दृढता से आपमें
बद्धभावा:	स्थित करके भक्ति
सारस्वता:-मुनिवरा:-	सरस्वती तीर निवासी मुनिवर गण ने
दधिरे विमोक्षम्	प्राप्त किया मोक्ष
त्वाम्-एवम्-अच्युत	आपको इस प्रकार हे अच्युत
पुन:-च्युति-दोष-हीनं	फिर से च्युति दोष से रहित
सत्त्व-उच्चय-एक-तनुम्-	सत्त्व के उत्कृष्ट एकमात्र स्वरूप (आपका)
एव वयं भजाम:	ही हम भजन करते हैं

सरस्वती तीर निवासी उन मुनिवरों ने आपको ही सर्वोच्च सात्विक गुण सम्पन्न मान कर, आपमें ही दृढ भक्ति स्थिर करके,

मोक्ष प्राप्त किया। हे अच्युत! इस प्रकार च्युति दोष रहित, सत्त्व के एकमात्र उत्कृष्ट स्वरूप आपका ही हम भजन करते हैं।

जगत्सृष्ट्यादौ त्वां निगमनिवहैर्वन्दिभिरिव
स्तुतं विष्णो सच्चित्परमरसनिर्द्वैतवपुषम् ।
परात्मानं भूमन् पशुपवनिताभाग्यनिवहं
परितापश्रान्त्यै पवनपुरवासिन् परिभजे ॥१०॥

जगत्-सृष्टि-आदौ	जगत की सृष्टि के प्रारम्भ में
त्वां निगम-निवहैः-	आपका वेदों ने समग्र
वन्दिभिः-इव	वन्दियों के समान
स्तुतं विष्णो	स्तवन किया हे विष्णु!
सत्-चित्-परम-रस-	सत्य, ज्ञान, अनन्त पीयूष
निर्द्वैत-वपुषम्	अद्वितीय स्वरूप
परात्मानं भूमन्	(आप) परमात्मा का, हे भूमन!
पशुप-वनिता-भाग्य-निवहं	गोपाङ्गनाओं के सौभाग्य स्वरूप का
परिताप-श्रान्त्यै	क्लेशों की शान्ति के लिए
पवनपुरवासिन्	हे पवनपुरवासिन!
परिभजे	(मैं) भजन करता हूं

हे विष्णु! जगत की सृष्टि के आरम्भ में, समग्र वेदों ने, वन्दीगण जैसे राजा के आने पर उसका स्तवन करते हैं, वैसे ही आपका स्तवन किया। हे भूमन! सत्य ज्ञान अनन्त पीयूष अद्वितीय स्वरूप आप परमात्मा का, गोपाङ्गनाओं के सौभाग्य स्वरूप आपका, हे पवनपुरपते! क्लेशों की शान्ति के लिए, मैं भजन करता हूं।

दशक ९०

वृकभृगुमुनिमोहिन्यम्बरीषादिवृत्ते-
ष्वयि तव हि महत्त्वं सर्वशर्वादिजैत्रम् ।
स्थितमिह परमात्मन् निष्कलार्वागभिन्नं
किमपि यदवभातं तद्धि रूपं तवैव ॥१॥

वृक-भृगुमुनि-	वृकासुर, भृगुमुनि,
मोहिनी-अम्बरीष-	मोहिनी (अवतार), अम्बरीष
आदि-वृत्तेषु-अयि	आदि वृतान्तों में, हे प्रभु!
तव हि महत्त्वं	आप ही का महत्व
सर्व-शर्व-आदि-जैत्रम्	सभी देव गण शिव आदि से श्रेष्ठ है
स्थितम्-इह	सिद्ध हो जाता है यहां
परमात्मन्	हे परमात्मन!
निष्कल-अर्वाक-अभिन्नं	कला रहित, कला सहित, समत्व भाव में
किम्-अपि यत्-	कुछ भी जो
अवभातं तत् हि	प्रतीत होता है
रूपं तव-एव	स्वरूप आपका ही है

वृकासुर, भृगुमुनि, मोहिनी अवतार, अम्बरीष आदि के वृतान्तों में, हे प्रभु! यही सिद्ध होता है कि शिव आदि सभी देव गणों में आप ही का महत्व सर्वोपरि है। हे परमात्मन! कला रहित, कला सहित, अथवा समत्व भाव में जो कुछ भी उद्भासित होता है, आपका ही स्वरूप है।

मूर्तित्रयेश्वरसदाशिवपञ्चकं यत्
प्राहुः परात्मवपुरेव सदाशिवोऽस्मिन् ।
तत्रेश्वरस्तु स विकुण्ठपदस्त्वमेव
त्रित्वं पुनर्भजसि सत्यपदे त्रिभागे ॥२॥

मूर्ति-त्रय-ईश्वर-	त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) ईश्वर,

सदाशिव-पञ्चकं	(और) सदाशिव, ये पांच
यत् प्राहुः	जो कहा है (शैव मत वालों ने)
परात्म-वपुः-एव	परमात्मा स्वरूप ही (आप)
सदाशिवः-अस्मिन्	सदाशिव इस (मत) में
तत्र-ईश्वरः-तु स	वहां (वैष्णव मत में) ईश्वर तो वही (आप ही हैं)
विकुण्ठपदः-त्वम्-एव	वैकुण्ठ धाम (निवासी) आप ही
त्रित्वं पुनः-भजसि	त्रिमूर्ति को फिर धारण करते हैं
सत्यपदे त्रिभागे	सत्य लोक में तीन स्वरूपों में

शैव मतावलम्बी जिन ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ईश्वर और सदाशिव का पांच भेदों से वर्णन करते हैं, उनमें सदाशिव तो आप ही हैं। वैष्णव मत में वैकुण्ठ धाम निवासी ईश्वर आप ही हैं। पुन: सत्यलोक में तीन स्वरूपों में फिर आप त्रिमूर्ति धारण करते हैं।

तत्रापि सात्त्विकतनुं तव विष्णुमाहु-
र्धाता तु सत्त्वविरलो रजसैव पूर्ण: ।
सत्त्वोत्कटत्वमपि चास्ति तमोविकार-
चेष्टादिकञ्च तव शङ्करनाम्नि मूर्तौ ॥३॥

तत्र-अपि	वहां (त्रिमूर्ति में) भी
सात्त्विक-तनुं तव	सात्विक विग्रह आपका
विष्णुम्-आहुः-	विष्णु कहा गया है
धाता तु	ब्रह्मा निश्चय ही
सत्त्व-विरलः-	सत्व से कम
रजसा-एव पूर्णः	रजस ही से पूर्ण हैं
सत्त्व-उत्कटत्वम्-अपि	सत्व भरपूर भी
च-अस्ति	और होने पर

तम:-विकार-	तमस का विकार
चेष्टा-आदिकम्-च	चेष्टाओं आदि में (है)
तव शङ्कर-नाम्नि	आपके शङ्कर नाम की
मूर्तौ	मूर्ति में

वहां त्रिमूर्ति में भी, जो शुद्ध सात्विक स्वरूप है वह आप विष्णु का ही है। ब्रह्मा का स्वरूप कुछ सत्व और अधिक रजो गुण से पूर्ण है। और आपके शङ्कर नाम के स्वरूप में सत्व भरपूर होने पर भी तमस का विकार चेष्टाओं आदि में परिलक्षित होता है।

तं च त्रिमूर्त्यतिगतं परपूरुषं त्वां
शर्वात्मनापि खलु सर्वमयत्वहेतो: ।
शंसन्त्युपासनविधौ तदपि स्वतस्तु
त्वद्रूपमित्यतिदृढं बहु न: प्रमाणम् ॥४॥

तं च त्रिमूर्ति-अतिगतं	और उस त्रिमूर्ति से परे
परपूरुषं त्वां	परमपुरूष आपको ही
शर्व-आत्मना-अपि	शिव के रूप में भी
खलु	निश्चय
सर्वमयत्व-हेतो:	सभी (प्राणियों के) आत्म स्वरूप होने के कारण
शंसन्ति-उपासन-विधौ	आदेश देते हैं उपासना के नियमों में
तत्-अपि स्वत:-तु	वह भी यथार्थ में
त्वत्-रूपम्-इति-	आपका रूप है इस प्रकार
अति-दृढं	बहुत प्रबल
बहु न: प्रमाणम्	(और) अनेक हमारे प्रमाण हैं

उस त्रिमूर्ति से परे, हे परमपुरूष! शिव के रूप में भी, सर्वात्म स्वरूप होने के कारण, आपकी ही, उपासना करने का आदेश है। वह भी यथार्थ में आपका ही रूप है। इस प्रकार हमारे पास अनेक प्रबल प्रमाण है।

श्रीशङ्करोऽपि भगवान् सकलेषु ताव-
त्त्वामेव मानयति यो न हि पक्षपाती ।
त्वन्निष्ठमेव स हि नामसहस्रकादि
व्याख्यात् भवत्स्तुतिपरश्च गतिं गतोऽन्ते ॥५॥

श्री शङ्करः-अपि	श्री शङ्कराचार्य ने भी
भगवान्	जो भगवतपाद थे,
सकलेषु तावत्-	(आपके) सकारात्मक रूपों में तब
त्वाम्-एव मानयति	आपको ही मानते हैं
यः-न हि पक्षपाती	जो नही हैं पक्षपाती
त्वत्-निष्ठम्-एव	आप में ही एकनिष्ठ (थे)
स हि नाम-सहस्रक-आदि	उन्हों ने ही विष्णु सहस्र नाम आदि की
व्याख्यात्	व्याख्या की है
भवत्-स्तुति-परः-च	और आपकी स्तुति में ही दत्तचित्त
गतिं गतः-अन्ते	समाधि को प्राप्त हुए अन्त में

भगवतपाद शङ्कराचार्य भी आपके सभी साकार स्वरूपों में विष्णु को ही मानते थे। वे किसी देव विशेष के पक्षपाती नहीं थे। वे आप में ही एकनिष्ठ थे और उन्हों ने श्री विष्णुसहस्र नाम आदि की व्याख्या भी की थी। आप ही की स्तुति में दत्तचित्त वे अन्त में समाधि को प्राप्त हुए।

मूर्तित्रयातिगमुवाच च मन्त्रशास्त्र-
स्यादौ कलायसुषमं सकलेश्वरं त्वाम् ।
ध्यानं च निष्कलमसौ प्रणवे खलूक्त्वा
त्वामेव तत्र सकलं निजगाद नान्यम् ॥६॥

मूर्ति-त्रय-अतिगम्-	मूर्ति त्रय के परे
उवाच च मन्त्र-शास्त्रस्य-आदौ	और कहा है (शङ्कराचार्य ने) मन्त्र शास्त्र के आरम्भ में (कि)
कलाय-सुषमम्	कलाय (पुष्प) के समान सुन्दर

सकल-ईश्वरं त्वाम्	सर्वेश्वर आपको ही
ध्यानं च निष्कलम्-	और ध्यान करते हुए निष्कल की
असौ प्रणवे खलु-उक्त्वा	इन्होंने प्रणव में भी निस्सन्देह वर्णन किया
त्वाम्-एव तत्र सकलं	आपको ही, वहां कलायुक्त
निजगाद न-अन्यम्	बताया, नहीं किसी और (देव) को

इसके अतिरिक्त, शङ्कराचार्य ने मन्त्र शास्त्र के प्रारम्भ में ही, त्रिमूर्ति के परे, कलाय पुष्प के समान सुन्दर आपको ही सर्वेश्वर बताया है। निष्कल ब्रह्म का ध्यान करते हुए, प्रणव का वर्णन करते हुए, वहां भी कलायुक्त ईश्वर आपको ही बताया है, अन्य देवों को नहीं।

समस्तसारे च पुराणसङ्ग्रहे
विसंशयं त्वन्महिमैव वर्ण्यते ।
त्रिमूर्तियुक्सत्यपदत्रिभागत:
परं पदं ते कथितं न शूलिन: ॥७॥

समस्त-सारे	और समस्त (शास्त्रों) के सार
च पुराण-सङ्ग्रहे	(जो) पुराण के संग्रह में (हैं)
विसंशयं	निस्सन्देह (वहां भी)
त्वत्-महिमा-एव वर्ण्यते	आप की महिमा ही वर्णित है
त्रिमूर्ति-युक्-	त्रिमूर्ति युक्त
सत्यपद-त्रिभागत: परं	सत्यलोकस्थ त्रिलोकों के विभाग से परे
पदं ते कथितं	निवास (वैकुण्ठ) आपका (ही) कहा गया है
न शूलिन:	न कि शिव का

पुराण संग्रह में जहां समस्त पुराणों का सार निहित है, निस्सन्देह, वहां भी आपकी ही महिमा का वर्णन है। त्रिमूर्ति युक्त, सत्यलोकस्थ त्रिलोकों के विभाग के परे, जो वैकुण्ठ है, वह आप ही का निवास है, शिव का नहीं।

यत् ब्राह्मकल्प इह भागवतद्वितीय-
स्कन्धोदितं वपुरनावृतमीश धात्रे ।

तस्यैव नाम हरिशर्वमुखं जगाद
श्रीमाधवः शिवपरोऽपि पुराणसारे ॥८॥

यत् ब्राह्मकल्प इह	वह (जो) ब्राह्मकल्प में यहां
भागवत-द्वितीय-स्कन्ध-उदितं	भागवत के द्वितीय स्कन्ध में कहा गया है
वपुः-अनावृतम्-	स्वरूप का दर्शन दिया था
ईश धात्रे	हे ईश! ब्रह्मा के लिए
तस्य-एव नाम	उस ही (स्वरूप) का नाम
हरि-शर्व-मुखं	हरि, शिव आदि
जगाद श्रीमाधवः	कहा श्री माधवाचार्य ने
शिव-परः-अपि	(वे स्वयं) शिव भक्त होते हुए भी
पुराण-सारे	पुराण सार में (कहते हैं)

यहां, इस ब्राह्मकल्प में आपने जिस स्वरूप का दर्शन दिया था, उसी का भागवत के द्वितीय स्कन्ध में वर्णन है। हे ईश! शिव भक्त माधवाचार्य ने भी पुराण्सार में, उस स्वरूप का, हरि शिव आदि नाम से ही वर्णन किया हैं।

ये स्वप्रकृत्यनुगुणा गिरिशं भजन्ते
तेषां फलं हि दृढयैव तदीयभक्त्या।
व्यासो हि तेन कृतवानधिकारिहेतोः
स्कान्दादिकेषु तव हानिवचोऽर्थवादैः ॥९॥

ये स्व-प्रकृति-अनुगुणा	जो (लोग) अपनी प्रकृति के अनुसार
गिरिशं भजन्ते	शिव का पूजन करते हैं
तेषां फलं हि दृढया-एव	उनके लिये फल ही होता है प्रगाढता से ही
तदीय-भक्त्या	उनकी भक्ति की
व्यासः-हि तेन कृतवान्-	व्यास ने इसी कारण प्रतिपादन किया है
अधिकार-हेतोः	अधिकारियों के लिए

स्कान्द-आदिकेषु	स्कन्द आदि (पुराणों में)
तव हानि-वचः-	आपके लिए लघु वचन
अर्थवादैः	गूढार्थ वाद से

जो लोग अपनी प्रकृति के अनुसार शिव का पूजन करते हैं, उनको उनकी भक्ति की प्रगाढता के अनुरूप ही फल मिलता है ऐसा व्यास ने प्रतिपादन किया है। इसी कारण स्कन्द आदि पुराणो में व्यास ने, अधिकारियों के हित में, गूढ अर्थवाद से, आपके लिए निम्न वचनों का प्रयोग किया है।

भूतार्थकीर्तिरनुवादविरुद्धवादौ
त्रेधार्थवादगतयः खलु रोचनार्थाः ।
स्कान्दादिकेषु बहवोऽत्र विरुद्धवादा-
स्त्वत्तामसत्वपरिभूत्युपशिक्षणाद्याः ॥१०॥

भूत-अर्थ-कीर्तिः-	भूतार्थ की अतिशयोक्ति
अनुवाद-विरुद्ध-वादौ	अनुवाद और विरुद्धवाद
त्रेधा-अर्थ-वाद-गतयः	इन तीनों में अर्थवाद के सिद्धान्त हैं
खलु रोचन-अर्थाः	निश्चय ही रोचक बनाने के लिए
स्कान्द्-आदिकेषु	स्कन्द आदियों में
बहवः-अत्र	अनेक यहां
विरुद्ध-वादाः-	विरुद्ध वाचक वचन (मिलते) हैं
त्वत्-तामसत्व-	आपके तामसिकता
परिभूति-उपशिक्षण-आद्याः	आपकी पराजय, आपकी शिक्षा, इत्यादि (रूप में)

अर्थवाद के तीन सिद्धान्त हैं - भूतार्थ की अतिशयोक्ति, उनका अनुवाद और उनका विरुद्धवाद। यह निश्चय ही विषय वस्तु को रोचक बनाने के लिए है। स्कन्द आदि में अनेक विरुद्ध वाचक वचन मिलते हैं - यथा आपकी तामसिकता, आपकी पराजय और आपके प्रशिक्षण के विषय में।

यत् किञ्चिदप्यविदुषाऽपि विभो मयोक्तं
तन्मन्त्रशास्त्रवचनाद्यभिदृष्टमेव ।

व्यासोक्तिसारमयभागवतोपगीत
क्लेशान् विधूय कुरु भक्तिभरं परात्मन् ॥११॥

यत्-किञ्चित्-अपि-	जो कुछ भी
अविदुषा-अपि	अज्ञान वश ही
विभो मया-उक्तं	हे विभो! मैने कहा है
तत्-मन्त्रशास्त्र-वचनादि-	वह मन्त्र शास्त्र के वचन आदि
अभिदृष्टम्-एव	के अनुसार ही
व्यास-उक्ति-सार-मय-	व्यास के द्वारा कहे गए सार भूत
भागवत-उपगीत	भागवत आदि में गाए गए (के अनुसार) ही है
क्लेशान् विधूय	क्लेशों को नष्ट कर के
कुरु भक्तिभरं	करिए (मेरी) भक्ति सुदृढ
परात्मन्	हे परात्मन!

हे विभो! मैने अज्ञान वश आपका जो कुछ भी गुणगान किया है, वह मन्त्र शास्त्र सम्मत है और व्यास के वचनों के सार, भागवत आदि में गाए गए आपकी महानता के अनुसार ही है। हे परात्मन! मेरे क्लेशों को नष्ट करके मेरी भक्ति को सुदृढ कीजिए।

दशक ९१

श्रीकृष्ण त्वत्पदोपासनमभयतमं बद्धमिथ्यार्थदृष्टे-
र्मर्त्यस्यार्तस्य मन्ये व्यपसरति भयं येन सर्वात्मनैव ।
यत्तावत् त्वत्प्रणीतानिह भजनविधीनास्थितो मोहमार्गे
धावन्नप्यावृताक्षः स्खलति न कुहचिद्देवदेवाखिलात्मन् ॥१॥

श्री कृष्ण	हे श्री कृष्ण
त्वत्-पद-उपासनम्-	आपके चरणों की उपासना
अभयतमम्	अभय प्रदान करने वाली है (उनके लिए)
बद्ध-मिथ्या-अर्थ-दृष्टेः-	(जो) बन्धे है और मिथ्या अर्थ-भौतिक संसार में लीन दृष्टि वाले हैं
मर्त्यस्य-आर्तस्य मन्ये	मरण धर्मा आर्त प्राणियों के लिए, मैं ऐसा मानता हूं
व्यपसरति भयं	निर्मूल करता है भय का
येन सर्वात्मना-एव	जिससे सभी प्रकार से
यत्-तावत्	वह (भक्ति) तब
त्वत्-प्रणीतान्-इह	आपके द्वारा प्रतिपादित यहां (संसार में)
भजन-विधीन्-आस्थितः	भक्ति की विधियों से स्थिर (बुद्धि वाले)
मोह-मार्गे धावन्-	मोह मार्ग में दौडते हुए
अपि-आवृत-आक्षः	मूंद कर आंखों को भी
स्खलति न कुहचित्-	फिसलते नहीं है कभी भी
देव-देव-अखिलात्मन्	हे देवाधिदेव! हे सर्वात्मन!

हे श्री कृष्ण! मै ऐसा मानता हूं कि दृष्टि मिथ्या अर्थ युक्त भौतिक संसार में आबद्ध और उसी में लीन दृष्टि वाले एवं मरण धर्मा आर्त प्राणी के लिए आपके चरणों की उपासना ही निश्शेष अभय प्रदान करने वाली है। हे देवाधिदेव! इस संसार में आपके द्वारा प्रतिपादित भक्ति की विधियों का अनुकरण करने वालों की बुद्धि स्थिर हो जाने से उनके सभी प्रकार के भयों का निर्मूल उच्छेद हो जाता है। हे सर्वात्मन! ऐसी स्थिर बुद्धि वाले मोह मार्ग में आंखे बन्द करके दौडने पर भी फिसलते नहीं हैं।

भूमन् कायेन वाचा मुहुरपि मनसा त्वद्बलप्रेरितात्मा
यद्यत् कुर्वे समस्तं तदिह परतरे त्वय्यसावर्पयामि ।
जात्यापीह श्वपाकस्त्वयि निहितमन:कर्मवागिन्द्रियार्थ-
प्राणो विश्वं पुनीते न तु विमुखमनास्त्वत्पदाद्विप्रवर्य: ॥२॥

भूमन्	हे भूमन!
कायेन वाचा	शरीर से वचन से
मुहुः-अपि मनसा	पुनः मन से भी
त्वत्-बल-प्रेरित-आत्मा	आपके बल से प्रेरित (मेरी) आत्मा
यत्-यत् कुर्वे	जो जो भी (कर्म) करे
समस्तं तत्-इह	सभी कुछ
परतरे त्वयि-	परमात्मा आपमें
असौ-अर्पयामि	यह (मैं) समर्पित करता हूं
जात्या-अपि-इह श्वपाकः-	जन्म से भी यहां चाण्डाल होने पर भी
त्वयि निहित-मनः-कर्म-	आपमें समाहित मन कर्म
वाक्-इन्द्रियार्थ-प्राणः	वचन इन्द्रियां और प्राण वाला
विश्वं पुनीते न तु	(समस्त) विश्व को पावन बना देता है, न कि
विमुख-मनाः-	विमुख मन वाले
त्वत्-पदात्-विप्रवर्यः	आपके चरणों से, ब्राह्मण श्रेष्ठ भी

हे भूमन! आप ही के बल से सञ्चालित मेरी आत्मा, शरीर वचन और मन से जो जो भी कर्म करूं, उसे मैं आपको समर्पित करता हूं। इस संसार में, जन्म से चाण्डाल होने पर भी, आपमें ही समाहित मन, कर्म, वचन, इन्द्रिय और प्राण वाला व्यक्ति समस्त विश्व को पावन बना देता है, जब कि आपके चरणों की उपासना से विमुख श्रेष्ठ ब्राह्मण भी ऐसा करने में असमर्थ है।

भीतिर्नाम द्वितीयाद्भवति ननु मन:कल्पितं च द्वितीयं
तेनैक्याभ्यासशीलो हृदयमिह यथाशक्ति बुद्ध्या निरुन्ध्याम् ।

मायाविद्धे तु तस्मिन् पुनरपि न तथा भाति मायाधिनाथं
तं त्वां भक्त्या महत्या सततमनुभजन्नीश भीतिं विजह्याम् ॥३॥

भीति:-नाम	भय वास्तव में
द्वितीयात्-भवति ननु	अन्य किसी से होता है, निस्सन्देह (वह)
मन:- कल्पितम् च द्वितीयं	मन की कल्पना ही है अन्य कोई
तेन-ऐक्य-अभ्यास-शील:	इसलिए ऐक्य का अभ्यास परक (मैं)
हृदयम्-इह यथा-शक्ति	हृदय में यहां यथा शक्ति
बुद्ध्या निरुन्ध्याम्	और बुद्धि से निरोध करूंगा
माया-विद्धे तु	(किन्तु) माया से ग्रस्त हो जाने से
तस्मिन् पुन:-अपि	उस (बुद्धि) में फिर भी
न तथा भाति	नहीं उसी प्रकार उद्भासित होता है
माया-अधिनाथं तं त्वाम्	माया अधिपति का, इसीलिए, आपका
भक्त्या महत्या	भक्ति सुदृढ से
सततम्-अनुभजन्-ईश	निरन्तर भजन करते हुए, हे ईश!
भीतिं विजह्याम्	(संसार) भय का नाश कर दूंगा

वास्तव में भय तो किसी अन्य से ही होता है, और वह अन्य मन की कल्पना मात्र है। इसलिए 'ब्रह्मेवेदं सर्वं' के ऐक्य का अभ्यास परक मैं यहां हृदय और बुद्धि से यथा शक्ति इस द्वितीयाभास का निरोध करूंगा। किन्तु माया से ग्रस्त बुद्धि में फिर उसी प्रकार ऐक्य उद्भासित नहीं होता। हे ईश! इसीलिए, सुदृढ भक्ति से आप मायाधिपति का, निरन्तर भजन करते हुए मैं भय का नाश कर दूंगा।

भक्तेरुत्पत्तिवृद्धी तव चरणजुषां सङ्गमेनैव पुंसा-
मासाद्ये पुण्यभाजां श्रिय इव जगति श्रीमतां सङ्गमेन ।
तत्सङ्गो देव भूयान्मम खलु सततं तन्मुखादुन्मिषद्भि-
स्त्वन्माहात्म्यप्रकारैर्भवति च सुदृढा भक्तिरुद्धूतपापा ॥४॥

भक्ते:-उत्पत्ति-वृद्धी	भक्ति की उत्पत्ति और वृद्धी

तव चरण-जुषां	आपके चरणो से संलग्न (लोगों) के
सङ्गमेन-एव-पुंसाम्-	सङ्ग से ही पुरुषों को
आसाद्ये पुण्य-भाजां	प्राप्य है पुण्यशाली लोगों को
श्रिय इव जगति	सम्पत्ति जैसे इस जगत में
श्रीमतां सङ्गमेन	सम्पन्न लोगों के सङ्ग से (लभ्य) है
तत्-सङ्गः देव	वही सङ्ग हे देव
भूयात्-मम	हो मेरा
खलु सततं	निस्सन्देह सदा
तत्-मुखात्-उन्मिषद्भिः-	उन (साथियों) के मुख से निकलते हुए
त्वत्-माहात्म्य-प्रकारैः-	आपके माहात्म्य विभिन्न से
भवति च सुदृढा	होगी (भक्ति) और दृढ
भक्तिः-उद्धूत-पापा	भक्ति पाप विनाशिनी

आपके चरणों की सेवा में संलग्न लोगों के सङ्ग से ही पुण्यशाली व्यक्तियों में भक्ति की उत्पत्ति और वृद्धि होती है, जिस प्रकार इस जगत में सम्पत्ति, सम्पन्न लोगों के सङ्ग से प्राप्त होती है। हे देव! वही सङ्ग सदैव मुझे प्राप्त हो। उनके मुखों से वर्णित आपके विभिन्न माहात्म्यों को सुन कर निस्सन्देह मुझमें भी पाप विनाशिनी भक्ति सुदृढ होगी।

श्रेयोमार्गेषु भक्तावधिकबहुमतिर्जन्मकर्माणि भूयो
गायन् क्षेमाणि नामान्यपि तदुभयत: प्रद्रुतं प्रद्रुतात्मा ।
उद्यद्धास: कदाचित् कुहचिदपि रुदन् क्वापि गर्जन् प्रगाय-
न्नुन्मादीव प्रनृत्यन्नयि कुरु करुणां लोकबाह्यश्चरेयम् ॥५॥

श्रेयः-मार्गेषु	मोक्ष के मार्गों में
भक्तौ-अधिक-बहुमतिः-	भक्ति में ही श्रद्धावान
जन्म-कर्माणि भूयः	जन्म और कर्मों का बारम्बार
गायन् क्षेमाणि नामानि-अपि	गान करते हुए, कल्याणकारी नामों का भी

तत्-उभयत:	उन दोनों से
प्रद्रुतं प्रद्रुतात्मा	अति शीघ्रता से द्रवीभूत आत्मा (मैं)
उद्यत्-हास: कदाचित्	उद्‌भूत हंसी वाला, कभी
कुहचित्-अपि रुदन्	कभी रोता हुआ
क्वापि गर्जन्	कहीं गर्जन करता हुआ
प्रगायन्-उन्मादी-इव	गाता हुआ उन्मादी की भांति
प्रनृत्यन्-	नृत्य करता हुआ
अयि कुरु करुणां	अयि! करें करुणा
लोक-बाह्य:-चरेयम्	लोकातीत (अवस्था में) विचरण करूं

मोक्ष प्राप्ति के अनेक मार्गों में, केवल भक्ति मार्ग में ही मेरी श्रद्धा हो। आपके जन्म और कर्मों का, और आपके कल्याणकारी नामों का बारम्बार गान करते हुए, इन दोनों से ही मेरी आत्मा शीघ्र ही द्रवीभूत हो जाए। जिससे कभी खिलखिला कर हंसने लगूं, कभी रोऊं, कभी कभी गर्जन करूं, उन्मादी की भांति कभी गाऊं और कभी नृत्य करूं। हे करुणामय! करुणा करें, कि मैं लोकातीत अवस्था में पहुंच कर विचरण करूं।

भूतान्येतानि भूतात्मकमपि सकलं पक्षिमत्स्यान् मृगादीन्
मर्त्यान् मित्राणि शत्रूनपि यमितमतिस्त्वन्मयान्यानमानि ।
त्वत्सेवायां हि सिद्ध्येन्मम तव कृपया भक्तिदार्ढ्यं विराग-
स्त्वत्तत्त्वस्यावबोधोऽपि च भुवनपते यत्नभेदं विनैव ॥६॥

भूतानि-एतानि	(पांच) भूत यह
भूतात्मकम्-अपि सकलं	भूतात्मक भी समस्त (जगत) को
पक्षि-मत्स्यान्	पक्षी, मत्स्यों को
मृगादीन् मर्त्यान्	पशुओं आदि प्राणियों को
मित्राणि शत्रून्-अपि	मित्रों को, शत्रुओं को भी
यमित-मति:-	निग्रही मन से

त्वत्-मयानि-आनमानि	आपके ही स्वरूप (जान कर) नमन कर के
त्वत्-सेवायां हि	आपकी उपासना में ही
सिद्ध्येत्-मम	सिद्धि हो मेरी
तव कृपया	आपकी कृपा से
भक्ति-दार्ढ्यं	भक्ति में दृढता (हो)
विरागः-त्वत्-तत्त्वस्य-	विराग हो, आपके तत्त्व का
अवबोधः-अपि	ज्ञान भी हो
च भुवनपते	और हे भुवनपते!
यत्नभेदं विना-एव	यत्नों में भेद के बिना ही

इन पांच भूतों को, भूतात्मक समस्त जगत को, पक्षियों को, मत्स्यों को, पशुओं आदि प्राणियों को, मित्रों को, शत्रुओं को भी निग्रही मन से, आपका ही स्वरूप जान कर, सभी को नमन करूं। आपकी उपासना में ही मेरी सिद्धि हो। हे भुवनपते! आपकी कृपा से भक्ति में दृढता हो, विराग हो और आपके तत्त्व का ज्ञान भी हो। अर्थात इन तीनों की प्राप्ति एक ही प्रयत्न से सिद्ध हो जाए, यत्नों में भेद के बिना। जिस प्रकार भोजन करने से, क्षुधा का मिटना, बल मिलना और तृप्ति पाना सब सिद्ध हो जाते हैं।

नो मुह्यन् क्षुत्तृडाद्यैर्भवसरणिभवैस्त्वन्निलीनाशयत्वा-
च्चिन्तासातत्यशाली निमिषलवमपि त्वत्पदादप्रकम्पः ।
इष्टानिष्टेषु तुष्टिव्यसनविरहितो मायिकत्वावबोधा-
ज्ज्योत्स्नाभिस्त्वन्नखेन्दोरधिकशिशिरितेनात्मना सञ्चरेयम् ॥७॥

नो मुह्यन्	नहीं भ्रमित हो कर
क्षुत्-तृडा-आद्यैः-	भूख प्यास आदि से
भव-सरणि-भवैः-	संसार मार्ग के विकारों से
त्वत्-निलीन-आशयत्वात्-	आपमें तल्लीन चित्त से
चिन्ता-सातत्यशाली	चिन्तन में निमग्न
निमिषलवम्-अपि	क्षण भर के लिए भी

त्वत्-पदात्-अप्रकम्प:	आपके चरणों से अविचल
इष्ट-अनिष्टेषु	भले और बुरे से
तुष्टि-व्यसन-विरहित:	सन्तुष्टि और असन्तुष्टि से रहित
मायिकत्व-अवबोधात्	(यह सब) माया के प्रभाव हैं, इस ज्ञान से
ज्योत्स्नाभि:-	ज्योत्सनाओं से
त्वत्-नख-इन्दो:-	आपके (चरण) नखेन्दु के
अधिक-शिशिरितेन-	(और) अधिक शीतल हो कर
आत्मना सञ्चरेयम्	मन वाला विचरण करूं

संसार मार्ग के भूख प्यास आदि विकारों से अप्रभावित रह कर, क्षण भर के लिए भी आपके चरणो से विचलित हुए बिना आपमें ही एकाग्र चित्त हो कर निरन्तर आपके ध्यान में निमग्न रहूं। सन्तुष्टि और असन्तुष्टि सब माया के प्रभाव हैं। इस ज्ञान से युक्त, निर्विकार भाव से आपके चरण नखेन्दु की शीतल ज्योत्सना से और अधिक शीतल हुए मन से स्वेच्छा पूर्वक विचरण करूं।

भूतेष्वेषु त्वदैक्यस्मृतिसमधिगतौ नाधिकारोऽधुना चे-
त्वत्प्रेम त्वत्कमैत्री जडमतिषु कृपा द्विट्सु भूयादुपेक्षा ।
अर्चायां वा समर्चाकुतुकमुरुतरश्रद्धया वर्धतां मे
त्वत्संसेवी तथापि द्रुतमुपलभते भक्तलोकोत्तमत्वम् ॥८॥

भूतेषु-एषु त्वत्-ऐक्य-	इन प्राणियों में आपका ऐक्य (भाव)
स्मृति-समधिगतौ	(यह) स्मृति प्राप्त करने में
न-अधिकार:-अधुना चेत्-	नहीं है अधिकार (मेरा) अभी यदि
त्वत्-प्रेम त्वत्क-मैत्री	आपसे प्रेम आपके भक्तों से मित्रता
जडमतिषु कृपा	अज्ञानियों पर दया
द्विट्सु भूयात्-उपेक्षा	शत्रुओं पर हो उपेक्षा
अर्चायां वा	अथवा आपके अर्चा विग्रह में

समर्चा-कुतुकम्-उरुतर-	पूजन की व्यग्रता उत्तरोत्तर
श्रद्धया वर्धतां मे	श्रद्धा से विकसित होती जाए
त्वत्-संसेवी तथापि	आपका सेवक इस प्रकार भी
द्रुतम्-उपलभते	शीघ्र ही पा जाता है
भक्त-लोक-उत्तमत्वम्	भक्तों में उत्तमता

यदि अभी मेरी ऐसी योग्यता नहीं है किसंसार के सभी प्राणियों में आप ही का ऐक्य भाव देख पाऊं, तो ऐसी कृपा करें कि आपसे प्रेम हो, आपके भक्तों की मित्रता प्राप्त हो, अज्ञानियों पर दया करूं और शत्रुओं की उपेक्षा कर सकूं अथवा आपके अर्चा विग्रहों में श्रद्धा से पूजन करने की व्यग्रता उत्तरोत्तर विकसित होती जाए। आपका सेवक इस प्रकार भी भक्तों में उत्तमता शीघ्र ही पा जाता है।

आवृत्य त्वत्स्वरूपं क्षितिजलमरुदाद्यात्मना विक्षिपन्ती
जीवान् भूयिष्ठकर्मावलिविवशगतीन् दु:खजाले क्षिपन्ती ।
त्वन्माया माभिभून्मामयि भुवनपते कल्पते तत्प्रशान्त्यै
त्वत्पादे भक्तिरेवेत्यवददयि विभो सिद्धयोगी प्रबुद्ध: ॥९॥

आवृत्य त्वत्-स्वरूपं	छुपा कर आपके स्वरूप को
क्षिति-जल-मरुत्-आदि-	आकाश, जल, वायु आदि
आत्मना विक्षिपन्ती	(रूपों) में स्वयं को विस्तारित कर के
जीवान् भूयिष्ठ-कर्मावलि-	प्राणियों पर उनके कर्मों से डाल कर
विवश-गतीन्	विवशता से उनकी गति को
दु:ख-जाले क्षिपन्ती	दु:खों के जाल में फेंक कर
त्वत्-माया	आपकी ही माया
मा-अभिभूत्-माम्-	न अभिभूत करे मुझको
अयि भुवनपते	अयि भुवनपते!
कल्पते तत्-प्रशान्त्यै	मान्य है कि उसके प्राभव के लिए

त्वत्-पादे भक्तिः-एव-	आपके चरणों में भक्ति ही (साधन है)
इति-अवदत्-	इस प्रकार कहा
अयि विभो	अयि विभो!
सिद्ध-योगी प्रबुद्धः	सिद्ध योगी प्रबुद्ध ने

आपकी ही माया आपके स्वरूप को , आकाश, जल, वायु, आदि के रूपों में आच्छादित कर के विस्तारित होती है। वही माया प्राणियों की गति को उनके कर्मो से जनित विवशता के कारण दु:खों के जाल में फेंकती है। हे भुवनपते! आपकी माया मुझे अभिभूत न करे। हे विभो! सिद्ध योगी प्रबुद्ध ने कहा है कि उस माया के प्रभाव से मुक्त होने के लिए आपके चरणों में भक्ति ही एकमात्र साधन है। यही मान्यता भी है ।

दु:खान्यालोक्य जन्तुष्वलमुदितविवेकोऽहमाचार्यवर्या-
ल्लब्ध्वा त्वद्रूपतत्त्वं गुणचरितकथाद्युद्भवद्भक्तिभूमा ।
मायामेनां तरित्वा परमसुखमये त्वत्पदे मोदिताहे
तस्यायं पूर्वरङ्गः पवनपुरपते नाशयाशेषरोगान् ॥१०॥

दु:खानि-आलोक्य जन्तुषु-	क्लेशों को देख कर प्राणियों के
अलम्-उदित-विवेकः-	यथेष्ट जागृत हुए विवेक वाला
अहम्-आचार्यवर्यात्-	मैं आचार्य महानों से
लब्ध्वा त्वत्-रूप-तत्वं	पा कर (ज्ञान) आपके स्वरूप के तथ्य का
गुण-चरित-कथा-आदि-	(आपके) गुणॊ चरित्रों और कथाओं आदि से
उद्भवत्-भक्ति-भूमा	प्रस्फुटित हुई भक्ति प्रगाढ से
मायाम्-एनां-तरित्वा	माया का इसका अतिक्रमण करके
परम-सुखमये-त्वत्पदे	परम सुखमय आपके चरणों में
मोदिताहे	मुझे सुख का अनुभव हो
तस्य-अयं-पूर्वः-अङ्गः	उस (अवस्था) का यह पहला सोपान है
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!

नाशय-अशेष-रोगान्	नाश करें मेरे अशेष रोगों का

इस संसार में प्राणियों के क्लेश देख कर मुझमें यथेष्ट विवेक जागृत हो जाए। महान आचार्यों से आपके स्वरूप के तथ्य का ज्ञान प्राप्त कर के, आपके गुणों, चरित्रों और कथाओं आदि से मुझमें प्रगाढ भक्ति प्रस्फुटित हो, जिससे माया का अतिक्रमण करके मैं, आपके परम सुखमय चरणों में परमानन्द का अनुभव करूं। यह मायातीत अवस्था का प्रथम सोपन होगा। हे पवनपुरपते! मेरे अशेष रोगों का नाश करें।

दशक ९२

वेदैस्सर्वाणि कर्माण्यफलपरतया वर्णितानीति बुध्वा
तानि त्वय्यर्पितान्येव हि समनुचरन् यानि नैष्कर्म्यमीश ।
मा भूद्वेदैर्निषिद्धे कुहचिदपि मन:कर्मवाचां प्रवृत्ति-
र्दुर्वर्जं चेदवाप्तं तदपि खलु भवत्यर्पये चित्प्रकाशे ॥१॥

वेदैः-सर्वाणि कर्माणि-	वेदों के समस्त कर्म काण्डों के
अफल-परतया	परे, नैष्कर्म्य का ही प्रतिपादन
वर्णितानि-इति बुध्वा	वर्णित हैं, ऐसा जान कर
तानि त्वयि-अर्पितानि-एव	वे (कर्म काण्ड) आपको ही अर्पित हैं
हि समनुचरन्	ऐसा ही व्यवहार करके
यानि नैष्कर्म्यम्-ईश	पा जाऊं निष्कर्मता को हे ईश्वर!
मा भूत्-	नहीं हो
वेदैः-निषिद्धे	वेदों में वर्जित
कुहचित्-अपि	कोई भी
मनः-कर्म-वाचाम्	मन कर्म या वचन की
प्रवृत्तिः-दुर्वर्जम्-	प्रवृत्ति, (यदि) संयोगवश
चेत्-अवाप्तम्	यदि मिल जाएं
तत्-अपि खलु	वे भी निस्सन्देह
भवति-अर्पये	आपके लिए ही अर्पित (हों)
चित्प्रकाशे	हे चित्प्रकाशात्मक!

हे ईश्वर! वेदों में निर्देशित समस्त कर्मकाण्ड अन्तत: नैष्कर्म्य का ही प्रतिपादन करते हैं, जान कर वे कर्मकाण्ड आपको ही समर्पित कर के मैं, निष्कर्मता प्राप्त करूं। वेदों में वर्जित किसी भी मन कर्म या वचन की कोई भी प्रवृत्ति नहीं हो। यदि संयोगवश, ऐसे कर्म मेरे द्वारा हो भी जाएं, तो वे भी, हे चित्प्रकाशात्मक! आपको ही समर्पित कर दूं।

यस्त्वन्य: कर्मयोगस्तव भजनमयस्तत्र चाभीष्टमूर्तिं
हृद्यां सत्त्वैकरूपां दृषदि हृदि मृदि क्वापि वा भावयित्वा ।
पुष्पैर्गन्धैर्निवेद्यैरपि च विरचितै: शक्तितो भक्तिपूतै-
र्नित्यं वर्यां सपर्यां विदधदयि विभो त्वत्प्रसादं भजेयम् ॥२॥

य:-तु-अन्य: कर्मयोग:-	वह जो दूसरा कर्मयोग (है)
तव भजनमय:-तत्र च	अपका भजनमय वहां और
अभीष्ट-मूर्तिं	(मेरे) इष्ट की प्रतिमा को
हृद्यां सत्त्व-एक-रूपां	हृदय में, एक मात्र सत्व स्वरूप को
दृषदि हृदि मृदि	पत्थर में, मन में, (अथवा) मिट्टी में
क्वापि वा भावयित्वा	कहीं भी अथवा कल्पना कर के
पुष्पै:-गन्धै:-निवेद्यै:-	पुष्पों से, अगर धूपादि से, प्रसाद से
अपि च विरचितै:	भी और बना कर
शक्तित: भक्तिपूतै:-	यथाशक्ति पावन भक्ति से
नित्यं वर्यां सपर्यां	प्रतिदिन उत्तम पूजा का
विदधत्-अयि विभो	अनुष्ठान कर के अयि विभो!
त्वत्-प्रसादं भजेयम्	आपका (कृपा) प्रसाद प्राप्त करूं

वेदों में प्रतिपादित आगम कर्मयोग में भजनमय भक्ति प्रधान है। उसे, आपके एकमात्र सत्व स्वरूप की कल्पना कर के, अपने हृदय में, पत्थर में, मन में, अथवा मिट्टि में, कहीं भी, यथाशक्ति, अगर धूप और नैवेद्य आदि से पावन भक्ति से परिपूर्ण उत्तम पूजा का अनुष्ठान करके, आपका कृपा प्रसाद प्राप्त करूं।

स्त्रीशूद्रास्त्वत्कथादिश्रवणविरहिता आसतां ते दयार्हा-
स्त्वत्पादासन्नयातान् द्विजकुलजनुषो हन्त शोचाम्यशान्तान् ।
वृत्त्यर्थं ते यजन्तो बहुकथितमपि त्वामनाकर्णयन्तो
दृप्ता विद्याभिजात्यै: किमु न विदधते तादृशं मा कृथा माम् ॥३॥

स्त्री-शूद्रा:-	स्त्री शूद्र (आदि जन)

त्वत्-कथा-आदि-	आपकी कथा आदि
श्रवण-विरहिता:-	सुनने से वञ्चित
आसतां ते दयार्हा:-	होते है दया के पात्र
त्वत्-पाद-आसन्न-यातान्	आपके चरणों के निकट जाने वाले
द्विजकुल-जनुष: हन्त	ब्राह्मण कुल के लोग भी, हाय,
शोचामि-अशान्तान्	शोचनीय हैं अशान्त (वे लोग)
वृत्यर्थं ते यजन्त:	धन के लिए वे यज्ञादि (कर्म) करते हैं
बहु-कथितम्-अपि	अनेक बार (वेदादि में) कहे जाने पर भी
त्वाम्-अनाकर्णयन्त:	आपको (आपकी शिक्षा को) न सुन कर
दृप्ता: विद्या-अभिजात्यै:	दम्भ, विद्या और उच्च कुल का (होने से)
किमु न विदधते	क्या नहीं करते (दुष्कर्म)
तादृशं	उन जैसों के समान
मा कृथा माम्	न करें मुझको

स्त्री शूद्र आदि तो आपकी कथा आदि से वञ्चित होने के कारण दया के पात्र हैं। आपके चरणों के निकट जाने वाले ब्राह्मण कुल के वे अशान्त लोग भी शोचनीय हैं, जो धनार्जन के लिए यज्ञादि कर्म करते हैं। वेदादि में अनेक बार कहे जाने पर भी, आपकी शिक्षा को भी अनसुनी करके, उच्च कुल और विद्या के दम्भ से वे लोग क्या क्या कुकर्म नहीं करते। हे प्रभु! उन लोगों के समान मुझे न बनाए।

पापोऽयं कृष्णरामेत्यभिलपति निजं गूहितुं दुश्चरित्रं
निर्लज्जस्यास्य वाचा बहुतरकथनीयानि मे विघ्नितानि ।
भ्राता मे वन्ध्यशीलो भजति किल सदा विष्णुमित्थं बुधांस्ते
निन्दन्त्युच्चैर्हसन्ति त्वयि निहितमतींस्तादृशं मा कृथा माम् ॥४॥

पाप:-अयं-कृष्ण-राम-	पापी है यह, कृष्ण राम
इति-अभिलपति	इस प्रकार कहता है

निजं गूहितुं दुश्चरित्रं	स्वयं के छुपाने के लिए दुष्कर्मों को
निर्लज्जस्य-अस्य वाचा	इस निर्ल्लज के वचनों के कारण
बहुतर-कथनीयानि मे	अनेक वक्तव्यों में मेरे
विघ्नितानि	विघ्न हो गया है
भ्राता मे वन्ध्यशील:	भाई मेरा धोखेबाज है
भजति किल सदा विष्णुम्-	भजता है निस्सन्देह सर्वदा विष्णु को
इत्थं बुधान्-ते	इस प्रकार से बुद्धिमान आपके (भक्तों की)
निन्दन्ति-उच्चैः-हसन्ति	निन्दा करते हैं और प्रहास करते हैं
त्वयि निहित-मतीन्	आपमें दत्त चित्त वालों का
तादृशं मा कृथा माम्	वैसा नहीं करें मुझको

'यह पापी है, स्वयं के दुष्कर्मों को छुपाने के लिए कृष्ण और राम कहता रहता है।' 'इस निर्लज्ज के वचनों से मेरे वक्तव्य में विघ्न पड जाता है।' 'मेरा भाई निस्सन्देह धोकेबाज है, इसलिए सर्वदा विष्णु का भजन करता रहता है।' आपमें दत्त चित्त आपके बुद्धिमान भक्तों की निन्दा और उपहास लोग ऐसे अनेक प्रकार से करते रहते हैं। उनके जैसा मुझे न बनाएं।

श्वेतच्छायं कृते त्वां मुनिवरवपुषं प्रीणयन्ते तपोभि-
स्त्रेतायां स्रुक्स्रुवाद्यङ्कितमरुणतनुं यज्ञरूपं यजन्ते ।
सेवन्ते तन्त्रमार्गैर्विलसदरिगदं द्वापरे श्यामलाङ्गं
नीलं सङ्कीर्तनाद्यैरिह कलिसमये मानुषास्त्वां भजन्ते ॥५॥

श्वेत-च्छायं कृते	शुक्ल कान्ति युक्त कृतयुग में
त्वां मुनिवरवपुषं	आप तपस्वी वेष में
प्रीणयन्ते तपोभि:-	प्रसन्न किए जाते हैं तपस्या से
त्रेतायां	त्रेता में
स्रुक्-स्रुव-आदि-अङ्कितम्-	स्रुक, स्रुव आदि चिन्हों से अङ्कित
अरुण-तनुं	अरुण कान्ति वेष में

यज्ञरूपं यजन्ते	यज्ञपुरुष को यज्ञ से (आहूति देते हैं)
सेवन्ते तन्त्र-मार्गै:-	उपासना करते हैं (आपकी) तन्त्र मार्गों से
विलसत्-अरि-गदं	सुशोभित चक्र और गदा से
द्वापरे श्यामल-अङ्गम्	द्वापर में श्यामल अङ्गों से
नीलं सङ्कीर्तन-आद्यै:-	नील कान्ति युक्त, सङ्कीर्तन आदि से
इह कलि-समये	यहां कलियुग में
मानुषा:-त्वां भजन्ते	मनुष्य आपका भजन करते हैं

कृतयुग में, शुक्ल कान्ति युक्त तपस्वी वेश धारी आपको तपस्या से प्रसन्न किया जाता है। त्रेता युग में अरुण कान्ति युक्त स्रुक स्रुव आदि चिन्हों से अङ्कित आप यज्ञपुरुष के रूप में आप को यज्ञों की आहूति से प्रसन्न किया जाता है। द्वापर में चक्र और गदा से सुशोभित श्यामल अङ्गों की कान्ति वाले आपकी उपासना तन्त्र मार्गों से की जाती है। कलियुग में मनुष्य नील कान्ति युक्त आपको, नाम सङ्कीर्तन आदि से भजते हैं।

सोऽयं कालेयकालो जयति मुररिपो यत्र सङ्कीर्तनाद्यै-
र्निर्यत्नैरेव मार्गैरखिलद न चिरात्त्वत्प्रसादं भजन्ते ।
जातास्त्रेताकृतादावपि हि किल कलौ सम्भवं कामयन्ते
दैवात्तत्रैव जातान् विषयविषरसैर्मा विभो वञ्चयास्मान् ॥६॥

स:-अयं कालेय-काल:	वही यह है कलि काल
जयति मुररिपो	(इसकी) जय हो हे मुरारि
यत्र सङ्कीर्तन-आद्यै:-	जहां सङ्कीर्तन आदि से
निर्यत्नै:-एव मार्गै:-	बिना यत्न की ही विधियों से
अखिलद न चिरात्-	हे सर्वस्व दानी! नहीं विलम्ब से (शीघ्र ही)
त्वत्-प्रसादं भजन्ते	आपकी प्रसन्नता प्राप्त करते हैं
जाता:-त्रेता-कृत्-आदौ-अपि	जन्म लिया है त्रेता कृत आदि में (वे) भी
हि किल कलौ	निस्सन्देह कलि काल में

सम्भवं कामयन्ते	जन्म लेना चाहते हैं
दैवात्-तत्र-एव जातान्	सुयोग से वहीं (कलि में) जन्मे हुए
विषय-विष-रसैः-	विषय के विषपूर्ण रसों से
मा विभो वञ्चय-अस्मान्	नही, हे प्रभो! प्रवञ्चित करें हमको

हे मुरारि! यह वही कलि काल है, जहां सङ्कीर्तन आदि बिना यत्न वाली विधियों से ही, हे सर्वस्वदानी! निर्विलम्ब आपकी प्रसन्नता प्राप्त की जाती है। जिन लोगों ने कृत त्रेता आदि में जन्म लिया है, वे भी निस्सन्देह कलि काल में जन्म लेना चाहते हैं। सुयोग से हमने उसी कलि काल में हमने जन्म लिया है। हे प्रभो! कलिकाल के विषयों से युक्त विषपूर्ण रसों से हमें प्रवञ्चित न करें।

भक्तास्तावत्कलौ स्युर्द्रमिलभुवि ततो भूरिशस्तत्र चोच्चैः
कावेरीं ताम्रपर्णीमनु किल कृतमालां च पुण्यां प्रतीचीम् ।
हा मामप्येतदन्तर्भवमपि च विभो किञ्चिदञ्चद्रसं त्व-
य्याशापाशैर्निबध्य भ्रमय न भगवन् पूरय त्वन्निषेवाम् ॥७॥

भक्ताः-तावत्-कलौ	भक्त जन अब तक कलियुग में
स्युः-द्रमिल-भुवि	हुए (हैं) द्रमिल भूमि में
ततः-भूरिशः-	उनमें से अधिकांश
तत्र च-उच्चैः	वहां भी अधिकतर
कावेरीं ताम्रपर्णीम्-	कावेरी, ताम्रपर्णी
अनु किल कृतमालां	और फिर कृतमाला
च पुण्यां प्रतीचीम्	और पुण्या पश्चिमवाहिनी नर्मदा (के तटों पर)
हा माम्-अपि-	हाय! मुझे भी
एतत्-अन्तर्भवम्-अपि	इस क्षेत्र में जन्मे हुए को भी
च विभो	और हे विभो!
किञ्चित्-अञ्चत्-रसं त्वयि-	कुछ सिञ्चन है रस का आपमें

आशा-पाशैः-निबध्य	आशाओं के पाशों मे जकड कर
भ्रमय न भगवन्	भ्रमित न करें हे भगवन!
पूरय त्वत्-निषेवाम्	परिपूर्ण करें आपकी सुसेवा

कलियुग में अधिकांश भक्त जन द्रमिल भूमि में हुए हैं। उनमें भी अधिकतर कावेरी, ताम्रपर्णी, कृतमाला और पश्चिमवाहिनी पुण्या नर्मदा के प्रदेशों में हुए हैं। हे विभो! हाय! इसी प्रदेश में जन्म लिए हुए मुझको, जो यत्किञ्चित आपकी भक्ति के रस से भी सिञ्चित है, आशाओं के पाशों में जकड कर भ्रमित न करें। हे भगवन! आपकी सुसेवा मय भक्ति को परिपुष्ट करें।

दृष्ट्वा धर्मद्रुहं तं कलिमपकरुणं प्राङ्महीक्षित् परीक्षित्
हन्तुं व्याकृष्टखड्गोऽपि न विनिहतवान् सारवेदी गुणांशात् ।
त्वत्सेवाद्याशु सिद्ध्येदसदिह न तथा त्वत्परे चैष भीरु-
र्यत्तु प्रागेव रोगादिभिरपहरते तत्र हा शिक्षयैनम् ॥८॥

दृष्ट्वा धर्मद्रुहं तं	देख कर धर्म के द्रोही उस
कलिम्-अपकरुणं	कलि को क्रूर
प्राक्-महीक्षित् परीक्षित-	पहले राजा परीक्षित ने
हन्तुं व्याकृष्ट-खड्गः-अपि	वध के लिए खींच ली खड्ग भी
न विनिहितवान्	नहीं वध किया
सारवेदी गुण-अंशात्	सारवेदी गुणों के अंशों को, (कलि के)
त्वत्-सेवा-आदि-	आपकी पूजा आदि से
आशु-सिद्ध्येत्-	शीघ्र सिद्ध होती है
असत्-इह न तथा	असत्य यहां नहीं उस प्रकार (सिद्ध होते)
त्वत्-परे च-एष भीरुः-	आपके भक्तों से यह भय करता है
यत्-तु प्राक्-एव	इसलिए पहले ही
रोग-आदिभिः-अपहरते	रोग आदि से (भक्तों) का अपहरण कर लेता है
तत्र हा	वहां (इसके लिए) हाय

शिक्षय-एनम्	सजा दें इसको

राजा परीक्षित ने क्रूर, धर्म द्रोही कलि को देख, उसका वध करने के लिए, खड्ग खींच लिया था, किन्तु कलि युग के गुणों के अंशों के सार को जानने के कारण उसका वध नहीं किया। कलियुग में आपकी पूजा सेवा आदि शीघ्र ही सिद्ध होती है, जब कि दुष्कर्म उस प्रकार सिद्ध नहीं होते। कलियुग आपके भक्तों से भयभीत भी रहता है, इसीलिए भक्ति पुष्ट होने से पहले ही रोग आदि से उनका अपहरण कर लेता है। हाय! इस लिए कलि को दण्ड दीजिए।

गङ्गा गीता च गायत्र्यपि च तुलसिका गोपिकाचन्दनं तत्
सालग्रामाभिपूजा परपुरुष तथैकादशी नामवर्णा: ।
एतान्यष्टाप्ययत्नान्ययि कलिसमये त्वत्प्रसादप्रवृद्ध्या
क्षिप्रं मुक्तिप्रदानीत्यभिदधु: ऋषयस्तेषु मां सज्जयेथा: ॥९॥

गङ्गा गीता च	गङ्गा और गीता
गायत्री-अपि च	और गायत्री भी
तुलसिका	तुलसी
गोपिका चन्दनं तत्	वह गोपिका चन्दन
सालग्राम-अभिपूजा	सालग्राम की पूजा
परपुरुष	हे परमपुरुष!
तथा-एकादशी	तथा एकादशी का व्रत
नामवर्णा:	और नामों का संकीर्तन
एतानि-अष्ट-अपि	यह आठ भी
अयत्नानि-अयि	बिना प्रयास के, अयि!
कलि-समये	कलियुग के समय में
त्वत्-प्रसाद-प्रवृद्ध्या	आपके कृपा बाहुल्य से
क्षिप्रं-मुक्ति-प्रदानी-इति-	शीघ्र ही मुक्ति प्रदायी हैं, इस प्रकार
अभिदधु:-ऋषय:-	कहा है ऋषियों ने

तेषु मां सज्जयेथाः	उन (आठ) में मुझको नियोजित कीजिए

हे परमपुरुष! गङ्गा, गीता और गायत्री, तुलसी और गोपिका चन्दन, सालग्राम की पूजा, एकादशी का व्रत तथा नामों का सङ्कीर्तन, ये आठ बिना प्रयास के कलियुग में, आपकी प्रभूत कृपा से, शीघ्र ही मुक्ति प्रदायी है। ऐसा ऋषियों ने कहा है। हे प्रभु! उन आठों में मुझको संलग्न कीजिए।

देवर्षीणां पितृणामपि न पुनः ऋणी किङ्करो वा स भूमन् ।
योऽसौ सर्वात्मना त्वां शरणमुपगतस्सर्वकृत्यानि हित्वा ।
तस्योत्पन्नं विकर्माप्यखिलमपनुदस्येव चित्तस्थितस्त्वं
तन्मे पापोत्थतापान् पवनपुरपते रुन्धि भक्तिं प्रणीयाः ॥१०॥

देवर्षीणां	देवगणों के
पितृणाम्-अपि	पितृगण के भी
न पुनः ऋणी	नहीं फिर ऋणी
किङ्करः वा स	किंकर अथवा वह (होता है)
भूमन्	हे भूमन!
यः-असौ सर्वात्मना	जो भी सम्पूर्ण भाव से
त्वां शरणम्-उपगतः-	आपकी शरण आ जाता है
सर्व-कृत्यानि हित्वा	सभी कर्मों का त्याग करके
तस्य-उत्पन्नं विकर्म-अपि-	उसके किए हुए वर्जित कर्म भी
अखिलम्-अपनुदसि-एव	समस्त नष्ट हो जाते हैं
चित्त-स्थितः-त्वं	(क्योंकि उसके) चित्त में आप स्थित हैं
तत्-मे पाप-उत्थ-तापान्	इसलिए मेरे पापों से उत्पन्न क्लेशों का
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
रुन्धि भक्तिं प्रणीयाः	नाश करके भक्ति को दृढ कीजिए

हे भूमन! जो जन सम्पूर्ण भाव से आपकी शरण में आ जाता है, वह फिर देवगणों का अथवा पितृगणों का ऋणी नहीं रह

जाता, न हीं वह किसी प्रकार से किंकर होता है। वह अपने समस्त कर्मों का त्याग कर देता है और उसके द्वारा किए हुए वर्जित कर्म भी नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि उसके चित्त में आप स्थित होते हैं। हे पवनपुरपते! मेरे पापों से उत्पन्न क्लेशों का नाश करके मेरी भक्ति को दृढ कीजिए।

दशक ९३

बन्धुस्नेहं विजह्यां तव हि करुणया त्वय्युपावेशितात्मा
सर्वं त्यक्त्वा चरेयं सकलमपि जगद्वीक्ष्य मायाविलासम् ।
नानात्वाद्भ्रान्तिजन्यात् सति खलु गुणदोषावबोधे विधिर्वा
व्यासेधो वा कथं तौ त्वयि निहितमतेर्वीतवैषम्यबुद्धेः ॥१॥

बन्धु-स्नेहं विजह्यां	बन्धुजनों के स्नेह को छोड दूंगा
तव हि करुणया	आपकी ही करुणा से
त्वयि-उपावेशित-आत्मा	आपमें ही सुस्थित करके (अपनी) आत्मा को
सर्वं त्यक्त्वा चरेयं	सर्वस्व का त्याग करके विचरण करूंगा
सकलम्-अपि जगत्-वीक्ष्य	समस्त संसार को देख कर
माया-विलासम्	माया का ही प्रपञ्च
नानात्वात्-भ्रान्तिजन्यात्	विविधता के कारण और मिथ्या धारणा से
सति खलु गुण-दोष-	होता है गुण और दोष
अवबोधे विधिः-वा	का ज्ञान, (उसमें) भी उचित
व्यासेधः वा कथं तौ	या अनुचित कैसे दोनों
त्वयि निहित-मतेः-	आपमें स्थित बुद्धि वाले को
वीत-वैषम्य-बुद्धेः	(जो) अतिक्रमण कर गया है वैषम्य बुद्धि को

आपकी ही करुण कृपा से मैं अपने स्वजनों का स्नेह त्याग दूंगा। अपनी आत्मा को आपमें ही सुस्थिर करके सर्वस्व त्याग कर विचरण करूंगा। माया के प्रपञ्च से ही विविधता और मिथ्या धारणा के कारण ही गुण और दोष का बोध होता है। किन्तु आपमें स्थित बुद्धिवाले की वैषम्य बुद्धि का अतिक्रमण हो जाता है। फिर उसके लिए विधि और निषेध (उचित और अनुचित) कैसे हो सकते हैं?

क्षुत्तृष्णालोपमात्रे सततकृतधियो जन्तवः सन्त्यनन्ता-
स्तेभ्यो विज्ञानवत्त्वात् पुरुष इह वरस्तज्जनिर्दुर्लभैव ।
तत्राप्यात्मात्मनः स्यात्सुहृदपि च रिपुर्यस्त्वयि न्यस्तचेता-
स्तापोच्छित्तेरुपायं स्मरति स हि सुहृत् स्वात्मवैरी ततोऽन्यः ॥२॥

क्षुत्-तृष्णा-लोप-मात्रे	भूख और प्यास की शान्ति के लिए केवल
सतत-कृत-धियः	सदा प्रयत्नशील बुद्धि वाले
जन्तवः सन्ति-अनन्ताः-	जन्तु होते हैं अनेक
तेभ्यः विज्ञानवत्त्वात्	उनमें से विवेकशील होने के कारण
पुरुष इह वरः-	मनुष्य यहां श्रेष्ठ है
तत्-जनिः-दुर्लभ-एव	(इसलिए) वह (मनुष्य) जन्म दुर्लभ ही है
तत्र-अपि-आत्मा-आत्मनः	उसमें भी स्वयं स्वयं का ही
स्यात्-सुहृत्-अपि च रिपुः-	होता है मित्र भी और शत्रु (भी)
त्वयि न्यस्त-चेताः-	आपमें स्थित चित्त वाले
ताप-उच्छित्तेः-उपायं	तापों को नष्ट करने के एकमात्र साधन (आपका)
स्मरति स हि सुहृत्	स्मरण करते हैं, वे ही मित्र हैं
स्व-आत्म-वैरी ततः-अन्यः	स्वयं की आत्मा के वैरी इससे अन्य लोग हैं

इस पृथ्वी पर एकमात्र भूख और प्यास की शान्ति के लिए क्रियाशील बुद्धि वाले जन्तु, अनेक हैं। विवेकशील होने के कारण ही, उनमें, मनुष्य श्रेष्ठ हैं। इसलिए यह मनुष्य जन्म दुर्लभ है। यह जन्म पा कर भी मनुष्य स्वयं अपना मित्र और स्वयं ही अपना शत्रु भी हो सकता है। भव तापों को नष्ट करने वाले एकमात्र साधन आपमें चित्त लगा कर आपका स्मरण करने वाले ही स्वयं आपनी आत्मा के बन्धु होते हैं। इसके विपरीत, आपका स्मरण न करने वाले अपनी ही अत्मा के वैरी होते हैं।

त्वत्कारुण्ये प्रवृत्ते क इव नहि गुरुर्लोकवृत्तेऽपि भूमन्
सर्वाक्रान्तापि भूमिर्नहि चलति ततस्सत्क्षमां शिक्षयेयम् ।
गृह्णीयामीश तत्तद्विषयपरिचयेऽप्यप्रसक्तिं समीरात्
व्याप्तत्वञ्चात्मनो मे गगनगुरुवशाद्भातु निर्लेपता च ॥३

त्वत्-कारुण्ये प्रवृत्ते	(जब) आपकी करुणा सञ्चालित होती है
क इव न हि गुरुः-	कौन ऐसा है, जो नहीं (होता) गुरु
लोक-वृत्ते-अपि	(इस) लोक व्यवहार में भी

भूमन्	हे भूमन!
सर्वाक्रान्ता-अपि भूमि:-	सबसे आक्रान्ता भूमि
न-हि चलति	विचलित नहीं होती
तत:-सत्क्षमां शिक्षयेयम्	वहां से (मैं) समुन्नत क्षमा सीखूं
गृह्णीयाम्-ईश	ग्रहण करूं, हे ईश्वर!
तत्-तत्-विषय-	उन उन वस्तुओं के
परिचये-अपि-	सम्पर्क होने पर भी
अप्रसक्तिं समीरात्-	अनासक्ति वायु से
व्याप्तत्वम्-च-आत्मन: मे	और सर्वव्यापकता आत्मा की मेरी
गगन-गुरु-वशात्-	गगन के गुरुरूप से
भातु निर्लेपता च	और प्रकाशित हो निर्लिप्तता भी

हे भूमन! आपकी करुणा का सञ्चार होने पर, लौकिक व्यवहार में भी कौन ऐसा है जो गुरु नहीं होता। धरती सभी के द्वारा आक्रान्त होने पर भी विचलित नहीं होती। वहां से मैं समुन्नत क्षमा सीखूं। हे ईश्वर! विभिन्न वस्तुओं के सम्पर्क में आने पर भीजिस प्रकार वायु अनासक्त रहती है, मैं भी रहूं। गगन को गुरु रूप में पा कर, यह तथ्य मुझमें प्रकाशित हो कि मेरी आत्मा सर्वव्यापक है और निर्लिप्त है।

स्वच्छ: स्यां पावनोऽहं मधुर उदकवद्वह्निवन्मा स्म गृह्णां
सर्वान्नीनोऽपि दोषं तरुषु तमिव मां सर्वभूतेष्ववेयाम् ।
पुष्टिर्नष्टि: कलानां शशिन इव तनोर्नात्मनोऽस्तीति विद्यां
तोयादिव्यस्तमार्ताण्डवदपि च तनुष्वेकतां त्वत्प्रसादात् ॥४॥

स्वच्छ: स्यां	निर्मल होऊं
पावन:-अहं	पवित्र मैं
मधुर उदक-वत्-	मधुर जल के समान
वह्नि-वत्-मा स्म गृह्णां	अग्नि के समान नहीं ग्रहण करूं

सर्व-अन्नीन:-अपि दोषं	सर्वभक्षी होने पर भी दोष (उन पदार्थों के)
तरुषु तम्-इव	वृक्षों में जिस प्रकार अग्नि (निहित है)
मां सर्व-भूतेषु-अवेयाम्	मुझको ही समस्त जीवों में (व्याप्त) जानूं
पुष्टि-नष्टि: कलानां	बढना और घटना कलाओं का
शशिन:-इव-तनो:-	चन्द्र के समान शरीर का (होता है)
न-आत्मन:-	न कि आत्मा का
अस्ति-इति विद्यां	होता है ऐसा ज्ञान
तोय-आदि-व्यस्त-	जल आदि में बिम्बित
मार्ताण्ड-वत्-अपि च	और सूर्य के समान भी
तनुषु-एकतां	सभी शरीर धारियों में एकता (का आभास)
त्वत्-प्रसादात्	आपके प्रसाद से

हे भगवन! आपके कृपा प्रसाद से मैं मधुर जल के समान निर्मल और पवित्र (स्वभाव वाला) हो जाऊं। जिस प्रकार अग्नि सर्वभक्षी होने पर भी उन पदार्थों के दोष ग्रहण नहीं करती,मैं भ किसी के दोषों को ग्रहण नहीं करूं। जिस प्रकार अग्नि सभी वृक्षों में नीहित है, मैं भी अपनी आत्मा को समस्त जीवों में व्याप्त जानूं। चन्द्रमां की कलाएं बढती और घटती हैं, चन्द्र नहीं, इसी प्रकार शरीर का नाश और विकास होता है, आत्मा का नहीं, ऐसा ज्ञान प्राप्त करूं। जिस प्रकार जल के विभिन्न पात्रों में एक ही सूर्य बिम्बित होता है उसी प्रकार सभी शरीर धारियों में मैं एकता का आभास पाऊं।

स्नेहाद् व्याधात्तपुत्रप्रणयमृतकपोतायितो मा स्म भूवं
प्राप्तं प्राश्नन् सहेयं क्षुधमपि शयुवत् सिन्धुवत्स्यामगाध: ।
मा पप्तं योषिदादौ शिखिनि शलभवत् भृङ्गवत्सारभागी
भूयासं किन्तु तद्वद्धनचयनवशान्माहमीश प्रणेशम् ॥५॥

स्नेहात्-व्याध-	स्नेह वश व्याध (के द्वारा)
आत्त-पुत्र-प्रणय-	पड कर पुत्र प्रेम में
मृत-कपोत-आयित:	मर गया था कबूतर उन (पुत्रों) के ही साथ
मा स्म भूवं	(वैसा पुत्र स्नेही) न बनूं मैं

प्राप्तं प्राश्नन् सहेय	यत्किञ्चित प्राप्त को खा कर सहन करूं
क्षुधम्-अपि शयु-वत्	भूख को भी अजगर के समान
सिन्धु-वत्-स्याम्-अगाध:	सागर के समान गम्भीर होऊं
मा पप्तं योषित्-आदौ	न पतन को प्राप्त करूं युवतियों के (मोह में)
शिखिनि शलभ-वत्	अग्नि पर पतन्गों के समान
भृङ्ग-वत्-सार-भागी भूयासं	भौंरों के समान सार ग्राही सदा (बनूं)
किन्तु तत्-वत्-धन-चयन-	किन्तु उसके समान धन के सञ्चय
वशात्-मा-अहम्-	के कारण न मैं
ईश प्रणेशम्	हे ईश्वर! प्रनष्ट हो जाऊं

हे ईश्वर! जिस प्रकार कबूतर अपनी सन्तान के प्रेमवश उन्हीं के साथ व्याध के द्वारा मार दिया गया, वैसा कुटुम्ब स्नेही मैं न बनूं। अजगर के समान यत्किञ्चित प्राप्त को खाकर रहूं और भूख को सहन करूं। सागर के समान गम्भीर बनूं। अग्नि पर मोहित हो कर जिस प्रकार पतंगे नष्ट हो जाते हैं, उस प्रकार युवतियों पर मोहित हो कर मैं पतनोन्मुख न हूऊं। भौंरों के समान सार ग्राही बनूं किन्तु उनकी तरह धन सञ्चय के लोभ में नष्ट न हो जाऊं।

मा बद्ध्यासं तरुण्या गज इव वशया नार्जयेयं धनौघं
हर्तान्यस्तं हि माध्वीहर इव मृगवन्मा मुहं ग्राम्यगीतै: ।
नात्यासज्जेय भोज्ये झष इव बलिशे पिङ्गलावन्निराश:
सुप्यां भर्तव्ययोगात् कुरर इव विभो सामिषोऽन्यैर्न हन्यै ॥६॥

मा बद्ध्यासं तरुण्या	न पडूं बन्धन में युवतियों के
गज इव वशया	हाथी जिस प्रकार वश में (हथिनी के)
न-आर्जयेयं धन-औघं	न अर्जन करूं धन अधिक
हर्ता-अन्य:-तं हि	(क्योंकि) हरण अन्य (लोग) करलेते हैं उसका ही
माध्वीहर:-इव	मधु संग्रह करने वाले की तरह
मृग-वत्-मा मुहं	हिरण के समान न मोहित होऊं

ग्राम्य-गीतैः	ग्राम्य गीतों से
न-अति-आसज्जेय	न ही अत्यधिक आसक्ति हो
भोज्ये झष इव बलिशे	भोज्य (पदार्थों में) मछली के समानbait में
पिङ्गला-वत्-निराशः सुप्यां	पिङ्गला के समान अपेक्षा रहित सोऊं
भर्तव्य-योगात्	भर्तव्य योग से
कुरर इव विभो	कुररी पक्षी के समान, हे विभो!
सामिषः-अन्यैः-न हन्यै	आमिष वहन करते हुए अन्य कुरर से न मारा जाऊं

हे विभो! जिस प्रकार हाथी हथिनी के वश में आ कर बन्धन में पड जाता है, मैं युवतियों के बन्धन में न पडूं। अधिक धन का अर्जन न करूं जिसका अन्य लोग उसी प्रकार हरण कर लें, जिस प्रकार मधु संग्रह करने वाले का मधु अन्य लोग ले लेते हैं। जिस प्रकार हिरण शिकारी की बीन से मोहित हो जाता है, उसी प्रकार मैं ग्राम्य गीतों से मोहित न होऊं। मेरी आसक्ति भोज्य पदार्थों में उसी प्रकार न हो जिस प्रकार मछली की बांस में लगे चारे में होती है। पिङ्गला के समान भर्तव्य योग की अपेक्षा से रहित हो कर सोऊं। आमिष वहन करते हुए कुररी पक्षी, जैसे अन्य कुररी पक्षियों द्वारा मार दिया जाता है, वैसे मैं रक्षणीय धन के कारण औरों के द्वारा न मारा जाऊं।

वर्तेयं त्यक्तमान: सुखमतिशिशुवन्निस्सहायश्चरेयं
कन्याया एकशेषो वलय इव विभो वर्जितान्योन्यघोष: ।
त्वच्चित्तो नावबुध्यै परमिषुकृदिव क्ष्माभृदायानघोषं
गेहेष्वन्यप्रणीतेष्वहिरिव निवसान्युन्दुरोर्मन्दिरेषु ॥७॥

वर्तेय त्यक्तमानः	व्यवहार करूं त्याग करके मान अपमान का
सुखम्-अति-शिशु-वत्-	सुख से शिशु के समान
निस्सहायः-चरेयं	निस्सहाय (अकेला) विचरण करूं
कन्यायाः-एक-शेषः	कन्या की एकमात्र शेष
वलय इव विभो	चूडी की तरह, हे विभो!
वर्जितानि-उन्य-घोषः	अकेले बिना कोलाहल के
त्वत्-चित्तः	आपमें दत्त चित्त

न-अवबुध्यै परम्-	न जानूं अन्य कुछ
इषु-कृत्-इव	बाण बनाने वाले के समान
क्ष्माभृत-आयान-घोषं	राजा के रथ के आने की घोषणा (जो नहीं सुनता)
गेहेषु-अन्य-प्रणीतेषु-	घरों मे दूसरों के द्वारा बनाए हुए
अहिः-इव निवसानि-	सर्प की भांति, रहूं
उन्दुरोः-मन्दिरेषु	चूहे के बिलों के समान

हे विभो! मान और अपमान का त्याग कर शिशु के समान सुख से रहूं। कन्या की अन्तिम एकमात्र चूडी के समान कोलाहल रहित हो कर अकेला निस्सहाय विचरण करूं। आपमें ही दत्तचित्त होकर अन्य कुछ भी वैसे ही जानूं जैसे बाण बनाने वाला शिल्पी राजा के आने की घोषणा भी नहीं सुन पाता है। दूसरों के बनाए हुए घरों में, चूहे के बनाए हुए बिलों में सर्प की भांति रहूं ताकि मुझे गृहासक्ति न हो।

त्वय्येव त्वत्कृतं त्वं क्षपयसि जगदित्यूर्णनाभात् प्रतीयां
त्वच्चिन्ता त्वत्स्वरूपं कुरुत इति दृढं शिक्षये पेशकारात् ।
विड्भस्मात्मा च देहो भवति गुरुवरो यो विवेकं विरक्तिं
धत्ते सञ्चिन्त्यमानो मम तु बहुरुजापीडितोऽयं विशेषात् ॥८॥

त्वयि-एव त्वत्-कृतं	आपमें ही आपके द्वारा निर्मित
त्वं क्षपयसि जगत्-	आप लीन कर लेते हैं जगत को
इति-ऊर्णनाभात् प्रतीयां	यह (ज्ञान) मकडी से प्राप्त करूं
त्वत्-चिन्ता त्वत्-स्वरूपं	आपका ध्यान आपके स्वरूप
कुरुत इति दृढं शिक्षये	करता है, ऐसा दृढता से सीखूं
पेशकारात्	भंवरे से
विड्-भस्म-आत्मा	विष्ठा और भस्म की परिणति युक्त
च देहः-भवति गुरुवरः	और शरीर होता है श्रेष्ठ गुरु
यः विवेकं विरक्तिं धत्ते	जिससे विवेक और विरक्ति प्रदान करता है

सञ्चिन्त्यमान:	विचार किए जाने पर
मम तु बहु-रुजा-पीडित:-	मेरी (देह) तो अनेक रोगों से पीडित है
अयं विशेषात्	यह विशेष कर

मकडी से मै यह ज्ञान प्राप्त करूं कि अपने द्वारा रचित यह जगत आप अपने में लीन कर लेते हैं। आपका ध्यान करने से आपका सारूप्य प्राप्त होता है, यह दृढ शिक्षा भंवरा सिखाता है। जिस शरीर की परिणति विष्ठा और भस्म है, वह महान गुरु है, क्योंकि सम्यक विचार करने से ज्ञात होता है कि वही विवेक और विरक्ति प्रदान करता है, विशेष कर मेरी यह देह जो अनेक रोगों से आक्रान्त है।

ही ही मे देहमोहं त्यज पवनपुराधीश यत्प्रेमहेतो-
र्गेहे वित्ते कलत्रादिषु च विवशितास्त्वत्पदं विस्मरन्ति ।
सोऽयं वह्नेश्शुनो वा परमिह परत: साम्प्रतञ्चाक्षिकर्ण-
त्वग्जिह्वाद्या विकर्षन्त्यवशमत इत: कोऽपि न त्वत्पदाब्जे ॥९॥

ही ही देह मोहं त्यज	हाय! हाय! शरीर के मोह का त्याग कराइए
पवनपुराधीश	हे पवनपुराधीश!
यत्-प्रेम-हेतो:-	जिस (देह) प्रेम के कारण
गेहे वित्ते कलत्र-आदिषु	घर में, धन में, स्त्री आदि में
च विवशिता:-	और (तत्जनित) विवशता से
त्वत्-पदं विस्मरन्ति	आपके चरणों को (हम) भूल जाते हैं
स:-अयं वह्ने:-शुन: वा	वह यह (शरीर) अग्नि अथवा कुत्ते के (योग्य)
परम्-इह परत:	मात्र (है) यहां (इस जगत में) अन्तत:
साम्प्रतम्-च-	अभी भी और
अक्षि-कर्ण-त्वक्-जिह्वा-आद्या	आंखें, कान, त्वचा, जिह्वा आदि
विकर्षन्ति-अवशम्-अत:-इत:-	खींचती हैं, असहाय (की भांति) इधर उधर
क:-अपि न त्वत्-पदाब्जे	कोई भी नहीं, आपके पद कमलों की(ओर) खींचती

हे पवनपुराधीश! कृपा करके देह के मोह का त्याग कराइये। इस देह प्रेम के कारण ही घर, धन, स्त्री आदि में आसक्ति होती है और तत्जनित विवशता से हम आपके चरणों को भूल जाते हैं। इस जगत में अन्तत: यह शरीर केवलमात्र अग्नि या कुत्ते के भोजन के योग्य है। और अभी भी, जीवित अवस्था में भी, आंखें, कान, त्वचा, जिह्वा आदि इसको असहाय की भांति इधर से उधर खींचती रहती हैं। किन्तु हाय! कोई भी आपके चरण कमलों की ओर प्रेरित नहीं करती।

दुर्वारो देहमोहो यदि पुनरधुना तर्हि निश्शेषरोगान्
हृत्वा भक्तिं द्रढिष्ठां कुरु तव पदपङ्केरुहे पङ्कजाक्ष ।
नूनं नानाभवान्ते समधिगतममुं मुक्तिदं विप्रदेहं
क्षुद्रे हा हन्त मा मा क्षिप विषयरसे पाहि मां मारुतेश ॥१०॥

दुर्वार: देह-मोह:	दुष्कर (है) देह मोह (छोडना)
यदि पुन:-अधुना	यदि फिर अभी (है)
तर्हि निश्शेष-रोगान् हृत्वा	तब अनन्त रोगों का विनाश करके
भक्तिं द्रढिष्ठां कुरु	(मेरी) भक्ति को सुदृढ कीजिए
तव पद-पङ्करुहे	आपके चरण कमलों में
पङ्कजाक्ष	हे पङ्कजाक्ष!
नूनं नाना-भवान्ते	निस्सन्देह अनेक जन्मों के बाद
समधिगतम्-अमुं	पाए हुए इस
मुक्तिदम् विप्रदेहं	मुक्ति प्रदाता ब्राह्मण शरीर को
क्षुद्रे हा हन्त	तुच्छ, हाय! हत भाग्य!
मा मा क्षिप विषय-रसे	नहीं नहीं उच्छिष्ट करें विषय रसों में
पाहि मां मारुतेश	रक्षा करें मेरी, हे मारुतेश!

फिर, यदि, अभी इस देह मोह का त्याग दुष्कर है, तो मेरे अनन्त रोगों का विनाश करके आपके चरण कमलों में भक्ति को सुदृढ कीजिए। हे पङ्कजाक्ष! निस्सन्देह अनेक जन्मों के अन्त में पाए हुए इस मुक्ति प्रदाता ब्राह्मण शरीर को, दया करके, तुच्छ विषय रसों की ओर मत ढकेलिए। हे मारुतेश! मेरी रक्षा कीजिए।

दशक ९४

शुद्धा निष्कामधर्मैः प्रवरगुरुगिरा तत्स्वरूपं परं ते
शुद्धं देहेन्द्रियादिव्यपगतमखिलव्याप्तमावेदयन्ते ।
नानात्वस्थौल्यकार्श्यादि तु गुणजवपुस्सङ्गतोऽध्यासितं ते
वह्नेर्दारुप्रभेदेष्विव महदणुतादीप्तताशान्ततादि ॥१॥

शुद्धाः निष्काम-धर्मैः	पवित्र निष्काम कर्म करने वाले
प्रवर-गुरु-गिरा	उत्कृष्ट गुरुओं की शिक्षा से
तत्-स्वरूपं परं ते	उस स्वरूप ब्रह्म आपके
शुद्धं देह-इन्द्रिय-आदि-	शुद्ध देह और इन्दियों आदि
व्यपगतम्-	से अतिक्रमण कर के
अखिल-व्याप्तम्-आवेदयन्ते	सर्व व्यापकत्व को जान कर
नानात्व-स्थौल्य-कार्श्य-आदि	विभिन्नता-मोटा पतला आदि
तु गुणज-वपुः-सङ्गतः-	तो गुण जन्य काया की सङ्गति से
अध्यासितं ते	अधिरोपित हैं आपके (ऊपर)
वह्नेः-दारु-प्रभेदेषु-इव	अग्नि में लकडी की विभिन्नता से जैसे
महत्-अणुता-दीप्तता-	बडी, छोटी, प्रचण्ड
शान्तता-आदि	शान्त आदि

जिनके मन शुद्ध निष्काम कर्मों से पवित्र हो गए है, वे लोग, उत्कृष्ट गुरुओं की शिक्षा से आपके उस ब्रह्म स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, जो शुद्ध है और देह इन्द्रियों से परे सर्व व्यापक है। उस स्वरूप की जो स्थूल अथवा कृश रूपी विभिन्नताएं लक्षित होती हैं, वे काया की त्रिगुणात्मक विभिन्नताओं की सङ्गति से आप पर अधिरोपित हैं, वैसे ही जैसे काष्ठ के बडे या छोटे होने से अग्नि बडी या छोटी प्रतीत होती है, अथवा प्रचण्ड और शान्त आदि जान पडती है।

आचार्याख्याधरस्थारणिसमनुमिलच्छिष्यरूपोत्तरार-
ण्यावेधोद्भासितेन स्फुटतरपरिबोधाग्निना दह्यमाने ।
कर्मालीवासनातत्कृततनुभुवनभ्रान्तिकान्तारपूरे
दाह्याभावेन विद्याशिखिनि च विरते त्वन्मयी खल्ववस्था ॥२॥

आचार्य-आख्य-	गुरु उपदेश (है)
अधरस्थ-अरणि-	नीचे की मथनी काष्ठ
समनुमिलत्-शिष्य-रूप-	(ज्ञान के लिए) आया हुआ शिष्य रूप है
उत्तर-अरणि-	ऊपर की मथनी काष्ठ
आवेध:-उद्भासितेन	संघर्षण से उद्भासित (प्रज्ज्वलित) होने से
स्फुटतर-परिबोध-	परिष्कृत ज्ञान (उपजता है)
अग्निना दह्यमाने	अग्नि के द्वारा जला दिए जाने से
कर्माली-वासना-	कर्म जनित वासनाएं
तत्-कृत-तनु-	उससे उपजी
भुवन-भ्रान्ति-	जगत की भ्रान्ति
कान्तार-पूरे	(ऐसे) जङ्गल के जल जाने से
दाह्य-अभावेन	इन्धन के अभाव में
विद्या-शिखिनि च विरते	विद्या अग्नि के रुक जाने पर
त्वत्-मयी खलु-अवस्था	आपमे एकाकार की अवस्था ही रह जाती है

गुरु उपदेश स्वरूप नीचे के मन्थन काष्ठ, और ज्ञानार्थ आये हुए शिष्य स्वरूप ऊपर के मन्थन काष्ठ में जब जब संघर्षण से अग्नि प्रज्ज्वलित होती हैं, तब-तब परिष्कृत ज्ञान उपजता है। जिस प्रकार इन्धन के अभाव में अग्नि शान्त हो जाती है, उसी प्रकार कर्म जनित वासना और उसके कारण उद्भूत जगत प्रपञ्च की भ्रान्ति का वन इन्धन उस ज्ञानाग्नि से जला दिए जाने पर वह, विद्याग्नि भी शान्त हो जाती है, और शेष रह जाती है आपमें एकाकार की अवस्था, अर्थात सच्चिदानन्दमय रूप तन्मयता।

एवं त्वत्प्राप्तितोऽन्यो नहि खलु निखिलक्लेशहानेरुपायो
नैकान्तात्यन्तिकास्ते कृषिवदगदषाड्गुण्यषट्कर्मयोगा: ।
दुर्वैकल्यैरकल्या अपि निगमपथास्तत्फलान्यप्यवाप्ता
मत्तास्त्वां विस्मरन्त: प्रसजति पतने यान्त्यनन्तान् विषादान्॥३॥

एवं त्वत्-प्राप्तित:-अन्य:	इस प्रकार, आपकी प्राप्ति के अतिरिक्त

न-हि खलु	नहीं हैं निश्चय ही
निखिल-क्लेश-हाने:-उपाय:	समस्त क्लेशों को नष्ट करने के उपाय (साधन)
न-एकान्त-अत्यन्तिका:-ते	एकमात्र और अन्ततः गत्वा वे (उपाय) (कष्टों की पुनरावृति को रोकने में समर्थ हैं)
कृषि-वत्-	खेती के समान
अगद-षाड्गुण्य-	(अथवा) औषधियों के षट गुण (युक्त)
षड्कर्म-योगा:	षट कर्म युक्त योग
दुर्वैकल्यै:-अकल्या:	कठिनाई से किए जाते हैं, (और) असाध्य हैं
अपि निगम-पथा:-	यहां तक कि वैदिक पन्थ भी
तत्-फलानि-अपि-अवाप्ता	उनके (वेदों के) फल मिल जाने पर भी
मत्ता:-त्वां विस्मरन्त:	(लोग) मदमत्त हो कर आपको भूल जाते हैं
प्रसजति पतने	उन्मुख होते हैं पतन की ओर
यान्ति-अनन्तान् विषादान्	झेलते है अनन्त विषादों को

समस्त क्लेशों को नष्ट करने के, निश्चय ही, आपकी प्राप्ति के अतिरिक्त, कोई भी उपाय नहीं हैं। षट गुण युक्त औषधियों की खेती, अथवा षट कर्म युक्त योग आदि कठिनाई से किए जाते हैं और असाध्य भी हैं। यहां तक कि वैदिक पन्थ भी अगम्य हैं। उनके फल यदि किसी को मिल भी जाते हैं तो, वे मद मस्त हो कर आपको भुला देते हैं और पतन की ओर उन्मुख हो कर अनन्त विषाद झेलते हैं।

त्वल्लोकादन्यलोक: क्वनु भयरहितो यत् परार्धद्वयान्ते
त्वद्भीतस्सत्यलोकेऽपि न सुखवसति: पद्मभू: पद्मनाभ ।
एवं भावे त्वधर्मार्जितबहुतमसां का कथा नारकाणां
तन्मे त्वं छिन्धि बन्धं वरद् कृपणबन्धो कृपापूरसिन्धो ॥४॥

त्वत्-लोकात्-अन्य-लोक:	आपके लोक (वैकुण्ठ) से (अतिरिक्त) दूसरे लोक
क्व-नु भय-रहित:	कहां है निर्भयता
यत् परार्ध-द्वय-अन्ते	क्योंकि, परार्ध दो के अन्त में भी

त्वत्-भीत:-	आपसे डरे हुए
सत्य-लोके-अपि	सत्य लोक में भी
न सुख-वसति: पद्मभू:	नहीं सुख से रहते हैं ब्रह्मा
पद्मनाभ	हे पद्मनाभ!
एवं भावे-तु-	इस प्रकार से तो
अधर्म-अर्जित-बहु-तमसां	अधर्म से अर्जित अत्यन्त तामसिक
का कथा नारकाणाम्	क्या कहा जाय नारकी जनों के लिए
तत्-मे त्वं	इस लिए मेरे आप
छिन्धि बन्धं	काट दीजिये बन्धनों को
वरद् कृपणबन्धो	हे वरद! हे दीनानाथ!
कृपापूरसिन्धो	हे कृपा के परिपूर्ण सिन्धो!

हे पद्मनाभ! आपके वैकुण्ठ लोक के अतिरिक्त निर्भयता और कहां है? दो परार्ध के अन्त में, आपसे भयभीत ब्रह्मा सत्यलोक में भी सुख से नहीं रहते हैं। हे दीनानाथ! जब ब्रह्मा की यह स्थिति है, तो अधर्म से अर्जित अत्यन्त तामसिक नारकी जनों की अवस्था के विषय में क्या कहा जाए? हे वरद! हे कृपापरिपूर्ण सिन्धो! इस लिए आप मेरे बन्धनों को काट दीजिए।

याथार्थ्यात्त्वन्मयस्यैव हि मम न विभो वस्तुतो बन्धमोक्षौ
मायाविद्यातनुभ्यां तव तु विरचितौ स्वप्नबोधोपमौ तौ ।
बद्धे जीवद्विमुक्तिं गतवति च भिदा तावती तावदेको
भुङ्क्ते देहद्रुमस्थो विषयफलरसान्नापरो निर्व्यथात्मा ॥५॥

याथार्थ्यात्-	यथार्थत:
त्वत्-मयस्य-एव	आपके स्वरूपमय भी
हि मम न विभो	अवश्य मेरा नहीं (है) हे विभो!
वस्तुत: बन्ध मोक्षौ	वास्तव में बन्धन अथवा मोक्ष

माया-विद्या-तनुभ्यां	माया और विद्या रूप से
तव तु विरचितौ	आपका तो रचित है
स्वप्न-बोध-उपमौ तौ	स्वप्न और जाग्रत के समान दोनों
बद्धे जीवत्-विमुक्तिं	बन्धन, जीवित अवस्था में, और मुक्ति
गतवति च भिदा	प्राप्त होती है, और भिन्नता
तावती तावत्-एको	यह है कि, जबकी एक
भुङ्क्ते देह-द्रुम-स्थः	भोग करता है शरीर रूपी वृक्ष में स्थित
विषय-फल-रसात्	विषय फलों के रस से
न-अपरः निर्व्यथ-आत्मा	नहीं अन्य (इसलिए) उसकी आत्मा व्यथा रहित है

हे विभो! यथार्थतः मेरा बन्धन अथवा मोक्ष अवश्य आपका ही स्वरूपमय होने से, नहीं है। स्वप्न और जाग्रत अवस्था के ही समान, आपके द्वारा रचित माया और विद्या रूप से, जीवित अवस्था में बन्धन और मुक्ति प्राप्त होते हैं। भिन्नता यही है कि एक शरीर रूपी वृक्ष में स्थित हो कर विषय रूपी फलों के रसों का भोग करता है, दूसरा ऐसा नहीं करता और इसलिए उसकी आत्मा व्यथा रहित रहती है।

जीवन्मुक्तत्वमेवंविधमिति वचसा किं फलं दूरदूरे
तन्नामाशुद्धबुद्धेर्न च लघु मनसश्शोधनं भक्तितोऽन्यत् ।
तन्मे विष्णो कृषीष्ठास्त्वयि कृतसकलप्रार्पणं भक्तिभारं
येन स्यां मङ्क्षु किञ्चिद् गुरुवचनमिलत्त्वत्प्रबोधस्त्वदात्मा ॥६॥

जीवन्-मुक्तत्वम्-	जीवन मुक्तत्व
एवं-विधम्-इति वचसा	इस प्रकार का होता है, इस कथन से
किं फलं दूर दूरे	क्या लाभ दूर दूर तक
तत्-नाम-अशुद्ध-बुद्धेः-	वह तो अपवित्र बुद्धि के लिए
न च लघु मनसः-शोधनं	और न ही नीच बुद्धि का संशोधन कर सकती है
भक्तितः-अन्यत्	भक्ति के अतिरिक्त (अन्य कुछ)

तत्-मे विष्णो कृषीष्ठा:-	इसलिए, मुझ पर हे विष्णो! करें (कृपा)
त्वयि कृत-सकल-प्रार्पणं	आपमें करके सब कुछ अर्पण
भक्तिभारम्	सुद्दढ भक्ति (मिले)
येन स्याम् मङ्क्षु	जिससे हो जाऊं शीघ्र
किञ्चित् गुरु-वचन-मिलत्-	(और) कुछ गुरु के वचनों के मिल जाने से
त्वत्-प्रबोध:-त्वत्-आत्मा	आपका ज्ञान, आपका सारूप्य

जीवन मुक्तत्व इस प्रकार का होता है, - जैसे कथनों से अपवित्र बुद्धि वालों को दूर दूर तक कोई लाभ नहीं होता। लेकिन भक्ति के अतिरिक्त और कुछ भी नीच बुद्धि का संशोधन नहीं कर सकती। हे विष्णो! इसलिए मुझ पर कृपा करें कि अपना सर्वस्व आपमें समर्पित कर के आपकी सुद्दढ भक्ति प्राप्त कर सकूं। उस भक्ति से और गुरु के उपदेशों से मुझे आपका सम्यक ज्ञान और आपका सारूप्य शीघ्र ही प्राप्त हो।

शब्दब्रह्मण्यपीह प्रयतितमनसस्त्वां न जानन्ति केचित्
कष्टं वन्ध्यश्रमास्ते चिरतरमिह गां बिभ्रते निष्प्रसूतिम् ।
यस्यां विश्वाभिरामास्सकलमलहरा दिव्यलीलावतारा:
सच्चित्सान्द्रं च रूपं तव न निगदितं तां न वाचं भ्रियासम् ॥७॥

शब्द-ब्रह्मणि-अपि-इह	सामवेदों आदि में भी यहां
प्रयतित-मनस:-	संलग्न मन वाले
त्वां न जानन्ति केचित्	आपको नहीं जानते हैं कुछ लोग
कष्टं वन्ध्य-श्रमा:- ते	खेद है कि निरर्थक परिश्रमी हैं वे
चिरतरम्-इह गां	बहुत समय के लिए जिस प्रकार यहां गाय का
बिभ्रते निष्प्रसूतिम्	पोषण करते हैं प्रसवरहित का
यस्यां विश्व-अभिरामा:-	जिन (शास्त्रों) में लोकाभिराम
सकल-मल-हरा:	समस्त विकारों के हर्ता
दिव्य-लीला-अवतारा:	(आपके) दिव्य लीला अवतारों

सत्-चित्-सान्द्रं	(जो) सत चित से भरपूर
च रूपं तव	और रूप आपका
न निगदितं	न गायन करता हो
तां न वाचं भ्रियासम्	उनका नहीं शास्त्रों का अध्ययन करूंगा

इस संसार में सामवेद आदि में संलग्न मन वाले अधिकांश लोग भी आपके सत्य स्वरूप को नहीं जानते। खेद है कि उनका परिश्रम वैसे ही निरर्थक है, जैसे बहुत समय तक बन्ध्या गाय का पोषण करना। जिन शास्त्रों में आपके समस्त विकारों के हर्ता दिव्य लीला अवतारों का, आपके सत चित से भरपूर लोकाभिराम रूप का गायन न होता हो, उनका अध्ययन मैं नहीं करूंगा।

यो यावान् यादृशो वा त्वमिति किमपि नैवावगच्छामि भूम-
न्नेवञ्चानन्यभावस्त्वदनुभजनमेवाद्रिये चैद्यवैरिन् ।
त्वल्लिङ्गानां त्वदङ्घ्रिप्रियजनसदसां दर्शनस्पर्शनादि-
र्भूयान्मे त्वत्प्रपूजानतिनुतिगुणकर्मानुकीर्त्यादरोऽपि ॥८॥

य: यावान्	जो, जैसे
यादृश: वा त्वम्-	अथवा जिस प्रकार के आप (हैं)
इति किम्-अपि न-एव-	यह सब कुछ भी नहीं
अवगच्छामि भूमन्-	समझता हूं मैं हे भूमन!
न-एवम्-च-	और न ही
अनन्य-भाव:-	अन्य किसी भावना से रहित
त्वत्-अनुभजनम्-एव-	आपके निरन्तर भजन में ही
आद्रिये चैद्यवैरिन्	संलग्न रहूंगा हे चैद्यवैरिन!
त्वत्-लिङ्गानाम्	आपकी प्रतिमाओं का
त्वत्-अङ्घ्रि-	आपके चरणों के
प्रिय-जन-सदसां	प्रेमी जनों की सभाओं में

दर्शन्-स्पर्शन-आदिः-	(उनके) दर्शन और स्पर्श आदि
भूयात्-मे	प्राप्त हो मुझे
त्वत्-प्रपूजा-नति-नुति	आपकी पूजा अर्चना स्तुति
गुण-कर्म-अनुकीर्तिः-	आपके गुणों और लीलाओं की अनुकीर्ति में
आदरः-अपि	प्रेम भी (हो)

हे भूमन! आप जो हैं, जैसे हैं, जिस प्रकार के हैं, यह सब कुछ भी मैं नहीं समझता। हे चैद्यवैरिन! मैं अनन्य भाव से, अन्य किसी भी भावना से रहित, निरन्तर आपके ही भजन में संलग्न रहूंगा। आपके चरणो के प्रेमीजनों की सभाओं में रुचि, उनके चरण स्पर्श, आपकी प्रतिमाओं के दर्शन आदि प्राप्त हो मुझे, और आपकी पूजा अर्चना स्तुति और आपके गुणों और लीलाओं के संकीर्तन में मेरी अभिरुचि हो।

यद्यल्लभ्येत तत्तत्तव समुपहृतं देव दासोऽस्मि तेऽहं
त्वद्गेहोन्मार्जनाद्यं भवतु मम मुहुः कर्म निर्मायमेव ।
सूर्याग्निब्राह्मणात्मादिषु लसितचतुर्बाहुमाराधये त्वां
त्वत्प्रेमार्द्रत्वरूपो मम सततमभिष्यन्दतां भक्तियोगः ॥९॥

यत्-यत्-लभ्येत	जो कुछ भी मुझे मिले
तत्-तत्-तव समुपहृतं	वह सब आपको अर्पण कर दूं
देव दासः-अस्मि ते-अहं	हे देव! दास हूं आपका मैं
त्वत्-गेह-उन्मार्जन-आद्यं	आपके मन्दिर की सफाई आदि (करने का काम)
भवतु मम मुहुः	हो (प्राप्त) मुझे सदा
कर्म निर्मायम्-एव	कर्मों को निर्बाध ही (करता रहूं)
सूर्य-अग्नि-ब्राह्मण-	सूर्य अग्नि ब्राह्मण
आत्मा-आदिषु	(सभी) आत्माओं आदि में
लसित-चतुर्बाहुम्-	सुशोभित चतुर्भुज रूप में
आराधये त्वां	आराधन करूं आपका

त्वत्-प्रेम-आर्द्रत्व-रूप:	आपके प्रेम से द्रवीभूत स्वरूप
मम सततम्-अभिष्यन्दतां	मुझमें सर्वदा प्रवाहित हो
भक्तियोग:	भक्ति योग

इस संसार में मुझे जो कुछ भी मिले, वह सब मैं आपको समर्पित कर दूं। हे देव! मैं आपका दास हूं। आपके मन्दिर आदि की सफाई रूपी सेवा कार्य मुझे निरन्तर प्राप्त हो, और सभी कर्मों को मैं निष्कपट भाव से करता रहूं। सूर्य, अग्नि, ब्राह्मण, और सभी आत्माओं में मैं आपके सुशोभित चतुर्भुज रूप की आराधना करूं। आपके प्रेम से द्रवीभूत भक्ति योग का स्वरूप मुझमें सर्वदा प्रवाहित हो।

ऐक्यं ते दानहोमव्रतनियमतपस्सांख्ययोगैर्दुरापं
त्वत्सङ्गेनैव गोप्य: किल सुकृतितमा प्रापुरानन्दसान्द्रम् ।
भक्तेष्वन्येषु भूयस्स्वपि बहुमनुषे भक्तिमेव त्वमासां
तन्मे त्वद्भक्तिमेव द्रढय हर गदान् कृष्ण वातालयेश ॥१०॥

ऐक्यं ते	एक्य आपके साथ
दान-होम-व्रत-नियम-तप:-	दान, यज्ञ, व्रत, नियम, तपस्या आदि
सांख्य-योगै:-दुरापं	सांख्य योगों के द्वारा दुस्साध्य है
त्वत्-सङ्गेन-एव	(केवल) आपके संग से ही
गोप्य: किल	गोपिकाओं ने निश्चय ही
सुकृतितमा:-प्रापु:-	पुण्यशालिनी ने पा लिया
आनन्द-सान्द्रम्	आनन्द घनीभूत
भक्तेषु-अन्येषु	भक्तों में अन्यों में
भूय:सु-अपि	अनेक होने पर भी
बहु-मनुषे भक्तिम्-एव	अत्यधिक सम्मान (देते हैं) (उस) भक्ति को ही
त्वम्-आसां	आप इनकी (गोपिकाओं की)
तत्-मे त्वत्-भक्तिम्-एव	इसलिए मुझ में आपकी भक्ति ही

द्रढय हर गदान्	सुद्दढ (कीजिए) हरण कीजिए क्लेशों का
कृष्ण वातालयेश	हे कृष्ण वातालयेश

हे कृष्ण! सांख्य योग के दान, यज्ञ, व्रत, नियम, तपस्या आदि से आपके साथ एक्य भाव सुलभ नहीं है। पुण्यशालिनी गोपिकाओं ने केवल आपके संग से ही घनीभूत आनन्द पा लिया था। आपके और भी अन्य भक्त होते हुए भी, आप इन गोपिकाओं की भक्ति को ही अत्यधिक सम्मान देते हैं। हे वातालयेश! इसलिए, मुझ में भी आपकी भक्ति ही सुद्दढ कीजिए और मेरे क्लेशों का हरण कीजिए।

दशक ९५

आदौ हैरण्यगर्भीं तनुमविकलजीवात्मिकामास्थितस्त्वं
जीवत्वं प्राप्य मायागुणगणखचितो वर्तसे विश्वयोने ।
तत्रोद्वृद्धेन सत्त्वेन तु गुणयुगलं भक्तिभावं गतेन
छित्वा सत्त्वं च हित्वा पुनरनुपहितो वर्तिताहे त्वमेव ॥१॥

आदौ हैरण्यगर्भीं तनुम्-	आदि काल में हिरण्यगर्भ रूप में
अविकल-जीवात्मिकाम्-	समग्र जीवात्मक
आस्थित:-त्वं	संस्थित आप
जीवत्वं प्राप्य	(विभिन्न) जीवों में विभाजित हो कर
माया-गुण-गण-खचित:	माया के गुण गणों से ओतप्रोत
वर्तसे विश्वयोने	स्थित होते हैं, हे विश्वयोने!
तत्र-उद्वृद्धेन सत्त्वेन	(फिर) वहां प्रबुद्ध सत्त्व गुण से
तु गुण-युगलं	ही (दूसरे) दोनों गुण
भक्ति-भावं गतेन	(जब) भक्ति भाव प्राप्त होता है
छित्वा सत्त्वं च हित्वा	भेद कर रज और तम को और सत्त्व को भी छोड कर
पुन:-अनुपहित:	फिर से निर्बाध
वर्तिताहे त्वम्-एव	स्थित रहते हैं आप ही

हे विश्वयोने! आदि काल में, समग्र (अविभाजित) जीवात्मक हिरण्यगर्भ रूप में आप संस्थित होते हैं। तत्पश्चात, माया के गुणों से ओतप्रोत होकर आप ही विभिन्न जीवों में विभाजित हो कर स्थित होते हैं। विकसित सत्त्व गुण से ही भक्ति भाव प्राप्त होता है, जिससे दूसरे दो गुण रजस और तमस नष्ट हो जाते हैं। क्रमश: सत्त्व का भी जब अति क्रमण हो जाता है, तब निर्बाधित रूप से आप ही स्थित होते हैं और उस अवस्था में मैं आपसे अभिन्न होता हूं।

सत्त्वोन्मेषात् कदाचित् खलु विषयरसे दोषबोधेऽपि भूमन्
भूयोऽप्येषु प्रवृत्तिस्सतमसि रजसि प्रोद्धते दुर्निवारा ।
चित्तं तावद्गुणाश्च ग्रथितमिह मिथस्तानि सर्वाणि रोद्धुं
तुर्ये त्वय्येकभक्तिश्शरणमिति भवान् हंसरूपी न्यगादीत् ॥२॥

सत्त्व-उन्मेषात्	सत्त्व के उद्रेक से
कदाचित् खलु	कभी कभी तो
विषय-रसे	विषय रसों में
दोष-बोधे-अपि	दोष का ज्ञान होने पर भी
भूमन्	हे भूमन!
भूय:-अपि-एषु	पुन: भी इनमें
प्रवृत्ति:-सतमसि रजसि	झुकाव होने से, तमस और रजस के
प्रोद्धते दुर्निवारा	वर्धित होने से रोकना दुष्कर होता है
चित्तं तावत्-गुणा:-च	तब चित्त और गुणों के
ग्रथितम्-इह मिथ:-	उलझ जाने पर परस्पर
तानि सर्वाणि रोद्धुं	उन सब को त्यागना
तुर्ये त्वयि-एक-भक्ति:-	तुर्य (अवस्था में जा कर) आपमें केवल भक्ति
शरणम्-इति	शरण है, इस प्रकार
भवान् हंस-रूपी न्यगादीत्	आपने हंस रूप में कहा

हे भूमन! कभी कभी सत्व के उद्रेक से विष्य रसों में दोष का ज्ञान तो हो जाता है, किन्तु रजस और तमस के कुप्रभाव के कारण इनके ओर प्रवृत्ति को रोकना दुष्कर होता है। ऐसे समय में चित्त और गुणों के परस्पर उलझ जाने से उन विषयों को त्यागना तभी सम्भव है, जब तूर्य अवस्था में आपकी भक्ति की ही शरण ली जाय। हंस स्वरूप में आपने यही उपदेश दिया था।

सन्ति श्रेयांसि भूयांस्यपि रुचिभिदया कर्मिणां निर्मितानि
क्षुद्रानन्दाश्च सान्ता बहुविधगतय: कृष्ण तेभ्यो भवेयु: ।
त्वं चाचख्याथ सख्ये ननु महिततमां श्रेयसां भक्तिमेकां
त्वद्भक्त्यानन्दतुल्य: खलु विषयजुषां सम्मद: केन वा स्यात् ॥३॥

सन्ति श्रेयांसि भूयांसि-अपि	उपलब्ध हैं कल्याणकारी अनेक (मार्ग) भी

रुचि-भिदया कर्मिणां	रुचि भेद से मनुष्यों के
निर्मितानि क्षुद्र-आनन्दा:-	सम्पादित लघु और आनन्द दायक
च सान्ता बहु-विध-गतय:	स्वल्प, कई प्रकार की गतियों वाली
कृष्ण तेभ्य: भवेयु:	हे कृष्ण! उनमेंसे जो भी हों
त्वं च-आचख्यथा सख्ये	और आपने कहा था सखा को
ननु महिततमां	अवश्यमेव श्रेष्ठतम महत्वपूर्ण
श्रेयसां भक्तिम्-एकां	और कल्याणकारी भक्ति को एकमात्र
त्वत्-भक्ति-आनन्द-तुल्य:	आपकी भक्ति के आनन्द की तुलना में
खलु विषय-जुषां सम्मद:	निश्चय ही विषय रसों में लीन सुखों मे
केन वा स्यत्	कैसे अथवा हो स्कता है

हे कृष्ण! नाना प्रकार के मनुष्यों की विभिन्न रुचियों को भी जाने वाले कई कल्याणकारी मार्ग उपलब्ध हैं। वे स्वल्प सुख दायक और अनेक प्रकार की गतियों को सम्पादित करने वाले होते हैं। उनमें से जो भी जिसको भी प्रिय हो, किन्तु आपने अपने सखा (उद्धव) से कहा था कि एकमात्र भक्ति ही श्रेष्ठतम महत्वपूर्ण और कल्याणकारी मार्ग है। निश्चय ही आपकी भक्ति से प्राप्त आनन्द की तुलना में विषय रसों में लीन सुखों से प्राप्त आनन्द कुछ भी नहीं है।

त्वत्भक्त्या तुष्टबुद्धे: सुखमिह चरतो विच्युताशस्य चाशा:
सर्वा: स्यु: सौख्यमय्य: सलिलकुहरगस्येव तोयैकमय्य: ।
सोऽयं खल्विन्द्रलोकं कमलजभवनं योगसिद्धीश्च हृद्या:
नाकाङ्क्षत्येतदास्तां स्वयमनुपतिते मोक्षसौख्येऽप्यनीह: ॥४॥

त्वत्-भक्त्या तुष्ट-बुद्धे:	आपकी भक्ति से सन्तुष्ट बुद्धि वाला
सुखम्-इह चरत:	सुख पूर्वक यहां विचरण करता है
विच्युत-आशस्य	त्याग के सभी (विषयों) की इच्छा को (उसके) (लिए) और सभी दिशाएं हो जाती हैं
च-आशा: सर्वा: स्यु:	(लिए) दिशाएं सभी हो जाती हैं
सौख्यमय्य:	सुख दायक

सलिल-कुहरगस्य-एव	जल के भीतर तक जाने वाले के लिए ही
तोय-एकमय्य:	जल (सब ओर) एक समान होता है
स:-अयं खलु-	वह यह (मनुष्य) निश्चय ही
इन्द्रलोकं कमलज-भवनं	इन्द्रलोक ब्रह्मलोक
योग-सिद्धी:-च हृद्या:	और आकर्षक योग सिद्धियों की
न-आकाङ्क्षति-	नहीं आकाङ्क्षा करता है
एतत्-आस्तां	यह तो है ही, (यहां तक कि)
स्वयम्-अनुपतिते	स्वत: निकट आए हुए
मोक्ष-सौख्ये-अपि-अनीह:	मोक्ष सुख में भी नि:स्पृह हो जाता है

आपकी भक्ति से सन्तुष्ट बुद्धि वाला व्यक्ति इस संसार में सर्वत्र सुख पूर्वक विचरण करता है। जिस प्रकार गहरे जल में जाने से ही सर्वत्र जल ही जल दीखता है उसी प्रकार विषयों की लालसा को त्याग देने से सभी दिशाएं सुखदायक हो जाती हैं । वह व्यक्ति इन्द्रलोक ब्रह्मलोक और आकर्षक सिद्धियों की भी कामना नहीं करता। इतना ही नहीं, स्वत: निकट आए हुए मोक्ष सुख में भी नि:स्पृह हो जाता है।

त्वद्भक्तो बाध्यमानोऽपि च विषयरसैरिन्द्रियाशान्तिहेतो-
र्भक्त्यैवाक्रम्यमाणै: पुनरपि खलु तैर्दुर्बलैर्नाभिजय्य: ।
सप्तार्चिर्दीपितार्चिर्दहति किल यथा भूरिदारुप्रपञ्चं
त्वद्भक्त्योघे तथैव प्रदहति दुरितं दुर्मद: क्वेन्द्रियाणाम् ॥५॥

त्वत्-भक्त:	(और) आपका भक्त
बाध्यमान:-अपि च	लालसा में पडा हुआ भी
विषय-रसै:-इन्द्रिय-	इन्द्रियों के विषय रसों में
अशान्ति-हेतो:-	(उससे) अशान्ति के कारण
भक्त्या-एव-आक्रम्यमाणै:	भक्ति से ही आक्रमित
पुन:-अपि खलु	फिर भी निश्चय ही

तै:-दुर्बलै:-न-अभिजय्य:	उन दुर्बल हुई (इन्द्रियों) के द्वारा (भक्त) अविजयी हो जाता है
सप्तार्चि:-दीपितार्चि:-दहति	(जैसे) अग्नि के प्रदीप्त होने से जल जाती हैं
किल यथा भूरि-दारु-प्रपञ्चम्	निश्चय जैसे अनेक लकडी के ढेर
त्वत्-भक्ति-ओघे तथा-एव	आपकी भक्ति के प्रवाह में वैसे ही
प्रदहति दुरितं	भस्म हो जाते हैं पाप
दुर्मद: क्व-इन्द्रियाणाम्	(मिथ्या) गर्व कहां (ठहरता है) इन्द्रियों का

आपका भक्त यदि इन्द्रियों के विषय रसों की लालसा में पड कर भी अशान्त रहता है और भक्ति से ही उन पर आक्रमण करने में सफल होता है। तब दुर्बल हुई इन्द्रियां उसको जीत नहीं सकती। जिस प्रकार सुप्रदीप्त अग्नि अनेक लकडियों के ढेर को जला डालती है, वैसे ही भक्ति की अग्नि में पाप भी भस्म हो जाते हैं। फिर इन्दिर्यों का मिथ्या दम्भ कहां ठहरता है?

चित्तार्द्रीभावमुच्चैर्वपुषि च पुलकं हर्षवाष्पं च हित्वा
चित्तं शुद्ध्येत्कथं वा किमु बहुतपसा विद्यया वीतभक्ते: ।
त्वद्गाथास्वादसिद्धाञ्जनसततमरीमृज्यमानोऽयमात्मा
चक्षुर्वत्तत्त्वसूक्ष्मं भजति न तु तथाऽभ्यस्तया तर्ककोट्या॥६॥

चित्त-आर्द्री-भावम्-	चित्त का (आपके प्रेम में) द्रवीभूत होना
उच्चै:-वपुषि च पुलकं	अत्यन्त शरीर में पुलकावली (का होना)
हर्ष-वाष्पं च हित्वा	और आनन्द अश्रुओं के बिना
चित्तं शुद्ध्येत्-कथं वा	चित्त की शुद्धि हो ही कैसे सकती है
किमु बहु-तपसा	क्या (लाभ) बहुत तपस्या से
विद्यया वीत-भक्ते:	(या) विद्या के, बिना भक्ति के
त्वत्-गाथा-आस्वाद-	आपकी कथाओं के स्वाद (रूपी)
सिद्ध-अञ्जन-सतत-	सिद्ध अञ्जन से निरन्तर
मरीमृज्यमान:-अयम्-आत्मा	परिष्कृत होती हुई यह आत्मा
चक्षु:-वत्-तत्त्व-सूक्ष्मं	नेत्र के समान (आपके) सूक्ष्मतम तत्त्व को

भजति न तु तथा-	प्रकाशित करता है, नहीं होता वैसा
अभ्यस्तया तर्ककोट्या	अभ्यास करने से करोडों तर्कों को

आपके प्रेम में चित्त का द्रवीभूत हुए बिना, शरीर में रोमाञ्च हुए बिना, और आनन्द अश्रुओं के छलक आए बिना चित्त की शुद्धि हो ही कैसे सकती है। बहुत तपस्या और विद्या से क्या लाभ? आपकी कथाओं के रसास्वादन रूपी सिद्ध अञ्जन से आत्मा रूपी चक्षु निरन्तर परिष्कृत होते हैं और फिर जिस प्रकार आपके सूक्ष्मतम तत्त्व को प्रकाशित करते हैं, वैसा करोडों तर्कों के अभ्यास से भी नहीं होता।

ध्यानं ते शीलयेयं समतनुसुखबद्धासनो नासिकाग्र-
न्यस्ताक्ष: पूरकाद्यैर्जितपवनपथश्चित्तपद्मं त्ववाञ्चम्।
ऊर्ध्वाग्रं भावयित्वा रविविधुशिखिन: संविचिन्त्योपरिष्टात्
तत्रस्थं भावये त्वां सजलजलधरश्यामलं कोमलाङ्गम् ॥७॥

ध्यानं ते शीलयेयं	ध्यान का आपके अभ्यास करूंगा
सम-तनु-सुख-बद्ध-आसन:	सीधा शरीर, सुखासन में बैठ कर
नासिका-अग्र-न्यस्त-आक्ष:	नासिका के अग्र भाग में स्थिर करके नेत्र
पूरक-आद्यै:-जित-पवन-पथ:-	पूरक आदि से जीत कर प्राणवायु के पथ को
चित्त-पद्मं तु-अवाञ्चम्	(मेरे) चित्त पद्म को (जो) अधोमुख है, निश्चय ही
ऊर्ध्व-अग्रं भावयित्वा	(उसको) विकसित और ऊर्ध्व की ओर कल्पना करके
रवि-विधु-शिखिन:	सूर्य चन्द्र और अग्नि की
संविचिन्त्य-उपरिष्टात्	धारणा करके उसके भी ऊपर
तत्रस्थं भावये त्वां	वहां स्थित चिन्तन करूंगा आपका
सजल-जलधर-श्यामलं	जलमय मेघों के समान श्यामल
कोमलाङ्गम्	(आपके) कोमल अङ्गों का

मैं आपका ध्यान करूंगा, शरीर को सीधा रख कर, सुखासन में बैठ कर, नासिका के अग्र भाग में नेत्रों को केन्द्रित करके, पूरक आदि से प्राण्वायु को जीतूंगा। तत्पश्चात, अपने अधोमुखी हृदय कमल को ऊर्ध्वमुखी कल्पना करके उसके ऊपर सूर्य, चन्द्र और अग्नि की धारणा करूंगा। उसके भी परे, वहां स्थित जलमय मेघों के समान श्यामल कोमल अङ्गों वाले आपका

चिन्तन करूंगा।

आनीलश्लक्ष्णकेशं ज्वलितमकरसत्कुण्डलं मन्दहास-
स्यन्दार्द्रं कौस्तुभश्रीपरिगतवनमालोरुहाराभिरामम् ।
श्रीवत्साङ्कं सुबाहुं मृदुलसदुदरं काञ्चनच्छायचेलं
चारुस्निग्धोरुमम्भोरुहललितपदं भावयेऽहं भवन्तम् ॥८॥

आनील-श्लक्ष्ण-केशं	(जिनके) नील कान्ति युक्त स्निग्ध केश हैं
ज्वलित-मकर-सत्कुण्डलं	चमकदार मत्स्य रूपी कुण्डल हैं
मन्द-हास-स्यन्द-आर्द्रं	(मुख पर) मन्द स्मित अमृतमय से द्रवित है
कौस्तुभ-श्री-परिगत-	कौस्तुभ की दिव्य शोभा से सम्मिलित
वनमाल-उरु-हार-अभिरामम्	वन माला और हार वक्षस्थल को सुशोभित कर रहे हैं
श्रीवत्स-अङ्कं सुबाहुं	और श्रीवत्स चिह्न भी है, सुन्दर बाहु हैं
मृदु-लसत्-उदरं	कोमल और कान्तियुक्त उदर है
काञ्चन-च्छाय-चेलं	सुनहरे छाया वाले पीताम्बर सुशोभित है
चारु-स्निग्ध-उरुम्-	सुगठित चिकनी जंघाएं हैं
अम्भोरुह-ललित पदं	कमल के समान कोमल चरण हैं
भावये-अहं भवन्तं	(उन आपका) ध्यान करता हूं आपका

जिनके नील कान्ति युक्त स्निग्ध केश हैं, चमकदार मत्स्य रूपी कुण्डल हैं, मुख पर द्रवीभूत अमृतमयी मन्द स्मित है, कौस्तुभ की दिव्य शोभा से सम्मिलित वनमाला और हार एवं श्रीवत्स चिह्न वक्षस्थल को सुशोभित कर रहे हैं, सुन्दर बाहु, कोमल और कान्ति युक्त उदर , सुनहरी द्युति के पीतम्बर, सुगठित चिकनी जङ्घाएं तथा कमल के समान कोमल चरण हैं, उन आपका मैं ध्यान करता हूं।

सर्वाङ्गेष्वङ्ग रङ्गत्कुतुकमिति मुहुर्धारयन्नीश चित्तं
तत्राप्येकत्र युञ्जे वदनसरसिजे सुन्दरे मन्दहासे
तत्रालीनं तु चेत: परमसुखचिदद्वैतरूपे वितन्व-
न्नन्यन्नो चिन्तयेयं मुहुरिति समुपारूढयोगो भवेयम् ॥९॥

सर्व-अङ्गेषु-अङ्ग	(आपके) सभी अङ्गों में हे ईश्वर!
रङ्गत्-कुतुकम्-इति	बढते हुए आग्रह से, इस प्रकार
मुहुः-धारयन्-ईश चित्तं	बारम्बार नियोजित करके हे ईश! चित्त को
तत्र-अपि-एकत्र युञ्जे	वहां भी एक्मात्र केन्द्रित करूंगा
वदन-सरसिजे	(आपके) मुख कमल पर
सुन्दरे मन्दहासे	(जो) अत्यन्त सुन्दर और मन्द हास युक्त है
तत्र-आलीनं तु चेतः	वहां सुस्थिर हो जाने पर (मेरी) चेतना को
परम-सुख-चित्-	सत चिद आनन्द
अद्वैत-रूपे वितन्वन्-	ब्रह्म स्वरूप में निमज्जित करके
अन्यत्-नो चिन्तयेयं	अन्य किसी का चिन्तन नहीं करूंगा
मुहुः-इति	बारम्बार इस प्रकार
समुपारूढ-योगो भवेयम्	समारूढित हो जाऊंगा योग में

हे ईश! इस प्रकार बढते हुए आग्रह से आपके सभी श्री अङ्गों में अपनी चेतना को नियोजित करके, मैं आपके मन्द हास युक्त सुन्दर मुख कमल पर अपने चित्त को केन्द्रित करूंगा। वहां भली प्रकार सुस्थिर हो जाने पर मेरी चेतना सच्चिदानन्दमय ब्रह्म स्वरूप में निमज्जित हो जाएगी। अन्य किसी का चिन्तन न करते हुए, इस प्रकार बारम्बार प्रयत्न करने से, मै योग में समारूढ हो जाऊंगा।

इत्थं त्वद्ध्यानयोगे सति पुनरणिमाद्यष्टसंसिद्धयस्ताः
दूरश्रुत्यादयोऽपि ह्यहमहमिकया सम्पतेयुर्मुरारे ।
त्वत्सम्प्राप्तौ विलम्बावहमखिलमिदं नाद्रिये कामयेऽहं
त्वामेवानन्दपूर्णं पवनपुरपते पाहि मां सर्वतापात् ॥१०॥

इत्थं त्वत्	इस विधि से आपके
ध्यान-योगे सति पुनः-	ध्यान योग में संलग्न, फिर
अणिमा-आदि-	अणिमा आदि

अष्ट-संसिद्धय:-ता:	आठों सिद्धियां वे
दूर-श्रुति-आदय:-अपि	दूर से सुनाई देना आदि (क्षुद्र सिद्धियां) भी
हि-अहम्-अहमिकया	निश्चय ही 'पहले मैं, पहले मैं,' इस होड में
सम्पतेयु:-मुरारे	आ पहुंचेंगी हे मुरारे!
त्वत्-सम्प्राप्तौ	आपके (समीप) पहुंच जाने पर
विलम्ब-आवहम्-	विलम्ब कारी
अखिलम्-इदं न-आद्रिये	समस्त इनको नहीं आदर दूंगा
कामये-अहं त्वाम्-एव-	कामना मैं करता हूं आपकी ही
आनन्दपूर्णं पवनपुरपते	हे आनन्दपूर्ण पवनपुरपते!
पाहि मां सर्व-तापात्	रक्षा करें मेरी सभी कष्टों से

इस विधि से, मैं आपके ध्यान योग में संलग्न रहूंगा। तब अणिमा आदि आठों सिद्धियां और दूर से सुनाई पडना जैसी सूक्ष्म सिद्धियां, 'पहले मैं, पहले मैं,' इस प्रकार होड सी लगाती आ पहुंचेंगी। किन्तु यह जान कर कि ये आपसे मिलन में विलम्ब कराने वाली हैं, मैं इनका आदर नहीं करूंगा। मैं केवल आपकी ही कामना करता हूं। हे आनन्दपूर्ण पवनपुरपते! सभी कष्टों से मेरी रक्षा करें।

दशक ९६

त्वं हि ब्रह्मैव साक्षात् परमुरुमहिमन्नक्षराणामकार-
स्तारो मन्त्रेषु राज्ञां मनुरसि मुनिषु त्वं भृगुर्नारदोऽपि ।
प्रह्लादो दानवानां पशुषु च सुरभिः पक्षिणां वैनतेयो
नागानामस्यनन्तस्सुरसरिदपि च स्रोतसां विश्वमूर्ते ॥१॥

त्वं हि ब्रह्म-	आप ही हैं ब्रह्म
एव साक्षात् परम्-	निस्सन्देह साक्षात परम
उरु-महिमन्	महान महिमाशाली!
अक्षराणाम्-अकारः	अक्षरों में 'अ' कार
तारः मन्त्रेषु	ऊं' कार मन्त्रों में
राज्ञां मनुः-असि	राजाओं में मनु हैं
मुनिषु त्वं भृगुः-	मुनियों में आप भृगु (हैं)
नारदः-अपि	नारद भी
प्रह्लादः दानावानां	प्रह्लाद असुरों में
पशुषु च सुरभिः	और पशुओं में सुरभि (गाय)
पक्षिणां वैनतेयः	पक्षियों में गरुड
नागानाम्-असि-अनन्तः-	नागों में हैं अनन्त
सुरसरित्-अपि च स्रोतसां	और गङ्गा भी नदियों में
विश्वमूर्ते	हे विश्वमूर्ते! (आप ही हैं)

हे महान महिमाशाली! निस्सन्देह आप ही साक्षात परम ब्रह्म हैं। अक्षरों में आप ही 'अ' कार हैं, मन्त्रों में 'ऊं' कार, राजाओं में मनु, ब्रह्मर्षियों में भृगु और देवर्षियों में नारद हैं। हे विश्वमूर्ते! असुरों में आप ही प्रह्लाद हैं, पशुओं में सुरभि गाय, पक्षियों में गरुड, नागों में अनन्त, और नदियों में गङ्गा हैं।

ब्रह्मण्यानां बलिस्त्वं क्रतुषु च जपयज्ञोऽसि वीरेषु पार्थो

भक्तानामुद्धवस्त्वं बलमसि बलिनां धाम तेजस्विनां त्वम् ।
नास्त्यन्तस्त्वद्विभूतेर्विकसदतिशयं वस्तु सर्वं त्वमेव
त्वं जीवस्त्वं प्रधानं यदिह भवदृते तन्न किञ्चित् प्रपञ्चे ॥२॥

ब्रह्मण्यानां बलि:-त्वं	भक्त ब्राह्मणों में आप बलि (हैं)
क्रतुषु च जप-यज्ञ:-असि	और यज्ञों में जप यज्ञ हैं
वीरेषु पार्थ:	वीरों में अर्जुन
भक्तानाम्-उद्धव:त्वं	भक्तों में उद्ध्व आप हैं
बलम्-असि बलिनां	बल हैं बलवानों में
धाम तेजस्विनां त्वम्	तेज तेजस्वियों के आप (हैं)
न-अस्ति-अन्त:-	नहीं है अन्त
त्वत्-विभूते:-	आपकी विभूतियों का
विकसत्-अतिशयं	अद्वितीय और असीम
वस्तु सर्वं त्वम्-एव	वस्तुएं सभी आप ही हैं
त्वं जीव:-त्वं प्रधानं	आप ही जीव, आप ही प्रकृति हैं
यत्-इह भवत्-ऋते	जो यहां आपके बिना (हो)
तत्-न किञ्चित् प्रपञ्चे	वह नहीं (है) कुछ भी (इस) प्रपञ्च में

ब्राह्मण भक्तों में आप बलि हैं, और यज्ञों में जप यज्ञ हैं। वीरों में अर्जुन और भक्तों में उद्धव आप हैं। बलवानों के बल आप हैं, और तेजस्वियों के तेज भी आप ही हैं। आपकी विभूतियों का अन्त नहीं है। सभी अद्वितीय और असीम वस्तुएं आप ही हैं। आप ही जीव हैं और आप ही प्रकृति भी। यहां, इस प्रपञ्च में आपसे रहित कुछ भी नहीं है।

धर्मं वर्णाश्रमाणां श्रुतिपथविहितं त्वत्परत्वेन भक्त्या
कुर्वन्तोऽन्तर्विरागे विकसति शनकै: सन्त्यजन्तो लभन्ते ।
सत्तास्फूर्तिप्रियत्वात्मकमखिलपदार्थेषु भिन्नेष्वभिन्नं
निर्मूलं विश्वमूलं परममहमिति त्वद्विबोधं विशुद्धम् ॥३॥

धर्मं-वर्ण-आश्रमाणां	कर्तव्य (धर्म) (४) वर्णों और (४) आश्रमों का

श्रुति-पथ-विहितं	शास्त्रों में निष्पादित मार्गों से
त्वत्-परत्वेन भक्त्या	आपके अभिमुख भक्ति से
कुर्वन्तः-अन्तः-विरागे	सम्पादन करते हुए, अन्तः विराग होने पर
विकसति शनकैः	बढती है धीरे धीरे
सन्त्यजन्तः लभन्ते	(इनको) भी त्याग कर, पा जाते हैं (साधक)
सत्ता-स्फूर्ति-प्रियत्व-	सत्ता, स्फूर्ति और प्रियत्व
आत्मकम्-अखिल-	युक्त अनन्त
पदार्थेषु भिन्नेषु-	वस्तुओं में पृथकता (होने पर भी)
अभिन्नं निर्मूलं विश्वमूलं	पृथकता रहित, निष्कारण और विश्व के मूल कारण
परमम्-अहम्-इति	(वह) परम मैं (हूं) इस प्रकार
त्वत्-विबोधं-विशुद्धं (लभन्ते)	आपका ज्ञान परम शुद्ध (पा जाते हैं साधक)

शास्त्रों में निष्पादित, चारों वर्णों और चारों आश्रमों के कर्तव्य धर्मों का पालन करते हुए, भक्ति से आपके अभिमुख होने पर अन्तः विराग उत्पन्न होता है जो धीरे धीरे बढता है। तत्पश्चात इसपूर्ण विराग भाव को भी त्याग करका भी त्याग करके साधक जन आपकी सत्ता, स्फूर्ति और प्रियत्व युक्त अनन्त का, परम शुद्ध ज्ञान पा जाते हैं। वस्तुओं में भिन्नता रहने पर भी, आप भिन्नता रहित हैं, आप सब के कारण हैं परन्तु स्वयं कारण रहित हैं। विश्व का मूल, परम ब्रह्म इस प्रकार मैं ही हूं।

ज्ञानं कर्मापि भक्तिस्त्रितयमिह भवत्प्रापकं तत्र ताव-
न्निर्विण्णानामशेषे विषय इह भवेत् ज्ञानयोगेऽधिकारः ।
सक्तानां कर्मयोगस्त्वयि हि विनिहितो ये तु नात्यन्तसक्ताः
नाप्यत्यन्तं विरक्तास्त्वयि च धृतरसा भक्तियोगो ह्यमीषाम् ॥४॥

ज्ञानं कर्म-अपि भक्तिः-	ज्ञान, कर्म और भक्ति (योग) भी
त्रितयम्-इह	ये तीनों ही यहां
भवत्-प्रापकं	आपको प्राप्त करवाने वाले हैं
तत्र-तावत्-	वहां तब

निर्विण्णानाम्-अशेषे	निर्लिप्त (लोगों) को समस्त
विषय इह भवेत्	विषयों में यहां होगा
ज्ञान-योगे-अधिकार:	ज्ञान योग में अधिकार
सक्तानां कर्म-योग:-	आसक्त (लोगों) के लिए कर्म योग
त्वयि हि विनिहित:	आपमें ही समर्पित
ये तु न-अत्यन्त-सक्ता:	जो (जन) न तो अति आसक्त हैं
न-अपि-अत्यन्तं विरक्ता:-	(और) न ही अति विरक्त हैं
त्वयि च धृतरसा:	और आप में (भक्ति) रस रखते हैं
भक्तियोग: हि-अमीषाम्	भक्ति योग ही ऐसे (लोगों) के लिए है

इस संसार में ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग ये तीनों ही आपको प्राप्त कराने में सक्षम हैं। इन तीनों में भी, जिन लोगों की समस्त विषयों में निर्लिप्तता हो गई है, वे ज्ञान योग के अधिकारी हैं। जो लोग विषयों में आसक्त हैं, किन्तु आपको समर्पित करके कर्म करते हैं, वे कर्म योग के अधिकारी हैं। और, जो जन न तो अति आसक्त हैं और न ही अति विरक्त हैं, किन्तु आपके प्रति भक्ति भाव रखते हैं, उनके लिए भक्ति योग है।

ज्ञानं त्वद्भक्ततां वा लघु सुकृतवशान्मर्त्यलोके लभन्ते
तस्मात्तत्रैव जन्म स्पृहयति भगवन् नाकगो नारको वा ।
आविष्टं मां तु दैवाद्भवजलनिधिपोतायिते मर्त्यदेहे
त्वं कृत्वा कर्णधारं गुरुमनुगुणवातायितस्तारयेथा: ॥५॥

ज्ञानं त्वत्-भक्ततां वा	ज्ञान, आपकी भक्ति अथवा
लघु सुकृत-वशात्	सुगमता से पुण्यों के कारण
मर्त्य-लोके लभन्ते	(इस) मृत्युलोक में पा जाते हैं
तस्मात्-तत्र-एव	इसलिए वहीं (मृत्युलोक में) ही
जन्म स्पृहयति	जन्म लेने की इच्छा करते हैं
भगवन्	हे भगवन!

नाकगो नारको वा	स्वर्गवासी नरकवासी अथवा
आविष्टं मां तु	प्रवेश किया है (मैने) मुझको तो
दैवात्-	सौभाग्य से
भव-जल-निधि-पोतायिते	संसार सागर से नौका स्वरूप
मर्त्य-देहे	मर्त्यदेह में
त्वं कृत्वा कर्णधारं गुरुम्-	आप करके कर्णधार (मेरे) गुरू को
अनुगुण-वातायित:-	अनुकूल वायु का सा (आप करके) (व्यवहार)
तारयेथा:	(भव सागर से) तार दीजिए

हे भगवन! इस मृत्युलोक में, मनुष्य पुण्यों के फलस्वरूप ज्ञान अथवा भक्ति योग को सुगमता से प्राप्त कर लेते हैं। इसलिए स्वर्गवासी हों अथवा नरकवासी, इसी मृत्युलोक में जन्म लेने की कामना करते हैं। संसार सागर से पार कराने वाली नौका स्वरूप मर्त्य देह में मैने सौभाग्य से प्रवेश किया है। आप कृपा करके मेरे गुरु को मेरी नैया का कर्णधार करें और आप स्वयं अनुकूल वायु का सा व्यवहार करके मुझे भवसागर से पार कर दीजिए।

अव्यक्तं मार्गयन्त: श्रुतिभिरपि नयै: केवलज्ञानलुब्धा:
क्लिश्यन्तेऽतीव सिद्धिं बहुतरजनुषामन्त एवाप्नुवन्ति ।
दूरस्थ: कर्मयोगोऽपि च परमफले नन्वयं भक्तियोग-
स्त्वामूलादेव हृद्यस्त्वरितमयि भवत्प्रापको वर्धतां मे ॥६॥

अव्यक्तं मार्गयन्त:	अव्यक्त (ब्रह्म) को खोजते हुए
श्रुतिभि:-अपि नयै:	शास्त्रों के द्वारा, न्यायों के द्वारा भी
केवल-ज्ञान-लुब्धा:	केवल ज्ञान के लोभी
क्लिश्यन्ते-अतीव	परिश्रम करते हैं अत्यन्त
सिद्धिं बहुतर-जनुषाम्-	सिद्धि अनेक जन्मों के
अन्ते-एव-आप्नुवन्ति	अन्त में ही प्राप्त करते हैं
दूरस्थ: कर्म-योग:-	सुदूर है कर्म योग

अपि च परमफले	भी और परमफल (मुक्ति) (प्रदान करने में)
ननु-अयं भक्ति-योग:-	निश्चय ही यह भक्ति योग
तु-आमूलात्-एव हृद्य:-	तो प्रारम्भ से ही लुभावनी है
त्वरितमयि भवत्-प्रापक:-	शीघ्रता से आपको प्राप्त कराने वाली है
वर्धतां मे	(वही) समुन्नत हो मुझमें

केवल ज्ञान के लोभी शास्त्रों और न्यायों के द्वारा अव्यक्त ब्रह्म को खोजते हुए अत्यधिक परिश्रम करते हैं और अनेक जन्मों के अन्त में ही सिद्धि प्राप्त कर पाते हैं। कर्म योग के द्वारा भी मुक्ति रूपी परम फल पाना सुदूरवर्ती है। निश्चित रूप से भक्ति योग ही प्रारम्भ से ही लुभावना है और शीघ्रता से आपको उपलब्ध करवाने वाला है। वही भक्ति योग मुझमें समुन्नत हो।

ज्ञानायैवातियत्नं मुनिरपवदते ब्रह्मतत्त्वं तु शृण्वन्
गाढं त्वत्पादभक्तिं शरणमयति यस्तस्य मुक्तिः कराग्रे ।
त्वद्ध्यानेऽपीह तुल्या पुनरसुकरता चित्तचाञ्चल्यहेतो-
रभ्यासादाशु शक्यं तदपि वशयितुं त्वत्कृपाचारुताभ्याम् ॥७॥

ज्ञानाय-एव-अति-यत्नं	ज्ञान के लिए ही अत्यन्त यत्न (करने का)
मुनि:-अपवदते	मुनि (व्यास) प्रतिरोध करते हैं
ब्रह्मतत्त्वं तु शृण्वन्	ब्रह्मतत्त्व को सुनते हुए
गाढं त्वत्-पाद-भक्तिं	गहरी आपके चरणों में भक्ति (के साथ)
शरणम्-अयति य:-	शरण मे दृढता से आ जाता है जो
तस्य मुक्तिः कराग्रे	उसकी मुक्ति हाथों में ही है
त्वत्-ध्याने-अपि-इह	(किन्तु) आपके ध्यान में भी यहां
तुल्या पुन:-असुकरता	(भक्ति की) तुलना में भी फिर कठिन है
चित्त-चाञ्चल्य-हेतो:	चित्त के चञ्चलता के कारण
अभ्यासात्-आशु	अभ्यास से शीघ्र ही

शक्यं तत्-अपि	सुलभ है वह भी
वशयितुं	वश में करना
त्वत्-कृपा-चारुताभ्याम्	आपकी कृपा और सौन्दर्य से

व्यास मुनि भी ज्ञान प्रप्ति के लिए कठिन प्रयत्न करने का निषेध करते हैं। ब्रह्मतत्त्व को सुनते हुए आपके चरणों में गहरी भक्ति के साथ आपकी शरण में जो जन दृढता से आ जाता है उसकी मुक्ति तो उसके हाथों में ही है। किन्तु यहां चित्त की चञ्चलता के कारण भक्ति की तुलना में आपका ध्यान करना भी कठिन ही है। परन्तु इसे भी आपकी कृपा, सुन्दरता और अभ्यास से शीघ्र वश में किया जा सकता है।

निर्विण्ण: कर्ममार्गे खलु विषमतमे त्वत्कथादौ च गाढं
जातश्रद्धोऽपि कामानयि भुवनपते नैव शक्नोमि हातुम् ।
तद्भूयो निश्चयेन त्वयि निहितमना दोषबुद्ध्या भजंस्तान्
पुष्णीयां भक्तिमेव त्वयि हृदयगते मङ्क्षु नङ्क्ष्यन्ति सङ्गा: ॥८॥

निर्विण्ण: कर्ममार्गे	अरुचि होने से कर्म काण्ड मार्ग में
खलु विषमतमे	अवश्य ही अति कठिन
त्वत्-कथा-आदौ च	आपकी कथा आदि में और
गाढं जात-श्रद्ध:-अपि	गहरी हो जाने से श्रद्धा भी
कामान्-अयि भुवनपते	कामनाओं को हे भुवनपते!
न-एव शक्नोमि हातुं	न ही समर्थ हूं त्यागने में
तत्-भूय: निश्चयेन	इसलिए फिर से निश्चयपूर्वक
त्वयि निहितमना	आपही में दत्त चित्त हो कर
दोष-बुद्ध्या भजन्-तान्	(जानते हुए कि) दोषपूर्ण हैं, सेवन करते हुए
पुष्णीयां भक्तिम्-एव	पुष्ट करूंगा भक्ति को ही
त्वयि हृदयगते	आपके हृदय में आ जाने पर
मङ्क्षु नङ्क्ष्यन्ति सङ्गा:	तुरन्त नष्ट हो जाती हैं वासनाएं

हे भुवनपते! कर्म काण्ड मार्ग के कठिन होने और उसमें अरुचि होने के कारण, मैं आपकी कथाओं में ही सुदृढ श्रद्धा रखूंगा। कामनाओं को सर्वथा त्यागने में असमर्थ होने के कारण, मैं निश्चयपूर्वक ही फिर से आप ही में दत्त चित्त हो कर, कामनाओं को दोषयुक्त जानते हुए भी उनका सेवन करते हुए आपकी भक्ति को ही पुष्ट करूंगा। भक्ति से खिंच कर मेरे हृदय में आपके आ जाने पर, विषय वासनाएं स्वत: ही नष्ट हो जाएंगी।

कश्चित् क्लेशार्जितार्थक्षयविमलमतिर्नुद्यमानो जनौघै:
प्रागेवं प्राह विप्रो न खलु मम जन: कालकर्मग्रहा वा।
चेतो मे दु:खहेतुस्तदिह गुणगणं भावयत्सर्वकारी-
त्युक्त्वा शान्तो गतस्त्वां मम च कुरु विभो तादृशीं चित्तशान्तिम् ॥९॥

कश्चित् क्लेश-अर्जित-	कोई (एक) कष्ट से उपार्जित
अर्थ-क्षय-विमल-मति:-	धन के नष्ट हो जाने से निर्मल मन वाला
नुद्यमान: जनौघै:	पीडित किए जाने पर लोगों के द्वारा
प्राक्-एवं प्राह विप्र:	एक समय इस प्रकार बोले ब्राह्मण
न खलु मम जन:	न ही निस्सन्देह मेरे लोग
काल-कर्म-ग्रहा वा	काल कर्म अथवा ग्रह (दु;ख के कारण)
चेत: मे दु:ख-हेतु:-	मन ही मेरा दु;ख का कारण है
तत्-इह गुणगणं	वह यहा गुण्गण ही
भावयत्-सर्वकारी-	आरोप कर के सब कुछ करवाता है
इति-उक्त्वा	ऐसा कह कर
शान्त: गत:-त्वां	शान्ति से आपको प्राप्त कर गए
मम च कुरु विभो	और मेरी भी कीजिए हे विभो!
तादृशीं चित्तशान्तिम्	उसी प्रकार की चित्त शान्ति

एक समय किसी एक ब्राह्मण का कष्ट से उपार्जित धन नष्ट हो गया। वे निरासक्त हो गए और लोग उन्हे पीडित करने लगे। उस समय वे बोले कि न तो जनगण, न ही काल, कर्म अथवा ग्रह ही उनके दुख के कारण हैं। वास्तव में उनका मन ही उनके दु:ख का कारण है। त्रिगुणगण ही अपने आरोप से सब कुछ करवाते हैं। इस प्रकार परम शान्ति से उन्होंने आपको

प्राप्त कर लिया। हे विभो! मेरी भी वैसी ही चित्त शान्ति हो।

ऐल: प्रागुर्वशीं प्रत्यतिविवशमना: सेवमानश्चिरं तां
गाढं निर्विद्य भूयो युवतिसुखमिदं क्षुद्रमेवेति गायन् ।
त्वद्भक्तिं प्राप्य पूर्ण: सुखतरमचरत्तद्वदुद्धूतसङ्गः
भक्तोत्तंसं क्रिया मां पवनपुरपते हन्त मे रुन्धि रोगान् ॥१०॥

ऐल: प्राक्-उर्वशीं	इला पुत्र पुरुरवा पहले उर्वशी के
प्रति-अति-विवशमना:	प्रति अत्यन्त आसक्त मन वाले
सेवमान:-चिरं तां	विहार करते हुए बहुत समय तक उसके साथ
गाढं निर्विद्य भूय:	प्रगाढ विरक्त हो कर फिर
युवति-सुखम्-इदं	स्त्री सुख यह
क्षुद्रम्-एव-इति गायन्	अकिञ्चन है, इस प्रकार कहते हुए
त्वत्-भक्तिं प्राप्य	आपकी भक्ति को पा कर
पूर्ण: सुखतरम्-अचरत्-	परम सुख से विचरण करने लगे
तत्-वत्-उद्धूत-सङ्गः	उसके समान निस्सङ्ग
भक्तोत्तंसं क्रिया मां	भक्तों में श्रेष्ठ करें मुझको
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
हन्त मे रुन्धि रोगान्	हाय! मेरे नष्ट कीजिए रोगों को

बहुत पहले इला पुत्र पुरुरवा उर्वशी के प्रति अत्यधिक आसक्त हो कर उसके साथ बहुत समय तक रमण करते रहे। कालान्तर में प्रगाढ विरक्ति हो जाने से वे कहने लगे कि स्त्री सुख अकिञ्चन है। इस प्रकार विरक्त हो कर आपकी भक्ति पा कर वे परम सुख से विचरण करने लगे। हे पवनपुरपते! मुझे भी उनके समान निस्सङ्ग और भक्तों में श्रेष्ठ बनाइए, और मेरे रोगों को नष्ट कीजिए।

दशक ९७

त्रैगुण्याद्भिन्नरूपं भवति हि भुवने हीनमध्योत्तमं यत्
ज्ञानं श्रद्धा च कर्ता वसतिरपि सुखं कर्म चाहारभेदाः ।
त्वत्क्षेत्रत्वन्निषेवादि तु यदिह पुनस्त्वत्परं तत्तु सर्वं
प्राहुर्नैगुण्यनिष्ठं तदनुभजनतो मङ्क्षु सिद्धो भवेयम् ॥१॥

त्रैगुण्यात्-भिन्न-रूपं	तीनों गुणों के (प्रभाव से) विभिन्नता
भवति हि भुवने	होती ही है संसार में
हीन-मध्य-उत्तमं यत्	नीच मध्यम और उत्तम वह
ज्ञानं श्रद्धा च कर्ता	ज्ञान श्रद्धा और कर्ता
वसतिः-अपि सुखं	निवास स्थान भी और सुख
कर्म च-आहार-भेदाः	कर्म और विभिन्न भोज्य वस्तुएं
त्वत्-क्षेत्र-त्वत्-निषेवा-	(किन्तु) आपके तीर्थ और आपकी सेवा
आदि तु यत्-इह	आदि तो जो भी यहां है
पुनः-त्वत्-परं	फिर केवल भवत्परक (हैं)
तत्-तु सर्वं	वह सभी
प्राहुः-नैगुण्य-निष्ठं	कहा गया है निर्गुण (गुणों से निर्लिप्त)
तत्-अनुभजनतः	वही सब का सम्यक पालन कर के
मङ्क्षु सिद्धः-भवेयम्	शीघ्र ही सिद्ध हो जाऊंगा

इस संसार में तीनों गुणों के प्रभाव से, ज्ञान, श्रद्धा, कर्ता, निवास स्थान, सुख, कर्म और विभिन्न खाद्य पदार्थ आदि सभी नीच मध्यम और उत्तम वर्ग को प्राप्त करते है। किन्तु आपके तीर्थ और आपकी सेवा भवत्परक होने से तीनों गुणों के प्रभाव से रहित अर्थात निर्गुण हैं। उन्ही सब का सम्यक भाव से निरन्तर सेवन करते हुए मैं शीघ्र ही सिद्ध हो जाऊंगा।

त्वय्येव न्यस्तचित्तः सुखमयि विचरन् सर्वचेष्टास्त्वदर्थं
त्वद्भक्तैः सेव्यमानानपि चरितचरानाश्रयन् पुण्यदेशान् ।
दस्यौ विप्रे मृगादिष्वपि च सममतिर्मुच्यमानावमान-

स्पर्धासूयादिदोषः सततमखिलभूतेषु संपूजये त्वाम् ॥२॥

त्वयि-एव न्यस्त-चित्तः	आप ही में दत्तचित्त हुआ (मैं)
सुखम्-अयि विचरन्	अयि! सुख से विचरन करता हुआ
सर्व-चेष्टाः-त्वत्-अर्थं	सभी चेष्टाओं को आपके निमित्त (करता हुआ)
त्वत्-भक्तैः सेव्यमानान्-अपि	आपके भक्तों के द्वारा उपभुक्त भी
चरित-चरान्-आश्रयन्	(अथवा) रहे थे जिन स्थानों में, रह्ते हुए
पुण्य-देशान्	(उन) पवित्र स्थलों में
दस्यौ विप्रे	चोर और ब्राह्मण में (भेद न करके)
मृगादिषु-अपि च सम मतिः-	पशुओं में भी समान बुद्धि रख कर
मुच्यमान-अवमान-	त्याग कर मान (अपमान) को
स्पर्धा-असूया-आदि-दोषः	स्पर्धा, असूया आदि दोषों (को न देखते हुए)
सततम्-अखिल-भूतेषु	सर्वदा समस्त लोकजन में
संपूजये त्वाम्	पूजन करूं आपका ही

ऐ भगवन! आपमें ही दत्तचित्त रह कर मैं, सुख से विचरण करूं। मेरी सभी चेष्टाएं आप ही के निमित्त हों। आपके भक्तों ने जिन स्थानों का उपभोग किया हो अथवा जहां वे रहे हों उन्ही पवित्र स्थलों में रहूं। चोर और ब्राह्मण में भेद न करूं। पशुओं में भी मेरी बुद्धि सम हो। मान और अपमान को त्याग कर स्पर्धा, असूया आदि दोषों को न देखते हुए सर्वदा समस्त लोकजनों में मैं आपको ही पूजूं।

त्वद्भावो यावदेषु स्फुरति न विशदं तावदेवं ह्युपास्तिं
कुर्वन्नैकात्म्यबोधे झटिति विकसति त्वन्मयोऽहं चरेयम् ।
त्वद्धर्मस्यास्य तावत् किमपि न भगवन् प्रस्तुतस्य प्रणाश-
स्तस्मात्सर्वात्मनैव प्रदिश मम विभो भक्तिमार्गं मनोज्ञम् ॥३॥

त्वत्-भावः यावत्-	आपके स्वरूपमयता के भाव को जब तक
एषु स्फुरति न विशदं	इन सभी जीवों में भासित नहीं होता स्पष्टता से

तावत्-एवं हि-उपास्तिं	तब तक ऐसे ही उपासना
कुर्वन्-ऐकात्म्य-बोधे	करते हुए एकात्मस्वरूप के अनुभव में
झटिति विकसति	अकस्मात प्रस्फुटित होने से
त्वत्-मयः-अहं चरेयम्	त्वन्मय (भगवत्स्वरूप) मैं विचरूंगा
त्वत्-धर्मस्य-अस्य	आपके (भगवत्धर्म) इसकी
तावत्-किम्-अपि न	तब कुछ भी नहीं
भगवन्	हे भगवन!
प्रस्तुतस्य प्रणाशः-	आरम्भ होने पर क्षति होती है
तस्मात्-सर्व-आत्मना-एव	इसलिए अन्ततः ही
प्रदिश मम विभो	प्रदान करें मुझको हे विभो!
भक्ति-मार्गं मनोज्ञम्	भक्ति मार्ग ही मनोहारी

जब तक इन सभी जीवों में आपकी स्वरूपमयता का स्पष्टतया आभास नहीं होता, मैं इसी प्रकार उपासना में संलग्न रहूंगा, ताकि, अकस्मात आपसे एकात्मस्वरूप के प्रस्फुटित होने पर, मैं त्वन्मय हो कर विचरूं। हे विभो! आपके इस भगवत्धर्म के आरम्भ होने पर, इसकी कुछ भी क्षति नहीं होती, इसलिए, अन्ततोगत्वा, मुझे मनोहारी भक्ति ही प्रदान कीजिए।

तं चैनं भक्तियोगं द्रढयितुमयि मे साध्यमारोग्यमायु-
र्दिष्ट्या तत्रापि सेव्यं तव चरणमहो भेषजायेव दुग्धम् ।
मार्कण्डेयो हि पूर्वं गणकनिगदितद्वादशाब्दायुरुच्चैः
सेवित्वा वत्सरं त्वां तव भटनिवहैर्द्रावयामास मृत्युम् ॥४॥

तं च-एनं भक्ति-योगं	और उस इस भक्ति योग को
द्रढयितुम्-अयि	दृढ करने के लिए, अयि भगवन!
मे साध्यम्-	मेरे द्वारा साधनीय है
आरोग्यम्-आयुः-	सुस्वास्थ और आयु
दिष्ट्या तत्र-अपि	सौभाग्य से उसमें भी

सेव्यं तव चरणम्-	सेवा (करनी) है आपके चरणो की
अहो भेषजाय-एव दुग्धम्	अहो! पथ्य स्वरूप दूध ही है
मार्कण्डेय: हि पूर्वं	मार्कण्डेय ने पहले
गणक-निगदित-	ज्योतिषियों के द्वारा कहे गए
द्वादश-आब्द-आयु:-	बारह वर्ष की आयु को
उच्चै: सेवित्वा वत्सरं	तीव्र उपासना से वर्ष भर
त्वां तव भट-निवहै:-	आपकी, आपके पार्षदों द्वारा
द्रावयामास मृत्युम्	प्रताडित की गई थी मृत्यु

ऐसे भक्ति योग को सुस्थिर करने के लिए मुझे सुस्वास्थ-पूर्ण आयु के लिए भी साधना करनी होगी। सौभाग्य से इसके लिए भी आपकी ही उपासना अनिवार्य है। अहो! पथ्य स्वरूप दूध ही है। पहले ज्योतिषियों ने मार्कण्डेय की आयु बारह वर्ष की ही बताई थी। उन्होंने एक वर्ष तक आपकी गहन उपासना की, जिससे आपके पार्षदों ने मृत्यु को भी प्रताडित कर दिया।

मार्कण्डेयश्चिरायु: स खलु पुनरपि त्वत्पर: पुष्पभद्रा-
तीरे निन्ये तपस्यन्नतुलसुखरति: षट् तु मन्वन्तराणि ।
देवेन्द्र: सप्तमस्तं सुरयुवतिमरुन्मन्मथैर्मोहयिष्यन्
योगोष्मप्लुष्यमाणैर्न तु पुनरशकत्त्वज्जनं निर्जयेत् क: ॥५॥

मार्कण्डेय:-चिर-आयु:	मार्कण्डेय चिरायु हैं
स खलु पुन:-अपि त्वत्-पर:	वह निस्सन्देह फिर भी आपसे उन्मुख
पुष्पभद्रा-तीरे तपस्यन्-	पुष्पभद्रा के किनारे तपस्या करते हुए
अतुल-सुख-रति:	अतुलनीय सुख से ओतप्रोत
षट् तु मन्वन्तराणि	छ मन्वन्तर तक तो (थे)
देवेन्द्र: सप्तम:-तं	(फिर) इन्द्र ने सातवें उनके (मन्वन्तर में)
सुरयुवति-मरुत्-मन्मथै:-	देवाङ्गनाओं वायु और कामदेव (के द्वारा)
मोहयिष्यन्	मोहित करने के लिए (उद्यत) को

योग-उष्म-प्लुष्यमाणै:	योग की उष्णता से दग्ध
न तु पुन:-अशकत्-	न ही फिर समर्थ हुए
त्वत्-जनं निर्जयेत् क:	आपके जनों को जीत सकता है कौन

मार्कण्डेय दीर्घायु हैं, फिर भी वे भवत्परक हैं। छ मन्वन्तरों तक पुष्पभद्रा नदी के तट पर तपस्या करते हुए अतुलनीय सुख में वे रहे। सातवें मन्वन्तर के इन्द्र ने देवाङ्गनाओं शीतल मधुर वायु और कामदेव के द्वारा उनको सम्मोहित करने की चेष्टा की, किन्तु योग की ऊष्णता से दग्ध हो कर वे सफल नहीं हुए। आपके भक्तों को कौन जीत सकता है!!

प्रीत्या नारायणाख्यस्त्वमथ नरसख: प्राप्तवानस्य पार्श्वं
तुष्ट्या तोष्टूयमान: स तु विविधवरैर्लोभितो नानुमेने ।
द्रष्टुं मायां त्वदीयां किल पुनरवृणोद्भक्तितृप्तान्तरात्मा
मायादु:खानभिज्ञस्तदपि मृगयते नूनमाश्चर्यहेतो: ॥६॥

प्रीत्या नारायण-आख्य:-	प्रसन्न हो कर नारायण नाम धारी
त्वम्-अथ नरसख:	आप फिर नर के सखा
प्राप्तवान्-अस्य पार्श्वं	पहुंचे उनके (मार्कण्डेय) के पास
तुष्ट्या तोष्टूयमान:	सन्तुष्ट हो कर स्तुति की उन्होंने
स तु विविधवरै:-	किन्तु वे अनेक वरदानों से
लोभित: न अनुमेने	लुब्ध किए जाने पर भी अवहेलना कर दी
द्रष्टुं मायां त्वदीयं किल	देखने के लिए माया को आपकी निश्चय ही
पुन:-अवृणोत्-	फिर प्रार्थना की
भक्ति-तृप्त-अन्तरात्मा	भक्ति से तृप्त अन्तरात्मा वाले वे
माया-दु:ख-अनभिज्ञ:-	माया जनित दु;खों से अनजान
तदपि मृगयते	फिर भी चाहते हैं (माया के प्रभाव को देखना)
नूनम्-आश्चर्य-हेतो:	केवलमात्र जिज्ञासा के कारण

तत्पश्चात नर के सखा नारायण नामधारी आप मार्कण्डेय के पास पहुंचे। अत्यन्त सन्तोष और प्रसन्नता से वे आपकी स्तुति

करने लगे। आपने उनको अनेक प्रकार के वरदानों का प्रलोभन दिया किन्तु उन्होंने उन सब की अवहेलना कर दी। फिर उन्होंने आपकी माया देखने की प्रार्थना की। आपकी भक्ति से सुतृप्त होने पर भी मायाजनित दुखों से अनजान होने के कारण केवल जिज्ञासा वश ही वे माया का प्रभाव देखना चाहते थे।

यातेत्वय्याशु वाताकुलजलदगलत्तोयपूर्णातिघूर्णत्-
सप्तार्णोराशिमग्ने जगति स तु जले सम्भ्रमन् वर्षकोटी: ।
दीन: प्रैक्षिष्ट दूरे वटदलशयनं कञ्चिदाश्चर्यबालं
त्वामेव श्यामलाङ्गं वदनसरसिजन्यस्तपादाङ्गुलीकम् ॥७॥

याते त्वयि-आशु	जाने पर आपके शीघ्र ही
वात-आकुल-	(तीव्र) वायु से व्याकुल हुए
जलद-गलत्-	बिखरे बादल बरसने लगे
तोय-पूर्ण-अति-घूर्णत्-	जल से परिपूर्ण भंवर से पूर्ण
सप्त-अर्णो-राशि-मग्ने	सातों समुद्रों की जल राशि में डूब जाने से
जगति स तु जले	जगत के, वे भी जल में
सम्भ्रमन् वर्ष-कोटी:	भटकते हुए करोडों वर्षों तक
दीन: प्रैक्षिष्ट दूरे	क्लान्त (उन्होंने) देखा दूर में
वट-दल-शयनं	वट पत्र पर सोते हुए
कञ्चित्-आश्चर्य-बालं	किसी आश्चर्यजनक बालक को
त्वाम्-एव श्यामल-अङ्गं	आप को ही श्यामल अङ्ग वाले
वदन-सरसिज-न्यस्त-	मुखकमल में डाले हुए
पाद्-अङ्गुलीकम्	पग की अङ्गुलियों को

आपके चले जाने के बाद शीघ्र ही तीव्र वायु से व्याकुल हो कर बादल बिखर कर बरसने लगे और जल से परिपूर्ण सातों समुद्रों के जलों में उठते भंवर में सम्पूर्ण जगत डूब गया मार्कण्डेय भी उसमें करोडों वर्षों तक भटकते रहे। क्लान्ति ग्रस्त हुए उन्होनें दूरस्थ वट पत्र पर सोए हुए एक अद्भुत बालक को देखा। श्यामल अङ्ग वाले मुखकमल में अपने पग की अङ्गुली डाले हुए वह बालक आप ही थे।

दृष्ट्वा त्वां हृष्टरोमा त्वरितमुपगत: स्प्रष्टुकामो मुनीन्द्र:
श्वासेनान्तर्निविष्ट: पुनरिह सकलं दृष्टवान् विष्टपौघम् ।
भूयोऽपि श्वासवातैर्बहिरनुपतितो वीक्षितस्त्वत्कटाक्षै-
र्मोदादाश्लेष्टुकामस्त्वयि पिहिततनौ स्वाश्रमे प्राग्वदासीत् ॥८॥

दृष्ट्वा त्वाम्	देख कर आपको
हृष्ट-रोमा	रोमाञ्चित रोम वाले
त्वरितम्-उपगत:	सहसा पहुंच कर
स्प्रष्टु-काम: मुनीन्द्र:	स्पर्श करने के इच्छुक मुनि
श्वासेन-अन्त:-निविष्ट:	(आपके) श्वास से भीतर प्रविष्ट (हो कर)
पुन:-इह	फिर से यहां
सकलं दृष्टवान विष्टप-औघं	समस्त देखा ब्रह्माण्ड और भुवनों को
भूय:-अपि श्वास-वातै:-	फिर से श्वास की वायु से
बहि:-अनुपतित:	बाहर आ गिरने पर
वीक्षित:-त्वत्-कटाक्षै:-	देखे गए आपके कटाक्षों से
मोदात्-आश्लेष्टुकाम:-	हर्ष आवेष से आलिङ्गन करने के इच्छुक
त्वयि पिहित-तनौ	आपके अन्तर्धान होने पर स्वरूप के
स्व-आश्रमे प्राक्-वत्-आसीत्	अपने आश्रम में पहले के समान स्थित थे

मार्कण्डेय मुनि ने जब आपको देखा, हर्षातिरेक से उनका शरीर रोमाञ्च पुलकित हो उठा। आपके स्पर्श के इच्छुक मुनि सहसा आपके निकट पहुंचे, किन्तु आपके श्वास के साथ आपके भीतर प्रविष्ट कर गए। वहां उन्होने समस्त भुवनों के सहित ब्रह्माण्ड का विस्तार देखा। तत्पश्चात वे आपकी श्वास वायु से बाहर आ गिरे। आपने उनकी ओर कटाक्ष दृष्टि से देखा और हर्षातिरेक से वे फिर आपका आलिङ्गन करने को उद्यत हुए। किन्तु आपका स्वरूप अन्तर्धान हो गया और मुनि ने स्वयं को अपने आश्रम में पूर्ववत स्थित पाया।

गौर्या सार्धं तदग्रे पुरभिदथ गतस्त्वत्प्रियप्रेक्षणार्थी
सिद्धानेवास्य दत्वा स्वयमयमजरामृत्युतादीन् गतोऽभूत् ।
एवं त्वत्सेवयैव स्मररिपुरपि स प्रीयते येन तस्मा-

न्मूर्तित्रय्यात्मकस्त्वं ननु सकलनियन्तेति सुव्यक्तमासीत् ॥९॥

गौर्या सार्धं	पार्वती के साथ
तत्-अग्रे पुरभित्-अथ	उनके सामने शिव तब
गतः-त्वत्-प्रिय-प्रेक्षण-अर्थी	गए, आपके भक्त को देखने की इच्छा से
सिद्धान्-एव-अस्य	प्राप्त किए गए ही उनके
दत्वा स्वयम्-अयम्-	दे कर, स्वेच्छा से उन्होंने (शिव ने)
अजरा-मृत्युता-आदीन्	अजरता अमरता आदि
गतः-अभूत्	चले गए
एवं त्वत्-सेवया-एव	इस प्रकार आपकी सेवा से ही
स्मररिपुः-अपि	शिव भी
स प्रीयते	वे प्रसन्न हो जाते हैं
येन तस्मात्-	जिससे, उससे
मूर्ति-त्रयि-आत्मकः-	त्रिमूर्ति के आत्म स्वरूप
त्वं ननु सकल-नियन्ता-	आप ही हैं और सभी के नियन्त्रक (हैं)
इति सुव्यक्तम्-आसीत्	यह सुस्पष्ट हो गया

आपके भक्त को देखने की इच्छा से शिव, पार्वती के साथ मार्कण्डेय के समक्ष गए। पहले से ही प्राप्त किए हुए अजरता एवं अमरता आदि वर शिव ने स्वेच्छा से उन्हें दिए और चले गए। इससे यही प्रतीत होता है कि शिव भी आपकी सेवा करने वालों से प्रसन्न होते हैं। और, यह भी सुस्पष्ट हो जाता है कि त्रिमूर्ति के आत्म स्वरूप आप ही हैं और आप ही सभी के नियन्त्रक भी हैं।

त्र्यंशेस्मिन् सत्यलोके विधिहरिपुरभिन्मन्दिराण्यूर्ध्वमूर्ध्वं
तेभ्योऽप्यूर्ध्वं तु मायाविकृतिविरहितो भाति वैकुण्ठलोकः ।
तत्र त्वं कारणाम्भस्यपि पशुपकुले शुद्धसत्त्वैकरूपी
सच्चिद्ब्रह्माद्वयात्मा पवनपुरपते पाहि मां सर्वरोगात् ॥१०॥

त्र्यंशे-अस्मिन् सत्यलोके	तीन अंशों में इस सत्यलोक में
विधि-हर-पुरभित्-	ब्रह्मा विष्णु और शिव के
मन्दिराणि-ऊर्ध्वम्-ऊर्ध्वं	मन्दिर हैं एक के ऊपर एक
तेभ्य:-अपि-ऊर्ध्वं तु	उनके भी ऊपर तो
माया-विकृति-विरहित:	माया के विकारों से रहित
भाति वैकुण्ठलोक:	सुशोभित है वैकुण्ठ लोक
तत्र त्वं कारण-अम्भसि-	वहां आप कारणोदक में
अपि पशुपकुले	(और) गोप कुल में भी (निवास करने वाले)
शुद्ध-सत्त्वैक-रूपी	शुद्ध सत्त्व केवल रूप में
सत्-चित्-ब्रह्म-	सत चित ब्रह्म
अद्वय-आत्मा	अद्वैत आत्मा स्वरूप में (स्थित हैं)
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
पाहि मां सर्व-रोगात्	रक्षा करें मेरी सभी रोगों से

इस सत्यलोक में तीन अंशों में ब्रह्मा विष्णु और शिव के मन्दिर हैं जो क्रमश: एक के ऊपर एक हैं। उनके भी ऊपर माया के विकारों से रहित वैकुण्ठ लोक सुशोभित हैं। वहां कारणोदक में और गोपकुल में भी आप निवास करते हैं। केवल शुद्ध सात्विक रूप में अद्वैत आत्मा आप, सत चित ब्रह्म स्वरूप में वहां स्थित हैं। हे पवनपुरपते! सभी रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक ९८

यस्मिन्नेतद्विभातं यत इदमभवद्येन चेदं य एत-
द्योऽस्मादुत्तीर्णरूप: खलु सकलमिदं भासितं यस्य भासा ।
यो वाचां दूरदूरे पुनरपि मनसां यस्य देवा मुनीन्द्रा:
नो विद्युस्तत्त्वरूपं किमु पुनरपरे कृष्ण तस्मै नमस्ते ॥१॥

यस्मिन्-एतत्-विभातं	जिसमें (आधार में) यह (जगत) प्रकाशित है,
यत:-इदम्-अभवत्-	जिससे यह (जगत) प्रतिष्ठित है
येन च-इदं य एतत्-	और जिसके द्वारा, और जो यह (जगत) है
य:-अस्मात्-उत्तीर्ण-रूप:	जो इस (जगत) से अतिक्रम कर के है
खलु सकलम्-इदं भासितं	निश्चय ही सब कुछ यह कान्ति मय
यस्य भासा	जिसकी कान्ति है
य: वाचां दूर-दूरे	जो वाणी से परे है
पुन:-अपि मनसां	फिर मन से भी परे है
यस्य देवा मुनीन्द्रा:	जिसकी (महिमा) देवगण और मुनिजन
नो विद्यु:-तत्त्वरूपं	न जान सके तत्त्व रूप
किमु पुन:-अपरे	कैसे फिर अन्य कोई
कृष्ण तस्मै नमस्ते	हे कृष्ण उन आपको नमस्कार है

जिसका आधार पा कर यह जगत प्रकाशित है, जिससे यह जगत प्रतिष्ठित है, जिसके द्वारा निर्मित है, जो स्वयं यह जगत है, जो इस जगत का अतिक्रम कर के भी स्थित है, जो भी सब कान्तिमय है, वह जिसकी कान्ति है, जो वाणी और मन से परे है, जिसकी महिमा के तत्त्व को देवगण और मुनिजन न जान सके, उसे और कोई कैसे जान सकेगा। हे कृष्ण! आपको नमस्कार है।

जन्माथो कर्म नाम स्फुटमिह गुणदोषादिकं वा न यस्मिन्
लोकानामूतये य: स्वयमनुभजते तानि मायानुसारी ।
विभ्रच्छक्तीररूपोऽपि च बहुतररूपोऽवभात्यद्भुतात्मा
तस्मै कैवल्यधाम्ने पररसपरिपूर्णाय विष्णो नमस्ते ॥२॥

जन्म-अथ: कर्म नाम	जन्म और कर्म निश्चय ही
स्फुटम्-इह	स्पष्टतया यहां
गुण-दोष-आदिकं	त्रिगुणों और दोषों आदि
वा न यस्मिन्	अथवा नहीं हैं जिसमें
लोकानाम्-ऊतये	लोकजन के कल्याण के लिए
य: स्वयम्-अनुभजते	जो स्वयं अङ्गीकार करते हैं
तानि माया-अनुसारी	उनको माया के अनुसार
विभ्रत्-शक्ती:-अरूप:-अपि	धारण करते हुए शक्ति को और रूप रहित भी
च बहुतर-रूप:-अवभाति-	और अनेक रूपों मे प्रतीत होते हैं
अद्‌भुत्-आत्मा	अद्‌भुत आत्मा वाले
तस्मै कैवल्य-धाम्ने	उन मुक्ति के एकमात्र धाम को
पर-रस-परिपूर्णाय	परम आनन्दरस से परिपूर्ण को
विष्णो नमस्ते	हे विष्णो! (आपको) नमस्कार है

जिनमें जन्म कर्म गुण और दोष स्पष्टतया विद्यमान नहीं हैं, किन्तु जो लोकजन के कल्याण के लिए माया के अनुसार इन सब को अङ्गीकार करते हैं, शक्तियों का संचार करते हैं और रूप रहित हो कर भी अनेक रूपों में प्रतीत होते हैं, मुक्ति के एकमात्र धाम, परम आनन्दरस परिपूर्ण अद्‌भुत आत्मा, हे विष्णो! आपको नमस्कार है।

नो तिर्यञ्चं न मर्त्यं न च सुरमसुरं न स्त्रियं नो पुमांसं
न द्रव्यं कर्म जातिं गुणमपि सदसद्वापि ते रूपमाहु: ।
शिष्टं यत् स्यान्निषेधे सति निगमशतैर्लक्षणावृत्तितस्तत्
कृच्छ्रेणावेद्यमानं परमसुखमयं भाति तस्मै नमस्ते ॥३॥

नो तिर्यञ्चम्-न मर्त्यं	न पक्षी अथवा पशु, न ही मानव
न च सुरम्-असुरम्	और न सुर असुर
न स्त्रियं नो पुंमांसं	न ही स्त्री और न पुरुष

न द्रव्यं कर्म जातिं	न द्रव्य कर्म जाति
गुणम्-अपि	गुण भी
सत्-असत्-वा-अपि	सत अथवा असत भी
ते रूपम्-आहुः	आपके स्वरूप को कहा है
शिष्टं यत् स्यात्-	शेष जो होता है
निषेधे सति निगम-शतैः-	निषेध से (नेति नेति) होने पर शास्त्रों द्वारा
लक्षण-आवृत्तितः-तत्	लक्षणों के आधार से जो
कृच्छ्रेण-आवेद्यमानं	यत्किञ्चित समझा जा सकता है
परम-सुखमयं भाति	(वह) परम सुख आनन्द स्वरूप से प्रकाशित है
तस्मै नमस्ते	उन (आपको) नमस्कार है

आपका स्वरूप, न तिर्यक (पशु-पक्षी),न मानव न सुर और न ही असुर, न स्त्री न पुरुष, न द्रव्य कर्म जाति गुण, न सत अथवा असत रूपमय कहा जा सकता है। जो शेष रह जाता है, उसे निषेध पद्धति, अथवा 'नेति नेति' के लक्षणों के आधार पर शास्त्रों के द्वारा यत्किञ्चित समझाया जा सकता है। उस परम सुख आनन्द से प्रकाशित आपके स्वरूप को नमस्कार है।

मायायां बिम्बितस्त्वं सृजसि महदहङ्कारतन्मात्रभेदै-
भूतग्रामेन्द्रियाद्यैरपि सकलजगत्स्वप्नसङ्कल्पकल्पम् ।
भूयः संहृत्य सर्वं कमठ इव पदान्यात्मना कालशक्त्या
गम्भीरे जायमाने तमसि वितिमिरो भासि तस्मै नमस्ते ॥४॥

मायायां बिम्बितः-त्वं	माया में प्रतिबिम्बित आप
सृजसि महत्-अहङ्कार-	सृष्टि करते है महत, अहङ्कार,
तन्मात्र-भेदैः-	तन्मात्रा के (पांच) भेद
भूत-ग्राम-इन्द्रिय-आद्यैः-अपि	(पञ्च) भूतों के समूह, ग्यारह इन्द्रियों आदि से भी
सकल-जगत्-	समस्त संसार को
स्वप्न-सङ्कल्प-कल्पम्	(जो) स्वप्न में कल्पित के समान (है)

भूय: संहृत्य सर्वं	(और) फिर समेट कर सब कुछ
कमठ इव पदानि-	कछुवे के समान पैरों को
आत्मना कालशक्त्या	अपनी ही काल शक्ति के द्वारा
गम्भीरे जायमाने तमसि	अत्यन्त गम्भीर हो जाने पर अन्धकार के
वितिमिर: भासि	अन्धकार रहित (आप) प्रकाशित होते हैं
तस्मै नमस्ते	उन आपको नमस्कार है

स्वयं अपनी माया में प्रतिबिम्बित आप ही सृष्टि करते हैं महत, अहङ्कार, तन्मात्रा के पांच भेद, पञ्च भूतों के समूह, ग्यारह इन्द्रियों आदि की, और स्वप्न में कल्पित के समान समस्त संसार की। फिर अपनी ही काल शक्ति के द्वारा, कछुवे के पैरों के समान आप सब कुछ अपने भीतर समेट लेते हैं। उस समय अन्धकार के अत्यन्त गम्भीर हो जाने पर भी आप सर्वथा अन्धकार से सर्वथा रहित सदा प्रकाशमान रहते हैं। उन आपको नमस्कार है।

शब्दब्रह्मेति कर्मेत्यणुरिति भगवन् काल इत्यालपन्ति
त्वामेकं विश्वहेतुं सकलमयतया सर्वथा कल्प्यमानम् ।
वेदान्तैर्यत्तु गीतं पुरुषपरचिदात्माभिधं तत्तु तत्त्वं
प्रेक्षामात्रेण मूलप्रकृतिविकृतिकृत् कृष्ण तस्मै नमस्ते ॥५॥

शब्द-ब्रह्म-इति	शब्द ब्रह्म इस प्रकार
कर्म-इति-अणु-इति	कर्म, अणु इस प्रकार
भगवन्	हे भगवन!
काल इति-आलपन्ति	समय इस प्रकार कहते हैं (लोग)
त्वाम्-एकं विश्व-हेतुं	आपको ही एकमात्र कारण विश्व का
सकलमयतया	(क्योंकि) (आप) सभी कुछ में व्याप्त हैं
सर्वथा कल्प्यमानम्	(और) इन सब प्रकार से आपकी कल्पना उचित ही है
वेदान्तै:-यत्तु गीतं	वेदान्तों में जिस प्रकार कहा गया है
पुरुष-पर-चित्-आत्मा-	पुरुष, पर, चित और आत्मन

अभिधं तत्तु तत्त्वं	प्रतिपादित जो तत्त्व है (वह ब्रह्म)
प्रेक्षा-मात्रेण	(उसकी) दृष्टि मात्र से
मूल-प्रकृति-विकृति-कृत्	मूल प्रकृति में विकार उत्पन्न करती है
कृष्ण तस्मै नमस्ते	उन कृष्ण को नमस्कार है

हे भगवन! लोग आपको शब्द ब्रह्म, कर्म, अणु और समय आदि रूप में वर्णित करने की चेष्टा करते हैं, क्योंकि आप ही सर्व व्याप्त हैं और विश्व के एकमात्र कारण हैं। इसी लिए आपके लिए यह कल्पना उचित ही है। वेदान्तों में जिसे पुरुष, पर, चित्त कहा है और आत्मन में जिस तत्त्व (ब्रह्म) का प्रतिपादन है वे आप ही हैं। उन्हीं, हे कृष्ण आपको नमस्कार है।

सत्त्वेनासत्तया वा न च खलु सदसत्त्वेन निर्वाच्यरूपा
धत्ते यासावविद्या गुणफणिमतिवद्विश्वदृश्यावभासम् ।
विद्यात्वं सैव याता श्रुतिवचनलवैर्यत्कृपास्यन्दलाभे
संसारारण्यसद्यस्त्रुटनपरशुतामेति तस्मै नमस्ते ॥६॥

सत्त्वेन-असत्तया वा	सत अथवा असत
न च खलु सदसत्त्वेन	और न ही सत और असत (दोनों) से
निर्वाच्यरूपा धत्ते	अवर्णनीय सत्ता (धारण करती है)
या-असौ-अविद्या	जो यह अविद्या
गुण-फणि-मति-वत्-	रज्जु और सर्प के समान
विश्व-दृश्य-अवभासम्	दृष्यमान जगत का आभास (वैसा ही है)
विद्यात्वं सा-एव याता	विद्या स्वरूप को धारण कर लेने पर
श्रुति-वचन-लवैः-	(और) कुछ श्रुतियों के वचनों से
यत्-कृपा-स्यन्द-लाभे	जो कृपा के प्रवाह के प्राप्त होने पर
संसार-अरण्य-सद्यः-	संसार रूपी वन का शीघ्र ही
त्रुटन-परशुताम्-एति	काटने के लिए परशु रूप धारण कर लेती है
तस्मै नमस्ते	ऐसे आपको नमस्कार है

अविद्या जो न सत है, न असत है, और न ही सत असत है, वह अवर्णनीय सत्ता धारण करती है, और रज्जु और सर्प की सत्ता के समान ही, दृष्यमान जगत का आभास कराती है। वही अविद्या जब विद्या रूपी हो जाती है, तब कुछ श्रुतियों के वचनों से और कुछ कृपा का प्रवाह प्राप्त होने से शीघ्र ही संसार रूपी वन को छेदने के लिए परशु रूप हो जाती है। ऐसे विद्या रूप आपको नमस्कार है।

भूषासु स्वर्णवद्वा जगति घटशरावादिके मृत्तिकाव-
तत्त्वे सञ्चिन्त्यमाने स्फुरति तदधुनाप्यद्वितीयं वपुस्ते ।
स्वप्नद्रष्टुः प्रबोधे तिमिरलयविधौ जीर्णरज्जोश्च यद्व-
द्विद्यालाभे तथैव स्फुटमपि विकसेत् कृष्ण तस्मै नमस्ते ॥७॥

भूषासु स्वर्ण-वत्-वा	आभूषणों में स्वर्ण के समान अथवा
जगति घट-शराव-आदिके	संसार में, घडे सिकोरे आदि में
मृत्तिकावत्-	मट्टी के समान
तत्त्वे सञ्चिन्त्यमाने	(आपके) तत्त्व के स्वरूप का विचार करने पर
स्फुरति तत्-अधुना-अपि-	प्रकाशित होता है वह अब भी
अद्वितीयं वपुः-ते	अद्वितीय स्वरूप आपका
स्वप्न-द्रष्टुः प्रबोधे	स्वप्न देखने वाले के जाग जाने पर
तिमिर-लय-विधौ	अन्धकार के लुप्त हो जाने की जो अवस्था है
जीर्ण-रज्जोः-च यत्-वत्-	और पुरानी रस्सी को जो (भ्रम है) उसी प्रकार
विद्यालाभे तथा-एव	विद्या के लाभ हो जाने पर वैसे ही
स्फुटम्-अपि विकसेत्	तत्त्व भी प्रकट हो
कृष्ण तस्मै नमस्ते	हे कृष्ण! आपको नमस्कार है

इस संसार में, जैसे आभूषणों में स्वर्ण अथवा घडे और सिकोरों में मिट्टी का तत्त्व रूप में होना भासित होता है, अथवा स्वप्न देखने वाले के जाग जाने पर जिस प्रकाश का अनुभव होता है, वैसा ही अनुभव आपके तत्त्व स्वरूप के विषय में विचार करने पर होता है। जिस प्रकार ज्ञान के उदय होने से पुरानी रस्सी में सर्प का भ्रम मिट जाता है उसी प्रकार मुझे आपके स्वरूप का तत्त्वतः ज्ञान प्राप्त हो। हे कृष्ण! आपको नमस्कार है।

यद्भीत्योदेति सूर्यो दहति च दहनो वाति वायुस्तथान्ये
यद्भीताः पद्मजाद्याः पुनरुचितबलीनाहरन्तेऽनुकालम् ।
येनैवारोपिताः प्राङ्निजपदमपि ते च्यावितारश्च पश्चात्
तस्मै विश्वं नियन्त्रे वयमपि भवते कृष्ण कुर्मः प्रणामम् ॥८॥

यत्-भीत्या-उदेति सूर्यः	जिनके भय से उदित होता है सूर्य
दहति च दहनः	जलाती है अग्नि
वाति वायुः-तथा-अन्ये	बहती है वायु और अन्य भी
यत्-भीताः पद्मज-आद्याः	जिनसे भयभीत हो कर, ब्रह्मा आदि
पुनः-उचित-बलीन्-	फिर यथोचित (समय पर) बलि आदि
आहरन्ते-अनुकालं	लाते हैं समय समय पर
येन-एव-आरोपिताः	जिनके द्वारा ही नियुक्त हैं
प्राक्-निज-पदम्-अपि	पहले अपने स्थान पर, भी
ते च्यावितारः-च पश्चात्	वे और पदच्युत होने पर बाद में
तस्मै विश्वं नियन्त्रे	उन विश्व के नियन्ता को
वयम्-अपि भवते कृष्ण	हम भी आपको हे कृष्ण!
कुर्मः प्रणामम्	करते हैं प्रणाम

जिनके भय से सूर्य उदित होता है, अग्नि जलाती है और वायु बहती है, तथा अन्य सभी ब्रह्मा आदि जिनसे भयभीत हो कर समय समय पर बलि प्रदान करते हैं, एवं जिनके द्वारा सभी अपने पदों पर नियुक्त होते हैं और बाद में पद च्युत हो जाते हैं, उन विश्व के नियन्ता, हे श्री कृष्ण! हम भी आपको प्रणाम करते हैं।

त्रैलोक्यं भावयन्तं त्रिगुणमयमिदं त्र्यक्षरस्यैकवाच्यं
त्रीशानामैक्यरूपं त्रिभिरपि निगमैर्गीयमानस्वरूपम् ।
तिस्रोवस्था विदन्तं त्रियुगजनिजुषं त्रिक्रमाक्रान्तविश्वं
त्रैकाल्ये भेदहीनं त्रिभिरहमनिशं योगभेदैर्भजे त्वाम् ॥९॥

त्रैलोक्यं भावयन्तं	त्रिलोक की रचना करने वाले उनको

त्रिगुणमयम्-इदं	त्रिगुणात्मक इसको
त्र्यक्षरस्य-ऐकवाच्यं	त्रि अक्षर (प्रणव) के एकमात्र वाच्य को
त्रि-ईशानाम्-ऐक्यरूपम्	त्रिमूर्ति के एकमेव स्वरूप को
त्रिभिःअपि निगमैः-	तीनो वेदों के द्वारा भी
गीयमान-स्वरूपम्	वन्दित स्वरूप वालों को
तिस्रः-अवस्था विदन्तं	तीनों अवस्थाओं के ज्ञाता को
त्रियुग-जनि-जुषं	तीनों युगों में अवतार धारण करने वाले हैं
त्रि-क्रम-आक्रान्त-विश्वं	तीन पगों में आक्रान्त करने वाले हैं विश्व को
त्रैकाल्ये भेदहीनं	तीनों कालों में समान हैं
त्रिभिः-अहम्-अनिशं	तीन के द्वारा मैं सदा
योगभेदैः-भजे त्वाम्	भिन्न योगों से भजूंगा आपको

इस प्रपञ्चमय जगत की त्रिगुणों (सत्व, रज, तम) से रचना करने वाले, त्रि अक्षर (प्रणव) के एकमात्र वाच्य, त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) के एकमेव स्वरूप, तीनों वेदों (साम, अथर्व, यजुर) के द्वारा वन्दित स्वरूप वाले, तीनों अवस्थाओं (जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति) के ज्ञाता, तीनों युगों (सत, त्रेता, द्वापर) में अवतार धारण करने वाले, तीन पगों में विश्व को आक्रान्त करने वाले, तीनों कालों (भूत, वर्तमान, भविष्यत) मे निर्भेद्य, आपको मैं तीनों योगों (ज्ञान, कर्म, भक्ति) से निरन्तर भजूंगा।

सत्यं शुद्धं विबुद्धं जयति तव वपुर्नित्यमुक्तं निरीहं
निर्द्वन्द्वं निर्विकारं निखिलगुणगणव्यञ्जनाधारभूतम् ।
निर्मूलं निर्मलं तन्निरवधिमहिमोल्लासि निर्लीनमन्त-
र्निस्सङ्गानां मुनीनां निरुपमपरमानन्दसान्द्रप्रकाशम् ॥१०॥

सत्यं शुद्धं विबुद्धं	सत्य, शुद्ध, प्रबुद्ध
जयति तव वपुः-	प्रकाशित होता है आपका स्वरूप
नित्य-मुक्तं निरीहं	(जो) सदा विमुक्त है, निःस्पृह है,
निर्द्वन्द्वं निर्विकारं	द्वन्द्व रहित है, विकार से परे है

निखिल गुण-गण-	समस्त गुणों के समूहों के
व्यञ्जन-आधार-भूतम्	पदार्थों के आधार भूत हैं
निर्मूलं निर्मलं तत्-	कारण रहित, पवित्र, वह
निरवधि-महिम-उल्लासि	असीम वैभव से परिपूर्ण
निर्लीनम्-अन्त:-	लीन अन्त;करण में
निस्सङ्गानाम् मुनीनां	निर्लिप्त मुनियों के
निरुपम-परम-आनन्द-	उपमा रहित, परम आनन्द के
सान्द्र-प्रकाशम्	घनीभूत प्रकाश युक्त

हे भगवन! आपका स्वरूप, सत्य है, शुद्ध है, प्रबुद्ध है, सदा विमुक्त है, नि:स्पृह है, द्वन्द्व रहित है, विकारों से परे है, समस्त गुणों के समूहों के पदार्थों का आधार भूत है, कारण रहित है, पवित्र और असीम वैभव से परिपूर्ण है, निर्लिप्त मुनियों के अन्त:करण में लीन रहने वाला है, उपमा रहित है, तथा परम आनन्द के धनीभूत प्रकाश से युक्त उत्कृष्ट रूप से प्रकाशित है।

दुर्वारं द्वादशारं त्रिशतपरिमिलत्षष्टिपर्वाभिवीतं
सम्भ्राम्यत् क्रूरवेगं क्षणमनु जगदाच्छिद्य सन्धावमानम् ।
चक्रं ते कालरूपं व्यथयतु न तु मां त्वत्पदैकावलम्बं
विष्णो कारुण्यसिन्धो पवनपुरपते पाहि सर्वामयौघात् ॥११॥

दुर्वारं द्वादश-आरं	अपरिवर्तनीय द्वादश आरी वाले (१२ महीने)
त्रिशत-परिमिलत्-षष्टि-	तीन सौ मिलित साठ
पर्व-अभिवीतं	(३६० दिनों) पर्वों से युक्त
सम्भ्राम्यत् क्रूर-वेगं	चक्कर काटता हुआ क्रूर तीव्रता से
क्षणमनु जगत्-आच्छिद्य	प्रति क्षण जगत को काटता हुआ
सन्धावमानं	दौडता हुआ
चक्रं ते कालरूपं	चक्र आपका काल रूपी

व्यथयतु न तु मां	पीडित न ही करे मुझको
त्वत्-पदैक-अवलम्बं	एकमात्र आपके चरणों के ही शरणागत को
विष्णो कारुण्यसिन्धो	हे विष्णु! करुणासिन्धु!
पवनपुरपते	हे पवनपुरपते!
पाहि-सर्व-आमय-औघात्	रक्षा करें सभी रोगों के समूहों से

हे विष्णु! अपरिवर्तनीय द्वादश आरी (१२ महीनों) वाला, तीन सौ मिलित साठ (३६० दिनों) पर्वों वाला, क्रूर तीव्रता से चक्कर काटते हुए, प्रति क्षण जगत के पीछे दौडते और उसका विनाश करते हुए, आपका काल रूपी चक्र मुझे, जो एकमात्र आपके चरणों का शरणागत है, पीडित न ही करे। हे करुणासिन्धु! हे पवनपुरपते! सभी रोगों के समूहों से मेरी रक्षा करें।

दशक ९९

विष्णोर्वीर्याणि को वा कथयतु धरणे: कश्च रेणून्मिमीते
यस्यैवाङ्घ्रित्रयेण त्रिजगदभिमितं मोदते पूर्णसम्पत्
योसौ विश्वानि धत्ते प्रियमिह परमं धाम तस्याभियायां
त्वद्भक्ता यत्र माद्यन्त्यमृतरसमरन्दस्य यत्र प्रवाह: ॥१॥

विष्णो:-वीर्याणि	विष्णु के सामर्थ्य को
क: वा कथयतु	कौन भला कह सकता है
धरणे: क:-च रेणून्-मिमीते	धरती के कौन कणों को गिनेगा
यस्य-एव-अङ्घ्रि-त्रयेण	जिनके ही चरणों के तीन डगों से
त्रि-जगत्-अभिमितं	त्रिलोक नाप लिया गया
मोदते पूर्ण-सम्पत्	(वहां) आनन्द मग्न हैं सभी सम्पदाएं
य:-असौ विश्वानि धत्ते	जो इस विश्व को धारण करते हैं
प्रियम्-इह परमं धाम	प्रिय मुझे (उनका) परम धाम
तस्य-अभियायां	उनके को जाऊं
त्वत्-भक्ता:-यत्र माद्यन्ति-	आपके भक्त जहां आनन्दविभोर रहते हैं
अमृत-रस-मरन्दस्य	(जहां) अमृत रस का मधु
यत्र प्रवाह:	जहां प्रवाहित होता है

विष्णु के सामर्थ्य का वर्णन कौन कर सकता है? धरती के कणों को कौन गिनेगा? जिनके चरणों के तीन डगों से यह जगत नाप लिया गया वहां सभी सम्पदाएं आनन्द मग्न रहती हैं। इस विश्व को धारण करने वाले का धाम (वैकुण्ठ) मुझे अति प्रिय है, मैं वहीं जाऊं। वहां अमृत रस का मधु निरन्तर प्रवाहित होता है, और वहां आपके भक्त जन आनन्द विभोर रहते हैं।

आद्यायाशेषकर्त्रे प्रतिनिमिषनवीनाय भर्त्रे विभूते-
र्भक्तात्मा विष्णवे य: प्रदिशति हविरादीनि यज्ञार्चनादौ ।
कृष्णाद्यं जन्म यो वा महदिह महतो वर्णयेत्सोऽयमेव
प्रीत: पूर्णो यशोभिस्त्वरितमभिसरेत् प्राप्यमन्ते पदं ते ॥२॥

आद्याय-अशेष-कर्त्रे	आदि (पुरुष) के लिए, निश्शेष के रचयिता के लिए
प्रति-निमिष-नवीनाय	प्रत्येक पल नूतन के लिए
भर्त्रे विभूते:-	धातृ सभी विभूतियों के लिए
भक्तात्मा विष्णवे य:	भक्त, विष्णु के लिए जो
प्रदिशति हवि:-आदीनि	अर्पण करता है हविष आदि
यज्ञ-अर्चन-आदौ	यज्ञ पूजा आदि से
कृष्णाद्यं जन्म य: वा	कृष्ण आदि (अवतारों) के जन्म को जो अथवा
महत्-इह महत:	यहां महान से भी अत्यन्त महान का
वर्णयेत्-स:-अयम्-एव	वर्णन करे, वह यह ही
प्रीत: पूर्ण:	सुखसम्पन और परिपूर्ण
यशोभि:-त्वरितम्-	यशों से, शीघ्र ही
अभिसरेत् प्राप्यम्-	पहुंच जाता है प्राप्तव्य
अन्ते पदं ते	अन्ते में, पद को आपके

निश्शेष के रचयिता, प्रतिपल नूतन आदि पुरुष, सभी विभूतियों के धातृ विष्णु को जो भक्त यज्ञ अथवा पूजा से हविष अर्पित करता है, अथवा जो भक्त, इस जग में महान से भी महत कृष्ण के जन्म और उनके अवतारों का वर्णन करता है, वह अन्त में यश-परिपूर्ण से परिपूर्ण और सुख-सम्पन्न आपके उस पद को शीघ्र ही प्राप्त कर लेता है।

हे स्तोतार: कवीन्द्रास्तमिह खलु यथा चेतयध्वे तथैव
व्यक्तं वेदस्य सारं प्रणुवत जननोपात्तलीलाकथाभि: ।
जानन्तश्चास्य नामान्यखिलसुखकराणीति सङ्कीर्तयध्वं
हे विष्णो कीर्तनाद्यैस्तव खलु महतस्तत्त्वबोधं भजेयम् ॥३॥

हे स्तोतार: कवीन्द्रा:-	हे स्तुति परक कुशल कवि गण!
तम्-इह खलु	उन (ईश्वर) को निश्चित रूप से
यथा चेतयध्वे तथा-एव	जिस भी प्रकार (आप लोग) समझते हैं वैसे ही

व्यक्तं वेदस्य सारं प्रणुवत	वस्तुतः (जो) वेदों के सार हैं, (उनको) नमन (करते हैं)
जनन-उपात्त-लीला-कथाभिः	जन्म अवतार लीला आदि की कथाओं से
जानन्तः-च-अस्य	और जानते हुए उनके
नामानि-अखिल-	नामों को जो असीम
सुख-कराणी-इति	सुख के कारणभूत है इस प्रकार
सङ्कीर्तयध्वं	संकीर्तन करिए
हे विष्णो	हे विष्णो!
कीर्तन-आद्यैः-तव	संकीर्तन आदि आपके (नामों) से
खलु महतः-तत्त्व-बोधं	निश्चय पूर्वक अत्यन्त महान तत्त्व बोध को
भजेयम्	प्राप्त कर लूंगा

हे स्तुति परक कुशल कवि गण! वेदों के उन ईश्वर को आपलोग जैसा भी समझते हैं, वैसा ही उनके जन्म और अवतार की लीलाओं आदि का गान करके उनको नमन करते हैं। अनेक सुखों के कारणभूत उनके नामों को जान कर उन नामों का सङ्कीर्तन कीजिए। हे विष्णु! अत्यन्त महान तत्व बोधक ज्ञान के दाता आपके नामों का कीर्तन कर के मैं भी उस तत्त्व बोध को पा लूंगा।

विष्णोः कर्माणि सम्पश्यत मनसि सदा यैः स धर्मानबध्नाद्
यानीन्द्रस्यैष भृत्यः प्रियसख इव च व्यातनोत् क्षेमकारी ।
वीक्षन्ते योगसिद्धाः परपदमनिशं यस्य सम्यक्प्रकाशं
विप्रेन्द्रा जागरूकाः कृतबहुनुतयो यच्च निर्भासयन्ते ॥४॥

विष्णोः कर्माणि	महा विष्णु के कर्मों का
सम्पश्यत मनसि	चिन्तन करो मन में
सदा यैः स	सर्वदा जिन (कर्मों) से वे
धर्मान्-अबध्नात्-	धर्मों को स्थापित करते हैं
यानि-इन्द्रस्य-एष	जिन (कर्मों) से इन इन्द्र के

भृत्य: प्रियसख इव च	सेवक और सखा के समान (व्यवहार करके)
व्यातनोत् क्षेमकारी	सम्पन्न किया कल्याण और क्षेम
वीक्षन्ते योगसिद्धा:	अनुभव करते हैं योगी और सिद्ध जन
परपदम्-अनिशं	(उस) परम पद का दिन रात
यस्य सम्यक्-प्रकाशं	जिसका सुप्रकाश
विप्रेन्द्रा:-जागरूका:	विप्र गण जागरुक जन
कृत-बहु-नुतय:	करके अनेक स्तुतियां
यत्-च निर्भासयन्ते	जिनको प्रकाशित करते हैं

हे कविगण! जिन कर्मों से महा विष्णु सर्वदा धर्म की स्थापना करते हैं, जिन कर्मों से वे कभी इन्द्र के सेवक और कभी सखा के समान व्यवहार कर के कल्याण और क्षेम का वहन करते हैं, योगी और सिद्ध जन जिनके सुप्रकाशित परम पद का निरन्तर अनुभव करते हैं, जागरुक विज्ञ विप्र गण नाना स्तुतियों से जिनको प्रकाशित करने का प्रयास करते हैं, आप अपने मन में उन कर्मों का चिन्तन कीजिए।

नो जातो जायमानोऽपि च समधिगतस्त्वन्महिम्नोऽवसानं
देव श्रेयांसि विद्वान् प्रतिमुहुरपि ते नाम शंसामि विष्णो ।
तं त्वां संस्तौमि नानाविधनुतिवचनैरस्य लोकत्रयस्या-
प्यूर्ध्वं विभ्राजमाने विरचितवसतिं तत्र वैकुण्ठलोके ॥५॥

नो जात:-जायमान:-अपि च	न उत्पन्न हुए, न ही (जो) उत्पन्न हो रहे हैं
समधिगत:-त्वत्-महिम्न:-	समझ पाए हैं आपकी महिमा को
अवसानं	(उसकी) असीमता को
देव श्रेयांसि विद्वान्	हे देव! कल्याणकारी जान कर
प्रति-मुहु:-अपि	हर क्षण भी
ते नाम शंसामि विष्णो	आपके नामों का कीर्तन करूगा, हे विष्णु!
तं त्वां संस्तौमि	उन आपकी स्तुति करूंगा

नानाविध-नुति-वचनैः-	नाना प्रकार की स्तुतियों के द्वारा
अस्य लोक-त्रयस्य-	इस त्रिलोक के
अपि-ऊर्ध्वं विभ्राजमाने	भी ऊपर देदीप्यमान
विरचित-वसतिं	रचित और संसेवित
तत्र वैकुण्ठलोके	उस वैकुण्ठ लोक में

जो उत्पन्न हो गए हैं, और जो उत्पन्न हो रहे हैं, कोई भी आपकी महिमा और उसकी असीमता को नहीं समझ पाया है। हे देव! कल्याणकारी जान कर मैं हर क्षण आपके नामों का सकीर्तन करूंगा। हे विष्णु! आपके देदीप्यमान निवास वैकुण्ठ लोक मे जो त्रिलोकों के भी ऊपर रचित और सेवित निवास करने वाले हैं, मैं, नाना प्रकार की स्तुतियों द्वारा आपकी वन्दना करूंगा।

आपः सृष्ट्यादिजन्याः प्रथममयि विभो गर्भदेशे दधुस्त्वां
यत्र त्वय्येव जीवा जलशयन हरे सङ्गता ऐक्यमापन् ।
तस्याजस्य प्रभो ते विनिहितमभवत् पद्ममेकं हि नाभौ
दिक्पत्रं यत् किलाहुः कनकधरणिभृत् कर्णिकं लोकरूपम् ॥६॥

आपः सृष्टि-आदि-जन्याः	जल सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न हुआ
प्रथमम्-अयि विभो	सब से पहले, अयि विभो!
गर्भ-देशे दधुः-त्वां	(अपने) भीतर में धारण किया आपको
यत्र त्वयि-एव जीवाः	जहां आप ही में जीव
जलशयन हरे	हे जलशायन हरे!
सङ्गताः-ऐक्यम्-आपन्	समग्र हो कर एकता को प्राप्त करके
तस्य-अजस्य प्रभो ते	उन अजन्मा प्रभो आपके
विनिहितम्-अभवत्	(अन्दर) लीन हो कर
पद्मम्-एकं हि नाभौ	कमल एक निश्चय ही (आपकी) नाभि में उत्पन्न हुआ
दिक्-पत्रं यत् किल-आहुः	दिशाएं पत्ते जिसके कहे गए

कनकधरणिभृत्	(और) स्वर्णिम महा मेरु
कर्णिकं लोक-रूपम्	कर्णिका लोक रूप

ऐ विभो! सृष्टि के आरम्भ में जल उत्पन्न हुआ और सब से पहले उसने आपको अपने गर्भ में धारण किया। हे जलशायन हरे! वहां समस्त जीव समग्रता से एक्यभाव को प्राप्त हो कर अजन्मा आपमें ही लीन हो गए। आपकी नाभि में एक कमल उत्पन्न हुआ। उस लोकरूपी कमल के पत्तों को दिशाएं और कर्णिका को स्वर्णिम महा मेरु कहा गया।

हे लोका विष्णुरेतद्भुवनमजनयत्तन्न जानीथ यूयं
युष्माकं ह्यन्तरस्थं किमपि तदपरं विद्यते विष्णुरूपम् ।
नीहारप्रख्यमायापरिवृतमनसो मोहिता नामरूपै:
प्राणप्रीत्यैकतृप्ताश्चरथ मखपरा हन्त नेच्छा मुकुन्दे ॥७॥

हे लोका	अरे मनुष्यों!
विष्णु:-एतत्-भुवनम्-अजनयत्-	विष्णु ने इस जगत की रचना की
तत्-न जानीथ यूयं	उनको नहीं जानते तुम लोग
युष्माकं हि-अन्तरस्थं	तुम्हारे ही अन्दर स्थित
किमपि तत्-परं	कोई उससे अन्य
विद्यते विष्णुरूपं	विद्यमान है विष्णु का रूप
नीहार-प्रख्य-माया-	धुन्ध समान माया से
परिवृत-मनस:	आच्छादित मन वाले (तुम)
मोहिता: नाम-रूपै:	मोहित हो नामों और रूपों से
प्राण-प्रीति-एक-तृप्ता:-	इन्द्रिय सुखों मात्र से तृप्त हुए
चरथ मखपरा	विचरते हो, यज्ञ आदि में तत्पर
हन्त न-इच्छा मुकुन्दे	हाय! नही है इच्छा मुकुन्द में

अरे मनुष्यों! विष्णु ने ही इस जगत की रचना की है, और वे ही अन्य किसी विष्णु रूप से तुम्हारे अन्दर विद्यमान हैं। उनको ही तुम लोग नहीं जानते। तुम्हारा मन धुन्ध के समान माया से आच्छादित है। तुम विभिन्न नामों और रूपों से मोहित हो, और मात्र इन्द्रिय सुखों से ही तृप्त हुए यज्ञ आदि में तत्पर हो कर विचरते हो। हाय! तुममें मुकुन्द को पाने की तो इच्छा ही

नहीं है!

मूर्ध्नामक्ष्णां पदानां वहसि खलु सहस्राणि सम्पूर्य विश्वं
तत्प्रोत्क्रम्यापि तिष्ठन् परिमितविवरे भासि चित्तान्तरेऽपि ।
भूतं भव्यं च सर्वं परपुरुष भवान् किञ्च देहेन्द्रियादि-
ष्वाविष्टोऽप्युद्गतत्वादमृतसुखरसं चानुभुङ्क्षे त्वमेव ॥८॥

मूर्ध्नाम्-अक्ष्णां	मस्तकों, नेत्रों
पदानां वहसि खलु	चरणों से व्याप्त हैं निश्चय ही
सहस्राणि	सहस्रों
सम्पूर्य विश्वं	सम्पूर्ण विश्व को
तत्-प्रोत्क्रम्य-अपि	उसका अतिक्रमण करके भी
तिष्ठन् परिमित-विवरे	स्थित है संकुचित विवर में
भासि-चित्त-अन्तरे-अपि	प्रभासित होते हैं चित्त के अन्दर भी
भूतं भव्यं च सर्वं	भूत भविष्यत और सभी
परपुरुष भवान्	हे पर पुरुष! आप
किञ्च देह-इन्द्रिय-आदिषु-	और क्या, शरीर इन्द्रिय आदि में भी
आविष्टः-अपि-	प्रवेश कर के भी
उद्गतत्वात्-	(उन सब से) परे होने से भी
अमृत-सुख-रसं	अमृत सुख के रस का
च-अनुभुङ्क्षे त्वम्-एव	और उपभोग करते हैं आप ही

हे पर पुरुष! आप सहस्रों मस्तकों, नेत्रों और चरणों से सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हैं। इस विश्व का अतिक्रमण कर के भी स्थित हैं। चिदाकाश के संकुचित विवर में भी भूत भविष्यत और सभी प्रभासित होते हैं। और तो और, शरीर इन्द्रिय आदि में प्रवेश करके उन सब से परे होने पर आप ही अमृत सुख रस का भी उपभोग करते हैं।

यत्तु त्रैलोक्यरूपं दधदपि च ततो निर्गतोऽनन्तशुद्ध-
ज्ञानात्मा वर्तसे त्वं तव खलु महिमा सोऽपि तावान् किमन्यत् ।

स्तोकस्ते भाग एवाखिलभुवनतया दृश्यते त्र्यंशकल्पं
भूयिष्ठं सान्द्रमोदात्मकमुपरि ततो भाति तस्मै नमस्ते ॥९॥

यत्-तु त्रैलोक्य-रूपं दधत्-	जो वास्तव में त्रिलोक का रूप धारण करते हैं
अपि च तत: निर्गत:-	और तब भी उससे परे हैं
अनन्त-शुद्ध-ज्ञान-आत्मा	असीम शुद्ध ज्ञान स्वरूप
वर्तसे त्वं तव खलु	स्थित हैं आप, आपकी निश्चय
महिमा स:-अपि	ही महिमा है वह भी
तावान् किम्-अन्यत्	उसके समान क्या है और
स्तोक:-ते भाग:	अंश मात्र आपका भाग
एव अखिल-भुवन-तया	ही समस्त ब्रह्माण्ड सृष्टिमय
दृश्यते त्र्यंश-कल्पं	दृष्टि गोचर है, त्रिमूर्ति मय
भूयिष्ठं सान्द्र-मोद-आत्मकम्-	अधिकांश घनिष्ट आनन्द स्वरूप से
उपरि तत: भाति	ऊपर भी उसके प्रकाशित होता है
तस्मै नम:-ते	उन आपको नमन है

आप स्वयं ही त्रिलोक का रूप धारण करते हैं, और फिर उससे परे रह कर भी असीम शुद्ध ज्ञान स्वरूप में स्थित हैं। यह आप ही की महिमा है। इसके समान और क्या है? आपके अंश मात्र भाग से ही समस्त ब्रह्माण्ड सृष्टिमय दृष्टिगोचर होता है। आपका तीन चौथाई अंश घनीभूत आनन्दाअत्मक रूप से उसके भी ऊपर प्रकाशित रहता है। हे प्रभो! आपके इस स्वरूप को नमन है।

अव्यक्तं ते स्वरूपं दुरधिगमतमं तत्तु शुद्धैकसत्त्वं
व्यक्तं चाप्येतदेव स्फुटममृतरसाम्भोधिकल्लोलतुल्यम् ।
सर्वोत्कृष्टामभीष्टां तदिह गुणरसेनैव चित्तं हरन्तीं
मूर्तिं ते संश्रयेऽहं पवनपुरपते पाहि मां कृष्ण रोगात् ॥१०॥

अव्यक्तं ते स्वरूपं	अव्यक्त आपका स्वरूप (निर्गुण)
दुरधिगमतमं	दुर्बोधगम्य है

तत्-तु शुद्ध-एक-सत्त्वं	वह भी शुद्ध और सात्त्विक
व्यक्तं च-अपि-	व्यक्त और भी
एतत्-एव स्फुटम्-	यह ही प्रत्यक्ष (दृष्टिगोचर) (सगुण)
अमृत-रस-अम्भोधि-	अमृत रस के सागर
कल्लोल-तुल्यम्	(की) तरङ्गों के समान
सर्वोत्कृष्टाम्-अभीष्टां तत्-इह	सब से श्रेष्ठ और अत्यन्त प्रिय वह ही यहां
गुण-रसेन-एव चित्तं हरन्तीं	गुणों के रसों से ही चित्त को लुभाती है
मूर्तिं ते संश्रये-अहं	प्रतिमा आपकी, शरणागत हूं मैं
पवनपुरपते पाहि मां	हे पवनपुरपते! रक्षा करें मेरी
कृष्ण रोगात्	हे कृष्ण! रोगों से

आपका शुद्ध और सात्त्विक अव्यक्त निर्गुण स्वरूप दुर्बोधगम्य है। आपका व्यक्त, दृष्टिगोचर, प्रत्यक्ष स्वरूप, अमृत रस के सागर की तरङ्गों के समान सब से श्रेष्ठ और अत्यन्त प्रिय है। गुणों के रसों से चित्त को लुभाने वाली आपकी प्रतिमा का मैं शरणागत हूं। हे पवनपुरपते! हे कृष्ण! रोगों से मेरी रक्षा करें।

दशक १००

अग्रे पश्यामि तेजो निबिडतरकलायावलीलोभनीयं
पीयूषाप्लावितोऽहं तदनु तदुदरे दिव्यकैशोरवेषम् ।
तारुण्यारम्भरम्यं परमसुखरसास्वादरोमाञ्चिताङ्गै-
रावीतं नारदाद्यैर्विलसदुपनिषत्सुन्दरीमण्डलैश्च ॥१॥

अग्रे पश्यामि तेज:	समक्ष देखता हूं तेजपुञ्ज
निबिडतर-कलाय-	सघन कलाय (पुष्पों)
अवली-लोभनीयं	की माला समान लुभावनी
पीयूष-आप्लावित:-अहं	अमृत में निम्न हो गया हूं मैं
तत्-अनु तत्-उदरे	तत्पश्चात, उस (प्रभा) के बीच में
दिव्य-कैशोर-वेषम्	दिव्य नवयुवक के रूप में
तारुण्य-आरम्भ-रम्यं	यौवन के आरम्भ की सुन्दरता से युक्त
परम-सुख-रस-आस्वाद-	परम आनन्द पीयूष के आस्वादन से
रोमाञ्चित-अङ्गै:-	रोमाञ्चित शरीर वाले
आवीतं नारद-आद्यै:-	घिरे हुए नारद आदि के द्वारा
विलसत्-उपनिषत्-	सुशोभित उपनिषदों रूपी
सुन्दरी-मण्डलै:-च	और सुन्दरियों के दल से

हे भगवन! परम अमृतानन्द में निमग्न हुआ मैं, अपने समक्ष सघन कलाय पुष्पों की लुभावनी माला के समान एक तेजपुञ्ज देखता हूं। तत्पश्चात, उस प्रभा के मध्य दिव्य नवयुवक के रूप में आप दृष्टिगोचर हो रहे हैं, जो यौवन के आरम्भ की सुन्दरता से युक्त परम आनन्द पीयूष का आस्वादन करके रोमाञ्चित हुए शरीर वाले नारद आदि मुनियों से तथा सुन्दरियों रूपी उपनिषदों से घिरे हुए, अति सुशोभित लग रहे हैं।

नीलाभं कुञ्चिताग्रं घनममलतरं संयतं चारुभङ्ग्या
रत्नोत्तंसाभिरामं वलयितमुदयच्चन्द्रकै: पिञ्छजालै: ।
मन्दारस्रङ्निवीतं तव पृथुकबरीभारमालोकयेऽहं
स्निग्धश्वेतोर्ध्वपुण्ड्रामपि च सुललितां फालबालेन्दुवीथीम् ॥२

नीलाभं कुञ्चिताग्रं	नील आभा वाले, सामने से घुंघराले
घनम्-अमलतरं	सघन, अति निर्मल
संयतं चारु-भङ्ग्या	एकत्रित किए हुए सुन्दर विधि से
रत्न-उत्तंस-अभिरामं	रत्नों जडित मनोहर
वलयितम्-उदयत्-चन्द्रकैः	घिरे हुए चमकदार नेत्रों वाले
पिञ्छजालैः	मयूर पंखों से
मन्दार-स्रक्-निवीतं	मन्दार माला से बान्धे हुए
तव पृथु-कबरी-भारम्-	आपकी मोटी अलकों के भार को
आलोकये-अहं	देखता हूं मैं
स्निग्ध-श्वेत-ऊर्ध्व-	शीतल श्वेत ऊर्ध्व
पुण्ड्राम्-अपि च	और तिलक को भी (जिससे)
सुललितां फाल-	सुशोभित है मस्तक
बाल-इन्दु-वीथीम्	(जो) बाल चन्द्र कला के समान है

आपके केश सामने से घुंघराले हैं, सघन निर्मल, और नीली आभा से युक्त हैं। आपकी मोटी अल्कों को सुन्दर विधि से समेट कर उन्हें रत्न जडित मयूर पंख तथा मन्दार माला से सुसज्जित कर के, गूंथ कर बांध दिया गया है। बाल चन्द्र के समान आपके सुन्दर मस्तक पर सुशोभित शीतल श्वेत ऊर्ध्व तिलक को भी देखता हूं।

हृद्यं पूर्णानुकम्पार्णवमृदुलहरीचञ्चलभ्रूविलासै-
रानीलस्निग्धपक्ष्मावलिपरिलसितं नेत्रयुग्मं विभो ते ।
सान्द्रच्छायं विशालारुणकमलदलाकारमामुग्धतारं
कारुण्यालोकलीलाशिशिरितभुवनं क्षिप्यतां मय्यनाथे ॥३॥

हृद्यं पूर्ण-अनुकम्पा-	मनोहारी अनुकम्पा से परिपूर्ण
अर्णव-मृदु-लहरी-	सागर की कोमल लहरों की सी
चञ्चल-भ्रू-विलासैः-	चञ्चल भ्रू विलास वाले

आनील-स्निग्ध-पक्ष्म-	नीलाभा युक्त कोमल पलकों
आवलि-परिलसितं	की पङ्क्तियों से सुशोभित
नेत्र-युग्मं विभो ते	नेत्र दोनों, हे विभो! आपके
सान्द्र-च्छायं	अति सघन
विशाल-अरुण-	बडे, लाली वाले
कमल-दल-आकारम्-	कमल दल के आकार वाले
आमुग्ध-तारं	मोहित करती हुई पुतलियों वाले
कारुण्य-आलोक-लीला-	करुणा से पूर्ण दृष्टि पात से
शिशिरित-भुवनं	शीतल करते हुए जगत को
क्षिप्यतां मयि-अनाथे	डालें (वही) दृष्टि मुझ आश्रय हीन पर

हे विभो! आपके मनोहारी नेत्र अनुकम्पा से परिपूर्ण हैं। वे सागर की कोमल लहरों के समान, चञ्चल भ्रू विलास वाले, और नीलाभा युक्त कोमल पलकों की पङ्क्तियों से सुशोभित हैं। अति सघन बडे और लालिमा युक्त कमलदल के आकार वाले एवं मोहित करती हुई पुतलियों वाले नेत्र द्वय, करुणा से पूर्ण दृष्टिपात से जगत को शीतल करते हैं। अपनी वही दृष्टि मुझ आश्रयहीन पर डालें।

उत्तुङ्गोल्लासिनासं हरिमणिमुकुरप्रोल्लसद्गण्डपाली-
व्यालोलत्कर्णपाशाञ्चितमकरमणीकुण्डलद्वन्द्वदीप्रम् ।
उन्मीलद्दन्तपङ्क्तिस्फुरदरुणतरच्छायबिम्बाधरान्त:-
प्रीतिप्रस्यन्दिमन्दस्मितमधुरतरं वक्त्रमुद्भासतां मे ॥४॥

उत्तुङ्ग-उल्लासि-नासं	ऊंची सुघड नासिका
हरि-मणि-मुकुर-	हरित मणि के दर्पण (मे)
प्रोल्लसत्-गण्ड-पाली-	चमकते हुए कपोलों (पर)
व्यालोलत्-कर्ण-पाश-	झूलते हुए, कानों के पास
अञ्चित-मकर-मणी-	मकर के आकार के मणि जडित

कुण्डल-द्वन्द्व-दीप्रम्	कुण्डलद्वय से उद्दीप्त
उन्मीलत्-दन्त-पङ्क्ति-	खुली हुई दन्त पङ्क्ति
स्फुरत्-अरुणतर-च्छाय-	कम्पित लाल माणिक (के समान)
बिम्ब-अधरान्तः-	बिम्ब अधरों के बीच
प्रीति-प्रस्यन्दि-	प्रेम के प्रवाह युक्त
मन्द-स्मित-मधुर-तरं	मन्द मुस्कान से अति मधुर
वक्त्रं-उद्भासतां मे	श्रीमुख (आपका) उद्भासित हो मुझमें

आपकी नसिका सुघड और ऊंची है, हरितमणि के दर्पण में प्रतिबिम्बित हुए से चमकते हुए कपोलों पर कानों के पास झूलते हुए मणि जडित मकराकार कुण्डल द्वय उद्दीप्त हैं। लाल माणिक के समान कम्पित अधरों के बीच खुली हुई सुन्दर दन्त पङ्क्ति तथा, प्रेम के प्रवाह युक्त मन्द मुस्कान वाला आपका अति मधुर श्री मुख मुझ में उद्भासित हो।

बाहुद्वन्द्वेन रत्नोज्ज्वलवलयभृता शोणपाणिप्रवाले-
नोपात्तां वेणुनाली प्रसृतनखमयूखाङ्गुलीसङ्गशाराम् ।
कृत्वा वक्त्रारविन्दे सुमधुरविकसद्रागमुद्भाव्यमानैः
शब्दब्रह्मामृतैस्त्वं शिशिरितभुवनैः सिञ्च मे कर्णवीथीम् ॥५॥

बाहु-द्वन्द्वेन	भुजाओं द्वय से
रत्न-उज्ज्वल-वलय-भृता	(जिनमें) रत्नों से उज्ज्वल कडे डले हुए हैं
शोण-पाणि-प्रवालेन-	रक्ताभ हाथों (से) मूंगे के समान
उपात्तां वेणुनाली	पकडे हुए बन्सी (जो)
प्रसृत-नख-मयूख-	फैलती हुई नखों से किरणें
अङ्गुली-सङ्ग-शाराम्	अङ्गुलियों के संग से चित्र विचित्र सी
कृत्वा वक्त्र-अरविन्दे	रखे हुए मुख कमल पर
सुमधुर-विकसत्-	अत्यन्त मधुर प्रसृत होती हुई
रागम्-उद्भाव्यमानैः	राग आलापते हुए

शब्द-ब्रह्म-अमृतैः-	(उसका) नाद ब्रह्म अमृत के समान
त्वं शिशिरित-भुवनैः	आप शीतल करते हुए भुवनों को
सिञ्च मे कर्ण-वीथीम्	सिञ्चित करिए मेरी कर्ण वीथी को

रत्नों जडित उज्ज्वल कडों से भूषित भुजाओं, और मूंगे के समान रक्ताभ हाथों से आपने मुरली पकड रखी है। नखों से प्रसरित किरणों और अङ्गुलियों की आभा से चित्र विचित्र सी प्रतीत होती मुरली को आप अपने मुख कमल पर रखे हुए हैं। उस मुरली से अत्यन्त मधुर नाद आलापते हुए आप ब्रह्म के समान अमृत से समस्त भुवनों को शीतल करते हैं, उसी से मेरी कर्ण वीथी को भी सिञ्चित कीजिए।

उत्सर्पत्कौस्तुभश्रीततिभिररुणितं कोमलं कण्ठदेशं
वक्षः श्रीवत्सरम्यं तरलतरसमुद्दीप्रहारप्रतानम् ।
नानावर्णप्रसूनावलिकिसलयिनीं वन्यमालां विलोल-
ल्लोलम्बां लम्बमानामुरसि तव तथा भावये रत्नमालाम् ॥६॥

उत्सर्पत्-कौस्तुभ-	निकलती हुई कौस्तुभ से
श्री-ततिभिः-अरुणितं	सुन्दर किरणों से रक्तिम
कोमलं कण्ठ-देशं	कोमल कण्ठ प्रदेश को,
वक्षः श्रीवत्स-रम्यं	वक्षस्थल (को) श्री वत्स से रमणीय
तरलतर-समुद्दीप्र-	हिलती हुई कान्तिमान
हार-प्रतानं	हारों के समूहों (को)
नाना-वर्ण-प्रसून-	विभिन्न रंगों के पुष्पों वाली
अवलि-किसलयिनीं	पङ्क्ति की मालाओं की
वन्यमालां विलोलत्-	वनमाला के ऊपर
लोलम्बां लम्बमानाम्-	मधुमक्खियों के झूमते हुए
उरसि तव तथा	छाती पर आपके और
भावये रत्नमालाम्	ध्यान करता हूं रत्नों की माला का

मैं कौस्तुभ मणि की रक्तिम सुन्दर किरणों से सुशोभित आपके कोमल कण्ठ प्रदेश का ध्यान करता हूं। श्रीवत्स से रमणीय हुए आपके वक्षस्थल पर नाना प्रकार के कान्तिमान हार समूह हिलते रहते हैं। विभिन्न रंगों के पुष्पों की मालाओं की तथा वन माला की लडियों पर मधुमक्खियां मण्डरा रही हैं। लहराती हुई रत्नों मालामय आपके मनोहर वक्षस्थल का ध्यान करता हूं।

अङ्गे पञ्चाङ्गरागैरतिशयविकसत्सौरभाकृष्टलोकं
लीनानेकत्रिलोकीविततिमपि कृशां बिभ्रतं मध्यवल्लीम् ।
शक्राश्मन्यस्ततप्तोज्ज्वलकनकनिभं पीतचेलं दधानं
ध्यायामो दीप्तरश्मिस्फुटमणिरशनाकिङ्किणीमण्डितं त्वां ॥७॥

अङ्गे पञ्च-अङ्ग-रागैः-	(आपके) अङ्गों पर (लेपित) पञ्च रागों से
अतिशय-विकसत्-सौरभ-	अत्यन्त उठती हुई सुगन्ध
आकृष्ट-लोकं	आकृष्ट करती है लोक को
लीन-अनेक-त्रिलोकी	समाए हुए हैं समस्त त्रिलोक
विततिम्-अपि कृशां	एक संग (फिर) भी सुचारु है
बिभ्रतं मध्यवल्लीम्	सुशोभित कटि प्रदेश
शक्र-अश्म-न्यस्त-	नील मणि की चट्टान पर डाला हुआ
तप्त-उज्ज्वल-कनक-निभं	तरल और उज्ज्वल स्वर्ण के समान
पीत-चेलं दधानं ध्यायामः	पीताम्बर धारण किए हुए (आपका) ध्यान करते हैं
दीप्त-रश्मि-स्फुट-	चमकीली किरणों को वितीर्ण करती हुई
मणि-रशना-	रत्न जडित करघनी
किङ्किणी-मण्डितं त्वाम्	(छोटी) घन्टियों से मण्डित आपको

पञ्च रागों से लेपित आपके श्री अङ्गों से अत्यन्त मनोहर सुगन्ध उठती है, जो समस्त लोकों को आकृष्ट करती है। सभी त्रिलोक आपके उदर में समाए हुए हैं फिर भी आपका कटि प्रदेश अत्यन्त कृश और मनोहर है। आपके श्यामल तन पर पीताम्बर ऐसे लगता है जैसे नील मणि की चट्टान पर तरल उज्ज्वल स्वर्ण पसरा हो। चमकीली किरणों को वितरित करती हुई घन्टियों से मण्डित रत्न जडित करघनी से शोभित आपके रूप का मैं ध्यान करता हूं।

ऊरू चारू तवोरू घनमसृणरुचौ चित्तचोरौ रमाया:
विश्वक्षोभं विशङ्क्य ध्रुवमनिशमुभौ पीतचेलावृताङ्गौ ।
आनम्राणां पुरस्तान्न्यसनधृतसमस्तार्थपालीसमुद्ग-
च्छायं जानुद्वयं च क्रमपृथुलमनोज्ञे च जङ्घे निषेवे ॥८॥

ऊरू चारू तव-ऊरू	अत्यन्त सुन्दर आपकी जंघाएं
घन-मसृण-रुचौ	सुपुष्ट कोमल और मनोहर
चित्त-चोरौ रमाया:	चित्त को चुराने वाले लक्ष्मी के
विश्व-क्षोभं विशङ्क्य	विश्व को विचलित करने की आशङ्का से
ध्रुवम्-अनिशम्-उभौ	निश्चय ही सदा दोनों
पीत-चेल-आवृत-अङ्गौ	पीताम्बर से ढके हुए दोनों
आनम्राणां पुरस्तात्-	श्रद्धालुओं के समक्ष
न्यसन-धृत-समस्त-	रख देने के लिए सभी
अर्थ-पाली-समुद्गत्-	मनोवाञ्छितों को, पिटारीके
छायं जानु-द्वयं च	समान घुटने दोनों और
क्रम-पृथुल मनोज्ञे	क्रमश: पतली होती हुई सुन्दर
च जङ्घे निषेवे	पिण्डलियों का चिन्तन करता हूं

आपकी सुपुष्ट कोमल मनोहर एवं अत्यन्त सुन्दर जंघाएं लक्ष्मी के चित्त को चुराने वाली हैं। इन जंघाओं से विश्व विचलित न हो जाए इस आशङ्का से वे सदा ही पीताम्बर से ढकी रहती हैं। आपके दोनों घुटने श्रद्धालुओं के लिए उनका मनोवाञ्छित प्रदान करने की पिटारियों के समान हैं। इनका तथा क्रमश: पतली होती हुई आपकी सुन्दर पिण्डलियों का मैं ध्यान करता हूं।

मञ्जीरं मञ्जुनादैरिव पदभजनं श्रेय इत्यालपन्तं
पादाग्रं भ्रान्तिमज्जत्प्रणतजनमनोमन्दरोद्धारकूर्मम् ।
उत्तुङ्गाताम्रराजन्नखरहिमकरज्योत्स्नया चाऽश्रितानां
सन्तापध्वान्तहन्त्रीं ततिमनुकलये मङ्गलामङ्गुलीनाम् ॥९॥

मञ्जीरं मञ्जु-नादैः-इव	नूपुरों की मधुर ध्वनी मानो
पद-भजनं श्रेय	चरणों की सेवा' कल्याणकारी है
इति-आलपन्तं	इस प्रकार घोषित करने वाली को
पाद-अग्रं भ्रान्ति-मज्जत्-	चरण का सामने का भाग विडम्बनाओं के सागर में डूबते हुए
प्रणत-जन-मनः-	समाश्रित जनों के मनों के लिए
मन्दर-उद्धार-कूर्मम्	मन्दर पर्वत को उठाने वाले कछुए के समान
उत्तुङ्ग-आताम्र-राजत्-	ऊंचे लाल और कान्तिमान
नखर-हिमकर-ज्योत्स्नया	(चरण) नखों की चन्द्रमा की ज्योति से
च-आश्रितानां	भक्तों के
सन्ताप-ध्वान्त-हन्त्रीं	सन्ताप के अन्धकार का नाश करने वाली
ततिम्-अनुकलये	पङ्क्ति का ध्यान करता हूं
मङ्गलाम्-अङ्गुलीनाम्	मङ्गलकारिणी अङ्गुलियों का

आपके नूपुरों की मधुर ध्वनि मानो घोषणा करती है कि 'इन चरणों की सेवा कल्याणकारी है'। आपके चरणों के अग्र भाग, विडम्बनाओं में डूबे हुए समाश्रित लोगों के मनों का उद्धार करने के लिए मन्दार पर्वत का उद्धार करने वाले कछुए के समान हैं। चन्द्रमा के समान कान्ति वाली ऊंचे और लाल नखों की अन्गुलियों की मङ्गलकारिणी पङ्क्तियों का ध्यान करता हूं जो भक्तों के सन्ताप रूपी अन्धकार का नाश करने वाली हैं।

योगीन्द्राणां त्वदङ्गेष्वधिकसुमधुरं मुक्तिभाजां निवासो
भक्तानां कामवर्षद्द्युतरुकिसलयं नाथ ते पादमूलम् ।
नित्यं चित्तस्थितं मे पवनपुरपते कृष्ण कारुण्यसिन्धो
हृत्वा निश्शेषतापान् प्रदिशतु परमानन्दसन्दोहलक्ष्मीम् ॥१०॥

योगीन्द्राणां	योगीन्द्रियों के लिए
त्वत्-अङ्गेषु-	आपके अङ्ग अवयवों में
अधिक-सुमधुरं	सर्वाधिक प्रिय

मुक्तिभाजां निवास:	मुक्ति की अभिलाषा वालों के लिए आश्रय स्थान
भक्तानां काम-वर्ष-	भक्तों के लिए अभीष्ट पूरक
द्यु-तरु-किसलयं	दिव्य (कल्प) तरु के नव पल्लवों के समान
नाथ ते पादमूलम्	हे नाथ! आपके चरणों के तलवे हैं
नित्यं चित्त-स्थितं मे	(जो) नित्य चित्त में विराजमान हैं मेरे
पवनपुरपते कृष्ण	हे पवनपुरपते! हे कृष्ण!
करुणासिन्धो	हे करुणासिन्धो!
हृत्वा निश्शेष-तापान्	हरण करके अखिल सन्तापों को
प्रदिशतु परम-आनन्द-	प्रदान करें परम आनन्द
सन्दोह-लक्ष्मीम्	(निश्शेष) प्रवाह परिपूर्ण

हे नाथ! योगीन्द्रियों को आपके श्री अङ्गों के अवयवों में से सर्वाधिक प्रिय हैं आपके चरण कमलों के तलवे। मुक्ति की अभिलाषा रखने वालों के लिए वे आश्रय स्थाल हैं। भक्तों के लिए वे अभीष्ट पूरक दिव्य कल्प तरु के नव पल्लवों के समान हैं। आपके वे ही दिव्य चरण सर्वदा मेरे चित्त में विराजमान रहते हैं। हे पवनपुरपते! हे कृष्ण! हे करुणासिन्धो! मेरे असीम कष्टों का हरण करके मुझे निरन्तर प्रवाह से परिपूर्ण परम आनन्द प्रदान कीजिए।

अज्ञात्वा ते महत्वं यदिह निगदितं विश्वनाथ क्षमेथा:
स्तोत्रं चैतत्सहस्रोत्तरमधिकतरं त्वत्प्रसादाय भूयात् ।
द्वेधा नारायणीयं श्रुतिषु च जनुषा स्तुत्यतावर्णनेन
स्फीतं लीलावतारैरिदमिह कुरुतामायुरारोग्यसौख्यम् ॥११॥

अज्ञात्वा ते महत्वं	अभिज्ञ होने से आपके महत्व के विषय में
यत्-इह निगदितं	जो यहां कहा गया है
विश्वनाथ क्षमेथा:	हे विश्वनाथ! उसे क्षमा करें
स्तोत्रम् च-एतत्-	और स्तोत्र यह
सहस्र-उत्तरम्-अधिकतरं	एक सहस्र से अधिक

त्वत्-प्रसादाय भूयात्	आपको प्रसन्न करने वाला हो
द्वेधा नारायणीयं	दो प्रकारों से नारायणीयं (है यह)
श्रुतिषु च जनुषा	श्रुतियों में और अवतार कथाओं में
स्तुत्यता-वर्णनेन	स्तुति की गई वर्णित
स्फीतं लीला-अवतारैः-	यह पूर्ण है आपके लीला अवतारों से
इदम्-इह कुरुताम्-	इसको यहां कीजिए
आयुः-आरोग्य-सौख्यम्	(दीर्घ) आयु, सुस्वास्थ्य और आनन्द प्रदायक

हे विश्वनाथ! आपके महत्व के विषय में अनभिज्ञ होने के कारण मैने यहां जो भी कहा है उसे क्षमा करें। यह स्तोत्र एक सहस्र श्लोकों से युक्त है। यह आपको प्रसन्न करने वाला हो। नारायण के आख्यान से पूर्ण तथा नारायण भट्ट के द्वारा रचित होने के कारण यह दो प्रकार से नारायणीयं है। इसमें वेदों मे स्तुत एवं आपकी अवतार कथाओं में वर्णित आपके लीलावतारों का ही पूर्ण उल्लेख है। अतएव कृपा करके इस स्तोत्र को वक्ता और श्रोता दोनों के लिए दीर्घायु, सुस्वास्थ्य तथा आनन्द प्रदायक कीजिए।